सर स्टैफर्ड क्रिप्सके साथ

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय

७५

(११ अक्तूबर, १९४१ – ३१ मार्च, १९४२)

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मन्त्रालय
भारत सरकार

भूमिका

इस खण्डमे सम्बन्धित अवधि (११ अक्तूबर, १९४१ से ३१ मार्च, १९४२) में व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा साल-भरके दौरके बाद स्थगित कर दी गई, कांग्रेसने गांधीजी का दायित्व-मुक्त किये जाने का निवेदन स्वीकार कर लिया और ब्रिटिश सरकारने सर स्टैफर्ड क्रिप्सको भारतीय नेताओंसे बातचीत करने और युद्धमें भारतका हार्दिक सहयोग प्राप्त करने के उद्देश्यसे यहाँ भेजा।

कांग्रेसकी नीति और प्रधान मन्त्री चर्चिलके रुखमें प्रकट रूपसे जो परिवर्त्तन आया वह बाह्य परिस्थितियोंके दबावका परिणाम था। गांधीजी ने कांग्रेसके दायित्वका त्याग इसलिए किया था कि राजनीतिक दृष्टिसे जागरूक भारतकी एकताको अक्षुण्ण और साथ ही स्वतन्त्रता-सग्रामकी चिगारियोंको जीवित रखने तथा युद्ध और हिंसाके विरुद्ध आवाज उठाने के अधिकारकी रक्षाके लिए उन्हे यह आवश्यक प्रतीत हुआ। कांग्रेस महासमितिके १६ सितम्बर, १९४० के उस बम्बई प्रस्ताव (देखिए खण्ड ७३, पृ० १-३) के विषयमें कांग्रेसके अनेक नेताओंके मनमें आरम्भसे ही शका थी जिसमें गांधीजी के नेतृत्वमें संघर्ष छेड़ने का अधिकार दिया गया था। इसमें से कुछ नेता जब जेलोंसे बाहर आये तबतक "उनकी शंकाओंकी पुष्टि हो" चुकी थी (पृ० ६०)। दिसम्बर १९४१ में जापान और संयुक्त राज्य अमेरिकाके बीच युद्ध छिड जाने के बाद अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियोंने जो मोड लिया उससे उनकी स्थिति सुदृढ हुई। दिसम्बर १९४१ के अन्तिम सप्ताहमें बारडोलीमें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक हुई, जिसमें उसने बम्बई प्रस्तावमें अपने विश्वासको दोहराते हुए एक बार फिर घोषणा की कि "केवल स्वाधीन और स्वतन्त्र भारत ही राष्ट्रीय आधारपर देशकी रक्षाका भार अपने कन्धो पर ले सकता है" (पृ० ४९३)। किन्तु गांधीजी के दायित्व-मुक्त किये जाने के अनुरोध को स्वीकार करते हुए (पृ० ४९१-९३) उसने आगेकी कार्रवाईके सम्बन्धमें कोई स्पष्ट कार्यक्रम निर्धारित नही किया। जनवरीके मध्यमे वर्धामें कांग्रेस महासमितिकी जो बैठक हुई उसमें गांधीजी ने कांग्रेसके परामर्शदाताके अधिकारका व्यवहारत त्याग करते हुए कार्य-समितिके प्रस्तावकी स्वीकृतिकी सिफारिश की, और सदस्योंसे मत-विभाजन न करने का अनुरोध किया (पृ० २४३-५३)। इसके बाद ही जब उधर जापानकी सेना बर्माको रौंद रही थी, ११ मार्चको क्रिप्स मिशनकी रवानगीकी घोषणा की गई। २३ मार्च, १९४१ को सर स्टैफर्ड क्रिप्स दिल्ली पहुँचे।

यद्यपि गांधीजी युद्ध-मात्रके विरुद्ध थे, किन्तु ब्रिटेनके युद्ध-प्रयत्नोंमें बाधा डालने का उनका कोई मन्तव्य नही था। इसलिए सविनय अवज्ञा आन्दोलन मुख्यत प्रतीकात्मक था और अपनी व्याप्ति तथा प्रयोजन दोनो दृष्टियोंसे सीमित था। उसमें कुछ चुनिन्दे लोग व्यक्तिगत रूपसे भाग ले सकते थे और उसका उद्देश्य था अहिंसक

वाकस्वातन्त्र्यके अधिकार, "इस या किसी भी युद्धमे शरीक होने के खिलाफ बोलने के अधिकारका आग्रह करना" (पृ० ६६)। किन्तु कुछ काग्रेसी नेताओमे इस कार्यक्रमके प्रति विशेष आस्था न जग पाई और उन्होने सघर्षकी प्रगतिपर अपना असन्तोष व्यक्त किया। उनकी आलोचनाओका उत्तर देते हुए (पृ० ६०-६८) गाधीजी ने कहा कि "लगातार सरगरमीसे हिंसाको बढ़ावा मिल सकता है और इसलिए वह अहिंसात्मक आन्दोलन या . सघर्षके दृढतासे बढते हुए कदमको रोक सकती है।" सार्वजनिक आन्दोलनके विषयमे उनका विचार था कि वह "सरासर सरकारको परेशानीमे डालनेवाली बात होगी और इसलिए उसे अहिंसाके साथ की गई वंचना कहा जायेगा।" इसके अतिरिक्त, उनकी दृष्टिमे साम्प्रदायिक एकताके बिना उसका मतलब "घरेलू झगडेको न्योता देना", होता (६१-६२)। गांधीजी ने यह तो स्वीकार किया कि इस सघर्षसे कोई ठोस राजनीतिक लाभ नही हुआ, किन्तु साथ ही उसकी प्रगतिपर सन्तोष भी व्यक्त किया। कारण, अहिंसामें "अकस्मात चमत्कार . . . नही है।" अहिंसा प्रकृतिकी अन्य प्रक्रियाओकी तरह रहस्यमय रीतिसे काम करती है। "आकाशको हम रोज देखते है। लेकिन उसके चमत्कारको नही जानते। आकाश के चमत्कारको देखने के लिए जिनके आँखे है, वे दग रह जाते है। प्रतिक्षण नये-नये चमत्कार देखते है" (पृ० ८)। अहिंसामे गाधीजी की श्रद्धाका स्रोत उनका यह विश्वास था कि मानव-स्वभावको शुद्ध और निष्कलुष बनाना सम्भव है। उनके निजी अनुभवोने उन्हे इस बातकी प्रतीति करा दी थी कि "अहिंसासे मनुष्य-स्वभाव बदला जा सकता है, और सो भी चर्चिल, हिटलर वगैरहको जितना समय लग रहा है उससे कही कम समयमे" (पृ० ४८-४९)।

अस्तु ससदीय कार्यक्रम या सार्वजनिक सविनय अवज्ञा जैसी किसी प्रभावोत्पादक योजनाके अभावमें लोगोको यह भले लगता रहा हो कि "काग्रेसमें कोई जान ही नही रह गई है", किन्तु गाधीजी की मान्यता थी कि "सब-कुछ योजनानुसार हो रहा है।" उनकी दृष्टिमे काग्रेसजनोके लिए करने योग्य कार्य यह था कि सब "तेरह-सूत्री रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल करे और कुछ चुनिन्दा काग्रेसी सविनय अवज्ञा करे" (पृ० ६६-६७)। उनका कहना था कि जेल कुछ थोडे-से लोग ही जा सकते है, किन्तु "रचनात्मक कार्यक्रमको तो सबको कार्यान्वित करना चाहिए", क्योकि इस तरह वे सत्याग्रहियोकी उसी प्रकार सहायता कर सकेंगे जिस प्रकार सशस्त्र सघर्षमे नागरिक सैनिकोकी सहायता करते है (पृ० ६३)।

इन नैतिक तथा राजनीतिक कारणोंके अतिरिक्त अग्रेजोंके प्रति अपनी व्यक्तिगत भावनाओकी वजहसे भी गाधीजी सरकारके युद्ध-प्रयत्नोमें बाधक हो सकनेवाला कोई सार्वजनिक आन्दोलन छेडने से विमुख रहे। यद्यपि वे यह कहते रहते थे कि भारतीय दृष्टिकोणसे साम्राज्यवाद और नाजीवादमे कोई अन्तर नही है और "हिटलरवाद साम्राज्यवादकी अत्यन्त परिष्कृत नकल है" (पृ० ४० और ७९) किन्तु अग्रेजोको वे प्यार करते थे और उनके चरित्रकी कतिपय विशेषताओंके प्रशसक थे। इसलिए आरम्भ से ही व्यक्तिगत स्तरपर अग्रेजोंके प्रति उनकी गहरी सहानुभूति थी, और युद्ध छिड़ने

पर अपनी प्रथम प्रतिक्रियाके रूपमें उन्होंने अपनी इस भावनाका इजहार भी किया था (देखिए खण्ड ७०, पृ० १७८-८०)। इस अनुभवको ताजा करते हुए उन्होंने एक अंग्रेज पत्र-लेखकको, जिसका पुत्र लड़ाईमें खेत रहा था, लिखा, "मैं चाहे लड़ रहा होऊँ, चाहे सहयोग कर रहा होऊँ, मैं हमेशाकी तरह आज भी ब्रिटेनका सच्चा मित्र हूँ" (पृ० १३५)। इसी स्वरमें उन्होंने एगथा हैरिसनको लिखा, "सच मानो, पार्लियामेंट हाउस, वेस्टमिंस्टर एबी और सेंट पॉल कैथीड्रलके क्षतिग्रस्त होनेका समाचार सुनकर मेरा मन रोया था" (पृ० ४१)। अंग्रेजोंके साहसकी सराहना करते हुए गांधीजी ने पूर्वोत्तर सीमापर जापानियोंके प्रवेशके बाद युद्धके आसन्न संकटसे ग्रस्त भारतीय जनताको सलाह दी, "इतने सालतक अंग्रेजोंके साथ रहकर भी हम उनसे कुछ न सीख पाये हों तो कमसे-कम संकटोंके बीच शान्त रहनेकी कला तो हमें उनसे सीख ही लेनी चाहिए" (पृ० ३५७)।

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, एस० सत्यमूर्ति और आसफ अली-जैसे कुछ कांग्रेसी नेताओंने तो अंग्रेजोंको परेशान न करनेकी नीतिके सम्बन्धमें एक कदम और आगे बढ़कर यह राय जाहिर की कि मर्यादित सविनय अवज्ञा भी बन्द की जाये और उपयुक्त राजनीतिक शर्तोंपर कांग्रेस मन्त्री-पद स्वीकार करे। जेलसे रिहा होनेके बाद सत्यमूर्ति और आसफ अलीने गांधीजी से मुलाकात भी की, लेकिन गांधीजी ने नीतिमें किसी तरहके परिवर्तनकी कोई आशा नहीं दिलाई (पृ० १४, २९ और ३२)। सच तो यह है कि जब उन्होंने देखा कि सत्याग्रहियोंकी रिहाईके लिए सरकारपर दबाव डालनेकी सरगरमी चल रही है तो उन्होंने सार्वजनिक रूपसे स्पष्ट कर दिया कि "सरकारकी ओरसे प्रकट की गई ऐसी किसी सद्भावनाको कांग्रेस न तो प्रशंसाकी दृष्टिसे देखेगी और न वह इसका कोई अनुकूल उत्तर ही देगी। . . उन्हें [रिहा हुए सत्याग्रहियोंको] फिर सविनय अवज्ञा करनेको आमन्त्रित किया जायेगा" (पृ० १०२-३)। ३ दिसम्बरको नेहरू, आजाद और अन्य राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईकी घोषणा की गई। तब गांधीजी ने फिर कहा कि "ऐसी कोई आशा नहीं है कि इस कारण मेरे रुखमें कोई अनुकूलता आयेगी या मैं इसकी कद्र करूँगा", क्योंकि उन्हें ब्रिटिश सरकारकी नीतिमें कोई परिवर्तन नहीं दिखाई दे रहा था। "एमरीकी घोषणा रिसते जख्मको ठंडक" पहुँचानेके बजाय उसपर नमक छिड़क रही थी। इसलिए गांधीजी का विश्वास था कि "जल्दी ही सरकारका यह भ्रम टूट जायेगा" कि स्वेच्छासे अंगीकार किये गये कारावासके दौरान इन कैदियोंके विचार बदल गये होंगे (पृ० १४५-४६)।

पर्ल हार्बर पर हुए हमले (७ दिसम्बरको) के बादकी घटनाओंसे युद्धकी स्थिति में एक नया मोड़ आया। २३ से ३० दिसम्बर तक बारडोलीमें कार्य-समितिकी जो बैठक हुई उसमें वह गांधीजी के इस विचारसे सहमत न हो पाई कि चाहे कैसी भी परिस्थिति आये, अहिंसाके आचरणकी दृष्टिसे कांग्रेसको युद्ध-प्रयत्नोंमें सहयोग नहीं करना चाहिए। गांधीजी ने बड़ी आकुलताके साथ अपनी दृष्टि समझाते हुए कहा कि इस नाजुक घड़ीमें यदि "मैं अपने जीवन-भरकी [उस] श्रद्धाका त्याग कर" दूँ जो

बीस वर्षतक स्वय कांग्रेसकी नीतिका अग रही है तो यह नैतिक आत्मघातके समान होगा (पृ० २०७-८)। किन्तु समितिमे हुई चर्चाके दौरान उन्होंने पाया कि अन्य सदस्य सितम्बर १९४० के बम्बई प्रस्तावकी उनकी व्याख्यासे सहमत नही थे। गाधीजी की व्याख्या यह थी कि "कांग्रेसको मुख्य रूपसे अपने अहिंसाके सिद्धान्तके आधारपर वर्तमान युद्ध या किसी भी युद्धमे शामिल होने से इनकार करना है", किन्तु प्रस्तावको दोबारा पढने पर उन्होंने देखा कि "मैंने प्रस्तावमे से एक ऐसा अर्थ निकाला था जो उसके शब्दोसे किसी तरह नही निकलता।" "प्रस्तावमे भारतकी स्वतन्त्रताके निश्चित आश्वासनकी कीमतके रूपमे ब्रिटेनकी भौतिक साधनोसे सहायता करने की व्यवस्था" थी। किन्तु उनका अपना निश्चित मत था कि "भारत और ससारको आत्मविनाशसे केवल अहिंसा ही बचा सकती है", और इसलिए उनका निष्कर्ष था कि मै "अपने उद्देश्यमे रत रहूँ, चाहे मै अकेला होऊँ या किसी सस्था अथवा . . . व्यक्तियोकी सहायता मुझे प्राप्त हो।" निदान उन्होंने बम्बई प्रस्तावके सन्दर्भमे कांग्रेसके सघर्षके नेतृत्वका त्याग कर दिया (पृ० २०८-९)। उनकी मान्यता थी कि "हिंसाकी जकडमे पड़े वेदनासे कराहते ससारको देने के लिए यदि किसी देशके पास कोई सन्देश है तो वह देश भारत ही है।" इसलिए "भारतकी स्वतन्त्रताके लिए भी [वे] उस विरासतको बेच देने का अपराध" करने को तैयार नही थे, "क्योंकि इस तरह प्राप्त होनेवाली स्वतन्त्रता भी सच्ची स्वतन्त्रता नही" होती (पृ० २१०)।

फलत कार्य-समितिने इस बैठकमे जो प्रस्ताव स्वीकार किया और जिसका ध्वन्यर्थ यह था कि "कांग्रेसके युद्ध-प्रयत्नमें शामिल होने का रास्ता पूरी तरह बन्द नही हुआ है" (पृ० २१०), उससे गाधीजी ने अपने-आपको अलग कर लिया, किन्तु साथ ही जनवरीके मध्यमे महासमितिसे उसका अनुमोदन करने का भी अनुरोध किया। इस सतही असगतिका कारण समझाते हुए उन्होंने कहा कि देशके वायुमण्डल और दुनियामे कांग्रेसकी जो आलोचना हो रही है उसे देखते हुए मै इसी निष्कर्षपर पहुँचा कि अहिंसाके भक्तके नाते मै महासमितिसे कहूँ कि "वह दिलोदिमागके साथ इस ठहरावका समर्थन करे।" कांग्रेसको अपने मनका ठीक अन्दाजा भले ही नही रहा हो, किन्तु गाधीजी ने इस प्रस्तावको कांग्रेसके आइनेके रूपमें देखा, और इसलिए वे चाहते थे कि खुद उनकी राय कुछ भी हो, सदस्योको साहसपूर्वक अपनी निर्णय-बुद्धिका अनुसरण करना चाहिए। वे किसीको यह कहने का मौका नही देना चाहते थे कि "गाधी तो एक दीवाना था ही। उसके नेतृत्वके लिए कांग्रेस भी दीवानी बनकर खामखाह उसके पीछे मरती फिरती है, क्योंकि उसे छोडने की उसमें ताकत नही है।" उन्होंने स्पष्ट शब्दोमें बता दिया कि "किसीको उसकी इन्सानियतसे गिराकर मै नेतृत्व नही चाहता। . . . इस तरह किसीको गिराकर मैंने कभी अपना काम नही किया।" उनकी दृष्टिमें, ऐसा करना धोखेबाजी होती, और "पचास वर्षकी देशसेवाके बाद" वे क्या कांग्रेसको धोखा देते (पृ० २४६-४८)? बादमे कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओकी एक बैठकमे गांधीजी ने बताया कि उक्त प्रस्तावपर महासमितिमे मतविभाजन न कराने का निर्णय इस बातका द्योतक था कि उनकी अहिंसा आज भी विकासशील और वर्धमान थी (पृ० २७३)। गाधीजी के

इसका विरोध करनेवाले नेताओंमें जवाहरलाल नेहरू भी शरीक थे और लोगोंके बीच ऐसी धारणा बन गई थी कि उनके और जवाहरलाल नेहरूके बीच अनबन हो गई है। गांधीजी ने इसे बिलकुल गलत बताते हुए कहा कि जवाहरलाल उनसे झगड़ते तो रहे थे, लेकिन कोई भी चीज दोनोंको एक-दूसरेसे अलग नहीं कर सकती थी। सच तो यह था कि वे हमेशा कहते आये थे कि "अगर मेरा वारिस कोई है तो . . . जवाहरलाल है। वह जो जी में आता है, बोल देता है, मगर काम मेरा ही करता है। मेरे मरनेके बाद वह मेरा सब काम करेगा। तब मेरी भाषा भी वह बोलेगा", और अगर ऐसा न हुआ तो भी गांधीजी का कहना था कि "मैं तो यही श्रद्धा लेकर मरूँगा" (पृ० २४८)।

अहिंसाके प्रश्नको अलग रखा जाये तो भी अधिकांश कांग्रेसजन रचनात्मक कार्यक्रमको गांधीजी द्वारा दिये गये महत्त्वका मर्म भी नहीं समझते थे। गांधीजी की दृष्टिमें रचनात्मक कार्यक्रमका लक्ष्य मात्र कुछ वांछित सुधार सम्पन्न करना नहीं था। यह कार्य तो सरकारी तन्त्रके माध्यमसे कदाचित् अधिक कुशलतापूर्वक किया जा सकता था। उस कार्यक्रमका मतलब स्वराज्यका ढाँचा खड़ा करना था, अर्थात् स्वतन्त्र भारतमें उनकी कल्पनाके अहिंसक समाजके लिए तैयारी करना था। उन्होंने अपनी बात स्पष्ट करते हुए कहा कि "अहिंसापर आधारित स्वराज्य रचनात्मक कार्यक्रमकी एक परिणति" होगा, और इसलिए यदि उसमें कांग्रेसजनोंकी जीवन्त श्रद्धा नहीं है तो "मेरी परिकल्पनाकी सामूहिक अहिंसा बिलकुल बेमानी है" (पृ० १५१)। इस कार्यक्रमके अधीन जिन प्रवृत्तियोंको चलाने का उनका विचार था उनकी एक मोटी रूपरेखा उन्होंने व्यक्तिगत सविनय अवज्ञा आरम्भ करने के पूर्व सामने रख दी थी (देखिए खण्ड ७२, पृ० ४२४-२७), और अब उन्होंने "रचनात्मक कार्यक्रमका मर्म और महत्त्व" शीर्षकसे अधिक विस्तारके साथ एक पुस्तिका (पृ० १६१-८३) प्रकाशित कराई, जिसमें इस कार्यक्रमको "सत्यमय और अहिंसात्मक साधनों द्वारा पूर्ण स्वराज्यका निर्माण" बताया। उनकी मान्यता थी कि हिंसाके बलपर प्राप्त की जानेवाली स्वतन्त्रतामें "प्रभुता राष्ट्रके उसी पक्षकी होगी जो हिंसाका सबसे अधिक प्रभावकारी उपयोग कर सकता है।" इसमें आर्थिक या अन्य प्रकारकी "पूर्ण समानताकी . . कल्पना की ही नहीं जा सकती।" इसके विपरीत उनकी कल्पनाके अनुसार इस कार्यक्रमके सफल कार्यान्वयनके फलस्वरूप प्राप्त मनोवांछित स्वतन्त्रताका अर्थ "राष्ट्रके प्रत्येक घटककी स्वतन्त्रताकी सिद्धि" था, चाहे वह घटक "किसी धर्म, जाति या रंगका हो और चाहे उसकी हैसियत जितनी छोटी हो" (पृ० १६१-६२)। इसलिए उन्होंने कहा कि यदि इस कार्यक्रममें कांग्रेसजनोंकी आस्था न हो तो "वे मुझे अस्वीकार कर दें। कारण, रचनात्मक कार्यक्रमके बिना मेरा सविनय अवज्ञाकी लड़ाई" लड़ना "लकवेमें सुन्न पड़े हाथसे चम्मच उठाने-जैसा होगा" (पृ० १८३)।

रचनात्मक कार्यक्रमका ही एक विषय था हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य। मुस्लिम लीगकी विभाजनकी माँगके कारण इस मोर्चेपर शिथिलताका कोई अवकाश नहीं रह गया था। वह माँग पृथक् निर्वाचक मण्डलकी व्यवस्थाका तर्कसंगत परिणाम थी,

क्योकि इस व्यवस्थाका "आधार ही पारस्परिक अविश्वास और यह मान्यता' थी कि "सभी समुदायोके हित एक-दूसरेके विरोधी है" और उसने "हमारे मतभेदोको स्थायी . . . और अविश्वासको गहरा बना दिया" था (पृ० २६२)। गाधीजी चाहते थे कि काग्रेसजन भारतके सभी वर्गोके लोगोके साथ तादात्म्य स्थापित करे और "अपनेसे इतर धर्मको माननेवालो के साथ मैत्री-सम्बन्ध" "स्थापित करने का विशेष प्रयत्न करे" (पृ० १६२)। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके रजत जयन्ती समारोहके अवसरपर अपने भाषणमे भी उन्होने ऐसा ही अनुरोध किया "अगर वे [मुसलमान] आपके पास न आये तो आप उनके पास जाकर उन्हे अपनाइए। अगर इसमे हम नाकामयाब भी हुए तो क्या हुआ? लोकमान्य तिलकके हिसाबसे हमारी सभ्यता दस हजार बरस पुरानी है। . . इस सभ्यतामे अहिंसाको परम धर्म माना गया है। . . . जिस तरह गगाजीमे अनेक नदियाँ आकर मिली है उसी तरह इस देशी सस्कृति-गगा मे भी अनेक सस्कृति-रूपी सहायक नदियाँ आकर मिली है। यदि इन सबका कोई सन्देश . . . हो सकता है तो यही कि हम सारी दुनियाको अपनाये और किसीको अपना दुश्मन न समझे। मै ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हिन्दू विश्वविद्यालयको यह सब करने की शक्ति दे" (पृ० २७०)।

अपनी आश्रम-प्रार्थनामे गांधीजीने विभिन्न धर्मोके ऐसे-मिश्रणका प्रयत्न किया था। आश्रमके एक जापानी सदस्य द्वारा जाप किये जानेवाले एक मन्त्र और रेहाना तैयबजी द्वारा गाये एक फातिहा को उन्होने आश्रमकी प्रार्थनामे शामिल कर लिया। इसपर मीठा उलाहना देनेवाले एक "चुस्त हिन्दू . . . मित्र" की शंकाका उत्तर देते हुए उन्होने कहा, "जापानी मन्त्र और कुरानकी आयतसे मेरा और आश्रमके हिन्दुओका हिन्दुत्व ऊपर उठा है" (पृ० ३१०)। उन्होने ईसा मसीहकी शिक्षाका भी खुले दिलसे स्वागत किया और रूढिवादी ईसाइयोकी वर्जनशील प्रवृत्तिका प्रतिवाद करते हुए पूछा, चूँकि मै "ईसाको ईश्वरके एकमात्र पुत्रके रूपमें हृदयसे स्वीकार नही करता हूँ" इसलिए "क्या उनकी शिक्षा और उनके सिद्धान्तके समस्त वैभवके द्वार मेरे लिए बन्द रहेगे?" गाधीजीकी दृष्टिमे ईसा "केवल ईसाई-जगत्के . . . नही बल्कि अखिल विश्वके" थे (पृ० ७६-७८)।

साम्प्रदायिक सम्बन्धोके सन्दर्भमे विषाक्त लेखोके प्रकाशनकी प्रवृत्तिसे गांधीजीका मन बहुत व्यथित हुआ। मुस्लिम लीगके कतिपय मुखपत्रोमे सप्ताह-दर-सप्ताह जिस प्रकार "हिन्दुओपर कीचड . उछाला" जा रहा था और "सत्यको तोड़-मरोड़ कर पेश" किया जा रहा था उसकी ओर जिन्नाका ध्यान सार्वजनिक रूपसे आकृष्ट करते हुए उन्होंने आशा व्यक्त की कि लीगकी "नीति और कार्यक्रमका प्रतिनिधित्व करनेवाले पत्रोमें मनुष्य और चीजोका अधिक न्यायपूर्ण मूल्यांकन किया जायेगा" (पृ० ४१३-१४)। जिन्नाने इसका जो उत्तर दिया उसे पढ़कर गांधीजी को और भी "गहरा दुख" हुआ और उन्होने लिखा, "लोगोकी आन्तरिक भावनाओको गहरी चोट पहुँचाने के इरादेमे लिखे गये लेखका यह अप्रत्याशित बचाव किसी अच्छे सगुनकी सूचना नही देता" (पृ० ४५१-५२)।

विश्वके अन्य भागोंमे धधकती हिंसाकी ज्वाला और भारतके अन्दर बढते तनावके लक्षणोंके बीच जिस चीजने गाधीजी को संबल प्रदान किया वह थी युद्धके अन्तमें एक नई व्यवस्थाके प्रादुर्भावकी आशा। उन्हे दिखाई दे रहा था कि युद्धकी समाप्तिके साथ ही "धनके राज्यका अन्त . . . आ रहा है और गरीबोका राज्य आ जायेगा, फिर चाहे वह राज्य शारीरिक बलसे आये या आत्मबलसे" (पृ० २८६)। उन्होने 'हरिजन' में लिखा, "इस विनाशमे से निश्चय ही एक ऐसी व्यवस्था जन्म लेगी जिसके लिए करोड़ो शोषित मेहनतकश लोग तरसते रहे है। शान्तिप्रेमियोकी प्रार्थना व्यर्थ नही जा सकती। सत्याग्रह स्वय ही व्यथित आत्माकी ऐसी मूक प्रार्थना है जो कभी अनसुनी नही जाती" (पृ० ३३६)। गिल्डहाउस, लन्दनके डॉ० मॉड रॉयडनके एक लेखपर टिप्पणी करते हुए गाधीजी ने अपनी गहरी धार्मिक आस्थाको इन शब्दोमें अभिव्यक्ति दी "हताश होने का कोई कारण नही है", क्योकि "अगर मनुष्यको दोपाया पशु नही बन जाना है . तो वह [युद्ध-विरोधी] प्रयत्न निश्चय ही सफल होगा — सो भी विलम्बसे नही, वरन् शीघ्रतासे" (पृ० ४३१-३२)। एगथा हैरिसनको सान्त्वना देते हुए उन्होने लिखा. "हम अपने हृदयसे उठनेवाली प्रार्थनाको ही अपना एकमात्र और सबसे निरापद आश्रय बनायें। . प्रभुकी इच्छाके बिना तिनका भी नही हिलता। इस सहार-लीलाकी अनुमति वह दे रहा है। हम नही जानते कि वह ऐसा क्यों कर रहा है। लेकिन यदि हमारे हाथ, हमारी बुद्धि और हमारा हृदय शुद्ध है तो हमें मानना चाहिए कि जब उसकी इच्छा होगी तब वह इस विवेकशून्य पारस्परिक सहार-लीलाको बन्द करवाने के लिए हमारा उपयोग करेगा" (पृ० ४२)।

११ फरवरीको उनके एक निकटतम सहयोगी जमनालाल बजाजका सहसा निधन हो गया। अनासक्तिके साधक गाधी इतने विचलित हो उठे कि उन्होने लिखा, "जो हाल मगनलालके जाने से हुए थे, वे ही ईश्वरने इस बार फिर मेरे किये है" (पृ० ३५५)।

स्वय अप्रतिम कर्मयोगी होते हुए भी गाधीजी कर्मकी मर्यादाओंसे अवगत थे। उन्होने विनोबा भावेके अनुज बालकृष्ण भावेको लिखा, "जिसकी बुद्धि ठीक है और जिसके सकल्प शुभ है ऐसे मनुष्यके सकल्पमे जो बल होता है, वह उसकी कृतिमें नही होगा। जैसे भाषा विचारको एक सीमामें बाँध लेती है, वैसे ही कर्म भी सकल्पको सीमित कर देता है" (पृ० ५३)।

आभार

इस खण्डकी सामग्रीके लिए हम निम्नलिखित संस्थाओं, व्यक्तियों, पुस्तकोंके प्रकाशकों तथा पत्र-पत्रिकाओंके आभारी हैं :

संस्थाएं : साबरमती आश्रम संरक्षक तथा स्मारक न्यास और संग्रहालय, नवजीवन ट्रस्ट और गुजरात विद्यापीठ ग्रन्थालय, अहमदाबाद; राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय और पुस्तकालय, राष्ट्रीय अभिलेखागार और नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली, उड़ीसा सरकार, बम्बई सरकार, विश्वभारती पुस्तकालय, शान्तिनिकेतन और इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन।

व्यक्ति : श्रीमती राजकुमारी अमृतकौर, श्री अमृतलाल चटर्जी, कलकत्ता, श्री आनन्द तो० हिंगोरानी, इलाहाबाद; श्रीमती एफ० मेरी बार; श्री कनुभाई मशरूवाला; श्री कन्हैयालाल मा० मुंशी; श्री कान्ति गांधी, बम्बई; श्री गांधी अन्नामलै, रंगून; श्री घनश्यामदास बिड़ला, कलकत्ता; श्रीमती चम्पा र० मेहता; श्री जयरामदास दौलतराम; श्री जीवणजी डा० देसाई; श्रीमती तहमीना खम्बाता; श्री नारणदास गांधी; श्री नारायण देसाई, वाराणसी; श्री परीक्षितलाल मजमूदार; श्री पुरुषोत्तम प्रसाद; श्री पृथ्वीसिंह, लालरू, पंजाब; श्री प्यारेलाल, नई दिल्ली, श्रीमती प्रेमाबहन कंटक, सासवड; श्री बनारसीलाल बजाज; श्री बालकृष्ण भावे; श्री भगवानजी पु० पण्ड्या; श्री मंगलदास पकवासा; श्रीमती मंजुला म० मेहता; श्री मगनलाल प्रा० मेहता, श्री माणेकलाल अ० गांधी, श्रीमती मीराबहन, गाडेन, आस्ट्रिया; श्री मुन्नालाल ग० शाह, सेवाग्राम, श्रीमती रामेश्वरी नेहरू, श्रीमती लीलावती आसर, बम्बई, श्रीमती वनमाला एम० देसाई; श्री वल्लभराम वैद्य; श्रीमती विजयाबहन म० पंचोली; श्रीमती शारदा गो० चोखावाला, सूरत; श्री सतीश द० कालेलकर, नई दिल्ली, श्री हमीद कुरैशी, अहमदाबाद और श्रीमती हरिइच्छा कामदार।

पुस्तकें : 'कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम : इट्स मीनिंग एण्ड प्लेस', '(द) ट्रान्सफर ऑफ पॉवर', जिल्द २, 'पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद', 'पॉलिटिकल लाइफ ऑफ पंडित गोविन्दवल्लभ पन्त', जिल्द १, 'बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय रजत जयन्ती समारोह', 'बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने', 'बापुनी प्रसादी', 'बापुनी शीतल छायामां', 'बापू : कन्वर्सेशन्स एण्ड कॉरेस्पॉण्डेन्स विद महात्मा गांधी', 'बापूकी छायामें', 'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष', 'डा० भाईलालभाई पटेल ७५मी वर्षगाँठ अभिनन्दन ग्रन्थ', और '(द) मीडियम ऑफ इंस्ट्रक्शन'।

पत्र-पत्रिकाएं : 'खादी-जगत्', 'बॉम्बे क्रॉनिकल', 'मराठी हरिजन', 'मॉडर्न रिव्यू', 'सर्वोदय', 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु', 'हरिजनसेवक' और 'हिन्दू'।

पाठकोंको सूचना

हिन्दीकी जो सामग्री हमे गांधीजी के स्वाक्षरोमे मिली है, उसे अविकल रूपमे दिया गया है। किन्तु दूसरो द्वारा सम्पादित उनके भाषण अथवा लेख आदिमे हिज्जो की स्पष्ट भूले सुधार दी गई है।

अंग्रेजी और गुजरातीमे अनुवाद करते समय उसे यथासम्भव मूलके समीप रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है, किन्तु साथ ही भाषाको सुपाठ्य बनाने का भी पूरा ध्यान रखा गया है। जो अनुवाद हमे प्राप्त हो सके है, उनका हमने मूलसे मिलान और सशोधन करने के बाद उपयोग किया है। नामोको सामान्य उच्चारणोंके अनुसार ही लिखने की नीतिका पालन किया गया है। जिन नामोंके उच्चारणमे सशय था, उनको वैसा ही लिखा गया है जैसा गांधीजी ने अपने गुजराती लेखोमे लिखा है।

मूल सामग्रीके बीच चौकोर कोष्ठकोमे दिये गये अंग सम्पादकीय है। गांधीजी ने किसी लेख, भाषण आदिका जो अंग मूल रूपमें उद्धृत किया है, वह हाशिया छोडकर गहरी स्याहीमें छापा गया है। लेकिन यदि ऐसा कोई अंग उन्होने अनूदित करके दिया है तो उसका हिन्दी अनुवाद हाशिया छोडकर साधारण टाइपमें छापा गया है। भाषणोकी परोक्ष रिपोर्ट तथा वे शब्द जो गांधीजी के कहे हुए नही है, बिना हाशिया छोड़े गहरी स्याहीमे छापे गये है। भाषणो और भेटकी रिपोर्टोंके उन अंशोमें जो गांधीजी के नही है, कुछ परिवर्त्तन किया गया है और कही-कहीं कुछ छोड भी दिया गया है।

शीर्षककी लेखन-तिथि दायें कोनेमे ऊपर दे दी गई है, लेकिन जिन लेखो, टिप्पणियो आदिके अन्तमे लेखन-तिथि दी गई है उनमें उसे यथावत् रहने दिया गया है। जहाँ वह उपलब्ध नही है, वहाँ अनुमानसे निश्चित तिथि चौकोर कोष्ठकोमें दी गई है और आवश्यक होने पर उसका कारण स्पष्ट कर दिया गया है। जिन पत्रोमें केवल मास या वर्षका उल्लेख है, उन्हे प्रसगानुसार मास तथा वर्षके अन्तमे रखा गया है। शीर्षकके अन्तमें साधन-सूत्रके साथ दी गई तिथि प्रकाशन की है। गांधीजी की सम्पादकीय टिप्पणियाँ और लेख, जहाँ उनकी लेखन-तिथि उपलब्ध है अथवा जहाँ किसी दृढ आधारपर उसका अनुमान किया जा सका है, वहाँ लेखन-तिथिके अनुसार और जहाँ ऐसा सम्भव नही हुआ है, वहाँ प्रकाशन-तिथिके अनुसार दिये गये है।

विषय-सूची

परिशिष्ट :

चित्र-सूची

१. पत्र : अमृतकौरको

दोबारा नहीं देखा

११ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

रामसरनदास लुधियानाके पुराने भक्त है। वे नियमपूर्वक पैसा और खादी भेजते रहे हैं। उनका एक बेटा इग्लैण्डमे डॉक्टर है, दूसरा यही हिन्दुस्तानमे है, लेकिन उसने स्कॉटलैण्डकी एक लड़कीसे शादी की है। उसने अपने श्वसुरके साथ आकर कुछ दिन सेवाग्राममे रहने की अनुमति माँगते हुए पत्र लिखा था। उसके श्वसुर यहाँ आकर बीमार हो गये थे। अब देख-भालके बाद स्वस्थ है। उनके सब दाँत निकालने पडे। बीमारी दाँतो के ही कारण थी। वेसी बहुत अच्छी और स्थिरचित्त लडकी है और अपने श्वसुरके प्रति बहुत अनुरक्त है। उसके श्वसुर करीब-करीब मेरी ही उम्रके है। वे मना करने पर भी सविनय अवज्ञामे शामिल हुए। वे दोबारा जेल जाना चाहते हैं। उनका कहना है कि वहाँ मर भी जाऊँ तो परवाह नही।

मैंने अपना दौरा[1] कुछ दिनोके लिए बन्द कर दिया है। क्योकि जी०[2] चाहते है कि उन्हे मौका दिया जाये। अगर वे असफल रहे तो मुझे मौका दिया जा सकता है। और निश्चय ही वे असफल नही होगे। मै तुम्हे अपनी चिन्ताके बारेमें तो बता ही चुका हूँ।[3] जितनी चिन्ता मुझे किसी अन्य रोगीको लेकर होगी उससे ज्यादा तुमको लेकर नही होगी। लेकिन प्रश्न तुम्हारी या मेरी चिन्ताका नही है। प्रश्न तो यह है कि तुम्हे बीमार नही होना चाहिए। तुम्हे स्वस्थ रहने की कला सीख लेनी चाहिए। तुम कगारपर ही रहती हो। यह बुरी बात है।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च]

लीलावती आज आ गई है। वह एक महीनेकी छुट्टीपर है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०९५)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४०४ से भी

१ दीनबन्धु स्मारक-कोषके लिए चन्दा इकट्ठा करने के लिए, देखिए खण्ड ७४, पृ० २५६ और ३३७।

२. सम्भवत: घनश्यामदास बिड़ला, देखिए खण्ड ७४, "पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको", पृ० ४१५।

३. देखिए खण्ड ७४, पृ० ४२४।

२. पत्र : जमनादासको

सेवाग्राम
११ अक्तूबर, १९४१

भाई जमनादास,

जो मनुष्य कल्पना-लोकमें विचरण करता रहता है भला उसतक कौन पहुँच सकता है? तुमने जो लिखा है उसका मुझे तो कोई भान नही है। सम्भव है कि मैं काममें बहुत अधिक व्यस्त होने के कारण तुमसे ज्यादा बातचीत न कर पाया होऊँ। बात यह है कि मैं जैसा हूँ वैसा सबके प्रति रहने का प्रयत्न करता हूँ। लेकिन लोगोको गलतफहमी हो जाती है और वे ऐसा समझने लगते है कि मैं बदल गया हूँ।

तुम्हारी कविता मिली। मैं उसे एक नजर देख गया हूँ। तुम तो जानते ही हो कि मुझे कविताका कोई ज्ञान नही है, और पद्यका भी नही है। वह कविता मैं वापस भेज रहा हूँ। कविता किसी प्रसिद्ध कविको दिखाओ और उसके पास करने पर ही उसे छपने के लिए भेजो।

तुम दोनोको,

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

३. पत्र : कन्हैयालाल वैद्यको

११ अक्तूबर, १९४१

भाई कन्हैयालाल,

तुम्हारा खत मिला। रतलाममें बाहरके वकीलोको बगैर रोकके इजाजत मिलती है? अपीलकी सुनाई कब होगी? कितने दिन सुनाईमें जा सकते है? अगर हाइकोर्ट नामकी ही है तो अपीलसे क्या लाभकी आशा रखी जाय?

ग्वालीयरके बारेमें खेदकी बात है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

४. पत्र : अमृतकौरको

१२ अक्तूबर, १९४१

चि० अमृत,

कार्ड लिखने का समय भी मुश्किलसे मिलता है। सेब मिल गये हैं। हैनकॉक कल आया। के० में कोई परिवर्तन हुआ या नही, कह नही सकता। पिछले दो दिनोसे झुलसा देनेवाली गर्मी पड रही है। अच्छा हुआ, तुम यहाँ नही थी, अन्यथा तुम्हे भी उसे झेलना पडता।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०९६)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४०५ से भी

५. पत्र : सर्वपल्ली राधाकृष्णन्को

१२ अक्तूबर, १९४१

प्रिय सर राधाकृष्णन्,[1]

आपके दो पत्र मिले, जिनके लिए अनेक धन्यवाद।

जब एक बार आपकी बात मान ली[2] तो आपकी घोषणामें मैं कोई दखल नही दे सकता। जैसा आपको ठीक लगे, कीजिए। लेकिन मुझे उपाधि मत दीजिए। इस तरहका सम्मान तो वास्तवमें योग्य पात्रोके लिए ही सुरक्षित रहना चाहिए। कानून तोडनेवाला कानूनका डॉक्टर कैसे हो सकता है? लेकिन इस अवसरका उपयोग आप विश्वविद्यालय अथवा हरिजन सेवक सघ या चरखा सघके निमित्त दानके लिए कर सकते हैं।

१. उन दिनों बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके उपकुलपति

२. गाधीजी ने हिन्दू विश्वविद्यालयके रजत जयन्ती समारोहमें भाग लेना मंजूर कर लिया था, देखिए खण्ड ७४, पृ० २९२।

मुझे खुशी है कि मैंने आपको उस युवक जसानीकी बातचीतके बारेमें लिखा। मुझे उसकी बातपर विश्वास नही हो पाया। वह अच्छा आदमी है, लेकिन विदेशी भाषा माध्यम होने से अकसर बड़ी हास्यास्पद गलतफहमियाँ पैदा होती रही है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री सर्वपल्ली राधाकृष्णन्
३०, एडवर्ड इलियट्स रोड
मैलापुर, मद्रास

[अंग्रेजीसे]

महात्मा, जिल्द ६, पृष्ठ ४८-४९ के बीच प्रकाशित प्रतिकृतिसे। प्यारेलाल पेपर्स से भी। सौजन्य . प्यारेलाल

६. पत्र : ए० अजीजको

सेवाग्राम,
१२ अक्तूबर, १९४१

प्रिय मित्र,

आपके पत्रमे आपत्तिजनक कोई बात नही है। उसमे बातको सही ढगसे कहा गया है। लेकिन मुझे लगता है कि आप मेरी बात नही समझ पाये है। मै चाहूँगा कि आप मेरे तर्कको, यदि वह पूरा आपके पास है, एक बार फिरसे पढ़ जाये।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री ए० अजीज

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

७. पत्र : शावकशाको

१२ अक्तूबर, १९४१

भाई शावकशा,

मुझे तो आपसे ईर्ष्या होती है। कहाँ ८४ वर्ष और कहाँ ७२ वर्ष? आप धडल्लेसे मिल चलाते है और मेरे जैसे नौजवान हवा खाते है। भले ही ईश्वर हमें जैसे रखे वैसे हम रहें और उसका उपकार माने। आपकी दोनो पुस्तके मिली। चित्रोवाली पुस्तक तो अवश्य मूल्यवान होनी चाहिए। मै तो इसका पूरा-पूरा उपयोग करूँगा

क्योंकि आप तो थोडी-सी अथवा एक मिल चलायेंगे लेकिन मैं तो हजारो मिले चलाता हूँ और लाखो मिले चलाने की योजना वनाता हूँ।

यदि छोटे अपने वडोको आशीर्वाद दे सकते है तो

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

८. पत्र : चन्द्रगुप्त वार्ष्णेयको

१२ अक्तूवर, १९४१

भाई चद्रगुप्त,

जिस शख्सने अपना पता नही दिया है जिनको तुम पहचानते नही हो, उसके कथनमे सत्य नही है इतना ही कहना पर्याप्त है। इसकी तहकीकात क्या करना? मैंने तो खत भेजा ऐसी समझसे वह शख्स कोई परीचित आदमी है।

वापुके आशीर्वाद

श्री चन्द्रगुप्त वार्ष्णेय, वी० एस-सी०
अजमेर

पत्रकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य · प्यारेलाल

९. पत्र : प्रभुदयाल विद्यार्थीको

१२ अक्तूवर, १९४१

चि० प्रभुदयाल,

तुमने जिन लेखोके वारेमे लिखा है वह मै पढ गया हू। मैंने आजकल तो किसी अखवारके लिये इस विपयमे नही लिखा है और न वह लेख मेरे हैं। कहासे लिये गये है उसका इशारा भी उसमे नही है।

वापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११६९५) से

१०. पत्र : मैथिलीशरण गुप्तको

१२ अक्तूबर, १९४१

भाई मैथिलीशरण,

आपका पत्र मिला। आप लोगोने खूब की। मैंने धीरेन्द्रको[1] लिखा है। मुझको सूत भेजने का खर्च करना ही नही चाहिये। सब भले रख लिया जाय। आवेहीगा तो बुना जायगा। आपके सूतकी खादी तो मैं इस्तेमाल करूगा ही। उसकी चद्दर बन रही है। थोडे इस्तेमालके बाद काशी भेजने के लिये काकासाहबको[2] दूंगा। आपकी कविता पढ गया। सबको मेरे आशीर्वाद कहो कि जितना सूत भावसे कातेंगे इतना स्वराज नजदीक आवेगा ही। उसके बिना कभी नही।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

११. भाषण : सेवाग्राममें

१२ अक्तूबर, १९४१

मुझे पता नही था कि इतना मजमा यहाँ होनेवाला है। लेकिन अब हो गया तो अच्छा ही है। मध्यप्रान्तके तीन प्रान्तोसे[3] बारह हजार रुपया और दो करोड अस्सी हजार गज सूत आ गया यह मेरी दृष्टिसे हमारे कामके लिए शुभ लक्षण है।

आगरा जेलसे भी मुझे दो खत आये है। वहाँ सब सत्याग्रहियोने खूब सूत काता। वहाँ उन लोगोको कातने की सारी सुविधाएँ नही थी। लेकिन धीरेन्द्र मजूमदार जब जेलमे पहुँच गये तो वह बिना सबसे कतवाये कैसे रह सकते थे? वह तो चरखा सघके स्तम्भोमे से एक है। उनको जेलमे जाना नही था, लेकिन सरकार कभी-कभी बडी उदार हो जाती है। कुछ आदमियोको यो ही उठा ले जाती है।

श्री मैथिलीशरणजी भी वही है। वह भी यो ही बरबस पकड लिये गये। वह सुप्रसिद्ध कवि तो है और उन्होने एक कविता भी भेजी है। लेकिन आज कविता उनकी कलमसे नही निकलती, बरन् उनके सूतके तारोसे निकलती है। मैंने उनको

१. धीरेन्द्र मजूमदार जो कि आगरा जेलमें मैथिलीशरण गुप्तके साथी थे।
२. द० बा० कालेलकर
३. नागपुर, बरार और महाकोशल

आज ही एक छोटा-सा उत्तर[1] लिखा है। लेकिन उसमे भी मेरी कलमसे यह चीज निकल गई कि आपने और आपके साथियोने जितना सूत काता है, उतना ही आप लोग स्वराज्य नजदीक लाये है।

यह बात मैंने जो लिखी, वह केवल भाषाका अलकार नही है। जो बात मेरे दिलमें उठती रहती है, वही मैंने लिखी है। मेरी स्वराज्यकी व्याख्याके अनुसार जबतक शोषण रहेगा तबतक स्वराज्य नही होगा। जबतक एक वर्ग दूसरेको कुचलता रहेगा, गरीब गरीब रहेंगे या ज्यादा गरीब होते जायेंगे, तबतक, सिर्फ अग्रेजोके चले जाने से जो स्वदेशी राज्य होगा, वह स्वराज्य नही होगा। मेरे स्वराज्यमे करोडो सुखसे रहेंगे। उन्हे अच्छा खाना, अच्छा घर और काफी कपडा मिलेगा। अच्छे खाने से मेरा मतलब यह नही है कि उन्हे जलेबी मिलेगी। लेकिन हर एकको काफी और शुद्ध दूध, शुद्ध घी और साग-तरकारी तथा फल मिलने ही चाहिए। मै जानता हूँ कि बहुत बडी बात कह रहा हूँ क्योकि आज तो ये गरीब लोग फल क्या चीज है, जानते भी नही। आमके मौसममें थोडे-बहुत आम मिल जाते है और अमरूदके मौसममें अमरूद। ऐसे ही दो-एक फलोके सिवा उन्हे फल खाने को नही मिलते। अनाज भी अच्छा और साफ नही मिलता। गन्दे चावल या गन्दे कदन्न और गन्दा नमक नसीब होता है। उसीपर गुजर करते है। मै चाहता हूँ कि हर एकको युक्ताहार (जिसे अग्रेजीमे 'बैलेन्स्ड डाइट' कहते है) मिलना चाहिए। हर एकको साफ-सुथरा और आरामदेह घर भी मिलना चाहिए। इसे मै सच्ची आजादी कहता हूँ। उस आजादीको सामने रखकर ही मैंने मैथिलीशरणजी को वह वाक्य लिखा है।

जितना सूत इस साल आया है, पहले कभी नही आया था। जेलोमें से जो हिसाब आया है, वह मुझे नचाता है। मैथिलीशरणजी लिखते है कि आगरा जेलमें उनके साम्यवादी साथी भी कातते है, गो कि उनको मेरी बातोमे श्रद्धा नही है। उन मित्रोको किसीने मजबूर नही किया। अपनी इच्छासे उन्होने कातना शुरू किया। यही अहिंसाकी रीति है।

गुजरात (पजाब) जेलमे से भी हिसाब आये है। मेरा मतलब यह नही है कि सभी कातते है। जो नही कातते उनके भी नाम आये है। लेकिन कातनेवाले ज्यादा है। यह सब देखकर मेरी आशा बढती जाती है। मै तो एक अदम्य आशावादी ठहरा। लेकिन मुझे भी इतनी आशा नही थी। खादीका नियम काग्रेसके विधानमें तो है। लेकिन आजतक काग्रेस कमेटियाँ सिर्फ नियम-पालनके लिए ही खादीको अपनाती आई है। अब कुछ श्रद्धासे काम हुआ है, ऐसा मै मानता हूँ।

लेकिन यह कहते हुए मै ऐसा मूर्ख नही हूँ जो यह समझूँ कि अब तो खादी चल पडी। जो-कुछ हुआ है वह मेरी आशा और विश्वासको दृढ करने के लिए काफी है। लेकिन खादीकी दृष्टिसे काफी नही है। ये सब शुभ चिह्न है। लेकिन गरीबी और बेकारी दूर करने के लिए इतना काफी नही है। करोडो लोग जबतक खादी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

नही पहनेंगे, तबतक यह सवाल हल नही होगा। लोग जिस प्रकार अपने घरका बना भोजन करते है उसी तरह घरकी खादी पहनें, यही मेरा स्वप्न है।

मैं ये सारी बातें इसलिए बतला रहा हूँ कि लोग मुझसे हमेशा एक सवाल पूछते रहते है। आज ही एक खत आया है। पूछते हैं, "इस लडतसे क्या होगा? इससे सरकारपर कोई असर नही होता। उसकी रफ्तार बिलकुल धीमी है। सरकार जरा भी परवाह नही करती। कितने ही सत्याग्रही मारे-मारे फिरते है। उनको पकडती भी नही है। आपकी ऐसी लडत क्या काम आयेगी?"

मेरा उत्तर यह है कि आप भले ही ऐसा कहते रहे, लेकिन मुझे तो ऐसा लगता है कि मेरी लड़ाई जैसी मै चाहता था, वैसी ही चल रही है। उसकी गतिसे मुझे सन्तोष है। आज मैं उसे इससे तेज चलाना नही चाहता। इसका यह मतलब नही कि उसका वेग कभी बढेगा ही नही। जब मौका आयेगा तब तेजीके साथ चलाई जायेगी। वह मौका आज नही है। हर एक बात मौकेसे ही अच्छी या बुरी होती है। समयपर सूखी रोटी भी काम की होती है। लेकिन बेमौके जलेबी भी नुकसान करती है। जब मौका आयेगा तब हमारी लडाईका वेग भी बढेगा।

कुछ लोग आज ही चमत्कार चाहते हैं। ऐसा अकस्मात् चमत्कार अहिंसामे नही है। अहिंसा उत्पात नही करती। लेकिन जो देखें, उसके लिए उसमे नित्य चमत्कार भरा पडा है। आकाशको हम रोज देखते हैं। लेकिन उसके चमत्कारको नही जानते। आकाशके चमत्कारको देखने के लिए जिनके आँखे है, वे दग रह जाते हैं। प्रति क्षण नये-नये चमत्कार देखते है। आकाश तो ईश्वरकी शक्तिका बहुत छोटा-सा अश मात्र है। अहिंसा भी तो उसीकी देन है। वह उसके कानूनके अनुसार चलती है। वह कानून इतना गहन है कि उसके परिणाम चमत्कारी होते हुए भी चमत्कार-से नही दिखाई देते। एक स्वाभाविक क्रमके जैसे मालूम होते हैं। हमारी अहिंसक लडाईका विकास भी उसी कानूनके मुताबिक होगा। जब अहिंसासे स्वराज्य आ जायेगा, तब वह इतना स्वाभाविक-सा मालूम होगा कि हमारे ख्यालमे ही नही आयेगा कि कोई चमत्कार हो गया है।

लोग कहते है कि सरकारपर दबाव डालने का यही तो मौका है। इस दृष्टिसे तुम्हारी सत्याग्रहकी मौजूदा लड़ाई बिल्कुल बेजान है। मैं उनसे कहता हूँ कि जो बात बम्बईके प्रस्तावमे[१] लिखी गई है वह मजाक नही है और जगतको चकमा देने के लिए नही लिखी गई है। काग्रेस एक जिम्मेवार और ईमानदार सस्था है। उसके प्रस्ताव गम्भीर और प्रामाणिक होते हैं। उनमे अतिशयोक्ति नही होती। बम्बईवाला प्रस्ताव अहिंसाकी नीतिको मानता है। उसमे काग्रेसजनोको निरन्तर सचेत और जाग्रत रखने के लिए एक वाक्य है।[२]

१. देखिए खण्ड ७३, पृ० १-३।

२. जो इस प्रकार है: काग्रेसजनोंके मनमें (अंग्रेजों के प्रति) कोई दुर्भावना नहीं है और सत्याग्रहकी वृत्ति काग्रेसको उन्हें तंग करनेकी इजाजत नहीं देती।

बम्बईके प्रस्तावमें जब अहिंसाकी नीति इतने साफ शब्दोमे बतलाई गई है, तब हम कैसे कह सकते हैं कि अंग्रेजोकी मुसीबत हमारे लिए सबसे बडा मौका है? कांग्रेस कैसे कह सकती है कि जब वे खुद गिर रहे है, तब हम उन्हे एक धक्का और लगा दे। कौन जानता है कि अंग्रेज दरअसल गिर रहे हैं? देखने मे ऐसा जरूर लगता है। लेकिन मै ऐसा नही मानता। जैसा दीखता है वैसा हमेशा नही होता। बोअर-युद्धमें भी एक मौका आया था, जब ऐसा लगता था कि अब तो अंग्रेज गये। लेकिन परिस्थितिने अचानक पलटा खाया और वे जीत गये।

आज भी हम नही जानते कौन हारेगा। हम नही चाहते कि कोई भी हारे। हम तो चाहते हैं कि सब आपसमे मिलकर समझौता कर ले और एक दूसरेके भाई-भाई बनकर रहें। मेरी जबानसे यह कैसे निकल सकता है कि जर्मनी हारे या रूस हारे या इंग्लैड और अमेरिका हारे। मै तो यही कहूँगा कि ईश्वर करे और कोई न हारे। सब भाई-भाई बन जाये।

अहिंसा कहती है, "तुम किसीको अपना वैरी न मानो। जो तुमको अपना वैरी मानता हो उसे भी प्रेम करो।" तब हम अंग्रेजोकी मुसीबतसे फायदा कैसे उठा सकते हैं?

तब आप कहेंगे कि "हम तो तबाह हो जायेंगे। अंग्रेजोसे हम हार जायेंगे।" यह अश्रद्धाका लक्षण है। जो अहिंसाकी नीतिका आश्रय लेता है, वह किसीसे नही हारता। मै आपसे फिर कह दूँ कि अहिंसाके कोश मे 'हारना' शब्द ही नही है। हार-जीत हिंसक लडाईमें होती है। अहिंसामें जीत-ही-जीत होती है। इस मौकेपर मैं नही बता सकता कि हमारी अहिंसा सफल कैसे होगी?

लेकिन अंग्रेजोको तंग करना नही है, इसका अर्थ यह नही है कि हम उनकी मदद करे। वे हिंसक उपाय काममे ला रहे हैं, हमें अहिंसाके सिद्धान्तपर दृढ रहना है। इसलिए उन्हें थोडी-बहुत तकलीफ तो होगी। लेकिन यह हमारे वशकी बात नही है। जिस सिद्धान्तसे दुनियाका कल्याण है और अंग्रेजोकी भी भलाई है, उसे हम कैसे छोड सकते हैं? लेकिन अगर हम इस मर्यादाका उल्लंघन करे तो हिंसा करेंगे। मै चाहता हूँ इस मर्यादाका आप लोग ध्यान रखे।

मुझसे लोग पूछते है 'इस सत्याग्रहका नतीजा क्या होगा? इसमें तो भले-बुरे सभी तरहके आदमी आ गये हैं। झूठे और दगाबाज लोग भी सत्याग्रहके नामसे जेलोमें गये है।' मैं जानता हूँ कि कोई सूबा ऐसा नही है कि जहाँ बुरे आदमी जेलोमें नही गये हैं। लेकिन मुझे यह भी मालूम है कि एक भी सूबा ऐसा नही है जहाँ जैसे आदमी मै चाहता हूँ वैसे आदमी भी जेलोमें न गये हो। इसीलिए मैंने जन-आन्दोलन शुरू नही किया। अभी जन-आन्दोलन छेड दूँ, तो शायद लोग कूद पडेंगे। ऐसी हालतमें अंग्रेज क्या करेंगे? दूसरा जलियाँवाला बाग करेंगे। मुझे इसका डर नही है। लेकिन मै अपनी तरफसे ऐसा मौका नही देना चाहता। हम बिलकुल अहिंसक रहे और वे जलियाँवाला बाग करे, तो मुझे परवाह नही है।

परन्तु मै तो कहता हूँ कि जो मुट्ठी-भर सच्चे आदमी हमारी नजरोके सामने है, उतने भी अगर सच्चे रहे तो वह भी हिन्दुस्तानके लिए शुभ सगुन है। इसीमे से अहिंसाकी व्यापक लड़ाईकी तैयारी हो जायेगी।

इसके लिए प्रामाणिकताकी जरूरत है। यह सबसे बडी शर्त है। जो काग्रेसजन खादीमे विश्वास नही करते, सार्वजनिक जीवनमे अस्पृश्यता-निवारण करते हैं, लेकिन अपने निजी जीवनमे छुआछूतका ख्याल रखते है, जो काग्रेसी हिन्दू मुसलमानोसे नफरत करते है या जो काग्रेसी मुसलमान गैर-मुसलमानोसे नफरत करते है, वे सत्याग्रही होने के लायक नही हैं। वे जेलमे चले भी जाये, तो उससे हमारा कदम आगे बढनेवाला नही है। जैसे चोर-डाकू जेलमे जाते है, उसी तरह वे भी चले जायेगे। वे सत्याग्रही नही, सिर्फ कानून तोडनेवाले हैं। उनका कोई अच्छा असर नही होगा। वे नाहक अपना घर-वार और कमाई छोडकर जेलमे क्यो जाये? हम तो चाहते है कि थोडे ही आदमी जेलमे जाये, लेकिन वे ऐसे हो कि उनके आचरण का नैतिक परिणाम हो।

सविनय भग बुलन्द हथियार है। लेकिन मैंने जो तेरह प्रकारका रचनात्मक कार्यक्रम[1] बतलाया है उसे पूरा करना चाहिए। तबतक यह हथियार काम नही देगा। मै जानता हूँ कि हिन्दुस्तानके करोडो आदमी जेलोमे नहीं जा सकते। इसकी जरूरत भी नही। लेकिन करोडो आदमी रचनात्मक कार्यक्रममे विश्वास करे, यह जरूरी है। उस कार्यक्रमका खादी मध्यबिन्दु है। यह जरूरी है कि करोडो खादी पहने। विदेशी या देशी मिलोका कपडा न पहने, छुआछूत न माने। अगर वे इतना भी नही कर सकते तो अहिंसासे आजादी कैसे मिल सकती है? जो थोडी-सी भी तकलीफ उठाना नही चाहते, वे आजादी चाहते ही क्यो है?

अगर अहिंसासे आजादी लेनी है तो यही रास्ता है। अगर जोर-जबरदस्तीसे काम लेना है, तो वह रास्ता हिटलरका है। दो ही रास्ते हैं। या तो हिटलरका, याने हिंसाका, या मेरा, याने अहिंसाका। चर्चिलशाही और हिटलरशाही हकीकतमे दोनो एक हैं, फर्क मात्र मिकदारका है।

यह सूत और ये पैसे मुझे भेट करके आप बतलाते है कि आप उस रास्तेसे नही जाना चाहते। मेरी हमेशा यह श्रद्धा रही है कि वह मौका आनेवाला है जब कि सारा हिन्दुस्तान समझ लेगा कि अहिंसाका रास्ता ही सही रास्ता है। खादीके लिए तो वह दिन जल्द आ रहा है, जब सारा देश मान लेगा कि खादीके सिवा दूसरा कपडा त्याज्य है। खादी जयन्तीके सारे पैसे तो मैं खादीके काममे ही लगाऊँगा। लोग पूछते हैं, "ये पैसे काग्रेसके काममे नही लगाये जाये?" यो तो खादी भी काग्रेसका काम है, लेकिन लोग काग्रेसके कामसे पार्लमेंटरी कार्यक्रम या सरकारसे लडने का आन्दोलन ही समझते हैं। यह गलत खयाल है। ये पैसे तो खादीके काममे ही आयेगें।

मध्य प्रान्तके तीनो विभागोसे यह जो पैसा आया है, उसका उपयोग खादीके काममे कैसे किया जाये, यह सोचना होगा। तीनो विभाग, मिलकर या अलग-अलग अपने-अपने क्षेत्रके लिए योजनाएँ भेजें। जाजूजी[2] उनकी सूचनाओका आदर और स्वागत करेगें। अगर हम उनको स्वीकार न कर सके, तो उन्हे कारण बतायेगें।

१. देखिए खण्ड ७२, पृ० ४२४-२७।

२. श्रीकृष्णदास जाजू

लोग मुझे डाकसे सूत भेज देते है। पता नही डाकसे क्यो भेजते हैं। सूत कितनेका होता होगा? उससे ज्यादा भेजने का महसूल लग जाता है। मैं चाहता हूँ कि लोग मुझे बनी-बनाई खादी भेजे। जेलमे से भी अपने सूतकी खादी ही भेजें। आज लोग चरखा चलाते हैं, काफी लोग करघा चलाना भी सीखे और खादी बुनकर भेजें। मुझे अपने लिए खादीकी जरूरत नही है। मेरे पास तो पहनने-ओढने लायक खादी आ जाती है। इसलिए लोग अपने सूतकी खादी बनाकर अपने प्रान्तके चरखा सघमें ही रखें, तो भी हर्ज नही। लेकिन एक दृष्टिसे मेरे पास भेजना भी अच्छा ही है। प्रति वर्ष खादीमें कितनी तरक्की होती है, सूत कितना अच्छा होता जाता है, इसका मुझे पता चलता है। हमारा सूत हर साल सुधरना चाहिए। लेकिन मेरे पास सूत भेजकर रेलका भाडा हम न दें। खादी मेरे पास आती रहे। मेरे निरीक्षणके लिए नमूना ही भेजें, तो काफी होगा।

हम सबको इस खादीके काममें ज्यादा शक्ति और बुद्धि लगानी चाहिए। यह काम जेलमें भी हो सकता है।

जो लोग जेलमे एक दफा गये है उन्हे तो बार-बार जाना ही है। पीछे हटने की बात ही नही है। इसका यह मतलब नही कि हम इस विषयमे कोई विवेक नही करेगे। विवेक तो चाहिए। जिस मनुष्यका शरीर कोशिश करने पर भी जेलमे बिगड गया है, उसे हम फिरसे कैसे भेज सकते हैं? वह तो एक प्रकारका आक्रमण होगा।

कोई पूछते है, बार-बार वे ही आदमी क्यो जायें? नये-नये आदमी क्यो नही भेजते, जिससे सत्याग्रह भी चलता रहेगा और लोग भी तग नही आयेंगे? मैं कह चुका हूँ कि अहिंसक लडाईका अपना खास ढग होता है। हम हिटलरशाहीसे काम नही ले सकते। यूरोपमे राक्षसी लडाई चल रही है। वहाँ राक्षसी पैमानेपर सहार हो रहा है। बच्चे, बूढे, बीमार, सब कुचले जा रहे हैं। राक्षसी लडाई भी कुरबानीके बिना नही चलती। अहिंसाकी लडाईमे राक्षसी परिमाणमे कुरबानीका मौका नही है। यहाँ तो नैतिक प्रभाव डालना है। उसके लिए गिने-चुने लोगोको कुरबानी करनी पडेगी। अबतक तो कुछ भारी त्याग नही करना पडा है। बार-बार जेल जाने मे जो कष्ट उठाना पडे, उसे भी अगर हम बरदाश्त न कर सकें, तो हमारी कुरबानीकी क्या कीमत होगी?

एक सवाल और है। जेलमे भी हम लडाई करे या नही? वहाँ भी कई बाते खडी हो जाती है। 'अ', 'ब', 'क' वर्गोका झमेला है। लेकिन क्या करे? ये वर्ग भी काग्रेसवालो के जरिये बने। मैं जानता हूँ कि आखिरमें इन वर्गोको जाना है। दरमियान 'क' वर्गकी खुराकमे सुधारके लिए काफी गुजाइश है। मैंने कहा तो है कि इस विषयमें डॉक्टर लोग चाहे तो बहुत-कुछ करा सकते हैं? लेकिन माना कि उन लोगोकी भी नही चली। तो भी हमारी लडाई तो चलती ही रहेगी। लोग बार-बार जेलमें जायेंगे। जेलमे तकलीफ होगी। पूरी खुराक नही मिलेगी। ऐसी हालतमें कुछ लोगोको मरना होगा, तो मैं मरने दूंगा। उसके लिए भी हम तैयार रहे।

हमारे लिए दूसरा रास्ता ही नहीं है। हमारी लड़ाई स्वार्थत्यागकी, कुरबानीकी, कष्ट-सहनकी लड़ाई है। अहिंसाकी लड़ाईकी यही रीति है।

सर्वोदय, नवम्बर, १९४१

१२. पत्र : अमृतकौरको

१३ अक्तूबर, [१९४१][1]

प्रिय पगली,

कलका दिन भी अत्यन्त व्यस्त रहा। इसलिए तुम्हें एक कार्ड डालकर ही सन्तोष करना पड़ा।

मेरा खयाल है, मैं तुम्हें यह बता चुका हूँ कि जो संविधान बैठकमें पेश किया गया उसके सम्बन्धमें तुम्हारे भेजे संशोधन मुझे मिल गये थे। सभी सुझावोंपर विचार करने के लिए एक छोटी-सी समिति बना दी गई है। राजेन बाबू उसके अध्यक्ष हैं।

लगता है, गर्मीका प्रकोप कम हो गया है।

लीलावती बुखारसे छुटकारा पा चुकी है। मगनलाल[2] परीक्षा देकर दिल्लीसे वापस आ गया है। वह बड़ा दिलेर है। तीसरी बार अनुत्तीर्ण हुआ है। इस बार भी उसे सहज ही सफलता मिल जायेगी, इसकी उम्मीद उसे नहीं है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०९७) से, सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७४०६ से भी

१३. पत्र : चोइथराम गिडवानीको

१३ अक्तूबर, १९४१

प्रिय चोइथराम,

हालाँकि मैंने कहा है कि अगर मेरा विश्लेषण स्वीकार्य हो तो तुम जयराम-दासके[3] कहे अनुसार करो, लेकिन अब मैं अपनी शर्त खुशी-खुशी वापस लेता हूँ।

१. साधन-सूत्रमें सन् "१९३४" मिलता है जो कि एक चूक जान पड़ती है। क्योंकि पत्रके विषयसे पता लगता है कि यह पत्र १९४१ में लिखा गया होगा। अमृतकौरने भी इसे १९४१ के पत्रोंमें रखा है।

२. डॉ० प्राणजीवनदास मेहताके पुत्र

३. जयरामदास दौलतराम

जैसा जयरामदास कहे, वैसा ही करो। यहाँतक कि वह कहे तो त्यागपत्र भी दे दो। उनकी समझदारीमें मेरा विश्वास अडिग है।

तुम्हारा,
बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ९२५९)मे। सौजन्य : जयरामदास दौलतराम

१४. पत्र : डॉ० मुखर्जीको

सेवाग्राम
१३ अक्तूबर, १९४१

प्रिय डॉ० मुखर्जी,

आपके पत्रके लिए धन्यवाद।

मान लीजिए कि ईसाई लोग ईसाइयोकी हैसियतसे किसी सामाजिक बुराईको मिटाना चाहते हैं और उससे निबटने के लिए एक सघकी स्थापना करते हैं। मेरा खयाल है कि उसमें वे केवल ईसाइयोको ही शामिल करना चाहेंगे। यदि आप इस बातको स्वीकार करते हैं तो हरिजन सेवक सघमे लगाये गये प्रतिबन्धको सही मानेंगे। हिन्दुओंने पाप किया है और उन्हे इसका प्रायश्चित्त करना है। अन्य लोग उनके प्रति अपनी सहानुभूति व्यक्त कर सकते है, लेकिन उनके साथ मिलकर प्रायश्चित्त नही कर सकते। बेशक, मुसलमानो और ईसाइयोमे भी अस्पृश्यताकी बुराई व्याप्त है, जिसका कारण हिन्दू समाजका यह अत्यधिक सक्रामक रोग है। हिन्दू लोग तो अपने-आपको इस रोगसे पूरी तरहसे मुक्त कर ईसाइयो और मुसलमानोकी केवल सहायता ही कर सकते है, बाकी काम तो सम्बन्धित कौमोको खुद ही करना होगा।

जो बात बिलकुल स्पष्ट है उसे राजनीतिक परिणामोको देखते हुए नजरअन्दाज किया जा रहा है। लेकिन बुराईकी जड़ धर्ममें घुस आये विकारमे है। यदि यह बात आपको स्पष्ट न हो पाई हो तो आप इस विषयपर तबतक विचार-विमर्श करते रहे जबतक हममे कमसे-कम परिणामोंके बारेमे सहमति नही हो जाती।

आशा है, आपकी पत्नी स्वस्थ होगी। कहने की जरूरत नही कि आप जब आ सकते हो तब आ जायें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० ७८६५) से। सौजन्य घनश्यामदास बिडला

१५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

१३ अक्तूबर, १९४१

भाई वल्लभभाई,

मै धीरूभाईके[1] बारेमे समझ गया। तुम इस मामलेसे बिलकुल अलग रहना। होना कुछ नही है। मेरा जो भी अधिकार है, उसका आधार ही दूसरा है। तब क्या हो सकता है?

क्या सत्यमूर्ति तुमसे मिले? उन्होंने मिलने को कहा तो था। उनके मनमे यह बात बिलकुल स्पष्ट है। यदि मिल जाये तो वे आज यह पद ले लेगे। मगर काग्रेसके विरुद्ध कुछ न करेगे। काग्रेसके सिवा उनकी कोई गति नही।

फरीद अन्सारी[2] कल आ गये। वे अपनी बहनसे मिलने आज हैदराबाद जायेंगे और लौटकर यहाँ आयेंगे। आज तो सोमवार है न?

तुम्हारा स्वास्थ्य कैसा है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २६१

१६. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

१३ अक्तूबर, १९४१

चि० बबुडी,

तूने चाहे जितनी सावधानी बरती हो, तेरे दमेका कारण कही हुई कोई भूल ही है। उसकी खोज करना। खानपान, रहनसहन, स्नानमे कही-न-कही भूल हुई है। जो हो गया, वह तो अब सुधारा नही जा सकता, लेकिन भूल पकडमे आने से भविष्यमें उसे रोकने का उपाय हाथ लग जायेगा। आनन्द[3] हिलने-डोलने लगा है, यह

१. भूलाभाई देसाईके पुत्र

२. दिल्लीके एक समाजवादी नेता

३. शारदा गो० चोखावालाके पुत्र

शुभ समाचार है। उसकी भी भली-भाँति देखभाल करना। बच्चोंके बनने या बिगड़ने का यही समय होता है।

बाकी सब तो तुझे प्रभावतीबहनको[1] लिखे पत्रसे मालूम होगा।

तुम दोनोंको,

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००३८)से। सौजन्य: शारदा गो० चोखावाला

१७. पत्र : वैकुण्ठलाल एल० मेहताको

१३ अक्तूबर, १९४१

भाई वैकुण्ठ,

"आपका वह पत्र मिला जिसमें आपने मेरी नियुक्तिकी अवधि तीन वर्ष और बढ़ा दी है। यह प्रस्ताव मैं सहर्ष स्वीकार करता हूँ और मानता हूँ कि मुझे अ० भा० ग्रा० संघके एजेन्टके रूपमें और उसके कार्यक्रमोंके अनुसार काम करना है।"[2]

तुम उपर्युक्त आशयका पत्र लिखो और यदि वे स्वीकार करें तो नियुक्ति कबूल करो।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

इस पत्रकी नकल सरदारको भेज रहा हूँ जिससे कि अगर इसे स्वीकार करने में कोई राजनीतिक पेच हो तो वे हमें बता सकें। मैं तुम्हें सीधे उन्हें ही पत्र लिखने की सलाह दूँगा ताकि नाहक ही समय बरबाद न हो।

मूल गुजरातीसे। वैकुण्ठलाल मेहता पेपर्स, सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१८. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

१३ अक्तूबर, १९४१

चि० ब्रजकृष्ण,

तुमारा खत पढकर बहूत आनद हुआ। सूत खूब निकला। ऐसे करीब-करीब सब जगहका हिसाब है। ऐसे हिसाबकी श्रद्धा खादी इ० रचनात्मक काममें बढे तो बहूत अच्छी बात होगी। सबको धन्यवाद मुबारकबाद। जिसको अपना सूत चाहिये वे रख

१. जयप्रकाश नारायणकी पत्नी

२. यह अनुच्छेद अंग्रेजीमें है।

सकते हैं। मुझे तो अच्छा लगेगा अगर सब अपने सूतकी खादी अपने लिये बनवा लेवे। जैसे चर्खे दाखल किये है ऐसे हि करघे लुम भी जेलोमे दाखल होनी चाहिये जिस पर हाथ सुत बु[ना] जाय। आसानीसे यह बात हो सकती है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

सब उर्दू और हिंदी लिपि सिख लेवे और सब दोनो रूप अच्छी तरह बोलना सीख लेवे।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४८३) से

१९. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

[१४ अक्तूबर, १९४१][1]

एक तो तुम्हारी हालत नाजुक है और फिर यह भी नही कहा जा सकता कि तुम्हारा इलाज कबतक चलेगा। इसलिए मेरी स्पष्ट राय है कि तुम्हे सविनय अवज्ञामे फिर शामिल होना अनिश्चित कालके लिए स्थगित कर देना चाहिए और शरीरको पूरा विश्राम देते हुए चिकित्सककी सलाहपर चलना चाहिए।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-१०-१९४१

२०. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम
१४ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। कहने की जरूरत नही कि जबतक तुम कमसे-कम पखवाड़े-भर लगातार स्वस्थ न रह लो तबतक शम्मीको[2] कष्ट मत दो। जबतक वहाँका मौसम तुम्हे रास आ रहा है तबतक वहाँसे चलने की जल्दी करने की कोई जरूरत नही है।

यहाँ एक होमियोपैथ डॉक्टर है। वह भी मेरी ही तरह सनकी है। प्रभाकरको मैंने उसीके सिपुर्द कर दिया है। कल ही उसने उसका इलाज अपने हाथमे लिया

१. यह रिपोर्ट "वर्धा, १४ अक्तूबर" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।
२. अमृतकौरके भाई कुँवर शमशेरसिंह

और आज प्रभाकरमें स्पष्ट सुधार दिखाई दे रहा है। जैसा कि तुम जानती हो, इस चिकित्सा-पद्धतिमें मेरा विश्वास नही है, हालाँकि इसके अपेक्षाकृत सरल होने से मैं इसमें अपना विश्वास जगाना चाहूँगा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०९८) से, सौजन्य . अमृतकौर। जी० एन० ७४०७ से भी

२१. पत्र : सी० के० नारायणस्वामीको

सेवाग्राम
१४ अक्तूबर, १९४१

प्रिय नारायणस्वामी,

आपका पत्र पाकर और यह जानकर बडी खुशी हुई कि आखिरकार आपको आश्रम और आश्रमके लोग अच्छे लगने लगे।

आप जब चाहें तब अपनी पत्नीके साथ आ जायें।

चूँकि आप पूरे दिलसे अहिंसा और रचनात्मक कार्यक्रमसे सहमत हैं इसलिए आपके समाजवाद और मेरे समाजवादमें बहुत कम अन्तर है।

मैं रचनात्मक कार्यक्रमके अनुसार गाँवोका पुनर्गठन कर रहा हूँ, लेकिन मैं उसमे तथाकथित राजनीतिक कार्यक्रमको मिश्रित नही करता। दोनो मिश्रित हो भी नही सकते, हालाँकि इन दोनोपर काम करनेवाले लोग कांग्रेसी हैं। रचनात्मक कार्यक्रम अपने-आपमें सम्पूर्ण है।

हृदयमे आपका,
बापू

श्री सी० के० नारायणस्वामी
मार्फत 'बॉम्बे क्रॉनिकल'
बम्बई

अंग्रेजीकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य · प्यारेलाल

२२. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

१४ अक्तूबर, १९४१

चि० मणिलाल और सुशीला,

इसके साथ चिमनलालका एक पत्र है। यानी उसे पत्र लिखने का मैंने यह बहाना बनाया है। इसके पहलेका मेरा पत्र मिला होगा।

मणिलालका पत्र आखिर नही ही मिला। अब मैंने आशा छोड दी है।

नीलकंठ[1] और सुरेन्द्र[2] कुछ दिन यहाँ रह गये। यहाँ जिन्हें तुम जानते हो, वे सब कुशल है।

दिवाली आ रही है, लेकिन मुझे दिवाली जैसा लगता नही। तुम्हारे लिए भी वहाँ दिवाली जैसा क्या है?

तुम्हारे नये हाई कमिश्नर मुझसे मिलने आनेवाले है। उन्होने लिखा है कि वे पूर्णत निष्पक्ष रहेंगे। उनसे मुलाकातके बाद लिखूंगा। तुम तो शिष्टाचारके नाते मिलोगे ही। उन्हे फीनिक्समें निमन्त्रित करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९२३) से

२३. पत्र : मगनलाल क० नायकको

१४ अक्तूबर, १९४१

भाई मगनलाल,

आपका २० तारीखका पत्र मैं अभी-अभी पढ पाया। मैं सब पत्रोका उत्तर समयपर नही दे पाता। मेरी रायका अब क्या मतलब रहा? फिर भी दे रहा हूँ। ये भाई प्रतिज्ञा लेना चाहते है तो ले ले। लेकिन उसका महत्त्व ये लोग नही जानते, ऐसा कटु अनुभव मुझे हुआ है। अत उत्तम मार्ग कदाचित् यही है कि उनसे सम्पर्क बनाये रखा जाये और वे जितना करे उससे सन्तोष माना जाये।

मो० क० गांधीका वन्दन

मगनलाल कहानजीभाई नायक
कुर्ला

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०११५) से

१. नीलकंठ मशरूवाला
२. सुरेन्द्र मशरूवाला

२४. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम
१५ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा कहना ठीक है। कुटियाके इतने अधिक विस्तारसे भीड-भाड़ हो जाने की पूरी आशंका है। उसका एकान्त समाप्त हो जायेगा। देखें, क्या होता है।

मैंने तुम्हें पूरे पखवाडे-भर अपने स्वास्थ्यको परखने का सुझाव दिया है। वैसे भी यह तुम्हारे लिए यहाँ आने का मौसम नही है। रातें अच्छी होती है, लेकिन दिन बड़े कष्टकर। इसलिए तुम यहाँ नही हो, यह हर तरहसे अच्छा है।

आसफ अली वर्धामें है। वह अभी आनेवाला ही है। इसलिए विदा।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४०९९) से; सौजन्य. अमृतकौर। जी० एन० ७४०८ से भी

२५. पत्र : दुनीचन्दको

१५ अक्तूबर, १९४१

प्रिय लाला दुनीचन्द,

आपके पत्रके लिए अनेक धन्यवाद। जो-कुछ भी मुझे लिखा जा रहा है या मुझसे कहा जा रहा है, उस सबपर मै विचार कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५५८६) से

२६. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

१५ अक्तूबर, १९४१

प्रिय अम्बुजम,[1]

जमनालालजी के पत्रसे मुझे अभी-अभी मालूम हुआ है कि वे ९००० रु० से कुछ अधिकमे जेवर बेचने में सफल हो गये है।[2] वे इसे अच्छी कीमत मानते है। पत्र कही इधर-उधर हो गया है। यदि वह मुझे मिल गया तो मै तुम्हे बिलकुल सही रकम लिख भेजूंगा। तुमने अपने पत्रमे इस सम्बन्धमे कुछ लिखा है। यदि तुम्हारे पास कोई ठोस सुझाव हो तो मुझे लिखना।[3]

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

२७. पत्र : मदालसाको

१५ अक्तूबर, १९४१

चि० मदालसा,[4]

मुझे मुश्किलसे ही सपने आते है किन्तु तेरे सम्बन्धमे निरन्तर सोचते रहने के कारण तेरे बारेमे सपना देखा। उक्त सपनेके आधारपर यह पत्र लिखने को प्रेरित हुआ हूँ। सपना तीन दिन पहले आया था, किन्तु पत्र लिखने का समय आज ही मिल पाया है।

बालकको पाल-पोसकर बड़ा करने मे भी उतनी ही सावधानी रखनी पड़ती है जितनी उसे गर्भमे रखने मे। तेरे दूधका गुण तेरे खान-पान और रहन-सहनपर निर्भर करता है। जिस तरह तेरे खान-पानका असर तेरे दूधपर पडता है उसी प्रकार तेरे स्वभाव और विचारोका भी पड़ेगा। मै यह अपने अनुभवकी बात लिख रहा हूँ

१. एस० श्रीनिवास अयंगारकी पुत्री

२. देखिए खण्ड ७४, "पत्र: एस० रंगनायकीको", पृ० १३२-३३।

३. देखिए पृ० ३४ भी।

४. जमनालाल बजाजकी पुत्री जिनका विवाह श्रीमन्नारायणके साथ हुआ था

इसलिए इसे मान लेना। इसलिए तू जो भी खुराक ले उसे आग्रहपूर्वक औषध समझकर लेना, न कि स्वादके लिए। औषधसे जो स्वाद मिलता है वही सच्चा स्वाद है और पोषक है। 'औषध' को रूढ अर्थमें लेकर उससे घृणा मत करना। दूधको औषधके रूपमें लिया जा सकता है और स्वादके लिए भी। एकसे शरीर बढता है और दूसरेसे छीजता है। शिशुको ठीक ढगसे कसरत, मालिश और हवा मिलनी चाहिए। इस मामलेमें किसीकी बात मत सुनना। लाड लडाने को बहुत-से लोग तैयार हो जायेंगे। वे चाहे जो कहे किन्तु तू करना अपने ही मनकी।

मेरे सपनेका मतलब पूरा हो गया। आशा है, तू सानन्द होगी और बच्चा बढता जा रहा होगा। आशा है, तुम माँ-बेटी झगडा नही करती होगी। तू रोती नही होगी। यदि खटियासे उठने के बाद तू यहाँ कुछ महीने रह जाये तो शायद अच्छा होगा।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२२

२८. पत्र : श्रीमन्नारायणको

१५ अक्तूबर, १९४१

चि० श्रीमन,

मैंने तुमारे निवेदनमें सुधारणा की है। यदि अच्छी लगे तो करो। नँहि तो जैसे लिखा है ऐसे हि जाने दो।

बापुके आशीर्वाद

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३००

२९. पत्र : विद्यावतीको

१५ अक्तूबर, १९४१

चि० विद्या,

तुम्हारे दुखकी कोई सीमा?[1] लेकिन तुम्हें क्या? कोई आज मरे कोई कल, मरना तो सबको है? इसमे शोक क्यो? और तुम्हने तो मुलकके लिये दीक्षा ली है, फिर क्या? होशियार रहो, सबको पूर्ववत् हिम्मत दो और सेवा-कार्यमे और भी तन्मय हो जाओ। भगवान तुमको शांति देवे।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे रानी विद्यावती पेपर्स। सौजन्य : गाधी स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. विद्यावतीके पतिका देहान्त हो गया था।

३०. पत्र: चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

१६ अक्तूबर, १९४१

प्रिय सी० आर०,

तुम्हारे भाईका यह परीक्षा-काल है।[१] ईश्वर उन्हें शान्ति दे। मुझे उनका एक छोटा-सा प्यारा पुर्जा मिला था।

मैं २१ तारीखको तुम्हारी राह देखूंगा। तबतक वल्लभभाई यहाँ आ जायेंगे।

मुझे तो लगता है कि मुझे अपनी यह प्रशंसा स्वीकार नहीं करनी चाहिए कि अंग्रेजी भाषाके बोलचालके शब्दोंका मुझे तुमसे अधिक ज्ञान है। मैं तो यह भी नहीं जानता था कि 'ओ० के०'[२] और 'ए वन'[३] बोलचालकी भाषाके शब्द हैं? इस तरह तुम मेरा भाषा-दारिद्रय समझ सकते हो। जो भी हो, तुम्हारा स्वास्थ्य जैसा जेलमें था उससे भी खराब हो, यह नहीं चलेगा। और नतीजा तो तुम जानते ही हो!!

आसफ अली कल कलकत्ता रवाना होगा। सबकी — मेरी भी — नजरें तुमपर टिकी हुई हैं।

तुम्हारा जामाता[४] तो अब प्रतिष्ठित पत्रकार बन गया है। पापाका[५] क्या हाल है?

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०९०१) से, सौजन्य: सी० आर० नरसिंहन्। जी० एन० २०८२ से भी

१. उनके दो पुत्र तभी काल-कवलित हो गये थे।
२. "ठीक है" का अंग्रेजी पर्याय
३. "सर्वश्रेष्ठ" का अंग्रेजी पर्याय
४. देवदास गांधी
५. चक्रवर्ती राजगोपालाचारीकी सबसे बड़ी पुत्री

३१. पत्र : प्रफुल्लचन्द्र घोषको

१६ अक्तूबर, १९४१

प्रिय प्रफुल्ल,

तुम अपना वजन कम होने दो और ज्वरग्रस्त हो जाओ, इसका तुम्हें क्या अधिकार था? खैर, आशा करता हूँ कि अब तुम बीमारीसे उबर गये होगे। सुरेश का पत्र आया था। मैंने उत्तर दे दिया था। सरदार वगैरह २० तारीखको जाने-वाले हैं। शेष सब शुभ है।

स्नेह।

बापू
(मो० क० गांधी)

[पुनश्च :]

तुम्हारा रेकार्ड श्रेष्ठ और कताई शानदार है।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३७८४) से

३२. पत्र : बी० एल० रलियारामको

१६ अक्तूबर, १९४१

प्रिय आर०,

आपके पत्रके लिए अनेक धन्यवाद।[1] आप और आपके मित्र ८ नवम्बरको शामके चार बजे मिलने आ सकते हैं।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

बी० एल० रलियाराम
जनरल सेक्रेटरी
ए० आइ० काउन्सिल ऑफ इण्डियन क्रिश्चियन्स

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. बी० एल० रलियारामने गांधीजी से मिलकर उन्हें जिन्नाके साथ अपनी और कुछ अन्य लोगोंकी मुलाकातके परिणामसे अवगत करानेकी इच्छा व्यक्त की थी।

३३. पत्र : चम्पा र० मेहताको

१६ अक्तूबर, १९४१

चि० चम्पा,

तेरा पत्र मिला। बडे तीन बच्चोको वहाँ छोडकर यहाँ चली आ। साथमे जेवर मत लाना। जेवर रखने के लिए यहाँ सुरक्षित स्थान नही है। यहाँ मै तेरी देखभाल करने को तैयार हूँ। मगनभाई आज महाबलेश्वर चले गये। उन्हें तेरा पत्र दिखा दिया था। वे राजी है। उन्हे जो कमरा दिया है उसमे मै तुझे रखूँगा। वर्धामें मै तेरी देखभाल नही कर सकूँगा। रतिलाल[1] यदि वहाँ आ जाये, तो मै तुझे बचा नही सकूँगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

यह पत्र नारणदासभाईको पढवा देना।

चम्पाबहन मेहता
मारफत श्री नारणदास गाधी
राष्ट्रीय शाला
राजकोट (काठियावाड)

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०५०) से। सौजन्य : चम्पा र० मेहता

३४. पत्र : अभ्यंकरको

१६ अक्तूबर, १९४१

भाई अभ्यकर,

तुम्हारे आने से तो मुझे प्रसन्नता होगी। लेकिन आश्रममे भीड बहुत है। और तुम्हे इनकार भी कैसे कर सकता हूँ? फिर, नवम्बरके पूर्वार्धमें तो बहुत भीड होने-वाली है। इसलिए अगर दुक्खम्-सुक्खम् किसी तरह रह सको तो १५ तारीखके बाद आना। आने की तारीख मुझे सूचित कर देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० १९३२८) से

१. डॉ० प्राणजीवन मेहताके पुत्र और चम्पाबहनके पति जिनका दिमाग खराब हो गया था।

३५. पत्र: रतिलाल देसाईको

१६ अक्तूबर, १९४१

भाई रतिलाल,

तुम्हारे पत्रका उत्तर देना रह गया जान पडता है। यदि ऐसा है तो मैं अब लिखता हूँ। तुम्हारे पत्रने प्रश्न समझने में मेरी खूब मदद की है। मैं अपना काम चला रहा हूँ। अब जो हो वह ठीक है। क्या हम बर्मी लोगोंके साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं अथवा उन्हें रिझा सकते हैं?

मैं समझता हूँ कि तुम्हारे-जैसे लोग तो इसमें खूब काम कर सकते हैं। जितना बन सके उतना प्रयत्न करो, ऐसी मेरी इच्छा है। आशा है, सब कुशलपूर्वक होंगे।

बापूके आशीर्वाद

रतिलाल देसाई
९४, मुगल स्ट्रीट
रंगून

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य. प्यारेलाल

३६. पत्र: तुलसी मेहरको

[१६ अक्तूबर, १९४१][1]

भाई तुलसी,

तुम्हारा हाथ-कते सूतसे बुना थान मिला। बहुत प्रसन्नता हुई। इसे तो मैं सँभालकर रखूँगा। मेरी इच्छा है कि और लोग भी ऐसा ही करें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४२०७) से

१. जी० एन० रजिस्टरके आधारपर

३७. पत्र : रुक्मिणी बजाजको

[१६ अक्तूबर, १९४१][1]

चि० रुखी,[2]

तेरी हुडी मिली। यह पैसा तेरे लिखे अनुसार खर्च किया जायेगा। आशा है, तेरा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक रहता होगा। पत्र लिखने के कागजोपर अंग्रेजीमें तेरा नाम कौन छपवाता है? अंग्रेजीमें तुझे कितने पत्र लिखने पडते है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९१६२) से। सी० डब्ल्यू० १०१३० से भी, सौजन्य : बनारसीलाल बजाज

३८. पत्र : चक्रैयाको

१६ अक्तूबर, १९४१

चि० चक्रैया,

तेरा खत मिला। तूने लिखा है वह साफ है। अच्छा है। कुछ भी दिलमे आवे तो मुझे फौरन कह दो। बुखार आता है सो अच्छा नहिं लगता। लेकिन देखो दाक्तर क्या करते है और कहते हैं। घड़ी का एक डब्बा लेवे तो अच्छा नहिं होगा? वही से लेने का प्रबध करूँगा।

बापुके आशीर्वाद

श्री चक्रैया
"आरोग्य भवन"
आवडी, मद्रास[3]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९११३) से

१. डाककी मुहरसे।
२. मगनलाल गाधीकी पुत्री जो बनारसीलाल बजाजको ब्याही थीं
३. पता अंग्रेजीमें है।

३९. पत्र : खुर्शेदबहन नौरोजीको

[१६ अक्तूबर, १९४१ के पश्चात्][1]

प्रिय बहन,[2]

तुम्हें उत्तरके लिए प्रतीक्षा करनी ही होगी। यदि अगले कुछ दिनोंमे उत्तर नही आ जाता तो तुम इस आशयका एक संक्षिप्त पत्र लिखना कि मौनको तुम सहमति मानती हो और जैसा तुमने अपने पत्रमें[3] लिखा था, उसके मुताबिक तुम वहाँसे चली जाओगी। इफ्तिखारको[4] लिखने से पहले कुछ दिन प्रतीक्षा कर लो।

फरीद[5] कहता है कि शायद वह सत्यवतीको[6] यहाँ ले आये।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

४०. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

१७ अक्तूबर, १९४१[7]

प्रिय अमृतलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। इस पत्रमें तुमने जो-कुछ लिखा है उसका मतलब मुझे तुम्हारे पिछले पत्रसे अलग लगता है। अब मैंने कनुसे[8] तुम्हारे पास जाने को कहा है। आभाके[9] लिए उसका स्नेह अभी भी कायम है। लेकिन वह यह महसूस करता है कि उससे भूल हो गई और इसलिए अब अगर आभासे उसका विवाह न हो पाये तो उसने अपने मनको इस बातके लिए मना लिया है। यदि तुम्हारी और

१. खुर्शेदबहनके जिस पत्रके उत्तरमें यह पत्र लिखा गया है उसपर १६ अक्तूबर, १९४१ की तारीख पड़ी हुई है।

२. सम्बोधन गुजरातीमें है।

३. देखिए खण्ड ७४, पृ० २२८-३२ और "पत्र : अमृतकौरको", पृ० ३५३।

४. इफ्तिखारुद्दीन, पंजाब प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके प्रधान

५. फरीद अन्सारी

६. स्वामी श्रद्धानन्दकी दौहित्री

७. तारीख देवनागरी लिपिमें है।

८. नारणदास गांधीके पुत्र

९. अमृतलाल चटर्जीकी पुत्री

तुम्हारी पत्नीकी इच्छा हो और आभा कनुसे शादी करनेको उत्सुक हो, तभी उसे मेरे पास आना चाहिए। अगर वह मेरे पास आती है तो तुम्हे उसे कुछ समयके लिए भूलना होगा, जैसे कि तुमने शैलेन[1] और धीरेनको[2] उनकी शिक्षा पूरी होने और जीविका कमाने योग्य बन जानेतक के लिए भुला दिया है। आभाको यही प्रशिक्षण दिया जायेगा और मैंने उसे इस योग्य समझा तो राजकोट भी भेजा जायेगा। यदि दोनोने सयमसे काम लिया और आभा कनु तथा उसके माता-पिताको अब भी पसन्द करती हो और यहाँके परिवेशसे सन्तुष्ट हो एव उसका स्वास्थ्य ठीक रहा तो कनुसे उसका विवाह हो जायेगा। जहाँतक मेरा खयाल है, दोनोको विवाहके लिए दो वर्ष प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। तुम्हे, तुम्हारी पत्नी या आभाको यह सब पसन्द न हो तो उसे यहाँ नही आना चाहिए। उस हालतमें तुम्हे आभाको अपने पास रखकर प्रशिक्षित करना चाहिए और जैसा तुम्हे ठीक लगे वैसा करना चाहिए। उसके न आने का मै बुरा नही मानूँगा। मै सिर्फ उसका भला चाहता हूँ और उसे विवाह योग्य बनाना चाहता हूँ। अगर तुम सबकी और आभाकी इच्छा हो कि उसका विवाह कनुके साथ होना चाहिए तो तुम्हे कनुसे स्पष्ट बात करनी चाहिए। आभा यहाँ आने का फैसला करे और तुम सहमत हो तो उसे कनुके साथ भेज सकते हो।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुम सब अब स्वस्थ हो।

शैलेनसे अभी कोई उम्मीद मत करो। मैं दोनोको जल्दीसे-जल्दी तैयार करने की आशा रखता हूँ और इसीसे मैंने उन दोनोको आश्रम-कार्यसे मुक्त कर दिया है।

यदि आभा आनेवाली हो तो यह कनुको दिखा देना। साथका पत्र[3] उसके लिए है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३२५) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

४१. पत्र : अमृतकौरको

१७ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

यह पत्र बत्ती बुझने का समय हो चुकने के बाद लिख रहा हूँ। पत्रको पृथ्वीचन्द डाकमे डालेगा। वह कल यहाँसे जा रहा है।

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि तुम्हारे स्वास्थ्यमे स्पष्ट दिखने लायक सुधार है। ईश्वर करे, सुधारका यह क्रम जारी रहे।

१. और २. अमृतलाल चटर्जीके पुत्र
३. यह पत्र उपलब्ध नहीं है।

मैंने सत्यमूर्तिसे साफ-साफ कह दिया है कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता।[1] अगर वह कुछ और सोचता हो तो उसे अपने पक्षमें जनमत तैयार करने की पूरी छूट है।

हरिजनोंके सम्बन्धमें तुम्हारी बात बिलकुल सही है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१००) से, सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७४०९ से भी

४२. पत्र : नन्दनको

सेवाग्राम, वर्धा
१७ अक्तूबर, १९४१

प्रिय नन्दन,

सरूपका[2] कहना है कि मुझे किसी भी हालतमें तुम्हें जाने नहीं देना चाहिए। केवल तुम्हीं एक ऐसे व्यक्ति हो जो 'हेरल्ड'की व्यवस्था सँभाल सकते हो। जब मैं तुम्हारी बात मानने के लिए तत्पर हो गया था तब मैंने तो यह मान लिया था कि सारी बातोंपर अच्छी तरह सोच-विचार करनेके बाद तुम इस निष्कर्षपर पहुँचे हो कि तुम वहाँसे जा सकते हो। इसलिए यद्यपि आसफ अली बाहर है, लेकिन जबतक 'हेरल्ड'का मामला सुलझ नहीं जाता तबतक तुम जानेका विचार नहीं करोगे।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. देखिए "पत्र : एस० सत्यमूर्तिको", ३० अक्तूबर, १९४१।
२. विजयलक्ष्मी पण्डित

४३. पत्र : अमृतकौरको

[१८ अक्तूबर, १९४१][1]

प्रिय पगली,

एक पत्र पृथ्वीचन्द को डाकमें डालने को दिया था। तुम्हारा पुर्जा मिला। पहाड़ीसे नीचे आते समय एक दिन जालंधर रुककर जो-कुछ कर सको, करो। रातें रोज-ब-रोज ज्यादा ठण्डी होती जा रही हैं, लेकिन दिन नहीं। कुटिया अब पूरी हुई चाहती है। अभी इतना ही। मुगी[2] आदि आ गये हैं।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०१) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७५१० से भी

४४. पत्र : खुर्शेदबहन नौरोजीको

सेवाग्राम
१८ अक्तूबर, १९४१

प्रिय बहन,[3]

जानकारीसे भरा तुम्हारा पत्र मिला। खान साहब धीरे-धीरे ठीक हो जायेंगे। तुम्हारे प्रेमकी विजय होगी।

मैंने ऐसा तो कभी नहीं कहा कि मुझे तुम्हारी चेतावनियाँ अच्छी नहीं लगती। मैंने तो तुम्हारे जल्दबाजी-भरे निष्कर्षों आदिके बारेमें कुछ कहा था। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि जहाँ तुम्हारी रायमें चेतावनी देना आवश्यक हो वहाँ तुम चेतावनी देने का अपना कर्त्तव्य छोड़ दो। इसलिए अब तुम मुझे ढेर सारी चेतावनियाँ लिख भेजो।

स्नेह।

बापू

श्री खुर्शेदबहन नौरोजी
फ्रेडरिक होटल
महाबलेश्वर

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. तारीख अमृतकौरके हाथकी लिखी हुई है। देखिए "पत्र : अमृतकौरको", पृ० २८-२९।
२. क० मा० मुंशी
३. सम्बोधन गुजरातीमें है।

४५. पत्र : नारणदास गांधीको

१८ अक्तूबर, १९४१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। जी०[1] का पत्र वापस भेज रहा हूँ। उन्होंने तुम्हे जो रसीद दी, उसमें अन्तर क्या था? यदि रसीदकी नकल हो तो भेजना।

यदि वे तुम्हे अध्यक्ष न बनाकर नानाभाईको[2] बनायें तो इसमें मुझे कोई बुराई नजर नहीं आती। वे जो पद तुम्हे दे उसे स्वीकार कर लेना और उसीको गौरवान्वित करना। तुम्हें किसी भी सगठनमें काम करनेकी कला साधनी चाहिए। जब लगे कि काम ही बिगड रहा है और सघर्ष बढ रहा है, तब नम्रतापूर्वक त्याग-पत्र दे देना चाहिए। लेकिन पहलेसे यह नही मान लेना चाहिए कि काम बिगडेगा ही। यदि वे अर्थ-सम्बन्धी लेन-देन अथवा नियन्त्रणका काम सौपें तो स्वीकार कर लेना। लेकिन इस सबपर विचार करनेके बाद जो तुम्हे उचित लगे वही करना। तुम्हारी सूझबूझ पर मुझे विश्वास है।

कनैयाके पत्र आते रहते हैं। वह आनन्दपूर्वक है। वह कल नही, आगामी रवि-वारको आयेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५९४ से भी, सौजन्य : नारणदास गाधी

४६. पत्र : इन्दु पारेखको

[१८ अक्तूबर, १९४१][3]

चि० इन्दु,

तुम सबको नये वर्षके आशीर्वाद।

बापूके आशीर्वाद

श्री इन्दु पारेख
"सह्यगिरि सदन"
१७१, गिरगाँव, बम्बई २

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६०) से। सी० डब्ल्यू० १०४५० से भी

१. जीवनलाल शाह

२. नृसिंहप्रसाद कालिदास भट्ट

३. डाककी मुहरसे, लेकिन साधन-सूत्रमें "पडवो" अर्थात् कार्तिक सुदी प्रतिपदा है, जो २१ अक्तूबर, १९४१ को पड़ी थी।

४७. पत्र : लालजी मू० गोहिलको

१८ अक्तूबर, १९४१

भाई गोहिल,

आपके और अन्य शिक्षकोके हस्ताक्षरोवाला पत्र मिला। सरकारी स्कूलोके शिक्षकोपर जो नियमो आदिका बन्धन होता है वह मुख्यत. सरकारके अस्तित्वको बनाये रखने के उद्देश्यसे होता है। इसे मै सरकारी नौकरी छोडने का एक सबल कारण मानता हूँ। लेकिन यदि उसमें [अर्थात् सरकारी नौकरीमे] रहना ही है तो जबतक [स्वतन्त्रताके लिए किये जानेवाले] आन्दोलनसे यह बन्धन टूट नही जाता तबतक सरकारी नियमोका पालन करने मे ही सत्यका पालन है।

गैर-सरकारी लेकिन राष्ट्रीय सस्थाओमे भी [नियमोका] बन्धन तो होना ही चाहिए। उसको गढने में शिक्षकोका हाथ होना चाहिए। ऐसी सस्थामे शामिल होना-न-होना शिक्षकोके हाथकी बात है। लेकिन कौन-सा नियम उचित अथवा अनुचित है यह तो नियमोकी जाँच करने पर ही कहा जा सकता है।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

एल० एम० गोहिल
प्रभात स्टोर्स
३४६, बुधवार, पूना २

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

४८. पत्र : अमृतकौरको

१९ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। अरुणाका[1] पत्र उतना दु ख-भरा नही है जितना तुम्हे लगा है। मुझे अरुणाका उससे भी ज्यादा दु ख-भरा पत्र मिला है, लेकिन उसके पीछे कारण आसफ अली है। उसने दो दिन मेरे साथ बिताये। वह परिवर्तन चाहता है। मैंने किसी प्रकारकी आशा नही दिलाई। वह फिर आयेगा। राजाजी मगलवारको आ रहे है, सरदार और एम० कल।

१. आसफ अलीकी पत्नी

जमनालाल कल आ गये। मदालसा और शिशु अच्छे है।

लौटते समय एक दिन लाहौर रुककर तुम्हारा अरुणा और अन्य लोगोंसे मिल लेना अच्छा रहेगा। लेकिन जैसा तुम ठीक समझो। बेकार ही देरी हो, यह मैं नही चाहता।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०२) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४१७ मे भी

४९. पत्र: सतीशचन्द्र दासगुप्तको

१९ अक्तूबर, १९४१

भाई सतीश बाबु,

इसका उत्तर देंगे?[1] मैं सब हकीकत भूल गया हू। तुम्हारे बताने पर मुझे सन्तोष हो गया था कि तुमने संघकी[2] एक कोडी भी सिवाय खादी काममें नहिं खरची है।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

५०. पत्र: अमृतकौरको

२० अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

आजकल तुम बाते भूलने लगी हो। अभी हालमें ही तुमने लिखा था कि शिमलाका मौसम शानदार है और तुम्हारे बहुत अनुकूल है। नीचेकी जगहोकी गरमीके बारेमे सोचकर तुम आतंकित थी। आजके पत्रमे तुमने लिखा है, गरमी तुम्हें अनुकूल पडेगी। ! ! मैने भी यही सलाह दी थी और तब तुमने उससे उलटी बात कही थी। खैर, तुम्हारे आने का रास्ता दिन-ब-दिन साफ होता जा रहा है, क्योंकि तापमान दिन-दिन गिरता जा रहा है।

१. सम्भवत अन्नदा बाबूकी ओरसे लिखा पत्र। देखिए खण्ड ७४, पृ० ४२६।

२. अखिल भारतीय चरखा संघ

कुलियोके लिए तुम्हारा प्रयत्न सफल हो, यह मेरी हार्दिक कामना है। तुमने जो-कुछ बताया है, वह बडी भयानक बात है।

आखिर एम० ने आज जे० का पत्र लाकर दिया। जे० के बारेमे उसने जो-कुछ बताया, वह निराशाजनक नही है। देवदास आ गया है और रामदास, उसकी पत्नी और सुमित्राको छोड बाकी सब बच्चे भी। सुमित्रा अपनी आँखोके इलाजके लिए बम्बईमे रुक गई है। सरदार तो आ ही गये है। रेहाना[१] अब भी मेरे साथ है, खूब खुश है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०८) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४१२ से भी

५१. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेवाग्राम
२० अक्तूबर, १९४१

चि० अम्बुजम्,

तुम्हारा पत्र मिला। अब मुझे ठीक-ठीक राशि पता लग गई है। जो रकम[२] वसूल की गई है वह रु० १६,०४८-१५-९ है। अब मै देखूंगा कि इस रकमका क्या किया जाना चाहिए। अब तुम्हे १,००० रुपये भेजने की कोई जरूरत नही है, हाँ, अगर तुम दानकी राशि बढाना चाहो तो और बात है। तुम अपने अन्य कार्यको नुकसान पहुँचाकर ऐसा करो, इसकी सलाह मै तुम्हे नही दूंगा। मुझे उम्मीद है कि तुम्हारा स्वास्थ्य काफी अच्छा होगा। तुम्हे चिन्ता नही करनी चाहिए। हमे ईश्वरकी इच्छाके आगे सिर झुकाना ही पडता है।

स्नेह ।

बापू

श्री अम्बुजम्माल
९६, मॉब्रे रोड
आलवारपेट, फोर्ट
मद्रास

अंग्रेजीकी नकलसे. प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. अब्बास तैयबजीकी पुत्री
२. आभूषणोंकी बिक्रीसे; देखिए पृ० २०।

५२. पत्र : अन्नपूर्णा चि० मेहताको

दिवाली [२० अक्तूबर, १९४१][1]

चि० अन्नपूर्णा,

तू तो अब खूब पनपती जा रही है। यह कितना अच्छा हुआ? घर नियमपूर्वक पत्र लिखती है न? आगामी वर्षमें[2] तो पूर्ण स्वस्थ रहकर सेवा करनी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एम० एन० ९८३३) से

५३. पत्र : जुगतराम दवेको

सेवाग्राम
२० अक्तूबर, १९४१

भाई जुगतराम,

दोनों पुस्तकें ध्यानपूर्वक पढ़ गया। पाठ्य पुस्तकों (प्रचलित) में मैं तो इन्हें अच्छा स्थान दूं। लेकिन मैं अपने विचार किसीके गले नहीं उतार सका। मेरे प्रयत्नोंकी प्रस्तावना तुम्हें याद होगी। मैंने उसमें कहा था कि मेरा प्रयत्न अनेक अच्छी पुस्तकोंमें एक अच्छी पुस्तक लिखवाने का नहीं बल्कि उस श्रेणीके लिए अनेक पुस्तकोंके बदले एक ही पुस्तक लिखवाने का है। मैं अपने इस विचारपर अब भी कायम हूँ। लेकिन यह इस समय नहीं चलेगा, ऐसा मुझे लगता है। हमारे शिक्षक-मंडलमें कोई व्यक्ति ऐसा साहस कर यदि विजय प्राप्त करे तो कदाचित् [इस दिशामें] प्रगति हो। मेरा प्रयास करोड़ों बच्चोंकी बुद्धिका तुरत-फुरत विकास करने का है। और मैं मानता हूँ कि ऐसा करने से उनकी बुद्धिका विकास अवश्य होगा। अक्षरज्ञान कोई बुद्धिका विकास थोड़े ही करता है वह तो उसे अवरुद्ध करता है, और मेरे विचारसे तो बेहिसाब पैसा भी खर्च करवाता है। इस दृष्टिसे ये दोनों पुस्तकें असफल सिद्ध होंगी। इन पुस्तकोंमें दिये गये चित्र अपेक्षाकृत ठीक हैं लेकिन उनमें सुधारकी गुंजाइश है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. साधन-सूत्रमें यह पत्र १९४१ के पत्रोंमें है, और अन्नपूर्णाके स्वास्थ्य-सम्बन्धी उल्लेखसे भी इसी तथ्यकी पुष्टि होती है। १९४१ में दिवाली २० अक्तूबरको पड़ी थी।

२. गुजराती नव वर्ष

५४. पत्र : कन्हैयालाल वैद्यको

२० अक्तूबर, १९४१

भाई कन्हैयालाल,

तुम्हारा खत मिला। रतलाम बारेमे जब सबका स्वागत मिले तब मुझे लिखो। मैंने मुनशीजी से बात की है। सब सामग्री तैयार होने पर मुझे खबर देना। दूसरे केस सब विचार करने योग्य है। मैं चाहता हू कि कुछ कर सकु। लडाईमे पडने के लिये मैं ऐसे कामोके लिए अशक्त-सा हो गया हू। तो भी सोच रहा हू क्या हो सकता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

५५. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागंज
२१ अक्तूबर, १९४१

एक वक्तव्य प्रकाशित किया गया है, जिसे श्री जयप्रकाश नारायणका बताया गया है।[1] बताया गया है कि उन्होंने अपनी नजरबन्दीके स्थानसे यह वक्तव्य चोरी-छिपे बाहर भेजने की कोशिश की। जहाँतक मैं समझा हूँ, इस वक्तव्यके प्रकाशनसे कुछ बनने-बिगडनेवाला नही है। अगर इसके पीछे उद्देश्य उस सस्थाको बदनाम करने का था जिसके श्री जयप्रकाश नारायण एक विशिष्ट सदस्य है, तो वह विफल ही होगा।

१. १६ अक्तूबरको जारी की गई एक सरकारी विज्ञप्तिमें कहा गया था : "देवलीमें रखे गये सुरक्षा बन्दी श्री जयप्रकाश नारायणसे एक योजना बरामद की गई है। यह उस समय हुआ जब वे मुलाकातके दौरान योजना अपनी पत्नी प्रभावतीदेवीको देने की कोशिश कर रहे थे। इस योजनामें कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टीकी स्थिति सुदृढ करने की तजवीज है। इसके लिए तरीका यह सुझाया गया है कि क्रान्तिकारी समाजवादी दल और हिन्दुस्तान गणतंत्री समाजवादी संघके नामसे विख्यात आतंकवादी संस्थाओंके महत्त्वपूर्ण सदस्योंको अपने पक्षमें कर लिया जाये और साम्यवादी दलको अलग-थलग कर दिया जाये।"

अगर मान ले कि जयप्रकाश नारायणपर लगाया गया आरोप सही है तो कहना होगा कि उन्होने जिस तरीकेकी हिमायत की है वह काग्रेसकी सत्य और अहिंसाकी नीतिके विरुद्ध है और इसके लिए वे कडीसे-कडी निन्दाके पात्र है। लेकिन ऐसी किसी प्रवृत्तिकी निन्दा करना या उसको बदनाम करना सरकारको शोभा नही देता। सच पूछिए तो आज सारी राष्ट्रवादी शक्तियाँ, चाहे उनको जिस नामसे जाना जाता हो, सरकारके विरुद्ध युद्धरत है। और युद्धके सर्वमान्य नियमोके अनुसार जयप्रकाश नारायण द्वारा अपनाया गया तरीका सर्वथा उचित है। उन्होने सात वर्षतक अमेरिकामे प्रशिक्षण प्राप्त किया और वे पाश्चात्य राष्ट्रो द्वारा अपने स्वातन्त्र्य-सग्राममे अपनाये गये तरीकोके अध्येता है। धोखेबाजीसे काम लेना, गुप्त तरीकोका सहारा लेना, बल्कि हत्याके षड्यन्त्रकी रचना भी — सब उस युद्धमें सम्मानकी दृष्टिसे देखे जाते है और इन तरीकोको अपनानेवाले लोग राष्ट्रीय नायकोका दर्जा हासिल करते है। क्या क्लाइव और वारेन हेस्टिंग्स ब्रिटेनके राष्ट्रीय नायक नही है? यदि जयप्रकाश नारायण ब्रिटेनकी कूटनीतिक सेवा मे होते और गुप्त कूटनीतिसे उन्होने कोई महत्त्व-पूर्ण कार्य कर दिखाया होता तो उनपर सम्मानकी वर्षा होने लगती।

जिस सनसनीखेज ढगसे इस घटनाको भारतके समक्ष उद्घाटित किया गया वह नासमझी-भरा है। विज्ञप्तिमे जो टीका-टिप्पणी की गई है वह शायद बिलकुल अनावश्यक है। और जब हम इस बातकी ओर गौर करते है कि जयप्रकाश नारायण ऐसे कैदी है जिनपर मुकदमा नही चलाया गया है तो कहना पडता है कि यह टीका-टिप्पणी सर्वथा अनुचित प्रहार है। सरकारको पकडे गये उस दस्तावेज या दस्तावेजोको जयप्रकाश नारायणको दिखाना चाहिए था और अगर जयप्रकाशके पास कोई उत्तर होता तो उसे भी प्रकाशित करना चाहिए था।

और जिस तरहसे उनकी बेचारी पत्नीको इस मामलेमें घसीटा गया है वह अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। उस कथित प्रयत्नके सम्बन्धमें उन्हे कुछ भी मालूम नही था, क्योकि वह प्रयत्न तो उनके हाथमें कोई कागज पहुँचने से पहले ही विफल कर दिया गया था। पाठकोको यह बता दूँ कि प्रभावती जयप्रकाश नारायणके विचारोसे सहमत नही है। उनके माता-पिताने उन्हें पन्द्रह वर्षसे भी कम उम्रमे मेरी देखरेखमें रख दिया था। तब उनके पति जयप्रकाश नारायण अमेरिकामें ही थे। भारतीय राजनीतिके सम्बन्धमें मेरे विचारोको उन्होने पूर्णत स्वीकार किया है और वे मेरी परम विश्वस्त सहयोगिनियोमें से है। पति-पत्नी के रूपमें जयप्रकाश नारायण और प्रभावतीदेवी एक आदर्श दम्पति है। जयप्रकाशने प्रभावतीपर अपने विचार थोपने की कभी कोशिश नही की है। उन्होने उनको अपनी मर्जीके मुताबिक मेरे पास आने से कभी नही रोका है। सच तो यह है कि जब-कभी वे रुग्ण हुई है, जयप्रकाश नारायणने उन्हे मेरे पास आने को प्रोत्साहित किया है। उन्हे सोशलिस्ट पार्टीके रहस्योमे कभी भी अवगत नही कराया गया है। कथित दस्तावेजने उनके मनको बिलकुल अव्यवस्थित कर दिया है, क्योकि वे कभी ऐसा नही सोचती थी कि उनके पति उस तरीकेकी हिमायत करेंगे जिसकी हिमायतका आरोप उनपर लगाया गया है।

कुछ अखबारोंने यह सुझाव दिया है कि कैदियोंपर कड़े प्रतिबन्ध लगाये जायें। किन्तु जयप्रकाश नारायणके प्रयत्नके सन्दर्भमें इस सुझावका कोई मतलब नहीं है। वह प्रयत्न विफल कर दिया गया, यह बात गुप्तचर विभागकी कार्य-कुशलताका पर्याप्त प्रमाण है। और अगर कोई ढिलाई रही है तो इसका मतलब यह नहीं कि नजरबन्दोंको खराब या अपर्याप्त भोजन दिया जाये, या उन्हें ऐसी जगहोंमें रखा जाये जहाँसे उनके घर इतने दूर हों कि उनके रिश्तेदारोंके लिए उनसे आकर मिलना कठिन या बहुत व्ययसाध्य हो। देवली कैम्पके सम्बन्धमें श्री एन० एम० जोशी द्वारा बड़ी सावधानी और अत्यन्त संयम बरतते हुए की गई सिफारिशें मैंने पढ़ी हैं।[1] इस कैम्पके बारेमें मैंने जितनी जानकारी प्राप्त की है उसके आधारपर मैं मानवताके नामपर बखूबी कह सकता हूँ कि इसको समाप्त करके कैदियोंको ऐसे स्थानोंमें रखा जाये जो उनके घरोंसे नजदीक हों। यह बात हर दृष्टिसे गलत है कि कैदियोंको अपने-अपने प्रान्तोंसे लाकर ऐसी जगह एकत्र कर दिया जाये जहाँ न भोजन-पानीकी सुविधा हो, न चिकित्साकी ठीक व्यवस्था हो और न जीवनकी अन्य सुविधाएँ सुलभ हों। राजनीतिक कैदियोंकी तुलनामें युद्ध-बन्दियोंके साथ बादशाह-जैसा व्यवहार किया जाता है, लेकिन राजनीतिक कैदियोंका दर्जा बराबर युद्ध-बन्दियोंसे ऊँचा ही रहेगा।

अब दो शब्द कांग्रेसियोंसे। जयप्रकाश नारायणको हम जैसे देशभक्तके रूपमें जानते रहे हैं, वे आज भी वैसे ही देशभक्त हैं। लेकिन कांग्रेसियोंको यह समझ लेना चाहिए कि जबतक अहिंसक संघर्ष चल रहा है तबतक जयप्रकाश नारायणवाला तरीका अत्यन्त हानिकर सिद्ध होगा। मैंने बार-बार कहा है कि किसी अहिंसक संगठनमें गोपनीयताके लिए कोई स्थान नहीं है। छल-कपटके आधारपर या छिपे तौरपर चलाया जानेवाला कोई भी आन्दोलन सार्वजनिक आन्दोलन नहीं बन सकता और न वह करोड़ों लोगोंको सामूहिक कार्रवाईकी प्रेरणा दे सकता है। इसलिए मुझे यह देखकर हर्ष हुआ कि सोशलिस्ट पार्टीके मंत्री श्री पुरुषोत्तम त्रिकमदासने उस तरीकेसे अपनी असहमति प्रकट की है जिसकी हिमायत करनेका आरोप जयप्रकाश नारायणपर लगाया गया है। दरअसल मैं तो जयप्रकाश नारायणसे भी यह अनुरोध करूँगा कि वे अपने सिद्धान्तपर पुनर्विचार करें और अगर उनकी बुद्धिको यह स्वीकार हो तो वे इस तरीकेको ऐसा मानकर त्याग दें कि कुछ समयके लिए वे सद्विवेकसे विचलित हो गये थे और कांग्रेस उनकी जिस निष्ठाकी अधिकारी है उस निष्ठाको भूल गये थे। जिस चीजकी उन्होंने सत्याग्रहका नाटक कहकर निन्दा की है वह वास्तवमें नाटक नहीं है। यह सत्य और अहिंसाके तेतीस वर्षोंके प्रयोगके परिपक्व अनुभवका सरस फल है। और अगर ईश्वरने चाहा तो मैं यह दिखा देनेकी आशा करता हूँ कि इस नाटकसे ऐसी वास्तविकता उभरकर सामने आयेगी जो जयप्रकाश नारायण और उनके समान विचार रखनेवाले अन्य लोगोंको भी इस बातके लिए विवश कर देगी कि वे उसे

१. सरकारकी अनुमतिसे एन० एम० जोशीने जुलाई महीनेमें देवली जेलका निरीक्षण किया था। इसके बाद उन्होंने उसके सम्बन्धमें अपने विचार और सुझाव प्रकाशित किये थे।

स्वीकार करे। वस्तुत जयप्रकाश सत्याग्रहीके रूपमें जेल नही गये।[1] लेकिन अभी उन्होने काग्रेसकी सदस्यता नही छोडी है, और इसलिए उनके तथा उनके समान विचार रखनेवाले दूसरे लोगोके लिए यह उचित नही है कि वे अपने ऐसे कार्योसे इस आन्दोलनके बढते चरणको रोकें जो निश्चित रूपमे काग्रेसके प्रति उनकी गैरवफादारी प्रकट करते है।

[अंग्रेजीमे]
हिन्दू, २३-१०-१९४१

५६. पत्र : अमृतकौरको

२१ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। किसीका शरीर तुम्हारे शरीरसे भी अधिक दुर्बल है, इसीलिए तुम अपने शरीरको जर्जर तो नही बना ले सकती। जो कर सकती हो वह यही कि अपने दुर्बलकाय पडोसीको भी अपने समान सबल बनानेकी कोशिश करो। यही बात घरपर भी लागू होती है। निस्सन्देह, जिस प्रकार तुम अपने शरीरकी फालतू चरबी या मासपेशियोसे भी छुटकारा पाना चाहोगी उसी प्रकार तुम्हे अपने घरकी बहुत-सी अनावश्यक वस्तुओका बोझ भी उतार फेंकना है।

आजका दिन पूरा व्यस्त है।

स्नेह।

तुम्हारा,
बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०४) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४१३ से भी

१. जयप्रकाश नारायणको मार्च, १९४० में जेल भेजा गया था; देखिए खण्ड ७१, पृ० ३६३। उन्हें दिसम्बर १९४० में छोड दिया गया था और उसके तुरन्त बाद भारत रक्षा अधिनियमके अन्तर्गत फिरसे गिरफ्तार कर देवली कैम्प ले जाया गया था।

५७. पत्र : आर० के० सिधवाको[1]

[२२ अक्तूबर, १९४१ के पूर्व][2]

सिन्धमें सत्याग्रह रोकनेकी जिम्मेदारी मौलाना आजादकी और अन्ततोगत्वा मेरी ही है। मैं मौलाना साहबकी इजाजतके बिना किसी भी सिन्धी भाईको सत्याग्रहमें भाग लेनेकी अनुमति प्रदान नही करूँगा।

मैं बेखटके कह सकता हूँ कि सिन्धमें सत्याग्रहपर रोक लगानेमें आपका या किसी भी सिन्धवासी कांग्रेसीका कोई हाथ नही है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २३-१०-१९४१

५८. पत्र : एगथा हैरिसनको

२२ अक्तूबर, १९४१

प्रिय एगथा,

तुम्हारा १५ जुलाईका पत्र बराबर अपने साथ रखे रहा हूँ। कुछ सूझ नही रहा था कि उत्तरमें क्या कहूँ, न अभी ही सूझ रहा है। तुम्हारी लगन और दुःख समझता हूँ। लेकिन समझमें नही आता कि तुम्हें सान्त्वना कैसे दूँ। कोई चाहे जितना अनासक्त होनेकी कोशिश करे उसके परिवेशका प्रभाव तो उसपर पडेगा ही। यह बात मुझपर भी उतनी ही लागू होती है, औरोंका तो कहना ही क्या। और फिर जुलाईके मध्यमें लिखे पत्रका उत्तर अक्तूबरके मध्यमें देनेकी कठिनाईका भी विचार करो — और सो भी तब जब कि हर दिन इतिहासका एक-एक नया अध्याय तैयार हो रहा हो। इसलिए बावजूद इसके कि तुम्हें पत्र लिखना अपने-आपमें मेरे लिए एक आनन्दका विषय है, तुम्हें लिखते हुए मुझे बडी झिझक हो रही है। फिर भी कोशिश करूँगा।

शासकोंके प्रति अविश्वासका भाव बढता और फैलता जा रहा है। दूरी बढ़ती जा रही है। यहाँ हम लोगोंको तो हिटलरवाद और ब्रिटिश साम्राज्यवादमें कोई अन्तर नही दिखाई दे रहा है। हिटलरवाद साम्राज्यवादकी अत्यन्त परिष्कृत नकल है और साम्राज्यवाद यथासम्भव अधिकसे-अधिक तेजीसे हिटलरवादको पीछे छोड

१. सिधवाने गांधीजीका ध्यान सिन्धके कुछ कांग्रेसियों द्वारा लगाये गये इस आरोपकी ओर दिलाया था कि सिन्धके पक्षको कांग्रेस हाई कमानके सामने ठीकसे पेश नहीं किया गया। गांधीजी ने इस सम्बन्धमें इससे पहले जो सलाह दी थी उसके लिए देखिए खण्ड ७४, पृ० १४।

२. यह रिपोर्ट "कराची, २२ अक्तूबर" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

देने को प्रयत्नशील है। लोकतन्त्र कही नही है। इस अपवित्र द्वन्द्वमे, जहाँतक मै समझ सकता हूँ, अहिंसा मूक किन्तु निश्चित रूपमे अपना रास्ता बना रही है। उसमे मेरा विश्वास दिन-दिन दृढतर होता जा रहा है। पोलक पूछते है और मेरा खयाल है अपने अत्यन्त विनयपूर्ण ढगसे तुमने भी इशारेसे यही पूछा है कि अगर मेरी आँखोके सामने बम गिर रहे हो और मै अपने प्रियजनोको मृत्युका ग्रास बनते देख रहा होऊँ तब भी क्या मेरी यह अहिंसा कायम रहेगी।[1] इसके उत्तरमे मै कुछ नही कह सकता। मै मन-ही-मन ऐसी परिस्थितियोकी कल्पना अवश्य करता हूँ, और तब प्रभुसे प्रार्थना करता हूँ कि ऐसी परिस्थितिमे वह मेरी आस्थाको भग न होने दे। मेरे मनमें कुछ ऐसा भ्रम भी है कि इन चीजोको मै दूरसे भी महसूस कर सकता हूँ। सच मानो, पार्लियामेट हाउस, वेस्टमिंस्टर एबी और सेट पॉल कैथीड्रलके क्षतिग्रस्त होनेका समाचार सुनकर मेरा मन रोया था। फिर भी, यह सब तो अटकलबाजी ही है। अगर परीक्षाकी घडी कभी आती है और मै उसमे विफल हो जाता हूँ तो मुझमें अपनी कमजोरी स्वीकार करने का साहस अवश्य होगा, लेकिन उससे मै अहिंसामें अपना विश्वास नही छोड दूँगा।

साम्प्रदायिक एकता निकट भविष्यमे स्थापित होने की आशा तो नही है। लेकिन मेरा विश्वास है कि जब हम उसके आने की सोचते है, उससे पहले ही वह आयेगी। लेकिन साम्प्रदायिक एकताकी स्थापनाके साथ ब्रिटिश सरकारसे भी हमारा निबटारा हो जायेगा, यह बात नही है। सरकारकी घोषणाओमे ऐसी बहुत-सी शर्ते है जिन्हे पूरा करना असम्भव है। ऐसी ही एक शर्त यह है कि हमे देशी नरेशोको भी राजी करना चाहिए। देशी नरेशोका मतलब तो स्वय ब्रिटिश सरकार है, क्योकि ये नरेश ब्रिटिश सरकारके ही बनाये हुए है, और उसकी अनुमतिके बिना वे किसीसे खुलेआम बातें भी नही कर सकते।

देशी नरेश वर्त्तमान परिस्थितिमें सुरक्षित महसूस करते है। तो देशी नरेश सरकारके आज्ञाकारी है, मुस्लिम लीग गुर्रा रही है, और मेरे नेतृत्वमे कांग्रेस जिस सविनय अवज्ञाकी नीतिका अनुसरण कर रही है वह भी उतनी ही निरीह है। इस स्थितिमें सरकारको जनतासे आखिरी पैसातक ऐंठ लेने और चाहे जितने लोगोको सेनामे भरती करने मे कोई कठिनाई नही होती।

अब तुम्हे इस बातका कुछ आभास हुआ या नही कि तुम लाभ-कीर्तिसे रहित जिस कार्यमे लगी हुई हो उसमे तुम्हे क्यो अनन्त कठिनाइयोका सामना करना पड रहा है? किन्तु तुम्हे . ही चाहिए।[2] यदि इस बीजको ठीक मिट्टीमें बोया जाये तो वह कभी भी बेकार नही जाता।

१ एगथा हैरिसनका कहना है कि उन्होंने अपने पत्रमें इशारेसे भी कोई ऐसा प्रश्न नहीं उठाया था। उन्होंने केवल यह पूछा था कि साध्यको यथावत् रखते हुए साधनमें क्या कभी-कभी कुछ परिवर्तन करनेकी बात नहीं सोची जा सकती।

२. यहाँ कुछ शब्द धुंधले पड़ गये हैं।

मेरा और इसलिए कांग्रेसका तरीका तो अत्यन्त सीधा-सादा है। कांग्रेसकी प्रतीकात्मक सविनय अवज्ञा जारी रहेगी। जब सरकारको परेशान करने का प्रसंग समाप्त हो जायेगा तब सविनय अवज्ञा अपने पूरे वेगसे फूट पड़ेगी। कांग्रेस ऐसे किसी भी सम्मानजनक समझौतेके लिए तैयार है जिससे उसके बुनियादी सिद्धान्तको आँच न आती हो, और वह किसी भी पक्षके साथ — यहाँ तक कि देशी नरेशोंके भी साथ — ऐसा समझौता करने को तत्पर है। कांग्रेसको पूर्ण स्वराज्यसे कम कुछ भी स्वीकार्य नही हो सकता। कांग्रेस युद्ध-प्रयत्नोमे हाथ नही बँटा सकती और इसलिए वह सरकारमे शरीक होने को भी तैयार नही है। लेकिन अगर वाणीकी ऐसी स्वतन्त्रता दे दी जाये जिसमे अहिंसात्मक आचरणकी पाबन्दी कायम रहे और सभी राजनीतिक कैदियोको बिना शर्त रिहा कर दिया जाये तो सविनय अवज्ञा बन्द की जा सकती है। जिन राजनीतिक कैदियोकी रिहाईकी बात कर रहा हूँ उनमे वे लोग शामिल नही है जिनपर मुकदमे चलाये जा चुके है और जो सचमुच हिंसाके दोषी पाये गये हैं। उनकी रिहाईका सवाल तो तभी उठेगा जब वे अपने कियेपर पश्चात्ताप करे। हाँ, जिन कैदियोकी रिहाईकी बात मैंने कही है उनमे वे सब जरूर शामिल है जिनपर मुकदमा नही चलाया गया है। जहाँतक मै देख पाता हूँ, जबतक मै जीवित हूँ और ठीकसे सोचने और सलाह-मशविरा देने के काबिल हूँ तबतक कांग्रेस अपनी नीति बदलनेवाली नही है। हममे ऐसा कोई नही है जिसकी नाजीवाद या फासिज्मके प्रति कोई सहानुभूति हो, लेकिन तब साम्राज्यवादके प्रति भी किसीकी कोई सहानुभूति नही है, यहाँतक कि उन जवानोकी भी नही जो पेटकी खातिर सेनामे भरती होते है। कुछ लोग इसलिए भी भरती होते है कि वे चाहे जैसे सैनिक प्रशिक्षण प्राप्त करना चाहते है।

इस तरह मैंने तुम्हारे सामने अद्यतन भारतका अपनी सामर्थ्य-भर अधिकसे-अधिक सच्चा चित्र प्रस्तुत कर दिया है।

मेरी सलाह यही है — चिन्ता मत करो, परेशान मत होओ। तुम्हे कुछ भी लिखने, कुछ भी बोलने की जरूरत नही है। हाँ, लिखे-बोले बिना तुमसे रहा ही न जाये तो जरूर लिखो-बोलो। हम अपने हृदयसे उठनेवाली प्रार्थना को ही अपना एकमात्र और सबसे निरापद आश्रय बनाये। इतना समझ लेना पर्याप्त है कि प्रभु की इच्छा के बिना तिनका भी नही हिलता। इस संहार-लीलाकी अनुमति वह दे रहा है? हम नही जानते कि वह ऐसा क्यो कर रहा है। लेकिन यदि हमारे हाथ, हमारी बुद्धि और हमारा हृदय शुद्ध है तो हमे मानना चाहिए कि जब उसकी इच्छा होगी तब वह इस विवेकशून्य पारस्परिक संहार-लीलाको बन्द करवाने के लिए हमारा उपयोग करेगा।

अमृत फिलहाल मेरे साथ नही है। वह शिमलामे विश्राम कर रही है। इन्दिरा मसूरीमे आराम कर रही है और काफी भली-चंगी है। पद्मजा[1] हैदराबादमें है। वह बराबर रुग्ण रहती है।

१. सरोजिनी नायडूकी पुत्री

एन्ड्रयूजका खयाल मेरे मनमें बराबर बना रहता है। जबतक स्मारकका काम पूरा नहीं हो जाता, मैं चैन नहीं लूँगा। उनकी बहनोंसे मेरा स्नेहवन्दन कहना।

तुम तीनोंकी ओरसे शुभकामनाका सयुक्त तार मिला था।

धन्यवाद।

स्नेह।

बापू
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १५२२) से

५९. पत्र: गांधी अन्नामलैको

२२ अक्तूबर, १९४१

प्रिय मित्र,

गांधीजी को आपका १४ तारीखका पत्र और ग्यारह रुपयेका मनीऑर्डर मिले। वे आपके लिए एक सुखी और सेवापूर्ण वैवाहिक जीवनकी कामना करते हैं।

हृदयसे आपका,
महादेव देसाई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३७४) से। सौजन्य गांधी अन्नामलै

६०. पत्र: चिमनलाल न० शाहको

२२ अक्तूबर, १९४१

चि० चिमनलाल,

बबूडी[1] वहाँ फिर क्यों बीमार पड़ गई? वह कटि-स्नान लेती है या नहीं? अधिक परिश्रम तो नहीं करती? खाती क्या है? मच्छरदानीका उपयोग करती है या नहीं? पैसे तो दस्तूरके मुताबिक देने ही थे। मेरा खयाल था कि जाजूजी को दिये जाने हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १२८) से

१. शारदा, चिमनलाल शाहकी पुत्री और गोरधनदास चोखावालाकी पत्नी

६१. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

[२२ अक्तूबर, १९४१][१]

चि० बबूडी,

तू बीमार क्यो पड जाती है? खाना-पीना ठीक रहे और खुली हवा मिलती रहे तो कुछ नही होना चाहिए। क्या तू पानी उबाला हुआ पीती है? रामनाम लेना आता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० जी० १२८) से

६२. भाषण : प्रार्थना-सभामे[२]

सेवाग्राम
२२ अक्तूबर, १९४१

खुराकके बारेमे मेरा दृढ विश्वास हो गया है कि जो-कुछ हमारे आश्रमके रसोडे (रसोईघर)मे पकता है, वही रसोडे फेरफारके साथ सेवाग्रामकी जनताके लिए भी ठीक रहेगा। खादी विद्यालयकी खुराक या जेलके 'क' वर्गके भोजनसे काम नही चलेगा। हमारे ही रसोडेका तैयार (आहार-मान) ठीक रहेगा। इस बारेमे हमने हिन्दुस्तान-भरके डाक्टरोकी राय ली है। अब भी लेते रहते है। आश्रममे हम काफी बीमारियोसे बच सकते है। जो-कुछ बीमारी यहा है, उसका एक कारण यह जरूर है कि यहा सभी अल्पाहारी नही है।

हर इन्सानको आध सेर दूध, दो तोला घी और ढाई तोले मक्खन हर रोज मिलना ही चाहिए। साग-भाजी भी जैसी हम यहा खाते है, हर एकके लिए जरूरी है। अन्न, शायद दिन-भर हाथसे काम करनेवालोके लिए ज्यादा मिकदारमे जरूरी होगा। उन्हें शायद दालकी भी जरूरत होगी, हालाकि हम अपने रसोडेमे दालका उपयोग नही करते। लेकिन हम जितना दूध और मक्खन इस्तेमाल करते हैं, उसमें कुछ कम भी किया जा सकता है। बगैर मलाईवाले (सेपरेटेड) दूधका उपयोग आश्रमके रसोडेमे हो सकता है और होना चाहिए। उसका उपयोग न होना मै एक तरहका दोष मानता हू। उसमे और सब-कुछ है, सिर्फ घी नही है। और फिर वह सस्ता है। हम खुराक सस्ती तो करना ही चाहते है। गाववाले इस बगैर मलाईके

१. यह पत्र भी उसी कागजपर लिखा हुआ है जिसपर पिछला शीर्षक।

२. सेवाग्रामके कार्यकर्ताओंने गांधीजी से, विशेष रूपसे आदर्श ग्राम-समाजके बारेमें उनके विचार जानने के लिए समय माँगा था।

दूधमे भी काम चला सकते है। फल भी गावके लोगोको थोडे बहुत मिलने ही चाहिए। आज तो उन्हें फल मिलते ही नही। आमके मौसममे जैसे-तैसे कुछ आम उन्हे मिल जाते है। आश्रममे फल दिये जाते है। ग्रामवासियोको भी उतने ही मिलने चाहिए। इमली, नीबू, टमाटर उन्हे मिलने ही चाहिए। इन चीजोसे उनका काम चल सकता है। उनके लिए थोडा-बहुत मसाला भी जरूरी होगा, अगरचे हम आश्रममे मसालेका उपयोग नही करते और मेरा यह विश्वास है कि मसालेकी कोई जरूरत नही है। लेकिन मै ऐसा नही मानता कि ग्राम-निवासियोके भोजनमे मसालेका स्थान ही नही है। उसमे भी कुछ-न-कुछ विटामिन उनको मिल सकता है। लेकिन मसाला दूधकी जगह कतई नहीं ले सकता, जैसा कि लोग आज गलतीसे मान बैठे हैं। मैने देखा है कि ज्यादा मसाला खाने से शरीर दुबला हो जाता है और सेहत बिगड जाती है। इसपर से आप हिसाब लगा सकते है कि खुराकपर कितना खर्च आयेगा।

दूसरी जरूरत कपडेकी है। कच्छ (गमछा) जो मैने धारण किया है वह सब लोगोंके लिए नही है। सबको उसे ग्रहण करने की जरूरत नही है। पुरुषोके लिए कुर्ता, ओछी धोती और टोपी काफी है।

स्त्रियोकी पोशाक आश्रममे भी कुछ अजीब-सी रही है। लेकिन मैं मानता हू कि पजाबकी पोशाक सबसे अच्छी है। उसको जरा-सा बदलकर कभी-कभी जो पोशाक अमतुस्सलाम पहनती है वह बहुत अच्छी है। पजाबके कुर्ते, दुपट्टे और सलवारमें कला है और उसमे स्त्रीका अग-अग बिल्कुल फरागतसे ढका भी रह सकता है। मीराबहनने अपने लिए इसे ठीक बना लिया है। दुपट्टेमें जहा कला है वहा जाडेके दिनोमे वह बडी कामकी चीज भी है। उससे बडा आराम रहता है। कुर्ता स्त्रीके सारे जिस्मको ढाक लेता है। सलवार भी एक सम्पूर्ण वस्तु है और बडी शोभा देती है। घाघरा तो एक नगी पोशाक है। बिना चड्डीके उसे कभी नही पहनना चाहिए। जब आश्रमकी स्त्रियोकी ही एक पोशाक नही बन पाई है, तो सारे हिन्दुस्तानकी एक पोशाक बनना मुश्किल बात है। जैसी पोशाक स्त्रिया आज करती हैं, उसमें सुधारकी बहुत गुजाइश है। लेकिन इस बारेमें मुझे खास फिक्र नही है। आज इतना काफी है कि लोग अपने तमाम कपडे खद्दरके ही बनाये।

आज ऐसा तो नही है कि लोग जाडेसे मरते है, क्योकि वे सबके-सब एक ही कमरेमे इकट्ठे होते है। कई दफा वही पर पशु भी बधे रहते हैं। इससे उनको गरमी तो मिल जाती है, लेकिन उनकी सेहतपर बहुत बुरा असर पडता है। इसी-लिए हिन्दुस्तानमे मृत्युका मान और सब मुल्कोसे ज्यादा है। लोग अगर बाहर खुली हवामें सो सकें तो तन्दुरुस्त रहेंगे। यह तभी हो सकता है, जब उनके पास ओढनेके लिए काफी कपडे हो, जैसे कि यहा आश्रममें है। हर एकको एक कम्बल, मजबूत और मोटी खादीकी चद्दर तो चाहिए ही। आश्रमके लोग खद्दरकी गिलाफोमे कागज भरकर काम चला लेने की कोशिश करते है। मगर बरसातमे वह बेकार होता है। लेकिन इस मदपर ज्यादा खर्च करने की जरूरत नही है। ज्यादा खर्च तो खुराकपर ही होना चाहिए।

तीसरा सवाल मकानका है। इसमे हमको यह तय कर लेना है कि हर आदमीके लिए कितना छाया हुआ रकबा चाहिए। मकान घास, मिट्टी और पनौडीके बन सकते है। आज आश्रममे ऐसा नही है। मैंने ईंटोके मकान बनाने की इजाजत दे दी है। लेकिन देहातोमें पक्की इमारतकी जरूरत नही है। ये ज्यादा महगी पडती है। गावमे कच्चे झोपडोसे काम चल सकता है। बरसातमे यहा हमारे घरोमे भी पानी आता ही है। लोगोको उससे कैसे बचाया जाये, यह सवाल हमारे सामने आता ही है। हर एकको अपने-अपने घरकी रक्षा खुद कर लेनी चाहिए। इसमे मैं कोई दिक्कत नही देखता। मकानके बारेमे मेरे आदर्शको तो हिन्दुस्तान शायद बरसोतक न पहुच सके। मैं यह मानता हू कि आश्रममे हमारे आदर्श घर ही है। आदर्श कायम करने के लिए हमे एक आदमी के लिए कितना छना रकबा चाहिए, उसका फैसला करना है। लेकिन यह जरूरी है कि मवेशियोके लिए अलग जगह हो। आज तो सेवाग्रामके लोग जानवरोको भी अपने घरोमे ही बाधते है। उनके घर आरोग्यकी दृष्टिसे निकम्मे है। बच्चोके लिए काफी जगह नही होती। उनके घर तो ऐसे होने चाहिए कि उनमे हवा और रोशनी भरपूर आ सके। हमारे आश्रमके घर तो मिस्कीनो (गरीबो) के घर है। लेकिन तवगर (धनी) भी उनमे आरामसे रह सकते है। गावोमे भी ऐसे ही घर होने चाहिए। आज तो यह बात नही है। हा, अगर ग्रामवासी हमे सहयोग दे, तो काफी सुधार हो सकता है।

आज जो-कुछ मैंने कहा है, वह बहुत महत्त्वकी बात है। मैं यह मानता हू कि किसी देहातमे हम तबतक पूरी तरह कामयाब नही हो सकते, जबतक हमारे हाथमे राज्यकी हुकूमत न हो। लेकिन अगर हमारी तपस्या और सेवा बहुत बुलन्द हो जाये, तो हमे हुकूमतकी बाट देखने की जरूरत नही है। उसके बगैर भी बहुत-कुछ किया जा सकता है।

मवेशियोके बारेमे गाववालो को परस्पर सहयोगसे काम लेना चाहिए। पहले यह देख लेना चाहिए कि जितने मवेशी गावमे है, उन सबकी हमे जरूरत है या सहयोगके तत्त्वपर कम मवेशियोसे भी हम अपना काम चला सकते है? मिसालके तौरपर, गावका हर एक आदमी अपनी एक बैलगाडी रख लेता है। मैं इसे ठीक नही मानता। अगर हम सहकारी तत्त्वपर चले, तो क्या बहुत कम बैलगाडियोसे अपना काम नही चला सकेंगे? यही हाल बैलोका और दूसरी कई चीजोका है। गल्लेकी बिक्रीके लिए अगर गावमे सहकारी मण्डल हो तो किसानोको बहुत फायदा हो सकता है। जानवरोके रखने का इन्तजाम भी सारे गावकी तरफसे शराक्तमे हो सकता है। अगर ग्रामवासी इस तरहसे मिल-जुलकर काम करना सीख ले, तो बहुत तरक्की कर सकते है। हमारा देहात तो छोटा-सा ही है। हम कहा तक और किन चीजोमे मेल-जोलसे काम कर सकते है, इसकी जाँच करनी चाहिए। अगर सभी गाववाले इस तरीकेको अपनाने के लिए तैयार न हो, तो भी जो तैयार है उनका पता तो हमे लगा ही लेना चाहिए।

इसी तरह खेतीमें भी सहकारी तरीकेसे काम लेना चाहिए। गावकी तमाम उपजका बटवारा भी मेहनत करनेवालो मे ही होना चाहिए। इसका मतलब यह

नही है कि मेहनतका हिसाव नही रहेगा। हर एककी मेहनतका ठीक-ठीक हिसाव तो रहेगा ही।

हमे यह भी सोच लेना चाहिए कि हम किन-किन चीजोकी खेती करे। सवसे पहले हमे सेवाग्रामके लिए जरूरी चीजोकी खेती करनी है। विक्रीके लिए खेती हम कमसे-कम करे। थोडा-वहुत लेन-देन तो हम पुराने जमानेमे ही करते आये है, आज भी करेगे—इस देशमे भी और विदेशोमे भी। अभी मै विदेशोकी वात छोड देता हू। यहा की वात हम सोच सकते है।

गावकी जरूरतकी दूसरी तमाम चीजे भी हमे यही वना लेनी चाहिए। उसके वाद यह भी देख लेना होगा कि हम दूसरे कौन-कौनसे धन्धे यहा चला सकते है। तेल हमें यही निकाल लेना चाहिए। जूते यही वनने चाहिए। इसी तरह दूसरे धन्धोका भी विचार कर सकते है।

आपको सोचना होगा कि आप किस चीजको प्रथम स्थान देंगे? खेतीके वारेमे सव हिसाव आप ही को करना है। मैने इस वारेमें खुद ज्यादा हिसाव नही किया है। इसलिए आज मै मार्गदर्शन नही करा सकता।

हमको सेवाग्राममें तालीमके वारेमे भी सोचना है। उसके वारेमे आपने मुझसे सवाल नही किया है। तो भी मै इतना तो कह देना चाहता हू कि मेरे विचारके मुताविक तो सेवाग्राममे एक भी निरक्षर व्यक्ति नही रहना चाहिए। वुनियादी तालीमकी कल्पना मैने अपने जीवनके आखिरी हिस्सेमे पेश की। फिर भी मै उसे एक वहुत आवश्यक विषय मानता हू। साक्षर लोग करोडो देहाती निरक्षरोके लिए कौन-सा साहित्य लिख रहे है? मैने गुजरातकी साहित्य परिषद्से[1] यह सवाल पूछा था। यह काम जितना महान् है उतना ही मुश्किल है।

मै आपको यह भी वता देना चाहता हू कि अगर हमारा अपना जीवन सरल और पवित्र रहेगा तो गाववालो पर उसका असर अपने-आप होगा। इस वारेमे उनसे वहुत कहने-सुनने की जरूरत नही होगी। वहस-मुवाहिसेका तरीका हमारा नही है। हमारा निजका सारा काम नियमानुसार और आदर्श होना चाहिए। आश्रममें हमारे पास काफी जमीन है। हमे इसे आदर्श खेतीके लिए जोतना चाहिए। अगर मै चाहू तो गावकी सारी जमीन खरीदवा सकता हू। लेकिन आज तो मैने ज्यादा जमीन मोल लेने की मनाही की है और तवतक जमीन मोल लेना नही चाहता, जव तक उन खेतोमें मेहनत करनेवालो में उस जमीनसे होनेवाली सारी आमदनी तकसीम न कर सकू। अभी तो मै इतना ही चाहता हू कि हम आश्रमकी खेतीके जरिये ग्रामवासियोके लिए एक आदर्श कायम कर दे। फिर वे खुद-व-खुद उसपर चलने की कोशिश करेगे। आज हमारे आश्रमकी खेती जैसी चाहिए वैसी नही है। अभी हम आदर्शसे कही पीछे है। खर्च भी हमारा ज्यादा है। इस परिस्थितिको सुधारना हमें लाजिम है। हमारा हर एक प्रयोग हमारे आदर्शकी दिशामें होना चाहिए। जव

१. ३१ अक्तूवर, १९३६ को, देखिए खण्ड ६३, पृ० ४४६-५० ।

ऐसा होगा तभी हम लगातार तरक्की कर सकेंगे। मैं चाहता हू कि आप अपने प्रयोगोमे आश्रमकी बहनोको भी शामिल करे। उनसे आपको बहुत मदद मिलेगी। उनके बगैर आपका काम नही चलेगा। इसके अलावा, उन्हे इस कामकी तालीम भी देनी है।

इस प्रकार सेवाग्राम एक लोकराज्य जैसा बन जाता है। दो-चार सालके लिए तो लोग किसी एक व्यक्तिको अपना सरदार मान सकते है। लेकिन बादमे उसके बिना भी काम चला सकते हैं। क्योकि लोकराज्य (रिपब्लिक) मे कोई सरदार होता ही नही है। लोग एक-दूसरेको नजदीकसे जानते है। आजकलके चुनावोका-सा किस्सा नही होता—जहा लाखो-करोडो वोटर होते है और उन्हे पता भी नही होता कि उम्मीदवार कौन शख्स है। लोगोके पसन्दका सरदार उन्हे दबा नही सकता। पुराने जमानेमे हमारे यहा इसी तरहकी कोई तजवीज थी। लेकिन अग्रेजोने सब तहस-नहस कर दिया। अग्रेज तो देहातोको फौजी ताकतसे दबाते है। जब फौजी ताकत ढीली पड जायेगी तब पुलिस-पटेल, पटवारी, कुटवार वगैरा कहीके नही रहेंगे। तब तो गुण्डे ही रह जायेंगे। लेकिन लोग गुण्डोका बन्दोबस्त कर सकते है।

जबतक हम यह नही कर सकते तबतक सत्य और अहिंसाकी दृष्टिसे आदर्श समाजतक नही पहुच सकते। मेरा यह दृढ विश्वास हो गया है कि अहिंसक समाज मेल-जोल और सहयोगपर ही कायम हो सकता है। इनके बिना वह हिंसक ही रहेगा। अगर हम यह कहे कि ऐसा तो हो ही नही सकता, तो उसका यह मतलब है कि अहिंसक समाजकी स्थापना ही नही हो सकती। फिर तो हमारी सारी सस्कृति ही बेकार है। हम मनुष्य-स्वभावपर विश्वास रखते हुए इस आदर्शको असम्भव कैसे कह सकते हैं? हा, उसके लिए बुलन्द दर्जेकी अहिंसाकी जरूरत है।

अग्रेजोको हिन्दुस्तानसे निकाल देने के लिए उतनी बुलन्द अहिंसाकी जरूरत नही है। लेकिन अन्दरूनी सुधारके लिए हमे जो काम करने पडेंगे वे बहुत बुलन्द अहिंसाके बिना नही हो सकते। मसलन, हिन्दू-मुस्लिम झगडेको ही ले लीजिये। बगैर सच्ची अहिंसाके वह तय नही हो सकता। अग्रेजोका मुकाबिला करने के लिए हमने अहिंसाका रास्ता इसलिए अखत्यार किया कि हमारे पास हिंसक बल नही था। वह सच्ची अहिसा नही थी। अहिंसा बुजदिलोके अन्दर नही रहती। वह दिलेरोके सीनेमें रहती है। हब्शी लोग डील-डौलमें बडे तगडे होते हैं। उनके सीने देखने लायक होते है। लेकिन अग्रेजोने उनके अन्दर दहशत पैदा कर दी है। यहातक कि एक बडे कदवाला हब्शी एक छोटे-से गोरे बच्चेको देखकर कापने लगता है। यही हालत हिन्दुस्तानियोकी भी है। गो कि शरीर-बलमे हम हब्शियोसे गये-बीते है, तिसपर भी हमारे मामूली अहिसक प्रयोगका इतना भारी असर पड सका।

इस विषयमे मेरा आत्मविश्वास उत्तरोत्तर बढता ही जाता है। अपने प्रयोगोके अनुभवके बाद इस नतीजेपर पहुचा हू कि मनुष्य-स्वभाव बहुत जल्दी बदला जा सकता है। हम अपनी जड़ताके कारण ऐसा मान बैठे है कि मनुष्य-स्वभाव अचल और अप्रगमनशील है। चर्चिल और हिटलर अपने हिंसक उपायोसे जबरदस्ती ठोक-पीटकर अपने-अपने देशकी जनताका स्वभाव बदलने की उम्मीद रखते है। इस तरीकेसे

मनुष्य दब भले ही जाये मगर बदल नही सकता। अहिंसासे मनुष्य-स्वभाव बदला जा सकता है। और सो भी चर्चिल, हिटलर वगैराको जितना समय लग रहा है उससे कहीं कम समयमे।

आज जो-कुछ मैने कहा है वह अगर आपकी समझमे आ जाये और आप उस पर अमल करने की ताकत हासिल कर ले, तो आगे चलकर मै और बाते आपसे कहता जाऊँगा। आप लोग इन तमाम बातोपर अपनी आपसमे अच्छी तरह चर्चा कीजिये और जो-कुछ हो सकता है उसके बारेमें अपनी मुकम्मिल योजना मेरे सामने रखिये। इस बारेमे आप लोग समय-समयपर जो-जो सवाल पूछते रहेंगे उनके जवाब मै देता रहूगा। आज बहुत-सी बातें मैने आपसे कह दी है। उनमें से कुछ तो नई है और बडे कामकी है। पहले तो आप इन सब बातोको हजम करे। अगर आप तुरन्त सवाल पूछने लगेगे तो आपके सवालोके पीछे कोई ठोस विचार नही होगा।

सर्वोदय, नवम्बर, १९४१

६३. एक गफलत

मै देख रहा हू कि खादी आन्दोलनको २१ वर्षसे अधिक हो चुके है। लेकिन एक तरफ तो हमारे पास बुनकरोकी कमी रहती है, दूसरी तरफ जो एक करोडसे ज्यादा बुनकर हिन्दुस्तानमे पडे है उनसे हम अपना सूत नही बुनवा सकते है। ऐसे दो गुने परिणामका कारण कही हमारी कुछ गफलत तो नही है। आज इस सवाल का जवाब देने की मै कोशिश करूगा।

मेरा खयाल है कि वह हमारी गफलतका ही नतीजा है। इस गफलतके लिए मै किसीको दोष दू तो अपने ही को दे सकता हू। क्योकि जब मैने खादीको बडा स्थान दिया तब ही उसके सब पहलू मेरे सामने होने चाहिए थे। लेकिन मेरे जीवनमें सब बडी बाते पहले पैदा हुई है, और बादमे उनकी सब कडिया आहिस्ते-आहिस्ते मालूम हुई है। कातने मे धुनकी होनी चाहिए यह बात तो अनुभवसे ही हाथ लगी। कपासको ओटने की बात उसके बाद पैदा हुई। सूत बुनना पड़ेगा यह तो मै जानता था, लेकिन उसमें कष्ट होगा वह बादमें जाना। जाना, तो भी उसका इलाज मेरे सामने साफ नजर नही आया जैसा अब आ रहा है। इसकी कुजी यह है कि प्रायश्चित्तके रूपमें ही सही सेवक-वर्गको बुनने की प्रक्रिया भी जाननी होगी। सबसे अच्छे सूत कातनेवाले भी इन्हीमें से मिले है। यही वजह है कि हमने कातने में काफी तरक्की कर ली है। इसी तरह सेवक-वर्गसे बुनवाना चाहिये था। जब हम लोग इस इल्मको हासिल कर लेगे तभी हम हाथका सूत बुनने मे आनेवाली बुनकरोकी कठिनाइयोको ठीक-ठीक समझ सकेंगे। तभी हमे इन कठिनाइयो का इलाज मालूम हो सकेगा, और वे लोग हमें देखकर हाथ-सूतको अपनायेगे। ऐसा भी नही है कि मैने यह विचार किया ही नही था। यो तो हाथ-सूत बुनने का काम शुरू हुआ है मरहूम मगनलाल गाधी तथा मणिलाल गाधीसे। लेकिन मैने जिस आग्रहसे कहा है कि

हर एक स्त्री-पुरुपको कातना ही चाहिए उसी आग्रहसे मैंने यह नही कहा कि हर एक को या अमुकको बुनना भी चाहिए। इस गफलतके कारण बुनने की प्रक्रियाका प्रचार सेवक-वर्गमे जैसा होना चाहिए था वैसा नही हुआ। मेरा ऐसा खयाल है कि हर एक पाच-सात या दस कातनेवालो मे से एक को अच्छा बुनकर बनना ही चाहिए। बुनने की क्रिया एक हाथसे नही होती है। ताना बनाने मे व माडी लगाने मे दूसरे साथीकी जरूरत पडती है। नरिया भरने मे एक लडके या लडकीकी जरूरत रहती है। ये क्रियाए और करघेपर प्रत्यक्ष बुनने की क्रिया वैसे तो सब कोई कर सकते है, मगर मेरा मतलब यह है कि अमुक सख्यामें कमसे-कम यदि एक विशारद बन जाये तो बहुत प्रगति हो सकती है। मुझे यह बताने की आवश्यकता नही समझी जाये कि कही-कही ऐसा होता भी है। मेरी शिकायत तो अपने सामने यह है कि मैंने कानून अथवा विधिवत् ऐसा प्रचार नही किया कि जिस जगह अमुक सख्यामे कातनेवाले हो वहा हर पाच-सात या दसके बीच एक करघा चलना ही चाहिए। अगर इसका विधिवत् आग्रह रखा जाता तो आज लोग मुझे जो सूत भेजते है उसके बदलेमे सूतसे बनी हुई वस्तु भेजते। जेलोमे इतनी सख्यामें सत्याग्रही कैदी पडे है वे सिर्फ चरखे चलाकर ही सन्तोष नही मान लेते बल्कि करघा भी रखते और सूतको बुन भी लेते।

बुनने मे फीता, निवार, तौलिये और मोटी खादीसे लेकर आन्ध्रकी महीन व बारीक नक्काशीदार धोती या साडी आदि सभी प्रकारकी बुनाई का समावेश होता है। क्योकि जब ये सब बुनने की क्रियाए हमारे खयालमे रहेंगी तब किसी प्रकारके भी सूतका कोई धागा हम बेकार नही जाने देंगे। हम सब तरहके सूतका वर्गीकरण करके जैसा सूत होगा उसीके लायक कपडा बुन लेंगे। इस गफलतसे हमे काफी नुकसान भी हुआ है। टूटे हुए सूतको रद्दी समझकर हमने फेक दिया है। मै जानता हू कि बुनियादी तालीमके कई वर्गोमे इस तरहकी हानि न होने देने का खयाल रखा जाने लगा है। हमे इस वस्तुको व्यापक बनाना है। अभी तो बुनियादी तालीमका आरम्भ-काल है। वास्तवमे ऐसे सब विचार करना, शास्त्रीय शोध करना और तदनुसार सुधारण करना तो उसका खास क्षेत्र है।

इस गफलतका सबसे दु ख[द] परिणाम यह हुआ है कि हर एक बुनकरको हम नही अपना सके है। कोई कारण नही कि मिलके सूतकी तरह हम क्यो इन बुनकरोके पास हाथ-सूत नही ले जा सकते। अगर हम अपनी गफलतको स्वीकार करे तथा इसका प्रायश्चित्त करे तो नतीजा यह होना चाहिए कि हाथ-सूतमे इतना सुधार हो कि वह मिलके सूतका मुकाबिला कर सके। शायद बिलकुल मिल-जैसा सूत हाथसे आज न निकल सके। फिर भी आज दोनोके बीचमें जो अन्तर है वह न रहे और बुनकर हाथ-सूत देखकर नाक न सिकोडे जैसा कि वे आज करते है।

सेवाग्राम, २३ अक्तूबर, १९४१

खादी-जगत्, अक्तूबर, १९४१

६४. पत्र : अमृतकौरको

२३ अक्तूबर, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हें केवल पोस्ट-कार्ड लिखकर इतना ही बताने का अवकाश है कि "सब ठीक है।"

बातचीतमें बहुत अधिक व्यस्त हूँ।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०५) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४१४ से भी

६५. पत्र : अमृतकौरको

२४ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। आजका दिन भी बडा व्यस्त रहनेवाला है। लेकिन मुझे तो तुमको एक अच्छा-सा पत्र लिखना ही है।

तुम्हारे भेजे सेब समयसे पहुँच गये हैं, लेकिन टोकरीमें सिर्फ २२ हैं। मैं पूछताछ कर रहा हूँ। लेकिन उससे कुछ होनेवाला नहीं है। कभी-कभी ऐसी चोरियाँ हो ही जाती हैं। सेब बहुत अच्छे हैं।

तुम्हें लाहौर जाने की जरूरत नहीं है। जालन्धरमें एक दिन बिताना ज्यादा अच्छा रहेगा।

शासक-वर्गके बारेमें तुम्हारी बात बिलकुल सही है।

जे० एल० का पत्र तुमने बहुत दिन रोक रखा। जयप्रकाश नारायणके विषयमें लिखी मेरी टिप्पणी[1] तुमने देखी होगी। प्रभा अब कुछ बेहतर है।

१. देखिए "वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको", पृ० ३६-३९।

राते अब खासी ठण्डी होने लगी है। सर्दीके मौसममे मै जितने कम्बलोका उपयोग करता हूँ, सबका कर रहा हूँ।

कुटिया पूरी होने ही वाली है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०६) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४१५ से भी

६६. पत्र: मीनू मसानीको

सेवाग्राम, वर्धा (म० प्र०)
२४ अक्तूबर, १९४१

प्रिय मसानी,[1]

तुम्हारा पत्र पाकर और यह जानकर कि तुम्हे उससे[2] प्रसन्नता हुई, मुझे खुशी हुई।

आशा है, तुम मजेमे होगे।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०९८३) से, सौजन्य: मीनू मसानी। **बिलस वाज इट इन दैट डॉन**, पृ० १७४ से भी

६७. पत्र: बालकृष्ण भावेको

२४ अक्तूबर, १९४१

चि० बालकृष्ण,[3]

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा यह फेरा सफल हुआ नही माना जा सकता। लेकिन कौन जानता है कि यदि यहाँ रहे होते तो क्या होता? भविष्यका तो विचार ही नही करना चाहिए। मै जब यह देखूँगा कि तुम्हारा जीवन भाररूप हो गया है,

१. (जन्म १९०५), अखिल भारतीय कांग्रेस समाजवादी दलके संयुक्त मन्त्री, १९३४-३९, सदस्य, केन्द्रीय विधान-सभा, १९४५-४७, सदस्य, संविधान सभा, १९४७-४८, भारतके ब्राजील-स्थित राजदूत, १९४८-४९, सदस्य, लोकसभा, १९४९-५२, १९५७-६२ और १९६३-७०; संयुक्त राष्ट्रकी भेदभाव तथा अल्पसंख्यक उपसमितिके अध्यक्ष, १९५०-५२, अध्यक्ष, स्वतन्त्र पार्टी, १९७०-७१।

२. तात्पर्य २१ अक्तूबरको गांधीजी द्वारा समाचार-पत्रोको दिये गये वक्तव्यसे है, जिसपर मीनू मसानीने हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की थी।

३. विनोबा भावेके भाई

तब वैसा कहने में जरा भी सकोच नही करूँगा। लेकिन जबतक तुम्हारी बुद्धि ठीक काम करती है, तबतक ऐसा नही कहूँगा, क्योकि जिसकी बुद्धि ठीक है और जिसके सकल्प शुभ है, वह कभी भाररूप नही हो सकता। ऐसे मनुष्यके सकल्पमें जो बल होता है, वह उसकी कृतिमें नही होगा। जैसे भाषा विचारको एक सीमामें बाँध लेती है, वैसे ही कर्म भी सकल्पको सीमित कर देता है। लेकिन अब तो जल्दी भेंट होगी। मुझे ठीक तारीख बताना।

बापूके आशीर्वाद

श्री बालकृष्ण
वाडीलाल साराभाई आरोग्य भवन
पचगनी, जिला सतारा

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ८०६)से। सौजन्य बालकृष्ण भावे

६८. पत्र : दिल्ली सत्याग्रह समितिके संयोजकको[1]

[२५ अक्तूबर, १९४१ के पूर्व][2]

सक्षेपमें, आपका प्रश्न यह है कांग्रेसमें दाखिल होने की इच्छा रखनेवाला कोई व्यक्ति दाखिलेके निर्धारित फार्मपर हस्ताक्षर करने के बाद उसमें दाखिल होने का हकदार है या नही? मेरा उत्तर है हाँ, वह हकदार है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २६-१०-१९४१

६९. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

२५ अक्तूबर, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हें बुजदिलीसे काम नही लेना है। सुधारकको तो भूख और अभावको भी हँसते हुए झेलना पडता है। तुम दूसरोंके दानपर जिओ, यह गलत है—भले ही वह दान अपने सालेसे ही क्यो न मिलता हो। शैलेन,

१. यह पत्र प्रो० इन्द्रके सम्बन्धमें लिखा गया था। उन्होंने पहले कांग्रेससे इस्तीफा दे दिया था, लेकिन अब फिर इस टिप्पणीके साथ दलकी सदस्यताके फार्मपर हस्ताक्षर कर दिये थे कि मेरी रायमें "कांग्रेसकी मौजूदा नियमावलीके अनुसार आत्म-रक्षाके निमित्त हिंसाके प्रयोगके अधिकारका त्याग प्रत्येक सदस्यके लिए कर्तव्य-रूप नहीं है।"

२. रिपोर्ट दिनांक "नई दिल्ली, २५ अक्तूबर" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

धीरेन और, अगर आ जाती है तो, आभाका खर्च उठाकर मैं तुम्हें सहायता तो दे ही रहा हूँ। इसका मतलब कमसे-कम ४५ रुपयेकी मासिक सहायता होना चाहिए। क्या तुम्हें इसको कम करके आँकना चाहिए? लेकिन जैसा ठीक लगे, करो। तुम्हें मुझसे और अधिक आर्थिक सहायताकी आशा नही करनी चाहिए।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३२६)से। सौजन्य . अमृतलाल चटर्जी

७०. पत्र : मदालसाको

२५ अक्तूबर, १९४१

चि० मदालसा,

राधाकृष्ण[1] द्वारा अपना सन्देश पहुँचा देने के बाद इसकी जरूरत नही थी। यह तो मै तुझे सिर्फ हँसाने के लिए लिख रहा हूँ। क्या कुछ और पापड भेजूं?

तू रोती क्यो है? तू यह जानती है न कि तेरे रोने का असर शिशुपर भी पडता है?

तू यहाँ कब आ रही है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२२

७१. पत्र : भगवानजी पु० पण्ड्याको

२५ अक्तूबर, १९४१

चि० भगवानजी,

मोहनसिंहका बयान भेजो। मै तुम्हारा पत्र पढ गया। अपने ढंगसे और जब मुझे फुर्सत होगी, मैं जाँच करूँगा।

अपने बारेमे तुमने चिमनलालसे तय कर लिया होगा।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ३९७) से। सौजन्य भगवानजी पु० पण्ड्या

१. जमनालाल बजाजके भाईके पुत्र

७२. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

२५ अक्तूबर, १९४१

चि० मुन्नालाल,

माथका पत्र पुराना होने के बावजूद मैंने सँभालकर रखा है। आज थोडी फुर्सत मिली, सो इसे पढकर भी जवाब लिख रहा हूँ।

कचनके बारेमे तो अब कुछ सोचने-विचारने जैसा रह नही गया।

यदि खेत और वलवन्तसिंहका मामला अभी न निवटा हो तो उसे मेरे सामने रखो। मैं उसे निवटाने को तैयार हूँ।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४८३) से। सी० डब्ल्यू० ७१५८ से भी; सौजन्य मुन्नालाल ग० शाह

७३. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

२५ अक्तूबर, १९४१

चि० ववूडी,

तुम दोनोंको ढेर-के-ढेर आशीर्वाद — सुखी रहो, दीर्घायु होओ और खूब सेवा करो। जो लोग अपने स्वास्थ्यकी देखभाल न करके भी स्वस्थ मालूम होते हैं, हमे उनसे तुलना नही करनी चाहिए। तुलना की भी नही जा सकती। इस वातके प्रत्यक्ष प्रमाण है कि तू अपने स्वास्थ्यकी जितनी देखभाल करती है यदि उतनी न करे तो बीमार पड जाये। इसलिए तुझे तो आरोग्यके नियम जानने चाहिए और तदनुसार आचरण करना चाहिए।

वापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००३९) से। सौजन्य शारदाबहन गो० चोखावाला

७४. पत्र : अमृतकौरको

२५ अक्तूबर, १९४१

चि० अमृत,

आज खत लिखने का समय है हि नहि। इतना तो स्मरणार्थ। सब ठीक है। जयप्रकाशके बारेमें मैंने लिखा सो देखा होगा।[१]

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ४२५४) से, सौजन्य · अमृतकौर। जी० एन० ७८८६ से भी

७५. पत्र : जयन्तीप्रसादको

सेवाग्राम
२५ अक्तूबर, १९४१

भाई जयन्तिप्रसाद,

तुम्हारा खत मिला। 'आश्रम तो विकारसे भरा है, प्रतिमा भले वही पढे' ऐसा तो मै कह सकता हू। इसमें इशारा प्रतिमाके लिये तुमने लिखा था उसका होना चाहिये। तो भी अगर खत मिले तो मै देखना चाहुगा। प्रतिभाको मैं आश्रममे नही रख सकता हू। इतनी कठिनाईसे परीक्षा देने का मोह भी मै पसद नही कर सकता हू। ऐसे कामोमे पैसे देने का मुझे कोई अधिकार नही है।

सूत मिला।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

१. देखिए "वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको", पृ० ३६-३९।

७६. पत्र : माणेकलाल अ० गांधीको

सेवाग्राम
२६ अक्तूबर, १९४१

चि० माणेकलाल,

इतने विस्तारसे तुम अगर कुटुम्बकी बातें न बताओगे तो और कौन बतायेगा? बहुत प्रसन्नता हुई। बा को भी पत्र दिखा दिया है।

बापूके आशीर्वाद

श्री माणेकलाल अमृतलाल गाधी
पोरबन्दर
काठियावाड

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ८९३) से, सौजन्य: माणेकलाल अ० गाधी

७७. पत्र : माणेकलालको

२६ अक्तूबर, १९४१

चि० माणेकलाल,

चि० मृदुकी सगाईके समाचार पहले तुमसे ही मिले। बादमें माणेकलाल गाधीका पत्र मिला। तुम सबका नया वर्ष सुखसे बीते और तुम्हारे हाथों कुछ सेवा अवश्य हो।

-बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२३) से

७८. पत्र : अमृतकौरको

२६ अक्तूबर, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हारा खत मिला। आज भी इतनी हि भीड—बुलको[1] असंतोषवाला उत्तर मिला है।[2] सब कुशल है। बाते चलती है।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ४२५५) से; सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७८८७ से भी

७९. पत्र : पृथ्वीसिंहको

२६ अक्तूबर, १९४१

भाई पृथ्वीसिंह,

प्रोफेसर क्रिपलानीजी १ नवेंबरको मुंबई पहोंचेंगे और उद्घाटन-क्रिया करेंगे।[3] खानसाहेब को सरहदसे बुलाना ठीक नहिं लगता है। शायद वे पसंद भी न करें। ४२ विद्यार्थी मिले वह अच्छा हि है। भले थोडे मिले लेकिन उत्तम पंक्तिके बनें तो हम पूर्ण संतोष मानें।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६५३) से। सी० डब्ल्यू० २९६४ से भी; सौजन्य: पृथ्वीसिंह

१. खुर्शेदबहन नौरोजी
२. देखिए पृ० ५९-६०।
३. अहिंसक व्यायाम संघका

८०. पत्र : अमृतकौरको

२७ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

मुझे फिर जल्दी करनी होगी। के० के लेखका तुमने जो अनुवाद किया है उसका मैंने गम्भीर अध्ययन आरम्भ कर दिया है। शुरुआत अच्छी नही है। अंग्रेजी किसी हदतक अच्छी है। लेकिन विचारका पल्लवन ठीक नही हुआ है। पूरी चीज सुसम्बद्ध और तर्कसगत लगनी चाहिए। मेरा तात्पर्य क्या है, यह तुम यहाँ आने पर खुद ही समझ लेना। यह काम अत्यन्त कठिन है और अगर तुम विफल हुई तो यह तुम्हारा दोष नही माना जायेगा।

तुम्हारे सन्दूकके बारेमे तो छानबीन करूँगा ही। जालन्धरमें जितने दिन जरूरी हो, ठहरना।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०७) से, सौजन्य. अमृतकौर। जी० एन० ७४१६ से भी

८१. पत्र : खुर्शेदबहन नौरोजीको

सेवाग्राम, वर्धा
२७ अक्तूबर, १९४१

प्रिय बहन,[1]

मुझे तुम्हारे दो पत्र साथ-साथ मिले।

इसके साथ तुम्हारे उत्तरका मसौदा है।[2] इससे तुम्हे यह मालूम हो जायेगा कि सरकारके पत्रपर मेरी क्या प्रतिक्रिया है। कहनेकी जरूरत नही कि यदि इसमें तुम्हारा विचार सही ढगसे प्रतिबिम्बित नही हुआ है तो तुम इसे अस्वीकार कर देना।

तुमने अपने दूसरे पत्रमें जो कहा है वह सब मैं समझता हूँ और उसकी कद्र करता हूँ। मेरी सलाह यह है कि पहले तुम्हे यहाँ आना चाहिए और कुछ दिन

१. सम्बोधन गुजरातीमें है
२. यह उपलब्ध नहीं है।

रहना चाहिए, जिससे हम आरामसे बातचीत कर सक। शायद सत्यवती आयेगी। तब तुम उससे भी मिलोगी। मैं तुम्हे सरूपसे मिलने और अस्पताल[1] देखने जाने की सलाह दूंगा। इसके बाद तुम ज०[2] और इन्दुसे[3] मिलना। इतना सब करने के बाद तुम आदेश[4] भग कर सकती हो। शेष मिलने पर।

स्नेह ।

अंग्रेजीकी नकलसे. प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

८२. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

सेवाग्राम
२८ अक्तूबर, १९४१

सत्याग्रहियोके मार्ग-दर्शनके लिए मैं समाचार-पत्रोको कोई वक्तव्य देने मे बराबर झिझकता रहा हूँ। इसका सबसे बडा कारण मेरी यह इच्छा रही है कि जहाँ सत्याग्रहियोको स्थानीय नेताओका मार्गदर्शन न मिले वहाँ वे अपना रास्ता खुद निश्चित करे। लेकिन सहज ही इस झिझककी अति भी हो सकती है। लगता है, अब स्थितिका एक सक्षिप्त निरूपण प्रस्तुत करने का समय आ गया है — विशेषकर इसलिए कि रिहा किये गये कई नेता मुझसे मिले है और उनसे मेरी जो बातचीत हुई उसके रुझान या परिणामके बारेमे बडी अटकलबाजी चल रही है। जनताको मालूम होना चाहिए कि जो लोग बम्बईवाले प्रस्तावसे[5] पूर्णत सहमत नही थे उनकी शकाओकी अब पुष्टि हो गई है। इसी प्रकार जिनके मनमे कोई शका नही थी उनकी राय भी अब और दृढ हो गई है। जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मेरे मनमे बम्बई प्रस्तावके सही होने के बारेमे कोई सन्देह नही था और न उसको कार्यरूप देने के लिए अबतक उठाये गये कदमके सही होने के बारेमे ही मुझे कोई शका है। यदि शका होती तो मैं देशको ऐसे सघर्षके पथपर कभी नही ले जा सकता था — कभी नही ले जाता — जिससे न केवल कांग्रेसका, बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्रका भाग्य जुडा हुआ है। अहिंसात्मक आन्दोलनमे एक बहुत बडी अच्छाई है। हिंसात्मक आन्दोलनके विपरीत यह अपने-आपमें शुद्ध होता है, इसलिए इससे किसीको कभी भी कोई वास्तविक हानि नही पहुँच सकती।

मेरे पास ऐसी शिकायते आती रहती हैं कि (१) उत्साहमे बडी कमी आ गई है, (२) अब पहलेकी अपेक्षा बहुत कम लोग आगे आ रहे है, (३) जिन लोगोको रिहा कर दिया गया है वे अब ऐसी कोई कार्रवाई नही कर रहे हैं जिससे उन्हे

१. इलाहाबाद-स्थित कमला नेहरू स्मारक अस्पताल
२. जवाहरलाल नेहरू
३. इन्दिरा नेहरू
४. उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्त और कबायली इलाकेमें प्रवेश-निषेधका
५. देखिए खण्ड ७३, पृ० १-३।

फिर जेल जाना पडे, (४) बहुत-से सत्याग्रही कैदियोमें अनुशासन नही है और उनमें से कुछको तो सत्य या अहिंसाके सिद्धान्तका कोई बोध नही है, (५) 'सी' श्रेणीके कैदियोंके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है, क्योंकि उन्हे जो खाना दिया जाता है वह खराब होता है और उसमें सन्तुलित आहार-तत्त्व नही होते। फलस्वरूप अधिकाश कैदियोका स्वास्थ्य खराब हो गया है और इसका नतीजा यह हुआ है कि जो लोग रिहा हुए हैं उनमें से बहुत-से ऐसे हैं जिनके लिए पर्याप्त विश्राम और स्वास्थ्य-लाभ किये बिना फिर जेल जाना असम्भव है। अखबारो, पुस्तकों और स्वास्थ्य-सफाईकी ठीक सुविधाओंके अभावकी भी शिकायतें आई हैं। (६) सरकारको परेशानीमें न डालने की नीति समझमें नही आती, क्योंकि शासक लोग खुद ही इस बातकी कोई कद्र नही कर रहे हैं। इसलिए सरकारको परेशानी होती है या नही, इसकी परवाह किये बिना सघर्षमें तेजी लानी चाहिए। (७) काग्रेसमें कोई जान नही रह गई है। उसकी सभाएँ नही होती, उसकी ओरसे प्रदर्शन नही किये जाते और न कोई और प्रवृत्ति चलाई जाती है। इसलिए नीति और कार्यक्रममें परिवर्तन किया जाना चाहिए — भले ही उसके परिणामस्वरूप ससदीय कार्यक्रम, जिसमें मन्त्रिमण्डल बनाना भी शामिल है, ही क्यो न अपनाना पडे, अर्थात् किंचित् उपयुक्त परिवर्तनोंके साथ फिरसे पूनाके प्रस्तावको[1] ही क्यो न लागू करना पडे।

(१ और २) पहली दोनो शिकायतोपर मैं एक साथ विचार करूँगा। अहिंसात्मक कार्रवाईमें पानीके बुलबुले-जैसा उत्साह बेकार है। आडम्बरयुक्त प्रदर्शनो आदि का महत्त्व अवश्य है, लेकिन प्रारम्भिक अवस्थामें ही। लगातार सरगरमीसे हिंसाको बढावा मिल सकता है और इसलिए वह अहिंसात्मक आन्दोलनके या चाहे तो कहिए, अहिंसात्मक सघर्षके दृढतासे बढते हुए कदमको रोक सकती है। बहुत कम लोग आगे आ रहे हैं, यह तो बिलकुल स्वाभाविक है। कारण, याद रखना चाहिए कि यह व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाका दौर है और इसलिए प्रतिनिधियोतक ही सीमित है — चाहे वे गाँवो या फिर्का समितियोंके चुने हुए प्रतिनिधि ही क्यो न हो। प्रतिनिधियोकी सूची तो सीमित है, इसलिए वह किसी-न-किसी दिन अवश्य चुक जायेगी। मुझे इसमें कोई सन्देह नही है कि यदि मैं सामूहिक रूपसे लोगोका आह्वान करूँ और सत्याग्रहियोंकी सूचीमें नाम दर्ज करवाने से सम्बन्धित शर्तें ढीली कर दूँ तो मेरे पास प्रार्थना-पत्रोंकी भरमार हो जाये। ऐसे प्रार्थना-पत्रोंकी जाँचके लिए मेरे पास कोई साधन नही है। दरअसल वह तो सार्वजनिक आन्दोलनकी स्थिति होगी। और ऐसी स्थितिमें व्यक्तियोकी जाँच-पडताल या उन्हें चुनने-छाँटने की कोई गुजाइश नही होती। युद्धकी समाप्तिसे पूर्व मैं वैसा आह्वान नही कर सकता। सार्वजनिक आन्दोलनका अभी न कोई कारण है और न उसका वातावरण ही है। यदि हम उसका सहारा लेते हैं तो वह सरासर सरकारको परेशानीमें डालनेवाली बात होगी और इसलिए उसे अहिंसाके साथ की गई वचना कहा जायेगा। इससे भी बडी बात यह

१. यहाँ सकेत २८ जुलाई, १९४० को पूनामें पास किये गये अ० भा० का० क० के प्रस्तावकी ओर है। देखिए खण्ड ७४, पृ० १२५-२६।

है कि उससे हमे कभी स्वराज्य नही मिल सकता। साम्प्रदायिक एकताके विना आजकी अवस्थामें सार्वजनिक आन्दोलनका मतलब घरेलू झगडेको न्योता देना होगा। अगर हमारे भाग्यमे घरेलू झगडा ही लिखा हुआ है तो वह अवश्य होगा। लेकिन यदि मै काग्रेसकी नब्ज पहचानता हूँ तो कह सकता हूँ कि वह काग्रेसकी इच्छा या आमन्त्रणपर कभी नही होगा।

(३) यह शिकायत अशत उचित है। यह सच है कि जिन लोगोको रिहा किया गया है, उनमे से कुछ दोवारा जेल जाने मे झिझकते है। यह भारतके लिए एक नया अनुभव है। दक्षिण आफ्रिकामे मुझे यह करना पडा था। जिस तरह आज हमारे सघर्षका यह तकाजा है, उसी तरह तव दक्षिण आफ्रिकामे भी था। स्वेच्छया कष्टसहनकी कोई सीमा नही है। पहलेवाली सविनय अवज्ञाके दौरान उन्ही सत्याग्रहियोको बार-बार जेल भेजने का प्रसग नही आया था। वर्त्तमान अवज्ञाके दौरान यह अनिवार्य है। कोई दूसरा रास्ता अपनाने का मतलव इस सघर्षको विलकुल एक तमाशा वनाकर रख देना होगा। इस कठिनाईसे निकलने के लिए सुझाव यह दिया गया है कि जो सत्याग्रही दोबारा जेल जाने को तैयार नही है उनके स्थानपर नये सत्याग्रही तैयार किये जाये। लेकिन यह तो कोई कष्ट-सहनका तरीका नही हुआ। और पूरा कष्ट सहन किये बिना हम स्वराज्य प्राप्त करने की वात कैसे सोच सकते है? जितना वडा उद्देश्य होता है, उसके लिए उतना ही अधिक कष्ट सहन करना पडता है। इसलिए इस सघर्षमे महत्त्व तो सिर्फ उन्हीका होगा जो, चाहे कुछ भी हो जाये, वार-वार जेल जाने को तैयार रहेगे। हो सकता है, ऐसे लोगोकी सख्या वहुत कम हो। लेकिन इससे कोई अन्तर नही पडेगा। कहने की जरूरत नही कि जो लोग अस्वस्थ है वे जबतक स्वस्थ न हो जाये तवतक उनसे जेल जाने की अपेक्षा नही की जायेगी। कुछ लोगोने मेरे इस कथनका[1] शाब्दिक अर्थ लगा लिया कि रिहा हुए सत्याग्रही सप्ताह-भरका समय ले सकते है और फिर वे जेल जाने की पहल कर सकते है। हर सत्याग्रहीके सम्वन्धमे फैसला उसकी अपनी स्थितिको देखकर करना है। श्री विनोवा अपनी रिहाईके बाद ७२ घटेके भीतर दो वार जेल गये। दोवारा सविनय अवज्ञा करने से पूर्व उन्हे मुझसे मिलने आना था। इतना विलम्व भी इसी कारण हुआ। श्री प्यारेलालने तीसरी वार जेल जाने मे लगभग एक महीनेका समय लगाया। उनकी ओरसे हुए इस विलम्वके कुछ अनिवार्य कारण थे, जिनकी चर्चा करके मै यहाँ पाठकोका समय नही लेना चाहूँगा। यहाँ मैने उन दो व्यक्तियोके उदाहरण दिये है, जिनकी सत्याग्रही प्रवृत्तिका नियमन मै स्वय कर रहा था। मैने प्रसगानुसार कम या ज्यादा छूट लेने या कोई भी छूट न लेने की जिस वातका उल्लेख किया है, उसको स्पष्ट करनेवाले ये दो अच्छे दृष्टान्त है। जो विलम्व अनिवार्य हो उसमे लज्जा अथवा हानि होने की बात नही है। पाखण्ड और कपट-व्यवहारसे हर हालतमे बचा जाये। यदि सत्यपर पूर्ण आग्रह रखा जाये तो सत्याग्रहमे समय अथवा श्रमकी कोई बरबादी नही होती और न लोगोका प्रयत्न ही अकारथ जाता है। जो लोग

१. देखिए खण्ड ७४, पृ० ६८-७०।

पूरे हृदयसे निर्देशोका पालन करने को तैयार हो, सत्यके सेनानियोकी तरह उनकी सेवाओका उपयोग मैं अन्य प्रकारसे भी कर सकता हूँ। उदाहरणके लिए जो लोग किसी उचित कारणवश जेल जाने में असमर्थ है, उन्हें सामूहिक रचनात्मक प्रवृत्तिमे लग जाना चाहिए। कठिनाई इसीलिए उठती है कि वहुत-से काग्रेसी सविनय अवज्ञामें विश्वासका इजहार तो करते है, लेकिन रचनात्मक कार्यक्रममे उनकी श्रद्धा नही है। यह वात मैं न जाने कितनी वार कह चुका हूँ और फिर पूरे जोरसे कह रहा हूँ कि रचनात्मक कार्यक्रम राष्ट्रीय आन्दोलनका, और इसलिए सविनय अवज्ञाका, अभिन्न अग है। रचनात्मक कार्यक्रमसे रहित सविनय अवज्ञा अपराधपूर्ण और श्रमका अपव्यय है। जेल सब तो नही जा सकते। लेकिन रचनात्मक कार्यक्रमको तो सबको कार्यान्वित करना चाहिए। सशस्त्र युद्धमें भी किसी देशके नागरिक सैनिकोकी महत्त्वपूर्ण सहायता करते है। यदि ब्रिटिश सेनाओके प्रयत्नोका नागरिकोके प्रयत्नोसे समन्वय नही होता तो जरा कल्पना करके देखिए कि ब्रिटिश सेनाओका क्या हश्र होता। इसलिए मुझे यह देखकर वडी प्रसन्नता हुई कि इस वार कताई महोत्सवके[1] दौरान कैदियो और अन्य काग्रेसियोने कताईके मामलेमें वहुत ठीक उत्साहका परिचय दिया। मै तो मानता हूँ कि अगर साम्प्रदायिक एकता, अस्पृश्यता-निवारण आदिमें काग्रेसियोका प्रवल विश्वास हो तो कोई साम्प्रदायिक वैमनस्य न रह जाये और न वैसा विरोध ही रह जाये जैसा कि हरिजनोकी ओरसे किया जा रहा है। अपने भाग्य-निर्माता हम स्वय है। इस कथनमें वहुत-कुछ सचाई है कि अगर मै अच्छा सेनापति हूँ तो मुझे अपने लोगोके वारेमें कोई शिकायत नही होनी चाहिए। कारण, जो लोग हमारे पास है उन्हीमें से तो मुझे अपने सेनानी चुनने है। मै अपना दोष स्वीकार करता हूँ। लेकिन मैने अपनी स्वीकारोक्तिके साथ एक विशेषण "वहुत-कुछ" भी जोड दिया है, क्योकि मैने अहिंसक कार्यक्रमके आरम्भ-कालमें ही अपनी शर्तें स्पष्ट कर दी थी। मेरी शर्ते स्वीकार कर ली गई। अगर अनुभवसे यह ज्ञात हुआ हो कि ये शर्तें पूरी नही की जा सकती तो या तो लोगोको मुझे सेनापतिके पदसे वर्खास्त कर देना चाहिए या फिर मुझे स्वय ही हट जाना चाहिए। मै हट भी गया था,[2] लेकिन उससे कुछ वना नही। मेरे और काग्रेसियोके सम्वन्ध अटूट जान पडते है। वे मेरी शर्तोपर भले आपत्ति करे, मुझसे झगडा भले करे, लेकिन वे मुझे छोडने को या जाने देने को तैयार नही है। वे जानते है कि मै चाहे जितना अकुशल सेवक होऊँ, मै उनका साथ नही छोडूंगा, और न जरूरतकी घडीमें उनको निराश ही करूँगा। और इसलिए वे मेरी शर्तें पूरी करने की कोशिश करते है, यद्यपि अकसर शिकवा-शिकायत करते हुए। इसलिए एक ओर तो मुझे जवतक अपनी शर्तोमें मेरा विश्वास है तवतक उनपर कायम रहना है और दूसरी ओर काग्रेसियोसे जो-कुछ मिलता है उसे ग्रहण करते जाना है—इस आशासे कि यदि मै सच्चा हूँ तो काग्रेसी एक-न-एक दिन मेरी शर्तें अवश्य पूरी करेंगे और इस प्रकार एक दिन उस स्वतन्त्रताका रसास्वादन कर पायेंगे जैसी स्वतन्त्रता आजतक दुनियामें कही नही देखी गई।

१. गाधी जयन्ती सप्ताहके दौरान।
२. अक्तूबर, १९३४ मे

(४) अनुशासनहीनता-सम्बन्धी शिकायतके दो पहलू है। यहाँ मै केवल सत्याग्रही कैदियोकी अनुशासनहीनता की ही चर्चा करूँगा। स्वभावतः यह तो चाहूँगा ही कि यहाँ मै जो-कुछ कह रहा हूँ उसकी ओर दूसरे राजनीतिक कैदी भी ध्यान दे। यह कहना गलत है कि सबके-सब काग्रेसी अनुशासनहीन है या उनमे कोई भी सत्याग्रही कहलाने योग्य नही है। मेरे ध्यानमे गम्भीर अनुशासनहीनताके कई उदाहरण लाये गये है। मै जानता हूँ कि अहिंसाका मुखौटा लगाकर हिंसक वृत्तिवाले लोग भी इस सगठनमें घुस आये है। लेकिन मै ऐसे लोगोको भी जानता हूँ जिनकी अनुशासनप्रियता अनुकरणीय है। सब जानते है कि इस आन्दोलनमे और कैदियोके बीच बहुत-से निष्ठावान काग्रेसी है। मै यह सघर्ष उन्हीकें नामपर उन्हीकें लिए चला रहा हूँ। उन्हीके सहारे हम जीतने की आशा भी कर सकते है। लेकिन इसका मतलब यह नही कि जो लोग कमजोर लेकिन सच्चे है, उनकी मै शिकायत कर रहा हूँ। यदि कोई सात वर्षका बच्चा अपना काम ईमानदारीसे पूरा करता है तो वह भी उसी श्रेयका पात्र है जिस श्रेयका पात्र आवश्यकता होने पर हँसते-हँसते फाँसीके तख्तेपर चढ जानेवाला आदमी है।

अभी जो-कुछ हो रहा है वह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे खरे लोगोका चुनाव स्वतः ही हो जायेगा। जो लोग कसौटीपर खरे नही उतरेगे वे अलग रह जायेगे और साथ ही उन्हे किसी अप्रतिष्ठाका भी भागी नही बनना पडेगा। पाखण्डी और घुसपैठिये लोग अपने-आप छँट जायेगे, क्योकि वे उस सच्ची आँचको बर्दाश्त नही कर पायेगे, अथवा जब उनकी असलियतका पता लगेगा तो उन्हे अलग कर दिया जायेगा।

(५) 'सी' श्रेणीकी समस्या तो बुद्धिको चक्करमे डाल देनेवाली है। मैने अनेक बार कहा है कि वर्गीकरण अपने-आपमे बुरी चीज है, लेकिन काग्रेस इस सम्बन्धमे कोई निर्णय नही कर पाई है। फिलहाल हमसे जो बन सकता है, करना ही चाहिए। मुझे इस बातमे किसी प्रकारका सन्देह नही है कि 'सी' श्रेणीके कैदियोके साथ अमानवीय व्यवहार किया जाता है। मै न सरकारको दोष देना चाहता हूँ और न जेल-अधिकारियोंको। मै यह स्वीकार करता हूँ कि उनका काम ही ऐसा है जिसमे कही कोई यश-श्रेय नही मिल सकता। युगोसे वे एक ही परम्पराके अभ्यस्त रहे है। उनकी बुद्धिमे अपराधियो और राजनीतिक कैदियोका भेद समाता ही नही। कुकर्म करनेवाले अपराधियो और स्थापित सत्ताके विरुद्ध विद्रोह करनेवालो के बीच कोई भेद करने को वे तैयार ही नही है। उनके लिए तो राजनीतिसे सम्बन्धित लोग औरोसे भी बुरे है। लेकिन जनमतके दबावके कारण उन्हे भेद करना पडा है। लेकिन परिणाम अत्यन्त असन्तोषजनक है। अधिकारियोमे अपना रवैया बदलने की इच्छा दिखाई नही देती। स्वेच्छासे जेल जानेवाले सत्याग्रहियोको, उनके साथ कैसा व्यवहार किया जाता है, इस बातको लेकर झगडना शोभा नही देता, हाँ, यदि उनके सम्मानको कोई ठेस पहुँचती हो तो बात और है। भारतकी ब्रिटिश सरकार गैर-जिम्मेदार है और गैर-जिम्मेदार सरकार जनमतका अनादर कर सकती है। यह सरकार बहुधा ऐसा करती भी है। लेकिन सत्याग्रहियोको तो तब भी स्वेच्छासे जेल जाना ही है। यह स्वतन्त्रताका सिहद्वार है। उन्हे जेल-जीवनकी शर्तें तय करने का अधिकार नही है।

लेकिन लोकमत भले ही कमजोर हो, फिर भी एक विशुद्ध मानवतावादी प्रश्नपर वह अपने को अभिव्यक्त तो कर ही सकता है। मैंने यह सुझाव रखा है कि इस मामलेमें चिकित्सक-समाज लोगोंको नेतृत्व प्रदान करे। मुझे मालूम हुआ है कि उनकी ओरसे आन्दोलन चलाये जाने की पूरी सम्भावना है। विभिन्न वर्गोंके आहारमें भेद करना क्रूरतापूर्ण बात है। अधिकांश राजनीतिक कैदियोंकी आवश्यकताएँ समान हैं। मेरा सुझाव यह है कि सभी राजनीतिक कैदियोंको ऐसा आहार दिया जाये जो प्रायः सन्तुलित आहारकी श्रेणीका हो और इस बातकी छूट रहे कि अगर किसी कैदीको किसी और खाद्यकी जरूरत हो तो वह अपने खर्चसे उसे प्राप्त करे। जहाँ तक सफाई आदिका सम्बन्ध है, चिकित्सकोंकी एक गैरसरकारी समिति नियुक्त की जाये। उक्त समिति जो सिफारिशें करे उन्हें अविलम्ब लागू किया जाये। सभी प्रान्तोंमें इन कैदियोंके साथ एक-सा व्यवहार किया जाये।

लेकिन अब इतना कहने के बाद मुझे सत्याग्रहियोंको भूख-हड़ताल आदि करने के खिलाफ आगाह कर देना चाहिए। जहाँतक जेलके नियम व्यक्तिके आत्म-सम्मानके नियमोंके विरुद्ध नहीं हैं वहाँतक सत्याग्रहियोंको उनका पालन करना चाहिए। लेकिन इस बातका खयाल रखना होगा कि आत्म-सम्मानके ये नियम भी तुनकमिजाज लोगों द्वारा बनाये गये अपने नियम न हों, वैसे तुनकमिजाज लोगोंको जेल नहीं जाना चाहिए। मेरा कहना यह है कि मैंने जिस अपवादका उल्लेख किया है उसको छोड़कर जेलके अन्य सारे नियमोंका विवेकपूर्वक पालन करना सत्याग्रहीके आत्म-सम्मानका पहला सूत्र है। सत्याग्रह मूक रूपसे विरोधीके हृदयको बदलने की एक प्रक्रिया है। अनुशासनहीनता और परेशान करने की वृत्ति हृदय-परिवर्तन करने की महती आकांक्षासे मेल नहीं खाती। अपने ये विचार मैं डरते-काँपते हुए ही दोहरा रहा हूँ। कारण, मैंने देखा है कि जेल-अधिकारियोंने अकसर सत्याग्रही कैदियोंके खिलाफ मेरी ऐसी बातोंका हवाला दिया है। कहने की जरूरत नहीं कि अभी मैंने जो विचार व्यक्त किये हैं वे तथाकथित अपराधियोंके सन्दर्भमें भी जेलके रंग-ढंगमें सुधार करवाने के लिए चलाये जानेवाले संवैधानिक आन्दोलनके किसी भी तरहसे आड़े नहीं आते। सत्याग्रही तो सर्वत्र सुधार ही करने में विश्वास रखता है। वह अपराधियों और गैर-अपराधियोंमें कोई भेद नहीं करता। वह अपनी सामर्थ्य-भर और अवसरके अनुसार समस्त मानवताकी सेवा करने को आतुर रहता है।

अब रहा सवाल समाचार-पत्र और पुस्तकें मिलने का। ये चीजें भी आहारके समान ही महत्त्वपूर्ण हैं। कुछ ऐसे लोग भी हैं जो आहारके बिना रह सकते हैं, लेकिन समाचार-पत्र और साहित्यके बिना नहीं। मैं मानता हूँ कि किसी राजनीतिक कैदीको इस सुविधासे वंचित रखने का मतलब उसे अतिरिक्त सजा देना है।

(६) सरकारको परेशान न करने की नीतिपर हालाँकि मैं अपने पिछले वक्तव्योंमें प्रकाश डाल चुका हूँ, लेकिन देखता हूँ, इस सवालको लेकर अब भी बहुत-से कांग्रेसियोंका मन उद्वेलित है। पहली बात तो यह है कि यह नीति बम्बई प्रस्तावका हिस्सा है और इसे कार्य-रूप देना ही चाहिए। यह अहिंसाकी एक सहज माँग है।

इसके अलावा, इसमे कार्य-साधक क्षमता और समझदारी भी है। यदि हम इस अवस्थामे सरकारको परेशानीमे डालेगे तो सत्ताधारी निश्चय ही इसका बहुत बुरा मानेंगे और फिर वे विवेकशून्य होकर प्रतिशोधकी भावनासे काम ले सकते है। अगर हमने हिंसाका सहारा लिया होता तब तो बात दूसरी होती। उस हालतमें यह कहावत चरितार्थ होती कि "उनकी कठिनाई हमारे लिए सुयोग है।" स्पष्ट है कि जब ठीक इससे उलटे तरीकेसे काम लिया जा रहा हो तब नियम भी इसका ठीक उलटा ही लागू होगा। हिंसा का सहारा लेना, अर्थात् अहिंसाकी आडमे सरकारको परेशानीमे डालना आत्मघातसे भी बुरा होगा। "हँसव ठठाय, फुलायव गालू" दोनो एक साथ नही चल सकते।

इसपर आलोचक कहते है कि तब तो तर्कसम्मत रवैया यही होगा कि आप सविनय अवज्ञाका बिलकुल त्याग कर दें। सविनय अवज्ञाका त्याग करना भारी भूल होगा। सविनय अवज्ञा तो खुद ही सर्वथा अहिंसक कार्रवाई है। इस अभूतपूर्व हिंसाकी परिस्थितिमे यह हमारा कर्त्तव्य है। इस समय सविनय अवज्ञाका मतलब इस या किसी भी युद्धमें शरीक होने के खिलाफ बोलने के अधिकारका आग्रह करना है। यदि आवश्यकता पडने पर हम इतना भी नही कर सकते तो अच्छा यही है कि हम अहिंसाका त्याग कर दे। सविनय अवज्ञाका तात्पर्य उस अधिकारपर आग्रह करना है जो कानूनको देना तो चाहिए लेकिन दे नही रहा है। अगर किसी कर्त्तव्यके पालनसे किसी अन्यको परेशानी होती है तो उसके लिए किया ही क्या जा सकता है? शराब न पीना मेरा कर्त्तव्य है। उससे शराबकी दुकान चलानेवाले का कुछ नुकसान तो होगा ही। लेकिन मै विवश हूँ। सत्ताधारी वाणीकी अहिंसामय स्वतन्त्रताके प्राथमिक अधिकारको स्वीकार करके परेशानीसे सहज ही बच सकते है। स्वेच्छासे अपनाई गई मर्यादाकी नीतिका सत्ताधारियोपर तत्काल कोई असर होता है या नही, इसका विचार यहाँ अप्रासगिक है। यह विश्वास कि अन्तत अवश्य ही उसका असर होगा, अहिंसामे हमारी श्रद्धामे सहज ही निहित है। हमे अपने विकटतम विरोधीके प्रति भी अपने मनमे कोई दुर्भावना नही रखनी चाहिए।

(७) मै इस बातमे विश्वास नही करता कि काग्रेसमे कोई जान ही नही रह गई है। "शान्त सागर बड़ा गहरा होता है।" काग्रेससे काग्रेसियोको इतना राग है कि निष्क्रियताके कारण यह सस्था मर जाये, ऐसी स्थिति वे कभी नही आने देगे। उसमे जान नही लगती, इसका कारण यह है कि अभी हमारे पास ससदीय कार्यक्रम या सार्वजनिक सविनय अवज्ञा-जैसी कोई प्रभावोत्पादक योजना नही है। सब-कुछ योजनानुसार हो रहा है। सविनय अवज्ञा कुछ चुनिन्दा व्यक्तियोतक सीमित है। आगे इसे और भी मर्यादित कर दिया जायेगा। तब वही लोग सविनय अवज्ञा कर सकेंगे, जो आवश्यकता होने पर चाहे जितनी बार करने को आगे आयेगे। यदि ऐसे लोगोकी सख्या केवल दस या दो ही रह जाये तो उससे कोई फर्क नही पडता। वे दो सम्पूर्ण काग्रेसका प्रतिनिधित्व करेगे। क्या एक ही राजदूत एक सम्पूर्ण राष्ट्रका प्रतिनिधित्व नही करता? इस एकको अनन्त बार बहुगुणित किया जा सकता है। ससदीय प्रवृत्ति भी योजनानुसार ही लगभग बन्द कर दी गई है। मेरे विचारसे तो इसे पूर्णत

वन्द कर देने में भी कोई हर्ज नही है, वल्कि मैं तो मानता हूँ कि इसे पूर्णत वन्द कर ही देना चाहिए। लेकिन मैं जल्दवाजीमे कुछ नही करना चाहता। वहुत-सी जगहोमें स्थानिक निकायोके सदस्योको भी योजनानुसार ही हटा लिया गया है।

अव सवाल यह उठता है कि अगर काग्रेसी सविनय अवज्ञा नही कर सकते या उन्हें करने नही दी जा सकती और जव ससदीय कार्यक्रम भी नही है तो फिर वे करे क्या? उत्तर सीधा-सादा है। काग्रेसजनोके करने की सिर्फ दो ही वातें हैं। सव काग्रेसी तेरह-सूत्री रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल करे और कुछ चुनिन्दा काग्रेसी सविनय अवज्ञा करे। सविनय अवज्ञा वडा जवरदस्त हथियार है, इसलिए आरम्भमें तो कार-गर ढगमे इसका प्रयोग कुछ ही लोग कर सकते हैं। रचनात्मक कार्यक्रमपर सभी काग्रेसियोको, और अगर चाहे तो गैर-काग्रेसियोको भी, अमल करना है। इसके सर्वोच्च महत्त्वकी ओरसे लोग अपनी आँखें कैसे वन्द कर सकते हैं? इसके विना तो ससदीय कार्यक्रम भी स्वाँग ही होगा। १९२० तक हमारा यह कार्यक्रम रहा था। मैं इसकी उपयोगिता से इनकार नही करता। स्वाँगकी भी तो अपनी उपयोगिता होती ही है। लेकिन स्वाँग भी मुख्य नाटकके साथ ही चलता है, उससे अलग स्वाँग-जैसी कोई चीज नही होती। १९२० में राष्ट्रने अपने-आपको पहचाना। स्पष्ट शब्दोमें कहा गया कि रचनात्मक कार्यक्रम सविनय अवज्ञाकी तैयारी है। ससदीय कार्यक्रमका पूर्ण त्याग कर दिया गया। उससे राष्ट्रकी कोई हानि नही हुई। जव हमारी अपनी ससद होगी तव ससदीय कार्यक्रमका भी अपना निश्चित स्थान होगा। हम यह न भूले कि इस लडाईके आखिरी निवटारे की लडाई सावित होने की आशा की जाती है। यह सच है कि वाणीकी सच्ची स्वतन्त्रता मिल जाने पर सविनय अवज्ञा वन्द कर दी जायेगी। यदि युद्धके अन्ततक हम स्वतन्त्र नही हुए तो इसका फिरसे प्रारम्भ किया जाना निश्चित है। लेकिन यह तो निरर्थक अटकलवाजी है। यदि हम अपना वर्त्तमान कर्त्तव्य निभाते है तो युद्धकी समाप्तिके समय हमारे सामने चाहे जैसी परिस्थिति आये, हम अपनेको उसका सामना करने के लिए तैयार पायेंगे।

अव जरा एक नजर रचनात्मक कार्यक्रमपर डालूँ। एक तो है साम्प्रदायिक एकता। यह सम्पूर्ण ससदीय कार्यक्रमसे भी वहुत अधिक महत्त्वकी चीज है। इसके विना ससदीय कार्यक्रम वेकार है। इसके विना तो वह खीचतानका एक कभी खत्म न होनेवाला सिलसिला वन जाता है। पूर्ण हार्दिक एकता प्राय सीधे स्वातन्त्र्यके द्वारतक पहुँचाती। अव कोई मुझसे यह न कहे कि यह एकता कभी स्थापित होगी ही नहीं, या कमसे-कम हमारे जीवन-कालमे तो नही ही होगी। जवतक कुछ काग्रेसी एकताके लिए प्रयत्नशील हैं तवतक मैं इस नकारात्मक वातमे विश्वास नही कर सकता। यदि काग्रेस यह काम नही कर सकती तो मैं जानता हूँ कि अन्य कोई सस्था इसे नही कर सकती। कारण, प्रत्येक काग्रेसीको — चाहे वह किसी भी धर्मका अनुयायी हो — समान रूपसे प्रत्येक भारतीयका — चाहे वह जिस धर्मको माननेवाला हो— प्रतिनिधि होना चाहिए। उस अर्थमें वह सभी धर्मोका है।

अव लीजिए अस्पृश्यताको। मैं फिर इस वातको दोहराता हूँ कि यदि अस्पृश्यता कायम रहती है तो हिन्दू धर्म और उसके साथ ही भारत भी मिट जायेगा। क्या

यह ऐसा कार्यक्रम नही है जिसके लिए जीना योग्य है, मरना परम श्रेय है? और फिर चरखा, जिसका एक-एक चक्कर भारतको अपने सच्चे भवितव्यके निकटतर ले जाता है? निश्चय ही यह ऐसी चीज है जिसपर हर काग्रेसी के लिए अपना हर दिन पूरा-पूरा लगा देना भी योग्य है। और चूँकि हमारे कार्यक्रम-रूपी सौर-मण्डलका सूर्य चरखा है, इसलिए इसमे विभिन्न ग्रामोद्योग-रूपी सभी ग्रह शामिल है।

चरखा हमे भारतके पौरुष, भारतके किसानो और मजदूरो तथा सभी थके-हारे जनोकी मुक्तिके द्वारपर ला खडा करता है। यह ऐसा कार्यक्रम है जिसकी परिधिमें सब-कुछ और सभी समाये हुए है। फिर भी यदि काग्रेसी इसे नही समझते और इसके महत्त्वको नही पहचानते तो कहना होगा कि वे अहिंसाका क-ख-ग भी नही जानते और न सविनय अवज्ञाकी मोटी-मोटी बातोका इल्म ही रखते है।

इस कार्यक्रममे जनसभाओ, प्रदर्शनो, प्रदर्शनियो आदि की पूरी गुजाइश है। इन प्रवृत्तियोमे तालमेल कायम रखने के लिए किसी अधिकृत काग्रेस कमेटीकी आवश्यकता नही है। जहाँ भी चार-पाँच सच्चे काग्रेसी हो, वे साथ मिलकर इन प्रवृत्तियोका सयोजन कर सकते है।

अब काग्रेसी यह समझ गये होगे कि वर्त्तमान कार्यक्रममे मै कोई परिवर्तन करने की बात क्यो नहीं सोच रहा हूँ और क्यो मै देशके भविष्यके सम्बन्धमे अत्यन्त आशान्वित हूँ।

[अंग्रेजीसे]

कांग्रेस बुलेटिन, न० ६, १९४२, फाइल न० ३/४२/४१ – पालिटिकल (१)। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार

८३. टिप्पणी : आश्रमके लिए

२८ अक्तूबर, १९४१

मेरा बी० पी० [ब्लड प्रेशर] तभी कम रहेगा जब यहाके लोग अपना-अपना काम ठीक तरहसे चलावें और कोई भी आपसमे झगडा न करे। यहाका सब काम मेरे आदर्शके अनुसार चलावे और चले।

बापूकी छायामें, पृ० ३८४

८४. पत्र : अमृतकौरको

२८ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारे किये हुए अनुवादके कुछ और सफे देख गया हूँ।[1] सम्भव है, मैं जैसे-जैसे आगे बढ़ूँ वह अधिक सुपाठ्य लगता जाये। अभी मैंने मिट्टी की पट्टी चढ़ा रखी है और पीठ के बल लेटकर तुम्हे यह लिख रहा हूँ। मिलने-जुलनेवालो के बीच मैं यह काम कर रहा हूँ। इसलिए अब और नही।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६८०) से, सौजन्य · अमृतकौर। जी० एन० ६४८९ से भी

८५. पत्र : एस० अम्बुजम्मालको

सेवाग्राम
२८ अक्तूबर, १९४१

चि० अम्बुजम्,

तुम्हारे पत्रमें "अवार्ड" शब्द है। यह क्या है?

कहने की जरूरत नही कि मनुष्य निश्चित उद्देश्योकी प्राप्तिके लिए प्रार्थना कर सकता है बशर्ते कि वे उचित हो। सच तो यह है कि ईश्वर हम सबके हृदयमें विराजमान है। हार्दिक प्रार्थना सही किस्मकी गहन ध्यानावस्था है।

आशा है तुम्हारा सब ठीक चलेगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. देखिए "पत्र: अमृतकौरको", पृ० ५९।

८६. पत्र : अमीना कुरैशीको

२८ अक्तूबर, १९४१

बेटी अमीना,[1]

तेरा खत पढकर मैं बहुत खुश हुआ। तू और सुलताना[2] यहाँ कब आ रही हो?

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६९) से। सी० डब्ल्यू० ४३१४ से भी; सौजन्य: हमीद कुरैशी

८७. पत्र : सुलताना कुरैशीको

[२८ अक्तूबर, १९४१][3]

बेटी सुलताना,

मेरी इच्छा है कि तू आकर कुछ दिन मेरे साथ रह जा। अभी तो सरदार भी यहाँ हैं।

बापूकी दुआ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६६६९) से। सी० डब्ल्यू० ४३१४ से भी, सौजन्य: हमीद कुरैशी

१. इमाम साहबके नामसे प्रसिद्ध अब्दुल कादिर बावजीरकी पुत्री जिसका विवाह गुलाम रसूल कुरैशीसे हुआ था।

२. अमीना कुरैशीकी पुत्री

३. यह पत्र उसी कागजपर लिखा गया है जिसपर पिछला पत्र।

८८. पत्र : नारणदास गांधीको

२८ अक्तूबर, १९४१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने सुझाव दिया है कि तुम्हे उपाध्यक्ष नियुक्त किया जाये। मैं समझता हूँ, कमेटी तुम्हे वनने देनी चाहिए। ऐसे निकाय भी हो तो अच्छा है। ऐसे ही आगे वढा जा सकता है।

अव कुल जमा अन्दाजन कितने रुपये हो गये होगे?

कन्हैयाको शनिवारको आना चाहिए।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५९५ से भी; सौजन्य · नारणदास गाधी

८९. पत्र : विजया म० पंचोलीको

२८ अक्तूबर, १९४१

चि० विजया,

तू गलेपड़ू मालूम होती है। पत्र तू नही लिखती और मुझसे पत्र की आशा करती है। लेकिन ठीक है। जवतक तुम सव सुखी हो, मुझे सन्तोप है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२)से

९०. पत्र : रघुवंश गौड़को

२९ अक्तूबर, १९४१

भाई रघुवश,

तुमको प्रभावतीबहनने लिखा वह भूल थी। मुझे तो तुमारा खत मिला ही नहिं था। मैंने राजकुमारीके खतका उत्तर देने का कहा था कि वे मदद नहिं दे सकेगी। तुम्हारे ऐसे भिक्षा मागना भी नहिं चाहिये। कही मित्रवर्गसे पैसे न मिले तो पटना छोडो और उद्यम करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १४२)से

९१. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम
२९ अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

रघुवशके बारेमें तो बडी बुरी बात हुई। मैंने प्रभावतीको तुम्हारी ओरसे लिखने को कहा था। उसने समझ लिया कि अपनी ओरसे लिखने को कह रहा हूँ। इसीलिए, यह गम्भीर भूल हुई। अब मैंने उसे खुद ही लिखा है।[1] नकल साथमे है। स्पष्ट शब्दोमें 'ना' कह देना तुम्हारा कर्तव्य है। तुम तदनुसार लिख सकती हो।

हरिजनोके निमित्त तुम मुझसे १,५०० रुपयेकी उम्मीद रख सकती हो। तुम्हारे लौटने पर इन्तजाम कर दूँगा। इतना काफी होगा न?

जरूरी हो तो शम्मीको खुश करने के लिए तुम १५ तारीखतक वही ठहर जाओ। लेकिन क्या करना ठीक होगा, यह तो ज्यादा अच्छी तरह तुम्हीं जान सकती हो।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०८)से, सौजन्य. अमृतकौर। जी० एन० ७४१७ से भी

१. देखिए पिछला शीर्षक।

९२. पत्र : अमृतकौरको

३० अक्तूबर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला।

विलियम्स यहाँ आ गये हैं। कुटियाकी देखभालमें लगे हैं।

७ तारीखके पहले यहाँ आ जाओ तो विलियम्स और उनकी पत्नीसे तुम्हारी मुलाकात हो जायेगी।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१०९)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४१८ से भी

९३. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

सेवाग्राम
३० अक्तूबर, १९४१

प्रिय सत्यमूर्ति,

आपका पत्र मिला। आपको मेरा जवाब पहले ही मिल चुका होता, लेकिन सरदारको जो सन्देश मिला, उसके कारण ऐसा नहीं हो सका। ऐसा मालूम हुआ है कि सरदारको भेजे सन्देशमें आपने कमसे-कम तीन महीनेतक न बोलने की इच्छा व्यक्त की है।

आपको अपनी बात कहने और लोगोंको अपने विचारोंका कायल करने की पूरी छूट है।[1] आपको दबाया जाये, ऐसा कोई विचार तो कभी रहा ही नहीं, लेकिन जब आप एक सहयोगीकी हैसियतसे मुझसे मार्ग-दर्शन चाहते हैं तो वह सवाल तो उठेगा ही कि आपके लिए क्या बोलना उचित होगा और क्या अनुचित होगा।

१. कांग्रेस-कार्यक्रममें परिवर्तन और संसदीय प्रवृत्तियाँ, जिसमें प्रान्तोंमें पद-भार सँभालने की बात भी शामिल थी, फिर से आरम्भ किये जाने के प्रश्नपर।

अहिंसक समाजमें और इसलिए एक सच्चे लोकतान्त्रिक समाजमें आदमीको अधिकार तो बहुत-से होते हैं लेकिन कर्त्तव्य सहज ही उसे उनमें से अनेकका उपयोग करने से रोकता है।

मैं आपसे अपेक्षा रखूँगा कि अपने वादेके अनुसार आप अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखेंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-११-१९४१

९४. भेंट: समाचार-पत्रोंके प्रतिनिधियोंको

वर्धागंज
३० अक्तूबर, १९४१

देवली कैम्प जेलके नजरबन्दोंकी भूख-हड़ताल[1] और उसके सम्बन्धमें जारी की गई सरकारी विज्ञप्तिके बारेमें जब महात्मा गांधीकी प्रतिक्रिया पूछी गई तो उन्होंने कहा:

विज्ञप्ति दुर्भाग्यपूर्ण थी। आम तौरपर मुझे यह पसन्द नहीं कि कैदी भूख-हड़ताल करें, लेकिन मैं यह स्वीकार करने को भी विवश हूँ कि कभी-कभी अपनी शिकायतें दूर करवाने के लिए उनके सामने और कोई रास्ता नहीं रह जाता। सरकारका यह कहना बड़ी निष्ठुरतापूर्ण बात है कि जबतक वे भूख-हड़ताल समाप्त नहीं करते तबतक वह उनकी शिकायतोंपर विचार नहीं करेगी। इसका मतलब तो एक तरहसे यह कहना है कि अन्यायका शिकार होनेवाले लोग अन्यायका मार्जन कराने के लिए कष्ट-सहनकी पद्धति न आजमायें।

मैं तो यह मानना चाहूँगा कि कोई सवेदनशील सरकार अन्यायका शिकार होने वाले लोगोंकी प्रार्थनाओंकी सुनवाई करने में तब और अधिक तत्परता दिखायेगी जबकि सरकारसे प्रार्थनाएँ करने के साथ वे लोग स्वेच्छया कष्ट-सहन भी कर रहे हों। यदि ये माँगें न्यायपूर्ण हैं — और श्री एन० एम० जोशीकी रिपोर्टके अनुसार तो न्यायपूर्ण ही जान पड़ती हैं — तो न्याय करने में शीघ्रता बरतनी चाहिए, ताकि उन लोगोंको जितने कष्टसे बचाया जा सकता है उतने कष्टसे बचाया जा सके।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १-११-१९४१

१. २०४ नजरबन्द भूख-हड़ताल कर रहे थे।

९५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

आश्रम

शनिवार [३१ अक्तूबर, १९४१][1]

भाई वल्लभभाई,

सुनने में आया है कि आज तुम्हारा जन्मदिवस है। इसलिए सेवाके वर्षोंमें से एक वर्ष तो गया। ऐसे अनेक वर्ष जायें, यह कामना करने का अर्थ है कि तुम दीर्घायु होओ। देखना, हमें स्वराज्य लेकर ही जाना है।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २६२

९६. पत्र : भोगीलाल लालाको

३१ अक्तूबर, १९४१

भाई भोगीलाल,

तुम्हारे दुर्घटनाग्रस्त[2] होने की बात सरदारने मुझे बताई। तुम तो बहुत बडे खतरेसे बच गये जान पडते हो। हम आशा करे कि थोडे दिनोमें तुम बिलकुल ठीक हो जाओगे।

बापूके आशीर्वाद

श्रीयुत भोगीलाल लाला
"कांग्रेस भवन"
अहमदाबाद, बी० बी० एण्ड सी० आइ० रेलवे

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०८६०) से। सौजन्य : शशिबहन देसाई

१. साधन-सूत्रमें इस पत्रको १९४१ के पत्रोंमें रखा गया है। ३१ अक्तूबर, वल्लभभाईका जन्मदिवस था, लेकिन उस वर्ष ३१ अक्तूबर शनिवारको नहीं बल्कि शुक्रवारको पड़ा था।

२. भोगीलाल लाला अकाल-सहायता कार्यके सिलसिलेमें देहाती इलाकेमें सफर करते समय कार-दुर्घटनामें पड़ गये थे।

९७. पत्र : आर० के० एल० नन्द किओल्यारको

३१ अक्तूबर, १९४१

भाई नद कीओल्यार,

केरलके कातनेवालो ने खद्दर-उत्सवमे जो सूत काता उसका विवरण देखके मुझे वडा ही आनन्द हुआ है। तुम्हारे तरफसे उस सूतकें २३६ रुपैयोकी हुडी भी मिल गई है। सब कातनेवालो को मेरे धन्यवाद पहुँचाना। आशा है कि उत्साह कायम रहेगा और खादीवायु बढेगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य. प्यारेलाल

९८. मेरे लिए ईसा मसीह क्या अर्थ रखते हैं[1]

यद्यपि अपने जीवनका एक बडा हिस्सा मैंने धर्मका अध्ययन तथा सभी धर्मोंके धुरीण लोगोसे चर्चा करते बिताया है फिर भी मै भली-भाँति जानता हूँ कि ईसाके बारेमे लिखते हुए मेरे लिए वे क्या अर्थ रखते है, यह समझाने की कोशिश करते हुए मै अनधिकार चेष्टा करता हुआ ही प्रतीत होऊँगा। मै ऐसा कर रहा हूँ तो केवल इसलिए कि मेरे ईसाई मित्रोने अनेक बार मुझसे कहा है कि चूँकि मै ईसाई नही हूँ और (ठीक उन्हीके शब्द मै उद्धृत कर रहा हूँ) "ईसाको ईश्वरके एकमात्र पुत्रके रूपमे हृदयसे स्वीकार नही करता हूँ," इसी कारण उनकी शिक्षाके गहरे मर्मको समझना या आध्यात्मिक शक्तिका जो महत्तम स्रोत मनुष्यको आजतक ज्ञात हो पाया है उसे जानना या उसकी व्याख्या करना मेरे लिए असम्भव है।

मेरे मामलेमे यह सही हो अथवा न हो, लेकिन इसे मै भ्रामक दृष्टिकोण मानता हूँ। मेरा विचार है कि ऐसी धारणा विश्वको ईसा मसीह द्वारा दिये गये सन्देशसे असगत है। कारण, निश्चय ही वे बदलेमे किसी भी वस्तुकी कामना किये विना और पानेवाले का धर्म क्या है, इसका कोई खयाल किये बिना सब-कुछ देने को तत्पर व्यक्तिके महानतम उदाहरण थे। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि आज वे यहाँ मानव-प्राणियोके बीच रहते होते तो जिन्होने शायद कभी उनका नाम भी न सुना होता ऐसे बहुत-से लोगोके जीवनको भी उन्होने अपने आशीर्वादसे धन्य किया होता।

१. साधन-सूत्रमें यह इनर कल्चरसे उद्धृत किया गया है; किन्तु लेखन-तिथि नही दी गई है।

इसके लिए जरूरी सिर्फ इतना होता कि ईसा इस धरतीपर जिन गुणोंके जीवन्त उदाहरण थे, उनका समावेश उन लोगोंके जीवनमें हो —— अर्थात् अपने पड़ोसीको स्वयं अपने समान प्यार करने और अपने साथी मानव-प्राणियोंके बीच भलाई और परमार्थके कार्य करने के गुणोंका।

तब फिर ईसा मेरे लिए क्या अर्थ रखते हैं? मेरे लिए वे मानव-जातिको आजतक प्राप्त महानतम गुरुओंमें से थे। अपने अनुगामियोंके लिए वे ईश्वरके एकमात्र पुत्र थे। मैं इस मान्यताको स्वीकार करता हूँ या नहीं करता, इससे क्या मेरे जीवनपर उनके प्रभावमें कोई कमी या वृद्धि हो सकती है? क्या उनकी शिक्षा और उनके सिद्धान्तके समस्त वैभवके द्वार मेरे लिए बन्द रहेंगे? मैं तो ऐसा नहीं मान सकता।

मेरे लिए उसका मतलब आध्यात्मिक जन्म है। दूसरे शब्दोंमें, मेरी व्याख्या यह है कि स्वयं ईसाका जीवन ईश्वरसे उनके सामीप्यकी कुंजी है, उन्होंने अपने जीवनमें ईश्वरके तत्त्व और उसकी इच्छाको जिस प्रकार व्यक्त किया वैसा और कोई नहीं कर पाया। इसी अर्थमें मैं उन्हें ईश्वरके पुत्रके रूपमें देखता और स्वीकार करता हूँ।

किन्तु मैं यह मानता हूँ कि जिस ईश्वर-तत्त्वको ईसाने गहनतम मानवीय अर्थमें अधिकतम प्रमाणतक उदाहृत किया उसके कुछ-न-कुछ अंशका अस्तित्व अवश्य है। मुझे इसमें तो विश्वास करना ही है। यदि मैं वैसा नहीं करता तो नास्तिक बन जाऊँगा; और नास्तिक होने का मतलब खोखला और नैतिक तत्त्वसे रहित जीवन व्यतीत करना है। या दूसरे शब्दोंमें कहें तो उसका मतलब सम्पूर्ण मानव-जातिको एक नकारात्मक अन्तके सुपुर्द कर देना है।

यह सच है कि जब यूरोपीय आक्रमणकारियों द्वारा आरम्भ किये गये रक्तरंजित ताण्डवकी ओर दृष्टि जाती है या जब मनमें विश्वके कोने-कोनेमें व्याप्त कष्ट और व्यथा और युद्धके बाद अनिवार्य रूपसे फैलनेवाली भयावह महामारी और अकालका विचार आता है तो नास्तिकताका कारण निश्चित रूपसे उपस्थित हो जाता है।

इस सबको देखते हुए कोई मनुष्यमें अवतरित दिव्य तत्त्वकी बात गम्भीरता-पूर्वक कैसे कर सकता है? इसलिए कर सकता है क्योंकि आतंक और हत्याके ये कृत्य मनुष्यकी अन्तरात्माको कष्ट पहुँचाते हैं, क्योंकि मनुष्य जानता है कि वे बुराईके तत्त्वका प्रतिनिधित्व करते हैं, क्योंकि अपने हृदय और मनकी गहराईमें वह उन सबको देखकर व्यथित होता है। इसके अतिरिक्त इसका कारण यह भी है कि जब मनुष्य गलत शिक्षाओंसे गुमराह होकर या झूठे नेताओंके संसर्गसे कलुषित होकर भटक नहीं गया होता है तब उसके हृदयमें नेकीकी सहज वृत्ति और करुणाका भाव होता है। यह करुणाका भाव उसी दिव्य तत्त्वका स्फुलिंग है, और मैं मानता हूँ कि वही स्फुलिंग किसी दिन सहसा उस पूर्ण पुष्पके रूपमें प्रस्फुटित हो जायेगा जो समस्त मानव-जातिकी आशाका आधार है।

इस प्रस्फुटनका एक उदाहरण ईसाके व्यक्तित्व और जीवनमें देखा जा सकता है। मैं यह मानने को तैयार नहीं हूँ कि आज ऐसा कोई मनुष्य है अथवा कभी

रहा है जिसने अपने पापोका बोझ कम करने के लिए ईसाके उदाहरण का उपयोग न किया हो, यद्यपि सम्भव है कि उसने इस तथ्यका अनुभव किये बिना ऐसा किया हो। ईसाकी उपस्थिति, उनके कृतित्वो और उनके दिव्य स्वरसे नि.सृत शब्दोसे सभीके जीवनमें न्यूनाधिक परिवर्तन आये है।

मेरी मान्यता है कि विश्वके विभिन्न धर्मोके गुणोका मूल्याकन असम्भव है, और इसके अतिरिक्त मैं यह भी मानता हूँ कि ऐसा प्रयास करना भी अनावश्यक और हानिप्रद है। लेकिन मेरी रायमे, उनमें से प्रत्येकके पीछे प्रेरक हेतु एक ही है मनुष्यके जीवनको ऊपर उठाना और उसे अर्थ प्रदान करना।

और चूँकि ईसाके जीवनका उपर्युक्त महत्त्व है और उसमे देशकालातीतताका उपर्युक्त गुण है, इसलिए मैं मानता हूँ कि वे केवल ईसाई-जगत्के ही नही, बल्कि अखिल विश्वके है, समस्त जातियो और जनोके है, चाहे वे जिस झण्डेके नीचे, जिस नाम या सिद्धान्तसे जुडकर काम कर रहे हो, किसी धर्म-विशेषको मान रहे हो अथवा अपने पुरखोसे विरासतमे मिले देवता-विशेषकी पूजा कर रहे हो।

[अंग्रेजीसे]

मॉर्डन रिव्यू, अक्तूबर, १९४१

९९. तार : परीक्षितलाल मजमूदारको

वर्धा

१ नवम्बर, १९४१

परीक्षितलाल

साबरमती आश्रम

अहमदाबाद

अर्जुनने[1] तार दिया है कि सिमेजमे राजपूतोने रामजीभाईको बुरी तरह पीटा है। उन्हे अस्पतालमे भरती कर दिया गया है। जरूरी कार्रवाई करो। अगर आवश्यक लगे तो [यह] अर्जुनको दिखा देना।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०४५)से। सी० डब्ल्यू० १५४ से भी, सौजन्य . परीक्षितलाल मजमूदार

१. रामजीभाई नामक एक हरिजनके पुत्र

१००. पत्र : अमृतकौरको

१ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

आशा है, यह इस दौरका तुमको लिखा मेरा आखिरी पत्र सावित होगा।

मैं नही चाहता कि तुम जल्दवाजी करो। जितना समय लगाना जरूरी हो, उतना वखूवी लगा सकती हो।

सव कुशल है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११०)से, सौजन्य. अमृतकौर। जी० एन० ७४१९ से भी

१०१. पत्र : डंकन ग्रीनलीजको

१ नवम्बर, १९४१

आपका पत्र मिला। पढकर विचित्र लगा। मुझमे सकुचित देशभक्ति नही है। आदमी-आदमीके वीच सद्भाव बढाने के लिए मैं सव-कुछ करना चाहूँगा। जवतक समान दृष्टिकोणवाले लोग साथ मिलकर परस्पर सहयोग नही करेगे तवतक कुछ नही हो सकेगा। आप भले ही उन्हे एक दलकी सज्ञा देकर उनकी भर्त्सना करे। लेकिन अगर वे किसी के खिलाफ नही है तो उन्हे एक दल नही कहा जा सकता। ईसा मसीह और उनके वारह चुनिन्दा शिष्योका क्या कोई दल था?

और क्या साम्राज्यवाद और नाजीवादमें कोई फर्क है? मुझे तो नही दिखाई देता। नाजीवाद साम्राज्यवादका तर्कसगत परिणाम है। नाजीवादको नष्ट करने की निरर्थक आशासे मैं साम्राज्यवादकी ओरसे हथियार नही उठा सकता। अनिवार्य होने पर इन दोनोका विरोध करते हुए दोनोंके वीच पिस जाना मैं कही अधिक अच्छा समझूँगा। आपके तार्किक मस्तिष्कमें इतनी-सी वात तो समा ही सकनी चाहिए।

[अंग्रेजीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य नारायण देसाई

१०२. पत्र : परीक्षितलाल मजमूदारको

१ नवम्बर, १९४१

भाई परीक्षितलाल,

आज तुम्हे तार भेजा है। वह मिला होगा और तुमने सब सम्भव कदम उठाये होगे। जिन्हे गिरफ्तार कराना जरूरी हो, उन्हे गिरफ्तार कराया जाये। जो लोग पकडमे आ जाये, वे अगर माफी माँगे और रामजीभाईको हर्जाना दे तो उन्हे अवश्य छोड दिया जाये। लेकिन छोडा जाये इस शर्तपर कि वे लोग वचन दें कि भविष्य में फिर कभी इस तरह हरिजनोको नही सतायेगे। हरिजन भयभीत हो गये हो तो उन्हे दिलासा देकर हिम्मत बँधानी चाहिए। तुम्हे उन्हे यह बताना चाहिए कि यदि वे अहिंसाको नही समझते तो उन्हे हिंसासे अपनी रक्षा करनी चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४०३३)से

१०३. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम
२ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

हाँ, पुरुषोकी तरह स्त्रियाँ भी केवल सोच ही सकती है, लेकिन सोचा हुआ होगा या नही, यह सर्वथा ईश्वराधीन है। इसलिए जब तुम आ जाओगी तभी समझूंगा कि आ गई। तुम शम्मीके साथ रवाना होओगी, यह जानकर खुशी हुई। वह पूरा आनन्द उठा पायेगा, यह बडी अच्छी बात है। तुम्हारे लौटने तक मौसम भी और ठडा हो जायेगा। बेचारी प्रभा! !

तुम बडी नाजुक मिजाज हो। जहाँतक शैलीका सम्बन्ध है, तुम्हारा अनुवाद अच्छा है। मैंने तो सिर्फ विचारकी शिथिलताकी बात कही है।[1] यदि मूलमे शिथिल हो तो भी अनुवादकको उसे सुस्पष्ट और सुसम्बद्ध बनाना चाहिए। यह काम कठिन है लेकिन करना तो है ही। किन्तु यदि सुधारोको पूरी तरह सहज भावसे ग्रहण न

१. देखिए "पत्र : अमृतकौरको", पृ० ५९।

किया जाये तो यह काम नही हो सकता। मैंने आरम्भ ही किया है। हो सकता है आगे काफी अच्छा लगने लगे।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४१११)से, सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७४२० से भी

१०४. पत्र: सतीन सेनको

२ नवम्बर, १९४१

प्रिय सतीन,[१]

तुम्हारा पत्र मिला। अपनी सेवाके बलपर जो सहायता हम प्राप्त कर सकते है उसीसे हमें काम चलाना है। सोसाइटीकी बात ठीक थी। मैं दान देनेवालो की इच्छाके अनुसार ही दान-राशिका वितरण कर सकता हूँ। बेशक सोसाइटी दान लेने से इनकार कर सकती है। लेकिन ऐसा करना मूर्खतापूर्ण होगा। हम कोशिश करके जरूरतमन्द मुसलमानोके लिए दान प्राप्त कर सकते हैं। इस समय यह काम कठिन हो सकता है। उस हालतमें हम व्यक्तिगत रूपसे जो सहायता कर सकते है, उससे सन्तोष मानना होगा।

अगर मैं कुछ रकम इकट्ठी कर भी लूं तो भी मेरा यहाँसे पैसा भेजना गलत होगा। तुम स्थानिक तौरपर और स्थानीय प्रयत्नसे जो इकट्ठा कर सको वही ठोस सेवा होगी। हमें बिना पैसेके और बिना कोई शोर किये सेवा करनेका मर्म सीखना है। पैसा अकसर रुकावट होती है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. बाकरगंज तूफान और बाढ़-राहत समितिके मन्त्री

१०५. पत्र : कान्तिलाल गांधीको

२ नवम्बर, १९४१

चि० कान्ति,[1]

बडी माँ को लिखा तेरा पत्र पढकर मुझे आश्चर्य हुआ। तेरा मन कितना सकीर्ण है? उदारताका नाम नही है। वहमकी सीमा नही है। सरस्वतीको[2] पत्र कौन लिखता है? तेरे बारेमे जो समाचार मिल सकते है, मै पूछकर जानता रहता हूँ। तेरे पत्रोका जवाब न देता होऊँ, ऐसा भी नही है। फिर, तेरी भूले तुझे बताने के सिवा और मुझे करना भी क्या चाहिए था? लेकिन जो हो, यह पत्र भी तेरा दोष-भर दिखाने के लिए है। किशोरलालभाईने पत्र लिखा, वह भी मेरी प्रेरणासे लिखा था। मैने पत्र लिखने का विचार किया था, लेकिन फिर समय बचाने के लिए उनसे कहा। इतना समझ ले कि मेरे पत्र न लिखने का कारण समय बचाने के सिवा और कुछ नही होता; हालाँकि तेरा पत्र आया हो और मैने जवाब न दिया हो, यह मुझे याद नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो नकल (सी० डब्ल्यू० ७३६४)से, सौजन्य . कान्तिलाल गाधी

१०६. पत्र : धर्मप्रकाशको

२ नवम्बर, १९४१

भाई धर्मप्रकाश,

तुम्हारा खत मिला। दलित जातिका प्रश्न बहुत कूट है। वह राजप्रकरणसे परे है। हमारे अधिवेशनके लिये अगर द्रव्य न मिल सके तो उसे स्थगित कर दिया जाय। मेरी सहायसे क्या मिल सकता है? अपनी प्रतिष्ठासे जो हो सके उससे काम चलाओगे तो सुशोभित होगा। अपना ध्येय भी कायम करो। याद रखो कि डा० अंबेदकरने अपना ध्येय बना रखा है। उसे पढो, पाचन करो। और अपना समझ लो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य · प्यारेलाल

१. हरिलाल गाधीके पुत्र

२. कान्तिलाल गाधीकी पत्नी

१०७. पत्र : अमृतकौरको

३ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

हरिजन तुम्हारी शर्तोंका पालन करें तभी उन्हें सहायता दी जाये, ऐसी व्यवस्था कर देना तो बहुत अच्छा रहेगा। तुम्हें वहाँ कोई ऐसा कार्यकर्त्ता तैयार करना चाहिए जो इस काममें अपना पूरा समय दे सके।

तुम्हारा सपना विचित्र था। कभी-कभी ऐसे सपने आ जाते हैं। मैं इन्हें कोई महत्त्व नहीं देता।

यहाँ आओगी तो रेहानासे मिलोगी। वह परिवारकी सदस्या बन गई है और हर शाम गाती है। कुछ लोगोंको उसने 'कुरान' की कुछ आयतें सिखा दी हैं। वह श्लोकोंका गायन बहुत शुद्ध करती है।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११२) से, सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७४२१ से भी

१०८. पत्र : सन्तसिंहको

३ नवम्बर, १९४१

प्रिय सन्तसिंह,

मेरे किसी हत्यारेको कम्बल बेचने और तुम्हारे लड़ाईके मैदानमें सैनिकके रूपमें अपनी सेवा अर्पित करने में कोई साम्य नहीं है।[1] कम्बल बेचना मेरा धन्धा है, और मैं किसी भी जरूरतमन्दके हाथ वह बेच सकता हूँ। लड़ाईके मैदानमें तुम अपनी सेवाएँ अर्पित करो, यह तुम्हारे कर्त्तव्यका अंग नहीं है। इसलिए मेरा उत्तर है— 'नहीं'।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८६१) से

१. देखिए खण्ड ७४, पृ० ३६७-६८।

१०९. पत्र : सर्वपल्ली राधाकृष्णन्‌को

सेवाग्राम, वर्धा
३ नवम्बर, १९४१

प्रिय सर राधाकृष्णन्,

कहनेकी जरूरत नही कि आपको अधिकृत रूपसे घोषणा करनी है। कितना अच्छा होता, अगर मैं आपको लिखित रूपमें कुछ भेज सकता ?[1] लेकिन मुझे कोशिश भी नही करनी चाहिए। उस समयतक वहाँके परिवेशकी प्रेरणापर मुझे शब्द सूझ जायेंगे। लेकिन मैं जो भी शब्द कहूँगा वे निराशाजनक ही होगे। आप नही जानते कि विद्वानोके सम्मुख बोलते समय मुझे कितनी घबराहट होने लगती है। बडे भाईकी तरह मालवीयजीके[2] प्रति अपने गहरे स्नेह तथा आपके प्रति उत्कट सम्मानकी भावनाके कारण ही मुझे आपका निमन्त्रण स्वीकार करना पडा है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजीसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

११०. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम
४ नवम्बर, १९४१

चि० अमृत,

तुम्हे फिरसे बीमार नही होना है बल्कि उत्तरोत्तर अधिकाधिक स्वस्थ और शक्तिशाली बनना है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११३) से, सौजन्य . अमृतकौर। जी० एन० ७४२२ से भी

१. राधाकृष्णन्‌ने गांधीजी से अनुरोध किया था कि वे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयकी रजत जयन्तीके अवसरपर जो भाषण देनेवाले थे उसकी अग्रिम प्रति उन्हें भेज दें, ताकि उसे लोगोंमें प्रचारित किया जा सके।

२. मदनमोहन मालवीय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके एक संस्थापक-सदस्य

१११. पत्र : अन्नदाशंकर चौधरीको

४ नवम्बर, १९४१

प्रिय अन्नदा,

अब तक मैं इसकी[1] ओर ध्यान नहीं दे पाया। तुम इसे पढ जाना और इसके बारेमें तुम जो कहना चाहो उसके साथ इसे वापस भेज देना।

तुम्हारा,
बापू

मूल अंग्रेजीसे. प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

११२. पत्र : अन्नदाशंकर चौधरीको

४ नवम्बर, १९४१

प्रिय अन्नदा,

तुम्हें पत्र लिखनेके बाद यह[2] मिला। तुम्हारा क्या कहना है? [इसे] वापस भेज देना।

तुम्हारा,
बापू

मूल अंग्रेजीसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. सतीशचन्द्र दासगुप्तका १० अक्तूबरका पत्र, जिसमें उन्होंने अन्नदा बाबू द्वारा लगाये गये आरोपोंका उत्तर दिया था, देखिए खण्ड ७४, पृ० ४२६।

२. सतीशचन्द्र दासगुप्तका १ नवम्बरका पत्र

११३. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

४ नवम्बर, १९४१

चि० मगन,

तेरा पत्र आज ही मिला। मैंने तुझे मणि भुवनके पतेपर पत्र लिखा था। उर्मिको[1] भी लिखा था। वह पत्र तुझे मिला ही नहीं। तेरा पता न मिलने से मैंने मणिभाईको पत्र लिखा।

मैं समझता हूँ, तेरा रतिलालसे मिलना जरूरी है। बाकी नरहरिभाई तो सब कर ही रहे है।

बम्बईमें बसने का विचार मुझे पसन्द है। चेम्बरमें दाखिल तो पास होने के बाद ही हुआ जा सकता है न? नतीजा कब निकलेगा? बाकी मिलने पर।

उर्मिको अलगसे पत्र नहीं लिखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२११) से। सौजन्य : मंजुलाबहन म० मेहता

११४. पत्र : जमनालाल बजाजको

४ नवम्बर, १९४१

चि० जमनालाल,

इस मामलेमें[2] तो तुम्हीं रास्ता दिखा सकते हो। जो लिखना चाहो निसंकोच लिखना। मैंने तार[3] कर दिया है कि मैं जमनालालजी से सलाह ले रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०२५) से

१. मगनलाल प्रा० मेहताकी पुत्री

२. ऋषभदास राँकाने अपने भावी कार्यक्रमके बारेमें गांधीजी से मार्गदर्शन माँगा था।

३. उपलब्ध नहीं है

११५. पत्र : सिद्धरामप्पा गं० हरकुणिको

४ नवम्बर, १९४१

भाई सिद्धरामप्पा,

तुम्हारा खत मिला। जितना हो सके इतना परिश्रम करना। पठन-पाठन करना। शरीर अच्छा रखना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

११६. पत्र : पुरुषोत्तम त्रिकमदासको[1]

५ नवम्बर, १९४१

भाई पुरुषोत्तम,

जयप्रकाशके सम्बन्धमें दिये गये वक्तव्यके विषयमें तुम्हारी टिप्पणी मुझे जितनी सन्तोषजनक लगी, बिहारमें दिया गया तुम्हारा भाषण[2] उतना ही असन्तोषजनक लगा। उसका मतलब तो यह हुआ कि हाथीके दिखाने के दाँत और है और खाने के और। और कांग्रेसका सदस्य होते हुए भी तुमने उसकी कैसी विषाक्त आलोचना की है? जैसा तुम मानते हो, यदि कांग्रेस वैसी ही है तो फिर तुम्हारे उसका सदस्य बने रहने से क्या लाभ है? इस समय कांग्रेसकी नीतिका तुमने जिस तरह औचित्य सिद्ध किया है वह तो ऊँचे आसनपर बैठे किसी व्यक्ति द्वारा की गई कृपा-जैसा लगता है। यह बात मैं तुम्हारे मित्रकी हैसियतसे लिख रहा हूँ। इसपर अखबारोंमें चर्चा नहीं होनी चाहिए। किसी अन्य संस्थाकी आलोचना कर कोई संस्था आगे नहीं बढ़ सकती। वह तो अपने ही बल-बूतेपर आगे बढ़ती है।

बापूके आशीर्वाद

[अंग्रेजीसे]
फाइल सं० ३००१/४, पुलिस कमिश्नर्स ऑफिस, बम्बई

१. मूल गुजराती पत्र उपलब्ध नहीं है। पुरुषोत्तम त्रिकमदास अखिल भारतीय समाजवादी दलके महामन्त्री थे।

२. प्रान्तीय समाजवादी सम्मेलनमें

११७. पत्र : अमृतकौरको[1]

५ नवम्बर, १९४१

चि० अमृत,

आज तो बस

बापूके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ४२५६) से; सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७८८८ से भी

११८. पत्र : प्राणकृष्ण पढियारीको

[६ नवम्बर, १९४१ के पूर्व][2]

तुम्हारा पत्र पढकर दु ख हुआ। मैं सिर्फ यही कह सकता हूँ कि काग्रेसमे कुछ लोग ही हो, परन्तु वे उसके प्रति ईमानदार रहे, तो सब ठीक ही होगा। अलग होनेवाले तो अलग हो ही जायेगे, लेकिन यदि कुछ-एक ईमानदार और साहसी लोग भी काग्रेसमे रह जायेंगे तो लोग उन्हीका अनुसरण करेगे, अलग होनेवालो का नही, चाहे वे मन्त्री हो या नही।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, ८-११-१९४१

११९. पत्र : अमृतकौरको

६ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारे एकाएक रुग्ण हो जाने का कारण क्या तुम्हारी कोई बेवकूफी ही नही है? तुमने वह गोली क्यो ली? लेकिन ऐसा न करो तो फिर तुम तुम क्या? ऐसा भी होता है कि हाथका कौर मुँहतक नही पहुँच पाता। इसलिए जब तुम सचमुच यही आकर जम जाओगी तभी हम दोनो मानेगे कि तुम आ गईं।

१. यह अमृतकौरको लिखे प्रभावतीके पत्रके अन्तमें लिखा हुआ है।

२. यह रिपोर्ट "कटक, ६ नवम्बर" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

अपना ठीक ध्यान रखो। अपने स्वास्थ्यके प्रति तुम्हे उदासीन तो नही ही रहना है, लेकिन उसकी नाहक चिन्ता भी नही करनी चाहिए।

तालीमी सघकी बैठके चल रही है। उनमें से लगभग सोलह लोगोने आश्रमकी रसोईमें भोजन किया।

स्नेह।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११४) से, सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७४२३ से भी

१२०. पत्र : मु० रा० जयकरको

सेवाग्राम
६ नवम्बर, १९४१

प्रिय डॉ० जयकर,

आपका पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। जैसा कि आपको मालूम है, मैंने इन मित्रोसे यह कभी नही कहा कि मै किसी भी हालतमें चन्दा इकट्ठा करनेकी कोशिश करूँगा। उन्होने स्वय ही इतना चन्दा इकट्ठा नही किया जिससे कि मै लोगोसे चन्देके लिए अपील कर सकता। कहनेकी जरूरत नही कि अब तो बहुत देर हो गई है। लेकिन उनका मार्गदर्शन करने के लिए आप तो वहाँ है ही।

अब चूँकि मै आपको यह पत्र लिख रहा हूँ, मै आपको यह बतानेका लोभ सवरण नही कर पा रहा कि आपने समय-समयपर मुझसे जो अपील की है उन्हे मैंने पूरे सम्मान और ध्यानके साथ पढा है। लेकिन दु ख है कि मुझे यही लगा कि अपनी जीवन-भरकी श्रद्धाका त्याग किये बिना मै आपकी अपीलका वैसा उत्तर नही दे सकता जैसे उत्तरकी आप मुझसे आशा रखते है।

उम्मीद है आप स्वस्थ होगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[पुनश्च]

सलग्न [सामग्री] वापस भेज रहा हूँ।

डॉ० मु० रा० जयकर
विंटर रोड
मलाबार हिल
बम्बई–६

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१२१. पत्र : जमनालाल बजाजको

६ नवम्बर, १९४१

चि० जमनालाल,

खु०[1] बहनसे बात करूगा। कोटीजी पर पत्र इसके साथ है। मौनसे तो फायदा होना हि है। वजन-लेते हो?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०२६)से

१२२. पत्र : अमृतकौरको

७ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मनको उदास करनेवाला है। लेकिन तुम्हे घबराना नही चाहिए। वस्तुस्थितिको सहज भावसे ग्रहण करो। मथुरी[2] और लक्ष्मीबहन कल आई है। लक्ष्मीबहन स्वर्गीय पण्डितजीकी[3] विधवा है। मथुरीने अपनी सुरीली आवाजमे कल शाम एक भजन सुनाया। उसका सार इस प्रकार है व्यक्ति आनन्दके पीछे-पीछे भागता है, लेकिन आनन्द मृग-मरीचिकाके समान है। वह इस तथ्यको क्यो स्वीकार नही करता कि सच्चा सुख या आनन्द दु खो और कष्टोको सहने से ही प्राप्त होता है। इसलिए हिम्मतसे काम लो और उस सनातन शरणागत वत्सलपर भरोसा रखकर अपने सारे दु ख भुला दो।

मैं इस बातका ध्यान रखूंगा कि स्टेशनपर भी सेबोकी जाँच हो।

स्नेह।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६८४)से; सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४९० से भी

१. खुर्शेदबहन नौरोजी
२. नारायण मोरेश्वर खरेकी पुत्री
३. नारायण मोरेश्वर खरे

१२३. पत्र : एम० तैयबुल्लाको

७ नवम्बर, १९४१

प्रिय तै०,

आपका पत्र पाकर मुझे प्रसन्नता हुई। राजेन्द्र बाबूने प्रमुख कार्यकर्त्ताओको वर्धा आनेके लिए आमन्त्रित किया है। मुझे इस बारेमे तनिक भी सन्देह नही कि आप भी उनमे शामिल होगे। अब मुझे कुछ नही कहना चाहिए। मुझे खुशी है कि आप स्वस्थ और भले-चगे है।

आपका,
बापू

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१२४. पत्र : अमृतकौरको

८ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम मुझसे नाता तोड सकती हो, तो भी मै ऐसा नही कर सकता। "मरकर ही अलग होगे," ऐसी बात भी नही है। क्योकि मै नही मानता कि मृत्युमें आत्माको आत्मासे अलग करनेकी शक्ति है। खूनका रिश्ता स्वभावत एक भौतिक सम्बन्ध है, लेकिन सच्ची मित्रता ऐसी नही होती। लेकिन इस तरहकी बहसमें पडकर हम पार नही पा सकेंगे। इसके लिए समय नही है।

आशा है, तुम अपना खोया हुआ स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन प्राप्त करती जा रही हो। अगर ठण्ड-कडाकेकी पड रही हो तो क्या तुम कुछ दिन पहले आकर जालन्धरमे श[म्मी]की प्रतीक्षा नही कर सकती?

स्नेह।

बापू

[पुनश्च]

स्नानकक्ष तो बडे शानदार बनते जा रहे हैं।

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६८२)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४९१ से भी

१२५. पत्र : टी० काननको

८ नवम्बर, १९४१

आपका दिलचस्प पत्र मिला। आपके आगामी जन्म-दिवसपर शुभकामनाएँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

श्री टी० कानन

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१२६. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

सेवाग्राम
८ नवम्बर, १९४१

प्रिय भगिनी,

तुमारा खत मिला। मुझे तुमारी बीमारी बारेमे महादेवने कहा था। मैंने कुछ ध्यान नहिं दिया, ऐसा समझकर कि वह क्षणिक वस्तु हि हो सकती है।

एसेम्बलीके बारेमे तो टेलीफोन आये। मैंने कहा मुझे बात पसद नहिं है तो भी अगर रामेश्वरीबहन मुझे लिखेगी तो मैं विचार करूंगा। फिर तो बात खतम हो गई। अच्छा हि हुआ। एसेम्बलीमें भेजने का अर्थ जेल जाना। और मै अभी तुमको जेल भेजना नहि चाहता। तुम जो काम कर रही हो वह बहूत आवश्यक है। जेलमे जाने का समय आवेगा।

बापुके आशीर्वाद

रामेश्वरीदेवी नेहरू
२ वारिस रोड, लाहौर[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८००१)से। सी० डब्ल्यू० ३०९९ से भी; सौजन्य रामेश्वरी नेहरू

१. पता प्यारेलाल पेपर्ससे लिया गया है।

१२७. पत्र : पृथ्वीसिंहको

८ नवम्बर, १९४१

भाई पृथ्वीसिंह,

उद्घाटनके बारेमें जो बयान मुझे भेजा सो पढ गया हू। बहुत अच्छा हुआ। मैं समझा कि तुम २० तारीखके पहले नहिं आ सकोगे। भाई देवराजके आने पर मैं थोडा समजा दूगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६५४) से। सी० डब्ल्यू० २९६५ से भी, सौजन्य पृथ्वीसिंह

१२८. पत्र : श्रीनाथसिंहको

८ नवम्बर, १९४१

भाई श्रीनाथसिंह,

आपका पत्र मिला। राजेन्द्र बाबू नहिं चुने गये[1] उसका दुख मानने का कोई कारण नहिं है। लेकिन जो स्थितिका वह द्योतक है उसे सुधारने का जो प्रयत्न हो सके किया जाय। काकासाहेब-जैसे साधकपर जो हमला हूआ है उस बारेमें जो हो सके आप करें।

बापुके आशीर्वाद

श्री श्रीनाथसिंह,
'दीदी' कार्यालय,
७३०, कटरा
इलाहाबाद[2]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ५६६३) से। सी० डब्ल्यू० २९७५ से भी, सौजन्य श्रीनाथसिंह

१. हिन्दी साहित्य सम्मेलनके अध्यक्ष-पदके लिए।
२. मूलमें इलाहाबाद अंग्रेजी लिपिमें है।

१२९. पत्र : अमृतकौरको

९ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

तुम्हारा पत्र मिला।

दु:खके साथ सूचित करना पड रहा है कि १९ सेब कम थे। स्टेशनपर उनका वजन किया गया था। उसमें ढाई सेर कम आया। स्टेशन मास्टर सर्टीफिकेट देने को तैयार नही हुआ, हालाँकि वजन उसके सामने किया गया था, फिर भी उसने सर्टीफिकेट नही दिया। तुम्हे वहाँ शिकायत करनी चाहिए। इधर मैं कर रहा हूँ।

मैं ठीक हूँ। कामना करता हूँ कि तुम भी अपने बारेमे ऐसा ही कह सकोगी।

आज इतना ही।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११५) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४२४ से भी

१३०. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

सेवाग्राम
९ नवम्बर, १९४१

प्रिय सत्यमूर्ति,

आपका पत्र मिला। आप लीकसे भटक गये है। जिनका आपने उल्लेख किया है,[1] उन्हे जैसे किसी अनुमतिकी जरूरत नही थी, वैसे ही आपको भी नही है। कांग्रेसकी नियमावलीमे कांग्रेसियोकी वाणीकी स्वतन्त्रताको मान्य किया गया है।

मैंने तो आपको अहिंसाकी कार्य-पद्धतिके विषयमे अपना निजी विचार बताया है।[2] उसे मानने के लिए आप बाध्य नही है।

१. सत्यमूर्तिने ६ नवम्बर, १९४१ के अपने पत्रमें अन्य बातोंके अलावा यह भी लिखा था कि "कांग्रेस समाजवादी दलको कांग्रेसके प्रस्तावोंके खिलाफ देश-भरमें प्रचार करनेकी छूट दी गई है और मेरे जानते इधर कुछ वर्षों से कांग्रेस या अ० भा० का० कमेटीका ऐसा एक भी अधिवेशन नहीं हुआ है, जिसमें उन्होंने कार्य-समितिके लगभग सभी महत्त्वपूर्ण प्रस्तावोंमें संशोधन पेश न किये हों।"

२. देखिए "पत्र : एस० सत्यमूर्तिको", ७३-७४।

आप एक दिन भी अपना मुँह बन्द रखे, ऐसा कोई नही चाहता और न आपसे ऐसी आशा की जाती है। अपने बिगडे स्वास्थ्य तथा अन्य कारणोसे आप खुद जितने सयमसे काम ले सके, ले, लेकिन इसके आगे तो आप जैसा चाहे करने को स्वतन्त्र है।

मेरे वक्तव्यका[1] तकाजा है कि काग्रेसी अपने-अपने विचार अधिकसे-अधिक मुक्त भावसे व्यक्त करे। इसलिए यह समझ लीजिए कि आप जिस तरहसे और जब भी अपने विचार व्यक्त करना चाहे, आपको वैसा करने की पूरी छूट है।

आपकी कठिनाई स्पष्ट ही आपकी इस गलत धारणासे पैदा हुई है कि आपपर अपना मुँह बन्द रखने की कानूनी पाबन्दी लगी हुई है, जो उठा ली जानी चाहिए।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-११-१९४१

१३१. पत्र : अब्दुल गफ्फार खाँको

९ नवम्बर, १९४१

प्रिय खाँ साहब,

अभी-अभी आपका पत्र मिला।

मै आपके शिविरके लिए किसीको भेजने का प्रयत्न कर रहा हूँ।

आश्रमका नाम 'खिदमतगाह' अथवा 'खुदाई खिदमतगाह' होना चाहिए। 'मज़लूमाबाद'[2] अच्छा नही लगता।

गिरधारी पुरी यथासम्भव तेजीके साथ अपने-आपको तैयार कर रहा है। जब-तक वह पूरी तरहसे तैयार नही हो जाता, मै उसे नही भेजना चाहता।

अकबरको भी उसी उद्देश्यके लिए तैयार किया जा रहा है।

अपने दाँतो [के उपचार] के लिए आपको जल्दसे-जल्द आना चाहिए लेकिन दिसम्बरके बाद।

यदि मै इस पत्रको टाइपके लिए देता हूँ तो मै गाडी नही पकड सकूँगा। मुझे उम्मीद है कि आपको इसे पढने में कोई दिक्कत नही होगी।

सरदार और राजेन्द्र बाबू यहाँ आये हुए है।

हम सबकी ओरसे प्यार।

बापू

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. देखिए पृ० ६०-६८।
२. अर्थात् दलितोंकी शरणस्थली

१३२. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

९ नवम्बर, १९४१

चि० मगन,

तेरा पत्र मिला। चम्पा तो अब निर्मलाके ब्याहके बाद आने को लिखती है। मेरी तो सलाह है कि तुझे अहमदाबाद जाकर उसे ले आना चाहिए।[1] अगर तुम सब कुछ समयके लिए लाल बँगलेमे[2] रहना चाहो, तो वैसा करो, या फिर उसे यहाँ ले आओ। इसके सिवा और कोई उपाय मुझे नही सूझता।

महाबलेश्वरके पतेपर लिखा पत्र मिला होगा। उसमे तेरे स्वयके बारेमे पूछे प्रश्नका उत्तर दिया था।[3]

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२२) से, सौजन्य मजुला म० मेहता

१३३. पत्र : कंचन मु० शाहको

९ नवम्बर, १९४१

चि० कचन,

तेरा पत्र मिला। तू बीमार क्यो हो गई? मेरी इच्छा है कि तू बिलकुल अच्छी होकर आये। यहाँ इस समय तो मौसम बहुत अच्छा है। ठड शुरू हो गई है। किशोरलालभाई जैसे-के-तैसे हैं। राजकुमारी २१ को आयेगी। अमतुस्सलाम मौज कर रही है। वसुमती आज बम्बई गई, और लीलावती भी।

बापूके आशीर्वाद

श्रीमती कचनबहन शाह
मारफत श्री मगनलाल कालिदास
वालोड, जिला सूरत
टी० वी० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८२७०)से। सी० डब्ल्यू० ७१६० से भी, सौजन्य. मुन्नालाल ग० शाह

१. मगनलाल प्रा० मेहताके भाई रतिलाल मेहता
२. साबरमती आश्रमके समीप डॉ० प्राणजीवन मेहताका बँगला
३. देखिए "पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको", पृ० ८६।

१३४. पत्र : विजया म० पंचोलीको

९ नवम्बर, १९४१

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। तू लालची है, लेकिन मैं देखूंगा कि तुझे क्या भेज सकता हूँ। अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। वसुमतीवहनको आज इलाजके लिए बम्बई भेजा है। इन दिनों खूब मेहमान आये हुए हैं खुर्शेदवहन, सुलताना,[1] गोसीवहन[2] वगैरह हैं। वे दो-तीन दिनमें वापस लौट जायेंगे।

वापूके आशीर्वाद

श्रीमती विजयावहन
ग्राम दक्षिणामूर्ति
आवला, सोनगढ होकर
काठियावाड

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१४२)से। सी० डब्ल्यू० ४६३४ से भी, सौजन्य विजयावहन म० पचोली

१३५. तार : नलिनीरंजन सरकारको

सेवाग्राम
१० नवम्बर, १९४१

नलिनीरजन सरकार
एक्जीक्यूटिव काउंसिलर
नई दिल्ली

आशा है कोई गम्भीर बात नहीं है।[3] तार द्वारा हालत सूचित करें।

वापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३५१)से

१. सुलताना रजिया
२. दादाभाई नौरोजीकी पौत्री गोसीवहन कैप्टेन
३. नलिनीरंजन सरकारको हल्का-सा पक्षाघात हो गया था।

१३६. तार : अमृतकौरको

वर्धागंज
१० नवम्बर, १९४१

राजकुमारीजी
मैनरविल
समरहिल
शिमला

मेरी सम्वेदनाएँ[1] और बधाइयाँ। प्रभुकी कृपा है। स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६८४) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४९३ से भी

१३७. पत्र : अमृतकौरको

१० नवम्बर, १९४१

प्रिय अ०,

तुम्हारा पत्र मिला। राजासाहबकी[2] मृत्यु हो गई, यह ठीक ही हुआ। वे जिन्दा लाश थे। मुझे लगा, तुम्हें तार भेजना चाहिए। इसलिए तार भेजा जा रहा है।

बुल कुछ दिनोंसे यहाँ हैं। गोसीबहन कल रात मसूरीसे आई हैं। वहाँ इन्दु और जवाहरलालसे मिली थी।

मैं सेब मिलने की सूचना दे चुका हूँ।

वैद्यका[3] यह रिकार्ड अच्छा है। तुम्हें वैद्यको लिखना चाहिए।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६८३)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४९२ से भी

१. देखिए अगला शीर्षक।
२. कपूरथलाके राजा महाराजसिंह, अमृतकौरके पिता।
३. शंकरलाल कुँवरजी वैद्य, देखिए अगला शीर्षक।

१३८. पत्र : डॉ० शंकरलाल कुँ० वैद्यको

१० नवम्बर, १९४१

भाई वैद्य,

तुम्हारा मूत वहुत अच्छा माना जायेगा। वैसे इसकी मजवूती वढाई जा सकती है। इसका तो तुम अलगसे कपडा वुनवाओगे न? तुम्ही अपना एक निजी करघा वैठाओ तो कैसा रहे? यह मैं अक्षरश मानता हूँ कि तुम्हारे लिए तुम्हारी ही रीति अच्छी है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७५३)से

१३९. पत्र : लीलावती आसरको

१० नवम्बर, १९४१

चि० लिली,

तू आराममे पहुँच गई होगी। वा का कहना है कि तेरे विना यहाँ सव मूना लगता है। भला तेरे विना यहाँ ऊलजलूल वातें कौन करेगा? अध्ययनमें ठीकसे जुट जाना और पास होने का निश्चय कर लेना। यदि हफ्तेमें एक कार्ड भी लिखेगी तो उससे मुझे सन्तोप होगा।

वापूके आशीर्वाद

श्रीमती लीलावतीवहन उद्देशी
कानजी खेतसी छात्रालय
मिंट रोड
फोर्ट, वम्वई

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०११२) से। सौजन्य लीलावती आसर

१४०. वक्तव्य : भारत-श्रीलंका समझौतेपर

वर्धा
११ नवम्बर, १९४१

भारत-श्रीलका समझौतेपर[1] वैसी गम्भीर आपत्तियाँ नही की जा सकती जैसी भारत-बर्मा समझौतेपर[2] की गई थी। वह समझौता तो जनताके सामने सर्वथा अप्रत्याशित रूपसे आया था और सो भी ऐसे रूपमे कि उसके बारेमें कुछ कहने-सुनने और उसमे कोई फेर-बदल करवाने की गुजाइश लगभग नही थी। श्रीलकासे जो चीज आई है वह एक प्रस्ताव है, जिसपर सरकार और जनताको विचार करना है। मैंने सम्बन्धित कागज-पत्रोका यथासम्भव अध्ययन किया है।

इस समझौतेपर खूबी-खामियोकी दृष्टिसे विचार करे तो यह भी उसी तरह आपत्तिजनक है जिस तरह बर्माका समझौता था। श्रीलकाके मन्त्रियोसे मेरा निवेदन यह है कि इतनी जल्दबाजी करने की कोई जरूरत नही है। श्रमकी आपूर्तिके सम्बन्ध मे उचित व्यवस्था तो आसानीसे की जा सकती है, लेकिन इस पूरे मामलेके सम्बन्धमे कानून बनाने की बात तबतक रोक रखी जा सकती है जबतक कि युद्ध समाप्त नही हो जाता। यह युद्ध एक भयकर दुर्घटना है, जिसका उदाहरण इतिहासमे नही मिलता। लेकिन यदि इसके अन्तमे भी हमे यही देखने को मिलता है कि हमारा जीवन अब भी उन्ही पुराने तौर-तरीकोपर चल रहा है, उसके हर क्षेत्रमे क्रान्तिकारी परिवर्तन नही हो पाया है, तो यह दुर्घटना और भी गम्भीर हो गई मानी जायेगी।

यहाँ मै उस सद्भावना मिशनका स्मरण करा दूँ जो जुलाई १९३९ मे काग्रेसकी ओरसे भेजा गया था। हमारे प्रतिनिधि थे पण्डित जवाहरलाल नेहरू। उस सद्भावना-यात्राका सिंहलियो और उनके मन्त्रियोपर बडा गहरा असर हुआ था। आशा की जाती थी कि हमारे प्रतिनिधिने जो सुबीज बोये है उनके सुफल अवश्य देखने को मिलेगे। जब पिछले नवम्बर महीनेमें श्रीलकाका प्रतिनिधि-मण्डल भारत आया तो पण्डित नेहरूसे उनके इलाहाबादमे मिलने की व्यवस्था की गई थी। लेकिन इस मुलाकातसे पहले ही जवाहरलाल गिरफ्तार कर लिये गये। उन्होने उस प्रतिनिधि-मण्डलके निमित्त एक नोट भी तैयार कर रखा था। जरूरी लगा तो मै उसे भी प्रकाशित कर दूंगा।

१. श्रीलंका सरकारका इरादा एक आप्रवजन अध्यादेश जारी करने का था, जिससे श्रीलंका-स्थित भारतीयोंकी स्थिति और अधिकार खतरेमें पड गये थे। इनकी सुरक्षाके जो प्रयत्न किये गये उनका परिणाम १६ अक्तूबरको नई दिल्लीमें प्रकाशित सितम्बर माहमें श्रीलंकामें हुई भारतीय और श्रीलंकाके प्रतिनिधियोंके प्रारम्भिक सम्मेलनकी संयुक्त रिपोर्टके रूपमें सामने आया।

२. भारत-बर्मा समझौतेपर गाधीजी के वक्तव्यके लिए देखिए खण्ड ७४, पृ० २८३-८७।

इस सद्भावना-यात्रा और इसके वादसे जो प्रयत्न हुए उनकी चर्चा करने में मेरा उद्देश्य यह वताना है कि श्रीलका और भारतके बीच स्थायी शान्ति और भ्रातृत्वका मार्ग कौन-सा है। यह सोचते हुए भी डर लगता है कि वर्मा, श्रीलका और भारत एक-दूसरेका अविश्वास करे या इनमें से कोई भी देश अपने यहाँ शेष दो देशोके नागरिकोकी वडी सख्यामें उपस्थितिको अपने राष्ट्रीय हितोके विरुद्ध माने।

हानिप्रद प्रव्रजनको रोकने के लिए तीनो देश वहुत अधिक कानूनी हस्तक्षेप किये विना आपसमें मिल-वैठकर कोई ठीक व्यवस्था कर सकते है। पता नही क्यो, मुझे तो लगता है कि भारतीयोके लकामे वसने मे उस देशको कोई हानि नही हुई है। भारतीय व्यापारी तथा वकील, डॉक्टर आदि तो अन्य देशोकी तरह श्रीलकामे भी उन भारतीय मजदूरोके पीछे-पीछे पहुँचे जिनका आयात श्रीलकाने पूर्णत अपने लाभके लिए किया था।

मुझे मालूम हुआ है, सर एडवर्ड जैक्सनकी रिपोर्टमें यह वात स्पष्ट रूपसे वताई गई है कि श्रीलकामें भारतीयोके आव्रजनसे वहाँके मूल निवासियोका कोई अहित नही हुआ है।

लेकिन अगर धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करने के मेरे निवेदनका कोई असर नही होता तो मै ठीक वैसा ही सुझाव दूँगा जो वर्माके सम्वन्धमें दिया है। अनुभवी विधायकोको मेरी यह वात मानने में कोई कठिनाई नही होनी चाहिए कि जिस कानूनका असर जन-सामान्यपर होनेवाला हो और जो कानून जन-साधारणके निमित्त ही वनाया जाना हो उसके सम्वन्धमें सरलसे-सरल और सक्षिप्तसे-सक्षिप्त तरीकेसे काम लेना सवसे अच्छा है। इसलिए मेरा सुझाव यह है, श्रीलकामें जितने भी भारतीय हो उन्हें किसी निर्धारित तिथिको (जो गुप्त ही रखी जाये) पजीकृत करके नागरिकताके पूरे अधिकार प्रदान कर दिये जाये। जो लोग श्रीलकासे वाहर हो किन्तु श्रीलकाके वाशिन्दोके रूपमें अपनी प्रामाणिकता निर्विवाद रूपसे सिद्ध कर सकते हो उन्हें भी आवेदनपत्र देने पर पजीकृत कर लिया जाये। इस तरीकेको अपनाने से वे उलझनें दूर हो जायेंगी जो विचाराधीन प्रस्तावमें भरी पडी है।

ऐसे कानूनमें 'अधिवासी' शब्दके लिए कोई स्थान नही होना चाहिए। अधि-वास-सम्वन्धी ब्रिटिश कानून तो सवसे खराव है। न्यायाधीशोको इस शब्दकी व्याख्या करते हुए उलझनमे पडते देखा गया है। मनुष्यकी स्वतन्त्रता एक वहुमूल्य वस्तु है, और कानूनी दाँव-पेंच तथा अदालतोकी कभी खत्म न होनेवाली खीच-तानके कारण इसकी उपेक्षा नही होने देनी चाहिए। और यह खीच-तान चूँकि अदालतमें चलती है, इसीसे यह कोई शोभनीय चीज नही हो जाती। मनुष्यको इस वातकी स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए कि अमुक परिस्थितिमें उसकी हैसियत क्या है।

जहाँतक श्रमिकोका सम्वन्ध है, मुझे इस वातमें कोई सन्देह नही है कि श्रीलका जितने भी श्रमिकोका आयात करना चाहे उतनेका आयात करने का उसे पूर्णाधिकार होना चाहिए, किन्तु इनका आयात ऐसे अनुवन्धोके अन्तर्गत होना चाहिए जो दोनो सरकारोने आपसी सहमतिमे तय किये हो और जिन्हें आसानीसे समझा जा सकता हो।

जो कोटा-प्रणाली सुझाई गई है उसका किसी सम्मानजनक समझौतेमे कोई स्थान नही होना चाहिए।

[अग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १२-११-१९४१

१४१. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम
११ नवम्बर, १९४१

प्रिय पगली,

आशा है, मेरा पत्र मिल गया होगा।

हाँ, ऊधियु[1] तो यहाँ मिलेगा। तुम्हे उसके बारेमे लिखना बराबर भूलता रहा हूँ।

राधाबाई सुब्बारायन यही है। कल मद्रासके लिए प्रस्थान करेगी।

साथमे तुम्हारे लिए एक पत्र भेज रहा हूँ। लगता है, मृदुलाने[2] लिखा है। हस्ताक्षर करना भूल गई है।

तुम किसीको साथ लाओगी, यह जानकर प्रसन्नता हुई। ऐसा मत सोच रखो कि उसे तुरन्त वापस भेज दोगी। लेकिन तय तो तुम्ही को करना है।

स्नेह।

बापू

मूल अग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११६) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४२५ से भी

१४२. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागज
१२ नवम्बर, १९४१

देखता हूँ, सत्याग्रही कैदियोकी रिहाईके लिए सरकारपर दबाव डालनेके उद्देश्य से कुछ सरगरमी चल रही है।

यहाँ यह बता देना शायद उपयुक्त होगा कि जहाँतक मै जानता हूँ, सरकारकी ओरसे प्रकट की गई ऐसी किसी सद्भावनाको काग्रेस न तो प्रशसाकी दृष्टिसे देखेगी और न वह इसका कोई अनुकूल उत्तर ही देगी।

१. एक खास किस्मसे पकाई गई सब्जियाँ
२. अम्बालाल साराभाईकी पुत्री

रिहा हुए लोग अगर शरीरसे ठीक पाये गये तो उन्हें फिर सविनय अवज्ञा करने को आमन्त्रित किया जायेगा। इसके अतिरिक्त यदि सत्याग्रहियों और बिना मुकदमा चलाये जेलोंमें रखे जा रहे लोगोंके बीच कोई भेद-भाव बरता गया तो इससे बहुत अधिक क्षोभ फैलेगा। क्या उचित और बुद्धिसंगत है, इसका निर्णय सरकारको नहीं करना चाहिए।

जनता जो-कुछ चाहती है वह इस प्रकार है

सरकार बखूबी कैदियोंको अपनी जेलोंमें रखे, लेकिन उनके साथ चाहे वे भूख-हड़ताल करें या न करें — शोभनीय व्यवहार करे। यदि ऐसी हड़तालोंका उचित कारण न हो तो उसे उनकी ओर ध्यान नहीं देना चाहिए।

देवलीके कैदियोंकी माँगोंकी हमें जहाँतक जानकारी है, वे न्यायपूर्ण हैं। सरकार उनकी माँग स्वीकार करके और उनसे भूख-हड़ताल समाप्त करवाकर इस घोर अनिश्चय की स्थितिको खत्म करे।

भारत-भरके प्रमुख और प्रतिनिधि डॉक्टरोंने हालमें 'सी' वर्गके कैदियोंके आहारपर एक महत्त्वपूर्ण घोषणा-पत्र जारी किया है। सरकार उस घोषणा-पत्रपर विचार करके 'सी' वर्गके कैदियोंके आहारमें आवश्यक परिवर्तन करे और उनकी अन्य ऐसी असुविधाओं और कठिनाइयोंको दूर करे जिनका कोई उचित आधार नहीं है।

इसलिए जो लोग सत्याग्रही कैदियोंकी रिहाईके लिए सरकारसे आग्रह कर रहे हैं, उनसे मैं अनुरोध करूँगा कि यहाँ जो राहत सुझाई गई है, यदि वे कैदियोंके लिए वह राहत ही प्राप्त करने पर अपना ध्यान केन्द्रित करें तो अच्छा होगा।[1] ऐसी राहत जल्दी दी जा सकती है और इसमें सरकारको राजनीतिक या किसी अन्य प्रकारकी परेशानी भी नहीं होगी।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, १३-११-१९४१

१४३. तार : जयप्रकाश नारायणको

१२ नवम्बर, १९४१

मेरी जोरदार सलाह है कि तुम और अन्य लोग भूख-हड़ताल समाप्त करें। राहत दिलाने के लिए लोकमत तैयार किया जा रहा है। इस अनुरोधमें डॉ० राजेन्द्रप्रसाद और मियाँ इफ्तिखारुद्दीन भी शरीक हैं। प्रभावती तुमसे मिलने को आतुर है। घटनाक्रम आगे क्या मोड़ लेता है, यह देख लेने तकके लिए, उसे रोक रहा हूँ।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, १६-११-१९४१

१. लेकिन १८ नवम्बर, १९४१ को एन० एम० जोशीने केन्द्रीय विधान-सभामें एक प्रस्ताव पेश कर सरकारसे राजनीतिक कैदियोंको बिना शर्त अविलम्ब रिहा कर देने की सिफारिश की।

१४४. पत्र : मदालसाको

१२ नवम्बर, १९४१

चि० मदालसा,

यह तो तुझे खुश करने के लिए है। तेरे बारेमें समाचार तो मिलते ही रहते हैं। क्या तू अब कुछ चलती-फिरती है या नही? तुझे घूमने निकलना चाहिए, बशर्ते कि डॉक्टर कहे।

साग जितना कम ले उतना ही अच्छा है।

शिशु[1] बढ रहा है न? डॉ० दास आज आनेवाले थे।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]

पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२३

१४५. पत्र : अमृतकौरको

१२ नवम्बर, १९४१

चि० अमृत,

तेरा खत मिला। यह खत तुझे १५ तारीखको मिलेगा। कलसे जलदर लिखुगा। आज खेर,[2] मिया, इस्मत, राधाबाई, सुलताना इ० है। नयी झौपडीमें सबको रखे है। दा० दास और निमाई आज आ गये। कनैयो भी।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ४२५७) से, सौजन्य: अमृतकौर। जी० एन० ७८८९ से भी

१. भरत

२. बाल गंगाधर खेर

१४६. पत्र : हजारीप्रसाद द्विवेदीको

१२ नवम्बर, १९४१

भाई हजारीप्रसादजी,

विश्वभारतीसे त्रैमासिक पत्रिका निकालने की योजना मुझे तो बहुत हि प्रिय लगती है। इस साहसमें मेरी सपूर्ण सम्मति है।

बापुके आशीर्वाद

श्री हजारीप्रसाद द्विवेदी
विश्वभारती
शान्तिनिकेतन[1]
बगाल[2]

पत्रकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०२६०) से। सौजन्य रवीन्द्र सदन, विश्वभारती

१४७. पत्र : अमृतकौरको

१३ नवम्बर, १९४१

चि० अमृत,

आज भी पत्तासे चलाता हू। ठीक है। तेरा अच्छा होगा। तेरा खत समजा हू। तुझे स्टेटस पीपलके बारेमें वर्धा जाना है। इसलिये इतना काफी समजा जाय। बेरिलने शोल भेजी है। अच्छी है कहना।

बापुके आशीर्वाद

मूलपत्र (सी० डब्ल्यू० ४२५८)से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७८९० से भी

१ और २ मूलमें ये शब्द अंग्रेजीमें हैं।

१४८. पत्र : अब्दुल गफ्फार खाँको

सेवाग्राम, वर्धा
१३ नवम्बर, १९४१

प्रिय खाँसाहब,

आपके पत्रमें लिखे अनुसार मैं आपके पास गिरधारीलाल पुरी और कृष्णदास गांधीको[1] भेज रहा हूँ। वे कताई आदिकी व्यवस्था करने और आश्रम-सम्बन्धी योजनाओं पर बातचीत करने में सहायक होंगे। मेरा अनुमान है कि वे वहाँ सात दिनसे ज्यादा नहीं रहेंगे। लेकिन यदि आप उन्हें ज्यादा समयके लिए रोकना चाहेंगे तो पुरी रुक सकते हैं। कृष्णदासपर यहाँ बहुत अधिक जिम्मेवारियाँ हैं।

जहाँतक अलीगुल खाँका सवाल है मेरी यह स्पष्ट राय है कि उन्हें इस्तीफा दे देना चाहिए। वह युद्ध-प्रयत्नमें मदद नहीं दे सकते।

सबको स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१४९. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागंज
१४ नवम्बर, १९४१

मैंने श्री जयप्रकाश नारायणको इसी १२ तारीखको निम्नलिखित तार भेजा था।[2]
अभी-अभी मुझे उस तारका निम्नलिखित उत्तर मिला है :

तारके लिए धन्यवाद। मैंने सारी स्थिति सरदार मंगलसिंहको समझा दी है। हमारी माँगें उचित हैं। अनशन तोड़नेकी असमर्थताके लिए क्षमा कीजिए। बाहर जो-कुछ कर सकते हों, करनेमें कोई हर्ज नहीं है। प्रभावतीको न भेजें।

सरदार मंगलसिंहसे अभी मुझे कोई सूचना नहीं मिली है। निस्सन्देह, यथासमय उनसे भी मुझे सूचना मिल जायेगी। लेकिन इस सम्बन्धमें इतनी जल्दी कार्रवाई करनेकी आवश्यकता है कि देर करनेकी गुंजाइश नहीं। सुना है, श्री जयप्रकाश

१. छगनलाल गांधीके पुत्र

२. यहाँ नहीं दिया जा रहा है; देखिए "तार : जयप्रकाश नारायणको", पृ० १०३।

नारायणका वजन काफी घट गया है। जबरदस्ती खिलाने की व्यवस्था तो अस्थायी और कामचलाऊ ही हो सकती है। श्री जयप्रकाश नारायण सबसे सकल्पशाली कार्यकर्त्ताओमें से है। मैं यह मानता हूँ — भले ही यह मेरे मनका सुखद भ्रम ही क्यो न हो — कि अगर किसी बातका उनपर असर हो सकता था तो हमारे सयुक्त तारका असर जरूर होता। उन्होने अपनी पत्नीको भी मिलने आने से रोका है, यह चिन्ताजनक बात है। वे अपने निर्णयमें भावनात्मक अथवा किसी प्रकारका हस्तक्षेप नही चाहते।

जहाँतक मैं समझ पाता हूँ, इस अनशनके पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य नही है। जबतक अनशन समाप्त नही किया जाता तबतक मामलेपर विचार करने से इनकार करना एक क्रूर उपहास है। श्री जयप्रकाश नारायण तथा उनके साथी कैदियोको उनके प्राणोके सकटमें पड जाने तक नजरबन्द रखना अमानवीय कृत्य होगा। मैं मानवताके नामपर सरकारसे अनुरोध करता हूँ कि वह नजरबन्दोकी माँगे स्वीकार कर ले। प्रान्तीय सरकारोकी इच्छा जानने और उनका पालन करने का बहाना असगत और तर्करहित है। जहाँ नागरिकोकी जान और आजादीका सवाल हो वहाँ केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकारोकी इच्छाका पालन करने को किसी तरहसे मजबूर नही है। यदि प्रान्तीय सरकारे अपने यहाँके नजरबन्दोको अपने-अपने प्रान्तोकी सीमाओमें रखने से डरती है तो अवश्य ही व्यवस्थामें कही कोई बडी गडबड़ी है।

जो अनशन चल रहा है उससे स्पष्ट हो जाता है कि सत्याग्रही कैदियोको, जो अपनी ही इच्छासे जेल गये है, रिहा करना कितना बेमानी है। जिन लोगोने स्वेच्छासे जेल नही माँगी है, जब वही लोग उनपर किसी अदालतमें मुकदमा चलाये बिना, नजरबन्द रखे जा रहे है और वे किसी भी मनुष्यके लिए आवश्यक न्यूनतम सुविधाओंके लिए अनशन कर रहे है तब कैदी कौन-सा मुँह लेकर जेलोसे बाहर आ सकते है?

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १६-११-१९४१

१५०. पत्र : मगनलाल और मंजुला मेहताको

१४ नवम्बर, १९४१

चि० मगनलाल और मजुला,

तुम दोनोंके पत्र मिले।

मैं तेरे बारेमें समझ गया। खैर साहब और मैं, दोनो अपने-अपने काममें इतने व्यस्त थे कि हम कुछ मिनटके लिए ही मिल पाये, और इसलिए तेरी बात तो मैं भूल ही गया। अब पत्र लिखकर मालूम करूँगा।

मकानका नक्शा चिमनलालभाईने मणि भुवनके पतेपर भेजा था। अगर मिल गया हो तो उसके सम्बन्धमें अपना निर्णय देना।

रतुभाईके बारेमे मेरी राय है कि तुझे जाकर उसे ले आना चाहिए और वहाँ अपने साथ रखना चाहिए। उसे भाईके प्रेमका स्वाद चखा। यहाँ आये, तब तो यहाँ लाना ही। चम्पा दिसम्बरमे आयेगी, तब देखेंगे क्या किया जा सकता है। मजुके विश्लेषणसे मैं सहमत हूँ।

मुन्नो सेवाग्रामका नाम लेता है, यह अच्छा है। दूसरे बच्चे भी ऐसा ही चाहें, तभी उन्हें यहाँ आनन्द आ सकता है। जबतक शहरका मोह न छूटे, तबतक ये बच्चे सेवाग्राममें कभी सुखी नही हो सकते।

बापूके आशीर्वाद[1]

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२३) से। सौजन्य मजुला म० मेहता

१५१. पत्र : नारणदास गांधीको

सेवाग्राम
१४ नवम्बर, १९४१

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। तुमने जो लिखा है, वह मुझे मान्य है। जमनाके[2] बारेमें क्या हुआ? कन्हैया पत्र लिखेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५९६ से भी, सौजन्य नारणदास गाधी

१५२. पत्र : जमनाबहन गांधीको

१४ नवम्बर, १९४१

चि० जमना,

तुम्हारा पत्र मिला। मैंने तो पहले ही कहा था कि बम्बई जाओ। लेकिन जो होना था सो हो गया। जब भी जाओगी प्रबन्ध तो वहाँ हो ही जायेगा। जब जाना ही है, तो जल्दी जाना अच्छा होगा।

१. इसके बाद निम्न अंश किशोरलाल मशरूवालाके हस्ताक्षरोंमें है: "तुम्हारा दूसरा पत्र मिला। चूँकि बालासाहब गये नहीं है इसलिए मैं उनसे टेलीफोनपर बात कर लूँगा। १६को फोन करके उनसे मिलना। वे खारमें रहते है।"

२. नारणदास गाधीकी पत्नी

कन्हैया अपना काम निवटाकर परसों आ गया है। उससे मैं पत्र लिखने को कहूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५९६ से भी, सौजन्य. नारणदास गांधी

१५३. पत्र : सैम हिगिनबॉटमको

१५ नवम्बर, १९४१

प्रिय प्रोफेसर,

मुझे आपकी मददकी जरूरत है। एक ऐसा सलाहकार चाहिए जो सेठ जमनालालको[1] गो-पालन और दुग्धालयके काममें सलाह दे सके। उसे विशेषज्ञ होना चाहिए। सेठजी ने गो-रक्षाको अपने जीवनका उद्देश्य बना लिया है। उन्हें एक सलाहकार चाहिए जो उनका सही मार्ग-दर्शन कर सके। मैंने उन्हें इस सिलसिलेमें आपसे पत्र-व्यवहार करने की सलाह दी है और यह भी आश्वासन दिया है कि आप उनका मार्गदर्शन करेंगे।

मुझे एक ऐसे आदमीकी जरूरत है जो कृषि और दुग्धालय सस्थानका निदेशक हो सके। वेतन अच्छा मिल सकता है। आपकी निगाहमें कोई सुयोग्य व्यक्ति हो तो क्या उससे मेरा सम्पर्क करवाने की कृपा करेंगे?

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

प्रो० सैम हिगिनबॉटम
कृषि सस्थान
नैनी, इलाहाबाद

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८९३८) से

१. साधन-सूत्र में "जमनादासजी" है।

१५४. पत्र : एस० सत्यमूर्तिको

सेवाग्राम
१५ नवम्बर, १९४१

प्रिय सत्यमूर्ति,

आपका पत्र मिला। आपको मेरा पत्र पूराका-पूरा प्रकाशित करना चाहिए था।[1] उसके संक्षिप्तीकरणकी गुंजाइश नहीं थी। इससे काफी गलतफहमी हो गई है। मेरा निवेदन है कि आप मेरा पूरा पत्र प्रकाशनके लिए भेज दें।

मुझे तो पूरे पत्र-व्यवहारके प्रकाशित किये जाने पर भी कोई आपत्ति नहीं है।[2] लेकिन समय लग सकता है। इसलिए इस पत्रका अलगसे प्रकाशन आवश्यक है।

मुझे इस बातकी खुशी है कि आपका इरादा सचमुच अपने बिगड़े स्वास्थ्यको सुधारने का है। . . .

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, १९-११-१९४१

१५५. पत्र : विट्ठल ल० फड़केको

१५ नवम्बर, १९४१

चि० मामा,

तुम्हारा कार्ड मिला था। माँको वे लोग ले गये, यह अच्छा हुआ। तुम्हारा तो अब उन्हें यह आखिरी सलाम होगा, क्योंकि अब तुम बार-बार रत्नागिरि थोड़े ही जा सकोगे?

सरदार यहीं हैं।

बापू आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८४४) से

१. सत्यमूर्तिने गांधीजी द्वारा लिखे ९ नवम्बरके पत्रके कुछ अंश १२ नवम्बरको अखबारोंमें प्रकाशित करवा दिये थे; देखिए पृ० ९४-९५।

२. १८ नवम्बर, १९४१ को गांधीजी और सत्यमूर्तिके बीच हुआ पूरा पत्र-व्यवहार अखबारोंमें प्रकाशित कर दिया गया था।

१५६. पत्र : चन्दन स० कालेलकरको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ नवम्बर, १९४१

चि० चन्दन,[1]

तेरा पत्र मिला। यह हम सबको पसन्द आया। तुम दोनो सुखी रहो और खूब सेवा करो। अब [सतीश]को[2] अलगसे पत्र नही लिखता। इसीको दोनोके लिए समझना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२६७) से

१५७. पत्र : मोहनभाईको

१६ नवम्बर, १९४१

भाई मोहनभाई,

आपका चाहे कैसा भी सम्बन्ध क्यो न हो लेकिन आपको दिसम्बरमें होनेवाली विधान परिषद्में नियुक्तिकी बातको कतई स्वीकार नही करना चाहिए। भाई बलवन्त-राय आपको वक्तव्य दिखायेंगे। उसपर यदि आप हस्ताक्षर नहीं कर सकते तो भले न करे लेकिन विधान परिषद्में शामिल न होने में ही शोभा है। दीवानमे कहें कि वह घोषणाको वापस ले ले और फिलहाल सब-कुछ मुल्तवी रखे अथवा कुछ शोभनीय कदम उठाये।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. सतीश कालेलकर उर्फ शंकरकी पत्नी
२. साधन-सूत्रमें "कान्ति" है, जो स्पष्ट ही चूक है।

१५८. पत्र : नृसिंहप्रसाद का० भट्टको

१६ नवम्बर, १९४१

भाई नानाभाई,

वक्तव्यका जो मसौदा मैंने तैयार किया है उससे तुम मेरा आशय जान लेना और जो हो सके सो करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१५९. पत्र : पुरुषोत्तम त्रिकमदासको

सेवाग्राम, वर्धा
१६ नवम्बर, १९४१

भाई पुरुषोत्तम,

तुम्हारा पत्र मिला। भाषण मैं एक बार फिर पढ गया। मुझे तो यह बहुत अखरा है। मैंने जो मत व्यक्त किया है मैं अब भी उसपर कायम हूँ।[1] कांग्रेसके बारेमें जो कहा गया है वह सब खराब लगता है। अभी तो मैं देवली-काण्डमें उलझा हुआ हूँ। जब यह समाप्त हो जाये तब आना और मुझसे मेरा दृष्टिकोण समझना।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

गुजरातीकी नकलसे · प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

१६०. पत्र : अमृतकौरको

१६ नवम्बर, १९४१

चि० अमृतकुवर,

मेरा आखरका खत है। आदमीके बारेमें देखा जायगा। तुमारी सूचना मैं पढ गया था। बधारण [संविधानकी रचना] के समय मैं हाजर था। और तुमारी दोनो सूचनाका स्वीकार मेरे कहने से हुआ था। शायद यो भी होता।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ४२५९) से, सौजन्य . अमृतकौर। जी० एन० ७८९१ से भी

१. देखिए पृ० ८७।

१६१. तार : जयप्रकाश नारायणको

१७ नवम्बर, १९४१

कमलादेवी[1] यहीं हैं। उनके और मेरे विचारसे देवली-जैसे व्यवहारकी आपकी माँग अक्षरश पूरी नहीं की जा सकती। इस माँगसे आप गलत स्थितिमे पड जाते है। आपको अपने प्रान्त वापस किये जाने से सन्तुष्ट होकर अनशन तोड देना चाहिए और यदि वापसीके पूरे आश्वासनके बावजूद आप इस माँगपर आग्रह करते रहेंगे तो जन-भावना विमुख हो जायेगी। सरदार, राजेन बाबू और कृपलानीकी भी यही राय है।[2]

गांधी

[अंग्रेजीसे]

फाइल स० ४३/६५/४१–पॉलि० (१)। सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

१६२. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

१७ नवम्बर, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

मुझे तुम्हारे दो पत्र मिले हैं। डॉ० दासने भी मुझसे बातचीत की थी और कनुने भी।

आभाको माँका आशीर्वाद लिये बिना भी यहाँ नहीं आना चाहिए। यदि आभाकी मांको लगेगा कि आभा कनुके अलावा और किसीको अपना नहीं सकती तो वे भी आशीर्वाद अवश्य देंगी। कनु अनिश्चित समयतक प्रतीक्षा कर सकता है।

१. कमलादेवी चट्टोपाध्याय

२. इसके उत्तरमें जयप्रकाश नारायणने १८ नवम्बरको निम्नलिखित तार भेजा: "आपका तार पढ़कर बहुत दुःख हुआ। लगता है, आप स्थितिको ठीक तरहसे नहीं समझ पाये हैं। वापसी हमारी एकमात्र माँग नहीं। बाकी चीजोंके लिए वापसीके बाद नये सिरेसे नहीं लड़ सकता। इसलिए दो छोटे-छोटे आश्वासन माँग रहा हूँ। पहला यह कि जो माँगें भारत सरकारके समक्ष पेश हैं उनपर प्रान्तीय सरकारें सहानुभूतिपूर्वक विचार करेंगी। दूसरा यह कि जबतक फैसला नहीं हो जाता तबतक कमसे-कम देवलीवाला स्तर कायम रखा जायेगा। देवलीवाले स्तरको अक्षरश लागू किया जाये, इसपर तो कभी आग्रह नहीं रखा। पंजाबमें नजरबन्दोंके साथ 'सी' वर्गके कैदियों-जैसा व्यवहार किया जाता है। समझमें नहीं आता कि हमारी माँगें कैसे अनुचित हैं। जोशी और मंगलसिंह दोनोंको वे उचित लगीं। अगर आप किसीको यहाँ भेजें तो मैं उसे अपनी स्थितिके औचित्यका पूरा कायल कर दूँगा।"

वीणा[1] काम शुरू करनेवाली है, यह बहुत अच्छा है। जो पद उसे मिल रहा है, वह भी अच्छा है। उसे स्वीकार कर लेना चाहिए। तुम लोगोमे से हर एकको, यदि वह शरीरसे असमर्थ नही है तो कुछ-न-कुछ कमाना चाहिए। फिर अभाव नही रह जायेगा। अभाव तो तब होता है जब महँगी शिक्षापर आग्रह हो, जो लाखो भूखे लोगोके हितोको हानि पहुँचाकर केवल चन्द लोग ही प्राप्त कर सकते है।

कर्जके बारेमे तुमने जो लिखा है उसे मै समझता हूँ।

डॉ० दाससे पता चला कि तुम्हारे यहाँ रहते मैं जो भेजता था, अब बन्द कर देने से तुम्हारी पत्नीको बहुत दु:ख हुआ। आशा है, तुम यह समझ गये होगे कि अगर अब भी उक्त राशि भेजता रहता तो मै तुम्हारे चरित्र-बलको हानि पहुँचाता। मुझे पूरा यकीन है कि तुम जैसे हो ठीक हो और यदि तुम अपने सकल्पपर डटे रहोगे तो दूसरोके लिए एक समुचित उदाहरण पेश करोगे।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३२७) से। सौजन्य अमृतलाल चटर्जी

१६३. पत्र : मणीन्द्रनाथ दासगुप्तको

सेवाग्राम
१७ नवम्बर, १९४१

प्रिय मणीन्द्र,

तुम्हारा पत्र मिला।[2] यदि तुम बहादुर हो और मौतसे नही डरते तो तुम्हे निडर होकर मुसलमानोके बीच घूमना-फिरना चाहिए, उनसे प्यार जतलाना चाहिए और उनके हितकी कामना करनी चाहिए। तुम्हे कभी भयभीत नही होना चाहिए। मै जानता हूँ कि यह कठिन है, लेकिन असम्भव नही।

हृदयसे तुम्हारा,
मो० क० गांधी

श्रीयुत मणीन्द्रनाथ दासगुप्त
हिन्दू छात्रावास
मणिपुर कृषि विद्यालय
ढाका (बगाल)

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. अमृतलाल चटर्जीकी पुत्री

२. मणीन्द्रनाथ दासगुप्तने हिन्दू-मुसलमानोंके बीच पुनः सद्भाव स्थापित करने के लिए गांधीजी की सलाह माँगी थी।

१६४. पत्र : लीलावती आसरको

१७ नवम्बर, १९४१

चि० लिली,

तेरा पत्र मिला। मुझे तो अपने ही अक पसन्द है। लेकिन तू अगर नियम-पूर्वक अध्ययन करेगी तो अवश्य पास हो जायेगी। चिन्ता मत करना और विश्वास-पूर्वक तथा नियमित रूपमे अध्ययन करती रहना। फल भगवान्के हाथ है।

अपने स्वास्थ्यका ध्यान रखना। यहाँ सब ठीक है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५९६) से। सी० डब्ल्यू० ६५६८ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

१६५. आठ आनेकी मजदूरी

इस वक्त जो सत्याग्रही और दूसरे व्यक्ति भी जेलोमे गये हैं वे काफी कात रहे हैं। सब जेलोसे खबरे आ रही हैं कि कातना जोरसे और रससे हो रहा है। मेरे लिए तो यह खुशखबर है। इन सबमें श्री धीरेन्द्र मजूमदार शिरोमणि है, ऐसा कहा जा सकता है। वे खुद कातते हैं, दूसरोसे कतवाते हैं, और किस तरह चरखेकी तरक्की हो सकती है इसका खूब विचार करते है। उनका खत आया है जो कि बहुत ही विचारणीय है। इसलिए मैं सब खादी-प्रेमियोंके लिए उसे नीचे देता हूँ।[1]

इसमें कत्तिनोको और इसीलिए अन्तमें सब मजदूरोको यानी कारीगरोको आठ घंटेके कामके आठ आना देनेके स्वप्नको सच्चा सिद्ध करने की बात है। सबका-सब, सबको आज ही देनेकी बात नही है। लेकिन १० वर्षके भीतर यह सब कैसे हो सकता है; यह बताने की कोशिश है।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। धीरेन्द्र मजूमदारने गाधीजी के चार माल पहलेके सुझावको अमलमें लाने के लिए एक योजनाकी रूपरेखा तैयार की थी। गाधीजी ने सुझाया था कि गाँवके हर दस्तकारको ईमानदारीसे किये एक घटे कामकी मजदूरी एक आना मिलनी चाहिए। सामाजिक और आर्थिक सुधार लानेवाली इस योजनाको पहले एक सीमित क्षेत्रमें तुरन्त लागू करने की बात कही गई थी और दस सालमें इसका धीरे-धीरे विस्तार होना था।

भाई धीरेन्द्र अपनी योजनाके लिए निश्चयपूर्वक अभिप्राय नही देते है, परन्तु जैसा कि उन्होंने लिखा है वे दूसरे विशारदोका अभिप्राय माँगते है। उनके पास जेलमे इस विषयका साहित्य भी नही हो सकता है। योजनाके लिए इस वक्त तो इतना ही कहता हू कि इसपर सब कार्यकर्त्ता विचार करे, और इस दिशामें प्रयोग करे। छोटे प्रयोगमें पूजीकी आवश्यकता नहीके बराबर होती है। जैसा कि अपने क्षेत्रमे दस-बीस कत्तिनोको तैयार करना, थोडे शिक्षकोको तैयार करना और उनके परिणाम की नोध लिखना।

योजनाकी खूबी यह है कि यह प्राय स्वावलम्बी है। इसमे दो हिस्से है। अधिक पैसे देने का थोड़ा बोझ सस्थापर आता है। लेकिन आधा तो कत्तिनोको ज्यादा सूत निकालने की क्रिया सिखाकर उनको पैसा देने की बातका है। एक खूबी यह है कि उसमे कत्तिनोके जीवनमे सर्वांगीण परिवर्तन [करने]का प्रयत्न है। इस दृष्टिसे मै इस योजनाको महत्त्व देता हू। यह योजना किसी अनजान खादी-भक्तकी नही है किन्तु एक व्यवहार-कुशल जिम्मेदार कार्यकर्त्ताकी है। धीरेन्द्र बाबू, मात्र योजक ही नही है अमल भी उन्हे ही करना है।

हर एक प्रयोग करनेवाले यह याद रखे कि कपास पैदा करने से लेकर खादी तैयार करने तककी बात इस प्रयोगमें है।

सेवाग्राम, १८ नवम्बर, १९४१

खादी-जगत्, नवम्बर १९४१

१६६. तार: भूरालाल बायाको[1]

१८ नवम्बर, १९४१

भूरालाल बाया
उदयपुर

मै सहमत हूँ।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१. यह भूरालालके उस तारके उत्तरमें था जिसमें कहा गया था: "रियासत चाहती है कि कृपलानीजी और विजयलक्ष्मी उसके अतिथि हों। आपकी सम्मति आवश्यक।"

१६७. पत्र : कन्हैयालाल मा० मुंशीको

सेवाग्राम, वर्धा
१८ नवम्बर, १९४१

भाई मुंशी,

यह पराजपेके बारेमें है। अब समाचार-पत्रोंके सम्बन्धमें लिखना। अन्य प्रान्तोंमें 'क' वर्गके कैदियोंको समाचार-पत्र दिये जाते हैं। सबके बारेमें मैं नहीं जानता। लेकिन बिहार और संयुक्त प्रान्तमें दिये जाते हैं।

सरला[1] यहाँ दो दिन रह गई।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

साथमें देशपाण्डेका पत्र और उसके उत्तरकी नकल है।

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१६८. तार : गृह-सदस्यको

वर्धा
१९ नवम्बर, १९४१

गृह-सदस्य[2]
नई दिल्ली

भूख-हड़ताल समाप्त करवाने के लिए जयप्रकाश नारायणसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूँ।[3] यह मानते हुए कि [नजरबन्दोंको अपने-अपने प्रान्तोंमें] वापस भेज दिया जायेगा, वे और उनके साथी तबतक भूख-हड़ताल समाप्त करने को तैयार नहीं हैं जबतक उन्हें यह नहीं बता दिया जाता कि उन लोगोंको भविष्यमें किस हालतमें रखा जायेगा। सम्भावित गलतफहमी दूर हो सके, इस खयालसे वे चाहते हैं कि

१. क० मा० मुंशीकी पुत्री
२. सर रेजिनल्ड मैक्सवेल
३. देखिए "तार : जयप्रकाश नारायणको", पृ० ११३।

मैं उनके पास अपना कोई प्रतिनिधि भेजूं। क्या आप महादेव देसाईको देवली जाने की अनुमति तार द्वारा प्रदान कर सकते हैं ?[1]

गांधी

[अंग्रेजीसे]
फाइल स० ४३/६५/४१-पॉलि० (१)। सौजन्य: राष्ट्रीय अभिलेखागार

१६९. तार: जोगको[2]

१९ नवम्बर, १९४१

जोग
मारफत स्टॉक
कानपुर

तुम कर सकते हो।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१७०. पत्र: द० बा० कालेलकरको

१९ नवम्बर, १९४१

चि० काका,

यह रहा मसौदा। राजेन्द्र बाबू और जमनालालजी को भी दिखा लेना। यदि आना ही पड़े तो आ जाना, अन्यथा आवश्यक परिवर्तनके बाद सुधारकर ही भेजो तो ज्यादा अच्छा होगा, जिससे मेरा काम बस हस्ताक्षर करना-भर रहे। यह तो जानते ही होगे कि आज तीसरे पहर तो बिलकुल समय नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०९५४) से

१ सरकारने २० नवम्बर, १९४१ को महादेव देसाईको देवली जाने की अनुमति दे दी।

२. यह जोगके उस तारके उत्तरमें था जिसमें उन्होंने गांधीजी को अपने गिरफ्तार होने की सूचना दी थी और पूछा था कि क्या उन्हें जमानतपर छोड़े जाने की माँग करनी चाहिए और अपने मुकदमेकी पैरवी करनी चाहिए।

१७१. सन्देश : सीमा-प्रान्तके निवासियोंको[1]

[२० नवम्बर, १९४१ के पूर्व][2]

महात्मा गांधीकी इच्छा है कि सीमा-प्रान्त और कवायली क्षेत्रोंके सब लोग रोज अपना थोड़ा समय धनुष तकलीपर[3] कातने में लगायें।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, २३-११-१९४१

१७२. पत्र : मीराबहनको

२० नवम्बर, १९४१

चि० मीरा,

इतने सारे कामके बीच मैं इससे ज्यादा कुछ नहीं लिख पाऊँगा कि ईश्वर — असत्य-रूप नहीं, बल्कि सत्य-रूप ईश्वर — तुम्हारा मार्गदर्शन करे। कारण, ईश्वर तो सत्य और असत्य दोनों है। अगर यह भाषा तुम्हारी समझमें न आये तो तुम्हें मुझसे इसका अर्थ पूछना चाहिए।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४९०) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८८५ से भी

१. यह सन्देश उतमानजईमें लाल कुर्ती शिविरमें शामिल होने को आये वर्धाके प्रतिनिधियोंने खान अब्दुल गफ्फार खाँको दिया था।

२. यह रिपोर्ट "पेशावर, २० नवम्बर" की तिथि-पंक्तिके अन्तर्गत प्रकाशित हुई थी।

३. मॉरिस फ्रिडमैन नामक एक पोल-निवासी द्वारा आविष्कृत

१७३. पत्र : डॉ० डी० डी० साठेको

२० नवम्बर, १९४१

प्रिय डॉ० साठये,

आपका पत्र मिला। विलम्बसे पत्र लिखने के लिए आप मुझे क्षमा करेंगे। इतनी अधिक तकनीकी पुस्तकके[1] लिए मेरे ज्ञानहीन शब्द किस कामके हो सकते हैं? आपकी सांकेतिकासे मैं देखता हूँ कि यह कोई ऐसी लोकप्रिय पुस्तक नहीं होनेवाली है जो आम आदमीको यह बता सके कि उसे अपनी 'आँखें सीधी' रखने के लिए क्या करना चाहिए। यहाँ मैं 'आँखें सीधी' रखने का प्रयोग उसके सभी फलितार्थों के साथ कर रहा हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

मूल अंग्रेजीसे डी० डी० साठये पेपर्स। सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१७४. पत्र : अमरनाथ झाको

सेवाग्राम, वर्धा
२० नवम्बर, १९४१

भाई अमरनाथजी,

आपका परिचय मुझे नहीं है, तो भी यह खत भेजने की धृष्टता करता हूँ।

हिन्दी साहित्य सम्मेलनके सभापति आप चुने गये हैं। उससे मुझे हर्ष हुआ और खेद भी। आप जैसे विद्वानके चुनावसे हर्ष किसको नहीं होगा? लेकिन मुझे कबूल करना चाहिए कि मुझे खेद भी हुआ, क्योंकि इस वक्त कामकी दृष्टिसे मैं राजेन्द्र बाबूका सभापतित्व चाहता था। इसलिए सेठ जमनालालजी ने राजेन्द्र बाबूके नामकी दरखास्त की थी।

आप तो जानते हैं कि मैं वर्षोंसे सम्मेलनके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखता हूँ। प्रचारकी दृष्टिसे सम्मेलनके नीति-निर्माणमें मेरा काफी हिस्सा रहा है। कुछ राजप्रकरण भी इस प्रश्नमें आ गया है। मैं तो सम्मेलनमें हाजिर नहीं रह सकता हूँ। इसलिए मैंने और कई मित्रोंने सोचा कि राजेन्द्र बाबूके चुनावसे सम्मेलनका हित सुरक्षित रहेगा।

[1] डॉ० डी० डी० साठयेने गांधीजी से नेत्र-विज्ञान-सम्बन्धी अपनी पुस्तकके हिन्दी भागके लिए भूमिका लिखने का अनुरोध किया था।

लेकिन यह नहीं हुआ। अब तो मेरी सब आशा आपपर निर्भर है। जो काम मैं राजेन्द्र बाबूसे लेना चाहता था आपसे लेने की उम्मीद रखता हूँ।

आप और मेरे बीचमें इतना तो सर्व-सम्मत होगा कि हम सब टंडनजी[1] की, जो सम्मेलनके प्राण हैं, सग्राहक नीति और दूसरी बातें जो हम जानते हैं, उनकी रक्षा करते हुए जो बन सके वह करें।

मैं नहीं जानता कि जो नीति इन्दौर[2] और नागपुरमें[3] रखी गई थी उसे आप पसन्द करते हैं या नहीं। उस नीतिको बदलने की कुछ चेष्टा तो पूनामें हुई थी। उसमें कुछ सफलता भी बदलनेवालो को हुई। लेकिन उसे मैं असह्य नहीं मानता हूँ। उसी दिशामें और कदम बढ़ाना मेरे-जैसोंके लिए असह्य हो जायेगा। मेरा प्रयत्न तो यह रहेगा कि हम नागपुरसे भी एक कदम आगे बढ़ें। मेरा दृढ़ विश्वास है कि उसीमें हिन्दीकी उन्नति है और देशका हित है। हिन्दी-उर्दूका झगड़ा होना ही नहीं चाहिये था, न होना चाहिये।

वर्धा कार्यालयके बारेमें भी काफी मतभेद रहा है। वर्धा कार्यालयको सम्मेलनके मातहत तो रहना ही चाहिए। परन्तु मेरा अभिप्राय है कि उसको मद्रास कार्यालय जितनी ही स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए। अगर माना जाये कि वर्धाने हिन्दीकी सेवा सफलतापूर्वक की है तो मुझे लगता है कि उसे आज इतनी स्वतन्त्रता मिली है उससे अधिक मिलनी चाहिए।

सम्मेलनमें राजेन्द्र बाबूका जाना अनिश्चित है। पंजाबकी डिसेम्बरकी आबोहवा वे बरदाश्त नहीं कर सकते हैं। न सेठ जमनालालजी आ सकते हैं। रहे काका साहब कालेलकर और आचार्य श्रीमन्नारायण। उनकी बात आप सुनेंगे। मैं चाहता हूँ कि सम्मेलनमें झगड़े न हों, न मिथ्या मतभेद हों। अगर सिद्धान्त-भेद होते हैं तो वह भी मैत्रीसे हो। इसलिए मेरी दरख्वास्त तो यह है कि अगर आप समय निकाल सकते हैं तो एक दिन यहाँ आ जायें, जिससे हम सब इकट्ठे होकर बातें कर सकें। फिलहाल राजेन्द्र बाबू और जमनालालजी यहीं हैं। अगर आपको समय न मिले या अन्य कारणसे न आ सके तो मैं काका साहब और श्रीमनजी को आपके पास भेज सकता हूँ। जैसा आप उचित समझें।

कष्टके लिए क्षमा।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री अमरनाथ झा
जॉर्ज टाउन
प्रयाग, स० प्रा०

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२६२)से। जी० एन० ६५ से भी

१. पुरुषोत्तमदास टंडन
२ और ३. क्रमशः १९३५ तथा १९३६ में

१७५. पत्र : मदालसाको

२१ नवम्बर, १९४१

चि० मदु,

तू पगली है और पगली ही बनी रहेगी क्या? मौका मिलते ही जल्दीसे-जल्दी तू यहाँ चली आ। रहने के लिए नही तो कमसे-कम मिलने के ही लिए। और फिर जितना तेरे मनमे हो उसे उँडेल देना और तबीयत भरकर रो लेना। और मैं तुझे रोने का इतना सुन्दर मौका दे रहा हूँ इसलिए वहाँ रोने का सिलसिला बन्द रखना। बाकी तो मैंने जो नियम बताये है यदि तू उनका पालन करती रहेगी तो सदा सुखी रहेगी।

तुम दोनोको —

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२३

१७६. पत्र : डॉ० एस० मेहदी हसनको

सेवाग्राम
२२ नवम्बर, १९४१

प्रिय मेहदी,

आपके शब्दोमे, मैं दुगना नही दे सकता क्योंकि मेरे पास जल्दी या देरसे देने के लिए कुछ भी नही है। लेकिन मैं आधा देने का श्रेय तो प्राप्त कर ही रहा हूँ क्योंकि मै तुरन्त इनकार कर रहा हूँ अर्थात् वापसी डाकसे।

आप मेरी मर्यादा तो जानते ही है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

डॉ० एस० मेहदी हसन
गोनानिया मेडिकल कॉलेज
हैदराबाद दकन

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१७७. पत्र : सुन्दरलालको

[२२ नवम्बर, १९४१][1]

भाई सुन्दरलाल,

तुमारे १८ के तारको आज हि पहूचता हू। इसलिये उत्तर तारसे नहि देता हू। तुम्हारे आरभका अत सफल हो, उज्ज्वल हो।

बापुके आशीर्वाद

पण्डित सुन्दरलालजी
मारफत डॉ० डावर
नई दिल्ली

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० १०२६३)से। सौजन्य पुरुषोत्तमप्रसाद

१७८. पत्र : निर्मलानन्दको

२४ नवम्बर, १९४१

प्रिय निर्मलानन्द,[2]

आना जरूरी हो तो आ जाओ।

तुम्हारा,
बापू

भिक्षु निर्मलानन्द
कृपा आश्रम
तिरुवन्नमलियूर
द० भारत

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३९७) से

१. डाककी मुहरसे
२. मूल नाम सी० बी० गुरजले

१७९. पत्र : मूलचन्द अग्रवालको

२४ नवम्बर, १९४१

चि० सावित्री और उसके पतिके लिये आशीर्वाद। अच्छा है दोनों खादीधारी हैं और इस विवाहमें पर्दा नहीं रक्खा जायेगा। आशा है दोनो सेवाभावी रहेंगे, सुखी रहेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४२) से

१८०. पत्र : अमरनाथ झाको

सेवाग्राम
२४ नवम्बर, १९४१

भाई अमरनाथजी,

आपका खत और तार मिले। आभार। अब तो काका साहब और श्रीमनजी आपके पास आवेंगे। इसलिये कुछ कहनेकी आवश्यकता नहीं है। इतना ही कह दूं कि यहांसे ऐसा कुछ नहीं किया जायगा जिससे वैमनस्य पैदा हो या टंडनजीकी नीतिको बदलनेकी चेष्टा उनकी गैरहाजरीमें की जाय।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१८१. पत्र : तेगरामको

२४ नवम्बर, १९४१

भाई तेगरामजी,

आपका खत मिला। मैं श्री अमरनाथजीसे पत्र-व्यवहार कर रहा हूं। आपको इतना ही कहना पर्याप्त है कि यहांसे ऐसी कोई कारवाई नहीं की जायगी जिससे टंडनजीकी गैरहाजरीमें उनकी नीतिपर कोई प्रहार करे।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१८२. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

२५ नवम्बर, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। जबतक तुम्हें लग रहा है कि मैंने तुम्हारे साथ ठीक व्यवहार नहीं किया है तबतक तुम मुझे क्षमा कैसे कर सकते हो? मुझे तो नहीं लगता कि मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय किया है। तनिक सोचकर देखो। क्या मैं किसी भी तरहसे तुम्हें एक पैसा भी देनेको बँधा हुआ था? तुमने कहा कि तुम बंगालके कार्यकर्त्ताओंके साथ निभानेमें असमर्थ हो। तुम सेवाग्राम आना चाहते थे। मैंने तरस खाकर तुम्हें आनेकी इजाजत दे दी। धीरे-धीरे मैं तुम्हारी कठिनाइयाँ जान गया और मैंने तुम्हारे लिए व्यवस्था करना शुरू किया। जब मुझे लगा कि तुम सहायताके योग्य नहीं हो तो मैंने तुम्हें पूर्व-सूचना देकर सहायता बन्द कर दी। क्या यह तुम्हारे साथ अन्याय हुआ? तुम खुद भी मानते हो कि तुमने जल्दबाजी और विचारशून्यतासे काम लिया। मैंने जो किया, वही मेरे सामने ईमानदारीका एकमात्र रास्ता था। मैं सार्वजनिक कोषसे पैसा खर्च कर रहा था। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि मैं तुम्हें अपने विश्वस्त सहयोगियोंकी इच्छाके प्राय विरुद्ध यहाँ लाया। तुम्हारी जरूरतें तुम्हारे बाजार-भावसे अधिक थीं और हैं। मुझे तो इसमें भी शंका है कि मैंने तुम्हें जो सहायता दी वह देना उचित भी था या नहीं। तुम्हारे लिए जो-कुछ कर सकता हूँ, अब भी कर रहा हूँ तो केवल इसलिए कि मैं मानता हूँ कि तुम सेवा करनेको तत्पर हो, यद्यपि तुम्हारा विवेक जाता रहा है। तुम्हारा यह पत्र इसका प्रमाण है।

मेरा सुझाव यह है कि हमारे बीच हुआ सारा पत्र-व्यवहार तुम अपने मित्रोंको, बल्कि कार्यकर्त्ताओंको दिखाओ। वीरेन्द्र बताये कि इसके बारेमें उसका क्या खयाल है। यह बड़ी गम्भीर बात है कि तुम एक ओर तो मनमें ऐसा विचार पालते रहो कि मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है और दूसरी ओर यह सोचकर सन्तुष्ट रहो कि सब ठीक-ठाक ही है।

बेशक अगर तुम ऐसा मानते रहोगे कि मैंने तुम्हारे साथ अन्याय किया है तो तुम्हारी पत्नी क्या कर सकती है? और यह तो स्वाभाविक ही है कि वह मुझ-जैसे आदमीके पास आभाको नहीं भेज सकती। आशा है, इस पत्रसे तुम्हारी सारी शंकाएँ दूर हो जायेंगी। अगर नहीं होती है तो जबतक तुम मुझे मेरी गलतीका कायल नहीं करा देते या फिर तुम खुद इस बातके कायल नहीं हो जाते कि तुम मेरे बारेमें जैसा सोचते हो वैसा सोचकर मेरे साथ अन्याय करते रहे हो तबतक इस विषयमें शंका-समाधानका सिलसिला जारी रखो।

शैलेनके बारेमें तुम्हारा सोचना गलत है। वह ऋषभदासकी मदद नही करने जा रहा है, बल्कि ऋषभदास मेरी खातिर उसको अपने यहाँ लेने को राजी हुआ है। अगर तुम्हे पैसेकी जरूरत नही होती तो मै शायद शैलेनको नही भेजता। शैलेनको भी यह काम पसन्द है।

स्नेह।

बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३२८) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

१८३. पत्र : सुलताना रजियाको

सेवाग्राम
२५ नवम्बर, १९४१

प्रिय सुलताना,

तुम्हारा पत्र पाकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई। मौलवी साहबकी सहमतिसे तुमने जो चार प्रस्थापनाएँ रखी है वे अच्छी है। लेकिन सवाल यह है कि उन्हे सब लोगो द्वारा स्वीकार कैसे कराया जाये। वे सयुक्त कार्रवाईके लिए आधार प्रस्तुत करती है। यदि तुम मौलवी साहबको मेरी सदाशयताके बारेमे आश्वस्त कर सकी हो तो हमारा अगला कदम यह होना चाहिए कि हम आपसमे मिले तथा क्या उपाय और तरीके अपनाये जाने चाहिए, इसपर विचार-विमर्श करे। यदि वे यहाँ आने का कष्ट कर सकते है तो यह उपयुक्त समय है। डॉ० राजेन्द्रप्रसाद भी यही है।[1] तुम उनकी इच्छा जानकर मुझे सूचित करना।

जहाँतक पाँचवे सुझावका सवाल है, मुझे उसके बारेमे शका है। उसके लिए स्पष्टीकरण और आपसी बातचीतकी जरूरत है।

उम्मीद है, तुम स्वस्थ होगी। तुम कब वापस आ रही हो? हम सब तुम्हे याद करते है।

महिलाओसे सम्बन्धित वह पुस्तक तो तुम अपने साथ नही ले गई? मुझे वह शेल्फपर दिखाई नही देती। मुझे याद पडता है कि तुमने मुझसे माँगी थी।

स्नेह।

बापू

बीबी सुलताना रजिया
अन्दर कोट
मेरठ

अग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८५९)से। प्यारेलाल पेपर्ससे भी, सौजन्य प्यारेलाल

१. पत्रका शेष भाग प्यारेलाल पेपर्स से लिया गया है।

१८४. पत्र : अन्नपूर्णा चि० मेहताको

२६ नवम्बर, १९४१

चि० अन्नपूर्णा,

तेरा काम बढ गया। अच्छा हुआ। मथुरा वगैरह जाने में कोई हर्ज नहीं है। मन्दिरोंको बाहरसे प्रणाम करना। मैं वहाँके एक भी मन्दिरमें नहीं गया। जहाँ हरिजन नहीं जा सकते, वहाँ हम केवल देखने के लिए क्यों जायें? इसलिए मत जाना। तेरे पिताने अच्छा प्रश्न उठाया है। इससे मालूम होता है कि तूने सजग पिताके यहाँ जन्म लिया है। मैं तेरे कल्याणकी कामना करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४३४) से

१८५. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागंज
२७ नवम्बर, १९४१

देवलीके नजरबन्दोंने अपना अनशन तोड दिया है और इस प्रकार जनता जिस भयकर तनावमें पडी हुई थी वह खत्म हो गया है। देशभक्त भूखों मर रहे हों — स्वेच्छासे ही सही — और लोग, चाहे वे उनके तरीकोंसे सहमत हों या न हों, निश्चिन्त भावसे देखते रहें, यह असम्भव था। हमें आशा करनी चाहिए कि उन्हें अपने-अपने प्रान्तोंमें भेजने मे शीघ्रता बरती जायेगी और उनके अपने-अपने प्रान्तोंमें भेज देने का मतलब यह नहीं होगा कि उनके साथ पहलेसे भी बुरा व्यवहार किया जाने लगे।

मैंने वह सरकारी विज्ञप्ति पढी है जिसमें देवलीके मोहक जीवनका वर्णन किया गया है। इससे मुझे अण्डमानके जीवनके बारेमें प्रकाशित एक ऐसा ही विवरण स्मरण हो आता है। यह वर्णन पढकर तो लगता है मानो वह परी-कथाका मोहक देश हो। फिर भी वहाँ रहनेवाले अधिकांश लोग अपने-अपने प्रान्तोंमे वापस आना चाहते है। ये वर्णन उन लेखकोंके विचारमें जो स्वय नजरबन्द नहीं हैं, चाहे जितने सत्यपरक हों, लेकिन इनमें उन वास्तविकताओंका कोई उपचार नहीं होता जिन्हें नजरबन्दोंकी दृष्टि देखती है। स्पष्ट ही इस विज्ञप्तिका उद्देश्य यह बताना है कि

देवलीकी स्थिति वहाँ नजरबन्द लोगोके अपने-अपने प्रान्तों की स्थितिसे कही बेहतर है। यदि यह बात सही हो तो इससे सिद्ध होता है कि अनशन करनेवालो की यह माँग कितनी सही और उचित थी कि अपने-अपने प्रान्तोमे भेजे जानेके बाद उन्हे देवलीसे अधिक बुरी स्थितिमे न रखा जाये। मै उनकी माँगोको निम्न रूपमे प्रस्तुत करना चाहूँगा·

(१) नजरबन्दोको अपने प्रान्तमे ले जाकर किसी ऐसी जगह न रखा जाये जो सर्वथा एकान्त-वीरान कोनेमे पडती हो। यदि नजरबन्दोको ऐसी जगह भेजा जाता है जो उनके अपने-अपने घरोसे बहुत दूर है तो फिर उन्हे अपने प्रान्तमे वापस ले जाने का कोई मतलब ही नही रह जाता।

(२) नजरबन्दोको दी जानेवाली सुविधाओ और भोजनका स्तर, हालमे देवली मे इनका जो स्तर रहा है, यथासम्भव वैसा ही हो।

यह तो हुआ कैदियोकी माँगोके सम्बन्धमे। किन्तु इसके अतिरिक्त भी कुछ बाते आवश्यक हैं। इस बातको ध्यानमे रखते हुए कि नजरबन्दोपर मुकदमे नही चलाये गये है, उनके साथ अधिकसे-अधिक सौम्य और सुन्दर व्यवहार करना सरकारका कर्त्तव्य है। इस मामलेमे युद्धकालीन मितव्ययिताकी दुहाई देने की कोई गुजाइश नही है, क्योकि इनकी नजरबन्दी भी युद्ध-प्रयत्नोके सिलसिलेमे ही उठाया गया कदम है तथा उसका औचित्य और किसी तरहसे सिद्ध नही किया जा सकता। इसलिए उन्हे पारिवारिक भत्ता और जब जरूरी हो अपने-अपने परिवारोके लिए यात्रा-भत्ता प्राप्त करने का हक है। ध्यातव्य है कि नजरबन्दोमे से ज्यादातर लोग गरीब हैं। इतना तो हुआ देवलीके बारेमे।

लेकिन मुझे लगता है कि भोजन, सफाईकी सुविधाओ और वर्गीकरणका प्रश्न एक अखिल भारतीय प्रश्न है और वह इसी दृष्टिसे निबटाया जाना चाहिए। अभी मैं केवल राजनीतिक कैदियोकी ही चर्चा करूँगा, चाहे वे सन्देह-शकपर नजरबन्द किये हुए लोग हो, या स्वेच्छासे जेल जानेवाले सत्याग्रही। यदि मेरा बस चले तो मै सभी कैदियोके साथ समान व्यवहार करूँ और कोई भेद भी करूँ तो स्वास्थ्य-सम्बन्धी कारणोसे और कैदियोकी आदतोके आधारपर ही। लेकिन जिन प्रश्नोका समाधान तत्काल ढूँढने की आवश्यकता नही है उन्हे उठाकर मै अभी इस समस्याको उलझाना नही चाहता। मेरा विचार है कि वर्गीकरण समाप्त कर दिया जाना चाहिए। उसके सम्बन्धमे कम कहे तो भी इतना तो कहना ही पडेगा कि उसका आधार मनमानापन है।

पूरे भारतका प्रतिनिधित्व करनेवाले प्रसिद्ध चिकित्सा-शास्त्रियोकी ओरसे जो सारपूर्ण और युक्तिसगत घोषणापत्र हालमे प्रकाशित किया गया है उसमे सुझाया आहार-मान सारे देशके लिए न्यूनतम आहार-मानके रूपमे अविलम्ब स्वीकार कर लेना चाहिए। हाँ, विभिन्न प्रान्तोमे पैदा होनेवाले मुख्य खाद्यान्नोको ध्यानमे रखकर उसमे थोडी-बहुत रद्दो-बदल जरूर की जा सकती है। सभी राजनीतिक कैदियोको अपने आहार तथा अन्य आवश्यक वस्तुओमें रह गई कमीको अपने खर्चसे पूरा करने का अधिकार होना चाहिए।

सभी राजनीतिक कैदियोंको कुछ चुनी हुई प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाएँ नियमित रूपसे मिलनी चाहिए और वे पत्र-पत्रिकाएँ सेंसर नहीं होनी चाहिए। पुस्तकोंके चुनाव पर कोई प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए। जिन पुस्तकोंपर भारतमें आम तौरपर कोई प्रतिबन्ध न हो वे कैदियोंके लिए भी सुलभ होनी चाहिए। उन्हें 'बी' वर्गके कैदियोंकी तरह पत्र लिखने और मुलाकातियोंसे मिलनेकी छूट होनी चाहिए।

यह तो सभी स्वीकार करेंगे कि अनुचित रियायतें पाने के लिए की जानेवाली भूख-हड़तालोंको कोई महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिए, और न उचित माँगोंको उनके औचित्यके आधारपर स्वीकार करने से इनकार करके भूख-हड़तालके लिए किसीको दण्डित करनेकी ही आवश्यकता है। कठिनाईमें पड़े कैदीके लिए भूख-हड़ताल अन्तिम अहिंसक उपाय है। इस तरह वह दूसरों द्वारा दिये गये कष्टका निवारण अपनेको स्वयं ही कष्ट देकर करनेकी कोशिश करता है। इस उपायसे वह अधिकारियोंके हृदयको द्रवित करने या कमसे-कम जनताकी सहानुभूति प्राप्त करनेकी आशा करता है। अनुभवसे यह ज्ञात होता है कि यह कोई तिरस्करणीय तरीका नहीं है। कई प्रसंगोंपर यह तरीका सफल रहा है। लेकिन जिस कामके लिए भूख-हड़तालकी जा रही है वह उचित है या नहीं, यह तय कर पाना हमेशा आसान नहीं होता। हमें यह भी मालूम है कि ऐसे मामलोंमें सरकारें बराबर सही निर्णयपर ही नहीं पहुँचतीं। मेरे पास एक ऐसे कैदीका मामला है जिसने मेरे कहने पर भूख-हड़ताल छोड़ दी। उस मामलेका जो विवरण मेरे सामने है, उसके अनुसार उसका भूख-हड़ताल करना पूरी तरह वाजिब था। जो सब्जी परोसी गई थी उसमें एक मरा हुआ बिच्छू था। जिन लोगोंने भूख-हड़तालकी उनपर अब इस आरोपमें मुकदमा चलाया जा रहा है कि परोसा गया खाना न खाकर उन्होंने जेलके नियमोंको भंग किया। चुनारमें पिछले एक पखवाड़ेसे भूख-हड़ताल चल रही है। इसका सम्बन्ध 'सी' वर्गके कैदियोंके साथ किये जानेवाले व्यवहारसे है। मैंने तार भेजकर भूख-हड़ताल छोड़नेका अनुरोध किया है।[1]

मेरा विचार है कि भूख-हड़तालको अपराध नहीं मानना चाहिए। इसके बजाय जब-कभी ऐसी हड़ताल हो, मामलेको किसी न्यायाधिकरणके हवाले कर देना चाहिए और कैदीको अपने मनपसन्द वकीलके द्वारा अपने मामलेकी पैरवी करानेका अधिकार होना चाहिए। अगर भूख-हड़तालका कारण उचित सिद्ध हो तो शिकायत दूर कर दी जानी चाहिए। अगर न्यायाधिकरणका फैसला कैदियोंके खिलाफ जाता है और तब भी वे हड़ताल जारी रखते हैं तो उस हालतमें हड़तालकी उपेक्षा की जानी चाहिए। अगर यह तरीका अपनाया जाये तो सम्भावना यही है कि भूख-हड़तालें अपने-आप कम हो जायेंगी। फिर तो जहाँ कारण वाजिब होगा वहाँ अधिकारी भूख-हड़तालकी पूर्वसूचना-भर मिलने से ही शिकायत दूर कर देंगे और जहाँ भूख-हड़ताल गैरवाजिब होगी वहाँ उसके प्रति जनताकी कोई सहानुभूति नहीं होगी। और जो

१. यह तार उपलब्ध नहीं है।

तरीका मैंने सुझाया है उसके अपनाये जाने पर स्वभावत जबरदस्ती खिलाने की तो कोई बात रह ही नही जायेगी। कुछ विरल दृष्टान्तोमे किसी दुराग्रही भूख-हड़तालीकी जान भी जा सकती है। मगर उपवासके द्वारा की जानेवाली आत्महत्याको भी बराबर रोक पाना असम्भव है।

शिकायते दूर करवाने के तरीकेके रूपमे उपवासने तो अब हमारे बीच अपना स्थान स्थायी रूपसे बना लिया है। इसका अपना उपयोग भी है। ईमानदारीके साथ किया गया उपवास सच्ची शिकायतके प्रति ध्यान आकर्षित करता है और तब उसे दूर करने के लिए भी दूसरे पक्षको मजबूर होना पडता है। मैंने जो बात सुझाई है वह मनुष्यकी सहज वृत्तिके नियमनका उपाय है और उसके द्वारा एक उपयोगी प्रथाको उपहास या तिरस्कारका पात्र बनने से बचाया जा सकता है।

[अंग्रेजीसे]

हिन्दू, २९-११-१९४१

१८६. पत्र : माधव श्री० अणेको

सेवाग्राम

२७ नवम्बर, १९४१

प्रिय बापूजी,

आपका पत्र मिला। मुझे तीन व्यक्तियोके नाम सूझते है।[1] हृ० ना० कुँजरू, सताराके भूतपूर्व कलेक्टर हामिद अली, टाटाके (लेफ्टिनेन्ट) के० ए० डी० नौरोजी। आप इनमें से किसीको भी चुन सकते है।

मुझे आपका एक और पत्र अभी-अभी मिला है जो मैंने अभी नही पढा है। कहने की जरूरत नही कि आपके सारे पत्रोको गोपनीय माना जाता है।

उम्मीद है, आपको वहाँ बहुत ज्यादा सर्दी महसूस नही हो रही होगी।

आपका,

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. मलायामें एजेन्टके रूपमें नियुक्तिके लिए

१८७. पत्र : गुलजारीलाल नन्दाको[1]

२७ नवम्बर, १९४१

भाई गुलजारीलाल,

जैसा कि मै पहले कह चुका हूँ, यदि मजूर महाजन यह समझे कि उसकी मजूरी की कीमत रुपयेकी अपेक्षा हमेशा अधिक है और यदि सब मजदूर एक हो जायें तो किसीका बाल बाँका किये बिना मजदूर अपना उच्च स्थान प्राप्त कर सकते हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी प्रतिकृतिसे *गुजरात समाचार*, ३-१२-१९४१

१८८. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

२७ नवम्बर, १९४१

चि० मगन,

उर्मि स्कूल जाने लगी यह अच्छा हुआ। तेरा अधिकाश समय तो बम्बईमें ही बीतेगा, ऐसी स्थितिमें यहाँ बडा घर क्यो बनवाना चाहिए? थोडे समयके लिए तो तू जब चाहे तब आ सकता है और तुझे किसीके साथ ठहराया जा सकता है। लकडीके अतिरिक्त और कोई चीज खरीदी नही गई है। लकडी तो किसी और काम आ जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

श्री मगनभाई मेहता
४ बी, तेजपाल रोड, ऊपरी मजिल
गामदेवी, बम्बई

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०११७)से। सौजन्य. मगनलाल प्रा० मेहता

१. यह अहमदाबादकी मजूर महाजनकी २५ वीं वर्षगाँठके अवसरपर भेजा गया था जिसके गुलजारीलाल नन्दा मन्त्री थे।

१८९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२७ नवम्बर, १९४१

चि० कृष्णचन्द्र,

गुड सबको देना अनावश्यक है। मेरे इर्दगिर्दमे बैठनेवाले महमान रहते हैं। उनमे से कोई लेते हैं और नहि भी। दो बच्चे लेते हि है। यो तो दूसरे बच्चोको भी देवे। गुड देनेका रिवाज सार्वत्रिक नहि है। ज्यादा मीठा यहा खाया जाता है ऐसी शिकायत बाहरवालो की है और सही है। असतोष रहे उसकी बरदाश्त करे। उनको समझावे। स्टार्च और गुडका गुण एक है लेकिन पचने की क्रिया अलग रहती है। स्टार्चको गुड बनना है।

दातुन तो बबुल या नीमके हि हो सकते हैं। दूसरोके पेड़मे से काटना अवश्य चोरी है। हमारे पसद किये हूए वृक्षमे से हि काटना चाहिये। यह ब[लवन्तसिंह]को बताना और एक-दो वृक्ष पसद करना। काटोको जलाना या कुछ उपयोग करना।

गोविंदरावमे शक्ति हि नहि है। आलस्य नहि है अशक्ति है। माना कि हम सब हाथसे बीछु उठाते है लेकिन एक आदमी डरके मारे उसे छू हि नहि सकता है तो उसे कैसे मजबूर किया जाय? गोविंदरावको डर है कि उसे कोढ लग जायगा। यह डर उसका खास भी नहि है, काफीओको होता है। यह काम हि जो तैयार रहे उसीको दिया जा सकता है। यह बात तो बिलकुल समझने जैसी है।

पाखाना सफाई भोजनके पहले हि होनी चाहिये। नहि हो सके तो भले २ बजे होवे। सबकी इच्छा और सफाईकी दृष्टिपर निर्भर है।

महमानोके बारेमे पहलेसे खबर तो देने का प्रयत्न होता है। आवश्यकता होने से लालटीन लेना पडेगा। मै कोशीश तो करता हूँ कि यहाँ कम-से-कम लोग रहे।

शहरके साथका सबध अनिवार्य है। देखना यह है कि शहरमे हम कमाते हैं कि देहातीको शहरमे लुटाते है। हाँ, कम-से-कम जाना पड़े ऐसे करना चाहिये।

मजदूरीमे रस पैदा कराना है। कठिनाई यह है कि महमान ज्यादा है, आश्रमवासी कम है। महमानोसे मजदूरीकी आशा कैसे की जाय? आश्रमवासीका नाम लिखो। तुम्हे हैरानी होगी कि हम कितने कम हैं।

तुमारे मेरे पास न आने का कारण मै समझता हूँ।

जवारी [जुआर] के बारेमे जो उचित है किया जाये। मै उस प्रश्नको ठीक नहि समझता हूँ।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४०६) से

१९०. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

[२८ नवम्बर, १९४१][1]

प्रिय कु[मारप्पा],

वह गलत आचरण था। सजा हाथों-हाथ मिली। रक्तचाप नही। वह तो परिणाम था। लेकिन सजा दौरेके रद्द हो जानेमे निहित थी। हम शरीरके साथ खिलवाड नही कर सकते। हम जैसे काममें लगे हुए है वह कठोर सयमकी अपेक्षा रखता है। दौरा रद्द करना एक जरूरी एहतियात है। शिक्षा भविष्यमें ऐसा कभी मत करो।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१६०) से

१९१. पत्र : दादाचानजीको

सेवाग्राम
२८ नवम्बर, १९४१

भाई दादाचानजी,

आपका पत्र मिला। मुझे खुशी है कि आपने इतने साफ शब्दोंमें लिखा है। मैं आपसे पूर्णतया सहमत हूँ कि बर्मावासियोंके साथ हमारे सम्बन्ध अत्यन्त सौहार्द-पूर्ण होने चाहिए। प्रधान मन्त्री और मेरे बीच हुआ पत्र-व्यवहार स्वभावत पूर्णतया मैत्रीपूर्ण था। मैं स्वय बर्माके लोगोको प्यार करता हूँ, और जैसा कि आपको मालूम है, मैं फुंगियोंके बहुत निकट सम्पर्कमें आया था। मैं कह नही सकता कि इस समय क्या ठोस कदम उठाये जा सकते हैं। मेरा खयाल है कि मैंने समझौतेमें[2] जो दोष बताये है वे वास्तविक है और उनका निराकरण किया जाना चाहिए। इसलिए आपको उन मुद्दोंपर अपना आग्रह नही छोड़ना चाहिए, किन्तु मैत्रीपूर्ण बातचीतके द्वारा उन दोषोको दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिए। आपको अपने साथियोंके प्रति विरोधका रुख नही अपनाना चाहिए। इसके लिए कोई कारण नही है।

१. जी० एन० रजिस्टरसे

२. भारत-बर्मा प्रवासी समझौता; देखिए खण्ड ७४, पृ० २८३-८४।

मुझे खुशी है कि आपने मुझसे श्री सत्यमूर्तिको लिखे अपने बहुत लम्बे पत्रको पढ़नेकी अपेक्षा नहीं रखी है। तथापि मैंने उसे पढ़नेकी कोशिश की थी लेकिन समयकी कमीके कारण उसे बीचमें ही छोड़ना पड़ा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

१९२. भेंट: 'डेली हेरल्ड'को

वर्धागंज
२८ नवम्बर, १९४१

श्री एमरीने मैंचेस्टरमें जो भाषण[1] दिया उसकी मुझपर कोई नई प्रतिक्रिया नहीं हुई है। उन्होंने कोई नई बात नहीं कही है। इससे ज्यादा कुछ कह पाना मेरे लिए कठिन है। श्री एमरीके अपने कुछ विचार हैं और उन्हें वैसे विचार रखनेका पूरा हक है। लेकिन भारतको जितनी अच्छी तरह मैं जानता हूँ उतनी अच्छी तरह वे नहीं जानते। इसलिए मैं देख रहा हूँ कि अपनी बातोंको दोहराकर वे न तो अपने देशकी भलाई कर रहे हैं और न भारतकी। उसी असत्यको बार-बार दोहराकर वे असत्यको सत्य नहीं बना सकते।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३०-११-१९४१

१. १९ नवम्बरको मैंचेस्टरमें एक भाषणमें भारत-मंत्री एल० एस० एमरीने कहा था: "भारतको ब्रिटेनकी देन पर हम गर्व कर सकते हैं। कानूनके अन्तर्गत व्यक्तिके अधिकारोंकी दृष्टिसे हमें जो-कुछ मैग्नाकार्टाके रूपमें मिला वह हमने भारतको भी दिया है। अब हमने अपने सामने कुछ ही वर्षोंमें, भारतीय राजनयिक प्रतिभाके सहयोगसे, इससे भी बड़ा चमत्कार दिखाने का लक्ष्य रखा है — उत्तरदायित्वपूर्ण स्वतन्त्रताके उस भव्य भवनके निर्माणका लक्ष्य जिसे पूरा करनेमें हमें यहाँ सदियाँ लग गईं। तमाम शक-सन्देहोंके बावजूद हमें आज भी भारतकी अन्तर्निहित सद्भावना और विश्वास प्राप्त है। लेकिन सबसे बढ़कर तो स्वयं भारतीयोंके बीच आपसी सद्भावनाकी जरूरत है।"

१९३. पत्र : माधव श्री० अणेको

सेवाग्राम
२९ नवम्बर, १९४१

प्रिय वापूजी,

आपने उस अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण घटनाका खलासा करने में इतना ज्यादा समय क्यो लगाया? आपने मुझे दो पक्तियाँ लिखी होती तो मै सन्तुष्ट हो जाता। मैंने आपको कागजात इसलिए भेजे कि मै नही चाहता था कि आपके वारेमें कोई वात मेरे मनमें रहे और आपको मालूम न हो। हम अलग-अलग रास्तोपर चल सकते है, लेकिन आपके प्रति मेरे मनमें जो सम्मान है वह कभी कम नही होगा।

मैंने अपना कायाकल्प करवाने से इनकार करके मालवीयजीके कायाकल्पका लाभ उठाया। वह सब वहुत अस्वाभाविक था।

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१९४. पत्र : सर जॉर्जको

२९ नवम्बर, १९४१

प्रिय सर जॉर्ज,

इतने लम्बे अर्सेके वाद आपका पत्र पाकर अप्रत्याशित प्रसन्नता मिली।

आपके पुत्रकी मृत्युके वारेमें सुनकर दुख हुआ। लेकिन मेरा खयाल है कि कदाचित् ही कोई ऐसा अंग्रेज-परिवार हो जिसने ऐसा महान् वलिदान न किया हो। इसका जिक्र करने से मनमें ऐसे-ऐसे विचार उठने लगे है जिनकी आप कल्पना कर सकते है।

जव आपकी पुस्तक मेरे हाथ आयेगी तव मै उसे पढ जाऊँगा और यदि [उसके वारेमें] कुछ वताने लायक हुआ तो लिखूंगा। वहरहाल मै आपको वता दूं कि मै चाहे लड रहा होऊँ चाहे सहयोग कर रहा होऊँ, मै हमेशाकी तरह आज भी ब्रिटेनका सच्चा मित्र हूँ।

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

अंग्रेजीकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१९५. पत्र : सम्पूर्णानन्दको

२९ नवम्बर, १९४१

भाई सम्पूर्णानन्द,

आपका पत्र और पुस्तक मिले। आपकी विचारधारा मुझे प्रिय है इसलिये पुस्तक पढने की कोशिश अवश्य करूंगा। पहले तो प्रभावती पढेगी। उसने किताब देखी और माग ली। अब तो जयप्रकाशके पास जाती है वहासे विहार। मुझे तो बनारसमें किताब मिलेगी।

जेलमें अच्छे रहे होगे।

आपका,
मो० क० गांधी

श्री सम्पूर्णानन्दजी
जालिपादेवी
बनारस

मूल पत्रसे सम्पूर्णानन्द कलेक्शन। सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

१९६. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

३० नवम्बर, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

तुम्हे हरिजन सेवक सघमे जाकर मामलेको[1] उसके सामने रखना चाहिए। सीधे समाचार-पत्रोका ही सहारा मत लो।

जहाँतक मेरे राजनीतिसे अवकाश लेने की बात है[2], उसका मतलब प्रकारान्तरसे अहिंसा-आन्दोलनको भी समेटना होगा। यह तो मेरे लिए अपने अस्तित्वको अस्वीकार करने-जैसा होगा।

आशा है, इससे पहलेका पत्र तुम्हे मिल गया होगा।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३२९) से। सौजन्य . अमृतलाल चटर्जी

१. नवद्वीप नगरपालिकाके हरिजन कर्मचारियोंका मामला, जिनकी स्थिति बड़ी दयनीय थी।
२. अमृतलाल चटर्जीने गाधीजीको राजनीतिसे अवकाश ले लेनेका सुझाव दिया था।

१९७. पत्र : लक्ष्मी गांधीको

सेवाग्राम, वर्धा
३० नवम्बर, १९४१

चि० लक्ष्मी,

तेरा खत मिला। अखबारोसे ज्यादा पता चला। हमारे चीफ जस्टीसको मान-पत्र भेजना चाहिये कि उन्होने देवदासको इतने उँचे चढाया। १००० रु० भी वचाये और एक महिनेका पूरा आराम दिया। भले रामू[1] भी जेलमे जाय और चैन करे। अण्णा[2] वीमार हो गया। अव तो ठीक है ऐसा रामचन्द्रन ब्रह्मचारी कहते है।

वापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २१४४)से

१९८. पत्र : लीलावती आसरको

१ दिसम्बर, १९४१

चि० लिली,

तेरा पत्र मिला। छात्रवृत्ति चली गई तो क्या हुआ! लेकिन तू जो यह अनुत्तीर्ण होने का प्रण कर वैठी है, यह ठीक नही है। पूरा प्रयत्न कर। फिर भगवान्को जो करना होगा सो करेंगे। तुझे अपना एकान्त जीवन अवश्य रुचना चाहिए। अध्ययनशीलका यही लक्षण है। जव हम सीधे रास्ते चल रहे होते है, तव समयका हिसाव करने की आवश्यकता ही नही रह जाती, क्योंकि और कोई रास्ता ही नही रहता। प्रभावती आज जा रही है। जयप्रकाशसे मिलने जा रही है। वहाँसे वहुत करके सीधी विहार जायेगी। लक्ष्मीवाई[3] आज आ गई। खुर्शेदवहन और कमलादेवी अभी यही है। सरदार आज वम्वई जा रहे है। वहाँसे वारडोली जायेंगे। मैं भी ९ को वारडोली जाऊँगा। एक महीना वहाँ रहूँगा। हम सव आनन्दपूर्वक है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०११३)से। सौजन्य लीलावती आसर

१. रामचन्द्र, लक्ष्मीका पुत्र
२. च० राजगोपालाचारी
३. लक्ष्मीवाई वैद्य, पूनाकी एक खादी-कार्यकर्त्री तथा शिक्षाविद

१९९. पत्र : मदालसाको

सेवाग्राम
१ दिसम्बर, १९४१

चि० मदालसा,

डॉक्टरका कहना है कि अब तू सर्वथा मुक्त हो गई है। इसलिए जब तेरी इच्छा हो तब चली आना। मुझे ९ तारीखको एक महीनेके लिए बारडोली जाना है इसलिए मैं चाहता हूँ कि तू ९ के पहले आ जाये। आशा है, तू मौज कर रही होगी। डॉक्टरने बताया कि शिशु भी ठीक प्रगति कर रहा है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

साथकी रसीद ऑफिसमे दे देना।

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२३

२००. पत्र : सुशीला गांधीको

१ दिसम्बर, १९४१

चि० सुशीला,

तेरा पत्र मिला। सीताके[1] बारेमे खेद होता है, लेकिन तुझे डरना नही चाहिए। ऐसा यहाँ भी हो सकता था, यद्यपि यहाँ भय कम होता।

यह तो स्पष्ट है कि तू वहाँसे आ नही सकती। मै समझता हूँ, अपना समस्त जीवन वहाँ बिताना तुम दोनोका धर्म है। सीताको जिस प्रकार भी पाल-पोसकर बड़ा करना हो, तू स्वय वही कर। मै होऊँ, तो उसे अपनी निगाहके सामने रखकर ही तैयार करूँ, जैसा कि मैने चारो [लडको] तथा अन्य [बच्चो]के साथ किया। मुझे उसका पछतावा नही है। मेरी दृष्टिमे उन्होने कुछ खोया नही है। पाठशाला वगैरहमे हरिलाल गया था। उसका परिणाम देख लो। बैरिस्टर वगैरहकी उपाधि लेनेवालो के दोष हम लोग देख नही पाते, क्योकि हम उनके रोबमें आ जाते है। अन्यथा बैरिस्टर और डॉक्टरोमे भी बहुत-से ऐसे पडे है, जो हरिलालके समान

१. सुशीला गाधीकी पुत्री

व्यभिचार करते हैं और शराब वगैरह पीते हैं। लेकिन वे हैं उपाधिधारी और बडे आदमी इसलिए उनके दोष नहीं देखे जाते। फिर, हरिलालको बदनाम करनेवाला मैं था, इसलिए भी वह दर-दरका हो रहा है। लेकिन उसे बदनाम करना मेरा कर्त्तव्य था, हालांकि इस सन्दर्भमे 'बदनाम करना' शब्दका प्रयोग यहाँ ठीक नही है। लेकिन अगर मेरा यह कहना तुम दोनोंके गले न उतरे, और सीताको अपने पास रखने का मोह छोड सको तथा सीता स्वय भी यहाँ आने को राजी हो, तो भेज दो। तुम्हारी रुचिके अनुसार उसे यहाँ शिक्षा दी जायेगी। देवदास और रामदासको जिस तरह ठीक मालूम होता है उस तरह वे अपने बच्चोंको पाल-पोसकर बडा कर रहे हैं। यही अधिकार तुम दोनोको है। मुझ-जैसा आदमी तो एक मित्रके समान तुम्हें सलाह ही दे सकता है। सच्चा अधिकार तो माता-पिताको ही है, साथ ही उनका कर्त्तव्य भी है, कि जैसे उन्हें उचित लगे अपने बाल-बच्चोको पाल-पोसकर बडा करे।

वीरजीके बेटेसे भी तू पूछना तो जरूर। उसमें सकोच करने की जरूरत नही है। सीताको तूने स्त्रीका धर्म समझाया, यह तो अच्छा ही किया। उसे गुप्तागोकी पूरी जानकारी देने से भी फायदा ही होगा। यह जानकारी शुद्ध हो, तो बच्चे उसका सदुपयोग समझेंगे और अपने ऊपर अकुश रखना सीखेंगे। यह जानकारी कैसे दी जाती है, इसपर सब-कुछ निर्भर करता है। यह तुझे स्वय सोच लेना चाहिए। नरहरिभाईने भी कुछ लिखा है। किशोरलाल भी तुझे लिखेंगे, और कुछ पठनीय साहित्य भेजेंगे। तू घबराना मत।

मणिलालका पत्र भी मिला था। उसको भी उत्तर तो दे चुका हूँ।[1]

सोराबजी और जालभाईके बारेमें पढकर दुःख होता है। लेकिन यह ससार ऐसे ही चलता रहता है।

यहाँ सब लोग सकुशल हैं। रामदासके बच्चे अभी तो यही है। नीमू[2] सुमीको[3] लेकर कल आ रही है। उसकी आँखका ऑपरेशन हुआ था।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९२५)से

१. लेकिन गांधीजी ने उत्तर नहीं दिया था; देखिए "पत्र: मणिलाल गांधीको", पृ० १४२।
२ और ३. रामदास गांधीकी पत्नी निर्मला और पुत्री सुमित्रा

२०१. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१ दिसम्बर, १९४१

चि० कृ० चं०,

हा, कुछ गैरसमज हुई है। मैंने तो आर्यनाको[1] साफ कह दिया था। थोडे पुस्तक रखना हि है और उसलिये दो-तीन कबाट भी। मैंने आ० ना० . . को[2] है। आ० ना० की भाषा कुछ ऐसी है उसकी ओर ध्यान नहि देना।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४०७)से

२०२. पुर्जा : बलवन्तसिंहको[3]

१ दिसम्बर, १९४१

यह सब क्या है? अबलाके अपमानसे यह सब दुख कैसे? मै तो जानता भी नही की . [4] बहनने क्या-क्या गालिया दी। हमारी बहन गालिया दे उसे भी घीकी नालिया समझे। मै तलाश तो करूगा, लेकिन किसी कारण मैं तुम्हारा लिखना पसन्द नही कर सकता हू। अपमान तो सहन करना चाहिये। तुम्हारे हसना था। और भागने की बात कैसे उठती है? सब अपने-आपको भगा सकते है। आश्रम तो तुम्हारा है। . [5] बहन का भी है। दोनो लडे तो कौन किसको भगावे? ठीक ही कहा है 'गीता' माताने कि जिसको क्रोध होता है उसको समोह होता है, समोह से स्मृतिभ्रश और उसमे से बुद्धिनाश।[6] यह तुम्हारा हाल पाता हू। सावधान हो लो और अपनी मूर्खतापर हसो।

बापु

बापूकी छायामें, पृ० २९१

१. हिन्दुस्तानी तालीमी संघके मन्त्री ई० डब्ल्यू० आर्यनायकम्

२. यहाँ एक शब्द पढ़ा नही गया।

३. बलवन्तसिंह मौनव्रत धारण किये हुए थे। रसोईघरके लिए वे चावल न दे सके। इसपर आश्रमकी एक महिला सदस्याने उनकी बडी भर्त्सना की जिससे क्रोधित हो उन्होंने गाधीजी से शिकायत की और वहाँ से चले जाने की इजाजत चाही।

४ और ५. साधन-सूत्रमें नाम छोड दिये गये है।

६. भगवद्गीता, २/६३-६४

२०३. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

२ दिसम्बर, १९४१

प्रिय कु[मारप्पा],

यदि तुम्हें लगता हो कि तुम्हारा स्वास्थ्य बिलकुल ठीक रह पायेगा और अगर तुम्हें यात्रा करने की अनुमति मिल जाये तो आ जाओ। मैं यहाँसे ९ तारीखको बारडोली रवाना होऊंगा। तुम कल यानी ३ को चल दो तो ४ को यहाँ पहुँच जाओगे। इस तरह मुझे पूरे पाँच दिन मिल जायेंगे। फैसला तुम्हींपर छोडता हूँ।

स्नेह।

बापू

प्रो० कुमारप्पा
मारफत सेठ गूरजीभाई
गिरगाँव, बम्बई

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१६१) से

२०४. पत्र : सर्वपल्ली राधाकृष्णन्‌को

सेवाग्राम
२ दिसम्बर, १९४१

प्रिय सर राधाकृष्णन्,

मेरे साथ कितने लोग होंगे, इसके बारेमें मैंने आपको नही लिखा है, क्योंकि मुझे स्वय निश्चित रूपसे कुछ नही मालूम है। लेकिन फिलहाल आप तीन लोगोंके आने की बात तो तय मान सकते है — महादेव देसाई, कनु गाधी और मैं। मैं अपने साथ पत्नीको नही लाना चाहता।

जहाँतक स्वामी भवानीदयालका प्रश्न है, मैं इस मामलेको नजरअदाज कर रहा हूँ। द० आ० अथवा अन्यत्र हमारे लोग उस दुर्बलताका परिचय देंगे ही जो उन्हें विरासतमें मिली है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

२०५. पत्र : मणिलाल गांधीको

२ दिसम्बर, १९४१

चि० मणिलाल,

मेरा खयाल था कि मैंने तुझे जवाब दे दिया है, लेकिन किशोरलाल याद दिलाते हैं कि नही दिया। तेरा मन वहाँ बिलकुल न लगता हो, तो चला आ, लेकिन यह तुझे शोभा नही देगा। अपने साथियोको मँझधारमें छोडकर तू चला आये, यह उचित नही होगा। फिर भी मै तुझे जबरदस्ती रोकना नही चाहता। इसलिए जैसा तू अपना धर्म समझे उसके अनुसार करना। इससे अधिक मार्गदर्शन मै और क्या कर सकता हूँ?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९२६) से

२०६. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

२ दिसम्बर, १९४१

चि० बबूड़ी,

तू घबरा तो नही गई न? माँ बनना सरल नही है। बच्चो को हारी-बीमारी तो होती ही रहती है। मजुलाबहन आकर तुझे देख जायेगी। १० को तो मै बारडोली जा रहा हूँ। तब तू मेरे पास आ जाना। तबतक तो आनन्दको आनन्द मनाने लगना चाहिए। ईश्वरमे ध्यान लगाकर जो बने सो करती रहना। यदि तेरी ऐसी इच्छा हो कि शकरीबहनको[१] आना चाहिए तो तार कर देना। तू वहाँ अपने कुटुम्ब के बीच में रह रही है, इसलिए उसे भेजनेमे मुझे सकोच होता था।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००४०)से, सौजन्य · शारदाबहन गो० चोखावाला

१. शारदा गो० चोखावालाकी माँ

२०७. पत्र : मदालसाको

४ दिसम्बर, १९४१

चि० मदालसा,

तेरा कलका पत्र आज साढे दस बजे मिला। तूने कल आनेकी अनुमति माँगी थी। उक्त अनुमति अब तो बेकार है। अब जब चाहे तब आकर झाँक जाना।

यदि तू वहाँ प्रसन्न रहती हो तो घिसटते हुए मेरे पास आने की जरूरत नही है। मैं तो ९ तारीख को झाँक ही जाऊँगा। किन्तु यदि यहाँ आने से तेरा मन हलका हो जाये तो अवश्य चली आना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजराती से]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२४

२०८. पत्र : महावीर गिरिको

४ दिसम्बर, १९४१

चि० महावीर,

तेरा पत्र मिला। मुशीजी ने कहा है कि अर्जी तुझे मार्चके महीनेमे भेजनी चाहिए। उससे पहले भेजना व्यर्थ होगा, ऐसा मेरी समझमें आया है। इसलिए तुझे मार्चके महीनेतक प्रतीक्षा करनी चाहिए। मार्चमे मुझे लिखना। सत्यदेवीको[1] अभी भेजने की कोई जरूरत नही है। ऐसी सम्भावना है कि मैं यहाँसे ९ को बारडोलीके लिए रवाना हो जाऊँ।

बापूके आशीर्वाद

श्री महावीर
मारफत सेठ भीमजी कारा
चन्दावरकर रोड
बोरिवली

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६२४४) से

१. महावीर गिरिकी बहन

२०९. पत्र : सम्पूर्णानन्दको

४ दिसम्बर, १९४१

भाई सपूर्णानद,

आपका पत्र अभी मिला। आपके पत्रके पहले हि मैंने एक सज्जनके लिखते हुए लिखा की आपको टीका करने का पूर्ण अधिकार था। मेरे मनपर उसका कुछ बूरा असर नहिं पडा है। हा, मै मानता हू सहि की आपकी टीकाके लिये जरा भी आधार नहिं है। नमकके पीछे स्वतत्रता की ऐसे हि वाक् स्वातत्र्यके पीछे भी स्वतत्रता है। लेकिन यह तो चर्चाका विषय हूआ। काल सब चीज साफ कर देगा।

रही बात हिंदीकी। यह झगडा केवल निरर्थक और अज्ञानजन्य है। काग्रेसमे हिंदीका कोई शत्रु नहिं है। मै तो हो हि नहिं सकता। हा मेरी नीति भिन्न हो सकती है। अगर ऐसे हि हूआ तो सम्मेलनमें[1] मुझको क्या स्थान-हो सकता है? मै तो उसमे खीचा गया हू। मै आज दूर हो सकता हू। मै उर्दूको और फारसी लिपिको हिंदीके अतर्गत मानता हू। इदौरसे मै यह कहता आया हू। राष्ट्रभाषाको काग्रेसी नाम हिंदुस्तानी देनेवाले टडनजी है, अब क्या किया जाय? मेरा खयाल है कि वह प्रस्ताव उचित था। और था तो हमारे हिंदुस्तानीको हिंदीका पर्यायवाची मानना चाहिये। इसमें कुछ दोष है तो बताइये। राजेन्द्र बाबुकी हालत ऐसी नहिं है कि वे काशी जा सके। आबोहर तो जानेवाले है हि नहि। काका साहेब और श्रीमन्जी दा० अमरनाथजीको[2] मिलने जा रहे है। अब तो शायद टडनजी हि बाहर आयेंगे। वे कहेंगे सो होगा।

आपका,
मो० क० गांधी

मूल पत्रसे सम्पूर्णानन्द कलेक्शन। सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

१. अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन
२. देखिए "पत्र: अमरनाथ झाको", पृ० १२३।

२१०. भेंट: समाचार-पत्रोंको

वर्धागंज
४ दिसम्बर, १९४१

राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईके प्रश्नपर सरकार द्वारा जारी की गई विज्ञप्तिके[1] सम्बन्धमें आज तीसरे पहर पत्रकारोंको दी गई एक मुलाकातके दौरान महात्मा गांधीने कहा:

जैसा मैंने इस घटनाके पूर्व कहा है,[2] वैसा ही अब इसके बाद भी कहूँगा। मतलब यह कि जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, ऐसी कोई आशा नही है कि इस कारण मेरे रुखमें कोई अनुकूलता आयेगी या मैं इसकी कद्र करूँगा।

मै अपने विद्यार्थी-जीवनसे ही अंग्रेजोंका मित्र रहा हूँ और आज भी मित्र होनेका दावा करता हूँ। लेकिन इस मित्रताके कारण इस तथ्यकी ओरसे मेरी आँखें बन्द नही हो सकती कि अंग्रेजोंके प्रतिनिधियोंने भारतको अपना क्रीत दास बना रखा है। भारतको जितनी आजादी प्राप्त है वह गुलामोंकी आजादी है। यह आजादी बराबरीके दर्जेके लोगोंकी आजादी नही है, क्योंकि उस आजादीका ही दूसरा नाम पूर्ण स्वतन्त्रता है। श्री एमरीकी घोषणा गुलामीके इस रिसते जख्मको ठंडक नही पहुँचाती है, बल्कि उसपर मिर्च छिड़कती है। इसी परिप्रेक्ष्यमे मुझे इस रिहाईपर विचार करना है।

यदि भारत सरकारको यह विश्वास है कि भारतकी सभी दायित्वपूर्ण विचार-धाराओंके लोग युद्ध-प्रयत्नमे सहायता देनेको कृतसकल्प हैं तो इसका तर्कसगत निष्कर्ष यह होगा कि सविनय अवज्ञाकारी कैदियोंको जेलोंमे ही बन्द रखा जाये, क्योंकि उनका स्वर इस सबसे भिन्न है। इसलिए इस रिहाईका अर्थ मैं केवल यही लगा सकता हूँ कि सरकार ऐसी आशा कर रही है कि इन कैदियोंने जिस एकान्त और नजरबन्दीको आगे बढकर खुद ही अंगीकार किया उसके दौरान इनके विचार बदल

१. यह विज्ञप्ति ३ दिसम्बर, १९४१ को जारी की गई थी। इसमें कहा गया था: "भारत सरकारको पूरा विश्वास है कि भारतकी सभी दायित्वपूर्ण विचारधाराओंके लोग विजय प्राप्त करने तक सरकारके युद्ध-प्रयत्नमें सहायता देनेको कृतसंकल्प हैं। इसलिए सरकार इस निष्कर्षपर पहुँची है कि सविनय अवज्ञाकारी कैदियोंको, जिनके अपराध केवल औपचारिक या प्रतीकात्मक ढंगके हैं, रिहा किया जा सकता है। इस निर्णयको यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र कार्यान्वित किया जायेगा। कुछ प्रान्तोंकी विशेष परिस्थितियोंके कारण किंचित् विलम्ब हो सकता है। लेकिन भारत सरकारको आशा है कि इस वर्षकी समाप्तिके पूर्व ही भारत-भरके लगभग ऐसे सभी कैदी रिहा कर दिये जायेंगे। उनके साथ ही मौलाना अबुल कलाम आजाद और पण्डित जवाहरलाल नेहरू भी रिहा कर दिये जायेंगे।"

२. देखिए "वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको", पृ० १०२-३।

गये होगे। मैं आशा कर रहा हूँ कि जल्दी ही सरकारका यह भ्रम टूट जायेगा।

सविनय अवज्ञा पूरी तरह सोचे-विचारे बिना नही आरम्भ की गई थी। प्रति-शोधकी भावनासे तो यह बिलकुल नही आरम्भ की गई थी। यह आरम्भ की गई थी काग्रेसके इस दावेको सही सिद्ध करने के लिए—और मैं आशा करता हूँ कि इसे जारी भी रखा जायेगा इसी दावेको सच बताने के लिए—कि वह ब्रिटेनकी जनता तथा ससारको यह दिखा देगी कि भारतका कमसे-कम एक बहुत बडा लोक-मत, जिसकी प्रवक्ता काग्रेस है, भारतके युद्धमे शरीक होने के विरुद्ध है—इसलिए नही कि वह ब्रिटेनकी सेनाओके विनाशकी कामना करता है या नाजियो अथवा फासिस्टोकी विजय चाहता है, बल्कि इसलिए कि उसे विजेता या विजित किसीके भी रक्तपातके दोषसे बच निकलने की सम्भावना नही दिखाई देती है और भारतके स्वतन्त्र होने की तो बिलकुल नही।

काग्रेस भारतके करोडो मूक मानवोका प्रतिनिधित्व करने का दावा करती है और वह इसीके लिए प्रयत्नशील भी रही है। उसने अहिसाको पिछले बीस वर्षोंसे भारतकी आजादी हासिल करने की अपनी सतत नीति बना रखा है। सविनय अवज्ञा—चाहे अभी वह प्रतीकात्मक ही क्यो न हो—बन्द करने का मतलब एक नाजुक घडीमे अपनी इस नीतिका त्याग करना होगा। सरकारका दावा है कि काग्रेसके प्रतिकूल प्रयत्नोके बावजूद वह भारतसे धन-जनकी आवश्यक सहायता पूरे परिमाणमे प्राप्त कर रही है। इसलिए उसकी रायमे काग्रेसका विरोध एक नैतिक प्रयत्न और नैतिक विरोध-प्रदर्शन ही हो सकता है। खुद मैं तो इस स्थितिसे पूर्णत सन्तुष्ट हूँ, क्योकि मुझे पूरा विश्वास है कि इस नैतिक विरोध-प्रदर्शनसे ही समय आने पर ऐसे विरोधका जन्म होगा जो किसी दल-विशेषके प्रभुत्वके रूपमे नही, बल्कि भारतकी स्वतन्त्रता-प्राप्तिके रूपमे प्रतिफलित होगा। काग्रेसके सघर्षका सम्बन्ध भारतके एक-एक घटकके हितोकी रक्षासे है।

अब चूँकि काग्रेस-अध्यक्षके[1] जेलसे बाहर आने की उम्मीद है, इसलिए कार्य-समिति अथवा अ० भा० का० कमेटीकी बैठक बुलानी है या नही और बुलानी है तो कब बुलाई जाये, इस बातका फैसला तो वे स्वय करेगे। ये दोनो समितियाँ काग्रेसकी भावी नीति तय करेगी। मैं तो सविनय अवज्ञाका सचालन करने मे सेवाका एक तुच्छ साधन-मात्र हूँ।

फिर भी मैं नजरबन्दो तथा अन्य कैदियोके बारेमे दो शब्द कहना चाहूँगा। यह बात बडी विचित्र लगती है कि जो लोग अपनी ओरसे पहल करके जेल गये है उनको तो रिहा किया जा रहा है लेकिन उन लोगोको रिहा नही किया जा रहा है जिन्हे देशकी आजादीको अपनी जाती आजादीसे ज्यादा कीमती मानने के कारण, कोई मुकदमा चलाये बगैर या जेलकी सजा दिये बिना जेलोमे बन्द रखा

१. अबुल कलाम आजाद

जा रहा है। निश्चय ही कहीं-न-कही कोई भारी गडबड है। इसलिए मैं भारत सरकारके इस निर्णयपर मोद नही मना सकता।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ६-१२-१९४१

२११. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

५ दिसम्बर, १९४१

प्रिय जवाहरलाल,

आज तुम्हें जेलसे वाहरके पतेपर पत्र लिख पा रहा हूँ, यह सचमुच प्रसन्नताका विपय है। लेकिन यह प्रसन्नता क्षणिक ही है, क्योकि ये रिहाइयाँ मेरे मनको ठीक नही लग पाई है। जो भी हो, हमें इस नई मुसीवतका मुकावला तो करना ही है।

यह पत्र तुम्हें सिर्फ यह वताने को लिख रहा हूँ कि तुम्हारे प्रश्नका उत्तर देने में मैंने देर इसलिए की कि तुम्हारी रिहाईकी अफवाह फैली हुई थी।

तुम्हारे पत्र मैंने वहुत ध्यानसे पढे है। तुम्हारे निष्कर्षोसे मै सहमत हूँ और पूरे मामलेके वारेमे तुमने जिस उदारतासे काम लिया है वह मुझे वडा अच्छा लगा। फीरोज गाधीसे मेरी एक ही वार वातचीत हुई और उसमें उसने मेरा यह दृष्टि-कोण स्वीकार किया कि तुम्हारी सहमति और आशीर्वादके विना वह इन्दुसे विवाह करने की वात नही सोचेगा। इन्दुने जे० को लिखा कि वह यहाँ आ रही है और मुझसे भी मिलेगी। अव तो तुम वाहर आ ही गये हो और ज्यादा नही तो कमसे-कम कुछ दिन वाहर रहोगे। इसलिए इस मामलेको जैसा तुम्हें ठीक लगे उस ढगसे निवटा देना।

आशा है, हालमे मैंने जो वक्तव्य दिये है, वे तुम्हें अच्छे लगे होंगे। वताना कि कव यहाँ आ रहे हो। मौलानाने[1] आज टेलिफोन करके सूचित किया कि वे दो-तीन दिन वाद आ रहे हैं। मै ९ तारीखको महीने-भरके लिए वारडोली जाऊँगा। सरदारकी इच्छा है कि मै एक महीना गुजरातको दूँ। उनका इलाज चल रहा है—मुख्यत आहार-शास्त्रीय इलाज। आहार मैंने ही वताया है। मैं समझता हूँ, आहारवाले इलाजमे रहने से उन्हें दर्द कमसे-कम परेशान करता है। जहाँतक सम्भव हो, हमारी वातचीत और वैठकें वारडोलीमें ही होनी चाहिए। रिहाइयाँ एक चुनौती है। मुझे लगता है कि हमे कार्य-समिति और अ० भा० का० कमेटीकी वैठकें यथासम्भव जल्दीसे-जल्दी करनी चाहिए। लेकिन यह तो तुम्हें और मौलानाको तय करना है।

१. अबुल कलाम आजाद

यह पत्र किसी तरह थोड़ा समय निकालकर लिख पाया हूँ।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४१। सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२१२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम
५ दिसम्बर, १९४१

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला।

अब तू छूट गई है इसलिए तेरी और मेरी जिम्मेदारी बढ गई है। तेरे तुरन्त [जेल] जाने की बात अभी नही उठती। मैं इसपर सोच रहा हूँ।

मैं ९ को बारडोली जाऊँगा। इस बीच तू राजकोट हो आ और वहाँका काम पूरा करके बारडोली आ जाना। मैं तुझे वहाँसे जल्दी बाहर नही भेजूँगा।

मुझे लक्ष्मीबाईसे पूर्ण सन्तोष है। वह बहुत भली और विवेकशील महिला है।

आशा है, तेरा स्वास्थ्य ठीक होगा। और अधिक लिखने का समय नही है। नागपुर [जेल]से छूटे हुए सब लोग मिलने आये हैं। उस मण्डलीसे घिरा हुआ मैं यह लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४२१) से। सी० डब्ल्यू० ६८६० से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

२१३. पत्र : क० मा० मुंशीको

५ दिसम्बर, १९४१

भाई मुशी,

कन्हैयालाल वैद्य तुम्हारे पास जायेंगे। वे रतलामके बारेमे बतायेंगे। तुम रतलाम जाना और जो हो सके सो करना। वकीलके रूपमे जो सफलता मिलनी हो सो मिले, लेकिन तुम्हारे जाने से बेचारे कैदियोको सान्त्वना मिलेगी। वहाँके अधिकारी-वर्गसे मिलकर, अपने क्षेत्रके बाहर जाकर भी, दया-धर्मका प्रवर्त्तन करना।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ७६७१) से। सौजन्य क० मा० मुशी

२१४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

५ दिसम्बर, १९४१

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र और डॉक्टरकी रिपोर्ट मिली। इससे पहले महादेवके दो पत्र मिले थे। मेरे पहुँचने तक कोई हेर-फेर न किया जाये। हम डॉ० गिल्डरसे बातें करेंगे। मैं अपना विश्वास नही छोड सकता कि जो भोजन लिया जा रहा है, वह पर्याप्त है और उससे लाभ होना ही चाहिए। फिर भी डॉक्टरोकी जाँचका तो हमें आदर करना ही है। आराम लेने में कोई कमी मत आने देना। घूमना दोनो वक्त होना चाहिए। डॉक्टरकी इस सलाहका आदर करना कि जहाँतक हो सके चलते या लेटे रहो, बैठो कम। पट्टा तो तुम यहीसे लगाने लगे थे। परन्तु पावेलके पट्टेमें यदि कोई विशेषता हो तो वह भले ले लिया जाये।

मै कैदियोकी झझटमें फँस गया हूँ। तुमने मेरा बयान देखा होगा।[1]

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
स्वराज्य आश्रम
बारडोली

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २६३

२१५. तार : जवाहरलाल नेहरूको

वर्धा
६ दिसम्बर, १९४१

जवाहरलाल नेहरू
लखनऊ

कल पत्र लिखा था। तुम्हारा तार मिला। जब आ सकते हो आ जाओ। सरदारने बारडोलीका कार्यक्रम बहुत पहले ही निश्चित कर लिया था।[2] उनका शरीर जर्जर हो गया है। उनके शरीरकी

१. देखिए "भेंट: समाचार-पत्रोंको", पृ० १४५-४७।

२. अपने ४ दिसम्बर, १९४१ के तारमें जवाहरलाल नेहरूने और बातोंके साथ यह भी लिखा था: "बारडोलीमें कार्यक्रम रखने से क्या मौलाना और अन्य लोगोंको अधिक लम्बी यात्रा नहीं करनी पड़ेगी?"

देख-रेखके लिए एकमात्र मार्ग-दर्शक मैं ही हूँ। उन्हें परेशानीमें नही डालना चाहूँगा। लेकिन तुम्हारी और मौलानाकी राय ही अन्तिम होगी। स्नेह।

बापू

[अग्रेजीसे]
गाधी-नेहरू पेपर्स, १९४१। सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

२१६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागज
७ दिसम्बर, १९४१

जिस तेजीसे सत्याग्रहियोको जेलोसे छोडा जा रहा है उसे एक चुनौतीकी तरह स्वीकार करके उसपर विचार करने के लिए अ० भा० का० कमेटीकी बैठक बुलाई जानी चाहिए। स्पष्ट है कि भारत सरकार ऐसा मान रही है कि यदि कमेटीकी बैठक बुलाई गई तो बम्बईके निर्णयको, जिसका क्रियात्मक रूप मेरे निर्देशनमे चलने-वाले वर्त्तमान सत्याग्रहकी शक्लमे प्रकट हो रहा है, अवश्य बदल दिया जायेगा। इसलिए मैंने मौलाना साहबको यथासम्भव शीघ्रसे-शीघ्र कार्य-समिति और अ० भा० का० कमेटीकी बैठक बुलाने की सलाह दी है, लेकिन जबतक उस निर्णयको बदला नही जाता तबतक तो सविनय अवज्ञा चलनी ही है।

लेकिन मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि सविनय अवज्ञाकारी कैदियोको रिहा करने की सरकारी कार्रवाईके कारण आन्दोलनके सचालनमे कठिनाई आ गई है, लेकिन अगर हमे अपने लक्ष्यतक पहुँचना है तो हमे हर कठिनाईमे से रास्ता निकालना ही पडेगा। हमें अपना स्वत्व प्राप्त करने के लिए जैसी कठिनाइयोका सामना करना पड सकता है उनकी तुलनामे यह तो कुछ नही है।

अगर अ० भा० का० कमेटीकी बैठक होनी है—और होनी तो है ही—तो जबतक वह बैठक नही होती तबतक कार्य-समिति तथा अ० भा० का० कमेटीके सदस्योको सविनय अवज्ञा नही करनी चाहिए और न उन लोगोको करनी चाहिए जो बम्बईके निर्णयको बदलवाना चाहते हैं।

इनके सिवाय तो सविनय अवज्ञा अबाध रूपसे चलनी चाहिए। कहने की जरूरत नही कि बडा दिन, बॉक्सिग डे और नव वर्ष दिवसके अवसरपर आन्दोलन स्थगित रहेगा।

स्वभावत अब यह प्रश्न उठता है कि सविनय अवज्ञा निर्धारित सूत्रका[1] उच्चार करते हुए जिस तरह आम तौरपर की जाती है उसी तरह की जानी है या किसी और तरहसे।

१. अर्थात् "धन या जन किसी भी तरहसे ब्रिटेनके युद्ध-प्रयत्नमें सहायता देना गलत है। अहिंसक रूपसे युद्धका विरोध करना ही विरोधका एकमात्र योग्य तरीका है।" देखिए खण्ड ७३, पृ० १७०।

मैं सूत्रवाला तरीका अधिक पसन्द करता हूँ। इससे आन्दोलनको ऋजुता और सन्तुलन प्राप्त होता है। एक ही सूत्रका उच्चार बार-बार एक ही ढगसे करने मे बडी शक्ति छिपी हुई है। इससे सर्वसाधारण और विभिन्न लोगोका ध्यान एक समान विषयकी ओर केन्द्रित होता है। यह सूत्र कोई मामूली चीज नही है। यह युद्धके अन्तिम निर्णायक वस्तु माने जाने के प्रति एक सम्पूर्ण राष्ट्रके विरोधका प्रतीक है। यह धरतीपर शान्ति और मानव-जातिके प्रति सद्भावनाका सन्देश है। जो सूत्र आज अलग-अलग व्यक्तियो का सूत्र है वही कालान्तरसे जन-साधारणका सूत्र बन जायेगा, लेकिन अधिकारीगण प्रतीक-रूपमें सत्याग्रह करनेवालो को एक बार छोड देने के बाद अब शायद दोबारा इस नारेको दोहराने-भरके कारण उन्हे गिरफ्तार न करे।

उस हालतमें हमारे सामने दो रास्ते है यदि अधिकारी दोबारा गिरफ्तार न करे तो इससे निराश या हतोत्साह होने की जरूरत नही है। हमारा उद्देश्य जेल जाना नही है। तात्कालिक उद्देश्य वाणीकी स्वन्तत्रता है। यदि इस सूत्रके उच्चारपर कोई आपत्ति नही की जाती तो इसका मतलब यह है कि हम अपने लक्ष्यकी दिशामे कुछ आगे बढे है और मात्र गिरफ्तारीके लिए अपनी गिरफ्तारी करवाना मूर्खता होगी।

निराशा और उत्साहहीनता इसलिए पैदा होती है कि आम तौरपर काग्रेसियोने रचनात्मक कार्यक्रम तथा सविनय अवज्ञाके पारस्परिक अनिवार्य सम्बन्धको नही समझा है। यदि सविनय अवज्ञाके पीछे रचनात्मक कार्यक्रमका बल नही है तो सविनय अवज्ञा हमें कभी भी स्वराज्यकी मजिल तक नही ले जा सकती। रचनात्मक कार्यक्रमसे रहित सविनय अवज्ञा एक प्रकारकी हिंसा बन जाती है और अन्तमें उसका विफल होना निश्चित है।

इसके अलावा सविनय अवज्ञा जब सार्वजनिक हो तब भी उसमे वही लोग भाग ले सकते है जो शरीरसे ठीक है, लेकिन रचनात्मक कार्यक्रम तो सबके लिए है और कभी भी स्थगित नही किया जानेवाला है। यदि सारा देश इसे सच्चे मनसे अपना ले तो यही हमे स्वराज्य दिलाने के लिए पर्याप्त है। रचनात्मक कार्यक्रमके क्रियान्वयनका मतलब स्वराज्यका ढाँचा खडा करना है।

यदि रचनात्मक कार्यक्रममे जीवन्त श्रद्धा नही है तो मेरी परिकल्पनाकी सामूहिक अहिंसा बिलकुल बेमानी है।

मेरे विचारसे तो अहिंसापर आधारित स्वराज्य रचनात्मक कार्यक्रमकी एक परिणति है। इसलिए अधिकारीगण हमें जेल भेजे या न भेजे, हमे रचनात्मक कार्यक्रमको कार्यान्वित करने मे लगे रहना है।

मुझसे पूछा गया है कि रिहा किये गये सत्याग्रहियोको सभा करनी चाहिए या सभामें जाकर भाषण देने चाहिए या नही। उन्हे वैसा अवश्य करना चाहिए। मै उनसे तुरन्त दोबारा अवज्ञा करने की आशा नही करता। यह तो अशोभन जल्दबाजी होगी, लेकिन सामान्य सविनय अवज्ञा चलती रह सकती है। रिहा हुए सत्याग्रहियोको दम लेने की थोडी फुरसत मिलनी चाहिए। वे अपने-अपने क्षेत्रोमें सभाओमें बोले और वस्तुस्थितिका भी अध्ययन करे। सभाओमें वे आम परिस्थितिपर अपने विचार व्यक्त करें और काग्रेसकी युद्ध-विरोधी नीतिकी व्याख्या करने मे सकोच न करे।

प्रतीकात्मक सत्याग्रहका एक निश्चित अर्थ है, लेकिन अधिकारियोंको कांग्रेसियोंके भाषणपर उन्हें गिरफ्तार करने का पूरा हक है, भले ही उन भाषणोंके पीछे उनका इरादा सविनय अवज्ञा करने का न हो। औरोंकी बात तो जाने दीजिए, मौलाना साहब और पण्डित जवाहरलाल नेहरूको भी उन्होंने उनके भाषणोंके कारण ही गिरफ्तार किया था।

यह बता दूँ कि मुझे बाहरी कारणोंसे सविनय अवज्ञा स्थगित करने का कोई अधिकार नहीं है। यह तो कांग्रेस ही कर सकती है। खुद मेरे सामने तो दूसरा कोई रास्ता नहीं है।

शान्तिके प्रति प्रतिश्रुत व्यक्तिकी हैसियतसे इस नाजुक घड़ीमें अपनी युद्ध-विरोधी प्रवृत्ति स्थगित करने का मतलब मेरे लिए स्वयं अपने अस्तित्वको नकारना होगा।

इसलिए मुझे और मेरे-जैसा विचार रखनेवाले अन्य लोगोंको लोग भले ही गलत समझें या हमारे साथ इससे भी कुछ बुरा हो, लेकिन हमें अपने कर्मके द्वारा अपनी आस्थाकी अभिव्यक्ति देते रहना चाहिए और यह आशा करते रहना चाहिए कि अन्तमें सभी युद्धरत शक्तियाँ हमारे रास्तेको मनुष्यको पतनके गहनतम गर्त्तमें गिरानेवाले इस रक्तस्नानसे निकालनेवाला एकमात्र रास्ता मानकर उसे स्वीकार करेंगी।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ८-१२-१९४१

२१७. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

७ दिसम्बर, १९४१

प्रिय सी० आर०,

तुम्हारा हृदय-विदारक पत्र मिला। मैं तुम्हारे भाईकी हालतकी कल्पना अच्छी तरह कर सकता हूँ।

पत्र-व्यवहारका उल्लेख किये बिना मैंने प्रकाशम्को लिखा है। बेशक, तुम दोपहर बाद आओ और फिर जितना समय चाहो उतना लो। प्रस्तुत पत्र तुम्हें सिर्फ यह बताने को लिख रहा हूँ कि मेरे मनमें तुम्हारा खयाल किस तरह छाया हुआ है।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च]

तो तुम नहीं आ सके। मैंने तार कर दिया है। मुझे बारडोली जाना ही होगा। वल्लभभाईने विस्तारसे तैयारी कर रखी है। वे बहुत कमजोर हैं। आशा है,

तुमने लखनऊमें भाषण देने का कार्यक्रम रद्द कर दिया होगा। यह एक बडा खतरा उठाना है। जितनी जल्दी आ सकते हो, बारडोली आ जाओ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०९०२) मे, सौजन्य सी० आर० नरसिंहन्। जी० एन० २०८३ से भी

२१८. पत्र : कन्हैयालाल वैद्यको

सेवाग्राम
७ दिसम्बर, १९४१

भाई कनैयालाल,

मैंने तार दिया है। मुन्शीजी को मिले होंगे।[1] बहुत कामके लिये मैं तुम्हारे खतोका उत्तर नहि दे सका हू। कुछ कहने को भी नही था।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

२१९. आश्रमवासियोंके लिए

८ दिसम्बर, १९४१

एकादश[2] व्रतोसे फलित होनेवाले और सुव्यवस्थाके लिए अन्य उपनियम निम्न-लिखित है.

सब निवासी, स्थायी या अस्थायी, अपना एक भी क्षण निकम्मा नही जाने देंगे। यहा रहनेवाले आश्रमकी सब सामाजिक सेवामें हिस्सा लेगे और जब आश्रमका कुछ काम नही रहता है तब कातेंगे या रुईकी किसी क्रियामें अपना समय देंगे। स्वाध्याय रातको ८ से ९ तक कर सकते है और दिनमें [उस समय] जब आश्रमका कुछ कार्य नही दिया गया है और कमसे-कम एक घटे तक कात लिया हो।

बीमारी या अनिवार्य कारणके लिए कातने से मुक्ति होगी।

बगैर कारण कोई वार्तालाप नही करेंगे। ऊंची आवाजसे कोई नही बोलेंगे। आश्रममें नित्य शातिकी छाप पडनी चाहिये। ऐसे ही सत्यताकी छाप। एक-दूसरेके साथ हमारा व्यवहार प्रेममय और मर्यादामय होना चाहिये और अतिथि या देखनेवालोंके

१. देखिए "पत्र: क० मा० मुंशीको", पृ० १४८।

२. अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, शारीरिक श्रम, अस्वाद, अभय, सभी धर्मोंके प्रति समान आदर-भाव, स्वदेशी तथा किसी भी मनुष्यको अस्पृश्य न मानना

साथ सभ्यताका। कोई कैसा भी वेश पहनकर आवे, गरीब-से लगे, तो भी उनके प्रति आदरसे बरताव होना चाहिये। ऊच-नीच, गरीब-अमीरका भाव नही होना चाहिये। इसका मतलब यह नही है कि कोई नाजुक अतिथि आ जावे तो उसकी तरफसे ऐसी आशा रखे कि वह भी हमारी-जैसी सादगीसे रह सकता है। आतिथ्यमे अतिथिके रहन-सहनका हमे हमेशा खयाल रखना होगा। इसीका नाम सच्ची सभ्यता है। आश्रममे कोई अनजान मनुष्य आ जावे तो उसके आने का प्रयोजन पूछना चाहिये। और आवश्यकता होने पर व्यवस्थापकके पास उसको ले जाना चाहिये। यह धर्म सब आश्रममे रहनेवालो का है। क्योकि किससे पहली भेट ऐसे लोगोकी होगी, इसका हमे पता नही चल सकता।

हरएक मनुष्य जो-कुछ करे, सोच-विचारकर करे। जो-कुछ करे उसमे ध्यानावस्थित और तन्मय हो जाये। सब खाना औषध समझकर और शरीरको आरोग्यवान रखने के लिये खाया जाये और शरीरकी रक्षा भी सेवाकार्यके लिये ही की जाये। इस दृष्टिसे मनुष्यको मिताहारी अथवा अल्पाहारी होना चाहिये।

खाना जो मिले उससे सतोष माना जाये। कुछ खाना कच्चा या बिगडा हुआ लगे तो उसी समय शिकायत न की जाये, लेकिन बादमे विनयपूर्वक रसोडेके व्यवस्थापकको बताया जाये। बिगडा हुआ या कच्चा खाना छोड दिया जाये। खाने मे आवाज न की जाये। आहिस्ते-आहिस्ते मर्यादा और स्वच्छतापूर्वक ईश्वरका अनुग्रह मानते हुए खाना चाहिये।

हरएक मनुष्य अपने बरतन बराबर साफ करे और बताई हुई जगह पर रखे।

अतिथि या दूसरे अपनी थाली, लोटा, दो कटोरी और चम्मच साथमे लावे। अपनी लालटेन, बालटी और बिस्तरा भी। कपडे वगैरा आवश्यकतासे अधिक न होने चाहिये। कपडे सब खादीके होने चाहिये। अन्य वस्तुए यथासभव देहाती या कमसे-कम स्वदेशी होनी चाहिये।

सब हरएक वस्तु अपनी जगह पर रखे और कचरा कचरेकी जगहपर। पानीका भी दुर्व्यय न किया जाये।

पीने का पानी उबला हुआ रहता है और बरतन भी अतमे उबले पानीसे धोने चाहिये। कुएका कच्चा पानी पीने योग्य नही माना जाता है। उबलते हुए पानी और गरम पानीका भेद समझना आवश्यक है। उबलता हुआ पानी वह है जिसमें दाल पक सकती है, जिसमें से काफी भाप निकलती है। उबलता पानी कोई भी पी नही सकता।

कोई रास्तेमे न थूके, न नाक साफ करे। ऐसी क्रिया एकात जगहमे जहा किसीका चलना-फिरना नही होता वही की जाये।

पाखाना-पेशाब भी नियत जगहपर ही किया जाये। इन दोनो क्रियाओके बाद सफाई होना आवश्यक है। पाखानेका बरतन हमेशा अलग ही रहता है, रहना चाहिये। पाखाना जाकर साफ मिट्टीसे हाथ धोने चाहियें और धोने के बाद साफ कपडेसे पोछने चाहिये। पाखानेपर सूखी मिट्टी इतनी डालनी चाहिये कि उसपर मक्खी न बैठ सके और देखने मे सिर्फ सूखी मिट्टी ही नजर आवे।

पाखाना बैठते समय ध्यानसे बैठना चाहिये, जिससे बैठक न बिगडे और पाखाना अपनी जगहपर ही पडे। अंधेरेमें लालटेन जरूर ले जाये।

कोई चीज जिसपर मक्खी बैठ सकती है ढकना आवश्यक है।

दतौन एक जगह बैठकर शात चित्तसे करना चाहिये। खूब चबा-चबाकर बारीक कूची करके दात और मसूडोको आगे-पीछे घिसना चाहिये। घिसते समय जो थूक पैदा होता है थूक देना चाहिये। निगलना नही चाहिये। दात अच्छी तरह साफ होने के बाद दतौन चीरकर दोनो चीरोमे जीभ अच्छी तरह साफ करना और बादमें मुह खूब साफ करना और नाक भी पानी चढाकर साफ करना चाहिये। दतौनकी चीर पानीसे अच्छी तरह धोना और उसे एक बरतनमे इकट्ठी करना चाहिये। सूख जाने पर उसे जलाने के काममें लाना चाहिये। नियम यह है कि कोई चीज व्यर्थ नही जानी चाहिये।

निकम्मे कागजात जो दूसरी तरफ लिखने के काममे नही आ सकते उन्हे जला देना चाहिये। कागजके साथ और कोई चीज नही मिलानी चाहिये।

भाजी वगैरा साफ करने से जो कचरा बचता है उसे अलग रखकर खाद बनाना चाहिये।

फूटा काच एक निश्चित जगह किसी खोकेमें डाला जाये, इधर-उधर हरगिज नही।

कोई आश्रम देखने को आते है अथवा हमारे अतिथि होते है तो उनसे हम मुहब्बत करे। उनको परायापन नही लगना चाहिये।

आश्रममें सब वस्तु अपनी जगहपर होनी चाहिये। और कोना-कोना साफ होना चाहिये। दरवाजे पर धूल नही होनी चाहिये। वह [फिसलने लायक] चिकने नही होने चाहिये।

जो काम जिसके सिर है उसे वह बडी सावधानीसे करे।

सामुदायिक काममें सब पूरी हाजिरी भरे, बरतन माजने में खूब सफाई होनी चाहिये।

पाखाने हमेशा सूखे होने चाहिये। मैलेपर सूखी धूल हमेशा होनी चाहिये।

पानीकी कोठीके नजदीक बहुत पानी रहता है। वह ठीक नही है। खाना हमेशा ढका होना चाहिये। मक्खी न बैठने पावे।

खानेमें सब अस्वाद-व्रत ध्यानमें रखे और सब वस्तु औषध समझकर खाये। कोई समय [कभी] कुछ कम मिले तो अस्वस्थ न बने।[1] जो मिले वह ईश्वर-कृपा समझकर ग्रहण करे।

प्रार्थनामें जो-कुछ है उसका अर्थ बराबर समझें। आश्रमकी सब वस्तु निजी है ऐसा समझकर उसकी रक्षा करे और उसको इस्तेमाल करे।

बापूकी छायामें, पृ० ३८४-८७

१. क्षुब्ध न हों

२२०. पत्र : आर० एम० सान्यालको

सेवाग्राम
८ दिसम्बर, १९४१

प्रिय प्रोफेसर,

जैसा कि आपको मालूम है, मुझसे जो बन सकता है वह सब कर रहा हूँ। मेरा खयाल है कि समय आने पर आपके भाईको संयुक्त प्रान्त भेज दिया जायेगा। रिहाई एक अलग और कठिन बात है। इसपर आपने मेरा वक्तव्य[1] पढा होगा।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

२२१. पत्र : सतीशचन्द्र दासगुप्तको

८ दिसम्बर, १९४१

प्रिय सतीश बाबू,

फाइलको[2] पढकर अपने उत्तरके साथ वापस भेज दो।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजीसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. देखिए पृ० १५०-५२।

२. फाइलमें अन्नदाशंकर चौधरी द्वारा भेजे गये अखिल भारतीय चरखा संघके पाँच दस्तावेज थे।

२२२. पत्र : मगनलाल प्रा० मेहताको

८ दिसम्बर, १९४१

चि० मगन,

तेरा पत्र मिला। यदि किसीका भाई पागल हो और वह परेशानीमें डाल दे तो भी उसे छोडा थोडे ही जा सकता है? मान लो, यदि हमारा अपना ही लडका ऐसा हो जाये तो हम उसका क्या करेंगे? रतु[1] जब भाग गया था, तब डॉक्टर[2] बेचैन हो गये थे और उसको खोजकर ही उन्होंने चैनकी साँस ली थी। मैं यह नही कहता कि प्रभाशकर[3] सच कह रहा है। अगर वह इतना पागल नही है तो यह तो अच्छी ही बात है। लेकिन अगर वह इससे बदतर है, तो तेरा जाना अच्छा ही कहा जायेगा। सम्भव है कि तेरे वहाँ जाने से ही वह शान्त हो जाये। बच्चोंको सुरक्षित रखनेके लिहाजसे उन्हें अलग रखा जा सकता है। वे मजुलाके साथ रहें और तू रतिलालको लेकर कही और रहे। और यहाँ तो आ ही सकता है।

मेरी नजरमें ये व्यक्ति है, इनसे मिलना। ये तेरे बारेमें जानते है। मैंने इन्हे लिखा था :

दौलतराम सुन्दरजी दवे, दूसरी मजिल, ३५५ विट्ठलभाई पटेल रोड।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२४)से। सौजन्य : मजुलाबहन म० मेहता

२२३. पत्र : पुरुषोत्तम का० जेराजाणीको

८ दिसम्बर, १९४१

भाई काकूभाई,

बहनोंके सम्बन्धमें मुझे तो तुम्हारी सलाह पसन्द आई है। जाजूजी के साथ बात नही की है। उनसे मिल नही सका हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०८५२) से। सौजन्य पुरुषोत्तम का० जेराजाणी

१ और २. मगनलाल मेहताके भाई रतिलाल मेहता और पिता प्राणजीवनदास मेहता

३. रतिलाल मेहताके श्वसुर प्रभाशंकर पारेख

२२४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

वर्धागज

९ दिसम्बर, १९४१

आज अपनी भौतिक शक्तिके मदमे चूर विश्व-शक्तियाँ स्वय मनुष्य द्वारा प्रज्वलित ज्वालामे आवेष्टित है और उन्हे यह भी पता नही है कि वे किस चीजके लिए लड रही है। ऐसे समयमे इस बातका विचार करना कि खिदमतगारोके सिरमौर बादशाह खान-जैसे लोग शान्तिके हित और स्वतन्त्रता-सघर्षमे अहिंसात्मक साधनोसे प्रभावकारी रूपसे योगदान करने की योग्यता प्राप्त करनेके निमित्त क्या कर रहे है, मनको बडी शीतलता प्रदान करता है और हमारी वृत्तियोको ऊर्ध्वमुखी बनाता है। अहिंसामे उनकी अटूट आस्था है, यद्यपि अबतक इसके सभी फलितार्थोका उन्हे पूरा एहसास नही हो पाया है। पिछले कुछ महीनोसे वे खुदाई खिदमतगारोके अहिंसात्मक प्रशिक्षणके लिए छोटे-छोटे शिविरोका आयोजन करते रहे है। लेकिन नवम्बरके तीसरे हफ्तेमें उन्होने एक बडे-से शिविरका आयोजन किया,[1] जिसमे पजाब, कश्मीर और बलूचिस्तानके पड़ोसी कार्यकर्त्ताओको भी आमन्त्रित किया था। चरखा इस शिविरकी एक महत्त्वपूर्ण प्रवृत्ति था। तीन सौ से अधिक चरखे रोज चलते थे। शिविरमे धनुष तकली भी दाखिल की गई। उसका सस्तापन और हर गाँवमे आसानीसे बनाये जा सकने की उसकी खूबी सबको जँची। आसपासके गाँवोमे सफाईका काम किया गया और अहिंसाको समझाते हुए अनेक भाषण दिये गये। कबायलियोसे शान्ति और अहिंसाका पालन करनेका अनुरोध करते हुए एक प्रस्ताव पास किया गया। ब्रिटिश क्षेत्रमे पड़नेवाले कबायलियोके बीच बाँटनेके लिए प्रस्तावकी बहुत-सी प्रतियाँ छपवाई गईं। यह है शिविरकी दिनचर्या :

६ बजे सुबह नमाजके लिए अजान, ६ बजेसे ७-३० बजे सुबह तक नमाज, ७-३० से ७-४५ तक प्रातःकालीन व्यायाम, ७-४५ से ८ बजे तक चाय, ८ बजेसे १०-५५ तक गाँवोकी सफाई, ११ बजेसे १२ बजे दिन तक स्कूल, १२ बजेसे २ बजे तक दिनका भोजन और विश्राम, २ बजेसे ३-३० तक कताई, ३-३० से ४-३० तक सार्वजनिक सभा, ४-३० से शामके ५ बजे तक ध्वजवन्दन, ५ बजेसे ७ बजे शाम तक आपसी चर्चा, ७ बजेसे ८ बजे तक रातका भोजन, ८ बजेसे रात ९ बजे तक हाजिरी।

गाँवोकी सफाईका काम बहुत व्यवस्थित ढगसे किया गया। कार्यकर्त्ताओको कई मण्डलियोमे बाँट दिया जाता था। सभी मण्डलियोके अपने-अपने झाड़ू होते थे। झाड़ू

१. शिविरके निमित्त भेजे गाधीजी के सन्देशके लिए, देखिए पृ० ११९।

कम पडनेपर गाँववाले भी जुटा देते थे और इस स्नेहपूर्ण सेवा-कार्यमे खुद भी खिदमतगारोका हाथ बँटाते थे। वे लोग थानेमे भी झाड़ू लगाना नही छोडते थे। थानेके अधिकारी कृतज्ञतापूर्वक इस सेवाको स्वीकार करते थे।

१६ से २२ नवम्बर, अर्थात् ७ दिनो तक शिविरमे इसी तरह काम होता रहा। दलमे लगभग २० हिन्दू और २ महिलाएँ थी। बादशाह खान रुग्ण होते हुए भी हर काममें शरीक होते थे। शिविर अत्यन्त सादा था। उसमे कोई नौकर नही था। एक डॉक्टरने अपनी सेवा अर्पित की थी, जो काफी उपयोगी सिद्ध हुई, क्योकि कई लोग मलेरियासे पीडित थे। सरकारने भी कुछ दवाओके साथ एक डॉक्टर भेजा था।

दैनिक आहार निम्न प्रकार था: सुबहके ७-४५ बजे चाय और रोटी, दोपहर १२ बजे गेहूँ और मकईकी रोटी और दाल या तरकारी, शामके ७ बजे वही।

शिविरमें सीमा प्रान्त-भरसे लगभग पाँच सौ प्रतिनिधि और अतिथि शामिल हुए थे। उन्हे छोटे-छोटे तम्बुओमे ठहराया गया था। इन तम्बुओमे बगलके परदे नही थे। शिविरके आयोजनमें कुल लगभग १५०० रुपयेका खर्च बैठा। कांग्रेसी तथा अन्य लोग इस शिविरकी सादगी, मितव्ययिता और व्यवस्थाका अनुकरण करके काफी लाभान्वित हो सकते है।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १२-१२-१९४१

२२५. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
९ दिसम्बर, १९४१

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। आज रात राजेन बाबूके साथ बारडोलीके लिए रवाना हो रहा हूँ।

तुम जितनी जल्दी हो सके आ जाओ।

मौलाना साहबने तार दिया है कि कार्य-समितिकी बैठक १८ तारीखको बारडोलीमें होगी। मैने उन्हें सुझाव दिया है कि अगर सूचना प्रसारित न की गई हो तो बैठक २३ को रख ले, क्योकि १७, १८ और १९ को मुझे कई सभाओमे शरीक होना है। लेकिन फैसला मैने मौलाना साहबपर ही छोड दिया है।

आशा है, मेरा पत्र तुम्हें मिल गया होगा।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]
गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४१। सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२२६. पत्र : वियोगी हरिको

९ दिसम्बर, १९४१

भाई वियोगी हरि,

तुम्हारा खत मिला। गोशाला बनाओ। तुमारे पास अच्छा गोपाल होना चाहिये। वहा मकान बनने देंगे या नही, यह प्रश्न है।

वहा एक मास प्रतिवर्ष देना मुझे प्रिय तो लगेगा। हो सके तो आगामी नवेंबर या अक्तूबरमे दू। यह बात पेटमे रखना।

कागज विभाग बध नहि करना। अच्छे लडके तैयार होवे उनको हमारे रख लेने चाहिये।

माधवप्रसाद बहुत उदार है। उनको मै लिखता तो रहता हू।

विवरण मेरे साथ ले जाता हू।

जो सिक्ख धर्मका स्वीकार करते है वे हरिजन नहि माने जाय।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८०)से

२२७. पत्र : अमरनाथ झाको

बारडोली
१२ दिसम्बर, १९४१

भाई अमरनाथजी,

आपका खत मिला है। काका साहेब और श्रीमनजी आपके पास आनेवाले थे इसलिये मैंने अगले खतका उत्तर नहिं लिखा था।

काका साहेबने सब हाल सुनाये। देखे टडनजी क्या कहते है। किसी हालतमे झगडेसे हम बचे।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२६१)से

२२८. 'रचनात्मक कार्यक्रमका मर्म और महत्त्व'[1]

[१३ दिसम्बर, १९४१][2]

प्रस्तावना

रचनात्मक कार्यक्रमको दूसरे शब्दोंमें मत्यमय और अहिंसात्मक साधनो द्वारा पूर्ण स्वराज्यका निर्माण कह सकते है और यही इस कार्यक्रमका अधिक सटीक वर्णन भी होगा।

हिंसात्मक और इसलिए अनिवार्यत असत्यमय साधनो द्वारा तो तथाकथित स्वतन्त्रताका प्रयास कितना दुःखदायी रहा है, यह हम भली-भाँति जानते है। वर्त्तमान युद्धमें सम्पत्ति, जीवन और सत्यका प्रतिदिन कैसा भयकर सहार हो रहा है, यह हमारे सामने है।

सत्य और अहिंसाके द्वारा प्राप्त पूर्ण स्वतन्त्रताका अर्थ राष्ट्रके प्रत्येक घटककी स्वतन्त्रताकी सिद्धि है — चाहे वह किसी धर्म, जाति या रगका हो और चाहे उसकी हैसियत जितनी छोटी हो। यह स्वतन्त्रता कभी भी वर्जनशील नही होती। इसलिए यह राष्ट्रके विभिन्न घटकोके अथवा विभिन्न राष्ट्रोके परस्परावलम्बनके आदर्शसे भी पूर्णत सगत है। जिस प्रकार हमारी खीची कोई भी रेखा यूक्लिड द्वारा परिभाषित रेखाकी तुलनामे अधूरी ही रहती है, उसी प्रकार सैद्धान्तिक आदर्शको हम व्यवहारमें तो पूर्ण रूपसे प्राप्त नही ही कर पायेंगे। इसलिए पूर्ण स्वराज्य उसी सीमातक पूर्ण होगा जिस सीमातक हम सत्य और अहिंसाको अपने आचरणमे उतार सकेंगे।

पाठक पूरे रचनात्मक कार्यक्रमका एक नक्शा अपने मनमे खीचकर देखे तो वे मेरी यह बात सहज ही मान लेंगे कि अगर इस कार्यक्रमपर सफलतापूर्वक अमल किया जा सके तो इसके फलस्वरूप हमें वह स्वतन्त्रता अवश्य प्राप्त होगी जो हम चाहते है। श्री एमरीने कहा है कि भारतके प्रमुख दलोके बीच हुए समझौतेका

१ और २. महात्मा, जिल्द ६ के अनुसार 'कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम : इट्स मीनिंग ऐण्ड प्लेस' शीर्षक जिस पुस्तिकाका अनुवाद यहाँ दिया जा रहा है उसे गाधीजी ने वर्धासे बारडोली जाते हुए रेलगाड़ीमें लिखा था। गाधीजी सेवाग्रामसे ९ दिसम्बर, १९४१ को चले थे और बारडोली १० दिसम्बर, १९४१ को पहुँचे थे। लेकिन १३ दिसम्बर १९४१ को मीराबहनके नाम अपने पत्रमें उन्होंने लिखा : "मैं लेखन-कार्यमें डूबा हुआ था। वह अभी-अभी समाप्त हुआ है।" स्पष्ट है कि उन्होंने लिखना आरम्भ किया रेलगाड़ीमें और पूरा किया बारडोलीमें।

यहाँ पुस्तिकाके जिस पाठका अनुवाद दिया जा रहा है वह "पूर्णत संशोधित" है। संशोधित आवृत्तिकी तिथि "पूना १३-११-१९४५" बताई गई है। प्रस्तावना और दो परिशिष्ट १३ नवम्बर, १९४५, १६ जनवरी, १९४६ और २७ जनवरी, १९४८ के अन्तर्गत दिये गये है।

सम्मान किया जायेगा। इसीको यदि मै अपनी भाषामे रखूँ तो कहूँगा कि साम्प्रदायिक एकताकी — जो रचनात्मक कार्यक्रमकी सिर्फ एक मद है — सिद्धिके बाद हमारे बीच होनेवाले किसी भी समझौतेका अग्रेजोको सम्मान करना पडेगा। हमे श्री एमरीकी ईमानदारीमे शक करने की जरूरत नही है, क्योकि यदि ऐसी एकता ईमानदारीके साथ, अर्थात् अहिंसात्मक साधनसे, सम्पादित की जा सके तो वह अपने-आपमे एक ऐसी बडी शक्ति होगी कि हमारी आपसी सहमतिसे पेश की गई किसी माँगको स्वीकार करने के अलावा अग्रेजोके सामने कोई रास्ता ही न होगा।

इसके विपरीत हिंसाके बलपर प्राप्त की जानेवाली स्वतन्त्रताकी कोई आदर्शभूत तो क्या, पूर्ण परिभाषा भी नही है। कारण, ऐसी स्वतन्त्रतामे यह बात सहज ही समाई हुई होती है कि उसमे प्रभुता राष्ट्रके उसी पक्षकी होगी जो हिंसाका सबसे अधिक प्रभावकारी उपयोग कर सकता है। इसमे पूर्ण समानताकी — चाहे वह आर्थिक हो या अन्य प्रकारकी — कोई कल्पना ही नही की जा सकती।

लेकिन अभी तो मेरा उद्देश्य पाठकोको यह समझाना है कि हमारे अहिंसक प्रयत्नमे रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल करना क्यो जरूरी है। इसलिए स्वतन्त्रता-प्राप्तिकी दृष्टिसे हिंसाके निष्प्रभाव होने के बारेमे मैंने जो दलील दी है, उसे स्वीकार ही कर लिया जाये, यह मेरे इस उद्देश्यके लिए जरूरी नही है। मेरे इस प्रयत्नसे यदि पाठक यह स्वीकार कर ले कि राष्ट्र द्वारा इस कार्यक्रम पर पूरा-पूरा अमल किये जाने पर निश्चय ही राष्ट्रके तुच्छसे-तुच्छ घटकको भी स्वराज्य प्राप्त हो सकता है, तो मुझे उनके यह मानने पर कोई आपत्ति नही होगी कि ऐसा स्वराज्य हिंसाकी योजनाके अन्तर्गत भी सम्भव है।

अब हम रचनात्मक कार्यक्रमके विभिन्न अगोपर विचार करे।

१. साम्प्रदायिक एकता

साम्प्रदायिक एकताकी आवश्यकता सब स्वीकार करते है। लेकिन सभी यह नही जानते कि इस एकताका मतलब राजनीतिक एकता, जो ऊपरसे थोपी जा सकती है, नही है। यह हृदयकी ऐसी एकता है जो कभी टूट नही सकती। ऐसी एकता प्राप्त करने के लिए पहली जरूरी बात तो यह है कि हर काग्रेसीको — चाहे वह किसी भी धर्मका अनुयायी हो — हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी आदि या सक्षेपमें कहे तो हिन्दू और गैर-हिन्दू, सबका प्रतिनिधि होना चाहिए। उसे हिन्दुस्तानके करोडो लोगोमे से प्रत्येकके साथ तादात्म्यका अनुभव करना चाहिए। ऐसा तादात्म्य सम्पादित करने के लिए हरएक काग्रेसी अपनेसे इतर धर्मको माननेवालो के साथ मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करे। उसके हृदयमे दूसरे धर्मोंके प्रति भी वैसा ही सम्मानका भाव होना चाहिए जैसा स्वय अपने धर्मके प्रति है।

ऐसी सुखद स्थितिमे हमे स्टेशनोपर 'हिन्दू पानी' और 'मुस्लिम पानी', 'हिन्दू चाय' और 'मुस्लिम चाय'-जैसी शरमानेवाली आवाजे सुनने को नही मिलेगी। स्कूलो और कालेजोमे हिन्दुओ और गैर-हिन्दुओके पानी पीनेके लिए अलग-अलग

कमरे और बरतन नही होगें। किसी सम्प्रदाय-विशेषके लिए अलग स्कूल, कॉलेज और अस्पताल नही होगें। ऐसी क्रान्तिका श्रीगणेश कांग्रेसियोको करना होगा और इस सही आचरणके पीछे कोई राजनीतिक हेतु नही होना चाहिए। राजनीतिक एकता तो ऐसे सही आचरणका एक सहज परिणाम होगी।[1]

हम बहुत दिनोंसे ऐसा सोचने के अभ्यस्त रहे हैं कि सत्ता तो विधानसभाओंके माध्यमसे ही प्राप्त होती है। मैं इस विश्वासको भारी भूल और आलस्य या किसी व्यामोहका परिणाम मानता आया हूँ। ब्रिटेनके इतिहासके सतही अध्ययनके कारण हम ऐसा मानने लगे हैं कि सत्ता ससदोसे छनकर जनता तक पहुँचती है। सचाई यह है कि सत्ता तो जनताके ही पास होती है। हाँ, वह कुछ समयके लिए अपने चुने हुए प्रतिनिधियोको अपनी वह सत्ता सौंप अवश्य देती है। जनतासे अलग ससदोकी अपनी कोई सत्ता नही होती, बल्कि उनका अस्तित्व तक नही होता। पिछले इक्कीस वर्षोसे मैं जनताको यही सीधा-सरल सत्य समझाने की कोशिश करता रहा हूँ। सविनय अवज्ञा सत्ताका भण्डार-गृह है। जरा उस स्थितिकी कल्पना करके तो देखिए जब एक पूरा राष्ट्र विधान-मण्डलके कानूनोका पालन करने को अनिच्छुक हो और कानूनोका पालन न करने के बदले उसे जो भी यातना मिलनेवाली हो उसे सहने को तत्पर हो। ऐसा राष्ट्र सम्पूर्ण वैधानिक तथा कार्यकारी तन्त्रको ठप कर देगा। पुलिस और सेना चाहे जितनी शक्तिशाली हो, उसका उपयोग अल्पसख्यकोको ही दबाने मे किया जा सकता है, लेकिन पुलिस या सेना द्वारा किया गया कैसा भी बल-प्रयोग चरम कष्ट सहने को तत्पर राष्ट्रके सकल्पको नही डिगा सकता।

और ससदीय कार्य-प्रणाली किसी कामकी तभी है जब ससद-सदस्य बहुमतकी इच्छाके अनुसार बरतने को तैयार हो। दूसरे शब्दोमे, ससदीय प्रणाली परस्पर एक-दूसरेके अनुकूल समुदायोके बीच ही किसी हदतक प्रभावकारी होती है।

यहाँ भारतमें पृथक् निर्वाचक-मण्डलोका गठन किया गया है, जिसके फलस्वरूप देशकी जनता परस्पर-विरोधी कृत्रिम समूहोमें बँट गई है। इस पृथक् निर्वाचक-मण्डलीय व्यवस्थाके अधीन हम ससदीय शासन-प्रणालीको चलाने का दिखावा कर रहे हैं। इन कृत्रिम इकाइयोके किसी एक मचपर ला खडे कर दिये जाने से सजीव एकता कभी नही पैदा हो सकती। ऐसे विधानमण्डल काम कर सकते हैं, किन्तु वे आपसी खींचतान और शासको द्वारा — चाहे वे कोई हो — फेंके गये सत्ताके टुकडोके बँटवारेके लिए एक यन्त्रसे अधिक कुछ नही हो सकते। ये शासक लौह दण्डके जोरपर शासन करते हैं, और परस्पर-विरोधी तत्त्वोको एक-दूसरे पर टूट पडने से रोकते हैं। ऐसी अपमानजनक व्यवस्थासे पूर्ण स्वराज्य भी कभी जन्म ले सकता है, इसे मैं असम्भव मानता हूँ।

१. प्रथम संस्करणमें यहाँ यह अनुच्छेद भी है: "ऐसी हार्दिक एकताका फलितार्थ चौंका देनेवाला लग सकता है, यद्यपि यह एक तर्कसंगत आवश्यकता है। दूसरे धर्मोके लोगोंके विरुद्ध कांग्रेसी संसदीय सत्ता प्राप्त करने की कोशिश नहीं कर सकते। इसलिए जबतक ये झगड़े कायम हैं तबतक कांग्रेसी संसदके अखाड़ेसे दूर ही रहेंगे।"

यद्यपि विधानमण्डलोके विषयमे मेरे विचार इतने दृढ है, फिर भी मै इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि जबतक निर्वाचित सस्थाओके लिए अवाछनीय उम्मीदवार हमारे बीच मौजूद है तबतक इन सस्थाओमे प्रतिक्रियावादियोको प्रवेश पाने से रोकने के लिए काग्रेसको अपने उम्मीदवार खडे करते रहना चाहिए।

२. अस्पृश्यता-निवारण

हिन्दू-धर्मको इस कलक और अभिशापसे मुक्त कराने की आवश्यकता विस्तारसे समझाने की जरूरत अब नही रह गई है। इस क्षेत्रमे काग्रेसियोने निश्चय ही बहुत-कुछ किया है, लेकिन मुझे दु खके साथ कहना पडता है कि बहुत-से काग्रेसी कार्य-क्रमके इस अगको मात्र एक राजनीतिक आवश्यकता मानते रहे है, जब कि सचाई यह है कि जहाँतक हिन्दुओका सम्बन्ध है, हिन्दू-धर्मके अस्तित्वके लिए यह अनिवार्य आवश्यकता है। यदि हिन्दू काग्रेसी स्वय इस कार्यके महत्त्वकी दृष्टिसे इसे अपने हाथोमें ले तो वे तथाकथित सनातनियोको आजतक की अपेक्षा अधिक व्यापक रूपसे प्रभावित कर पायेगे। उन्हे सनातनियोके पास तनकर नही, बल्कि जैसा कि अहिसा-धर्मको शोभा देता है, उनके मित्र बनकर जाना चाहिए। और जहाँतक हरिजनोका सम्बन्ध है, हरएक हिन्दूको उनके सुख-दु खको अपना बना लेना चाहिए और आज वे जिस भयकर अलगावकी हालतमे —— ऐसे भयावह अलगावकी हालतमे जैसा आजतक भारतके अतिरिक्त ससारके और किसी हिस्सेमे देखने को नही मिला है —— जी रहे है उसमे उन्हे आगे बढकर अपना मित्र बनाना चाहिए। मै अनुभवसे जानता हूँ कि यह कार्य कितना कठिन है। लेकिन यह स्वराज्यके भवनको खडा करने के प्रयत्नका आवश्यक अग है। और स्वराज्य-प्राप्तिका मार्ग बडा कठिन और सँकरा है। इसमे बहुत-सी फिसलन-भरी चढाइयाँ है और न जाने कितनी गहरी खाइयाँ है। उन सबको सुदृढ कदमोसे पार करना होगा। तभी हम चोटी तक पहुँच सकते है और स्वतन्त्रताकी ताजी हवामे साँस ले सकते है।

३. मद्य-निषेध

यद्यपि साम्प्रदायिक एकता और अस्पृश्यता-निवारणकी ही तरह मद्य-निषेध भी काग्रेसके कार्यक्रममे १९२० से ही शामिल रहा है, किन्तु इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सामाजिक तथा नैतिक सुधारमे काग्रेसी जितनी रुचिसे काम कर सकते थे उतनी रुचिसे उन्होने काम नही किया है। यदि हमे अहिंसक प्रयत्नमे अपना लक्ष्य प्राप्त करना है तो हम शराब और अन्य नशीले पदार्थोके अभिशापसे ग्रस्त लाखो नर-नारियोके भाग्यको भावी सरकारके भरोसे नही छोड सकते।

इस बुराईको मिटाने मे डॉक्टर-वैद्य बहुत प्रभावकारी योगदान कर सकते है। उन्हे पियक्कडो और अफीमचियोको इस बुराईसे विमुख करने के उपाय ढूँढने है।

सुधारका यह क्षेत्र स्त्रियो और विद्यार्थियोको सेवाका एक विशेष अवसर प्रदान करता है। नशाखोरोकी विभिन्न प्रकारसे स्नेहमय सेवा करके वे इनपर अपना ऐसा

प्रभाव कायम कर सकते है जिससे उन्हें इस कुटेवको छोड़ने की उनकी मिन्नतोंको सुनना ही पड़े।

कांग्रेस कमेटियाँ ऐसे क्रीडा-घर खोल सकती है जहाँ श्रमिक अपने थके अगोंको विश्राम दे सकें, उन्हे सस्ता और स्वास्थ्यवर्धक जलपान मिल सके और उपयुक्त खेल सुलभ हो। यह सब बड़ा ही मोहक और मनुष्यको ऊपर उठानेवाला कार्य है। स्वराज्य प्राप्त करने का अहिंसक मार्ग बिल्कुल नया है। इसमें पुराने मूल्योंका स्थान नये मूल्य लेते हैं। हिंसक मार्गमें शायद ऐसे सुधारोंके लिए कोई स्थान न हो। हिंसक मार्गमे विश्वास रखनेवाले लोग अधीरतावश — और इजाजत हो तो कहूँ, अज्ञानवश — ऐसे कार्योंको यह सोचकर टाल देते है कि जब स्वतन्त्रता हासिल होगी तब यह सब किया जायेगा। वे यह भूल जाते है कि स्थायी और स्वस्थ मुक्ति अन्दरसे, आत्म-शुद्धिसे, प्राप्त होती है। रचनात्मक कार्यकर्त्ता यदि कानूनी मद्य-निषेधका मार्ग प्रशस्त न भी कर सके तो उसे सुगम तो बना ही देते है।

४. खादी

खादी एक विवादास्पद विषय है। बहुत-से लोग समझते है कि खादीकी हिमायत करके मैं स्वराज्यकी नौकाको समयकी हवाके खिलाफ चला रहा हूँ और एक-न-एक दिन निश्चय ही मैं उसे डुबा दूंगा। उनके अनुसार मैं देशको अन्ध-युगमें लिये जा रहा हूँ। इस सक्षिप्त विवेचनमें मैं खादीका पक्ष विस्तारसे नही समझाने जा रहा हूँ। इसके पक्षमें अन्यत्र मैं काफी दलीलें दे चुका हूँ। यहाँ तो मैं यही दिखाना चाहता हूँ कि खादी-कार्यको आगे बढाने के लिए हर कांग्रेसी, बल्कि कहना चाहिए हर भारतीय, क्या कर सकता है। खादीका मतलब देशमें आर्थिक मुक्ति और सबके बीच समानताकी स्थापनाका शुभारम्भ है। गुडकी मिठास तो खाने पर ही मालूम होती है। हर स्त्री-पुरुष इसे आजमाकर देखे तो मैं जो-कुछ कह रहा हूँ, उसके सत्यका बोध उसे स्वय हो जायेगा। खादीको इसके सभी फलितार्थोंके साथ अपनाना चाहिए। खादीका मतलब है सम्पूर्ण स्वदेशी मनोवृत्ति, भारतमें लोगोंको जीवनके लिए आवश्यक सभी वस्तुएँ सुलभ कराने का सकल्प और सो भी ग्रामवासियोंके श्रम तथा बुद्धिके बल पर। इसका मतलब आज जो प्रक्रिया चल रही है उसे उलट देना है। तात्पर्य यह कि भारत तथा ग्रेट ब्रिटेनके आधे दर्जन नगर भारतके सात लाख गाँवोंके शोषण और विनाशके सहारे जिये, इसके बजाय ये गाँव बहुत हदतक स्वावलम्बी होंगे और भारतके नगरोंकी, बल्कि बाहरी दुनियाकी भी सेवा उस हदतक स्वेच्छासे करेंगे जिस हदतक वह सेवा दोनो पक्षोंके लिए लाभदायक होगी।

इसके लिए बहुत-से लोगोंकी मनोवृत्ति और रुचिमें क्रान्तिकारी परिवर्तनकी आवश्यकता है। यद्यपि अहिंसक मार्ग कई मायनोंमें सुगम है, लेकिन कई प्रकारसे वह बहुत कठिन भी है। इसका प्रत्येक भारतीयके जीवनसे गहरा सम्बन्ध है। यह उसे अपने अन्दर छिपी शक्तिका बोध कराता है और इस शक्तिके बोधसे उसका मन आशा और उत्साहसे भर उठता है। यह भारतीय मानव-समुद्रकी प्रत्येक बूंदसे उसका तादात्म्य स्थापित कराकर, उसको गौरवका अनुभव कराता है। इस युगोंसे अहिंसाको

जडताके पर्यायके रूपमे देखने की भूल करते रहे है, लेकिन यह अहिंसा जडता नही है। यह मनुष्य-जातिको आजतक ज्ञात सबसे अधिक प्रभावक्षम शक्ति है और इसी शक्तिके आधारपर उसका अस्तित्व कायम है। मैंने काग्रेसके सामने और उसके माध्यमसे ससारके सामने यही शक्ति रखने की कोशिश की है। मेरे लिए खादी भारत की मानवताकी एकता, उसकी आर्थिक मुक्ति और समानताका प्रतीक है, और इसलिए अन्तत. — जवाहरलाल नेहरूके काव्यात्मक शब्दोमे — "भारतकी स्वतन्त्रताका परिधान है।"

इसके अतिरिक्त खादी-वृत्तिका अर्थ है, जीवनके लिए आवश्यक वस्तुओके उत्पादन तथा वितरणका विकेन्द्रीकरण। इसलिए अबतक जो सिद्धान्त बन पाया है वह यह है कि प्रत्येक गाँवको अपनी जरूरतकी सारी चीजे और इसके अलावा नगरोकी आवश्यकताकी पूर्तिके लिए भी अमुक प्रतिशत वस्तुओका उत्पादन करना चाहिए।

भारी उद्योगोके केन्द्रीकरण तथा राष्ट्रीयकरणकी आवश्यकता जरूर होगी। लेकिन गाँवोमे चलनेवाली व्यापक राष्ट्रीय प्रवृत्तिकी तुलनामे उनका स्थान नगण्य होगा।

खादीके फलितार्थ समझाने के बाद अब मुझे इसका भी सकेत करना चाहिए कि खादीको बढावा देने के लिए काग्रेसी क्या कर सकते है और उन्हे क्या करना चाहिए। खादी उत्पादनमे कपास पैदा करना, उसे चुनना, ओटना और साफ करना, धुनना और उससे पूनियाँ बनाना, कातना और सूतपर माँड चढाना, रँगना, ताना-बाना तैयार करना, सूतको बुनना और बुने हुए कपडेको धोना, ये सारी प्रक्रियाएँ शामिल है। रँगाईको छोडकर शेष सभी प्रक्रियाएँ आवश्यक है। इनमे से प्रत्येक प्रक्रिया प्रभावकारी ढगसे गाँवोमे ही सम्पन्न की जा सकती है, और ये भारत-भरके उन सभी गाँवोमे की जा रही है जिनमे अ० भा० च० सघकी प्रवृत्तियाँ चल रही है। ताजा विवरणके अनुसार प्राप्त कुछ रोचक आँकडे निम्न प्रकार है

१९४० मे कमसे-कम १३,४५१ गाँवोमे बसे २,७५,१४६ ग्रामीण लोगोने कताई-बुनाईकी मजदूरीके रूपमे ३४,८५,६०९ रुपये प्राप्त किये। इन लोगोमे से १९,६५४ हरिजन थे और ५७,३७८ मुसलमान। कातनेवालो मे अधिकाश स्त्रियाँ थी।

फिर भी, यदि काग्रेसी खादी कार्यक्रमको सच्चे दिलसे हाथमे ले तो जितना काम हो सकता है, यह उसका शताश है। इस प्रमुख ग्रामोद्योग और इससे जुडी दूसरी दस्तकारियोके मनमाने विनाशके साथ ही गाँवोसे बुद्धि और तेजका लोप हो गया है और वे निर्जीव और कान्तिहीन होकर लगभग उसी अवस्थाको प्राप्त हो गये है, जिस अवस्थामे हम आज उनके मरियल ढोरोको देखते है।

अगर काग्रेसी खादीके सम्बन्धमे काग्रेसके आह्वानके प्रति वफादार रहना चाहते है तो वे खादी-आयोजनामे क्या भूमिका निभा सकते है, इसके बारेमे अ० भा० च० सघ द्वारा समय-समयपर जारी किये गये निर्देशोका वे पूरी तरह पालन करेगे। यहाँ तो मै कुछ मोटे-मोटे नियम ही बता सकता हूँ·

१ जिसके पास कुछ जमीन हो, ऐसा हर परिवार अपनी जरूरतकी कपास खुद पैदा कर सकता है। कपास पैदा करना आसान काम है। बिहारमे किसान अपनी खेतीकी जमीनके ३/२० हिस्सेमे नील पैदा करने को कानूनन बँधे हुए थे। यह कानून

विदेशी मिल्होंके लाभके लिए था। फिर हम अपने राष्ट्रके लाभके लिए अपनी जमीनके एक हिस्सेमें कपास क्यों न पैदा करें? पाठक इस वातकी ओर ध्यान देंगे कि खादी-क्रियाओंके आरम्भमें ही विकेन्द्रीकरण भी आरम्भ हो जाता है। आज कपासकी खेती केन्द्रीकृत है और जरूरतके मुताबिक कपास देशके दूर-दूरके हिस्सोंमें भेजी जाती है। युद्धसे पूर्व वह मुख्यत ब्रिटेन और जापानको भेजी जाती थी। यह एक नकदी फसल थी और आज भी है, और इसलिए इसके भावमें बहुत अन्तर पडता रहता है। खादी-योजनाके अधीन कपासकी खेती अनिश्चितता और सट्टेबाजीसे छुटकारा पा लेगी। इसके अधीन उत्पादक उतना ही उत्पादन करेगा जितने की उसे जरूरत होगी। किसानोंको यह मालूम होना चाहिए कि उनका पहला काम अपनी जरूरतकी चीजें पैदा करना है। जब वे यह बात समझ जायेंगे तो मन्दे बाजारके कारण उनके बरबाद होने की सम्भावना बहुत कम हो जायेगी।

२ जिस कतैयेके पास अपनी कपास न हो वह अपनी जरूरतके लायक काफी कपास खरीद ले। फिर उसे वह खुद ही ओटे। ओटने का काम हाथ-चरखीके बिना भी आसानीसे किया जा सकता है। वह अपने हिस्सेकी कपास एक पटिये और लोहेकी एक सलाखकी सहायतासे ओट सकता है। जहाँ यह अव्यावहारिक लगे वहाँ हाथसे ओटी हुई कपास खरीदकर उसे धुनक लेना चाहिए। अपनी जरूरतकी कपासकी पिंजाई धनुप-पींजनकी सहायतासे बिना किसी खास मेहनतके की जा सकती है। श्रमका जितना अधिक विकेन्द्रीकरण होगा, इस सारे काममें प्रयुक्त होनेवाले उपकरण उतने ही सरल और सस्ते होंगे। पूनियाँ बना लेने के बाद कताईकी प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है। मैं धनुप तकलीकी जोरदार सिफारिश करता हूँ। मैंने अकसर इसका प्रयोग किया है। इसपर मेरी कताईकी गति लगभग वही है जो चरखेपर है। धनुप तकलीपर मैं अधिक बारीक तार निकालता हूँ और इस सूतकी मजबूती और एकसारता भी चरखेपर काते सूतसे अधिक होती है। लेकिन यह बात शायद सबपर लागू न हो। धनुप तकलीपर मेरे जोर देने का कारण यह है कि इसे आसानीसे बनाया जा सकता है, यह चरखेसे सस्ती पडती है और चरखेकी तरह इसकी बार-बार मरम्मत करने की जरूरत नही पडती। जिसे यह नही मालूम हो कि दोनो मालें कैसे बनाई जाती हैं और उनके खिसक जाने पर फिर उन्हें कैसे यथास्थान लाया जाता है या जो यह नही जानता कि चरखा बन्द हो जाये तो उसकी मरम्मत कैसे की जाये उसके पास तो चरखा अकसर बेकार ही पडा रहता है। इसके अलावा अगर लाखो आदमी चरखेको अविलम्ब अपना लेते है—और यह काम उन्हें अविलम्ब करना पड सकता है[1]—तो धनुप तकली ही वह चीज है जो हमारी जरूरत पूरी कर सकती है, क्योंकि इसे बहुत आसानीसे बनाया जा सकता है और इससे काम लेना भी बहुत सरल है। सच तो यह है कि इसे मामूली-सी तकलीसे भी ज्यादा आसानीसे बनाया जा सकता है। इसे कतैया खुद बनाये, यही सबसे अच्छा, आसान और सस्ता मार्ग है, चाहिए तो यह कि हर आदमी सीधे-सादे औजार-उपकरण बनाना और उनका इस्तेमाल करना सीख ले। जरा कल्पना कीजिए कि कताई

१. प्रथम संस्करणमें इसके आगे इतना और जुड़ा हुआ है: "युद्धके दबावके अधीन भी।"

तक की विभिन्न प्रक्रियाओमे सारा राष्ट्र एक साथ हिस्सा ले रहा हो, यह बात उसे एकताके सूत्रमे बाँधने और सही शिक्षा प्रदान करने की दृष्टिसे कितनी प्रभावकारी हो सकती है। साथ ही यह भी सोचकर देखिए कि जब अमीर-गरीब दोनो एक ही तरहका श्रम करेगे तब उनमे जो आपसी सम्बन्ध पैदा होगा वह समानताको सम्पादित करने की दृष्टिसे कितना अधिक प्रभावकारी हो सकता है।

इस तरह काते गये सूतका इस्तेमाल तीन तरहसे हो सकता है। एक इस्तेमाल तो यह है कि गरीबोकी खातिर वह सूत अ० भा० च० सघको दे दिया जाये। दूसरा यह है कि उसे बुनवाकर निजी उपयोगमे लाया जाये। तीसरा उपयोग यह है कि उसके एवजमे जितनी खादी मिल सके, ली जाये। कहने की जरूरत नही कि सूत जितना बारीक और अच्छा होगा, उसका मूल्य उतना ही अधिक होगा। यदि काग्रेसी इस काममे हृदयसे लग जाये तो वे औजारोमे बहुत सुधार कर सकते है और बहुत-सी नई-नई बातोका पता लगा सकते हैं। हमारे देशमे श्रम और बुद्धिके बीच एक प्रकारका अलगाव रहा है। फलत हमारे जीवनमे गतिरोध आ गया है। यदि दोनोमे अटूट सम्बन्ध कायम हो जाये और सो भी जैसा यहाँ सुझाया गया है उस ढगका तो उससे जो लाभ होगा उसका अनुमान नही लगाया जा सकता।

एक यज्ञके रूपमे राष्ट्रव्यापी कताईकी इस योजनामे मैं किसी भी स्त्री या पुरुषसे इस काममे प्रतिदिन एक घटेसे अधिक लगाने की अपेक्षा नही रखता।

५. अन्य ग्रामोद्योग

इनकी स्थिति खादीसे भिन्न है। इनमे यज्ञ-भावसे श्रमदानकी अधिक गुजाइश नही है। प्रत्येक उद्योगमे कुछ थोडे-से लोगोका ही श्रम खप पायेगा। ये उद्योग खादीके सहायक हैं। खादीके बिना ये नही टिक सकते और इनके बिना खादीकी गरिमा समाप्त हो जायेगी। हाथ-पिसाई, हाथ-कुटाई, साबुन बनाना, कागज बनाना, दियासलाई बनाना, चमडा कमाना, तेल निकालना और इसी तरहके अन्य आवश्यक ग्रामोद्योगोके बिना ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था पूरी नही हो सकती। काग्रेसी इन सबमे रुचि ले सकते हैं और अगर वे ग्रामवासी हैं या गाँवोमे बस जाये तो वे इन उद्योगोको नया जीवन और नया रूप दे सकते है। जब-कभी और जहाँ-कही ग्रामोद्योगकी वस्तुएँ सुलभ हो तब और तहाँ उन्हीका उपयोग करना सबको अपने ईमानकी बात बना लेनी चाहिए। यदि इनकी माँग पैदा की जाये तो इसमे कोई सन्देह नही कि हमारी अधिकाश आवश्यकताओकी पूर्ति हमारे गाँव कर सकते हैं। जब हमारी वृत्तियाँ ग्रामोन्मुख हो जायेगी तब हम पश्चिमकी नकल करके बनाई गई या मशीनोसे बनाई गई चीजे पसन्द नही करेंगे, बल्कि हम उस नये भारतकी परिकल्पनाके अनुरूप, जिसमे दरिद्रता, भुखमरी और निठल्लेपनका नामोनिशान भी नही होगा, अपनी राष्ट्रीय रुचिका विकास करेगे।

६. गाँवोकी सफाई

बुद्धि और श्रमके अलगावके परिणामस्वरूप हम गाँवोकी इतनी उपेक्षा करते रहे है कि उसे एक अपराध माना जायेगा। नतीजा यह है कि देश मे जहाँ सुन्दर

और सुहावनी बस्तियाँ होनी चाहिए वहाँ आज गाँवोके नामपर गन्दगी और घूरोके ढेर देखनेको मिलते है। बहुत-से गाँवोमे प्रवेश करना कोई सुखद अनुभव नही है। उनमें प्रवेश करते समय अकसर आँखें बन्द कर लेने और नाकमे कपडा ठूँस लेने को जी चाहता है। चारो ओर ऐसी ही भयकर गन्दगी और दुर्गन्ध फैली रहती है। यदि हमारे अधिकाश काग्रेसी भाई ग्रामीण हो—और होना तो यही चाहिए—तो उन्हे हमारे गाँवोको हर तरहसे सफाईके नमूने बना सकना चाहिए। लेकिन अपने दैनिक जीवनमें अपने आपको ग्रामीण लोगोसे एकरूप कर देना उन्होने कभी भी अपना कर्त्तव्य नही समझा है। राष्ट्रीय या सामाजिक स्वच्छताकी भावनाका गुण हममे नही है। हम भले ही किसी तरहसे नहा-धो ले, लेकिन जिस कुएँ या तालाब या नदीमे या उसके किनारे स्नानादि करते है उसीको गन्दा करने में हमे कोई सकोच नही होता। इसे मै बहुत बडा दोष मानता हूँ। इसी दोषके कारण आज हमारे गाँव और पवित्र नदियोके पवित्र किनारे लज्जाजनक अवस्थामें पडे हुए है और इसीके कारण गन्दगीसे पैदा होनेवाली बीमारियाँ फैलती है।

७. नई या बुनियादी तालीम

यह एक नया विषय है। लेकिन कार्य-समितिके सदस्योको यह चीज इतनी ज्यादा दिलचस्प और जरूरी लगी कि उन्होने हिन्दुस्तानी तालीमी सघको काग्रेसकी स्वीकृतिकी सनद दे दी। यह सघ हरिपुरा अधिवेशनके[1] समय से ही काम करता रहा है। यह एक बहुत बडा कार्य-क्षेत्र है, जिसमें बहुत-से काग्रेसी काम कर सकते है। इस शिक्षाका उद्देश्य ग्रामीण बच्चोको आदर्श ग्रामवासी बनाना है। यह मुख्यत उन्हीके लिए है। इसके लिए प्रेरणा गाँवोसे ही मिली है। काग्रेसी स्वराज्य-भवनको उसकी नीवपर मजबूतीसे खडा करना चाहते है। इसलिए बच्चोकी उपेक्षा करने की हिम्मत वे नही कर सकते। विदेशी प्रभुत्वकी शुरुआत, अनजाने ही सही, लेकिन निश्चित रूपसे, शिक्षाके क्षेत्रमें बच्चोसे हुई है। प्राथमिक शिक्षा एक तमाशा बनकर रह गई है। इसकी योजना गाँवोके देश भारतकी, बल्कि यहाँके शहरोकी भी, आवश्यकताओको ध्यानमें रखे बिना बनाई गई है। बुनियादी शिक्षा गाँवो और शहरो—दोनो स्थानोके बच्चोका सम्बन्ध भारतमे जो-कुछ श्रेष्ठ और स्थायी है, उससे जोडती है। यह शरीर और बुद्धि दोनोका विकास करती है और बच्चोंके पैर धरतीपर जमाये रखती है। साथ ही यह उन्हे भविष्यका एक भव्य चित्र दिखाती है, जिसे मूर्त रूप देने में बच्चे अपनी शालाके जीवनके आरम्भसे ही हिस्सा लेने लगते है। मै मानता हूँ कि यह काम काग्रेसियोको अत्यधिक मोहक और रुचिकर लगेगा। इस काममे पडकर वे बच्चोको तो लाभ पहुँचायेगे ही, साथ ही वे जिन बच्चोके सम्पर्कमे आयेंगे उनमे खुद भी लाभान्वित होगे। जो चाहे वे सेवाग्राममे सघके मन्त्रीसे सम्पर्क स्थापित कर सकते है।

८. प्रौढ शिक्षा

काग्रेसियोने इस कामकी घोर उपेक्षा की है। जहाँ नही की है, वहाँ भी वे अशिक्षितोको लिखना-पढना सिखाकर ही सन्तोष मान गये है। यदि प्रौढ शिक्षाका

१. अर्थात् काग्रेसका १९३८ का हरिपुरा अधिवेशन

काम मेरे हाथमे हो तो मैं प्रौढ विद्यार्थियोको अपने देशकी महानता और विशालताका बोध कराने से इसे आरम्भ करूँ। ग्रामवासीका भारत उसके गाँवमें समाया हुआ है। दूसरे गाँव जाने पर वह इस तरह बातचीत करता है मानो उसका गाँव ही उसका देश हो। हिन्दुस्तान उसके लिए भूगोलका एक शब्द है। गाँवमे कैसा अज्ञान फैला हुआ है, इसका अन्दाजा हमे नही है। ग्रामवासी विदेशी शासन और उसके कुपरिणामोके बारेमे कुछ नही जानते। जो थोडा-बहुत ज्ञान उन्होने प्राप्त भी किया है उसका नतीजा सिर्फ यह हुआ है कि उनके मनपर विदेशी शासकोका आतक जम गया है। फलत वे विदेशियो और उनके शासनको भय और घृणाकी दृष्टिसे देखते है। वे नही जानते कि उससे छुटकारा कैसे पाया जाये। उन्हे नही मालूम कि अगर विदेशी यहाँ जमे हुए है तो यह उन्हीकी कमजोरीका नतीजा है, और विदेशी शासनसे अपनेको मुक्त कराने की जो शक्ति उनमे है उसके प्रति सजग न होने का परिणाम है। इसलिए मेरी प्रौढ शिक्षाका अर्थ सबसे पहले तो यह है कि उन्हे बोलकर सच्ची राजनीतिका सही बोध कराया जाये। इस राजनीतिक शिक्षाका एक खाका पहलेसे ही तैयार रहेगा। इसलिए ऐसी शिक्षा देने मे डरकी कोई बात नही होगी। मैं समझता हूँ कि अब वे दिन बीत चुके है जब सत्ताधारी ऐसी शिक्षा देने मे कोई हस्तक्षेप-आपत्ति कर सकते थे। लेकिन अगर हस्तक्षेप किया ही जाये तो इस प्राथमिक अधिकारकी रक्षाके लिए हमे लडना चाहिए, क्योकि इसके बिना स्वराज्य प्राप्त नही हो सकता। कहने की जरूरत नही कि मैंने जो-कुछ लिखा है, उसमे यह मानकर चला हूँ कि सब-कुछ खुलेआम करना है। अहिंसामे भयके लिए, और इसलिए गोपनीयताके लिए, कोई स्थान नही है। मौखिक शिक्षा देने के साथ-साथ लिखने-पढने की शिक्षा भी चलेगी। यह अपने-आपमे एक विशेषता है। शिक्षण-कालको कम करने के लिए कई तरीके आजमाये जा रहे हैं। यहाँ जिस योजनाकी मोटी रूपरेखा बताई गई है उसको ठीक स्वरूप देने और कार्यकर्त्ताओका मार्ग-दर्शन करने के लिए कार्य-समिति कोई स्थायी अथवा अस्थायी विशेषज्ञ-समिति नियुक्त कर सकती है। मै यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने इस अनुच्छेदमे जो-कुछ कहा है वह रास्ता तो बताता है, लेकिन औसत काग्रेसीको यह नही बताता कि इस रास्तेपर उसे चलना किस तरह चाहिए। इसके अलावा यह बहुत ही विशिष्ट ढगका काम है, इसलिए हर काग्रेसी इसे करने के लिए उपयुक्त भी नही हो सकता। लेकिन जो काग्रेसी अध्यापक हो उन्हें यहाँ दिये गये सुझावोके ढगपर एक पाठ्यक्रम तैयार कर लेने मे कठिनाई नही होनी चाहिए।

९. स्त्रियाँ

रचनात्मक कार्यक्रममे मैंने स्त्रियोकी सेवाको भी स्थान दिया है। इसका कारण यह है कि यद्यपि सत्याग्रह भारतकी स्त्रियोको जिस आश्चर्यजनक शीघ्रतासे सहज ही अन्धकारसे बाहर ले आया है वह अन्य किसी प्रकार सम्भव नही था, फिर भी काग्रेसजन अबतक काग्रेसके इस आह्वानको हृदयगम नही कर पाये है कि स्त्रियोको ऐसी स्थितिमे लाना है जिससे स्वराज्यकी लडाईमें वे पुरुषोके बराबरकी भागीदार बन सके। वे यह महसूस नही कर पाये है कि सेवा-कार्यमे स्त्रियोको पुरुषोकी

सच्ची सहयोगिनी बनना है। स्त्रियोको ऐसी रीतियो और कानूनोमे दबाया गया है जो पुरुषोके बनाये हुए है और जिनको गढने में स्वय स्त्रियोका कोई हाथ नही रहा। अहिंसापर आधारित जीवन-योजनामें स्त्रियोको अपने भाग्य-निर्माणका उतना ही अधिकार है जितना कि पुरुषोको अपने भाग्य-निर्माणका है। किन्तु चूँकि अहिंसक समाजमें प्रत्येक अधिकार का स्रोत अधिकारके उपभोगसे पहले किया गया कोई-न-कोई कर्त्तव्य होता है, इसलिए स्वाभाविक है कि सामाजिक आचारके नियम आपसी सहयोग और परामर्शसे बनाये जायें। ये बाहरसे नही थोपे जा सकते। स्त्रियोके प्रति अपने व्यवहारमें इस तत्त्वको पुरुषोने पूर्णत चरितार्थ नही किया है। उन्होंने अपनेको स्त्रियोका प्रभु और स्वामी माना है, जब कि उन्हें मानना चाहिए था अपनी मित्र और सहकर्मिणी। भारतकी स्त्रियोका उद्धार करना काग्रेसजनोका विशेष सौभाग्य और धर्म है। आज यहाँ स्त्रियाँ बहुत-कुछ प्राचीन कालके उन गुलामोकी स्थितिमें है जो नही जानते थे कि वे मुक्त भी हो सकते है या उन्हे मुक्त होना है। और जब उनकी मुक्ति आई तो क्षण-भरको तो उन्होंने अपनेको असहायावस्थामें पाया। स्त्रियोको अपनेको पुरुषोकी दासी मानना सिखाया गया है। उन्हे इस योग्य बनाना काग्रेसियोका काम है कि वे अपनी पूरी ऊँचाईतक पहुँच सकें और पुरुषोकी बराबरीकी भूमिका निभा सकें।

यदि मनमें सकल्प कर ले तो यह क्रान्ति आसानीसे लाई जा सकती है। काग्रेसी इस कामको अपने-अपने परिवारोमे ही आरम्भ करे। पत्नियोको गुडिया और विषय-तृप्तिका साधन न मानकर उनके साथ समान सेवा-धर्ममें सन्नद्ध अपनी सहचरी-जैसा व्यवहार करना चाहिए। जिन स्त्रियोने उदार शिक्षा प्राप्त नही की है उनके पतियोको उक्त उद्देश्यको ध्यानमें रखकर उन्हे यथासम्भव ऐसी शिक्षा देनी चाहिए। आवश्यक परिवर्तनके साथ यही सुझाव काग्रेसियोकी माताओ और बहनोपर भी लागू होता है।

कहने की जरूरत नही कि मैंने भारतकी स्त्रियोकी असहायावस्थाका एकतरफा चित्र ही यहाँ दिया है। मै यह जानता हूँ कि गाँवोमे स्त्रियोने पुरुषोके मुकाबले अपना सही स्थान बना रखा है बल्कि कुछ मायनोमें वे पुरुषोपर हावी भी है। लेकिन किसी निष्पक्ष बाहरी आदमीकी नजरमें स्त्रियोका कानूनी और पारम्परिक दर्जा सर्वत्र बहुत खराब है और उसमें आमूल परिवर्तनकी आवश्यकता है।

१०. आरोग्यके नियमोकी शिक्षा

गाँवोकी स्वच्छताको रचनात्मक कार्यक्रममें स्थान दिया गया है। इसलिए कोई पूछ सकता है कि फिर आरोग्यके नियमोकी शिक्षाको अलग स्थान देने की क्या जरूरत है? इसे स्वच्छताके साथ ही रखा जा सकता था, लेकिन मै इस कार्यक्रमके विभिन्न अगोमें कोई हस्तक्षेप नही करना चाहता था। स्वच्छताके उल्लेखमें आरोग्यके नियम नही आते। स्वास्थ्य ठीक रखने की कला और आरोग्यके नियमोका ज्ञान अपने-आपमे अध्ययन और तदनुरूप आचरणका अलग विषय है। सुव्यवस्थित समाजके नागरिक आरोग्यके नियमोकी जानकारी अवश्य रखते है और उनका पालन करते है। इस बातमें सन्देह करने की कोई गुजाइश नही है कि मनुष्यको जो रोग होते है उनमें से अधिकाश आरोग्यके नियमोसे उसकी अनभिज्ञता तथा उनकी उपेक्षाके परिणाम है।

निस्सन्देह, हमारी ऊँची मृत्यु-दर बहुत अशोमे हमारी घोर दरिद्रताकी देन है, लेकिन अगर लोगोको आरोग्यके नियमोकी ठीक शिक्षा प्राप्त हो तो उसे किसी हदतक कम किया जा सकता है।

मनुष्य-जातिपर लागू होनेवाला शायद पहला नियम यह है कि स्वस्थ शरीरमे ही स्वस्थ मनका निवास है। यह बात अपने-आपमे स्पष्ट है। शरीर और मनमे एक अनिवार्य सम्बन्ध है। यदि हमारा मन स्वस्थ हो तो हम सारी हिंसाका त्याग कर दे और स्वभावत स्वास्थ्यके नियमोका पालन करते हुए सहज ही स्वस्थ शरीर भी प्राप्त कर सके। इसलिए मै आशा करता हूँ कि रचनात्मक कार्यक्रमके इस अगकी उपेक्षा कोई भी काग्रेसी नही करेगा। आरोग्य और स्वास्थ्यके बुनियादी नियम सीधे-सादे है और उन्हे आसानीसे सीखा जा सकता है। कठिनाई उनके पालनमे है। उनमे से कुछ नियम निम्न प्रकार है

मनमे शुद्धतम विचारोको ही स्थान दीजिए और अशुद्ध तथा बेकारके विचार न आने दीजिए।

दिन-रात शद्धतम हवामे साँस ले।

शारीरिक तथा मानसिक कार्यके बीच एक सन्तुलन कायम कीजिए।

सीधे खडे होइए, सीधे बैठिए, अपने प्रत्येक कार्यमे स्वच्छता दिखाइए, और इन सबको अपनी आन्तरिक अवस्थाका प्रतिबिम्ब बनाइए।

भोजन मानव-बन्धुओके सेवार्थ जीवित रहनेके लिए कीजिए। सुखोपभोगके लिए न जिये। इसलिए आपका आहार बस ऐसा और इतना होना चाहिए जिससे आपका शरीर और मन ठीक रह सके। मनुष्य जैसा खाता है वैसा ही बनता है।

आपका जल, आहार और हवा स्वच्छ होनी चाहिए, और आपको केवल अपने शरीरकी स्वच्छतासे ही सन्तुष्ट नही रहना चाहिए, बल्कि अपने परिवेशको उसी त्रिविध स्वच्छतासे व्याप्त कर देना चाहिए जिसकी इच्छा आप स्वय अपने लिए करेगे।

११. प्रान्तीय भाषाएँ[1]

हममे अपनी मातृभाषाके मुकाबले अंग्रेजी भाषाका अधिक मोह होने के परिणाम-स्वरूप शिक्षित तथा राजनीतिक दृष्टिसे जागरूक लोगो और आम जनताके बीच एक गहरी खाई पैदा हो गई है। भारतकी भाषाएँ दरिद्र होती चली गई है। जब हम अपनी मातृभाषामे कोई निगूढ विचार व्यक्त करनेका प्रयत्न करते है तो हमे बार-बार अटकना पडता है। वैज्ञानिक शब्दोके पर्याय हमारे पास नही है। परिणाम घातक सिद्ध हुआ है। जनसाधारण आधुनिक चिन्तनसे बिलकुल कट गया है। भारतकी महान् भाषाओकी उपेक्षा करके भारतकी कितनी बडी कुसेवा की गई है, इसका अनुमान हम अभी नही लगा सकते, क्योकि हम इस घटना-कालके बहुत निकट है। यह समझना कोई मुश्किल नही है कि जबतक हम इस दोपको दूर नही करते तबतक जनसाधारणका मानस बन्दी ही बना रहेगा। इस हालतमे जनसाधारण स्वराज्यके

१. प्रथम संस्करणमें प्रस्तुत तथा अगले उपशीर्षककी चर्चा "राष्ट्रभाषा-प्रचार" उपशीर्षकके अन्तर्गत की गई है।

निर्माणमे कोई ठोस योगदान नही कर सकता। अहिंसापर आधारित स्वराज्यमे यह बात सहज ही समाई हुई है कि हर व्यक्ति स्वातन्त्र्य-आन्दोलनमें प्रत्यक्ष योगदान करे। जबतक जनसाधारण इस दिशामे उठाये प्रत्येक कदमको उसके पूरे फलितार्थोंके साथ नहीं समझ लेता तबतक यह काम पूरी तरहसे नही कर सकता। और उसके लिए समझना तो तबतक असम्भव ही है जबतक उसे हर कदम उसकी अपनी भाषामे नहीं समझाया जाता।

१२. राष्ट्रभाषा

और इसके बाद हमे अखिल भारतीय सम्पर्कके लिए भारतीय परिवारकी किसी ऐसी भाषा की जरूरत है जिसे अधिकसे-अधिक लोग पहलेसे ही जानते और समझते है और जिसे अन्य लोग आसानीसे सीख सकते है। यह भाषा निर्विवाद रूपसे हिन्दी ही है। इसे उत्तर भारतके हिन्दू और मुसलमान दोनो बोलते और समझते है। उर्दू लिपिमें लिखने पर इसे उर्दू कहा जाता है। १९२५ के कानपुर अधिवेशनमें पास किये गये अपने प्रसिद्ध प्रस्तावमें काग्रेसने इसे हिन्दुस्तानीकी सज्ञा दी। और तबसे, कमसे-कम सैद्धान्तिक रूपसे, हिन्दुस्तानी हमारी राष्ट्रभाषा रही है। "सैद्धान्तिक रूपसे" इसलिए कहता हूँ कि काग्रेसियोने भी इसपर जितना चाहिए था, उतना अमल नही किया है।[1] जनसाधारणकी राजनीतिक शिक्षाके लिए भारतीय भाषाओके महत्त्वको समझने और स्वीकारने के लिए १९२० मे विचारपूर्वक प्रयत्न आरम्भ किया गया। इसके साथ ही एक ऐसी अखिल भारतीय भाषाकी अहमियतको भी समझने की कोशिश शुरू की गई जिसे राजनीतिक दृष्टिसे जाग्रत भारत आसानीसे बोल सके और जिसे काग्रेसकी अखिल भारतीय सभाओमें विभिन्न प्रान्तोसे आये हुए काग्रेसी समझ सके। ऐसी राष्ट्रभाषा हमे दोनो शैलियोमे समझ और बोल सकना चाहिए और दोनो लिपियोमें लिख सकना चाहिए।

मुझे दुःखके साथ कहना पडता है कि बहुत-से काग्रेसियोने उस प्रस्तावपर अमल नही किया है। मेरे विचारमे इसीलिए आज हमे यह शर्मनाक दृश्य देखने को मिलता है कि काग्रेसी अग्रेजीमे बोलने का आग्रह रखते है और अपनी खातिर दूसरोको भी अग्रेजी बोलने पर मजबूर करते है। अग्रेजीने हम पर जो जादू डाल रखा है, उसका असर अब भी खत्म नही हुआ है। इसके जादूमें फँसे रहकर हम अपने लक्ष्यकी ओर भारतकी प्रगतिमें बाधा डाल रहे है। हम जितने वर्ष अग्रेजी सीखने मे लगाते है यदि हिन्दुस्तानी सीखने मे उतने महीने भी लगाने की तकलीफ उठाने को तैयार नही है तो निश्चय ही जनसाधारणके प्रति हमारा प्रेम बहुत ही सतही है।[2]

१. प्रथम सस्करणमें यहाँ यह भी है: "इस अनुच्छेदमें मैंने जो चित्र खींचा है वह हमारे १९२० के पहलेके जीवनपर लागू होता है।"

२. प्रथम संस्करणमें इसमे आगे निम्न अनुच्छेद है: "अपनी भाषाके प्रति प्रेम: पिछले अनुच्छेदमें मैने जो-कुछ कहा है उसमे आगे कुछ कहने की जरूरत नहीं है। जो लोग भारतको एक देशके रूपमें देखते है उनके लिए तो दोनो चीजे एक ही डठलसे लटकते दो फल-मात्र है।"

१३. आर्थिक समानता

यह विषय अहिंसक स्वराज्यकी असली कुजी है। आर्थिक समानताके लिए काम करने का मतलब पूँजी और श्रमके सनातन सघर्षको मिटा देना है। इसका अर्थ उन चन्द धनाढ्च लोगोकी सम्पत्तिको कम करना है जिनके हाथोमे राष्ट्रीय सम्पत्तिका अधिकाश सिमट आया है और दूसरी ओर जो आधा पेट खाकर जीते है और जिनके पास तन ढकने को कपडा नही है उन करोडो आम लोगोकी सम्पत्तिमे वृद्धि करना है। जबतक अमीरो और भूखे पेट रहने को मजबूर करोडो गरीब लोगोके बीचका भयकर अन्तर कायम है तबतक अहिंसक सरकार बनाना स्पष्ट ही असम्भव है। नई दिल्लीके प्रासादो और उनके निकट ही खडी गरीब मजदूरोकी टूटी-फूटी झोपडियोके बीच जो भारी अन्तर है वह स्वतन्त्र भारतमे एक दिन भी कायम नही रह सकेगा, क्योकि उस भारतमे तो जितनी सत्ता देशके अमीरसे-अमीर लोगोके पास होगी उतनी ही गरीबोके पास भी होगी। यदि स्वेच्छासे सम्पत्तिका त्याग नही किया जाता और जो सत्ता सम्पत्तिसे प्राप्त होती है उसे खुशी-खुशी नही छोडा जाता तथा सम्पत्तिका उपयोग मिल-जुलकर, सबकी भलाईके लिए नही किया जाता तो निश्चय ही इस देशमें खूनी क्रान्ति आयेगी।

मेरे ट्रस्टीशिपके सिद्धान्तका बडा उपहास किया गया है। इसके बावजूद मै इस सम्बन्धमे अपने विचारपर दृढ हूँ। उस सिद्धान्तको पूर्णत कार्यान्वित करना बहुत कठिन है। लेकिन क्या यही बात अहिंसापर भी लागू नही होती? किन्तु १९२० मे हमने इस सीधी चढाईपर चढने का सकल्प लिया। अब हम समझ गये है कि उसके लिए हम जितना प्रयत्न कर रहे है वह करने योग्य है। यह प्रयत्न अहिंसाका तत्त्व किस प्रकार कार्य करता है, इसकी हमें दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक प्रतीति कराता है। काग्रेसियोसे यह उम्मीद की जाती है कि वे पूरी तरह लगनसे अहिंसाके क्षेत्रमे शोध करेंगे और उसके कार्य-कारणका[1] बुद्धिपूर्वक विचार करेगे।[2] उन्हे खुद सोचना चाहिए कि मौजूदा असमानताको अहिंसा या हिंसासे कैसे मिटाया जा सकता है। मै समझता हूँ हिंसाका रास्ता कैसा है यह हम जानते है। यह रास्ता कही भी सफल नही हुआ है।[3]

अहिंसात्मक प्रयोग अभी स्वरूप ग्रहण कर रहा है। हमारे पास स्पष्ट बताने के लिए अभी कुछ नही है। लेकिन इतना निश्चित है कि यह तरीका समानताकी दिशामे — धीरे-धीरे ही सही — काम करने लग गया है। और चूँकि अहिंसा हृदय-परिवर्तनकी प्रक्रिया है, इसलिए अगर हृदय-परिवर्तन हो सका तो वह स्थायी ही होगा।

१. प्रथम सस्करणमें यहाँ निम्न प्रकार है: "तथा इस सन्दर्भमें अपने कर्त्तव्यका।"

२. प्रथम संस्करणमें आगे निम्न प्रकार कहा गया है: "उन्हें समय-समयपर जारी किये गये निर्देशोका मनसे या बेमन होकर पालन करने-भर से सन्तोष नही मान लेना चाहिए।"

३. प्रथम संस्करणमें इससे आगे निम्न प्रकार है: "कुछ लोगोका कहना है कि रूसमें यह बहुत हदतक सफल हुआ है। मुझे इसमें सन्देह है। कोई निर्विवाद दावा करने का समय अभी नहीं आया है। और अब चूँकि रूस और जर्मनीके बीच युद्ध छिड गया है, इसलिए कहना कठिन है कि अन्तिम परिणाम क्या होगा।"

अहिंसक रीतिसे निर्मित समाज या राष्ट्रको अन्दर या बाहरसे अपने ढाँचेपर होनेवाले आक्रमणको झेल सकने योग्य होना चाहिए। कांग्रेसमे पैसेवाले लोग भी है। उन्हे इस सम्बन्धमें पहल करके लोगोको रास्ता दिखाना है। यह लडाई[1] प्रत्येक कांग्रेसीको अपने हृदयकी पूरी गहराईमें उतरकर अपने-आपको जाँचने-परखने का अवसर प्रदान करती है। यदि हमें कभी समानताको सिद्ध करना है तो उसकी नीव अभी डाली जानी चाहिए। जो लोग यह समझते है कि बड़े सुधार स्वराज्य-प्राप्तिके बाद होगे, वे अहिंसक स्वराज्यकी प्रारम्भिक कार्य-पद्धतिको समझने में ही भूल कर रहे है। वह अचानक स्वर्गसे नही टपक पडेगा। स्वराज्यकी इमारतको तो मिल-जुलकर आपसी प्रयत्नोसे एक-एक ईंट जोडकर खडा करना है। उस दिशामें हम काफी दूरतक आगे बढ चुके है। लेकिन स्वराज्यकी सम्पूर्ण गरिमा और भव्यताके साथ उसके दर्शन करने के लिए हमें अभी इससे बहुत अधिक लम्बा रास्ता तय करना है। हर कांग्रेसीको अपने-आपसे यह सवाल पूछना है कि आर्थिक समानताकी स्थापनाके लिए उसने क्या किया है।

१४. किसान[2]

रचनात्मक कार्यक्रममे सभी आवश्यक विषयोका समावेश नही हो पाया है। स्वराज्य-भवनका ढाँचा बहुत विशाल है। इसे बनाने में अस्सी करोड हाथोको मेहनत करनी है।[3] इनमें सबसे बडी सख्या किसानोकी है। सच तो यह है कि इस भवनको बनानेवालो में चूंकि सबसे ज्यादा तादाद (शायद ८०%) उन्हीकी है, इसलिए दरअसल किसान ही कांग्रेस है, ऐसी स्थिति पैदा होनी चाहिए। लेकिन आज बात ऐसी है नही। जब उनमें अपनी अहिंसक शक्तिका बोध जग जायेगा तो दुनियाकी कोई भी ताकत उनकी गतिको नही रोक पायेगी।

१. प्रथम संस्करणमें आगे यह वाक्यांश भी जुड़ा हुआ है. "जो हमारी अवधारणाके अनुसार आखिरी लड़ाई होगी।"

२. प्रथम संस्करणमें यह और आगेके दो अन्य विषय — अर्थात् "मजदूर" और "विद्यार्थी" — "किसान, मजदूर और विद्यार्थी" शीर्षकके अन्तर्गत एक साथ दिये गये हैं। प्रथम संस्करणका यह शीर्षक इस प्रकार आरम्भ होता है. "रचनात्मक कार्यक्रमके तेरह विषयोंका विवेचन अब हो चुका। मैंने यह समझाने की कोशिश की है कि किस प्रकार प्रत्येक विषय स्वराज्यकी योजनाके लिए उपयोगी है और इसे कांग्रेसी व्यक्तिगत रूपसे कैसे कार्यरूप दे सकते हैं।"

३. प्रथम संस्करणमें यहाँ निम्न प्रकार है. "इसलिए इन तेरह विषयोंमें और भी अनेक विषय जोड़े जा सकते हैं। अलबत्ता इन सबकी धुरीका काम तो बराबर चरखा ही करेगा और चरखेके चारों ओर ही सभी प्रवृत्तियों का विकास होना चाहिए।

"मेरे कुछ सहयोगियोंकी ही तरह पाठक भी इस बातको लक्ष्य करेंगे कि इसमें किसानों, कारखानों में काम करनेवाले लोगों या श्रमिकों तथा विद्यार्थियोंका उल्लेख नहीं हुआ है। रचनात्मक कार्यक्रमके अंगके रूपमें उनके कार्यका उल्लेख मैंने जान-बूझकर नहीं किया। इन तेरह विषयोंके सम्बन्धमें उन्हें भी उसी तरह काम करना है जिस तरह इस उद्देश्यमें लगे अन्य लोगोंको करना है। उनका उल्लेख न करने का मतलब इस आन्दोलनमें वे जो भूमिका अदा कर सकते हैं उसके महत्त्वको कम बताना नहीं है। आजादीके आन्दोलनमें उनके महत्त्वको मैं भली-भाँति जानता हूँ। इस जिज्ञासामें यह प्रश्न निहित है कि उनका संगठन कौन करेगा और कैसे।"

उनका उपयोग सत्ताकी राजनीतिके लिए नही किया जाना चाहिए।[1] मैं इसे अहिंसात्मक तरीकेके खिलाफ मानता हूँ। जो लोग किसानोको सगठित करने का मेरा तरीका जानने को इच्छुक हो वे चम्पारन आन्दोलनका अध्ययन करके लाभ उठा सकते है।[2] वह पहला अवसर था जब भारतमे सत्याग्रहका प्रयोग किया गया था और उसका परिणाम क्या हुआ, यह तो सारा देश जानता ही है। उसने एक जन-आन्दोलनका रूप ले लिया और वह आरम्भसे अन्ततक अहिंसक बना रहा। बीस लाखसे अधिक किसान उसके प्रभावमे आये। सघर्ष एक सदी पुरानी एक ही खास शिकायतको दूर करवाने के लिए चलाया गया। इसके लिए कई हिंसक विद्रोह हो चुके थे। किसानोको दबा दिया गया। अहिंसक उपाय छह महीनेमे ही पूर्णत सफल हो गया। चम्पारनके किसान बिना किसी प्रत्यक्ष प्रयत्नके राजनीतिक दृष्टिसे जागरूक हो गये। शिकायते दूर करवाने के लिए अहिसासे किस प्रकार काम लिया जा सकता है, इसका ठोस प्रमाण उनके सामने था। फलत वे काग्रेसकी ओर आकृष्ट हुए और बाबू ब्रजकिशोर प्रसाद तथा बाबू राजेन्द्रप्रसादके नेतृत्वमे उन्होने पिछले सविनय अवज्ञा आन्दोलनमे अपनी योग्यताका सही परिचय दिया।

पाठक खेडा,[3] बारडोली[4] और बोरसदके[5] किसान आन्दोलनोका अध्ययन करके भी लाभ उठा सकते है। सफलताका राज यह है कि किसानोकी व्यक्तिगत और सच्ची शिकायतोसे जिनका सम्बन्ध नही हो, ऐसे राजनीतिक प्रयोजनोके लिए उनका नाजायज फायदा न उठाया जाये। यदि उन्हें किसी खास अन्यायके खिलाफ सगठित किया जाता है तो यह बात उनकी समझमे आती है। उन्हें अहिंसापर उपदेश देने की कोई जरूरत नही है। उन्हें तो कष्ट-निवारणके एक प्रभावकारी उपायके रूपमें अहिंसाका प्रयोग सीखने दीजिए। इस चीजको वे समझ सकते है। बादमे जब उन्हें यह बताया जाता है कि वे जिस तरीकेसे काम ले रहे थे वह अहिसात्मक तरीका था तो वे उसे तुरन्त इस रूपमे पहचान लेते है।

जो काग्रेसी चाहे वे इन उदाहरणोसे यह समझ सकते है कि किसानोके लिए और उनके बीच किस प्रकार काम किया जा सकता है। मै मानता हूँ कि किसानोको सगठित करने के लिए कुछ काग्रेसियोने जो तरीका अपनाया है उससे किसानोको कोई लाभ नही पहुँचा है, बल्कि शायद हानि ही हुई है। जो भी हो, उन्होने अहिंसात्मक तरीकेसे तो काम नही ही लिया है। हाँ, इनमे से कुछ कार्यकर्त्ताओको इस बातका श्रेय दिया जा सकता है कि वे स्पष्ट शब्दोमे स्वीकार करते है कि अहिंसात्मक तरीकेमे उनका विश्वास नही है। ऐसे कार्यकर्त्ताओको मेरी सलाह यह है कि न वे काग्रेसके नामका उपयोग करे और न काग्रेसीकी हैसियतसे ही काम करे।

१. प्रथम संस्करणमें यहाँ निम्न प्रकार है: "किसान आन्दोलनके बारेमें भी मुझे आशंका है कि सत्ताकी राजनीतिके लिए किसानोंका उपयोग करने की अशोभन होड़ चल रही है।"
२. देखिए खण्ड १३।
३. देखिए खण्ड १४।
४. देखिए खण्ड ३६ और ३७।
५. देखिए खण्ड २३।

पाठक अब समझ गये होंगे कि किसानों और मजदूरोंको अखिल भारतीय स्तरपर संगठित करने की होडसे मैं क्यों अलग रहा हूँ। कितना अच्छा हो, अगर सभी लोग एक दिशामें जोर लगायें। लेकिन हमारे-जैसे विशाल देशमें यह शायद असम्भव है। जो भी हो, अहिंसामें कहीं जोर-जबरदस्तीके लिए गुंजाइश नहीं है। शुद्ध तर्क-बुद्धि और अहिंसाकी पद्धतिसे सम्पादित कार्य एक-न-एक दिन अहिंसाकी स्वीकृतिकी दिशामें अपना प्रभाव अवश्य दिखायेंगे, यह भरोसा रखकर हमें चलना है।

मेरी रायमें तो कांग्रेसके अधीन श्रमिकोंकी तरह किसानोंके लिए भी एक अलग विभाग होना चाहिए, जो उन्हीं की समस्याओंके समाधानके लिए काम करे।

१५. मजदूर

अहमदाबाद मजूर महाजन ऐसा नमूना है जिसका अनुसरण सारा भारत कर सकता है।[1] इसका आधार विशुद्ध अहिंसा है। आजतक के कार्य-कालमें इसे किसी प्रसंगपर कभी पीछे नहीं हटना पड़ा है। बिना किसी शोर-गुल या दिखावेके यह उत्तरोत्तर अधिकाधिक शक्तिशाली होता गया है। इसका अपना अस्पताल है, मिल-मजदूरोंके बच्चोंके लिए इसकी अपनी अलग शालाएँ हैं, अपने वयस्क स्कूल हैं, अपना छापाखाना और अपना खादी-भण्डार है और अपने रिहाइशी मकान हैं। लगभग सभी मजदूर मतदाता हैं और चुनाव वही करते हैं। उन्हें मतदाता-सूचीमें प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीके सुझावपर दर्ज किया गया। इस संगठनने कांग्रेसकी दलगत राजनीतिमें कभी भाग नहीं लिया है। यह शहरकी नगरपालिकाकी नीतिको प्रभावित करता है। इसे बहुत ही सफल और पूर्णत अहिंसक हड़तालें करनेका श्रेय प्राप्त है। मिल-मालिक और मजदूर अपने आपसी सम्बन्धोंका नियमन बहुत हदतक पंच-फैसलोंसे करते रहे हैं। अगर मेरी चले तो मैं भारतकी सभी मजदूर संस्थाओंका संगठन अहमदाबादके ही ढंगपर करूँ। इसने अखिल भारतीय मजदूर संघ कांग्रेसके मामलोंमें दखल देने की कोशिश कभी नहीं की है और न कभी उससे स्वयको प्रभावित होने दिया है। मैं आशा करता हूँ कि एक समय ऐसा आयेगा जब मजदूर संघ कांग्रेसके लिए अहमदाबाद मजदूर संघके तरीकेको अपनाना सम्भव होगा और वह अहमदाबाद संगठनको अखिल भारतीय संघका अंग बना पायेगी। लेकिन मुझे कोई जल्दी नहीं है। यह सब समयपर अपने-आप हो जायेगा।

१६. आदिवासी[2]

रानीपरज शब्दकी तरह आदिवासी भी नया गढ़ा हुआ शब्द है। पहले रानी-परजके[3] स्थानपर कालीपरज (अर्थात् काली प्रजा, हालांकि उस प्रजाके चमड़ेका

१. प्रथम संस्करणमें आगे यह भी है: "एक मजदूरकी हैसियतसे मैं अहमदाबाद मजूर महाजनकी स्थापनाका जिम्मेवार हूँ।"

२. प्रथम संस्करणमें यह और आगेका शीर्षक नहीं है।

३. जंगली जाति

रग भी हम शेष लोगोके चमड़ेके रगसे कुछ ज्यादा काला नही है) शब्दका प्रयोग होता था। जहाँतक मुझे याद है, रानीपरज शब्द श्री जुगतरामने गढा था। भील, गोड आदि जिन लोगोके लिए पहाडी जाति या जगली जाति-जैसे शब्दोका प्रयोग होता है उनकी सज्ञाकी तरह गढे इस शब्दका अर्थ मूल निवासी है और मेरे खयालसे यह शब्द ठक्कर बापाने गढा था।

आदिवासियोकी सेवा भी रचनात्मक कार्यक्रमका एक अग है। यद्यपि कार्यक्रममे उन्हे सोलहवाँ स्थान दिया गया है, किन्तु इसका मतलब यह नही कि उनका महत्त्व किसीसे कम है। हमारा देश इतना विशाल है और इसमे तरह-तरहकी इतनी अधिक जातियोका निवास है कि हममे से अच्छेसे-अच्छे लोग भी सब लोगोके बारेमे और उनकी अवस्थाके सम्बन्धमे जानने योग्य सभी बाते नही जान सकते। ज्यो-ज्यों हमे उपर्युक्त अनेकताकी स्थितिकी जानकारी प्राप्त होती जाती है त्यो-त्यो हमे इस बातका भी भान होता जाता है कि यदि हमारे राष्ट्रके प्रत्येक घटकमे यह सजग बोध नही है कि शेष सभी घटकोका सुख-दु ख उसका अपना सुख-दु ख है तो हम जो एक राष्ट्र होने का दावा करते हैं उसे सच सिद्ध करना कितना कठिन है।

पूरे भारतमे आदिवासियोकी सख्या दो करोडसे अधिक है। गुजरातके भीलोके बीच ठक्कर बापाने वर्षो पहले काम करना शुरू कर दिया था। १९४० मे श्री बालासाहब खेर थाना जिलेमे अपने स्वाभाविक उत्साहके साथ इस अत्यावश्यक सेवा-कार्यमे जुट गये थे। अब वे आदिवासी सेवा मण्डलके अध्यक्ष हैं।

भारतके अन्य भागोमे ऐसे ही अन्य अनेक कार्यकर्त्ता इस क्षेत्रमे काम कर रहे हैं, फिर भी उनकी सख्या बहुत कम ही मानी जायेगी। सच ही "फसल तो दूर-दूरतक लहलहा रही है, लेकिन काटनेवाले बहुत कम हैं।" इस बातसे कौन इनकार कर सकता है कि इस तरहकी तमाम सेवा केवल मानव-दयाका ही कार्य नही है, बल्कि वह ठोस राष्ट्र-कार्य है, जो हमे सच्चे स्वराज्यके अधिकाधिक निकट ले जाता है?

१७. कोढ़ी

कोढ़ी एक बदनाम शब्द है। मध्य आफ्रिकाके बाद शायद भारतमें ही कोढियोकी सख्या सबसे ज्यादा है। फिर भी जिस तरह हममें से बडेसे-बडा आदमी समाजका अग है उसी तरह वे भी उसके अग है। लेकिन हम अपना पूरा ध्यान बडोकी ओर ही लगा देते है, यद्यपि वे सबसे कम जरूरतमन्द है और जिन कोढियोको हमारी सेवाकी सबसे ज्यादा जरूरत है उनके भाग्यमे हमारी ओरसे जान-बूझकर की गई उपेक्षा ही आई है। मैं तो इसे हृदयहीनता कहना चाहूँगा, जो अहिंसाकी दृष्टिसे यह सचमुच है भी। हमे मानना होगा कि उनकी ओर ध्यान देनेवाले अधिकाशत. ईसाई धर्मप्रचारक ही है। वर्धाके निकट श्री मनोहर दीवान द्वारा, विशुद्ध प्रेमकी भावनासे, चलाई जानेवाली बस एक ही सस्था ऐसी है जिसे कोई भारतीय चलाता है। यह सस्था श्री विनोबा भावेकी प्रेरणा और मार्गदर्शनमे चल रही है। यदि भारतमें आज नवजीवनकी तरगे हिलोर मारती होती, यदि हम सबमे सत्य और अहिंसा द्वारा शीघ्रातिशीघ्र स्वतन्त्रता प्राप्त करने की सच्ची लगन होती तो भारतमें ऐसा एक भी

कोढी या भिखारी नही होता जिसकी ठीक देख-भाल न होती और जिसके बारेमें हमें पूरी जानकारी न होती। इस सशोधित सस्करणमें रचनात्मक प्रयत्नकी शृखलाकी एक कडीकी तरह मै कोढियोको जान-बूझकर स्थान दे रहा हूँ। कारण, यदि हम स्वय अपने आसपास देखे तो पायेंगे कि भारतमें जो स्थान कोढियोका है वही स्थान आजके सभ्य ससारमें हमारा है। समुद्र-पारके अपने भाइयोकी अवस्थापर विचार करके देखिए तो मेरी बातमें निहित सचाई सहज ही हमारी समझमें आ जायेगी।

१८. विद्यार्थी

विद्यार्थियोके विषयमें विचार करना मैने इस विवेचनके अन्तके लिए सुरक्षित रखा है। उनके साथ मैने हमेशा प्रगाढ सम्बन्ध रखा है और उसे मै बराबर बढाता भी रहा हूँ। वे मुझे जानते है, मै उन्हे जानता हूँ। उन्होने मुझे अपनी सेवा दी है। कॉलिजोसे निकले हुए बहुत-से विद्यार्थी आज मेरे महत्त्वपूर्ण सहयोगी है। मै जानता हूँ कि वे भविष्यकी आशा है। असहयोग आन्दोलन जब पूरे जोरपर था, उन दिनो उन्हे स्कूलो और कॉलिजोका त्याग करने को आमत्रित किया गया। काग्रेसकी पुकारपर कॉलिज छोडकर आनेवाले कुछ-एक प्रोफेसर और विद्यार्थी तो अपनी टेकपर अबतक कायम रहे है और उन्होने देशके लिए तथा स्वय अपने लिए भी बहुत-कुछ पाया है। वैसा आह्वान दोबारा इसलिए नही किया गया है कि उसके उपयुक्त वातावरण नही है। लेकिन अनुभवसे ज्ञात हुआ है कि वर्त्तमान शिक्षा यद्यपि झूठी और अस्वाभाविक है, फिर भी देशके युवकोके लिए इसका प्रलोभन बहुत प्रबल है। कॉलेजकी शिक्षा आजीविकाके लिए अवसर देती है। यह सफेदपोशोके समूहमें शामिल होने की सनद है। ज्ञानकी भूख, जो स्वाभाविक और क्षम्य है, तृप्त करने के लिए जो पिटी-पिटाई लीक बनी हुई है, उसपर चले बिना चारा नही है। एक बिलकुल परायी भाषाका ज्ञान प्राप्त करने मे उनके बहुमूल्य समयकी जो बरबादी होती है, उसकी वे कोई परवाह नही करते। यही विदेशी भाषा उनकी मातृभाषाका भी स्थान ले लेती है। इसमे जो घोर अपराध है उसे वे कभी महसूस नही करते। उन्होने और उनके शिक्षकोने अपने मनमें यह धारणा बैठा ली है कि स्वदेशी भाषाएँ आधुनिक विचारोको जानने और आधुनिक विज्ञानका ज्ञान प्राप्त करने की दृष्टिसे निकम्मी है। पता नही, जापानियोका काम कैसे चल रहा है। क्योकि मेरे जानने तो उनकी पूरी शिक्षाका माध्यम जापानी ही है। चीनके जनरलिसिमो [च्याग काई-शेक] को अगर अग्रेजीका ज्ञान हो भी तो अत्यल्प ही है।

लेकिन हमारे विद्यार्थी जैसे भी है, इन्ही युवको और युवतियोके बीचसे हमारे भावी नेता उभरेगे। दुर्भाग्यवश वे तरह-तरहके कुप्रभावोके शिकार होते है। अहिंसामें उन्हे कोई आकर्षण नही लगता। तमाचेके बदले तमाचा या एकके बदले दो तमाचे, यह बात उनकी समझमे आसानीसे आ जाती है। इससे तत्काल कुछ फल निकलता जान पडता है भले ही वह अत्यन्त अस्थायी हो। लडाईके मौकेपर जानवर-जानवर या मनुष्य-मनुष्यके बीच पाशविक या हिंसात्मक शक्तिकी बराबर चलनेवाली जो होडा-होडी देखाई देती है, इसके सिवाय यह और कुछ नही है। अहिंसाको समझने और

पहचानने के लिए धैर्यपूर्वक उस क्षेत्रमे शोध करने और उससे भी अधिक धीरजके साथ अहिंसाका आचरण करने की आवश्यकता होती है। जिन कारणोसे मैं किसानो और मजदूरोका समर्थन प्राप्त करने के इच्छुक लोगोके साथ होडमे नही उतरा हूँ उन्ही कारणोसे विद्यार्थियोका समर्थन पाने की इच्छा रखनेवालो के साथ प्रतियोगितामे नही पडा हूँ। लेकिन मैं तो — यदि विद्यार्थी शब्दका प्रयोग उसके व्यापकतर अर्थोमे किया जाये तो — स्वय ही एक विद्यार्थी हूँ। मेरा विश्वविद्यालय उनके विश्वविद्यालयसे भिन्न है। मैं उन्हे आमन्त्रित करता हूँ कि वे चाहे जब मेरे विश्वविद्यालयमे आकर मेरे शोध-कार्यमे शामिल हो जाये। उसमे दाखिल होने की शर्ते निम्न प्रकार है ·

१. विद्यार्थियोको दलगत राजनीतिमे भाग नही लेना चाहिए। वे राजनीतिज्ञ नही, शोधकर्त्ता और विद्यार्थी है।

२ उन्हे राजनीतिक हडतालोमे शामिल होने की मनाही होगी। उनके अपने आदर्श वीर पुरुष तो होगे ही, लेकिन उनके प्रति वे अपनी निष्ठाका परिचय, उनके जेल जाने या उनके निधन होने अथवा उनके फाँसीपर चढा दिये जाने पर, हडताले करके नही, बल्कि उनके अच्छेसे-अच्छे गुणोको अपने जीवनमे उतारकर देंगे। यदि उनका दुःख असह्य हो और अगर सभी विद्यार्थी उस दुःखको समान गहराईसे महसूस करते हो तो ऐसे अवसरोपर प्राचार्योकी सहमतिसे स्कूल या कॉलेज बन्द किये जा सकते है। यदि प्राचार्य उनकी बात न सुने तो वे शोभनीय ढगसे अपनी सस्थाओका त्याग कर सकते है, जहाँ वे वापस तभी आये जब उन सस्थाओके व्यवस्थापक अपने रुखपर पश्चात्ताप करके उन्हे वापस बुलाये। लेकिन असहमत होनेवालो या अधिकारियोके साथ किसी भी हालतमे जोर-जबरदस्ती करना उनके लिए सर्वथा अनुचित होगा। उनमे यह विश्वास होना चाहिए कि यदि वे ऐक्यबद्ध रहेंगे और उनका आचरण गरिमामय होगा तो अन्तमे उनकी विजय अवश्य होगी।

३ उन सबको शास्त्रीय रीतिसे यज्ञार्थ कताई करनी होगी। उनके औजार हमेशा साफ-सुथरे और अच्छी अवस्थामे होगे। सम्भव हो तो उन्हे ऐसे औजार खुद ही बनाना सीखना होगा। उनका सूत स्वभावत उच्चतम कोटिका होगा। उन्हे कताई-सम्बन्धी साहित्यका अध्ययन करना होगा और ऐसे अध्ययन द्वारा उसके आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक मर्मको पहचानना होगा।

४. उन्हें सदा खादीका ही उपयोग करना होगा और ग्रामोद्योगोके उत्पादनोके विदेशी या मशीनी विकल्पोका नही।

५ उन्हें दूसरोपर वन्देमातरम् या राष्ट्रीय झण्डा जबरदस्ती नही थोपना चाहिए। वे खुद बखूबी राष्ट्रध्वजकी तरह तिरगे बटन लगा सकते है, लेकिन दूसरोको लगाने पर मजबूर नही कर सकते।

६ वे तिरगे झण्डेके सन्देशको अपने जीवनमे उतार सकते है और यह कर सकते हैं कि अपने हृदयमे न तो साम्प्रदायिकताके लिए और न अस्पृश्यताके लिए ही कोई स्थान रहने दे। वे अन्य धर्मोके विद्यार्थियो तथा हरिजनोके साथ इस तरह मैत्री-सम्बन्ध स्थापित करे मानो वे उनके कुटुम्बी हो।

७ अपने घायल पडोसियोकी प्राथमिक चिकित्सा करना, आसपासके गाँवोकी सफाई करना और ग्रामीण बच्चों तथा वयस्कोको आवश्यक शिक्षा देना उनका अनिवार्य कर्त्तव्य होगा।

८ राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानीके आज जो दो रूप है उन दोनो रूपोमें, दोनो शैलियो तथा लिपियोंके साथ उन्हे उसको सीखना होगा, ताकि चाहे हिन्दी बोली जाये या उर्दू, अथवा चाहे वह नागरीमें लिखी जाये या उर्दू लिपिमें, उन्हे कोई कठिनाई न हो।

९ वे जो-कुछ भी नया सीखें उस ज्ञानको अपनी मातृभाषामें लिखकर आसपासके गाँवोके अपने साप्ताहिक दौरोके अवसरपर ग्रामीण लोगोतक पहुँचायें।

१० वे गोपनीय ढगसे कुछ नही करेगे। उनको अपना सारा व्यवहार खुला रखना पडेगा। उन्हे पवित्र और सयममय जीवन व्यतीत करना होगा, सारे भयका त्याग करना होगा, अपने कमजोर विद्यार्थी भाइयो और बहनोकी रक्षाके लिए हमेशा तैयार रहना होगा और अहिंसात्मक ढगसे, अपनी जानको भी खतरेमें डालकर, दगे शान्त करने के लिए तत्पर रहना पडेगा। और जब सघर्ष अपने पूरे जोरपर पहुँच जायेगा तब उन्हे अपनी सस्थाएँ छोडनी पडेंगी और जरूरत हुई तो अपने देशकी आजादीकी खातिर अपने प्राणोकी भी बलि देनी पडेगी।

११ अपनी विद्यार्थी बहनोंके प्रति उन्हे खास तौरपर स्वच्छ और सभ्य व्यवहार करना होगा।

विद्यार्थियोंके लिए मैंने जो कार्यक्रम बताया है उसपर अमल करने के लिए उन्हे समय निकालना होगा। मै जानता हूँ कि वे बहुत-सा समय यो ही बरबाद कर देते है। समयका मितव्ययितासे उपयोग करे तो वे कई घटे बचा सकते है। लेकिन मै किसी भी विद्यार्थीपर अनुचित बोझ नही डालना चाहता। इसलिए देशभक्त विद्यार्थियोको मै सलाह दूंगा कि इस कामको वे अपना कुल एक वर्ष दें, लेकिन लगातार नही, बल्कि अपने पूरे अध्ययन-कालमें वे खुद ही देखेंगे कि इस तरह जो वे एक साल देंगे वह समयकी बरबादी नही होगा। यह प्रयत्न उनकी मानसिक, नैतिक तथा शारीरिक योग्यताकी अभिवृद्धि करेगा और इसका मतलब यह होगा कि अपने अध्ययन-कालमें भी उन्होने स्वातत्र्य-सग्राममें ठोस योगदान किया।

सविनय अवज्ञाका स्थान

इन पृष्ठोमें मैंने कहा है कि यदि रचनात्मक कार्यक्रमको पूरा करने में पूरे राष्ट्रका सहयोग मिले तो विशुद्ध अहिंसात्मक प्रयत्नोसे स्वराज्य प्राप्त करने के लिए सविनय अवज्ञा सर्वथा आवश्यक नहीं है। लेकिन ऐसा सौभाग्य तो किसी राष्ट्र या व्यक्तिको विरल ही मिलता है। इसलिए राष्ट्रव्यापी अहिंसक प्रयत्नमें सविनय अवज्ञाका स्थान जान लेना आवश्यक है।

सविनय अवज्ञाके तीन उपयोग है

१ किसी स्थानीय अन्यायको दूर कराने के लिए इसका प्रभावकारी उपयोग किया जा सकता है।

२. किसी विशेष अन्याय या खास बुराईके खिलाफ, परिणामकी परवाह किये बिना भी, सविनय अवज्ञा की जा सकती है। तब उसका उद्देश्य होगा अपने को मिटाकर स्थानीय लोगोमे उस अन्याय या बुराईके विरुद्ध जागृति पैदा करना या लोगोकी अन्तरात्माको जगाना। चम्पारनमे ऐसा ही हुआ था। तब परिणामकी कोई परवाह किये बिना और यह जानते हुए कि शायद वहाँके लोग भी उदासीन ही रह जाये, मैने वहाँ सविनय अवज्ञा की थी। लेकिन परिणाम आशातीत ही निकला, इसे अपनी-अपनी प्रवृत्तिके अनुसार कोई ईश्वरकी कृपा भी मान सकता है या चाहे तो एक सौभाग्य भी समझ सकता है।

३ रचनात्मक कार्यक्रमके प्रति लोग पूरा उत्साह न दिखा रहे हो, उस अवस्थामे उसके विकल्पके रूपमे भी सविनय अवज्ञा की जा सकती है। १९४१ मे ऐसा ही हुआ था।[1] यद्यपि वह स्वतत्रताकी लडाईमे एक योगदान और उसीका एक हिस्सा थी, लेकिन वह की गई थी एक खास सवाल — वाणीकी स्वतत्रता — के सिलसिलेमे। सविनय अवज्ञा कभी भी स्वतत्रता-जैसे सामान्य ढगके प्रयोजनके लिए नही की जा सकती। मुद्दा साफ और निश्चित होना चाहिए और उसका रूप स्पष्ट समझमे आने लायक होना चाहिए। इसके अलावा उसे ऐसा भी होना चाहिए कि विरोधीके लिए उसके सम्बन्धमे अवज्ञाकारियोकी माँग स्वीकार करना सम्भव हो। इस तरीकेका ठीक इस्तेमाल किया जाये तो अन्तमे आखिरी मजिल भी जरूर मिल जायेगी।

यहाँ मैने सविनय अवज्ञाकी पूरी व्याप्ति और सारी सम्भावनाओपर विचार नही किया है। हाँ, मैने उसकी इतनी चर्चा जरूर कर दी है जिससे पाठक रचनात्मक कार्यक्रम और सविनय अवज्ञाका पारस्परिक सम्बन्ध समझ जाये। पहले दो मामलोमें कोई व्यापक रचनात्मक कार्यक्रम न तो आवश्यक था और न हो सकता था। लेकिन जब सविनय अवज्ञाकी योजना स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए की जाये तो उसके लिए पूर्व तैयारी जरूरी होती है, और उसे सघर्षमे लगे लोगोके स्पष्ट दिखनेवाले और सजग प्रयत्नका सहारा मिलना भी आवश्यक होता है। इस प्रकार सविनय अवज्ञा लडने-वालोके लिए प्रेरणा और उत्साहका स्रोत है और विरोधियोके लिए एक चुनौती है। पाठकोको यह स्पष्ट समझ लेना चाहिए कि यदि रचनात्मक प्रयत्नके रूपमे करोडो लोग सहयोग नही करते तो स्वतत्रता-प्राप्तिके उद्देश्यके सन्दर्भमे सविनय अवज्ञा कोरी दुस्साहसिकता, सर्वथा व्यर्थ, बल्कि हानिकर भी है।

उपसंहार

यह काग्रेस या केन्द्रीय कार्यालयके आदेशसे लिखा हुआ कोई निबन्ध नही है। यह सेवाग्राममे कुछ सह-कार्यकर्त्ताओके साथ हुई मेरी बातचीतका फल है। उन्हे यह बात खटकती थी कि मेरी कलमसे लिखी कोई ऐसी चीज देशके सामने नही है जिसमे रचनात्मक कार्यक्रम और सविनय अवज्ञाके पारस्परिक सम्बन्धका निदर्शन कराया गया हो और यह बताया गया हो कि रचनात्मक कार्यक्रमको किस प्रकार लागू किया जा सकता है। इस पुस्तिकामे मैने इस कमीको दूर करने की कोशिश की

१. प्रथम संस्करणमें इस प्रकार है: "ऐसा ही आज किया जा रहा है।"

है। इस पुस्तिकाका प्रयोजन रचनात्मक कार्यक्रमका सविस्तार और सम्पूर्ण विवेचन नही है, लेकिन इसमें इस वातका पूरा सकेत दिया गया है कि इस कार्यक्रमको किस तरह लागू किया जाये।

पाठक इस वातका उपहास करने की भूल न करे कि यहाँ कार्यक्रमके जो मुद्दे वताये गये है उनमे से अमुकको स्वराज्यकी लडाईका अग क्यो माना गया है। वहुत-से लोग कई तरहके छोटे-वडे काम करते है और उनका अहिंसा या स्वराज्यसे कोई सम्वन्ध नही जोडते। उस हालतमे उनका महत्त्व, आशानुसार, सीमित ही होता है। कोई आदमी एक सामान्य नागरिकके रूपमे सामने आये तो उसका कोई विशेष महत्त्व नही है, लेकिन वह अगर एक सेनापतिके रूपमें सामने आयेगा तो वह लाखोके प्राणोके रक्षक या विनाशकके रूपमें एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण व्यक्ति समझा जायेगा। इसी तरह किसी गरीव विधवाके हाथोमें चरखा उसे चन्द पैसे सुलभ कराने का एक साधन-भर है, किन्तु किसी जवाहरलालके हाथोमें वह भारतके स्वराज्यका शस्त्र है। चरखेको हमने जो स्थान दिया है, वही उसको गरिमा प्रदान करता है। इसी तरह रचनात्मक कार्यक्रमको जो स्थान दिया गया है वह उसकी दुर्निवार शक्ति और प्रतिष्ठाका स्रोत है।

कमसे-कम मेरा तो यही विचार है। हो सकता है, यह किसी पागलका ही विचार हो। अगर वह काग्रेसियोको नही जँचता है तो वे मुझे अस्वीकार कर दें। कारण, रचनात्मक कार्यक्रमके विना मेरे सविनय अवज्ञाकी लडाई लड़ने का मतलव लकवेसे सुन्न पडे हाथसे चम्मच उठाने-जैसा होगा।

[अग्रेजीसे]

कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम : इट्स मीनिंग ऐंड प्लेस

२२९. रेशमका स्थान

श्री जाजूजी पूछते है[१]

ये सव प्रश्न अच्छे है। इस वारेमें चर्चा तो काफी हो चुकी है। लेकिन कई प्रश्न ऐसे है जो वार-वार उठते रहते है, और उनकी चर्चा भी वार-वार करना आवश्यक हो जाता है।

मै इन प्रश्नोका उत्तर उसी क्रममें देता हूँ जिस क्रममें श्री जाजूजी ने पूछे है:

(१) अहिंसक-हिंसक रेशमका प्रश्न तो रहता ही है, क्योंकि दोनो प्रकारकी रेशम रहती है। अच्छा तो यही है कि जो मनुष्य सव चीजोको सूक्ष्म अहिंसाकी दृष्टिसे

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है। अखिल भारतीय चरखा संघके मन्त्री श्रीकृष्णदास जाजूने रेशम-उद्योगके वारेमें कुछ विचार वना लिये थे जिनपर उन्होंने गांधीजी की राय माँगी थी। विचार इस प्रकार थे: (१) इस वातको ध्यानमें रखते हुए कि रेशमके कीड़ेका पालन करने में हिंसा निहित है अतः इस उद्योगको द्वितीय स्थान दिया जाना चाहिए; (२) रेशम महीन खादीके साथ स्पर्धा करता है, (३) यह लोगोंको विलासिता-प्रेमी वनाता है और (४) इसमें अपेक्षाकृत अधिक पूँजीकी भी जरूरत है।

देखते है वे रेशमका त्याग करे। लेकिन हम खादीकी दृष्टिसे इस भेदमें न पडे। अपने भडारोमे हम दोनो किस्मोको स्थान देवे। हा, उत्तेजन तो अहिसक रेशमको ही देवें।

(२) रेशमको हम कभी वहाँतक न जाने दे कि जिससे वह खादीसे स्पर्धा कर सके। रेशमको स्थान देने का यही कारण था कि वह खादीकी पूरक रहे। साथ ही दूसरी यह दृष्टि भी रही कि विदेशी रेशमसे और यहाँकी भी मिलोकी रेशमसे तो हाथ-चरखेसे कती हुई रेशम हमेशा अच्छी है। लेकिन रुईके कपडेका स्थान उसे कभी न दिया जाये। इसीलिए भडारोमे रेशम रखने की मर्यादा अकित की है।

(३) यह प्रश्न महत्त्व देनें लायक नही है, क्योकि यो तो आन्ध्र खादी, रगीन खादी तथा बूटेदार खादी भी हमे शौकीनीकी ओर ले जाती है। खादी, शौकीन लोगोके लिए उतनी है जितनी साधु और गरीव लोगोके लिए। आरम्भ कालसे हमारा प्रयत्न भी रहा है कि खादीमे जितनी शोभा, नक्शी हम डाल सके उतनी डाले। प्रत्येक प्रदर्शनीमे हम यही चीज वताते है। प्रति वर्ष खादीकी शोभामें हम प्रगति बताते आये है, और यह ठीक ही था और है। खादी-मानसका मतलव यह कभी नही है कि उसमें शोभा और कलाको स्थान ही नही है, और वह सिर्फ गरीबोका लिबास है। इसलिए मर्यादा यह रखी जाये कि जितनी शोभा और कला हम खादीमें डाल सकते है उतनी डाले और उससे सन्तुष्ट रहे। इस दृष्टिसे रेशम त्याज्य हो जाता है और होना चाहिए। इसी दृष्टिसे हम आन्ध्रकी वारीक खादीको रेशमके मुकाबिलेमे रखते है। तव रेशमके शौकीन कहते है कि आन्ध्रकी खादीसे उन्हें रेशम बहुत सस्ती मिलती है। मैं उत्तर देता हूँ कि इस तरह हम खादीको बढा नही सकते है। खादी महगी भी अन्तमे सस्ती ही है।

(४) रेशमके व्यापारमें दो गुनी पूंजी लगती है तो हमे उसके त्यागका सबल कारण मिलता है। लेकिन मनुष्य-स्वभावको देखते हुए हम रेशमका सर्वथा त्याग नही करते है या नही कर सकते है। खादीकी व्याख्यामे भी हमने हाथकती रेशम तथा हाथकती ऊनको स्थान दिया है। लेकिन हम नफा बढाने की दृष्टिसे रेशमी या ऊनी कपडोका स्थान नही दे सकते है। इन कपडोकी मर्यादा तो रखनी ही होगी। क्योकि करोडोकी सेवा तो रुईकी खादीके द्वारा ही हो सकती है।

बारडोली, १३ दिसम्बर, १९४१

खादी-जगत्, दिसम्बर १९४१

२३०. पत्र : मीराबहनको

बारडोली
१३ दिसम्बर, १९४१

चि० मीरा,

महज इतना बताने के लिए लिख रहा हूँ कि तुम मेरे खयालसे कभी दूर नही रहती। मै लेखन-कार्यमें डूबा हुआ था। वह अभी-अभी समाप्त हुआ है। आशा है, तुममें शक्ति आ रही होगी और चित्त पहलेसे अधिक शान्त होगा।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

मेरी तबीयत बहुत अच्छी है।

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४९१) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८८६ से भी

२३१. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

१३ दिसम्बर, १९४१

प्रिय जवाहरलाल,

तुम्हारा पत्र मिला। यह जानकर खुशी हुई कि इन्दु भी तुम्हारे साथ आ रही है। यहाँ कोई कहने लायक सर्दी नही है। रातें ठंडी होती हैं और दिन गर्म।

हमें बहुत-से सवालोंपर बातचीत करनी है। मुझे विश्वास है कि मौलाना साहब और तुम कार्य-समितिकी बैठककी तारीखसे पहले यहाँ आ जाओगे।

मुझे तो अ० भा० च० संघ और गो-सेवा संघकी कई बैठकोंमें भाग लेना है। बैठकें १७ से आरम्भ होंगी। उम्मीद है २० को मैं इनसे छुट्टी पा लूँगा।

सरदार अपनेको ठीक सँभाले हुए हैं।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४१। सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

२३२. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

१३ दिसम्बर, १९४१

चि० आनन्द,[1]

अब मुझे किसी हदतक फुरसत है, इसलिए तुम्हें लिख पा रहा हूँ। मैंने चित्रपर हस्ताक्षर कर दिये हैं।

पुस्तकोका प्रकाशन तुम अपने विचारोके अनुसार कर सकते हो। लेकिन जीवनजी[2] खुद उस तरहकी कोई चीज प्रकाशित न करें, उनपर ऐसा बन्धन लगाना असम्भव है। तुम किसी और वर्गके पाठकोकी जरूरतको ध्यानमें रखकर पुस्तकें प्रकाशित कर रहे हो और वह किसी और वर्गके पाठकोको ध्यानमें रखकर। तुम्हारा या जीवनजीका कोई आर्थिक उद्देश्य नही है। पुस्तकोसे प्राप्त आयका उपयोग जन-हितमें होगा। इसलिए मैं किसीको भी रोकूँगा नही।

अनुवादके लिए आये सब प्रस्ताव मेरे पास भेज दो।

आशा है, तुम बेहतर होगे और विद्या[3] खूब मजेमें होगी।

स्नेह।

बापू

श्री आनन्द हिंगोरानी
अपर सिन्ध कॉलोनी
कराची सदर

अंग्रेजीकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य : राष्ट्रीय अभिलेखागार और आनन्द तो० हिंगोरानी

१. सम्बोधन हिन्दीमें है।

२. जीवनजी डा० देसाई, नवजीवन प्रेसके व्यवस्थापक

३. आनन्द तो० हिंगोरानीकी पत्नी

२३३. पत्र : प्रभावतीको

१३ दिसम्बर, १९४१

चि० प्रभा,

तेरा एक भी पत्र नहीं आया, यह क्या बात है? बा रोज पूछती है। तू कैसी है, क्या करती है? काम व्यवस्थित हो गया या नहीं? मेरी तबीयत अच्छी है। यहाँ अभी शीतका नाम-निशान तक नहीं है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५६३) से

२३४. पत्र : हीरालाल शर्माको

१३ दिसम्बर, १९४१

चि० शर्मा,

तुम्हारा कैसे चलता है? दिन कैसे जाता है? मैं थोडा-सा चिंतित रहता हूँ। मैं यहाँ ९ जनवरी तक हूँ।

बापूके आशीर्वाद

बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष, पृ० ३०९ के सामने प्रकाशित अनुकृतिसे

२३५. पत्र : देवदास गांधीको

बारडोली
१४ दिसम्बर, १९४१

चि० देवदास,

अब तू छूटने की तैयारीमें होगा। मैं तेरे विस्तृत पत्रकी अपेक्षा करूँगा। जेलमें तो तुझे आवश्यक आराम मिल गया होगा। खाना-पीना जेलका ही खाता था या बाहरसे मँगाता था, साथी कौन थे, महीना किस प्रकार बिताया, वजन कितना कम हुआ या बढ़ा? अपीलका क्या हुआ?

रामू तेरे पीछे आनेवाला था। अब उससे कहना कि भविष्यमे वह मेरा पहला सत्याग्रही होगा, यह भी कि वह जेलरोका हृदय ठीकसे जीत ले।

आशा है, तेरी गैरहाजरीमे लक्ष्मी वगैरह अच्छे रहे होगे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

यहाँ तो सरदारके राज्यमे मौज-मजा है।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१४५) से

२३६. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

१४ दिसम्बर, १९४१

चि० मुन्नालाल,

आशा है, तुम अच्छे होगे। अपनी मानसिक समस्याओका समाधान और अपना काम शान्तिपूर्वक करना। जितना हो सके उतना ही। कचनकी गाडी चल रही है। यहाँ तो काफी गर्मी है। शीतका नाम-निशान भी नही है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४८२)से। सी० डब्ल्यू० ७१६१ से भी; सौजन्य मुन्नालाल ग० शाह

२३७. पत्र : चिमनलाल न० शाहको

१४ दिसम्बर, १९४१

चि० चिमनलाल,

मै तुम्हारे स्वास्थ्यके बारेमे सोचता रहता हूँ। इसे काबूमे लाना जरूरी है। शकरन्ने लिखा था कि वह कुछ करना चाहता है। मुझे खबर देना। बबूको[1] कल-परसोतक आना चाहिए।

मै अच्छा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०६०५)से

१. शारदा गो० चोखावाला, चिमनलाल शाहकी पुत्री

२३८. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

वारडोली
१५ दिसम्बर, १९४१

प्रिय अमृतलाल,

वेशक, मैं तुम्हें यह वताने की कोशिश करूँगा कि तुम किस प्रकार सरासर गलती पर हो। लेकिन जव समझने और समझानेवाले दो अलग-अलग जीवन-दर्शनोंमें विश्वास रखते हो तो वात समझा पाना कठिन होता है। मेरी भी स्थिति ऐसी ही कठिन है।

तुमने 'वाइविल' का हवाला दिया है, लेकिन यहाँ तुम उस हवालेका उपयोग विलकुल नये और स्वार्थमय ढगसे कर रहे हो। तुम दानको ऋण मानकर चल रहे हो। अव किया क्या जाये? तुम्हें मैं वगालसे इसलिए लाया कि तुम वहाँ विलकुल तग आ गये थे। अव तुम यह सोच रहे हो कि यहाँ आकर तुमने मुझपर कृपा की है।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि एक मजदूरको मजदूरी पानेका अधिकार है। तुम विना कामके पैसा चाहते हो। और जव तुम काम भी करते हो तव हम दोनोंके वीच जो अधिकतम दर तय हुई थी उससे — अर्थात् ८ घटेके श्रमके लिए ८ आनेसे — ज्यादा माँगते हो। लेकिन तुम सोचते हो कि मुझपर अर्थात् समाजपर तुम्हारा एक हक वनता है — लगभग वहुत कम कामके एवजमें प्रतिदिन २ रुपये १२ आने पाने का हक। मुझे गलत न समझना। मुझे मालूम है कि आभा कुछ कर रही है और शायद तुम भी। लेकिन तुम्हारे पत्रसे प्रकट होता है कि अगर तुम सव कुछ नहीं कर रहे होते तव भी तुम उपर्युक्त राशिका दावा करते, मानो वह तुम्हारा हक हो। मेरा कहना तो यह है कि तुम्हारा यह दावा करना और फिर उच्च नैतिकताके आधारपर उसका औचित्य ठहराना विलकुल गलत है। मेरी मान्यता भिन्न है। इसलिए अव इस वात पर मुझे और अधिक माथापच्ची नहीं करनी चाहिए।

अगर तुम विनयी हो और सही भावनासे प्रकाश पाने की कोशिश करते हो तो ईश्वर तुम्हें प्रकाश देगा।

अगर मेरे पत्रसे तुम्हारा समाधान न हो तो फिर उस दिनकी राह देखो जव हम दोनोंकी मुलाकात हो सकती है। मुलाकात होगी ही, यह तो कोई नहीं कह सकता। वहरहाल, तुम यही समझकर वैठो कि हम परस्पर एक-दूसरेसे सहमत नहीं हो सकते।

स्नेह।

वापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३३०)से। सौजन्य अमृतलाल चटर्जी

२३९. पत्र : चन्दन स० कालेलकरको

१५ दिसम्बर, १९४१

चि० चन्दन,

स्वार्थवश ही सही, लेकिन तूने पत्र तो लिखा, सो अच्छा ही हुआ।[1] वडौदामे पैसा तो मिलेगा, लेकिन वहाँ तेरे राजाको अपनी आत्मा वेचने का मौका आ सकता है। देशी राज्योमे ऐसे मौके आते है कि अगर रियासतका हुक्म न मानो, तो जरा देरमें दो कौडीकी इज्जत हो जाये। इसीलिए पहले जव मौका आया था, तभी सोच लिया था कि देशी राज्यके लाख भी छोडे जाये और वाहरके सौ ही वहुत माने जाये। काशीमे तुम दोनोको सेवा करने का जो अवसर प्राप्त है वह और कही नही मिलेगा। जब तूने शकरसे विवाह करने का निश्चय किया था तव क्या तुझे मालूम नही था कि वह एक फकीरका लडका है, फकीरीमे पला-वढा है, स्वाभिमानी है और अपनी आनके लिए सव-कुछ उत्सर्ग कर देने को तैयार हो जाता है? हाँ, यदि सीधे ढगसे ऐश-आराम मिले, तो जरूर उन्हे भोगने को तैयार रहेगा। काकामें और उसमें इतना भेद हो सकता है।

तू शकरको प्रलोभनमें मत डाल। वह जहाँ है, धीरज धरने से वही ऊँचा चढेगा। अभी जितना मिलता है, उसमे भी तुम्हारा खर्च तो चल ही जाता है। धीरज रखना। "सुख-दु ख मनमे नही लाना चाहिए, ये शरीरके साथ ही गढे गये है।" इस वाक्यका स्मरण करके शकरको अपने सीधे रास्ते जाने देना।

तू और वेबी सानन्द होगे। यह तो मैंने जितना सोचा था उससे वहुत ज्यादा लम्बा पत्र लिख दिया। इतना समय तो विलकुल नही था। लेकिन तू जो ठहरी!

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० ९५५)से, सौजन्य सतीश द० कालेलकर

१. चन्दन कालेलकरने शिकायत की थी कि उसके पति बडौदामें अधिक वेतनवाली एक नौकरी स्वीकार करने में आनाकानी कर रहे हैं।

२४०. पत्र : तारामती म० शाहको

१५ दिसम्बर, १९४१

अगर मथुरादासके भाग्यमें अब भी सेवा करना बाकी है, तो कोई अड़चन आयेगी ही नही। इसमें मुझे कोई सन्देह नही है कि अगर मथुरादास मौन धारण करके केवल ईश्वर-चिन्तन करे, तो यह उसके लिए सर्वोत्तम दवा है।

[गुजरातीसे]

बापुनी प्रसादी, पृ० १८१-८२

२४१. पत्र : नरेन्द्रदेवको

बारडोली

१६ दिसम्बर, १९४१

भाई नरेन्द्रदेव,

आपके पत्रका उत्तर मैंने जान-बूझकर रोक रक्खा। इनकार करने की हिचकिचाहट होती थी। लेकिन दूसरी मांगे भी आने लगी। मैंने देखा कि निमत्रणोके स्वीकारका मेरा समय गया। काशीके बहुत तो मैंने रोके लेकिन सबका इनकार नही कर सकता था। मालवीयाजीका आग्रहका इनकार कहांतक करू? इसलिए लखनऊसे मुझे मुक्ति दें।

प्रकृति अच्छी होगी। यहा आओगे?

आपका,

मो० क० गाधी

गाधी-नेहरू पत्र-व्यवहारकी नकल से। सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

२४२. पत्र : सुन्दरलालको

१६ दिसम्बर, १९४१

भाई सुदरलाल,

तुम्हारा खत मिला। तुम्हारा आशावाद जबरदस्त है। मैंने सुलतानाको[1] उत्तर दिया है। उसका उत्तर नही आया। मेरी तो तैयारी है। मेरे नजदीक तो झगडा ही कहा है ?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

२४३. पत्र : सुलताना रज़ियाको

बारडोली
१७ दिसम्बर, १९४१

प्रिय सुलताना,

तुम्हारा पत्र मिला। मैं मौलाना साहबको लिखूंगा। तुम्हें फिर आना होगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८६०)से

२४४. भाषण : अ० भा० च० संघ की बैठकमें

बारडोली
१७ दिसम्बर, १९४१

श्री जाजूजी का पत्र[2] कई दिन पहले मिल चुका था। इसमे काफी बाते मुझे प्रिय है। मैंने इसपर आज कुछ चर्चा कर लेना आवश्यक माना है। अगर इसमे बतलाई गई चीजे मुझे लिखनी होती तो शायद मेरी भाषा कुछ भिन्न रहती, पर

१. देखिए पृ० १२६।

२. जिसमें लिखा था कि खादी-कार्यकर्ताओंसे जिस त्याग और श्रमकी अपेक्षा की जाती है वह उनमें दिखाई नही देता।

चीजें वही होती। इसमें सिद्धान्त ठीक बतलाये गये हैं। यह दूसरी बात है कि उन पर अमल कहातक हो सकेगा। लेकिन अच्छा है कि सिद्धान्तको हम साफ-साफ समझ ले। सिद्धान्त कायम हो जाने पर हमारी सोचनेकी दृष्टि एक हो जाती है। आपसमें मतभेदके लिये स्थान नहीं रहता। अमलमे यदि कमी है तो प्रयत्नशील बनें। प्रयत्नके सिवा हम और कर भी क्या सकते हैं।

श्री जाजूजी ने बतलाया है कि अगर खादीकी जडमे जो सिद्धान्त है उसको हमने अच्छी तरह पहचान नही लिया तो कितनी भी खादी हम पैदा कर ले हमारा काम गिरनेवाला है। हिंदुस्तान खादीमय तो पहले भी था। इतना ही नहीं, दुनिया के कई बडे-बडे देशोको भी खादी पहुचाता था। लेकिन आज हम उसपर अभिमान नही कर सकते। उस वक्त खादीका सबध राजकाजमे नही था। उन दिनो राजा और कारभारी लोभकी वजहसे गरीबोको चूसकर खादी लेते थे, उसे बेचते थे और इस तरह धन इकट्ठा करते थे। इसीलिए आज भी हमें खादीकी बात समझाने में दिक्कत होती है।

लेकिन आज हम मानते हैं कि खादी हमारी मुक्तिका साधन है। मैंने यह बात सन् १९०८ में पहिले सोची थी। जो चीज पहिले हमारी गुलामीका कारण थी आज वही हमारी मुक्तिका द्वार होगी यह समझकर हमे चलना है।

इसलिये हमने खादीकी जड सत्य और अहिंसापर रक्खी है। अगर हम जडको भूल जाय और किसी-न-किसी तरहसे खादी पैदा करनेकी कोशिश करे तो मौका आ जायगा कि आखिर हम खादीको जला देंगे। दूसरे रचनात्मक कामोंकी कोई उतनी मजाक नहीं उडाता और उतना तिरस्कार नही करता जितना खादीका मजाक लोग उडाते और निन्दा करते हैं। मिलोके आ जाने से उन्हें ऐसा करनेका और भी मौका मिल गया है। उनकी दृष्टिसे यह बात ठीक है। वे कहते हैं कि पहले भी खादी थी तो फिर हम गुलाम क्यो बने? इसी खादीको हम स्वराज्यका जरिया कैसे समझें? इसका जवाब देना सघका कर्त्तव्य है। श्री जाजूजी ने यही प्रश्न रखा है।

खादी तो हमें बहुत बडे पैमानेपर बनानी है ही। यह बात भी हमें सोचनी है। लेकिन अगर हम सत्य और अहिंसाको भूल गये तो हम कितनी भी खादी बनावें आखिर हम उसे खो देंगे। अगर हम अपनी जडको न पकडें तो हममें गन्दगी भी पैदा हो सकती है। इसलिये कार्यकर्त्ताओंको चाहिये कि खादीके सब कारोबारकी स्वच्छताके बारेमें भी वे खयाल करे। आज जब कि हम बहुत बडे पैमानेपर खादी बनानेकी बात सोचते हैं तब जडको नहीं भूलना चाहिये। आज मैं यह नही कहूँगा कि हमारी सबकी-सब कत्तिनें भी सत्य और अहिंसाको पहिचानें। लेकिन अपने ३००० कार्यकर्त्ताओंके बारेमें यह जरूर कहूँगा। यदि वे ऐसे नहीं होंगे तो हमारा काम अच्छी तरह नहीं चलेगा, हम डूब जायेंगे। श्री भारतानदजी ने १० सालमें हिन्दुस्तानको पूरी खादी देनी हो तो हर साल किस क्रमसे खादी बढनी चाहिये उसकी एक योजना बनाई है। आज तो वह केवल कागजपर के आकडे हैं। मगर यह एक सच्ची चीज भी बन सकती है। मगर यदि कार्यकर्त्ता ही ऐसे न मिले तो वह

कैसे होगा? यदि हम तय कर ले तो हम सच्चे बन सकते है। इस चीजको श्री जाजूजी ने पहिला स्थान दिया है वह ठीक ही है। इस तरहके कार्यकर्त्ता कैसे पैदा करे? यह प्रश्न हमारे सामने है। जागृत रहते-रहते हममें अहिंसा और त्यागकी भावना पैदा होगी। त्यागकी शक्ति तो हिंसक भी रख सकता है। हिटलर भी त्यागी कहा जाता है। वह तो हिंसाकी मूर्ति है। सुना जाता है कि वह निरामिषाहारी है। मुझे यह माननेमे दिक्कत आती है कि फिर वह इतने कत्लको कैसे बर्दाश्त कर लेता है। यह कुछ भी हो उसका जीवन त्यागसे भरा बतलाया जाता है। वह निर्व्यसनी है। उसने शादी नही की है। उसका आचरण साफ बतलाया जाता है। वह बहुत जागृत रहता है। हममें तो त्याग और अहिंसा दोनो चाहिये। अहिंसाका अर्थ है प्रेम। पहिले मुख्य कार्यकर्त्ताओमे यह पैदा होना चाहिये। मुझसे शुरू करे। मेरे बाद जाजूजी मे और फिर कौसिलके सदस्योमे। हम जागृत रहे और सावधान बने। हमारे जीवनका प्रभाव अनजाने भी कार्यकर्त्ताओपर पडेगा। तब खादीके बारेमे नि शक और निर्भय बन सकेगे। हमारी प्रगति भले धीमी हो मगर जो सिद्धान्त बनाये है उन्हे छोडना नही चाहिये। उन्हे हम न छोडे तो हम सफल होगे ही।

निर्वाह-वेतनका प्रश्न जटिल है।[1] मै भी इसका निर्णय नही कर सका हूँ। एक अच्छा आदमी है, उसकी योग्यता भी बढी-चढी है तो मुझे प्रलोभन होगा। उसे हम छोड न सकेंगे। अगर हम कोई नियम बना ले तो फिर उसका पालन होना चाहिये। मैने भी स्वय ऐसे नियम बनाने की कोशिश की है। पर आज हमे अपनी लाचारी स्वीकार करनी पडेगी। ऐसा नियम तो हम बना ही नही सकते कि जिससे आदमी ही न मिले। ऐसे नियम बनानेका मतलब होगा कि हम समयको नही पहचानते। इस प्रकार तो हम कत्तिनोको तीन आना देनेकी अपनी शक्ति भी खो बैठेंगे। यह बात सच्ची व सही है कि जब हम कत्तिनको तीन आना मजदूरी देते है तो खुद भी तीन आनेपर गुजर करे। आज तो हम कत्तिनोसे कई गुना ज्यादा ले रहे है। हमारेमे कम-से-कम वेतन पानेवाला भी कई गुना अधिक पाता है। मगर मुझे शर्मके साथ कबूल करना पडता है कि यह चीज हमे मुश्किलमे डाल देगी, पर मेरे पास कोई सन्तोषकारक जवाब नही है।

खादी-जगत्, दिसम्बर १९४१, और जनवरी १९४२

१. निर्वाह-वेतनके सम्बन्धमें श्रीकृष्णदास जाजूने भी कुछ सवाल किये थे और यह सुझाव दिया था कि कार्यकर्ताओंको जो मिलता है उससे उन्हें संतोष मान लेना चाहिए।

२४५. पत्र : मीराबहनको[1]

१८ दिसम्बर, १९४१

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। बेशक, अब तुम्हें चिट्ठी-पत्री लिखना और अन्य सब काम शुरू कर देने चाहिए। अब तुम्हें बिना किसी विघ्न-बाधाके सहज जीवन व्यतीत करना चाहिए और अपनी पूरी ऊँचाईतक उठना चाहिए। यहाँ गर्मी अब भी पड रही है लेकिन मैं इसे बरदाश्त कर रहा हूँ। जगह लोगोंसे ठसाठस भरी हुई है, लेकिन सरदारका बन्दोबस्त बहुत अच्छा है।

स्नेह!

बापू

मूल अंग्रेजी पत्र (सी० डब्ल्यू० १०८७४)से। सौजन्य पृथ्वीसिंह

२४६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

बारडोली
१९ दिसम्बर, १९४१

युद्ध ज्यों-ज्यों भारतीय सीमाके निकट पहुँचता जा रहा है त्यों-त्यों लोगोंमें भय समाता जा रहा है। असमसे आया एक पत्र इस सिलसिलेमें आये पत्रोंका अच्छा नमूना है। पत्र अन्य अनेक स्थानोंसे भी आये हैं। इनके लिखनेवाले युद्ध-प्रतिरोधी और सत्याग्रहके निर्देशकके रूपमें मुझसे मार्ग-दर्शन चाहते हैं।

जहाँतक सत्याग्रहका सम्बन्ध है, असम-जैसे क्षेत्रोंमें जिम्मेदार कांग्रेसियोंको सत्याग्रह नहीं करना चाहिए। इसके बजाय उन्हें उन लोगोंमें दृढता लाने का प्रयत्न करने में जुट जाना चाहिए जो कांग्रेसके प्रभावमें हैं।

रहा उन लोगोंको मार्ग-दर्शन देने का प्रश्न जो मेरी या कांग्रेसकी बात सुनने को तैयार हैं, तो ऐसे लोगोंको तो जल्दी ही कार्य-समितिकी ओरसे मार्ग-दर्शन प्राप्त होगा।

लेकिन जहाँतक खुद मेरा सम्बन्ध है, मेरा तो स्पष्ट मत है कि चाहे उनके बीच बम भी गिराये जा रहे हों, लोगोंको डरना नहीं चाहिए। कमसे-कम फिलहाल तो केवल बड़े नगरोंको ही खतरेकी आशंका है। जो लोग खतरा नहीं उठाना चाहते वे चुपचाप अपना-अपना नगर छोड़ दें तो अच्छा होगा।

१. मीराबहनने यह पत्र पृथ्वीसिंहको लिखे पत्रके साथ भेजा था।

भयके हर प्रसगपर आपाधापी मचा देना और भागने के लिए रेलवे स्टेशनो पर जाकर जमा हो जाना गलत है। ऐसी भारी भीडोके बाहर जाने की व्यवस्था रेल-कर्मचारी नही कर सकते। जान बचाने के लिए भागना नामर्दी है। बुद्धिमान और बहादुर आदमी तो एक-एक व्यक्तिके सुरक्षित निकल जाने तक प्रतीक्षा करेगा। जो बात मैंने कही है वह काग्रेसियो तथा अन्य लोगोपर लागू होती है। मै नही चाहूँगा कि कोई हमारे बारेमे यह कहे कि हमारा राष्ट्र ऐसे लोगोका राष्ट्र है जो तनिक-सा खतरा आते ही पागलोकी तरह भागते फिरते है। हमपर जो भी विपत्ति आ पड़े, हमे बहादुरीसे उसका सामना करना चाहिए।

युद्ध-प्रतिरोधी काग्रेसियोको अपने-अपने मुकामपर मुस्तैद रहकर लोगोकी यथा-शक्ति सहायता करनी चाहिए। बडेसे-बडा खतरा उठाकर भी घायलोकी सहायताके लिए भाग-दौड करना उनका कर्त्तव्य है।

यद्यपि मै इस बातके खिलाफ रहा हूँ और अब भी हूँ कि कोई भी काग्रेसी ए० आर० पी० मे शामिल हो, किन्तु मैंने कदापि यह नही सोचा है या ऐसा नही कहा है कि काग्रेसियोको खतरेकी जगहो या सेवाके क्षेत्रोसे भाग खडे होना चाहिए।

कोई पुरस्कार या प्रशसा प्राप्त करने की आशा रखे बिना अच्छी सेवा कर सकने के लिए यह जरूरी नही कि आदमी किसी सरकारी सगठनसे ही जुडा हुआ हो।

मुख्य बात यह है कि कठिन-से-कठिन परिस्थितिमे भी चित्तकी स्थिरता कायम रखी जाये। यह बात खास तौरसे उन लोगोके लिए जरूरी है जो युद्ध-प्रतिरोधी है और जिन्हे किसी शत्रुका भय नही है।

[अंग्रेजीसे]

बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-१२-१९४१

२४७. तार : तिम्मा रेड्डीको[1]

१९ दिसम्बर, १९४१

मैंने ऐसा कभी नही कहा कि काग्रेसियोको मार्ग-दर्शन नही करना चाहिए।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

१. नन्दीदुर्ग श्रम-संगठनके अध्यक्ष तिम्मा रेड्डीने १८ दिसम्बरके अपने तारमें रामचन्द्र दलके लोगों द्वारा किये जानेवाले प्रचारके सम्बन्धमें गाधीजी से सलाह माँगी थी। रामचन्द्र दलके लोगोंका कहना था कि काग्रेसियों द्वारा श्रम-सगठनोंका मार्गदर्शन किये जाने की बात गाधीजी को पसन्द नहीं है।

२४८. पत्र : लीलावती आसरको

बारडोली
१९ दिसम्बर, १९४१

चि० लिली,

तेरे दो पत्र मिले। मेरे पत्र लिखने पर भी अगर वह तुझे न मिले, तो इसमें किसकी गलती है? मैंने तो तुझे एक कार्ड १० दिसम्बरको लिखा था। उसके बाद तेरा पत्र अभी-अभी मिला।

तुझे तैयारी जरूर अच्छी करनी चाहिए। यहाँ आने की मनाही नहीं है, लेकिन अगर आने का लोभ छोड सके, तो वहीं अध्ययन करती रह। बाई चढने का कारण तो तेरी गफलत ही थी। बा को बुखार आ गया था। दुर्गाको[1] महादेवभाई ले गये हैं।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०११४)से। सौजन्य लीलावती आसर

२४९. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[2]

बारडोली
२० दिसम्बर, १९४१

अमेरिकाके युद्धमें शामिल होने के बारेमें मुझसे एक संक्षिप्त वक्तव्य माँगा गया है। आम तौरपर जिस रायका आज बोलबाला है उसमें मैं अपनी आवाज नहीं मिला सकता। अमेरिकाके युद्धमें शामिल होने का मैं स्वागत नहीं कर सकता। अमेरिकी परम्पराने उसे युद्ध-रत राष्ट्रोंके बीच पंच और मध्यस्थकी विशेष भूमिका प्रदान की है। उसकी प्रादेशिक विशालता, आश्चर्यजनक शक्ति, अद्वितीय आर्थिक सम्पन्नता तथा वहाँकी जनताके सामाजिक स्वरूपको देखते हुए मानना पडता है कि वही एक देश है जो संसारको आजके भीषण नरसंहारसे बचा सकता था जिसके बारेमें सोचते हुए भी मन काँपता है।

१. महादेव देसाईकी पत्नी

२. यह वक्तव्य गांधीजी ने विदेशसे प्राप्त अनुरोधपर दिया था।

अमेरिका युद्धमे शामिल होने से बच सकता था या नही, मैं नही कह सकता। इस प्रश्नपर कोई निर्णायक मत व्यक्त करने के लिए मेरे पास आवश्यक तथ्य नही है। मैने तो केवल अपने मनकी इस आकुल आकाक्षाको अभिव्यक्ति दी है कि अमेरिका के लिए अपनी स्वाभाविक भूमिका निभाना सम्भव होता तो कितना अच्छा होता। यह सोचकर मन काँप उठता है कि अमेरिकाके युद्धमे शामिल हो जाने के बाद अब ऐसा कोई बडा देश नही बच रहा जो मध्यस्थता करके शान्ति स्थापित कर सके — शान्ति, जिसके लिए निस्सन्देह सभी देशोके लोग लालायित है। यह बडी विचित्र बात है कि धीरे-धीरे बढते जाते युद्धोन्मादका प्रभाव मनुष्यकी शुभेच्छाको निष्प्राण बना देता है।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २१-१२-१९४१

२५०. सन्देश : बम्बईके भगिनी-समाजको

बारडोली
२० दिसम्बर, १९४१

मै आशा करता हूँ कि भगिनी समाजका रजत जयन्ती महोत्सव शानदार ढगसे मनाया जायेगा और समाज उत्तरोत्तर प्रगति करता रहेगा।

मो० क० गांधी

भगिनी समाज
मगनलाल घीथा बिल्डिंग
२२५, खेतवाडी, मेन रोड
बम्बई – ४

[गुजरातीसे]
बापूजीनी शीतल छायामां मे पृ० १ के सामने प्रकाशित अनुकृतिसे

२५१. पत्र : विजया म० पंचोलीको

२० दिसम्बर, १९४१

चि० विजया,

तेरा पत्र मिला। तेरी माँ और तेरा भाई वगैरह कल ही यहाँ होकर गये है। तू यहाँ होती तो मुझे भी अच्छा लगता। अहमदाबादका कुछ तय नही है। अगर जाने की बात हुई तो मै तुझे लिखूँगा। तू वहाँ शान्तिपूर्वक अपना काम कर रही है, इससे मुझे सन्तोष है। बा थोडी बीमार पड गई थी। अब पहलेसे ठीक है। महादेवभाई दुर्गाको लेकर उनाई गये है, लेकिन वह वहाँ बीमार पड़ गई है। वैसे चिन्ताकी कोई

बात नहीं है। नानाभाईसे कहना कि भाई विट्ठलदास जेराजाणी काठियावाडकी खादी कमेटीमें शामिल होना चाहते हैं। उन्हें शामिल कर ले और उन्हें लिखें, और कमेटी की बैठकमें उन्हें बुलायें।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१४३)से। सी० डब्ल्यू० ४६२५ से भी, सौजन्य विजया म० पचोली

२५२. पत्र : मुन्नालाल गं० शाहको

२० दिसम्बर, १९४१

चि० मुन्नालाल,

तुम्हारा पत्र मिला। यह रद्दोबदल तुम तुरन्त कर सकते हो। टेलिफोन केबिन आफिसके बाहर रहे, जिससे आफिस बन्द किया जाये, तब भी टेलिफोन खुला रहे। फिर भी, केबिन आफिससे इस तरह जुडा हुआ होना चाहिए जिससे कि आफिसमें रिसीवर लेकर बात की जा सके। डाक-रूमके बाहर कहीं तो ठीक गुंजाइश निकल सकेगी। अगर यह सब समझ गये हो तो इतना रद्दोबदल करना। इसमें तुम्हें अपने प्रश्नका उत्तर मिल जाता है। कचनके लिए कुछ समय निकाला है। उसका अध्ययन जारी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० ७१६२)से। सौजन्य मुन्नालाल ग० शाह

२५३. पत्र : जमनालाल बजाजको

स्वराज आश्रम, बारडोली
२१ दिसम्बर, १९४१

चि० जमनालाल,

भाई जुगलकिशोरके पत्रके अनुसार उनसे चरखा संघ द्वारा काम लेना। कांगडा में जितना हो सके उतना पैसा तो हम अवश्य खर्च करेंगे, यही बात पिलानीके बारेमें है।

मेरे विचारसे तो ए० आई० सी० सी० (अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी)की बैठक वर्धामें हो, यही ठीक होगा। यदि तुम्हें भी ठीक लगे तो तारसे निमन्त्रण

भेज देना। बैठक मेरे पहुँचने की तारीखके बाद और १५ तारीखसे पहले समाप्त हो जानी चाहिए।

इन्दु यहाँ आ गई है।

आशा है, मदालसा ठीक होगी। बच्चा बराबर बढ रहा होगा।

मुझे चरखा सघमे तुम्हारी अनुपस्थिति बहुत महसूस हुई और अब कार्यकारिणी समितिमे भी महसूस होगी। पर तुमसे आग्रह न करने में ही मैंने श्रेय समझा है।

मेरी तबीयत ठीक रहती है, तुम्हारी ठीक होगी।

तुम २७ जनवरीके बाद गोसेवा सघकी बैठक रख सकते हो।

क्या जानकीमैया[1] आ गई? तबीयत तो नही बिगाड़ी न?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०२७)से

२५४. पत्र : हीरालाल शर्माको

२१ दिसम्बर, १९४१

चि० शर्मा,

मेरी चिंता मकानके बारेमे नही है। मेरी चिंता यह है तुम्हारे उपचार जैसे मै चाहता हू नही चलते हैं। आश्रममे इतने दरदी है उनका उपचार क्यो नही करते हो? किसी स्त्री आदमी बीमार पडे तो उसके पास मै तुमको नही भेज सकता हूं। न खुर्जामे कुछ करते हो। ऐसे समझा हू। तुमसे मै कुछ ऐसे समझा हू कि जब तक मकान तैयार न हो जाय कुछ हो नही सकता है। जिधर मकान तैयार है वहा काम कर नही सकते हो। मेरे कहने का भावार्थ समझमे आया है? तुम्हारे बारेमे मेरी नैतिक जिम्मेदारी है। मुझे चुभता है कि मै किसीको सतोषजनक उत्तर नही दे सकता हू। मेरे पास दरदी आते हैं। उनके लिये मै क्यो डाक्टरोको बुलाऊँ और तुमको नही? तुम्हारा खत जो मेरे सामने है मुझे किसी प्रकारका सतोष नही देता है। मैने दलीलके लिये नही लिखा है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. जमनालाल बजाजकी पत्नी

२५५. पत्र : जमनालाल बजाजको

२४ दिसम्बर, १९४१

चि० जमनालाल,

मैं कैसा बेवकूफ और स्वार्थी भी हूं? तुमारी तबीयतका कुछ खयाल नहिं किया सिर्फ मेरा हि किया। तुमारी इजाजत मागी और मैंने राह भी न देखी। और कमिटिमे आग्रह किया कि मिटींग वर्धामे रखी जाय।[1] उसमे मैंने हिंसा की और वह भी मामूली नहिं मित्रताका, तुमारी उदारताका दुरुपयोग किया। तुमारे पास माफी मागने मे प्रायश्चित नहिं होता है। सच्चा प्रायश्चित तो वही होगा जिसे मैंने तुमारे प्रति जो निर्दयता बताई है ऐसी कभी न दुवारा तुम्हारे प्रति या अन्य कोई के प्रति बताऊं।

तुमारे प्रति तो धन्यवाद हि है तुम्हारे दिलकी बात कहने की तुमने हिम्मत बताई और अपनी मर्यादाका स्वीकार किया।[2] यह छोटी बात नहिं है। जरा-सी भी चिंता न की जाय। तुम्हारे इनकारसे मेरा आदर और प्रेम बडा है अगर वृध्धि की गुंजायश थी तो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०२८)से

२५६. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको

बारडोली
२७ दिसम्बर, १९४१

बिहार सरकारने हिन्दू महासभाकी सभापर रोक लगाकर जैसी कार्रवाई की है वह मेरी समझमें नहीं आती।[3] जिन लोगोंने सभा करने की इच्छा प्रकट की थी वे सब जिम्मेदार किस्मके लोग थे और इससे भी बड़ी बात यह है कि — जहाँ तक मुझे

१. देखिए "पत्र : जमनालाल बजाजको", पृ० १९९-२००।

२. जमनालाल बजाजने अ० भा० का० कमेटीकी वर्धामें बैठक बुलाये जाने की व्यवस्था करनेमें अपनी असमर्थता प्रकट की थी।

३. बिहार सरकारने १ दिसम्बर, १९४१ से १० जनवरी, १९४२ तकके लिए हिन्दू महासभाके वार्षिक अधिवेशनपर पाबन्दी लगा दी थी। उसका कहना था चूँकि बकरीद इसी अवधिमें पड़ती है इसलिए साम्प्रदायिक झगड़े बचाने लिए यह आवश्यक है।

मालूम है — केन्द्रीय सरकारका उनपर भरोसा रहा है और वे सरकारके समर्थकोके रूपमे जाने जाते रहे हैं। वे युद्ध-प्रयत्नोमे शरीक थे और शरीक हैं। बिहार सरकार यह भरोसा क्यो नही कर सकी कि ये लोग शोभनीय व्यवहार करेगे, यह बात समझमे नही आती। देखता हूँ कि वीर सावरकर[1] बिहार सरकारकी सुविधाका खयाल रखते हुए, उससे कोई सहमति-समझौता करने के उद्देश्यसे, अधिवेशनकी तिथि बढा देने तक को तैयार थे।

समझौतेकी सारी कोशिशोके बेकार हो जाने के बाद दमनकी शिकार हिन्दू महासभाके लिए सत्याग्रह ही एकमात्र रास्ता रह गया था। और मुझे स्वीकार करना चाहिए कि वीर सावरकर, डॉ० मुजे तथा अन्य नेताओको गिरफ्तार[2] होते देखकर मेरा मन खुशीसे भर उठा है, क्योकि उन्हे सिर्फ इसलिए गिरफ्तार किया गया है कि उन्होने सार्वजनिक शान्तिको सुरक्षित रखने के लिए पूरी एहतियात बरतते हुए एक व्यवस्थित सभा करने के बहुत ही प्राथमिक और बुनियादी अधिकारपर आग्रह करने का प्रयत्न किया। मै देखता हूँ, बगाल सरकारके नये वित्त मत्री डॉ० श्यामाप्रसाद भी अपने सहयोगियोकी ही तरह सम्मानास्पद अपराध करके गिरफ्तार हो गये है। बिहार सरकारकी इस सर्वथा मनमानी कार्रवाईका शिष्ट और शान्तिपूर्ण विरोध करने के लिए मै सभाके नेताओको बधाई देता हूँ। निश्चय ही इस सरकारी निर्णयमे कोई भयकर भूल है। लेकिन अकसर किसी-न-किसी तरहसे बुराईमे से कोई अच्छाई निकल ही आती है। मै आशा करता हूँ कि इस सरकारी कार्रवाईसे बिहार के, वस्तुत पूरे भारतके, हिन्दू और मुसलमान मानव-स्वतन्त्रताकी रक्षाके उद्देश्यसे ऐक्य-बद्ध हो गये होगे। कारण, मुझे पूरा विश्वास है कि जिस स्वतन्त्रताका दावा मुस्लिम लीग खुद अपने लिए करेगी वही स्वतन्त्रता उसकी एक सखी सस्थाको न दी जाये, ऐसा वह कभी नही चाहेगी। मुझे आशा है कि बिहारकी इस घटनाका केवल एक ही परिणाम निकलेगा — यह कि हिन्दू महासभापर लगा प्रतिबन्ध उठा लिया जायेगा और जो लोग आज जेलोमे बन्द है वे बिना किसी विघ्न-बाधाके अपना अधिवेशन आयोजित कर पायेगे।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, २८-१२-१९४१

१. अखिल भारतीय हिन्दू महासभाके अध्यक्ष विनायक दामोदर सावरकर
२. २३ दिसम्बर को

२५७. पत्र : जमनालाल बजाजको

स्वराज आश्रम, बारडोली
२७ दिसम्बर, १९४१

चि० जमनालाल,

तुम्हारा खत मिला। मैंने पुनमचदजी[1] का कहना है इस भरोसेपर कबूल किया है कि तुमको वह कुछ भी तकलीफ नहिं देगे और उनमे इस कामको अजाम देने की शक्ति है।[1] तुम्हारे इस बारेमे कुछ भी तकलीफ उठाना मेरे ख्यालके बहार है।

इदु ए० आई० सी० सी० के मौकेपर आयेगी तो सही। यहा खुश रहती है।

स्टेटस पीपलस कानफरेन्सके बारेमे जैसे हमारी बात हुई थी। मैंने तो अभिप्राय दिया है कि आफिस वर्धा आनी चाहिये।

इसे बापु खतम नहीं कर सके हैं तो जितना लिखा है उतना भेज देने को कहते हैं।

अमृतकुंवर

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०२९) से

२५८. पत्र : कृष्णचन्द्रको

बारडोली
२७ दिसम्बर, १९४१

चि० कृष्णचद्र,

मैंने सोचा था कि मै तुमको शुद्धिके बारेमे पेट-भरके लिख सकुगा। लेकिन मिनिट भी नहिं है। इतना तो कहु कि जो मनुष्य बाह्य वस्तुका अतरके साथ अनुसधान करके सर्वांगीण बाह्य शुद्धि रखता उसके लिये अतर शुद्धि सहज हो जाती है। इससे उलटा जो अतर शुद्धिके प्रयत्नमे बाह्यकी अवगणना करता है वह दोनो खोता है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४०८) से

१ पूनमचन्द रॉका, अध्यक्ष, नागपुर प्रांतीय कांग्रेस कमेटी
२. वर्धामें अ० भा० कां० क० की सभा आयोजित करने की

२५९. पत्र : नेली फिशरको[1]

वारडोली
२८ दिसम्बर, १९४१

प्रिय बहन,

आपका १७ अक्तूबरका पत्र कल मिला।

ऐसे समयमे जब सर्वत्र घृणाका वोलवाला हो और सत्य तथा प्रेमके प्रतिरूप ईश्वरका परित्याग कर दिया गया हो, मै आपको नववर्षकी शुभकामनाएँ भेजना हास्यास्पद समझता हूँ।

ये रही आपकी पुस्तकके लिए कुछ पंक्तियाँ।[2]

"मुझे स्वर्गीय विशप फिशरके निकट सम्पर्कमे आनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। मै उनकी गिनती उन गिने-चुने ईसाइयोमे करता हूँ जो ईश्वर-भीरु होनेके कारण किसी मनुष्यसे भय नही खाते थे।"

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

२६०. पत्र : डॉ० ए० जी० तेंदुलकरको

वारडोली
२८ दिसम्बर, १९४१

प्रिय तेंदुलकर,

तुम्हारा पत्र पाकर प्रसन्नता हुई। नासिककी जलवायु तुम्हे अवश्य अनुकूल पड़ेगी।

मै इंदुमतीसे फिर मिलना चाहूँगा और जितने दिन भी वह आश्रममें रहना चाहे उसे रखना चाहूँगा।

स्नेह।

बापू
(मो० क० गांधी)

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०९५३) से। सौजन्य इंदुमती तेंदुलकर

१. फ्रेडरिक बी० फिशरकी पत्नी
२. फ्रेडरिक बी० फिशरकी जीवनी

२६१. पत्र : चिमनलाल न० शाहको

२८ दिसम्बर, १९४१

चि० चिमनलाल,

बबूडी सूरत गई है। आनन्दको खाँसी आती थी और यहाँ के भीड-भरे वातावरणमें वह घबराता था। आनन्दके टाँके खुलवाने के लिए वे लोग मंगलवारको यहाँ आयेंगे। तब उन्हे यहाँ रोकने का प्रयत्न करूँगा।

शकरीबहन अहमदाबाद गई है। बा चार दिनके लिए मरोली गई है।

आशा है, तुम्हारा सब ठीक चल रहा होगा।

सुरेन्द्रके पास जो किताब और पैसा था, उसका क्या किया? क्या अब लक्ष्मीदास बलवन्तसिंहके मातहत काम करना चाहता है?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०६०६)

२६२. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

बारडोली
२८ दिसम्बर, १९४१

चि० बबूडी,

तुझे जाने देते बहुत दु:ख हुआ। लेकिन मुझे लगा, जाने देना ही चाहिए। बा से मैंने बात की तो वह तो चिढ गई। उसने कहा, मुझे कोई अडचन नही थी। तो अब तू मगलवारको यहाँ रहने की तैयारी करके आये तो अच्छा होगा। डाक्टर कहता है, वह तभी इलाज कर सकता है, जब वह रोज आनन्दकी जाँच कर सके। बा मरोली गई है और मैंने सुमीको उसके साथ भेजा है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००४१) से। सौजन्य शारदा गो० चोखावाला

२६३. सन्देश : अखिल भारतीय महिला सम्मेलनको

[२९ दिसम्बर, १९४१ के पूर्व][1]

सम्मेलनका सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य यह है कि मैंने अपनी हालकी पुस्तिकामें[2] राष्ट्रके समक्ष जो रचनात्मक कार्यक्रम रखा है उसे कार्यान्वित करने की भारतीय महिलाओकी विशेष जिम्मेदारीको वह स्वीकार करे। यह कार्य भारतकी श्रेष्ठतम महिलाओकी उच्चतम सेवाकाक्षाओको भी पूरा कर सकता है।

[अग्रेजीसे]
हिन्दू, ३१-१२-१९४१

२६४. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

स्वराज आश्रम, बारडोली
२९ दिसम्बर, १९४१

प्रिय सी० आर०,

आपका भेजा प्रस्ताव[3] पढा। मौलाना साहब आकर उसे सीधे मेरे सामने पेश कर गये। खेदके साथ कहना पडता है कि मुझे वह पसन्द नही आया। उसमे मुख्य प्रश्नको टाल दिया गया है और वह राष्ट्रको सच्ची दिशा प्रदान नही करता। मेरी स्पष्ट राय है कि मेरे और समितिके बीचके मतभेदको सामने लाकर उसपर चर्चा होनी चाहिए। यदि हम अहिंसाके अतिरिक्त और कारणोसे सरकारको सहायता नही देना चाहते तो वे कारण साफ-साफ बता दिये जाने चाहिए। अगर हम अमुक परिस्थितियोमे सहायता दे सकते है तो वे परिस्थितियाँ भी बता दी जानी चाहिए। काग्रेसकी अहिसाकी व्याप्तिका भी खुलासा कर दिया जाना चाहिए।

आप इसे जवाहरलालको भी पढने को दे सकते है और आपको जरूरी लगे तो १ ३० बजे मुझसे मिलने आ सकते है। मौन १ २५ पर समाप्त हो जायेगा।

आपका,
बापू

अग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०९०३) से। सौजन्य सी० आर० नरसिहन्

१. अखिल भारतीय महिला सम्मेलनका सोलहवाँ अधिवेशन विजयलक्ष्मी पण्डितकी अध्यक्षतामें कोकानाडामें २० दिसम्बरको आरम्भ हुआ था।

२. देखिए **रचनात्मक कार्यक्रमका मर्म और महत्त्व**, पृ० १६१-८३।

३. प्रस्तावके अन्तिम रूपके लिए देखिए परिशिष्ट २।

२६५. चर्चा: कार्य-समितिकी बैठकमें[1]

[३० दिसम्बर, १९४१ या उसके पूर्व][2]

जहाँ तक मेरा सम्बन्ध है, यदि मुझे अधिक-से-अधिक सत्ता दे दी जाये, यदि मुझे आज भारतका वाइसराय भी बना दिया जाये, तब भी क्या मैं भारतकी जनतामे तलवार उठाकर साम्राज्यकी रक्षा करने के लिए कह सकता हूँ? खुद मैं तो यही समझूंगा कि वैसा करके मैं नैतिक आत्महत्या कर रहा हूँ, क्योंकि उसका मतलब यह होगा कि मैंने अपने जीवन-भरकी श्रद्धाका त्याग कर दिया है, उस विश्वासका त्याग कर दिया है जिसे मेरे आग्रहपर कांग्रेसने गत बीस वर्षोंसे एक नीतिकी तरह अपना रखा है। उस नीतिका दृढताके साथ पालन करते रहने के परिणामस्वरूप आज हम अपने लक्ष्यके बहुत निकट पहुँच गये है। जिस नावपर चढकर मैं किनारेके बिलकुल पास पहुँच गया हूँ, क्या अब उसीका त्याग कर दूं? युधिष्ठिर अपने विश्वस्त कुत्तेका त्याग करके स्वर्गके द्वारमे भी प्रवेश करने को तैयार नही थे। कारण, वे जानते थे कि उस कुत्तेके बिना, अर्थात् आस्था और विश्वासके बिना, स्वर्गका साम्राज्य भी उनके लिए व्यर्थ होगा। क्या कोई अरब (अर्थात् कांग्रेस) अपनी यात्राके अन्तमे अपने उस घोडे (अर्थात् अहिंसा)को छोड देगा जिसपर सवार होकर वह अपनी मंजिलके निकट पहुँचा है?[3] यह तो मेरे लिए घोर पाखण्ड या अश्रद्धाकी बात होगी। आज जिस सकटमें वे अर्थात् पश्चिमी दुनियाके लोग पडे हुए है वही सकट मेरा दरवाजा खटखटा रहा है। तब क्या इस नाजुक घडीमे मैं उस अमोघ उपचारको भूल जाऊँ

१. यह महादेव देसाईके "द मथ इन बारडोली-१" ("बारडोलीमें एक महीना-१") शीर्षक लेखसे लिया गया है। इस चर्चाकी पूर्वपीठिका बताते हुए लेखकने सूचित किया है कि "यद्यपि [कार्य-समिति का] वास्तविक निर्णय बम्बई प्रस्तावकी व्याख्याके आधारपर लिया गया, लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण बात तो लोगोंके मनकी भावना थी। बम्बई प्रस्तावकी चाहे जो व्याख्या की गई हो, लेकिन क्या कुछ बुनियादी बातोंके सम्बन्धमें हमारे विचार स्पष्ट थे? क्या यह बात हमारे सामने स्पष्ट थी कि पिछले बीस वर्षोंसे हम अपनी क्षमता-भर जिस अहिंसाकी नीतिका पालन करते आये है वह कोई धार्मिक सिद्धान्त नहीं थी और न उसके पीछे कोई धार्मिक प्रयोजन ही रहा है, बल्कि वह भारतकी राजनीतिक स्वतन्त्रताकी प्राप्तिके लिए अपनाया गया एक विशुद्ध राजनीतिक उपाय थी? इस सम्बन्धमें गांधीजी के मनमें कोई शंका नहीं थी। दूसरा सवाल यह था कि देशके इतिहासके इस नाजुक दौरमें क्या हम प्रस्तावित स्वतन्त्रताके लिए भी उस नीतिका त्याग कर सकते है?

२. कार्य-समितिकी बैठक ३० दिसम्बर, १९४१ को समाप्त हुई थी।

३. अपने घोड़ेके प्रति अरबोंका प्यार जगत्प्रसिद्ध है।

जो मैंने उन लोगोको सुझाया[1] था और उसे छोडकर उसी उपायको अपनाऊँ जिसकी मैंने भर्त्सना की है और जिसे त्याज्य माना है? देश चाहे जो कहे, लेकिन प्रश्न यह है कि उन काग्रेसियोका व्यक्तिगत रुख क्या होना चाहिए जिन्होंने अहिसाके पालनकी प्रतिज्ञा ली है?

गांधीजी की स्पष्ट राय थी कि अगर कार्य-समितिके सदस्य मानते हों कि हमने गलती की है और जो चीज एक अपेक्षाकृत बडी उपलब्धि प्रतीत होती है उसके निमित्त अपने सिद्धान्तका सौदा करना श्रेयस्कर है तो उन्हे सब साफ-साफ वैसा कहना चाहिए, और बादमें जब वह लक्ष्य प्राप्त हो जाये तो उन्हे सारे भारतको सैनिक भरतीका क्षेत्र बना देना चाहिए, हर स्त्री-पुरुषसे युद्ध-प्रयत्नमें यथाशक्ति योगदान देने को कहना चाहिए, बल्कि यहाँ तक कि ऐसा करते हुए अपने-आपको मिटा देना चाहिए। उन्होंने आगे कहा, आवश्यकता इस बातकी है कि हम पूरी ईमानदारीसे काम ले। कमसे-कम मैंने तो इस सम्भावनाकी कल्पना कभी नहीं की है। यदि मुझे मालूम होता कि स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिए भारतको किसी दिन हिंसामय लड़ाई लड़नी पड़ेगी तो मैंने बहुत पहले ही प्रत्येक भारतीय नौजवानसे सैनिक शिक्षा लेने को कहा होता और इस तरह दिन-रात रचनात्मक कार्यक्रमके विभिन्न पहलुओंके महत्त्वका राग न अलापता रहता।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

२६६. पत्र : अबुल कलाम आजादको

बारडोली
३० दिसम्बर, १९४१

प्रिय मौलाना साहब,

कार्य-समितिकी चर्चाके दौरान मुझे पता चला कि बम्बई प्रस्तावका अर्थ लगाने मे मैंने एक भारी भूल की है। मैंने उसका अर्थ यह लगाया था कि काग्रेसको मुख्य रूपसे अपने अहिसाके सिद्धान्तके आधारपर वर्त्तमान युद्ध या किसी भी युद्धमे शामिल होने से इनकार करना है। मुझे यह देखकर बडा आश्चर्य हुआ कि अधिकाश सदस्य मेरी व्याख्यासे असहमत हैं और वे मानते हैं कि जरूरी नही कि युद्धका विरोध अहिसाके ही आधारपर किया जाये। बम्बई प्रस्तावको दोबारा पढनेपर पाया कि मुझसे असहमति प्रकट करनेवाले सदस्य सही थे और मैंने प्रस्तावमे से एक

१. गाधीजी ने अहिंसाका यह अमोघ उपचार अबीसीनियावासियों (खण्ड ६१, पृ० ३२५-२६), चीनियो, चेकों, स्पेनवासियों (खण्ड ६७, पृ० २८०-८२, ४४९-५२ और ४७७) और पोलोंको (खण्ड ७०, पृ० १५७ और १८१-८२) सुझाया था।

ऐसा अर्थ निकाला था जो उसके शब्दोसे किसी तरह नही निकलता। अपनी इस भूलका पता लग जाने के बाद मेरे लिए यह असम्भव है कि काग्रेसके युद्ध-प्रयत्न-विरोधी संघर्षका नेतृत्व ऐसे कारणोसे करूँ जिनमे से एक अनिवार्य कारण अहिंसा नही है। उदाहरणके लिए, अगर युद्ध-प्रयत्नका विरोध इग्लैण्डके प्रति दुर्भावनाके कारण किया जाता है तो उस विरोधमे मैं अपना नाम नही जुडने दे सकता। इस प्रस्तावमे भारतकी स्वतन्त्रताके निश्चित आश्वासनकी कीमतके रूपमे ब्रिटेनकी भौतिक साधनोसे सहायता करने की व्यवस्था है। यदि मेरा विचार ऐसा हो और स्वतन्त्रता-प्राप्तिके लिए मैं हिंसाके प्रयोगमे विश्वास करता होऊँ और फिर भी स्वतन्त्रताकी कीमतके रूपमें इस प्रयत्नमें शामिल होने से इनकार करूँ तो मैं अपनेको देशभक्तिसे रहित आचरणका दोषी मानूँगा। मेरा निश्चित मत है कि भारत और ससारको आत्मविनाशसे केवल अहिंसा ही बचा सकती है। ऐसी स्थितिमें तो मैं केवल यही कर सकता हूँ कि अपने उद्देश्यमें रत रहूँ, चाहे मैं अकेला होऊँ या किसी सस्था अथवा अलग-अलग व्यक्तियोकी सहायता मुझे प्राप्त हो। इसलिए बम्बई प्रस्तावकी रूसे मुझपर जो दायित्व आता है, उससे आप मुझे मुक्त कर देने की कृपा करें। मेरे सामने तो एक यही रास्ता है कि मैं जिन काग्रेसियो या अन्य लोगोको चुनूं और जो मेरी परिकल्पनाकी अहिंसामे विश्वास रखते हो तथा जो निर्धारित शर्तोका पालन करने के लिए तैयार हो उनकी सहायतासे मैं अभिव्यक्ति-स्वातन्त्र्यके लिये सविनय अवज्ञा जारी रखूं।

इस नाजुक घडीमें सविनय अवज्ञाके लिए मैं उन लोगोको नही चुनूंगा जिनकी सेवाओंकी अपने-अपने इलाकोमें लोगोको हिम्मत बँधाने और जरूरी सहायता देने के लिए आवश्यकता है।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गाधी

[अग्रेजीसे]

अ० भा० का० क० फाइल स० १३७५, सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय। सी० डब्ल्यू० १०९०४ से भी, सौजन्य सी० आर० नरसिंहन्

२६७. वक्तव्य: समाचार-पत्रोंको

बारडोली
३० दिसम्बर, १९४१

यदि मेरी तरह दूसरोने भी यह सोच रखा हो कि बम्बई प्रस्तावके फलस्वरूप काग्रेसकी अहिंसा-नीतिके कारण वर्तमान युद्धमें उसके किसी भी तरहसे शरीक होने का रास्ता बन्द हो गया है तो अब वे जान ले कि बम्बई प्रस्तावसे यह रास्ता पूरी

१. इसके उत्तरमें कांग्रेस कार्य-समिति द्वारा पास किये गये प्रस्तावके लिए देखिए परिशिष्ट १।

तरह बन्द नही हुआ है। निस्सन्देह, जैसा कि प्रस्तावमे यह कहा गया था, पूना प्रस्ताव समाप्त हो जाने के कारण उसमे सहायता देने की जो बात कही गई थी वह भी खत्म हो गई है। लेकिन कार्य-समितिके माध्यमसे काग्रेसने अब यह स्पष्ट कर दिया है कि काग्रेसके युद्ध-प्रयत्नमे शामिल होनेका रास्ता पूरी तरह बन्द नही हुआ है—अहिंसाके आधारपर तो निश्चय ही नही।

उस रास्तेको खोलनेकी चाबी मुख्य रूपसे ब्रिटिश सरकारके हाथमे है। कार्य-समितिने यह स्पष्ट करनेसे इनकार कर दिया है कि वह रास्ता किन शर्तोपर खुल सकता है, और उसका यह इनकार बिलकुल उचित ही है। उस रास्तेका खुलना या न खुलना अब अनेक परिस्थितियोपर निर्भर होगा, लेकिन मेरी रायमे मुख्य परिस्थितिका दायित्व स्वय सरकारपर होगा। अतीतमे अनेक बार अपमानित हो चुकने के बाद कार्य-समिति अपनी ओरसे कुछ देनेकी बात कहकर अब फिर अपमान को न्योता नही दे सकती। उसकी स्थिति तो बिलकुल स्पष्ट ही है। सबको मालूम है कि काग्रेस किस चीजके लिए लड रही है और वह क्या चाहती है। इसलिए सबको यह भी मालूम होना चाहिए कि काग्रेस जिस चीजके लिए प्रयत्नशील है उससे कम कुछ भी उसको स्वीकार नही होगा। इसलिए अगला कदम उठानेकी जिम्मेदारी सरकारपर है। इस समय असली महत्त्वकी बात यही है।

कुछ अग्रेज मित्रोने इग्लैण्डसे मुझे एक आग्रहपूर्ण तार भेजा है। ये लोग भारतकी स्वतन्त्रतामे रुचि रखते है और स्वय अपने देशवासी भी इन्हे बहुत प्रिय है। मैने उनके तारका उत्तर नही दिया है। उन्होने मुझे श्री एन्ड्रचूजकी विरासतकी याद दिलाई है। उनके याद दिलाने का मतलब चाहे जो हो, मेरा मतलब तो एक ही हो सकता है। मेरे और चार्ली एन्ड्रचूजके बीच जो एक अटूट बन्धन था वह यह कि हम किसी भी वस्तुके लिए अन्तरात्माकी आवाजको कभी दबाने को तैयार नही थे। और मै निस्सकोच कह सकता हूँ कि मैने जो-कुछ किया है वह अन्तरात्माके आदेश पर ही किया है।

मौलाना साहबको लिखे अपने पत्रमे[1] मैने स्पष्ट कर दिया है कि मै युद्धमे किसी भी रूपमे सहयोग करनेका रास्ता खुला रखनेके निर्णयसे अपना नाम नही जुडने दे सकता, क्योकि मेरी रायमे उसका मतलब, काग्रेस पिछले २० वर्षो या इससे भी अधिक समयसे जिस सिद्धान्तको लेकर चलती रही है, उसका त्याग होगा। भारतकी स्वतन्त्रताके लिए भी मै उस विरासतको बेच देने का अपराध नही करूँगा, क्योकि इस तरह प्राप्त होनेवाली स्वतन्त्रता भी सच्ची स्वतन्त्रता नही होगी।

मै मानता हूँ कि जैसी हिंसाकी मिसाल शायद पूरे इतिहासमे नही मिलेगी ऐसी हिंसा की जकडमे पड़े वेदनासे कराहते ससारको देनेके लिए यदि किसी देशके पास कोई सन्देश है तो वह देश भारत ही है। जब भारतीय राष्ट्रीय काग्रेसके माध्यमसे भारतने अहिंसाको अपनी नीतिकी तरह अपनाया तब, जहाँतक मै जानता हूँ किसी भी काग्रेसीने यह नही सोचा था कि दूसरा युद्ध—और ऐसी भयकर विनाश-लीला मचानेवाला

१. देखिए पिछला शीर्षक।

युद्ध—इतनी जल्दी आनेवाला है। लेकिन भारतके लिए कसौटीकी घडी आ गई है और चूँकि मेरा यह अडिग विश्वास है कि आज मानव-समाज जिस व्याधिसे पीडित है उसका उपचार अहिंसामे ही निहित है, इसलिए मैं प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष किसी भी रूपमे युद्धमें शरीक होने के निर्णयके साथ अपना नाम नही जोड सकता था। निदान मैं सबसे अलग खडा हूँ।

लेकिन काग्रेसमें अलग-अलग विचारधाराओके लोग शामिल है, इसलिए यदि कार्यसमितिमे भी विभिन्न विचारधाराओके लोग है तो इसपर किसीको आश्चर्य नही होना चाहिए। इसमें कमसे-कम तीन समूहोके लोग है, या यो कहिए कि तीन विचारधाराओका प्रतिनिधित्व करनेवाले तीन समूहोके लोग है। पहला समूह तो उन अल्पसख्यकोका है जो विशुद्ध अहिंसाके आधारपर असहयोगमे विश्वास रखते है। दूसरा समूह उन लोगोका है जो मानते है कि काग्रेसको अहिंसाको किसी भी परिस्थितिमे युद्धमे कोई सम्बन्ध कायम न करने के निर्णयकी सीमातक नही ले जाना चाहिए। एक तीसरा समूह भी है, जिसके पास किसी प्रश्नपर निर्णय लेने के लिए कई उतने ही महत्त्वपूर्ण कारण है जितना महत्त्वपूर्ण अल्पसख्यकोंके लिए अहिंसा-रूपी कारण है। अभी-अभी कार्य-समितिके मन्त्रीने जो प्रस्ताव[1] समाचार-पत्रोको प्रकाशनार्थ दिया है वह इन तीनो समूहोके सम्मिलित प्रयत्नका परिणाम है। मैं चाहूँगा कि जनता और काग्रेसी उस प्रस्तावको इसी दृष्टिसे समझने की कोशिश करे। मुझे आशा है कि इस तथ्यको तो हर आदमी समझेगा कि कार्य-समिति जल्दबाजीमे किसी निर्णयपर नही पहुँची है। वह जिस महान् राष्ट्रीय सस्थाका प्रतिनिधित्व करती है, उसकी गरिमाके अनुकूल प्रस्ताव तैयार करने मे उसने इस बातकी परवाह नही की है कि उसमें कितना समय लगता है।

मैं काग्रेसियोमे एक बात कहना चाहूँगा। वह यह है कि जो लोग अहिंसामे उसी तरह विश्वास रखते है जिस तरह मैं रखता हूँ उन्हे भी कार्य-समितिके इस प्रस्तावका जो अर्थ मैं लगाता हूँ उस अर्थको ध्यानमे रखते हुए इससे डरने की कोई जरूरत नही है। न केवल उन्हें अपनी अलग राय रखने की छूट है, बल्कि उस रायको दूसरे लोग भी अपनायें, इस दृष्टिसे उसका प्रचार करने की भी स्वतन्त्रता है। यह जरूर है कि जबतक युद्ध-प्रयत्नमें भाग लेने के लिए काग्रेस का आह्वान नही किया जाता तभीतक वे काग्रेसमें कायम है। उनसे बने तो उन्हे सभी काग्रेसियोको अपने मतका कायल करने की छूट है। मुझे पूरा विश्वास है कि कार्य-समिति ऐसे मत-परिवर्तन का स्वागत करेगी, लेकिन मैं काग्रेसियोको राष्ट्रीय जीवनके इस नाजुक दौरमें अनिर्णयकी स्थितिमें पडे रहने के खिलाफ आगाह कर देना चाहता हूँ और साथ ही मैं उन्हे काग्रेसमें सत्ता प्राप्त करने के उद्देश्यसे आधे मनसे इस या उस पक्षका अनुसरण करने के खिलाफ भी आगाह कर देना चाहूँगा। जो लोग ऐसा करेगे वे देशके लिए सत्ता प्राप्त करने में सर्वथा असफल रहेगे। खुद मैं तो चाहूँगा कि

१. देखिए परिशिष्ट २।

काग्रेस — और काग्रेस ही क्यो, सारा ससार — अहिंसाको जीवनके सामाजिक, राजनीतिक, घरेलू आदि सभी क्षेत्रोके सर्वोपरि नियमकी तरह स्वीकार करे। लेकिन कायरताके लिए कोई स्थान नही है। हम कायर बन जाये, इससे तो बहुत अच्छा है मै यह समझूँगा कि हम सब हिसक बन जाये। इसलिए मै आशा करता हूँ कि हरएक काग्रेसी अपने अन्दर कोई-न-कोई विश्वास लेकर चलेगा और उसमे अपने विश्वासोको कार्य-रूप देने का साहस भी होगा।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, ३१-१२-१९४१

२६८. पत्र : प्रभुलालको

[३० दिसम्बर, १९४१][1]

भाई प्रभुलाल,

तुम्हारा कार्ड मिला। हम अनुभवसे ही गढे जाते है। अगर हम ठीक पाठ सीखते चले तो आजकी बिगडी खादी कल सुधर जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

गजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४१३७) से

२६९. पत्र : आनन्द तो० हिंगोरानीको

बारडोली
३१ दिसम्बर, १९४१

चि० आनन्द,

जैरामदासने मुझे खबर दी कि विद्या बीमार हो गई है। तुम्हारी परीक्षा ईश्वर ले रहा है। तुम्हारे उत्तीर्ण होना है। कानके बहरापन की भी चिंता नहिं करना। सब ईश्वरके अधीन है। हदसे ज्यादा उद्यम मत कर।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी माइक्रोफिल्मसे। सौजन्य. राष्ट्रीय अभिलेखागार तथा आनन्द तो० हिंगोरानी

1. जी० एन० रजिस्टरसे

२७०. पत्र : ख्वाजा साहबको

[१९४१][1]

ख्वाजा साहेब,

आपने हिंदी कुरानसरीफ भेजकर मुझे अहसानमद किया है।

उर्दूके लिए मेरे दिलमें काफी अदब है। मैं तो उसका अभ्यासी भी हू और उर्दूकी तरक्की चाहता हू। मेरा ख्याल है कि जो हिन्दू दोनोकी खिदमत करना चाहते है उसे उर्दू जानना चाहिये और उर्दू अखबारोमे और किताबोमे लिखा जाता है उसे पढना चाहिये। ऐसे ही दोनोकी खिदमत करनेवाले मुसल्मानको हिंदी जानना चाहिये और हिंदी अखबारो और किताबोंमे वाकफ रहना चाहिये।

मूल पत्रसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

२७१. पत्र : फरीद अंसारीको

२ जनवरी, १९४२

प्रिय फरीद,

ए० के० को लिखा तुम्हारा पत्र मैंने देखा। निर्णय भी मैं पढ चुका हूँ। उसके[2] भाषणके बारेमें मजिस्ट्रेटने जो-कुछ कहा यदि वह सच है तो वह भाषण अहिंसक नही था। बी श्रेणी इसलिए स्वीकार नही की जानी चाहिए क्योकि वह बी श्रेणी है बल्कि वहाँ जो भोजन मिलता है उसके कारण स्वीकार की जानी चाहिए। उसे उन सब सुविधाओका उपभोग वहाँ नही करना चाहिए जो चिकित्साके विचारसे जरूरी नही है।

स्थितिके बारेमें तुम्हे मेरे वक्तव्यसे पता चल जायेगा।[3]

जोहरा[4] कैसी है? तुम स्वस्थ हो न?

तुम सबको स्नेह।

मो० क० गा०

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. पत्र १९४१ की फाइलमें रखा गया है।

२. स्वामी श्रद्धानन्दकी नातिन सत्यवतीसे तात्पर्य है। देखिए "पत्र: सत्यवतीको", पृ० २१६।

३. देखिए पृ० २०९-१२।

४. फरीद अन्सारीकी पत्नी

२७२. पत्र : मदालसाको

२ जनवरी, १९४२

चि० मदालसा,

तेरा पत्र पाकर बहुत प्रसन्नता हुई। इसमें तेरा आनन्द उभर आया है। तेरा श्रेय ही है। इतना याद रखना कि सयममें ही सुख है। यह अत्यन्त प्रसन्नताकी बात है कि तुम सब बहनें साथ हो और इतने आनन्दसे रह रही हो।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
पाँचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० ३२४

२७३. पत्र : जमनालाल बजाजको

२ जनवरी, १९४२

चि० जमनालाल,

तुम्हारा खत मिला। भाई हरिभाउसे[1] कहो उनका निश्चय मुझे पसंद है। अब खादी विद्यालयसे न हटें।

देशी सस्थानोके बारेमें मेरे आने पर बातें करेंगे।

पुनमचदजी को बहूत खर्च करने से रोके जाय। खानेमें ठीक खबरदार रहते होंगे।

जवाहरलाल एक दिन पहले पहोचेंगे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०३०) से

१. हरिभाऊ उपाध्याय

२७४. पत्र : मीराबहनको

स्वराज आश्रम, बारडोली
३ जनवरी, १९४२

चि० मीरा,

तुम बिच्छू, चूहे और साँप पकड रही हो।[1] थोडे दिनमें तुम्हारा एक अजायबघर बन जायेगा ! ! मुझे खुशी है कि तुम्हारा संग्रहका काम पूरा होने जा रहा है।

तुम सबको प्यार।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४९२) से, सौजन्य मीराबहन। जी० एन० ९८८७ से भी

२७५. पत्र : जफर हसनको

बारडोली
३ जनवरी, १९४२

प्रिय जफर हसन,

तुम्हारा पत्र मिला।

मेरा भाषण लिखित था और वितरित किया गया था। चर्चाके दौरान मैंने जो-कुछ भी कहा होगा वह उसी स्वरमें कहा होगा जिस स्वरमें मेरा भाषण था। मेरा भाषण समाचार-पत्रोंमें भी प्रकाशित हुआ था। भाषणमें मौलानाकी आलोचनाके योग्य कोई बात नहीं है।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. इस पत्रकी पूर्वपीठिका समझाते हुए मीराबहनने लिखा है: "अब मेरा मौन समाप्त हो चुका था और मैं आशादेवीके घर रह रही थी, ताकि उनकी सहायतासे वैदिक ऋचाओंका अपना अनुवाद सुधार सकूँ और पूरा कर सकूँ। जिस कुटियामें मैं मौनके अन्तिम महीनोंमें रही थी उसमें मैंने कम-से-कम ५२ बिच्छू पकड़े थे और उन सबको बाहर मैदानमें छोड़ आई थी। वहाँ एक-दो साँप भी रहते थे। आशादेवीके घर मैंने चूहे पकड़ना शुरू किया और एक ही हफ्तेमें मैं लगभग तीस चूहे पकड़कर उन्हें दूर की पहाड़ीमें छोड़ आई।"

२७६. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

बारडोली
३ जनवरी, १९४[२][1]

चि० बबूडी,

सचमुच मै आनन्दका गुनहगार हूँ। अब क्या वह मुझे माफ करेगा? मुझे एक मिनटकी फुरसत नही मिलती। आनन्दसे कहना, बहुत बडा हो और सबको आनन्द दे। बा तो ७ को या उसके बाद ही आयेगी। यदि तू सेवाग्राम जल्दी आये तो अच्छा हो। तेरा स्वास्थ्य खराब रहता है, यह तो ठीक नही। शकरीबहन जहाँ हो वहाँ जा। मेरी सलाह है कि तू सूरत छोड दे और अपना स्वास्थ्य सुधार ले। सुन्नतके बारेमे घिया जो कहती है वह शायद ठीक न हो। दूसरी बार ऑपरेशन करने की जरूरत पडे, तो उसमे कोई हर्ज नही है। लेकिन हाँ, ज्यादा काटने मे खतरा हो सकता है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००३१) से। सौजन्य शारदा गो० चोखावाला

२७७. पत्र : सत्यवतीको

बारडोली
३ जनवरी, १९४[२][2]

चि० सत्यवती,

तुम्हारा खत मिला था। तुम्हारी तबियत अच्छी होगी। बी क्लासका इनकार करने की आवश्यकता नही है। बौद्धिक दृष्टिसे जो सुभिदा मिल सके उसको स्वीकार लिया जाय। दूसरोका इनकार भले किया जाय।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. साधन-सूत्रमें १९४१ है, जो स्पष्टत. चूक है। १९४२ में इस तारीखको गांधीजी बारडोलीमें थे।

२. साधन-सूत्रमें "४१" है जो स्पष्टतः भूल है। उक्त पत्र एक ऐसे पत्रके नीचे लिखा हुआ है जिस पर २ जनवरी, १९४२ की तारीख पड़ी हुई है; इस दिन गांधीजी बारडोलीमें थे।

२७८. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

स्वराज आश्रम, बारडोली
४ जनवरी, १९४२

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारे बैठकमें भाग लिये बिना काम चल सकता है किन्तु कटिस्नान लिये बिना काम नहीं चल सकता। इसलिए स्नान तो इसी समय लेना पड़ेगा।

बापू

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० ३७८

२७९. भाषण : गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें[1]

बारडोली
४ जनवरी, १९४२

[गांधीजी ने] सबसे पहले यह पूछा कि क्या वहाँ उपस्थित सभी लोगोंने बारडोली प्रस्तावके सभी फलितार्थोंको समझ लिया है।[2]

तो मैं आपको प्रस्तावका सारांश बताता हूँ। इस प्रस्तावका मतलब यह है कि यदि सरकार वचन दे कि युद्धके बाद भारतको पूर्ण स्वराज्य दे दिया जायेगा तो साम्राज्यको कायम रखनेमें कांग्रेस सहायता देगी। यह बात नहीं थी कि सचमुच ऐसा सौदा किया गया, लेकिन शर्तोंपर सहमति जरूर हुई, जबकि चाहिए था यह कि यदि मैं कोई सौदेबाजी नहीं करना चाहता था तो साफ शब्दोंमें वैसा कहूँ। यदि आपको लगता हो कि आपके पूर्ण सहयोग करने पर सहमत होनेसे युद्धकी समाप्तिपर भारतको पूर्ण स्वराज्य मिल जायेगा, उसके बाद अंग्रेज भारतमें आपकी कृपा और अनुमतिसे ही रह पायेंगे, युद्धके दौरान भी आप अपना कारोबार, राजकाज खुद चलायेंगे, बशर्ते कि आपका रक्षा-मन्त्री इस युद्धमें अपने पक्षको विजयी बनाये तो आपको बारडोली

१. महादेव देसाईके "द मथ इन बारडोली–१" (बारडोली में एक महीना–१) शीर्षक लेखसे उद्धृत

२. उत्तरमें कई लोगोंने हाथ नहीं उठाये। प्रस्तावके लिए देखिए परिशिष्ट २।

प्रस्तावकी पुष्टि करनी चाहिए। प्रलोभन तो सचमुच बहुत बडा है। यदि इस प्रलोभनमे पड़कर आप काग्रेसकी नीतिको उलट देने, अहिंसाकी कीमतपर स्वराज्य खरीदने को तैयार है तो आपको निश्चय ही प्रस्तावकी पुष्टि करनी चाहिए। याद रखिए कि हमारे बडेसे-बडे नेता उस प्रस्तावको पास करने मे शरीक थे और उन्होने यह काम बिना सोचे-समझे नही किया है। इसके विपरीत कुछ ऐसे लोग हैं जो मानते हैं कि अहिंसा अनमोल रत्न है और उसका त्याग नही किया जा सकता, स्वराज्यके लिए यह कीमत नही दी जा सकती। इस तरह उनकी स्थिति भिन्न है। लेकिन अगर आपके मनमे कोई शका है, यदि आप समझते हो कि अहिंसासे चिपटे रहकर आप अहिंसाके अयोग्य होने के कारण अहिंसाको तो गँवायेंगे ही, साथ ही स्वराज्य प्राप्त करने का मौका भी खो देंगे, यदि आप मानते हो कि गाधी आदमी तो नेक है लेकिन अन्ततक उसका साथ देने मे समझदारी नही है तो आप उस प्रस्तावको अवश्य स्वीकार कीजिए। इस प्रस्तावके विरुद्ध वही लोग अपनी राय दे जिन्हें पूरा विश्वास हो कि समझदारी, राजनीतिक सूझबूझ, नीति, यानी हर दृष्टिसे यह आवश्यक है कि स्वराज्यके लिए अहिंसाकी बलि नही चढ़ाई जाये। अब वे लोग हाथ उठायें जो बार-डोली प्रस्तावके पक्षमे मत देना चाहते हो।[1] बहुत अच्छा! अब अहिंसाके आचार्यगण हाथ उठाये।[2]

लगभग दस लोग तटस्थ रहे। ये लोग कुछ प्रश्न पूछना चाहते थे, लेकिन गांधीजी ने कहा कि चूँकि यह मतदान बिलकुल अनौपचारिक था, इसलिए तटस्थ लोगोंको चिन्ता करने की जरूरत नहीं है।[3]

महात्मा गांधीने कहा, मैंने कांग्रेसका त्याग नहीं किया और आज भी मेरी स्थिति वही है जो बम्बईमें थी। उन्होंने आगे कहा:

मैं काग्रेसका सेवक हूँ और सत्य तथा अहिंसाके सिद्धान्तके अनुरूप मैं उसकी सेवा करना चाहता हूँ। कार्य-समितिने फैसला किया है कि यदि ब्रिटेन भारतको स्वराज्य देने को तैयार हो तो काग्रेस युद्धमे उसके साथ सहयोग करेगी।

मेरी राय चाहे जो हो, इस मामलेमे आपको अपनी समझसे काम लेना चाहिए।

यह सच नही है कि काग्रेसने अहिंसाके सिद्धान्तका उल्लघन किया है। उसने जो-कुछ किया है, यही कि ब्रिटेनसे सौहार्द स्थापित करने के लिए हिंसाके लिए थोडी गुंजाइश कर दी है।

राजाजी का विचार है कि हम सबको पूरी तरह शस्त्र-सज्जित होकर युद्धमें जाना चाहिए, लेकिन यह शायद सबकी राय न हो।

हमे रचनात्मक कार्यक्रमको चालू रखना चाहिए। कहने की जरूरत नही कि अब उसका क्षेत्र बहुत सकुचित हो जायेगा। अभी मैं कार्यकर्त्ताओको जेल नही भेजना

१. ३६ लोगोंने हाथ उठाये।
२. २७ लोगोंने अहिंसाके पक्षमें मत दिया।
३. आगेका अश बॉम्बे क्रॉनिकलसे लिया गया है।

चाहता, क्योंकि लोगोंके बीच फैली घबराहट और भयकी भावनाको दूर करनेके लिए उनकी सेवाएँ अधिक आवश्यक हैं।

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-१-१९४२ और बॉम्बे क्रॉनिकल, ६-१-१९४२

२८०. पत्र : एफ० मेरी बारको

बारडोली
५ जनवरी, १९४२

चि० मेरी,

जब चाहो, आ जाओ। तुम्हारा आना कभी अप्रीतिकर हो सकता है क्या? अगर तुम्हारे मित्र इधर-उधर तंग जगहोंमें रहना पसन्द करें तो वे भी आ सकते हैं। जैसा जी चाहे, करो। मुझमें कोई अवसाद नहीं आया है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ६०८३) से। सी० डब्ल्यू० ३४१३ से भी, सौजन्य एफ० मेरी बार

२८१. पत्र : नरहरि द्वा० परीखको

५ जनवरी, १९४२

भाई नरहरि,

सरदारकी और मेरी इच्छा है कि शालाका उद्घाटन सुचारु रूपसे सम्पन्न हो।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२२) से

२८२. पत्र : मनुबहन सु० मशरूवालाको

वारडोली
६ जनवरी, १९४२

चि० मनुडी,[1]

तेरा पत्र मिला। तू चली गई यह बहुत अच्छा हुआ। मुझे बम्बईसे पत्र लिखा करना। अब यहाँसे ठण्ड गई समझो।

बापूके आशीर्वाद

श्री० मनुबहन मशरूवाला
बाल किरण
पो० आ० जुहू
बम्बई–२४

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० २६८०) से। सौजन्य कनुभाई मशरूवाला

२८३. पत्र : वल्लभराम वैद्यको

६ जनवरी, १९४२

भाई वल्लभराम,

मनको कौन जीत सका है? इसलिए मनको कदापि खाली नही रहने देना चाहिए। खाली रहने पर ही तो उसमे मलिन विचार आयेगे न? इसीलिए मनन, स्वाध्याय, सत्सग आदिकी महिमा गाई गई है। इसलिए रामनाम सर्वोत्तम ओषधि है।

तुम्हारा आहार आदि ठीक ही मालूम होता है।

तुम्हे औषधालय खोलने की जरूरत नही है। लेकिन वैद्यक करनी चाहिए। आवश्यक दवाओका सग्रह करना जरूरी समझो तो करना चाहिए। वैद्यकका अभ्यास बनाये रखना भी आवश्यक है।

रजिस्ट्रेशनकी खराबियाँ तो सामने आ ही रही है। यह ढोग तो यो ही चलता रहेगा और अन्तमे शान्त हो जायेगा। इसका विचार भी नही करना चाहिए, क्योकि इसे रोका नही जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

१. हरिलाल गाधीकी पुत्री जिसका विवाह सुरेन्द्र मशरूवाला से हुआ था।

[पुनश्च]

तुम्हें बीमार ही क्यों पड़ना चाहिए? और बीमार पड़ो, तो अपनी ही दवासे जल्दी अच्छे क्यों नहीं हो जाना चाहिए?

गुजराती (सी० डब्ल्यू० २९२०) से। सौजन्य वल्लभराम वैद्य

२८४. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

बारडोली
७ जनवरी, १९४२

जहाँतक सम्भव है, मैं कार्य-समितिके प्रस्तावके प्रति बाहरी और अन्दरूनी प्रतिक्रियाओंका अध्ययन करने की कोशिश करता रहा हूँ।[2] कांग्रेस सविनय अवज्ञाके सचालनके भारसे मुक्त कर दिये जाने से मेरी जिम्मेदारी कम नहीं हुई है, बल्कि कई गुना बढ़ गई है। पहली बात तो यह है कि कांग्रेससे मेरा औपचारिक सम्बन्ध खत्म हो जाने के फलस्वरूप मेरी अनासक्ति बढ़ गई है, लेकिन चूँकि अनासक्तिका मतलब उदासीनता कदापि नहीं होता, इसलिए हर कांग्रेसीके प्रति मेरा लगाव बढ़ गया है और अब मैं उनसे अपनी बातें पहलेसे कहीं अधिक कहूँगा। सविनय अवज्ञाके सचालनके लिए मौनकी वाणी पर्याप्त थी, लेकिन हमारे निकट जो भीषण घटनाएँ घट रही हैं, उनके कारण कांग्रेसियों तथा अन्य लोगोंके मनमें रोज-ब-रोज उठनेवाली शकाओंका अहिंसाकी दृष्टिसे स्पष्टीकरण करने के लिए ऐसी वाणी पर्याप्त नहीं है।

जब वर्षों पूर्व बर्मा ब्रिटिश भारतका हिस्सा बना, उससे बहुत पहलेसे ही रंगून प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक रूपसे भारतका ही अंग था और आज यद्यपि वह अलग हो गया है, फिर भी भारतके ही एक हिस्सेकी तरह कायम है। वहाँ जो-कुछ हुआ उसका सारे भारतपर असर पड़ा है।[3]

जहाँतक मैं देख सकता हूँ, सविनय अवज्ञा जिस अर्थमें आरम्भ की गई थी उस अर्थमें तो उसे युद्धके समाप्त होने तक कांग्रेसकी ओरसे फिरसे आरम्भ नहीं किया जा सकता। विशुद्ध प्रतीक-रूपमें उसे चालू रखा जा सकता है, लेकिन सो भी कांग्रेसके नामपर नहीं, बल्कि सिर्फ अहिंसाके आधारपर युद्धके विरोधियोंकी ओरसे, चाहे ऐसे लोगोंकी संख्या कितनी भी कम हो। उसे चालू रखा जायेगा युद्ध-मात्रका विरोध करनेवालों के युद्धके खिलाफ प्रचार करने के अधिकारका आग्रह करने के लिए। जो नृशंस संहार-लीला मची हुई है उसके बीच वे चुप कैसे रह सकते हैं। उन्हें न केवल उसके खिलाफ लिखना और बोलना चाहिए, बल्कि आवश्यक हो तो इस रक्तप्रवाहको रोकने के

१. यह हरिजनमें "नेक्स्ट फेज" (अगला चरण) शीर्षकसे प्रकाशित हुआ था।

२. यह वाक्य बॉम्बे क्रॉनिकलसे लिया गया है। कार्य-समितिके प्रस्तावके लिए देखिए परिशिष्ट १।

३. २३ दिसम्बर, १९४१ को जापानियोंने रंगूनपर बम बरसाये थे।

लिए उन्हे अपने-आपको बलिदान भी कर देना चाहिए। वे चाहे सख्यामे थोडे हो या बहुत, उन्हे अपना जीवन-कार्य करना ही है।

सत्याग्रहकी दिशामे कोई नया कदम उठाने के पूर्व आन्दोलनमे आये नये मोडके प्रति सरकारके रुखकी जानकारी पाने के लिए मेरा इरादा तीनो साप्ताहिक[1] फिरसे आरम्भ करने का है। आशा है, युद्ध-मात्रके विरुद्ध किये जानेवाले प्रचारपर, जो स्वभावत शान्तिमय होगा, उसे कोई आपत्ति नही होगी। वह प्रचार सरकारको परेशान करनेवाला भी नही होगा, सो इस तरह कि उसमे गोला-बारूदके कारखानो या भरती दफ्तरोको घेरने या उनपर धरना देने की कोई योजना न हो सकती है और न कभी थी।

अगर ऐसा प्रचार करने का अधिकार स्वीकार नही किया जायेगा तो कमसे-कम लोगो द्वारा — हो सकता है, युद्ध-मात्रके विरोधीके रूपमे जाने-माने एक या दो व्यक्तियो द्वारा ही — प्रतीकात्मक सविनय अवज्ञा की जायेगी। और मै इस कामके लिए ज्यादा लोगोको चुन नही सकता, क्योकि जनताको आसन्न सकटमें अहिंसक आचरणकी कला सिखाने के लिए जितने भी कार्यकर्त्ता मिल सकें, उन सबकी जरूरत है।

मेरी बात विचित्र लग सकती है, फिर भी मै तो यही सुझाव दूँगा कि रचनात्मक कार्यक्रममे निरन्तर व्यस्त रहना खतरेका सामना करने का सबसे अच्छा तरीका है। कारण, इसका मतलब है, नगरवासियोका गाँवोमे जाकर रहना और वहाँ स्वय भी उत्पादक और शिक्षात्मक प्रवृत्तियोमे लग जाना और गाँववालोको भी उनमे लगा देना।

इससे बेरोजगारी दूर होगी और उसके साथ ही भय भी। बडे पैमानेपर चलाई गई ऐसी प्रवृत्तिसे अविलम्ब नई समाज-व्यवस्थाका शुभारम्भ होगा। आन्तरिक शान्तिमे यह सबसे बडा योगदान होगा और आशा करनी चाहिए कि इसके फलस्वरूप वे भयावह अध्यादेश भी बेमानी हो जायेंगे जो सरकारने अभी हालमे घबराहटमे जारी किये है।

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १८-१-१९४२ और **बॉम्बे क्रॉनिकल**, ८-१-१९४२

१. जिनके नाम हैं, *हरिजन*, *हरिजन सेवक* और *हरिजनबन्धु*

२८५. पत्र : विजया म० पंचोलीको

७ जनवरी, १९४२

चि० विजया,

तेरा कार्ड मिला। मैं देखता हूँ, तू पूरी तरह अच्छी नहीं होगी। नानाभाई बीमार क्यों पड़ते रहते हैं? कुछ दिनोंके लिए सेवाग्राम क्यों नहीं आते?

वसुमती सेवाग्राम पहुँच गई है। हम परसों रवाना होंगे। वा को आज मरोली मे आना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१४४) से। सी० डब्ल्यू० ४६३६ से भी, सौजन्य विजयाबहन म० पंचोली

२८६. पत्र : हरिइच्छा कामदारको

७ जनवरी, १९४२

चि० हरिइच्छा,

बाडजीभाईने अभी खबर दी कि तेरे पतिका स्वर्गवास हो गया है। तू बहादुर है, तुझे ज्ञान है। धैर्यपूर्वक वियोग सहन करना। बच्चोंको सँभालना और किसी सेवाकार्यमें लग जाना। रोना मत। मुझे लिखना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७४७३) से। सी० डब्ल्यू० ४९१९ से भी, सौजन्य हरिइच्छा कामदार

२८७. पत्र : शारदा गो० चोखावालाको

बारडोली
८ जनवरी, १९४२

चि० बबूडी,

तेरा पत्र मिला। हाँ, तुझे बम्बई माफिक आती है, इसलिए तू वहाँ जाये तो अच्छा होगा। कमजोरी और खाँसी रहनी नही चाहिए। ये घर कर जायें, यह बिलकुल ठीक नही। मै काशीसे वापस आऊँ कि तू सेवाग्राम आ जाना। जल्दी आये तो भी हर्ज नही। लेकिन शकरीबहनके बिना तू आराम नही करेगी, यह सच है।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १००४२) से। सौजन्य शारदा गो० चोखावाला

२८८. भाषण : खादी विद्यालयमे[1]

बारडोली
८ जनवरी, १९४२

कहने की जरूरत नही कि इस खादी विद्यालयका उद्घाटन करते हुए मुझे बडी खुशी हो रही है। गुजरातमे ऐसे बहुत-से विद्यालय होने चाहिए। सच तो यह है कि हम कह सकते है, जब हमने १९२१ मे सत्याग्रह करने की तैयारी करने का निश्चय किया तभी यह विद्यालय खुल चुका था। हाँ, तब मै 'विद्यालय' शब्दको नही खोज पाया था और कमसे-कम इतना तो था ही कि खादी एक विद्या है, एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विद्या है, यह जानते हुए भी मै उन दिनो खादीके साथ विद्यालयका सम्बन्ध नही जान पाया था। लेकिन तब मुझमे यह कहने की हिम्मत नहीं थी कि खादी सचमुच इतनी महत्त्वपूर्ण विद्या है। मगर शुरुआत तो यही हुई। इस क्षेत्रमे जो भी नया आविष्कार हुआ उसका नाम बारडोलीपर ही पडा। उदाहरणके लिए हम 'बारडोली पीजन' को ले। फिर, हमारे सभी औजारोके निर्माणके लिए यहाँ एक बडा केन्द्र भी था। इस केन्द्रको कई कारणोसे हटाकर साबरमती ले जाया गया है। इसलिए जहाँ मुझे इस विद्यालयका उद्घाटन करते हुए खुशी

१. यह अनुवाद १८-१-१९४२ के **हरिजन**में प्रकाशित महादेव देसाईके "द मन्थ इन बारडोली–१" (बारडोली में एक मास–१) से मिला लिया गया है।

हो रही है, वहीं यह बड़े दुःखकी बात है कि हमें इसका उद्घाटन अब इतने समय बाद करना पड़ रहा है।

अब इस बातको समझाने के लिए किसी दलीलकी जरूरत नहीं रह गई है कि चरखा अहिंसासे और इसलिए स्वराज्यसे जुड़ा हुआ है। हमारे सामने सवाल यह है कि जो दारुण विनाश-लीला आज चल रही है उसमें हमारे करोड़ों लोगोंकी भूमिका क्या होगी? जो भूमिका सरकार निभा रही है, वह तो हम जानते हैं। यह भी जानते हैं कि हम लोगोंमें से कुछ लोग कैसी भूमिका निभा रहे हैं। ऐसे लोग जो भी भूमिका निभा रहे हैं वह सरकारके इशारेपर और अपनी ही छटपटाहटसे छुटकारा पाने को निभा रहे हैं। वे इस विनाश-लीलामें पूरी तरह उतर आये हैं। अमीरों और गरीबोंने करोड़ों रुपये इकट्ठे किये जा रहे हैं। फिर भी सरकारका खजाना खाली है। लेकिन जो लोग इस तरहसे प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपसे इस विनाश-लीलामें योग दे रहे हैं उन्हें छोड़कर अन्य लोग क्या करनेवाले हैं, वे क्या कर सकते हैं? वे अपना काम कैसे चलायें? सर्वत्र गरीबी और भुखमरी है। पानीकी भी कमी है और जहाँ दक्षिण आफ्रिका-जैसे देशोंमें सूखेके खिलाफ हर इन्तजाम कर रखा गया है, यहाँ कोई प्रबन्ध नहीं है। हम और हमारे जानवर जलाभावमें कीड़े-मकोड़ोंकी तरह दम तोड़ते हैं। जो लोग युद्धमें जाते हैं, इस आशासे जाते हैं कि वे दूसरोंको मारकर खुद जीवित लौट आयेंगे। उनमें से कुछ तो वापस नहीं ही आयेंगे। लेकिन क्या हम कीड़े-मकोड़ोंकी तरह मरने में ही सन्तोष मानते रहेंगे? हमने अहिंसाकी कसम ली है और अहिंसा द्वारा स्वराज्य प्राप्त करने की प्रतिज्ञा की है। हमने यह प्रतिज्ञा बीस साल पहले ली, फिर भी आजतक नहीं जानते कि इसे पूरी कैसे करेंगे। तो वह क्या चीज है जो हमें स्वराज्यके लिए काम करने और इस तरहके दावानलके सामने बहादुरीके साथ सीना तानकर खड़े होने की सामर्थ्य देगी? वह चीज चरखा और उससे जुड़ी दूसरी बातें हैं। हमारे पास जमीन है, लेकिन जमीनकी जो व्यवस्था है, हमारे पास जो जमीनके छोटे-छोटे अनार्थिक टुकड़े हैं और हमने खेती-बाड़ीके लिए जो तरीके अपना रखे हैं, उनके कारण हम धरतीका भार बन गये हैं। जमीनसे हमारे साल-भर खाने लायक पैदावार नहीं होती और हम आधे सालतक लगभग बेकार रहते हैं। इसलिए हमें कमर कसकर जुट जाना है और अपने समयका उपयोग उत्पादक कार्योंमें करना है। वह काम है खादी आदिका उत्पादन।

खादी-विद्याके पक्षमें बार-बार दी गई दलीलोंको या उसके फलितार्थोंको मैं दोहराना नहीं चाहता। यह बड़ी अच्छी बात है कि यहाँ यह विद्यालय खोला जा रहा है। अब आप ऐसा करें जिससे यह विद्यालय एक अभूतपूर्व शक्तिको जन्म दे—ऐसी शक्तिको, जो गुजरातमें चरखेको सार्वत्रिक बना दे। मुझे बताया गया है कि अहमदाबादमें कांग्रेसके सत्तर हजार सदस्य हैं। अगर ये सब नियमसे कातें और अपने हिस्सेका सूत कांग्रेसको दें तो? कांग्रेसके सिपाहियोंको यह नहीं भूलना चाहिए कि उनका शस्त्र चरखा है और नियमित रूपसे कातना उनका प्रशिक्षण और अनुशासन

है। आज सैनिक हथियार और गोला-बारूद बेकार साबित हुए हैं। वे चेकोस्लोवाकिया, पोलैण्ड और फ्रासको स्वतन्त्र या जीवित नही रख पाये है, यद्यपि उन्हे बडा घमण्ड था कि उनको चलाने और सँभालने के लिए बडे-बडे और प्रसिद्ध सिपाही सुलभ है। हिटलरने उन सबको गुलाम बना दिया है। इसके अलावा जो देश सशस्त्र युद्धमे उतर चुका है, उसका कल्याण हम निश्चित रूपसे कर सके, यह सम्भव नही है। प्रेसिडेंट रूजवेल्टका कहना है कि वे और मित्रराष्ट्र दुनियाके देशोको आजाद कराने के लिए धुरी शक्तियोके खिलाफ लड रहे है और धुरी शक्तियाँ दुनियाको गुलाम बनाने के लिए लड रही है। लेकिन मेरे लिए तो दोनो पक्ष एक ही रगमे रँगे हुए है।

इस आपसी विनाशके बीच, जिसमे से स्वतन्त्रता-जैसी कोई चीज तो किसी को नही मिलनी है, हम क्या करे? चरखा और उससे जुडी तमाम दूसरी बाते ही ऐसी चीज है जो हमे गौरव और आत्म-सम्मानके साथ जीने और खडे होने की सामर्थ्य प्रदान कर सकती है। यदि हम अपनी समझके साथ श्रद्धाका मिश्रण कर सके तभी हम काम कर सकते है, क्योकि बिना समझकी श्रद्धासे हमे कुछ विशेष नही मिलनेवाला है। यह काम उत्तमचन्दके हाथोमे सौप दिया गया है। यह जिम्मेदारी उन्हे इसलिए नही सौंपी गई है कि वे इसके विशेषज्ञ है, बल्कि इसलिए कि उनमे श्रद्धा है। अगर वे और कोई जिम्मेदारी अपने सिर न ले और अपनी सारी शक्ति केवल इसीमे लगाये तो निश्चय ही वे अपने इस कार्यको, जो बहुत कठिन है, गौरवान्वित कर सकते है।

आप ऐसा न समझे कि आप यहाँ केवल खादीकी कला सीखने को आये है। अगर आप ऐसी गलतफहमीमे है तो आप कही कुछ नही कर पायेगे। आप यहाँ स्वराज्य-प्राप्तिके लिए किये जानेवाले कार्यका भार उठाने आये है। यह बहुत बडा भार है, और आपको जो पहला पाठ पढना है वह यह है कि स्वराज्य-सग्रामके सेनानियोमे कौन-से गुण होने चाहिए। सबसे पहला तो है सयम और धैर्यपूर्ण श्रमका गुण। चरखा आपको यही सिखायेगा। ससारके विख्यात नगर धूलमे मिले जा रहे है। लन्दन इतना बदल गया है कि पहचाना नही जाता। जिन अट्टालिकाओके निर्माताओने सोचा था कि उन्हे तो कालके थपेडे भी कोई क्षति नही पहुँचा पायेगे, वे सब मिट्टीमे मिल गई है। सेट पॉल्स कैथिड्रल, वेस्टमिन्स्टर एबे, बकिंघम पैलेस सब-के-सब बमबारीसे तहस-नहस हो गये है। नतीजा यह है कि जिसे विश्वकी राजधानी कहा जाता है वह आज, नर्मदाशकरके शब्दोमे, "नष्ट-भ्रष्ट" दिख रहा है। हमारे रगून-जैसे नगरोका भी यही हश्र होना है। इस प्रकार नगरोके युगका अवसान निकट है। 'गाँवोको वापस चलो', यह नारा जितना सही आज है उतना कभी नही था। इसलिए कमसे-कम आप सबको तो गाँवोमे जाना ही है। मिले किसी कामकी नही रहेगी। आज वे युद्धरत लोगोके लिए कपडे तैयार कर रही है और हो सकता है, जल्दी ही ऐसे कपडोका भी उत्पादन बन्द करके केवल गोला-बारूद बनाने मे लग जाये। इसलिए अपनी जरूरतके सारे कपडे हमें खुद तैयार करने है और गाँवोको हर दृष्टिसे स्वावलम्बी बनाना है। यह काम आप सयममय जीवन और धैर्यपूर्ण श्रमके बिना नही कर सकते। इसके लिए आपको कपासकी विभिन्न

किस्मोंकी पहचानसे लेकर उसे बुने जाने की अवस्थामें पहुँचाने तक की सारी प्रक्रियाओंका ज्ञान प्राप्त करना होगा। इसके लिए आपको जो शिक्षाक्रम तैयार करना है वह सरल है। इसमें आपको अपनी पूरी शक्ति और सारी योग्यता खपानी पड़ेगी, क्योंकि यह एक ऐसा शिक्षाक्रम है, जिसमें सब कुछ समाया हुआ है। सवाल है कि लड़कियों के बारेमें क्या रुख अपनाया जाये। उन्हें भी इस विद्यालयमें दाखिल किया जा सकता है, लेकिन यह बात निर्भर होगी उत्तमचन्दके साहसपर। अभी हम उन्हें दाखिल नहीं कर सकते। हममें से हरएकको, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, राष्ट्र और स्वराज्यके निर्माणके इस कार्यमें अपने श्रम, बुद्धि और हृदयकी श्रद्धाका योग देना है।

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १८-१-१९४२

२८९. बातचीत : हरिजन-सेवकोंसे[1]

बारडोली
[८ जनवरी, १९४२][2]

उनका पहला सवाल कुओंके बारेमें था : क्या हमें हरिजनोंका सहयोग लेनेकी कोशिश करनी चाहिए और अगर करनी चाहिए तो किस हदतक ?

सहयोग तो आवश्यक है, लेकिन हमें हरिजनोंको सामूहिक रूपमें साथ लेकर सवर्ण बस्तीपर हल्ला नहीं बोल देना चाहिए। हमें कुओंको जाकर देखना चाहिए। यह पता लगाना चाहिए कि किन वर्गोंके लोग उनका उपयोग करते हैं और तब उन्हें हरिजनोंको उन कुओंका उपयोग करने की इजाजत देने के लिए समझाना-बुझाना चाहिए। स्थानिक निकायोंके कुओंके सम्बन्धमें अधिकारियोंकी सहायताका पूरा उपयोग किया जा सकता है और जो हरिजन दुर्व्यवहार सहने को तैयार हों उनसे जाकर उन कुओंका उपयोग करने के लिए कहा जा सकता है। लेकिन असली आघात तो सेवकोंको ही सहना है। उन्हें हरिजनों और जो लोग उन्हें मारना-पीटना चाहें उनके बीच डटकर खड़े हो जाना है। हरिजनोंसे बराबर साफ-सुथरे बर्तन इस्तेमाल करने और सफाईके सब साधारण नियमोंका पालन करने को कहा जाना चाहिए। हम हरिजनोंके लिए भी कुएँ खुदवा सकते हैं और सवर्णोंसे भी उनका उपयोग करने को कह सकते हैं। हो सकता है कि हरिजनोंका बहिष्कार किया जाये। वैसी हालतमें हमें इस बातका

१. महादेव देसाईके "द मंथ इन बारडोली–२" (बारडोलीमें एक महीना–२) शीर्षक लेखसे उद्धृत। ठक्कर बापाकी अध्यक्षतामें साबरमतीमें हरिजन-सेवकोंकी एक सभा हुई थी और ये लोग उसी के सिलसिलेमें वहाँ एकत्र हुए थे। वहाँसे वे गांधीजी से मिलने गये और अपने साथ पहलेसे ही तैयार किये गये प्रश्न भी ले गये थे।

२. गांधी : १९१५–१९४८ : ए डिटेल्ड क्रॉनोलॉजीसे

खयाल रखना चाहिए कि उन्हे अन्यत्र रोजगार मिल जाये। हरिजनोंको दृढताके साथ किन्तु अहिंसापूर्वक अपने अधिकारोका आग्रह करना सिखाना है, और सवर्णोको नम्रता-पूर्वक यह चेतावनी दी जा सकती है कि अन्याय सब दिन चलनेवाला नही है। ये तो कुछ मोटे-मोटे सिद्धान्त हैं, लेकिन हरएकको परिस्थिति-विशेषके अनुसार व्यवहार करना है।

प्र० : क्या हम हरिजन लड़कोंके ऐसे छात्रावासोंमें लिये जाने का आग्रह नहीं कर सकते जिनमें सभी वर्गोंके गैर-हरिजन हिन्दू लड़के रहते है ?

उ० : बेशक आग्रह किया जाये, लेकिन इस बातका ध्यान रखते हुए कि वह छात्रावास हिन्दुओकी किसी खास जाति या वर्गके निमित्त न हो। जहाँ सभी वर्गोके हिन्दुओको लिया जाता हो और केवल हरिजनोको न लिया जाता हो, वहाँ तो हरिजनोको दाखिल करवाने के लिए कार्यकर्त्ताओको कुछ भी उठा नही रखना चाहिए।

जब मैंने यह बात कही कि अस्पृश्यता-निवारणमे रोटी-बेटी-सम्बन्धपर लगे सभी प्रतिबन्धोकी समाप्ति शामिल नही है तब मेरे मनमे काग्रेसी कार्यकर्त्ता या काग्रेसजनोका खयाल नही बल्कि आम हिन्दू जनताका खयाल काम कर रहा था। काग्रेसी कार्यकर्त्ताओ और काग्रेसियोको तो अपने जीवनके हर क्षेत्रसे अस्पृश्यताको मिटा देना है।

अगला सवाल हरिजन लड़कोंको अन्तमें ईसाई बना लेने के उद्देश्यसे उन्हे मिश-नरियोंकी ओरसे पुस्तकों, शाला-शुल्क आदिके रूपमें दिये जानेवाले प्रलोभनोंके सम्बन्ध में था। इनका मुकाबला कैसे किया जाये ?

[उ० :] बेशक मिशनरियोको ईसाके सन्देशका प्रचार करने और गैर-ईसाइयोको ईसाई बनने को आमन्त्रित करने का अधिकार है। लेकिन धर्मान्तरणके लिए भौतिक लाभ पहुँचाने या भौतिक प्रलोभनका सहारा लेने के प्रयत्नका खूब पर्दाफाश किया जाना चाहिए, और हरिजनोको इन प्रलोभनोको ठुकराना सिखाना चाहिए।

प्र० : हरिजन-सेवकके कार्य ठीक प्रभाव पैदा कर सकें, इसके लिए सेवकमें क्या गुण होने चाहिए ?

उ० : ऐसा सवाल पूछने का समय तो अब नही रहा। तो भी मै इसका जवाब फिरसे देने की कोशिश करूँगा। यह दुर्भाग्यकी बात है कि अस्पृश्यता-विरोधी कार्यमे राजनीति भी जुड गई है। यह कार्य तो तत्वत आत्मशुद्धि, न्याय और मानवीयताका कार्य है। राजनीतिमे प्रवेश करने से बहुत पहले ही मुझे महसूस हुआ कि अस्पृश्यता-निवारण और हिन्दू-मुस्लिम-एकता राष्ट्रके कल्याणके लिए आवश्यक है। हिन्दू समाजको टुकडे-टुकडे होने से बचाने के लिए मुझे अपने प्राणोकी बाजी लगाकर उसके खिलाफ लडना पड़ा और इस क्रममे इस सवालपर राजनीतिक रग भी अवश्य चढ़ गया, लेकिन तत्वत यह एक धार्मिक और नैतिक प्रश्न है। हर सेवकमे हिन्दू धर्मको शुद्ध करने का उत्साह भरा होना चाहिए, और इस प्रयत्नमें उसे अपने

प्राणोकी भी बलि देने को तैयार रहना चाहिए। हिन्दू धर्मको इस कलकसे मुक्त करने के लिए हरिजन-सेवकको अपना सर्वस्व — अपने पारिवारिक सम्बन्ध, सामाजिक सुविधाएँ, बल्कि अपने प्राण भी — न्योछावर कर देने को तैयार रहना चाहिए। यह काम उसके लिए प्रार्थना, आचमन-स्नान आदि आवश्यक कार्यकी तरह एक स्वाभाविक क्रिया होना चाहिए, जिसमे किसी पारिश्रमिक या पुरस्कारकी अपेक्षा नही की जाती। यदि सेवक इस उत्साहसे अनुप्राणित हो तो उसका रास्ता अपने-आप साफ होता चला जायेगा। उदाहरणके लिए, सेवक किसी हरिजनके भूखे रहने की अपेक्षा खुद भूखा रह जाना ज्यादा पसन्द करेगा, ऐसी सुविधाओंका उपभोग करने मे उसे सहज सकोच होगा जो हरिजनोको भी सुलभ नही है और वह हरिजनोके साथ दिन-प्रति-दिन अधिकाधिक तादात्म्यका अनुभव करेगा। यह सारा कार्य राजनीतिक परिणामोकी कोई परवाह किये बिना करना चाहिए। क्षण-भरको मान लीजिए कि अस्पृश्यता-निवारणके फलस्वरूप स्वराज्य प्राप्त नहीं होता है, उस हालतमें भी हिन्दू धर्मको शुद्ध और जीवित रखने के लिए यह काम करना ही है। मुझे मालूम है कि कुछ कांग्रेसी इस कामको केवल राजनीतिक महत्वकी दृष्टिसे ही देखते हैं, लेकिन यह बात गलत है। यदि वे एक विदेशी सरकारसे न्याय चाहते हैं तो सबसे पहले उन्हें अपनोंके साथ न्याय करना होगा। न्यायका यह बुनियादी सिद्धान्त है — जो न्याय पाना चाहता है उसे न्याय करना भी चाहिए।

मुझे मालूम है कि एक वर्गके लोग कहते हैं, पहले राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करें और फिर सामाजिक सुधार होंगे। यह गलत खयाल है, और जो लोग अहिंसाके बलपर स्वराज्य प्राप्त करना चाहते हैं उनसे तो इस खयालका कोई मेल नही बैठता। लेकिन हरिजन-सेवकको कट्टरपंथियोंके साथ-साथ उन लोगोको भी वास्तविक स्थितिका बोध कराना है जो हर चीजको राजनीतिक दृष्टिकोणसे ही देखते हैं। दूसरे क्या और कैसे हैं, वह उसकी फिक्र बिलकुल न करे, बल्कि निःस्वार्थ, निष्काम सेवा द्वारा ऐसे लोगोंके सामने एक उदाहरण प्रस्तुत करे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-२-१९४२

२९०. सलाह: खादी-सेवकोंको[1]

बारडोली

[९ जनवरी, १९४२ या उसके पूर्व][2]

[प्र०:] हम २ लाख रुपये मूल्यकी खादी तैयार कर रहे हैं, लेकिन माँग तो १२ लाखसे भी अधिककी खादीकी है। यह माँग हम कैसे पूरी करें? हमारे पास पर्याप्त संख्यामें बुनकर और कार्यकर्त्ता नहीं हैं। इसके अलावा पैसेका भी सवाल उठता है।

[उ०:] सबसे पहले मैं आखिरी सवालको ही लेता हूँ। यह मेरा निश्चित विश्वास है और यह साल-दर-साल पुष्ट ही होता गया है कि अगर कार्यकर्त्ता हों तो पैसेके अभावमें कोई काम रुका नहीं रहता। लेकिन असली सवाल उत्पादन-क्षमताका है। मान लीजिए कोई आपको एक करोड़ रुपया दे देता है, तो इसीसे आप दस करोड़ रुपयेकी खादी तो तैयार नहीं कर सकते। इसका कारण है कार्यकर्त्ताओंकी कमी, कार्यकुशलताकी कमी और श्रद्धाका अभाव। खादीकी माँग बढ़ रही है, यह एक अच्छी बात है, यद्यपि यह कोई बहुत सन्तोषका विषय नहीं है कि जहाँ ८ करोड़ रुपयेकी खादीका इस्तेमाल हो सकता है वहाँ सिर्फ १२ लाख रुपयेकी खादीकी माँग हो रही हैं। लेकिन बढ़ती हुई बिक्रीका मतलब यह है कि ऐसे लोगोंकी संख्या बढ़ रही है जो खादी पसन्द करते हैं। हमें इन उपभोक्ताओंसे सम्पर्क स्थापित करना चाहिए और इन्हें कातने को राजी करना चाहिए और यहीं आती है धनुष तकली। आपको मालूम होना चाहिए कि मैं साधारण चरखेपर ज्यादा सूत कात सकता हूँ, लेकिन मैं आग्रहपूर्वक धनुष तकलीका ही इस्तेमाल करता हूँ, और अब मैं लगभग उसका विशेषज्ञ बन गया हूँ। कारण यह है कि लक्ष्मीदासभाई[3] तो २५ लाख चरखों की माँग पूरी नहीं कर सकते, लेकिन लोग खुद चाहें तो उतनी धनुष तकलियाँ बना सकते हैं। इसे बनाना अत्यन्त सरल है। यह बहुत सस्ती भी है। इसमें बहुत कम सामग्रीकी जरूरत होती है तथा कारीगरीकी तो लगभग कुछ भी जरूरत नहीं होती। पंजाब या दक्षिण भारतको भेजने के लिए साबरमतीमें चरखे तैयार करना, यह गलत नीति है। चरखे तो जरूरतके मुताबिक सम्बन्धित क्षेत्रोंमें ही बनाये जाने चाहिए। इस दृष्टिसे धनुष तकली बहुत उपयुक्त चीज है। इसके सार्वत्रिक हो जाने से उत्पादन दिन दूना, रात चौगुना बढ़ेगा।

१. महादेव देसाईके लेख "ए मंथ इन बारडोली–२" (बारडोलीमें एक महीना–२) से उद्धृत
२. गांधीजी ९ जनवरी, १९४२ को बारडोलीसे चले थे।
३. लक्ष्मीदास आसर

कताईके प्रति लोगोके वढते हुए प्रेमके रूपमे जो सुयोग मिला है उसका आपको तत्परतासे लाभ उठाना चाहिए। जितने वडे पैमानेपर हमारे पिछले आन्दोलनके दिनोमे कताई की गई उतने वडे पैमानेपर पहलेके किसी आन्दोलनके दौरान नही की गई थी। सावरमती जेलके आँकडे वडे अच्छे थे, लेकिन आगरा और वरेलीके भी आँकड़े श्रेष्ठ थे। वादशाह खाँको कताईको लोकप्रिय वनाने मे इस वार जितनी सफलता मिली है उतनी पहले कभी नही मिली थी। इसलिए हमे इस उमडते उत्साहसे लाभ उठाना है और कताईके प्रति वढते हुए प्रेमके साथ इस कलाकी निपुणताका सयोग करना है।

हमे घर-घर जाकर स्वेच्छासे कातनेवाले ऐसे लोगोके नाम दर्ज करने है जो इस यज्ञमें अपने सूतका दान देने को तैयार हो।

मै यह मान लेता हूँ कि सभी खादी-सेवक अहिंसक उपायोसे स्वराज्य प्राप्त करने मे विश्वास रखते है। इसलिए रचनात्मक कार्यक्रममे आपका योगदान सवसे अधिक होना चाहिए।

आपमे से कुछ लोगोको वुनकर भी वनना है। हाथकरघेपर वुननेवालो की सख्या भारतमे इतनी अधिक है कि वे हमारी जरूरतकी सारी खादी बुन सकते है। हमे उनको हाथकता सूत वुनने को प्रेरित करना है और उनके घरोकी स्त्रियो और वच्चोको भी कातने की प्रेरणा देनी है।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १-२-१९४२

२९१. टिप्पणियाँ

ग्राहकोंसे

व्यवस्थापकने मुझे वताया है कि 'हरिजन' के ग्राहक ठीक-ठीक समझ गये है कि किन अनिवार्य कारणोसे हमें इसका प्रकाशन स्थगित करना पडा, और इसलिए इस सम्वन्धमे उन्होने अत्यन्त धीरजसे काम लिया है। कुछ अपवादो को छोडकर, जिन्हें हम समझ सकते है, किसी ग्राहकने अपना वाकी चन्दा वापस नही माँगा है। मुझे यह सूचित करते हुए खुशी हो रही है कि अव उन्हे अपनी प्रति फिरसे नियमित रूपसे मिलने लगेगी। किन्तु कुछ कारणोसे, जो सवको मालूम है, पुरानी दरको कायम रखना असम्भव होगा। जिन ग्राहकोका पुराना चन्दा वाकी है वह नये हिसावमें उनके नाम जमा कर लिया जायेगा और उसके पूरा होने की तिथिकी सूचना उन्हे दे दी जायेगी। मुझे आशा है कि इन तीनो साप्ताहिकोकी पुरानी लोक-प्रियतामें कमी नही आयेगी, वरिक उसमे स्पष्ट वृद्धि ही होगी। क्योकि मै समझता हूँ कि जो सामग्री उन्हे हर सप्ताह मिलेगी वह उनके लिए वहुत उपयोगी होगी। ये तीनो साप्ताहिक विशुद्ध सेवाके साधन है। इनका उद्देश्य आर्थिक लाभ कमाना कभी नही रहा।

हिंसा विनाशक है

श्री एस० बी० ठाकर एक चुपचाप काम करनेवाले कुशल सेवक है। हरिजनोकी सेवाके अतिरिक्त उन्होने अन्य अनेक क्षेत्रोमे काफी काम किया है। उन्होने मुझे अपनी एक रिपोर्ट भेजकर यह बताया है कि किस तरह भीलोके दो दलोमें सख्त झगडा पैदा हो गया था, किन्तु फिर किस प्रकार सरकारकी सहायता लेकर उनके बीच-बचाव करने से दगा होते-होते रुक गया। भीलोके बीच सुधार-कार्य करनेवाले स्वर्गीय गुला महाराजकी सरलता और सहृदयताका भीलोपर बडा असर हुआ था और उनसे प्रेरित होकर उनमे से हजारोने शराब तथा अन्य बुराइयोको छोड दिया था। एक साल पूर्व उनका देहान्त होने पर एक दूसरे व्यक्तिने उनकी जगह ली। सुधारक पक्षने उन लोगोका बहिष्कार किया जो बुरी आदते छोडने को तैयार नही थे। इससे उनमे काफी वैमनस्य पैदा हो गया। एक समय तो ऐसा लगने लगा था कि अब मार-पीट होकर रहेगी। श्री ठाकरने ठीक समयपर बीच-बचाव किया, जिससे खून-खराबीकी नौबत नही आई। किन्तु सुधार-प्रवृत्तिको धक्का पहुँचा है। अभी सुधारकोंके विरोधियोका दल प्रबल है और अगर पहलेकी तरह आन्दोलनमे शुद्ध नैतिक भावना का प्राबल्य नही होता है तो आन्दोलन बिलकुल ही बैठ जायेगा। श्री ठाकरने बहुत ठीक ही इससे यह पाठ ग्रहण करना चाहा है कि हमारा उद्देश्य कितना ही नेक क्यो न हो, किन्तु यदि उसमे हिंसाका मिश्रण है तो काम बिगड जायेगा और इसलिए हर सुधारको जनताके स्वैच्छिक और प्रबुद्ध सहयोगके व्यापक आधारपर खडा होना चाहिए। हिंसासे लोगोकी आदते सुधर नही सकती।

आदिवासी

श्री ठक्कर बापा शिकायत करते है कि रचनात्मक कार्यक्रमके बारेमे जो पुस्तिका निकाली गई है वह अच्छी तो है, लेकिन उसमे आदिवासियो अर्थात् सथालो, भीलो आदि तथाकथित मूल निवासियोका कोई उल्लेख नही है।[1] उनकी शिकायत उचित है। रचनात्मक कार्यक्रममे जिन कार्योका स्पष्ट उल्लेख है उनके अतिरिक्त अन्य बहुत-से कार्य भी फलितार्थ-रूपमें उसमे शामिल हैं। किन्तु इससे ठक्कर बापा-जैसे लोक-सेवकको तो सन्तोष नही हो सकता है, और होना भी नही चाहिए। आदिवासी इस देशके मूल निवासी है। उनकी आर्थिक स्थिति हरिजनोसे शायद ही अच्छी हो और काफी समयसे तथाकथित उच्च वर्गोके लोग उनके प्रति लापरवाही दिखाते आ रहे है। आदिवासियोके प्रश्नको रचनात्मक कार्यक्रममे विशेष स्थान मिलना चाहिए था। उसका उल्लेख न हो पाना एक चूक-भर थी। उनके बीच कांग्रेसियोके लिए सेवाका बहुत बडा क्षेत्र है। अभी तक तो इस क्षेत्रमें ईसाई धर्मप्रचारकोका न्यूनाधिक एकाधिकार रहा है। यद्यपि उन्होने काफी मेहनत की है, फिर भी उनका काम जैसा चाहिए था वैसा फला-फूला नही, क्योकि उनका अन्तिम उद्देश्य आदिवासियोको ईसाई बनाने का और उनकी भारतीयताको मिटाकर उन्हे अपने-जैसा परदेशी बनाने का

१. **रचनात्मक कार्यक्रमका मर्म और महत्त्वके** संशोधित संस्करणमें आदिवासियोंके सम्बन्धमें एक परिच्छेद जोड दिया गया था, देखिए पृ० १६१-८३।

है। जो भी हो, यदि हम अहिंसाके आधारपर स्वराज्यका भवन खड़ा करना चाहते हैं तो देशके तुच्छसे-तुच्छ वर्गकी ओर भी हम लापरवाही नही बरत सकते। किन्तु आदिवासियोकी संख्या तो इतनी बडी है कि उन्हें तुच्छ गिना ही नही जा सकता।

बारडोली-वर्धा रेलगाडीमें, ९ जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

२९२. शान्ति-संगठन

यदि कांग्रेस शस्त्र-वृत्तिवाली संस्था होती तो इसमें कोई सन्देह नही कि वह आज एक पूर्ण विकसित सैनिक इकाई होती। उसका एक-एक सदस्य युद्ध-प्रशिक्षण लेकर कुशल योद्धा बना होता। किन्तु यह हिन्दुस्तान और मानव-जातिका सौभाग्य है कि कांग्रेस ऐसी संस्था नही है। आजके हिन्दुस्तानमें शुद्ध रूपमें राष्ट्रीय कही जानेवाली कोई भी संस्था सैन्यवादी नही है और न हो सकती है। हिन्दुस्तान और मानव-जातिका एक और सौभाग्य यह है कि १९२० से कांग्रेस अहिंसक साधनो द्वारा स्वराज्य लेने को प्रतिबद्ध है। किन्तु आजतक वह बहुत हदतक एक वाद-विवाद समितिका ही काम करती रही है। बीच-बीचमें वह सविनय अवज्ञा भी करती है परन्तु अपने महत्त्वपूर्ण रचनात्मक कार्यक्रमके साथ बराबर खिलवाड करती रही है। एक समय ऐसा था जब हर कांग्रेसीसे राष्ट्रके लिए कुछ-न-कुछ पैदा करने की अपेक्षा की जाती थी। हर सदस्यसे — चाहे वह स्त्री हो या पुरुष — राष्ट्रके लिए कुछ सूत कातने की आशा की जाती थी। किन्तु इसमें कांग्रेसियोने सहयोग नही दिया और अन्तमें कताईवाली शर्तको हटाना पडा। इसके सिवाय और भी कई शर्तें थी, जिनपर हर कांग्रेसीको अमल करना था, किन्तु उनके सम्बन्धमें भी वह जितना चाहिए था उतना नही कर पाया। अब ऐसा समय आ गया है कि प्रत्येक कांग्रेसीको अपना एक रास्ता चुनना होगा। आज उसके सामने केवल एक ही कार्यक्रम है और वह यह कि वह शान्तिका सच्चा सिपाही या सेवक बन जाये। परन्तु शान्ति-सेनानीका मार्ग तलवारसे लडनेवाले सिपाहीसे भिन्न है। उसे तो चाहे युद्धका काल हो या शान्तिका, अपने पास बचा पूरा समय शान्तिके साम्राज्यकी स्थापनामें ही लगाना है। शान्ति-कालमें वह अशान्तिके कारणोको दूर करके अशान्तिको रोकने की कोशिश करेगा और साथ ही युद्ध-कालके लिए तैयारी भी करता रहेगा।

इसलिए यदि मैं कांग्रेसी होऊँ और मुझे मत देने का अधिकार हो, तो मैं आपात् व्यवस्थाके रूपमें इस पक्षमें मत दूँ कि आज कांग्रेसके जितने भी सदस्य हैं और आगे जितने लोग सदस्य बनें उनमें रचनात्मक कार्यक्रमको चलाने के लिए एक न्यूनतम योग्यता अवश्य हो। मुझे यह स्मरण कराने की आवश्यकता नही कि कांग्रेसका लोकतान्त्रिक स्वरूप बना रहना चाहिए। यह स्वेच्छासे एक ऐसी कार्यकुशल और कर्मठ

सस्था वन जाये जिसमे इसके अनुशासन और शर्तोका पालन करने को तत्पर कोई भी व्यक्ति शामिल हो सके, इसीसे इसका लोकतान्त्रिक स्वरूप समाप्त नही हो जायेगा। यदि सकटके समय काग्रेस लोकप्रिय होने लायक काम न कर सकी, तो जरूर वह अपनी सारी लोकप्रियता खो बैठेगी। यदि वह बेकार और भूखी जनताको कुछ काम न दे सकी, यदि वह आक्रमण या उपद्रवसे लोगोकी रक्षा न कर सकी या रक्षा करने का उन्हे रास्ता न वता सकी, अगर वह खतरा आने पर उनकी कुछ भी मदद न कर सकी, तो वेशक उसकी प्रतिष्ठा और लोकप्रियता खत्म हो जायेगी। किसी व्यक्ति या सस्थाका जीवन उसकी सचित पूँजीपर नही चल सकता। पूँजीका चलते और बढते रहना अनिवार्य है।

काग्रेसकी लोकप्रियताका कारण यह है कि उसने साम्राज्यवादके विरुद्ध लडाईमे सवसे आगे वढकर भाग लिया है। आज की परिस्थितिमे पुराना तरीका किसी कामका नही रहा। आज कोई सामूहिक विद्रोहकी बात नही सोचता। सबसे अच्छा, जल्दी का और प्रभावशाली तरीका यही है कि नीवसे ही लेकर भवन खडा किया जाये। इसके लिए जनताकी मनोभूमिका आज तैयार है। 'गाँवोकी ओर वापस चलो', यह चीज सभी दृष्टिकोणोसे आवश्यक हो गई है। अब समय आ गया है कि हम अपने उत्पादन और वितरणका विकेन्द्रीकरण करे। हमारे हरएक गाँवको एक स्वावलम्बी लघु गणतन्त्र वनना है। इसके लिए जोरदार प्रस्तावोकी आवश्यकता नही। इसके लिए जरूरत है बहादुरी और समझदारीके साथ मिल-जुलकर काम करने की। जहाँतक मै समझता हूँ, यह एक ऐसी बात है जिसपर सरकार और जनता दोनो आज एकमत है।

प्रत्येक काग्रेसीको आज यह तय करना है कि वह शान्तिका सिपाही अथवा सेवक वनेगा या स्वराज्यके महान् यज्ञमे अपनी उचित भूमिका निभानेसे जी चुराते हुए एक नगण्य प्राणी बनना पसन्द करेगा।

वारडोली-वर्धा रेलगाडीमे, ९ जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

२९३. क्यों ?

जबतक मैं कांग्रेसकी ओरसे सविनय अवज्ञा आन्दोलनका सगठन और सचालन कर रहा था तबतक ऐसा तो नही हो सकता था कि ये तीन साप्ताहिक मैं प्रकाशित करता रहूँ और उनमें सत्याग्रहियोंकी गतिविधियो तथा आन्दोलनकी आम प्रगतिकी चर्चा न करूँ। यदि चर्चा करता तो उसका मतलब इन साप्ताहिकोको सविनय अवज्ञाके मुखपत्र बना देना और इस तरह सरकारको उन्हे बन्द करवाने की चुनौती देना होता। जवाबमे सरकारने भी निश्चय ही इस चुनौतीको स्वीकार करके इन साप्ताहिको को बन्द करवा दिया होता और वह मुझपर मुकदमा भी चलाती। वैसे तो मुझे हमेशा कैदका स्वागत करने को तैयार रहना चाहिए, लेकिन तब मैं उसके लिए तैयार नही था। इसके अलावा मेरा तो घोषित लक्ष्य केवल व्यक्तिगत सविनय अवज्ञाका सगठन करना था, इसलिए सरकारको इन अखबारोंको बन्द करने की चुनौती देने का मेरा कोई इरादा भी नही था। इसलिए कर्तव्यका तकाजा यही था कि मैं उन्हे बन्द कर दूँ हालाँकि इससे इन साप्ताहिकोंके द्वारा विभिन्न प्रकारसे जनताकी सेवा करने के सुखसे वचित होने की बात तो थी ही। मैं मानता हूँ कि जो कदम मैंने उठाया वह हर तरहसे उचित था।

अब इनका प्रकाशन स्थगित रखने का कारण नही रह गया है। इसके विपरीत यदि मैं इनका प्रकाशन पुन आरम्भ न करूँ तो अपने कर्त्तव्यसे हटूँगा। जैसा कि मैंने बार-बार कहा है, मैं इंग्लैंडका शत्रु नही हूँ। अग्रेजोंके बीच मेरे बहुत-से प्रिय और खास मित्र है। मैं ब्रिटेनका बुरा चाह ही नही सकता। मेरा युद्ध-विरोध युद्धमें भाग लेने के इच्छुक लोगोंके मार्गमें बाधा डालने की सीमातक नही जाता। मैं उन्हें समझाता-बुझाता जरूर हूँ, जो बेहतर रास्ता है वह उन्हे सुझाता हूँ और फिर कौन-सा रास्ता चुनें, यह बात उन्हीं की मर्जीपर छोड देता हूँ।

लेकिन आज हम ऐसी मजिलपर पहुँच गये है जहाँ सवाल सिर्फ युद्ध-प्रयत्नके विरोधका ही नहीं है। ऐसे प्रश्न भी है जो जिस तरह युद्ध लानेवालो के सामने खडे है उसी तरह युद्धका विरोध करनेवालो के सामने भी उपस्थित है। और उनका निबटारा दोनों केवल एक ही तरहसे कर सकते है, हालाँकि उनके तरीके अनिवार्यतया एक-दूसरेसे भिन्न होंगे। खाद्य और वस्त्रकी कमी, लूट-पाट, रोटीके लिए होनेवाले दगे आदिसे निबटने के प्रश्न ऐसे ही प्रश्न है। इन और इस तरहके सभी प्रश्नोपर मेरे कुछ अपने विचार है। इन और ऐसे ही अन्य विषयोपर अपने विचारोंसे लोगोंको अवगत करा सकूँ, इसके लिए इन साप्ताहिकोंको पुन प्रकाशित करना आवश्यक है। बिना किसी शोर-गुलके, बल्कि बिना सरकारी सहायताके ही, इन समस्याओंको हल करने की जनताकी क्षमतामे स्वराज्य, जिसका आधार अहिंसा है, प्राप्त करने का

उपाय निहित है। जिन कठिनाइयोसे करोड़ो लोग प्रभावित हो उनके समाधानमे जबतक ऐसे सभी लोग स्वेच्छासे सहयोग नही करते तबतक केवल सरकारी प्रयत्नसे उनसे नही निबटा जा सकता।

यदि हम सत्य और अहिंसाके बलपर स्वराज्य प्राप्त करना चाहते है तो उसका एक ही रास्ता है कि हम रचनात्मक प्रयत्नो द्वारा समाजके ढाँचेको बुनियादसे ऊपरकी ओर धीरे-धीरे किन्तु दृढ़ताके साथ गढते चले जाये। बात ऐसी है तो फिर प्रतिष्ठित व्यवस्थाको समाप्त करने के लिए इस आशासे अराजकताकी स्थिति उत्पन्न करने की कोई गुजाइश नही रह जाती कि हमारे बीचसे ही कोई ऐसा अधिनायक उभरेगा जो लौह दण्डके जोरपर शासन करेगा और अव्यवस्थामे से व्यवस्थाका सृजन करेगा।

गरज यह कि इन स्तम्भोमे जनताके सामने दिन-प्रति-दिन उपस्थित होनेवाली समस्याओकी चर्चा की जायेगी।

बारडोली-वर्धा रेलगाडीमे, ९ जनवरी, १९४२

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

२९४. बातचीत : सेवाग्राममे[1]

[१० जनवरी, १९४२ या उसके पश्चात्][2]

सरदारकी सगठन-शक्तिकी जानकारी तो मुझे थी ही, लेकिन सरदार एक कुशल कृषक भी है, इसकी जानकारी मुझे पहली बार मिली है। केलेके बागकी एक-एक इच जमीन और इसे मिलनेवाले जलकी एक-एक बूंदका उपयोग बडी सावधानीके साथ किया गया है। केलेकी फसल सालमे एक बार होती है, लेकिन पौधोके बीचकी जगहमे उचित फासलेपर दूसरे फल, जैसे आम, लीची, चीकू और चकोतरेके पेड लगे हुए थे। मेडोपर विभिन्न प्रकारकी सब्जियाँ लगी हुई थी। बगीचेके चारो ओर दीर्घ कालतक हरे-भरे रहनेवाले वृक्ष लगे हुए थे। पेड़ोकी देख-भालका काम करनेवालो के आने-जाने की सुविधाके लिए अन्दर पगडडियाँ बनी हुई थी, जो इतनी चौडी थी कि स्वास्थ्य-लाभके लिए सुबह-शाम घूमने के इच्छुक लोग उनकी मखमली सतह पर मजेमें टहल सकते है। आँखो और मनको तुष्ट करने के लिए इतना सब काफी था। सरदारके परिश्रमके फलस्वरूप आश्रमको हजारो रुपयेकी आमदनी हुई

१. महादेव देसाईके "द मंथ इन बारडोली–१" (बारडोलीमें एक महीना–१) शीर्षक लेखसे उद्धृत।

२. गाधीजी १० जनवरी, १९४२ को सेवाग्राम लौटे थे।

है और उन्होंने दूसरोंके लिए एक उदाहरण प्रस्तुत किया है। आज उनकी देखादेखी दर्जनों लोग वहाँ केलेकी बागवानी कर रहे हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

२९५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
११ जनवरी, १९४२

प्रिय जवाहरलाल,

अभी-अभी मालूम हुआ है कि तुम और मौलाना साहब, दोनों पहुँच गये हो। मौ० सा० को मैंने बता दिया था कि २ बजे मैं मौन धारण कर लूंगा। यह बताते समय मैं यह भूल ही गया था कि ४-३० पर मैंने प्रो० कूपलैंडको[1] मिलने का समय दिया है। उसे मैं रद्द भी नहीं कर सकता था। इसलिए मैंने शामके ५-२५ पर मौन लिया। उस समयके उपरान्त सारा समय तुम्हारा और उनका होगा। मुझे अफसोस है, लेकिन मैं लाचार था। इसे मौ० सा० को भी सुना देना।

इन्दुको रख आना चाहिए।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४१। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय और पुस्तकालय

२९६. पत्र : बलवन्तसिंहको

११ जनवरी, १९४२

चि० बलवंतसिंह,

कातनेके लिये मत इसके साथ है। मुझको तो तुमारा मौन[2] प्रिय है, मैं उसे छोडने का नहि कहूंगा। लेकिन सेवा-कामके लिये छोडना अच्छा लगे या यों हि तो अवश्य छोडो।

1. ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालयके सर रेजिनल्ड कूपलैंड जो इन दिनों भारतीय संवैधानिक समस्या के अध्ययनके लिए भारत आये हुए थे।
2. गांधीजी की सलाहपर बलवन्तसिंहने दो महीनेका मौन रखा था।

लक्ष्मीदास या उनके जैसा कोई भी आदमी तुमारे साथ काम करे तो मुझे अच्छा हि लगेगा।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० १९४२) से

२९७. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

सेवाग्राम, बरास्ता वर्धा (म०प्रा०)
१२ जनवरी, १९४२

प्रिय सी० आर०,

आपने अपनी कमेटी के अध्यक्षके नाम जो पत्र लिखा है वह मुझे बेहद पसन्द है। कहने की जरूरत नही कि आपके त्यागपत्रसे आपकी प्रतिष्ठा बढी ही है।

स्नेह।

बापू

श्री च० राजगोपालाचारी
४८ बजलुल्ला रोड
त्यागराजनगर
मद्रास

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०९०६) से। सौजन्य: सी० आर० नरसिंहन्

२९८. पत्र : प्रभावतीको

१२ जनवरी, १९४[२][1]

चि० प्रभा,

मैंने तुझे दो पत्र तो लिखवाये थे ब्रजबिहारीके[2] पते पर। यही पता तूने दिया था। तुझे किसीकी आलोचनासे डरना या घबराना नही चाहिए। मैं २१ को बनारस पहुँचूंगा। २२ को वहाँसे वापस लौटूंगा। बाबूजी साथ होंगे। अगर तू जल्दी पहुँच जाये तो सर राधाकृष्णन् या शंकरके घर चली जाना। और मेरे आने के

१. डाककी मुहरसे, तथापि साधन-सूत्रमें "१९४१" दिया हुआ है जो स्पष्टतः भूल है।
२. प्रभावतीके भाई

वाद मेरे पास आ जाना। यदि तू न आ सके तो कोई हर्ज नही। काम विगडता हो तो मत आना। शकरका पता है — प्रो० कालेलकर, चन्दन कुटीर, यूनिवर्सिटी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५५०) से

२९९. हाथ-कता सूत विनिमय-साधनके रूपमें[1]

एक समय मेरे जन्म-स्थान काठियावाडमें कौडियो और सूखे हुए थोथे वादामोको लोग नकदीके रूपमे प्रयोग करते थे और सरकारी खजानोमें भी उन्हे नकदीके रूपमें स्वीकार किया जाता था। उनका कोई वास्तविक मूल्य नही था। वे लोगोकी प्रगाढ दरिद्रताके द्योतक थे। इसका अभिप्राय यह था कि उनमे धातुके छोटेसे-छोटे सिक्केको रखने की भी क्षमता नही थी। पाँच कौडीमें वे एक सुई या थोडी-सी सब्जी खरीदते थे। विनिमय-साधनके रूपमें प्रयोगके लिए मैंने एक ऐसी वस्तुकी सिफारिश की है जो प्रतीक-मात्र नही है, वल्कि उसकी हमेशा अपनी स्वतन्त्र कीमत है और वह भी उसके वाजार-भावके वरावर। इस दृष्टिसे वह आदर्श विनिमय-साधन होगा। मेरी सिफारिश है कि कातनेवालो के लिए विशेष रूपसे और खादी-प्रेमियोके लिए सामान्य रूपसे आपसमें व्यवहारके लिए तानेका एक तार छोटीसे-छोटी नकदीकी जगह प्रयोग किया जाये। कातनेवाले सूतके वदले अपनी सामान्य दैनिक आवश्यकताकी वस्तुएँ निश्चित भावपर खरीद सकेंगे। शुरूमे चरखा सघ और ग्रामोद्योग सघको साथमें मिलकर भण्डार खोलने होंगे। आगे चलकर जो लोग सहयोग देना चाहे उनकी सहायता इन भण्डारोके खोलने में ली जाये। योजना की मेरी जो अवधारणा है उसके अनुसार यह सफल तभी होगी जव इसका विकेन्द्रीकरण करके इसे चलाया जाये। यह इसका अवगुण नही, विशेष गुण है। इसका लक्ष्य लोगोको सुखी वनाने के साथ-साथ उनकी वौद्धिक और नैतिक उन्नति करना भी है। नैतिक उन्नतिसे मेरा अभिप्राय आध्यात्मिक उन्नतिसे है। इस लक्ष्यकी पूर्ति विकेन्द्रीकरणके द्वारा हो सकती है। केन्द्रीकरणकी पद्धति अहिंसक समाज-रचनासे मेल नही खाती। विनिमयकी इस योजनाकी मोटी रूप-रेखा ही खादी-सेवको और भारतकी गरीवीको दूर करने के प्रश्नमे रुचि लेनेवालो के सामने रखी गई है। अव यह उनका काम है कि वे इसकी गहराईमें उतरकर विचार-दोषोको ढूँढें और यदि इसमें कोई दोष न हो, तो जहाँ हो सके वहाँ इस योजनाको अमलमें लायें।

सेवाग्राम, १३ जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १८-१-१९४२

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३००. पुर्जा : बलवन्तसिंहको

१३ जनवरी, १९४२

मैंने मेरे हाथोसे सैकडो खजूरी काटी है और आँखोके सामने कटवाई है। वह वृक्ष मै वापिस नही ला सकता। तुम्हारी दलीलके मुताबिक तो कोई भी वृक्ष काट सकते है। हा, यह ठीक है कि तुमको अच्छा लगा सो किया। मुझे दु ख तो हुआ है कि तुमने इतने वृक्षोको काटा तो सबसे वहस करनी थी। खजूरी गरीबोका वृक्ष है। उसके उपयोग तुम्हे क्या बताऊँ? अगर सब खजूरी कट जाय तो सेवाग्रामका जीवन बदल जायेगा। खजूरी हमारे जीवनमें ओतप्रोत है। घास इत्यादी दूसरी जमीनमे बो सकते थे। लेकिन हुआ उसका दु ख भूल जाना है। उसमे से जो शिक्षा मिलती है वह ले तो अच्छा है। मै तो वक्त नही निकाल सकता। गजाननसे[1] वात करो, दूसरोको पढाओ। खजूरीके उपयोगका हिसाब करो।

बापुके आशीर्वाद

बापूकी छायामें, पृ० २९३-९४

३०१. सर अकबर हैदरी[2]

विभिन्न गुणोका जैसा सुन्दर सयोग स्वर्गीय सर अकबर हैदरीके[3] व्यक्तित्वमे हुआ था वैसा क्वचित् ही देखने को मिलता है। वे एक बडे विद्वान्, दार्शनिक और सुधारक थे। वे एक निष्ठावान् मुसलमान थे, किन्तु हिन्दू धर्ममें उन्हे इस्लामके विरुद्ध कोई वात दिखाई नही देती थी। उन्होने विभिन्न धर्मोका अध्ययन किया था। मित्रोके चुनावमे वे अत्यन्त उदार थे। दूसरी गोल मेज परिषद्से हम साथ ही एक ही जहाजमें लौटे थे।[4] जहाजपर सन्ध्याको हमारी जो प्रार्थना होती थी, उसमे वे नियमित रूपसे आते थे। हम जो 'गीता' के श्लोक और भजन गाते थे, उनमें वे इतना रस लेते थे कि उन्होने महादेव देसाईसे उन सबका अनुवाद अपने लिए करा लिया था। उन्होने मुझसे वचन लिया था कि भारत पहुँचने के बाद साम्प्रदायिक एकताके लिए हम दोनो साथ-साथ देशका दौरा करेंगे, किन्तु ईश्वरने

१. गजानन नायक जो आश्रमके ताड़गुड़-विभागके व्यवस्थापक थे
२. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
३. जिनकी ८ जनवरीको दिल्लीमें मृत्यु हो गई थी
४. दिसम्बर, १९३१ में

बैठकमें जाते हुए
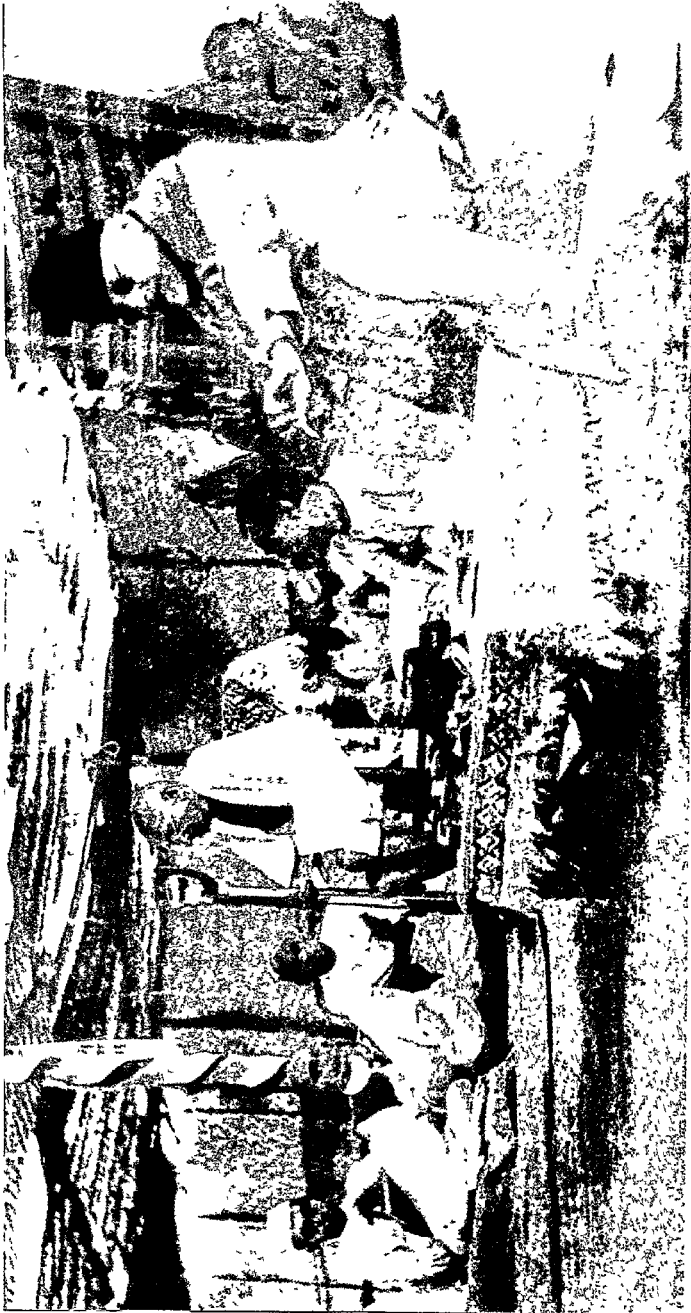
वर्धामें कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें

कुछ और ही सोच रखा था। स्व० लॉर्ड विलिंग्डनने मेरे लिए दूसरा ही कार्यक्रम तैयार कर रखा था। मुझे सविनय अवज्ञा आन्दोलनमें कूदना पड़ा और सर अकबर हैदरी तथा मेरे बीच तय किया गया कार्यक्रम धरा-का-धरा रह गया। वे श्री अरविन्द घोषसे प्रभावित हुए थे। जिस समय पांडिचेरीके ऋषि श्री अरविन्द अपने भक्तोंको त्रैमासिक दर्शन देते थे, उस समय वे निरपवाद रूपसे वहाँ रहते थे। सर अकबरकी मृत्युसे देशकी भारी क्षति हुई है। उनके शोकाकुल कुटुम्बके प्रति मेरी हार्दिक सम्वेदना है।

सेवाग्राम, १४ जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

३०२. पत्र : सर फ्रांसिस वाइलीको

१४ जनवरी, १९४२

प्रिय सर फ्रांसिस वाइली,[1]

राजकुमारीने मुझे आपका वह पत्र दिखाया जिसमें मेरा भी उल्लेख है। मैं भूल स्वीकार करता हूँ। जिस व्यक्तिकी सुकृतियोंके बारेमें मैंने इतना अधिक सुन रखा था उसके लिए कोई ऐसा काम करना मुझे बहुत अशोभन लगा और फलतः मैं बहुत क्षुब्ध हुआ। मुझे बताया गया था कि आप टॉल्स्टॉयके अनुयायी हैं। मुझे कितना अधिक दुःख हुआ, इसके बारेमें मैं आपको लिख नहीं सकता था। कारण, यद्यपि मैंने आपका दिया विशेषण स्वीकार कर लिया है, लेकिन मैं जितना क्रुद्ध था उससे कहीं अधिक दुःखी था। कहने की जरूरत नहीं कि आपका लड़का मेरे साथ रहता, इससे मुझे बड़ी खुशी होती। वह सेवाग्रामके नये जीवनका आनन्द उठा पाता। और यह तो है ही कि एक-दूसरेके इतने निकट होते हुए भी हम दोनोंकी कभी मुलाकात नहीं हुई। इसका मुझे अफसोस रहा और है।

आशा है, अफगानिस्तानमें आप आनन्दपूर्वक समय बिता रहे होंगे — अगर आज संसारके किसी भी हिस्सेमें जीवनको आनन्दपूर्ण कहा जा सकता हो तो।

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

१. अगस्त १९४१ से अफगानिस्तानमें ब्रिटिश मंत्री

३०३. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

सेवाग्राम
१४ जनवरी, १९४२

प्रिय अमृतलाल,

आशा है, मेरा बारडोलीसे भेजा पत्र तुम्हे मिल गया होगा।

आभा बहुत घबराई हुई है। उसको लिखा मेरा पत्र[1] पढना।

मेरा सुझाव यह है कि तुम उसे बनारस ले आओ और वहाँसे मै उसे अपने साथ कर लूँगा। उसे अपनी माँको वचन देना चाहिए कि वह उनका आशीर्वाद लिये बिना कनुसे शादी नही करेगी, लेकिन किसी और से तो वह शादी करेगी ही नही। आभा मेरी देख-रेखमे रहेगी। अगर वह चाहेगी तो मै उसे राजकोट भी भेज सकता हूँ।

लेकिन इन बातोकी चर्चा हम बनारसमे कर सकते है। कहने की जरूरत नही कि भाडा मै दूँगा।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०३३५) से। सौजन्य अमृतलाल चटर्जी

३०४. पत्र : मंजुला म० मेहताको

१५ जनवरी, १९४२

चि० मजुला,

तेरा पत्र मिला था। मगनका पत्र भी मिला था। क्या तू चम्पाके बगलवाले कमरेमे नही रह सकती? यदि तू उसमे नही रह सकती तो क्या उसी ब्लॉकमे रह सकती है या नही? यदि तू उस ब्लॉकमे भी न रह सके तो मेरे कमरेमे रहना। मेरे लिए तू भार नही होगी। और वहाँ तुझे एकान्त भी मिलेगा। से[2] मै परेशान नही होऊँगा। सक्षेपमे, तू जैसे कहेगी, मै वैसी व्यवस्था कर दूँगा।

मै १९ तारीखको काशी जा रहा हूँ और २४-२५ को लौटूँगा। उसके बाद तू आ जाना। यो मेरी अनुपस्थितिमे भी तू आ सकती है।

१. यह उपलब्ध नहीं है।

२. यह अश अस्पष्ट है।

रतिलाल राजकोटमें बहुत बुरी हालतमें है। मेरी अब भी यह सलाह है कि मगनको वहाँ जाना चाहिए। उसे वहाँ देखभाल करनेवाला कोई-न-कोई मिल ही जायेगा। यहाँ बैठे हुए मैं किसीको नहीं खोज सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजराती (सी० डब्ल्यू० १६१५) से, सौजन्य : मंजुला म० मेहता

३०५. पत्र : नारणदास गांधीको

सेवाग्राम
१५ जनवरी, १९४२

चि० नारणदास,

चम्पा कहती है कि रतिलालकी हालत बहुत खराब है। चम्पा यहाँ रह रही है। इसके साथ आत्मस्वरूपानन्दका पत्र भेज रहा हूँ। तुम इस मामलेमें क्या कोई सुझाव दे सकते हो या कुछ कर सकते हो?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

मैं १९ को काशी जा रहा हूँ और वहाँसे २४-२५ को वापस लौटूंगा।

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५९७ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी

३०६. भाषण : अ० भा० कां० कमेटीकी बैठकमें

वर्धा
१५ जनवरी, १९४२

सदर साहबने मुझको कुछ परेशानीमें डाल दिया है, क्योंकि मुझको उन्होंने इतना ऊँचा बना दिया है कि लोगोंको लगे कि मैं हवामें रहनेवाला आदमी हूँ। पर बात यह है कि मैं बिलकुल ऐसा नहीं हूँ। मैंने आज तक हवाई जहाज देखा नहीं — अलबत्ता आकाशमें उड़ते हुए पक्षियोंकी तरह देखा है — उसे छुआ तक नहीं, तो उसमें सवारीकी तो बात ही कहाँ रहती है। ऐसे आदमीके लिए यह कहना कि वह हवामें उड़ता है, भाषाका गलत इस्तेमाल है। मैं तो मिट्टीसे पैदा हुआ हूँ — मिट्टीका पुतला हूँ। मैं तो सामान्य मिट्टीसे बना एक साधारण मर्त्य जीव हूँ।

राजकीय साधन

अहिंसाकी बात आपके आगे यहाँ आनेवाली नही थी, मगर बारडोलीमें वर्किंग कमिटीके सामने इत्तेफाकसे यह मामला आ गया, उसकी चर्चामे हमने ७ दिन लगा दिये। नतीजा अच्छा ही हुआ, बुरा नही। इस बारेमे कुछ कहने से पहले मै चन्द दूसरी बाते कहना चाहता हूँ।

आप यह समझे कि आप है वैसा ही मै भी हूँ। अगर वैसा न होता तो २० साल आपके साथ जो बसर किए वह न कर सकता। मै कबूल करता हूँ कि अहिंसा मेरे लिए जिन्दगीका सौदा है। बिना इसके मेरी जिन्दगी चल नही सकती। लेकिन इस किस्मकी अहिंसा मैंने हिन्दुस्तानके सामने या किसीके सामने — सिवाय चर्चा या बातचीतके दरम्यान — नही रखी। इसलिए मै अर्ज करना चाहता हूँ कि आपके सामने जो अहिंसा मैंने रखी है वह बिलकुल पॉलिटिकल (राजकीय) चीज है। क्योकि आपके पॉलिटिक्समे दखल देनेवाली वह चीज है। अहिंसाका यह मेरा एक नया प्रयोग है। जहाँ तक मुझे मालूम है, इससे पहले (अहिंसाका) राजकीय क्षेत्रमे इस तरहसे किसीने उपयोग नही किया। अगर किया हो तो मुझे पता नही। परन्तु क्योकि यह एक नई चीज है इसलिए वह राजकीय [साधनके रूपमे] मिट नही जाती। पहले इसे मैंने दक्षिण आफ्रिकामे आजमाया था और वहाँ इसमे मुझे काफी कामयाबी हुई। वहाँसे यह चीज लेकर मै यहाँ आया। वहाँ सारा सवाल (राजकीय) था और एक राजकीय उपायके तौर पर ही इसका मैंने वहाँ इस्तेमाल भी किया था। सवाल यह था कि हिन्दुस्तानी लोग वहाँ रहे या खत्म हो जाये। वह ज्यादा हिस्सा तिजारत-पेशा — फेरी करनेवाले इत्यादि — लोग थे। राजकारण को वह कुछ बहुत समझते न थे। जीने-मरने का सवाल उनके आगे था। गोरे लोग चाहते न थे कि वे वहाँ रहे। सिर्फ दो चीजे उनके लिए थी। या तो वहाँसे चले जाये, या वहाँ जानवर बनकर रहे। इन्सानसे जो कुछ हो सके वह हमने सब किया। इस तरह करते-करते आखिर यह उपाय हमारे हाथमे आया — राजकीय आन्दोलनके तरीके मैंने काग्रेससे ही यहाँ सीखे थे। अर्जियाँ लिखना मुझे खूब आता था और इससे काफी रुपया भी मैंने वहाँ पैदा किया था। काग्रेसके लिए मसविदे तैयार करने का काम जैसे बहुत अरसे तक यहाँ मेरा रहा है वैसे वहाँ भी था। अनेक अर्जियाँ वहाँ उन्होने की, और जब दूसरे सब उपाय खत्म हो गये तो आखिर हारकर सत्याग्रह किया। तो यह हवामे उडने की नही, शुद्ध राजकारण की बात हुई। एक राजकीय चीजको हम जब चाहे हाथमे ले सकते है, जब चाहें फेक भी सकते है। हम इसे घटा सकते है, बढा भी सकते हैं। इसमे अदल-बदल भी कर सकते है। परन्तु अगर अनेक बार अनुभव करके हमने देख लिया है कि अमुक चीज खूब काम देनेवाली है तो उसको न छोडना राजनैतिक बुद्धिशीलता (पॉलिटिकल विजडम) है, और राजनैतिक विवेक (पॉलिटिकल इनसाइट)का भी तकाजा है कि उसे न छोडा जाये। जिस घोडेपर सवारी करके हम खूब देख चुके है, जिसने हमें इस मजिल तक पहुँचाया है, उस घोडेको छोडने की बात कोई आज मेरे आगे करता

है तो मैं एक राजकाजका काम करनेवाले आदमीकी हैसियत (पोजीशन)से कहता हूँ कि यह भूल है। मै आजतक कांग्रेसको अपने साथ रख सका हूँ तो वह एक राज-नीतिज्ञकी हैसियतसे ही। परन्तु अब जो रास्ता अहिंसाका बताता हूँ, चूँकि वह नया है, पहले उसका कभी इस्तेमाल नही हुआ, इसलिए उसके बारेमें यह कहकर कि वह तो मेरे धर्मकी बात है, उसको फेंक देना इन्साफ न होगा।

मौलाना साहबने अभी मेरे सम्बन्धमे मुहब्बत-भरी बातें कही है। परन्तु मै उन्हे स्वीकार नही कर सकता। अत्यन्त मुहब्बतसे भी कोई चीज फेंक दी जा सकती है न? ऊँचे चढाकर किसीको हम नीचे भी पटक सकते है न? कई लोग कहते है, मैं तो बनिया हूँ। ठीक है। मै क्या करूँ? बनिया पैदा हुआ, बनिया ही रहूँगा और बनिया रहते हुए ही मरूँगा। सौदागरी मेरा धधा है। आपके आगे और दुनियाके आगे मै एक सौदागर हूँ। मेरे पास एक बहुत कीमती चीज है। जैसा कि मौलाना साहबने कहा, मोतीके लिए, घासके लिए और आदमीके लिए—यो, हर चीजका तौल करने के लिए अलग-अलग तराजू चाहिये। मै अहिंसाका सौदागर हूँ। जिसे यह चीज लेनी हो, ले। मेरी निगाहमें आजादीके साथ इसका सौदा नही हो सकता। परन्तु आपने मेरी तरह इस चीजको नही अपनाया, क्योकि इसको तौलनेवाली तराजू आपके पास नही है।

आप यह न समझे कि मै ऊँची जगह पर बैठा यह बात आपसे कर रहा हूँ। सवाल तो सीधा है कि जिस चीजको इतने सालसे हम लिये बैठे है उसे आज छोडने को क्यो तैयार हुए है? बेशक अभी आपने इसे छोडा नही, शर्त पूरी होने पर छोड देंगे। इतना ही मै समझा हूँ। स्वराज मिलने के बाद आप क्या करेंगे यह मेरा सवाल नही। स्वराजके बाद खुद मुझे पता नही कि मै क्या करूँगा। परन्तु आज तो स्वराज लेने के लिए आप अहिंसाका सौदा करने को तैयार हो गये हैं। आपने इकरार तो यह किया था कि अहिंसाके तरीकेसे ही आप स्वराज लेगे। किसी दूसरे तरीकेसे नही। और आज आप इसे बदलने को तैयार हो गये है। मै आपको कहना चाहता हूँ कि यह सौदा करके भी आप सपूर्ण स्वराज लेनेवाले नही। क्योकि मेरे नजदीक सपूर्ण स्वराज तो वह चीज है जिसमें मिस्कीनसे-मिस्कीन यानी गरीबसे-गरीब भी यह महसूस करे कि वह आजाद है। आज जो हम स्वराजके दरवाजे तक पहुँच गये है वह अहिंसाके बलपर ही। अगर आज हम इसको छोडकर युद्धमें हिस्सा लेने लगते है तो कांग्रेसके पिछले २० सालके किये-कराये पर हम पानी फेर देते है। आपको मै यह नही समझा सका यह मेरी नाकामयाबी है।

यह 'वोट' लेने का अवसर नही।

परन्तु मेरी यह राय होते हुए भी मैं आपको आज यह समझाने आया हूँ कि आपको इस ठहरावको[1] कबूल कर लेना चाहिए और इस पर मत लेकर इस समिति को विभक्त नही करना चाहिए। अगर यह बात आपकी बुद्धि स्वीकार कर ले, तो आप इसे मानें, नही तो नही। आज ऐसा समय नही है कि हम अपने-अपने पक्षोको

१. कार्य-समिति द्वारा बारडोलीमें स्वीकृत प्रस्ताव। देखिए परिशिष्ट २।

समझाकर जुदा-जुदा मत दिलाये। हम आजादीकी लम्बी-चौडी बाते तो करते है, मगर आजादीका काम नही करते, तो आजादी कहाँसे मिले? मैने एक बार कहा था कि मेरे जेल जाने के बाद हर कोई खुद अपना सरदार बन जायेगा। आज भी आप खुद अपने सरदार बनकर विचार कर सकते है। सिर्फ इतना आप याद रखे कि स्वराजके लिए भी अहिंसाका सौदा न करनेवाला आदमी अहिंसाकी दृष्टिसे आज यह सलाह आपको दे रहा है।

इसके साथ-साथ मै यह भी कह देना चाहता हूँ कि पूनाके ठहराव[1] के बारेमे जो मैने लिखा था उसमे से एक शब्द भी मै वापस नही खीचना चाहता और उसके लिए मुझे जरा भी पश्चात्ताप नही। परन्तु बारडोलीका ठहराव, जो पूनाके ठहरावकी नकल है, तो भी उसमे अलग चीज है। पूनाके ठहरावमे अहिंसाका अर्थ करने की बात थी। बारडोलीके ठहरावमे वह चीज नही। पूनाका ठहराव मेरी चूकका परिणाम था और उसका मैने प्रायश्चित्त भी किया है। परन्तु बारडोलीका ठहराव तो बहुत दिनकी देख-भालका नतीजा है। बारडोली ठहराव होने के बाद एक दफा मुझे लगा कि अखिल भारत काग्रेस कमिटीमे मत लेकर देखूँ कि कितने लोगोका मत मेरे साथ है। परन्तु इसके बाद जैसे एक के बाद एक बात बनती गई और देशके वायुमण्डल और दुनियाकी हमारी काग्रेसके बारेमे टीकाको मैने देखा तो मै इस नतीजे पर पहुँचा कि मेरी अहिंसा मुझे यह सबक सिखाती है कि अगर अखिल भारत काग्रेस कमिटीको मै अपने साथ ले सकूँ तो उसे कहूँ कि वह दिलोदिमागके साथ इस ठहरावका समर्थन करे। जो मेरी राय रखते है, यानी सपूर्ण रूपमे अहिंसा को मानते है उन्हे मेरी यह सलाह होगी कि वे निष्पक्ष (न्यूट्रल) रहे, किसी तरफ भी अपना मत न दे। परन्तु उनके निष्पक्ष (न्यूट्रल) रहने का अगर यह नतीजा हो कि जो लोग इस ठहरावको गिराना चाहते है वे कामयाब हो जाये तो उन्हे मत देकर इस ठहरावका समर्थन करना चाहिए—इसे गिरने नही देना चाहिए।

मुझे इसमे शक नही कि कार्यवाहक कमिटी यह ठहराव करके एक कदम पीछे हटी है। राजाजी शायद यह बात कबूल न करे, क्योकि वह मानते है कि मै भूल कर रहा हूँ। जवाहरलाल भी शायद कहेगे कि इसमे पीछे हटने की कोई बात नही। परन्तु मेरा यह मत है कि हम पीछे हटे है तो सही, मगर आगे बढने के लिए। यो कभी-कभी हटना भी पडता है। हमे आगे बढने के लिए एक कदम पीछे हटने का हक है। इसलिए आज एक ऐसा आदमी जो आपमे से निकल गया है, जो सत्याग्रही होने का दावा करता है, जिसके जीवनमे दाँव-पेचको कोई स्थान नही, आपसे आकर कहता है कि यह ठहराव कितना ही अपूर्ण क्यो न हो, आपको इसे स्वीकार कर लेना चाहिए, क्योकि काग्रेसकी मनोदशाको यह ठीक-ठीक प्रगट करता है। अहिंसाके पक्षवाले लोगोका आज यहाँ बहुमत हो तो भी मुझे लगता है कि उन्हे यह ठहराव पास होने देना चाहिए। काग्रेस खुद आज अपना मन नही जानती परन्तु मै जानता हूँ कि उसकी मनोदशा इस प्रस्तावमें प्रतिबिंबित है।

१. देखिए खण्ड ७२।

कांग्रेस एक बडी हैसियत रखती है। इस ठहरावकी वजहसे वह हैसियत और भी बढ गई है। सारा जगत् आज हमारी तरफ देख रहा है, सारे हिन्दुस्तानकी नजर हम पर है। बहुत-से लोगोको अभीसे कँपकँपी-सी लग गई है कि गांधी कुछ मन्त्र पढकर कांग्रेसको फिर डँवाडोल कर देगा, जिससे वह राजकीय संस्था मिटकर एक धार्मिक संस्था बन जायेगी। मै यह नही मानता। आखिर पिछले बीस सालमें से जबसे हमने अहिंसाको राजकीय साधनके तौर पर स्वीकार किया है, हमने राजकीय काम ही किया है, कोई हजामत नही की। कोई चाहे सो माने। परन्तु जब सौदेका वक्त आयेगा तो सबको पता लग जायेगा कि देहलीमें जो कांग्रेस गांधीके वक्त थी, वही आज भी है। सिर्फ भाषामें कुछ फर्क है, मगर हठ वही है। उसको कोई फुसला न सकेगा। आखिर तक वही चीज उसके मुँहसे निकलनेवाली है कि यह नही, यह नही। इस तरह करते-करते अगर आपको मुँहमाँगी चीज मिल जाये और आप सौदा कर ले तो मेरी आँखसे एक बूँद भी पानी नही गिरेगा। मेरे तीनो साप्ताहिक उस वक्त चलते होंगे तो आप देखेंगे, मै यही कहूँगा कि मै सौदागर तो बना मगर अहिंसाका सौदा करना मुझे आया नही।

इसलिए आजसे हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तानके बाहर हमारे विरोधी भले जो चाहें सो मानें, वह भले खुश हो, परन्तु मै किसीको यह कहने का मौका देना नही चाहता कि गांधी तो एक दीवाना था ही। उसके नेतृत्वके लिए कांग्रेस भी दीवानी बनकर खामखाह उसके पीछे मरती फिरती है, क्योकि उसे छोडने की उसमें ताकत नही। किसीको उसकी इन्सानियतसे गिराकर मै नेतृत्व नही चाहता। मेरा नेतृत्व खोने के डरमे मुझसे सौदा करने के लिए अगर कांग्रेस अपने ठहरावको बदल दे और मै वह सौदा होने दूँ, तो इसमें कांग्रेसका और मेरा पतन है। इस तरह किसीको गिराकर मैंने कभी अपना काम नही किया। वह तो धोखेबाजी होगी। पचास वर्ष की देश-सेवाके बाद क्या मै कांग्रेसको धोखा देने बैठूँगा?

मैंने तो इस डरकी जड ही निकाल दी है। मैंने मौलाना साहबसे कहा कि आपने मुझे रिहाई देकर गँवाया नही। आप मुझे गँवायेंगे तो तब जब मै बेवफा हो जाऊँ या इन्सान मिटकर हैवान बन जाऊँ या हवाई बन जाऊँ। सात-आठ बरस[1] पहले जब बम्बईमें मै कांग्रेससे अलग हुआ था तो आपने देखा होगा कि वह कांग्रेस की ज्यादासे-ज्यादा खिदमत करने के लिए ही था। अब भी अगर मै कांग्रेससे निकलता हूँ तो उसीका काम ज्यादा अच्छी तरह करने के लिए। मेरे कुछ साथी सरदार, और राजेन्द्रबाबू-जैसे इस ठहरावसे दुःखी है। तो भी मै उन्हे कहता हूँ कि इस तरह आप कांग्रेससे अलग नही हो सकते। जब सचमुच निकलने का समय आवेगा, उस वक्त भी आपकी आजवाली ही राय रही तो तब आप निकल सकते है। उससे कांग्रेसका काम बद होनेवाला नही। मेरा यह मत है कि कांग्रेसके लिए कोई आदमी चाहे वह कितना भी बडा क्यो न हो, अनिवार्य नही। कहाँ है आज दादाभाई और लोकमान्य? कहाँ है सर फीरोजशाह मेहताकी आवाज? परन्तु उनके जाने से कांग्रेस

१. अक्तूबर १९३४ में, देखिए खण्ड ५९, पृ० २८७।

मिट थोडे ही गई है? जो इमारत काग्रेसकी उन्होने खडी की थी उसको उनके बाद जो आये है उन्होने आगे ही बढाया है, दो-चार ईंटे ऊपर ही रखी है। इसलिए अगर मै मर भी जाऊँ, सरदार, राजेन्द्रबाबू सब बाहर निकल जाये, तो भी काग्रेस जिंदा रहेगी और उसे जो सौदा करना है, करेगी।

मै आपको यह समझाना चाहता हूँ कि आप इस प्रस्ताव पर अखिल भारत काग्रेस समितिमे 'वोट' लेकर उसमे फूट न पैदा करे। इसका एक कारण यह है कि मै दुनियामे काग्रेसकी हँसी होने देना नही चाहता। हम कोरी तख्ती पर नही लिख रहे है। हमारे नेताओने एक फैसला किया है। उसका असर सारी दुनिया पर हुआ है। इस बातकी जरा भी परवाह न करके उस फैसलेको बदल देना अक्लमन्दी न होगी। इससे दुनियामे काग्रेसकी हँसी होगी। दुनिया यह आशा रखती है और उसे यह आशा रखने का हक है कि जो फैसला कार्यवाहक मडलने किया था उसे अखिल भारत काग्रेस कमिटी बहाल रखेगी। उसको बदलने के लिये आज हमारे पास कारण नही है। जो लोग मुझसे आगे बढकर अहिंसाको कायम रखने के लिए एक नया प्रस्ताव लाना चाहते है, उनसे मै कहूँगा कि एक तरहसे यह आपको शोभा देता है। अगर आप अहिंसाको घोट-घोटकर भी पी गये है, तो आपके पीछे-पीछे मै चलूँगा और मौलाना साहब भी। परन्तु मै देखता हूँ कि वह बात तो आपमे आज नही है। मेरा नेतृत्व कायम रखने के लिए अगर आप कोई दूसरा ठहराव लावें तो वह न सिर्फ एक बडी बेवकूफीकी बात होगी, बल्कि वह हिंसा भी होगी। इस-लिए यह ठहराव चाहे कितना ही अपूर्ण क्यो न हो, आपको इसे कबूल कर लेना चाहिए।

कोई यह न समझे कि यह हमारे बीचकी फूटका सूचक है। जैसा कि मौलाना साहबने कहा है, एक कुटुबके आदमियोकी तरह इकट्ठे होकर कार्यवाहक मण्डलने यह फैसला किया है। मुझे किसीने कहा कि जवाहरलाल और मेरे बीचमे अनबन हो गई है। यह बिलकुल गलत है। जबसे जवाहरलाल मेरे पजेमे आकर फँसा है, तबसे वह मुझसे झगडता ही रहा है। परन्तु जैसे पानीमे कोई चाहे कितनी ही लकडी क्यो न पीटे, वह पानीको अलग-अलग नही कर सकता, वैसे हमे भी कोई अलग नही कर सकता। मै हमेशासे कहता आया हूँ कि अगर मेरा वारिस कोई है, तो वह राजाजी नही, सरदार वल्लभभाई नही, जवाहरलाल है। वह जो जी मे आता है, बोल देता है, मगर काम मेरा ही करता है। मेरे मरने के बाद वह मेरा सब काम करेगा। तब मेरी भाषा भी वह बोलेगा। आखिर हिन्दुस्तानमे ही पैदा हुआ है न। हर रोज वह कुछ सीखता है। मै हूँ तो मुझसे लड लेता है। परन्तु मै चला जाऊँगा तो लडेगा किससे? और लडेगा तो उसे बरदाश्त कौन करेगा? आखिर मेरी भाषा भी उसे इस्तेमाल करते ही बनेगी। ऐसा न भी हो तो भी कमसे-कम मै तो यही श्रद्धा लेकर मरूँगा।

इस ठहरावको कायम रखने के लिए एक दूसरा कारण भी है। वह यह कि इत्तेफाकसे यह ठहराव काग्रेसका आईना बन गया है। हर काग्रेसवादी इसमे अपना

चेहरा देख सकता है। मै अपना देख मकता हूँ, राजेन्द्रवावू, वादशाह खाँ और सरदार—सव अपना-अपना चेहरा इसमें देख सकते हैं। सारी जिन्दगी सरकारको गाली देनेवाला भी इसमें अपना चेहरा देख सकता है और सरकारके साथ फैसलेकी इच्छा करनेवाला भी।

यह ठहराव किस तरहसे वना यह वताने मे मौलाना साहवने भूल की। जवाहरलालने जो ठहराव तैयार किया था वह यह नही है। इसमें काफी काट-छाँट हुई है। राजाजी की कलम भी इसपर चल चुकी है। जवाहरलालके वारेमें वैसे ही लोगोका यह खयाल हो गया है कि वह अपनी आनको कभी छोडता ही नही। कमसे-कम आज उसको यह प्रमाणपत्र नही मिल सकता। वह काफी झगड लेता है, मगर काम के वक्त काफी कम्प्रोमाइज (समझौता) भी वह कर सकता है। सवको साथ लेकर यह ठहराव तैयार किया गया है। कार्यवाहक मडलके सव सभ्योके विचार इसमे प्रतिविंवित है। खिचडीकी तरह इसमें दाल भी है, चावल भी है, नमक, मिर्च और मसाला भी है। कार्यवाहक मडलमें जो मतभेद था वह मौलाना साहवने आपके आगे रखा। हमारे वीच कई पक्ष हैं। एक पक्षका प्रतिनिधि जवाहरलाल है। उसका युद्ध-सम्वन्धी विरोध मेरे जितना ही कडा है, हालांकि उसका कारण मुझसे जुदा है। वह यह वात कवूल नही करेगा कि यह ठहराव करके उसने अपनी वातको कुछ भी छोडा है। परन्तु जवाहरलाल खुद यह कवूल करेगा कि राजाजीवाला पक्ष इसमें दूसरी चीज देख सकता है। मूल प्रस्तावमें राजाजी-जैसे विचार रखनेवालो के लिए काम करने की जगह नही थी। अगर सरकार काग्रेसकी शर्त मान ले तो राजाजी युद्धमे हिस्सा लेना चाहेंगे। इसके वास्ते उन्होने अव अपने लिए एक छोटा-सा सूराख वना लिया है। इस सूराखमे से राजाजी जवाहरको अपनी तरफ खीचने की कोशिश करेंगे और जवाहर राजाजी को अपनी तरफ खीचने की। इस प्रस्तावके वाद सरकार या काग्रेसके टीकाकारोंको यह कहने का मौका नही रहता कि काग्रेसमें अहिंसाके दार्शनिक सिद्धान्तके कारण हमने समझौतेका दरवाजा वद कर दिया है। अव काग्रेसकी वाजिव शर्तोंको स्वीकार करके उसे युद्धमे शरीक करने के लिए राजी करने की सारी जिम्मेदारी सरकारके कधोपर आ जाती है। यह वात तो ठीक है कि इससे हमें किसी वडे परिणामकी आशा नहीं रखनी चाहिए। परन्तु इस प्रस्तावके फलस्वरूप दुनियामे अव कोई काग्रेसपर यह आक्षेप नही कर सकता कि वह सिद्धान्तवादियोकी एक सस्था है। आज काग्रेसमें एक ऐसा पक्ष भी है, जो अगर सरकार कोई ऐसा समझौता करने को तैयार हो कि जिससे देशके स्वाभिमानकी पूरी-पूरी रक्षा हो सके, तो उसका खुशीसे स्वागत करे। इसलिए यह जरूरी था कि ऐसे पक्षके लिए भी काग्रेस जगह कर दे। आखिरमें कौन किसको खीच लेगा यह देखने की वात है। कोई भी किसीको खीच ले, इसमें आपको क्या आपत्ति हो सकती है? नही होनी चाहिए।

इस तरह जो भी इसमे सव विचारके लोगोंके लिए गुजाइश रखी गई है, तो भी इसमें किसी तरहकी धोखेवाजी नही। जुदा-जुदा प्रकारकी वुद्धि रखनेवाले एक-दूसरेके दिमाग पर असर डाल सके इसका सुभीता देना इस प्रस्तावका हेतु है। इस

दृष्टिसे मै इस ठहरावको देखता हूँ। जवाहरलालके लिए इसमे थोडी जगह है, तो थोडी-सी राजाजी के लिए भी, वैसे ही राजेन्द्रबाबूके लिए और मेरे जैसेके लिए भी।

राजेन्द्रबाबूके लिए इस ठहरावमे जगह कैसे है? भविष्यके बारेमें कुछ कल्पना आज हमने कर ली है। वह उनको चुभती है। परन्तु भविष्यमे हम क्या करेगे इसका फैसला आज हम थोडे ही करके बैठ गये है? जब हिन्दुस्तान आजाद होगा तब इस ठहरावके अनुसार हम अपनी हिफाजत शस्त्रसे कर सकते है। वैसे चीन, रूसकी मदद भी करनी हो तो वैसा करने की छूट यह ठहराव हमे देता है। हमारी अग्रेजोसे कोई अदावत नही। न ही जर्मनी, इटली या जापानसे, तो चीन और रूससे भी कैसे हो सकती है? रूसने आज एक बडी चीज पैदा कर ली है। परन्तु अपनी आजादी को इस तरह कहाँ तक कायम रख सकेंगे इसकी मुझे खबर नही। अनुभव हमे बताता है कि हथियारसे जो बडा काम हम कर लेते हैं यह टिकता नही। चीन तो हमारा ही साथी है। वह एक बडा मुल्क है। उसके लिए मेरे दिलमे बडा गर्व है। मेरी तो यही इच्छा हो सकती है कि ये सब देश आपसमे सुलह-सफाईसे रहें। लेकिन अगर चीनको अपनी रक्षा हथियारसे करनी है तो उसे आखिरमे जापान-जैसा ही बन जाना होगा। जो-जो बाते हिटलर या मुसोलिनी करता है, वे सब उसे भी करनी होगी। मुझे आशा है कि जब सचमुच हिन्दुस्तानकी हिफाजत करने का मौका आवेगा तो उसके लिए वह अहिसा (नान-वायलेस)का ही सहारा लेगा और लेकर विश्व-शान्ति का सदेश सारे जगको पहुँचायेगा। तब जवाहर भी यही काम करेगा—हथियार उठाने की बात नही। इसलिए राजेन्द्रबाबू भी आज इस प्रस्तावमे शरीक हो सकते हैं। यह सब परिणाम हमारी राजकीय अहिंसामे से निकल सकता है। राजकीय अहिंसा छोटी-मोटी चीज नही।

आपको यह याद रखना चाहिए कि आज जवाहरलाल, राजाजी, राजेन्द्रबाबू, और मौलाना साहबके बीच अहिंसा ही सामान्य वस्तु है। इस बात पर हम सब एकमत है कि आज हमे सिर्फ अहिंसाका ही इस्तेमाल करना है। वक्त आवेगा तब उसका भी विचार कर लेंगे। इसलिए इस ठहरावमे अपनेको भी पाता हूँ। आज राजेन्द्रबाबू काग्रेसके प्लेटफार्मसे अहिंसाका चाहे जितना, पेट-भरकर, प्रचार कर सकते है। इसके लिए यह ठहराव उनको पूरी छूट देता है। इसके अलावा इस ठहरावमे और दूसरे ठहरावमे लोगोको जो रचनात्मक कार्यक्रमके[1] बारेमे सूचना की गई है वह अहिंसाको बढानेवाली चीज है। तेरह प्रकारका रचनात्मक कार्यक्रम जो मैंने बनाया है यह सब लगभग उसमे आ जाता है। सयुक्त प्रान्तीय काग्रेस समितिने अभी एक ठहराव किया है, जो तारीफके काबिल है। अहिसा शब्द भी उसमे आता है। जो चीजे मैं चाहता हूँ वे सब उसमे आ जाती हैं।

यह ठहराव करके हमने अपना दिल साफ कर लिया है। जब हम सब एक ही जहाजमे सवार है, तो फिर आप नया ठहराव किसलिए करना चाहते है? अहिंसा कोई ऐसी चीज नही कि यान्त्रिक साधनो द्वारा उसकी स्थापना की जा सके। बीस

१. देखिए परिशिष्ट ३।

साल तक मैंने काग्रेसकी सेवा की है, तो क्या वह किसीके 'वोट' से? जब 'वोट' लेने का वक्त आया, तब तो उलटा मै काग्रेससे निकल गया। छोटी-छोटी चीजोमे 'वोट' से काम चल सकता है, मगर बडी-बडी बातोमें 'वोट' से काम ले, तो काम बिगडता है। लश्करी सस्थाकी तरह काग्रेस भी एक अहिंसक सस्था है। कोशिश तो हमारी यही रहेगी कि आखिर तक वह अहिंसक रहे। अनुभव लेते-लेते अगर हमे अपनी गलती मालूम होने लगे तो मै थोडे ही रोकनेवाला हूँ?

काग्रेसकी ताकतका आधार तो उन लोगो पर है जो काग्रेसके बाहर पडे है, मगर वक्त आने पर काग्रेसकी मदद पर आ जाते हैं। वे न नाम चाहते है, न उनकी अपनी कोई गरज ही है। हमे उनके सच्चे प्रतिनिधि बनना है। आपको एक मजबूत, ठोस व नियत्रित सस्था बन जाना चाहिए।

पिछले १५ महीनोमे काग्रेसवादियोने एक हद तक 'डिसिप्लिन' (अनुशासन)का परिचय दिया है। कही-कही इसकी भी कमी थी, परन्तु उसको मैने बरदाश्त किया, क्योकि मुझे काग्रेसका जहाज चलाना था। परन्तु अब इसकी मात्रा हमे बढानी होगी। काग्रेसके लिए एकदिल होकर चलने का समय आ गया है। काग्रेसका अतिम साधन आज अहिंसा ही है। जब तक इसमें तब्दीली नही होती, कोई काग्रेसवादी खुले या छुपे तौर पर हिंसाका प्रचार नही कर सकता। करेगा तो बेवफा बनेगा। दिलको तो कौन पहचान सकता है? परन्तु एकदिल होकर जो हमारे साथ चलने को तैयार हो उसको हमे जगह देनी चाहिए। सचाई पर कायम रहकर चलनेवालो के लिए इस ठहरावमें स्थान है।

एक आखिरी बात। कई लोग पूछते है कि आखिर काग्रेस ने किया क्या? इस प्रस्तावका कार्यात्मक भाग कौन-सा है? यह चीज इस ठहरावमे नही आ सकती थी। परन्तु इसके लिए अलग सूचना काग्रेस निकालेगी। इस प्रस्तावका हेतु सिर्फ कुछ बातो का स्पष्टीकरण करना ही था। इस प्रस्तावका सकेत काग्रेसके लिए उतना नही, जितना दुनियाके लिए है। हुकूमतकी तरफ भी इसका सकेत नही है।

कोई काग्रेसवादी यह न समझे कि इस प्रस्तावके अनुसार सत्याग्रह स्थगित हो जाने के बाद उसके लिए कुछ करने को नही रहा। निरुत्साह होकर या ढीले पडकर बैठ जाने का यह समय नही है। और न ही जवाहरलाल या राजाजी आपको यो बैठने देनेवाले है। मै तो नही ही बैठने देने का। अगर किसीको यह शिकायत हो कि यह तो शुष्क और नीरस कार्यक्रम है, तो उसे यह समझना चाहिए कि अगर कोई अपनी जिम्मेदारी या जोखिम पर सामुदायिक या व्यक्तिगत सत्याग्रह करना चाहे तो कार्य-वाहक समितिका यह ठहराव उसे रोकता नही। अगर वह सफल होगा तो सब उसकी प्रशसा ही करेगे और मै तो उसकी कदमबोसी करूँगा। अहिंसामें जो जितना आगे बढेगा, काग्रेसको उसका उतना ही फख्र होगा। परन्तु इस कामके लिए काग्रेस की मुहरकी जरूरत नही। इसके साथ-साथ इतनी चेतावनी देना मै जरूरी समझता हूँ कि अगर कोई ऐसे ही जोशमें आकर सत्याग्रहमें कूद पडेगा तो वह मुँहकी खायेगा। जल्दबाजी और अविचारसे अपना और मुल्क दोनोका काम बिगाडेगा। सत्याग्रह-शास्त्रके आचार्य की हैसियतसे मै सबको यह बताना चाहता हूँ कि जो लोग रचनात्मक कार्य-

क्रम को नीरस या शुष्क मानते हैं, वे अहिंसा क्या चीज है और वह किस तरह काम करती है उसे नही समझते। यह तो हुई बात सिविल नाफरमानी की।

अब रही बात पार्लियामेन्टरी प्रवृत्तिकी। आज पार्लियामेन्टरी प्रवृत्तिको भी देशमें अवकाश नही। [फिर भी] जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, पार्लियामेन्टरी कार्यकी मनोवृत्ति आज देशमे आ गई है। मैं इसको नाबूद नही कर सका। परन्तु आज कांग्रेसके कार्य-क्रममें इसे स्थान नही है, क्योकि युद्धमे हिस्सा लिये बगैर कांग्रेस इसे नही चला सकती। मैं यह हमेशा कहता आया हूँ कि पार्लियामेन्टरी प्रवृत्ति देशके कार्यक्रममे कमसे-कम महत्वकी चीज है। धारासभाके सदस्य देशके शासक नही, परन्तु देशके प्रतिनिधि और इसलिए सेवक है। इसलिए जितना कम आधार हम धारासभा पर रखेंगे उतना ही हमारे लिए अच्छा होगा। सब अधिकारोका उद्गमस्थान जनता ही है। और यह बल उन्हे या तो शस्त्रबलसे या अहिंसात्मक असहयोगसे यानी सिविल नाफरमानीसे ही मिलता है। परन्तु असहकारकी शक्ति सतत, ठोस, रचनात्मक कार्यक्रममें से ही आती है। अहिंसात्मक बल विधायक प्रवृत्तिमें से ही पैदा होता है। विनाशक प्रवृत्तिमें से नही। इसलिए आज कांग्रेसके आगे सिर्फ एक ही काम रचनात्मक कार्यक्रमका है। और इसके बारेमें सब पक्षोका एक ही मत है।

रचनात्मक कार्यक्रमके बारेमे जो सूचनाएँ कांग्रेसने निकाली है, वे ही हमारी आजकी तैयारीका कार्यात्मक भाग है। अगर हम इसको पूरी तरह कर ले तो सिविल नाफरमानी या धारासभाकी प्रवृत्ति की हमे कुछ जरूरत नही रहती। जहाँतक सिविल नाफरमानीका ताल्लुक है, कांग्रेसने सत्याग्रहके आचार्यके नाते उसे मेरे सिपुर्द कर दिया है। और यह बात ठीक भी है कि जबतक मैं जिन्दा हूँ, और मेरी बुद्धि ठिकाने है, वह मेरे ही पास रहे। मैंने उसे आज लगभग खामोश ही कर दिया है। परन्तु सत्याग्रहके स्थगित करने का इस ठहरावके साथ कुछ सम्बन्ध नही। अगर सरकार 'हरिजन' चलाने मे रुकावट न डालेगी तो सत्याग्रह करने की जरूरत भी न रहेगी। क्योंकि ये तीनो साप्ताहिक सब तरहकी लडाईके विरोधमें प्रचार करेंगे ही और आज इस कामके लिए इतना काफी है। 'हरिजन' शान्ति और अमनका सदेश मुल्क के कोने-कोने मे पहुँचाने की कोशिश करेगा। परन्तु इस सरकारने यह न करने दिया तो फिर अपने उसूलको जिन्दा रखने के लिए प्रतीकके तौर पर सत्याग्रह करने की जरूरत पडेगी। मुझे एक-एक कार्यकर्ता रचनात्मक कार्यक्रमके लिए चाहिए।

करोडोकी खिदमतका जो काम हमे करना है, वह आज हमें जेलमे जाने की इजाजत नही देता। हम नही चाहते कि देशमे चोर और डाकू लूटमार मचाये। अगर क्रांति पैदा करनी हो तो भी लूटमारकी रोकका बन्दोबस्त तो करना ही होगा। नही तो कांग्रेस मिट जायेगी। इस तरह भुखमरी से पीडितोको पूरा अन्न-वस्त्र पहुँचाने का काम हमारे जिम्मे आता है। परन्तु अगर मेरे हाथसे कोई कलम भी छीन ले तो फिर शायद मैं अकेला सत्याग्रह करने को मजबूर हो जाऊँ। मैंने अभी कोई आखिरी निश्चय नही किया है। समय स्वय मुझे मेरा रास्ता दिखा देगा।[1]

१. आगेका अनुच्छेद **हरिजन**में छपी संक्षिप्त अंग्रेजी रिपोर्टसे लिया गया है, जो महादेव देसाईने "डोंट डिवाइड द हाउस" शीर्षकसे लिखी थी।

सत्याग्रहके मुल्तवी कर दिये जाने का सम्बन्ध सिर्फ देशकी मौजूदा हालतोंसे है, और जिनके विचार मेरे विचारोंके समान है, ऐसे हर व्यक्तिसे मैं यह चाहता हूँ कि वह जेल जाकर 'कुरान' तथा 'गीता' पढने और आरामकी जिन्दगी बिताने के बजाय बाहर रहकर काम करे। मैं उन्हे आरामकी जिन्दगी नही बिताने दूंगा। जवाहर-लाल हजारो लोगोंसे उनकी डायरियाँ मांगेगा। वह चैनमे नही सोने जा रहा है। इसलिए अगर आप देशके लिए सच्चा सन्देश लेकर जाना चाहते है तो इस प्रस्तावकी आलोचना न करे। किसीको भी अपनी क्षमता-भर पूरी सेवा करने की सामर्थ्य और अवसर से वंचित नही किया गया है। सच तो यह है कि इस प्रस्तावके द्वारा उसे अपना पूर्णतम विकास करने का, पूरी ऊँचाई तक उठने का अवसर दिया गया है। सविनय अवज्ञा मेरे नियत्रणमें है और उसके मुल्तवी किये जाने का इस बातसे कोई सरोकार नहीं है कि मैं किसी पद पर नही रह गया हूँ। आपमे से हरएकको अपना पूरा जौहर दिखाना है। अगर आप सब रचनात्मक कार्यक्रमको क्रियान्वित करने में अपनी पूरी शक्ति लगा देंगे तो छ महीनेमें ही हम अपने सामने एक नये भारतको उपस्थित पायेंगे।

हरिजन-सेवक, २५-१-१९४२, तथा हरिजन, २५-१-१९४२

३०७. पत्र : सुलताना रजियाको

१६ जनवरी, १९४२

प्रिय सुलताना,

अहिंसाके बारेमें तुम्हारी बात बिल्कुल सही है।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८६१) से

३०८. पत्र : डी० डी० साठयेको

१६ जनवरी, १९४२

प्रिय श्री साठये,

गांधीजी को आपका पत्र बारडोलीमें मिला था और अब पोस्ट कार्ड मिला है। वे इतने अधिक व्यस्त रहे कि उनका निजी पत्र-व्यवहार बहुत पिछड़ गया है। उनकी इच्छा है कि मैं आपको यह बताऊँ कि आपका नाम निस्सन्देह उनकी सत्याग्रहियोंकी सूचीमें दर्ज है, लेकिन फिलहाल कोई सत्याग्रह नहीं किया जा रहा है। अभी तो हर व्यक्तिके लिए रचनात्मक कार्यक्रम है।

हृदयसे आपकी,
अमृतकौर

श्री डी० डी० साठये
१२७ गिरगाँव रोड, बम्बई-४

मूल अंग्रेजीसे डी० डी० साठये पेपर्स। सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३०९. पत्र : अब्दुल गफ्फार खाँको

सेवाग्राम
१७ जनवरी, १९४२

प्रिय खाँ साहब,

ये रही वे दो प्रतिलिपियाँ।[1] आप इन्हें मौलाना साहब और जवाहरलालको दिखाइए। आप सरकारके नाम पत्र तभी भेजिए जब आपको ऐसा लगे कि आप जेलसे बाहर रहकर लोगोंके बीच काम करते हुए हमारे हेतुकी जितनी सेवा करेंगे उससे कहीं अधिक जेलमें रहकर कर सकेंगे। क्योंकि आप जो अनुमति चाहते हैं वह आपको नहीं मिलनेवाली है।

आप अपना त्यागपत्र तभी भेजें जब आपके साथी कार्यकर्त्ता और डॉ० खान साहब सहमत हों।[2]

आपका,
बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. ये उपलब्ध नहीं हैं।
२ देखिए पृ० २५७ भी।

३१०. भाषण : कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंके समक्ष[1]

वर्धागंज
१७ जनवरी, १९४२

गांधीजी ने समझाया कि साम्प्रदायिक एकता फिरसे कायम करने और अस्पृश्यताको मिटानेकी दृष्टिसे सेवाग्राम कितनी प्रगति कर पाया है। उन्होंने आग्रहपूर्वक कहा कि साम्प्रदायिक एकता और अस्पृश्यता-निवारण ऐसी फलप्रद वस्तुएँ हैं कि स्वतन्त्रता मिले या न मिले, इन्हें तो सिद्ध करना ही चाहिए। उन्होंने यह भी बताया कि खादी और बुनियादी शिक्षाके लिए कितना काम किया गया है।

उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम एकता, अस्पृश्यता-निवारण, चरखा और स्वयंसेवक दलके संगठन पर विशेष जोर देते हुए रचनात्मक कार्यक्रमके विभिन्न पहलुओंकी चर्चा की।

महात्मा गांधीने जोर देकर कहा कि कांग्रेस और मुस्लिम लीगके बीच कोई समझौता हो जाने से ही समस्या नहीं सुलझ जायेगी। ऐसा समझौता तो केवल संसदीय कार्यक्रम लागू करने की दृष्टिसे ही कारगर हो सकता है। उन्होंने लखनऊके कांग्रेस-लीग समझौतेका[2] उल्लेख करते हुए कहा कि सच्ची हिन्दू-मुस्लिम एकता तो केवल रचनात्मक कार्य करके ही स्थापित की जा सकती है।

एक प्रश्नके उत्तरमें गांधीजी ने कहा कि स्वयंसेवक संस्थाओंका संगठन अवश्य किया जाना चाहिए, लेकिन अहिंसाके आधारपर। स्वयंसेवकोंको जनताकी हर तरहकी सहायता करनी चाहिए। सम्भव है, इन संस्थाओंको काम न करने दिया जाये। ऐसी स्थितिमें अगर काम अनिवार्य हो तो उन्हें अपनी जानको खतरेमें डालकर भी अपना काम करते रहना चाहिए।[3]

कांग्रेसके हर चवन्निया सदस्यको अब जनताकी सेवाके बलपर खुदाई खिदमतगार बन जाना चाहिए।

अन्तमें गांधीजी ने उन सबसे अनुरोध किया कि वे कार्य-समितिके निर्देशोंका सावधानीसे पालन करें, क्योंकि स्वतन्त्रता-संग्राममें उन्हें इसीसे शक्ति प्राप्त होगी।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-१-१९४२

१. गांधीजी ने यह भाषण प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोंके प्रतिनिधियों और कार्य-समितिके सदस्योंके समक्ष दिया था।

२. १९१६ का समझौता, देखिए खण्ड १४, परिशिष्ट २।

३. दूसरे प्रश्न और गांधीजी के उत्तरके लिए देखिए "रचनात्मक कार्यक्रम और सरकार", पृ० २६१-६२।

३११. बातचीत: कुछ कार्यकर्त्ताओंसे[1]

[१८ जनवरी, १९४२ के पूर्व]

भावी सत्याग्रहीने[2] कहा कि वह अहिंसावादी है। गांधीजी ने पूछा:

तुम कितना कातते हो—५ गज या ५० गज?

५० गजसे अधिक तो कभी नहीं, अलबत्ता कभी-कभी ५ गजसे भी कम कातता हूँ।

तुम हर दिन कातते हो या हफ्ते में एक बार या महीनेमें?

मैं महीनेमें सौ-पचास गजसे अधिक नहीं कातता।

क्या अपने लिए पूनियाँ खुद बनाते हो?

नहीं महात्माजी।

फिर वे तुम्हें कहाँसे मिलती हैं? क्या डाकसे मँगवाते हो?

नहीं, मैं खादी भण्डारसे लेता हूँ और जब खादी भण्डारमें नहीं मिलतीं तो जहाँ मिलती हैं, ऐसी जगहोंसे आनेवाले मित्रोंके जरिये प्राप्त करता हूँ।

अपने चरखेकी माल तुम खुद बनाते हो या बाजारसे धागा खरीदते हो?

अब उस भावी सत्याग्रहीका मित्र बोल पड़ा: "महात्माजी, यह अहिंसावादी है और मैं समझता था कि यह अनिवार्य योग्यता है। अब आप जिस कसौटीपर उसे परख रहे हैं उसपर तो हम सब विफल साबित होंगे।"

तो मेरा कहना यह है कि तुम लोग आवश्यक योग्यता प्राप्त किये बिना सत्याग्रह में भाग लो, इससे बेहतर यही है कि तुममें से कोई उसमें भाग न ले। मेरा मापदण्ड बहुत कड़ा है। मैं चाहता हूँ, तुम लोग केवल नियमपूर्वक ही नहीं, बुद्धिपूर्वक भी कातो। मैं चाहता हूँ, तुम अपने सूतकी जाँच करना, बारीक तार और मोटे तार निकालना और खादीका अर्थशास्त्र आदि सीखो। और जब तुम मुझसे आकर यह कहोगे कि मैं यह सब जानता हूँ, तब मैं तुमसे पूछूँगा, 'तुम्हारा जीवन कैसा है?' क्या तुम अपने परिवारके लोगोंके साथ और रोजमर्राके व्यवहारमें अहिंसा बरतते हो? तुम्हारे यह कहने से क्या लाभ कि तुम सिद्धान्ततः अहिंसाको स्वीकार करते हो? मान लो, तुम खादीके सिद्धान्तको स्वीकार करते हो, लेकिन विदेशी कपड़े खरीदते और इस्तेमाल करते हो तो तुम्हारे सिद्धान्त-रूपमें उसे स्वीकार करने से क्या लाभ होनेवाला है? और फिर यह बात भी समझने की कोशिश करो कि ब्रिटिश भारतमें

१. महादेव देसाईके लेख "ऑन द पाथ ऑफ अहिंसा" (अहिंसाके पथपर) से उद्धृत।

२. जो किसी देशी रियासतका रहनेवाला था

तो मैं एक नीतिकी तरह अहिंसाकी स्वीकृतिसे अपने मनको सन्तुष्ट कर लूँगा, लेकिन मैं चाहता हूँ कि देशी रियासतोंमें रहनेवाले लोग तो उसमें एक सिद्धान्तकी तरह विश्वास करें। आज अनेक देशी रियासतोंमें ब्रिटिश भारतसे अधिक हिंसा है, और वहाँकी हिंसाका मुकाबला करने के लिए हमें प्रह्लादकी-सी चरम पवित्रता और बलिदानकी आवश्यकता है। मुझे कोई प्रह्लाद दीजिए तो मैं अवश्य ही उसे अपना आशीर्वाद दूँगा।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १८-१-१९४२

३१२. पत्र : अब्दुल गफ्फार खाँको

सेवाग्राम
१८ जनवरी, १९४२

प्रिय खान साहब,

आपके कांग्रेससे इस्तीफा देने के बारेमें मौलाना साहब और जवाहरलालके साथ मेरी लम्बी बातचीत हुई। उनका कहना है कि उन्हें यह नहीं मालूम था कि आपका विचार कांग्रेससे अलग हट जाने का है। उनके कथनानुसार बातचीत तो केवल आपके कार्य-समितिसे अलग हट जाने की हुई थी। उन्होंने यह भी कहा कि आपके कार्य-समितिसे भी हटने का गलत अर्थ लगाया जायेगा और आप जिस उद्देश्यको लेकर चल रहे हैं उस उद्देश्यको उससे हानि पहुँचेगी। लेकिन क्या फैसला करना है, यह तो आप ही बेहतर समझ सकते हैं। ऐसा करते समय आप उनकी रायको भी ध्यानमें रखेंगे। मैं कोई राय नहीं दे सकता। मैं तथ्योंके बारेमें आपके निर्णयपर पूरी तरह भरोसा करता हूँ। यदि तथ्य वही है जैसा कि वे कहते हैं तो उनकी रायको मान लेना चाहिए। और यदि तथ्य इससे भिन्न है और जैसा उनका विचार है यदि आपको वैसा कोई भय नहीं है तो आपकी रायको प्रमुखता दी जानी चाहिए।

उन्होंने आगे यह भी कहा कि डॉ० खान साहब और अपने सहयोगियोंकी रजामन्दीके बिना आपको कोई कदम नहीं उठाना चाहिए। उनका यह भी कहना है कि यदि आप त्यागपत्र देते हैं तो डॉ० खान साहबको कार्य-समितिमें शामिल हो जाना चाहिए। अब आप मुझे और मौलाना साहबको बतायें कि आपका अन्तिम निर्णय क्या है।[1]

आशा है, मेरा पत्र बिलकुल स्पष्ट है। सस्नेह,

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

१. अब्दुल गफ्फार खाँने ८ फरवरी, १९४२ को कांग्रेस कार्य-समितिसे त्यागपत्र दिया था।

३१३. पत्र : लीलावती आसरको

१९ जनवरी, १९४२

चि० लिली,

तेरा पत्र मिला। मुझे एक मिनटकी भी फुर्सत नही मिलती। तू हिम्मत हार रही है, यह ठीक नही। तुझे पास होने का दृढ निश्चय करना चाहिए। हम लोग आज काशी जा रहे है। २४ को वापस आयेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १००८९) से। सौजन्य लीलावती आसर

३१४. सच्चा युद्ध-प्रयत्न

भूखोके लिए रोटी और नगोके लिए कपडा जुटाना आजकी सबसे बडी और तात्कालिक आवश्यकता है। देशमे इन दोनो चीजोका अभाव पहलेसे ही हो चला है। जैसे-जैसे लडाई लम्बी खिचती जायेगी, इन दोनो चीजोका अभाव भी बढता जायेगा। बाहरसे अन्न-वस्त्र आना बन्द हो गया है। धनिक वर्ग भले अभी इस तगीको महसूस न करता हो या हो सकता है, कभी भी न करे। परन्तु गरीब लोग तो आज भी इसे खूब महसूस कर रहे हैं। धनिक वर्ग गरीबोके बलपर ही जीवित है। इसके सिवाय और कोई रास्ता उसके पास नही है। तो आज इस वर्गका क्या धर्म है? कहावत है कि जो जितना बचाता है वह उतना ही कमाता या पैदा करता है। इसलिए जिनको गरीबोसे हमदर्दी है, जो उनके साथ ऐक्य साधना चाहते हैं, उन्हे अपनी आवश्यकताएँ कम करनी चाहिए। यह हम कई तरीकोसे कर सकते है। मैं यहाँ उनमे से कुछका ही जिक्र करूँगा। धनिक वर्गके लोग प्रमाण या आवश्यकतासे कही ज्यादा खाते और बर्बाद करते है।

एक समय एक ही अनाज इस्तेमाल करना चाहिए। चपाती, दाल-भात, दूध-घी, गुड और तेल ये खाद्य पदार्थ साग-सब्जी और फलके अतिरिक्त आम तौरपर हमारे घरोमे इस्तेमाल किये जाते हैं। आरोग्यकी दृष्टिसे यह मिश्रण ठीक नही है। जिन लोगोको दूध, पनीर, अण्डे या मासके रूपमे प्रोटीन मिल जाता है, उन्हे दालकी बिलकुल जरूरत नही है। गरीबोको तो सिर्फ वानस्पतिक प्रोटीन ही मिलता है। यदि धनिक वर्गके लोग दाल और तेल लेना छोड दे, तो गरीबोकी

आवश्यकताकी ये दो वस्तुएँ उन्हें सुलभ हो जायें। क्योंकि पशु-प्रोटीन या घी आदि तो इन्हें मिलने से रहा। अन्नको किसी तरल पदार्थमें सानकर नहीं खाना चाहिए। यदि उसको किसी रसीली या तरल चीजमें डुबाये बगैर सूखा ही खाया जाये तो आधी मात्रामें ही काम चल जाता है। अन्नको कच्चे सलाद, जैसे कि प्याज, गाजर, मूली, सलादके पत्तो और टमाटरके साथ खाया जाये, यह बहुत अच्छा है। एक-दो औंस कच्चा सलाद आठ औंस पकाई हुई सब्जियोंके बराबर होता है। चपाती या डबल रोटी दूधके साथ नहीं लेनी चाहिए। शुरूमें एक वक्त चपाती या डबल रोटी और कच्ची सब्जियां और दूसरे वक्त पकाई हुई सब्जी, दूध या दहीके साथ ले सकते हैं।

मिष्टान्न खाना बिलकुल बन्द कर देना चाहिए। इसकी जगह गुड़ या थोड़ी मात्रामें शक्कर अकेले या दूध या डबल रोटीके साथ ले सकते हैं।

ताजा फल खाना अच्छा है, परन्तु शरीरके पोषणके लिए थोड़ा फल-सेवन ही पर्याप्त होता है। यह महँगी वस्तु है और धनिक लोगोंके आवश्यकतासे अत्यन्त अधिक फल-सेवनके कारण, गरीबों और बीमारोंको, जिन्हें धनिकोंकी अपेक्षा इनकी अधिक जरूरत है फल मिलना दुश्वार हो गया है।

कोई भी चिकित्सक, जिसने आहार-शास्त्रका अध्ययन किया है, प्रमाणके साथ यह कहेगा कि जो मैंने ऊपर बताया है उससे शरीरको किसी प्रकारका नुकसान नहीं हो सकता, बल्कि निश्चय ही उससे स्वास्थ्यमें सुधार होगा।

स्पष्ट ही खाद्य सामग्रीकी किफायतका यह सिर्फ एक ही तरीका है। परन्तु केवल उसी एक उपायसे कोई उल्लेख योग्य लाभ नहीं हो सकता।

गल्लेके व्यापारियोंको लालच और जितना मुनाफा हो सके उतना मुनाफा कमाने की प्रवृत्तिको त्यागना चाहिए। उन्हें यथासम्भव थोड़ेसे-थोड़े लाभसे सन्तुष्ट रहना चाहिए। यदि उनकी ऐसी ख्याति नहीं बन पाई कि वे तो समय पड़ने पर गरीबोंकी जरूरतें पूरी करने के लिए ही अनाज भण्डार रखते हैं तो उनके लूटे जाने का पूरा खतरा है। उन्हें चाहिए कि वे अपने पड़ोसके लोगोंसे सम्पर्क बनाये रखें। कांग्रेसियोंको चाहिए कि वे अपने-अपने क्षेत्रके गल्लेके व्यवसायियोंसे मिलकर वक्तका तकाजा उन्हें समझायें।

सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य तो यह है कि गांवके लोगोंको यह शिक्षा दी जाये कि जो-कुछ उनके पास है उसे बचाकर रखें और जहां-जहां पानीकी सुविधा है, वहां-वहां नई फसलें उगाने के लिए उन्हें प्रेरित किया जाये। इसके लिए व्यापक और बुद्धिमत्तापूर्ण प्रचारकी आवश्यकता है। लोग आम तौरपर नहीं जानते कि केला, आलू, चुकन्दर, शकरकन्द, सूरन और कुछ हदतक सीताफल खाने के काम आनेवाली ऐसी फसलें हैं जो सरलतासे उगाई जा सकती हैं। जरूरत पड़ने पर ये रोटीका स्थान ले सकती हैं।

आजकल पैसेकी भी बहुत कमी है। अनाज शायद मिल भी जाये, परन्तु अनाज खरीदने को लोगोंके पास पैसा नहीं है। रोजगार न मिलने के कारण पैसेका

अभाव है। लोगोको रोजगार देना होगा। कताई इसका सबसे सरल और सहज-सुलभ उपाय है। लेकिन स्थानीय जरूरते श्रमके दूसरे जरिये भी पैदा कर सकती हैं। रोजगारकी कमी न रहने पाये, इसके लिए हर सम्भव स्रोत ढूँढना होगा। जो आलसी है उन्हीके सामने भूखो मरने की नौबत आयेगी और वे भूखो मरेगे ही। धीरजके साथ काम करने से ऐसे लोग भी अपना आलस्य छोड देगे।

यदि अच्छी तरह और समय रहते ध्यान दिया जाये, तो वस्त्रकी समस्या अन्नके प्रश्नसे कही अधिक सरल है। ऐसे समयमे कपडा-मिलोपर भरोसा न किया जाये तो अच्छा हो। भारतमे कपास काफी है। कपास पैदा करनेवालो के लिए यह एक प्रश्न हो गया है कि वे अपनी कपासको किस प्रकार खपाये। दूर देशोकी मण्डियाँ तो अब उनके लिए बन्द हैं। हमारी कपडा-मिलोमे सारी फसलकी खपत नही हो सकती। परन्तु सारा देश यदि दामके लिए नही, बल्कि वस्त्रहीन लोगोके लिए कपडा पैदा करने के लिए कातने लग जाये तो वह उसका उपयोग कर सकता है। जो लोग बेकारीमे गिरफ्तार है, वे तो अवश्य मुनाफेके लिए कातेगे, मगर उनकी सख्या कम ही हो सकती है। उनके लिए व्यवस्थाकी जरूरत पडेगी। बहुत-सा पैसा भी इस कामके लिए चाहिए। परन्तु राष्ट्रीय कताईके लिए पैसेकी इतनी जरूरत नही। जब मुनाफेका हेतु निकल जाता है और लोग कामसे मिलनेवाले आनन्दके लिए काम करने लगते है तब व्यवस्थाकी कमसे-कम जरूरत रह जाती है।

आज हम बडी सख्यामे चरखे तैयार नही कर सकते। इसके लिए समय चाहिए। कच्चा सामान दिन-ब-दिन महँगा हो रहा है, और हर जगह चरखे तैयार भी नही किये जा सकते। जहाँ चरखे तैयार हो सकते है, ऐसी जगहोके नाम एक हाथकी उँगलियोपर गिने जा सकते है।

इसलिए मै धनुष तकली और वह न हो तो सादी तकलीकी सिफारिश करता हूँ। धनुष तकली लोगोको अपने यहाँ ही बनवानी चाहिए। असलमे सादी तकलियाँ आनन-फानन लाखोकी सख्यामे बनाना कठिन है। धनुष तकली ही सबसे ज्यादा आसानीसे बनाई जा सकती है। कातनेवालो को हम पूनियाँ नही दे सकते। हर कातने-वाली स्त्री या पुरुषको चाहिए कि वह अपने लिए रुई प्राप्त कर ले, उसे अपने ही हाथसे तुन ले या जैसी बिहारकी बुनियादी शालाओमे इस्तेमाल की जाती है, वैसी धुनकी से घरमे ही जितना अच्छा बन पडे उतना अच्छा धुन ले। यह सब सम्भव है, क्योकि बहुत-सा सूत कातने का तो किसीके आगे सवाल होगा ही नही। अगर उन करोडो लोगोमे से, जो यह काम कर सकते है, प्रत्येक प्रतिदिन एक घटा काते तो इतना सूत तैयार हो जायेगा कि देशके सब करघोकी जरूरत पूरी की जा सकेगी। हमे यह मालूम होना चाहिए कि आज देशमे करघोपर बुनाई करनेवाले लाखो लोग है, परन्तु डर है कि बुनने के सूतकी कमीके कारण कही उन्हे भूखो न मरना पड़े।

काग्रेसियोके सामने यह एक भारी काम है। हर काग्रेसीको अच्छा कतैया और पिंजक बन जाना है और धनुष तकली बनाना सीख लेना है। यदि प्रत्येक काग्रेसी इस प्रवृत्तिको स्वय अपने से और अपने परिवार तथा पडोसियोसे आरम्भ कर दे तो

शीघ्र ही वह देखेगा कि उसका जीवनदायी प्रभाव उस दावानल-जैसी तेजीसे फैल गया है जिसकी लपेटमें आने के बाद भी हमें मुश्किलसे यह पता चलता है कि हम क्या देख रहे हैं।

जो संस्था इन दो समस्याओंके समाधानमें प्रवृत्त होकर सफलता प्राप्त करेगी वह जनताके प्रेम और विश्वासका सम्पादन कर सकेगी। मुझे आशा है कि सब इस सच्चे युद्ध-प्रयत्नमें हिस्सा लेंगे। यह शान्तिमय और रचनात्मक है, इसीसे इसे कुछ कम प्रभावशाली नहीं समझना चाहिए।

क्या देशी नरेश अपनी प्रजाको बिना रोक-टोकके यह काम करने देंगे? क्या कायदेआजम जिन्ना मुस्लिम लीगको इस सच्चे अर्थमें राष्ट्रीय और जन-सेवाके अराजनैतिक काममें कांग्रेसके साथ सहयोग करने देंगे? अखिल भारतीय चरखा संघकी मारफत आज २३,००० मुसलमान कतैये, पिंजारे और जुलाहे अपनी दैनिक रोजी कमाते हैं।

काशी जाते हुए, १९ जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-१-१९४२

३१५. रचनात्मक कार्यक्रम और सरकार

रचनात्मक कार्यक्रमको अमलमें लाने में कांग्रेसवालोंकी सरकारसे कोई तकरार तो नहीं हो जायेगी? अनेक प्रश्नोंमें से यह भी एक प्रश्न था जो मुझसे अ० भा० का० कमेटीके प्रमुख सदस्योंकी वर्धामें हुई बैठकमें, जिसके समक्ष मैं १७ तारीखको बोला था, पूछा गया था। मैंने उत्तर दिया था कि सारा कार्यक्रम इस प्रकार सोच-विचारकर बनाया गया है जिससे सरकारसे झगड़ा न होने पाये। वैसे तो निर्दोषसे-निर्दोष कार्य भी इस प्रकार किये जा सकते हैं कि जिससे झगड़ा भड़क सकता है। मैं उम्मीद करता हूँ कि हर-एक कांग्रेसी झगड़ा बचाने की भरसक कोशिश करेगा। लेकिन यदि सरकार ऐसी प्रवृत्तियोंपर सिर्फ इसलिए रोक लगा दे कि उन्हें कांग्रेसी लोग चलाते हैं, जिनका विश्वास है कि रचनात्मक कार्यक्रम के परिणामस्वरूप स्वराज्यकी प्राप्ति होगी, तब तो कोई चारा नहीं रहेगा। क्योंकि स्वराज्य-प्राप्तिका यही एक अहिंसात्मक मार्ग है। अहिंसात्मक तरीकों द्वारा स्वराज्य प्राप्त करना है तो वह स्वराज्य पाने के इच्छुक लोगोंके रचनात्मक प्रयत्नोंसे ही प्राप्त होगा। सरकारको ऐसे हर प्रयत्नका स्वागत करना चाहिए। हाँ, अगर वह विशुद्ध रूपसे अहिंसात्मक आन्दोलनको भी रोकना चाहती हो तो बात और है। उस हालतमें तो संघर्ष अनिवार्य ही होगा। किन्तु मेरी रायमें जबतक यह युद्ध जारी है, कमसे-कम तबतक किसी प्रकारके झगड़ेकी सम्भावना नहीं है, बशर्ते कि खुद कांग्रेसी कार्यकर्त्ता उसे मोल न लेना चाहें। उन्हें तो काम, काम और काम ही करना है। अपना रचनात्मक कार्य करते हुए उन्हें न भाषण देने की जरूरत है, न किसी प्रकारका प्रदर्शन करने की

जरूरत है। जैसा कि मैं पहले कह चुका हूँ, आज रचनात्मक कार्यक्रमकी बहुत-सी मदे ऐसी है —जैसे कि लोगोके लिए खाना-कपडा जुटाना — जिनकी फिक्र सरकार और जनता दोनोको समान रूपसे होनी चाहिए।

काशी जाते हुए, १९ जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-१-१९४२

३१६. साम्प्रदायिक एकता

ससदीय प्रवृत्ति द्वारा आजादी नही मिलनेवाली है। इसलिए साम्प्रदायिक समझौते हो सके तो वे अपने-आपमे ठीक ही है, परन्तु उनके पीछे हृदयकी एकता न रही तो उनसे कुछ बननेवाला नही है। इसके बिना देशमे शान्ति नही हो सकती। हृदयकी एकता न कायम हो सकी तो पाकिस्तानकी स्थापनाके बाद भी शान्ति नही होगी। हृदयकी एकता एक-दूसरेकी सेवा और एक-दूसरेके साथ मिल-जुलकर काम करने से ही आ सकती है।

पृथक् निर्वाचक-मण्डलोकी पद्धतिने हमारे दिलोमे अलगाव पैदा कर दिया है, क्योकि उसका आधार ही पारस्परिक अविश्वास और यह मान्यता है कि सभी समुदायोके हित एक-दूसरेके विरोधी है। पृथक् निर्वाचक-मण्डल-पद्धतिने हमारे आपसी भेदको स्थायी बना दिया है और अविश्वासको और गहरा बना दिया है।

तो इस विकट स्थितिसे कैसे निकला जाये? मैं यहाँ चार मुस्लिम-बहुल प्रान्तो को ही लेना चाहता हूँ। वहाँ तो कुदरती तौरपर पाकिस्तान मौजूद है— इस अर्थमें कि वहाँका स्थायी बहुमत अल्पमत पर सब दिन शासन कर सकता है। मेरी रायमे धर्मके आधारपर आदमी-आदमीके बीच इस तरहकी दीवार खडी कर देना भारी भूल है, क्योकि धर्म बदल सकता है। हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच राजस्व, सफाई, पुलिस, न्याय और सार्वजनिक सुविधाओके उपयोगके बारेमें हितोका क्या टकराव हो सकता है? भेद तो धार्मिक रीति-रिवाज और विधि-विधानोमे ही हो सकता है, और इन बातोसे एक धर्म-निरपेक्ष राज्यका कोई सरोकार नही हो सकता।

यदि काग्रेसी हिन्दुओकी हैसियतसे हिन्दुओमें ही नही मिल जाना चाहते तो उन्हे पृथक् निर्वाचक-मण्डलकी पद्धतिपर गठित विधानमण्डलो और स्थानीय सस्थाओसे अलग ही रहना चाहिए। इन प्रान्तोमे पृथक् निर्वाचक-मण्डलोके बारेमे स्वभावत यही समझा जाये कि वे हिन्दुओकी माँगके परिणाम है और तथाकथित हिन्दू हितोकी रक्षाके लिए है। लेकिन काग्रेसी हिन्दूका तो अपने मुसलमान भाईसे अलग कोई हित ही नही है। इसलिए उसे मतदाताओके किसी ऐसे मण्डलमे शामिल ही नही होना है जिसमें

हिन्दू और मुस्लिम दोनो हितोको झूठ-मूठ अलग-अलग ही नही, बल्कि परस्पर विरोधी भी माना गया हो। अगर वह इन मण्डलोमे शामिल होगा तो एक या दूसरे मुस्लिम दलके साथ मिलकर बहुमत दलमें फूट ही डालनेको शामिल होगा। अगर मै सब हिन्दुओको काग्रेसी वृत्तिका बना सकूं तो मै इन मण्डलोमें से हर-एक हिन्दू सदस्यको निकाल लूं और मुसलमानोको उनके ईमानपर छोड दूं। मै इन मण्डलोसे बाहर रहकर उनसे दोस्ती करूँ और उनकी नि स्वार्थ सेवा करके उनपर असर डालने की कोशिश करूँ। अगर सब-की-सब सरकारी नौकरियाँ उन्हीको मिल जायें तो मुझे उसकी भी परवाह न होगी। आखिर उन नौकरियोमें लोग एक अत्यल्प सख्यामें ही शामिल हो सकते हैं। यह मान लेना कि इस तरह एक ही समुदायके लोगोसे भरे विभाग ऐसी जनतापर, जिसे अपनी मानवता और मानवी अधिकारोका ज्ञान है और जिसे यह भी मालूम है कि उनकी रक्षा कैसे की जाती है, जुल्म ढायेंगे, सिर्फ एक वहम ही है। क्योकि उन चार मुस्लिम-बहुल प्रान्तोमें से तीनमे काग्रेसियोमें अधिक सख्या हिन्दुओकी ही है, इसलिए उन्हें यह सुअवसर सुलभ है कि वे अपना अहिंसक बल, अपनी निस्वार्थता और साम्प्रदायिकतासे सर्वथा मुक्त होने का सबूत दें और यह भी बता दे कि अपने मुस्लिम देशभाइयोकी हुकूमतके नीचे रहने की उनमें शक्ति है। वे यह सब जले दिलसे नही करेंगे, बल्कि इसलिए करेंगे कि वे शुद्ध राष्ट्रप्रेमी और मुसलमानोके मित्र है। उनके बाहर रहनेका एक परिणाम यह भी हो सकता है कि वे हिन्दू नागरिकोके न्यायोचित अधिकारोकी ज्यादा अच्छी तरह रक्षा कर सकेंगे। क्योकि काग्रेसी हिन्दू इस वजहसे कम हिन्दू नही हो जाता कि वह अपने धर्मके अतिरिक्त समान रूप से दूसरे सब धर्मोका भी प्रतिनिधि होने का दावा करता है, जैसा कि उसे करना भी चाहिए। जैसा कि मै कह चुका हूँ, अलग-अलग धर्मोकी सेवा करना राज्यकी क्षमता से बाहर है और वह जो सेवा कर सकता है, उसका फल सभी धर्मावलम्बियोको मिलेगा। इसलिए काग्रेसियोको इन प्रान्तोमें अपनी विशुद्ध राष्ट्रीयता दिखाने का यह दुर्लभ अवसर मिला है। इसके साथ-साथ वे दूसरे अल्पसख्यक समुदायोको यह भी दिखा सकते हैं कि अगर उन्हें सच्चा तरीका मालूम है, तो उन्हें बहुसख्यक समुदायोंसे डरने की कोई जरूरत नही है। हमें साम्प्रदायिक बहुमत और अल्पमतकी उपाधिमें से निकल जाना चाहिए। जहाँतक राज्यका सम्बन्ध है, किसी हिन्दूका हित किसी पारसी या मुसलमानके हितसे कैसे भिन्न हो सकता है? क्या अपनी जिन्दगीमें दादाभाई और फीरोजशाह काग्रेसपर राज्य नही करते थे? और वे ऐसा कर पाये, यह काग्रेस द्वारा उनके साथ की गई किसी रियायत या मेहरबानीका परिणाम नही था, बल्कि उनकी सेवा और योग्यताका फल था। क्या उनके शासनने किसी हिन्दू या मुसलमानके हितोको नुकसान पहुँचाया? काग्रेसके मचपर इन हितोके बीच क्या कभी झगडा पैदा हुआ? और काग्रेस भी क्या लोगो द्वारा स्वेच्छासे सगठित किया गया एक प्रकारका राज्य ही नही है?

काशी जाते हुए, २० जनवरी, १९४२

[अग्रेजीसे]

हरिजन, २५-१-१९४२

३१७. प्रश्नोत्तर

कांग्रेस और ए० आर० पी०

प्र० : क्या कोई कांग्रेसी ए० आर० पी० (हवाई हमला प्रतिरक्षा संगठन) या युद्धसे सम्बन्ध रखनेवाली ऐसी और किसी समितिमें शामिल हो सकता है?

उ० मेरी रायमे नही, परन्तु इसका मतलव यह नही कि वह वमसे अथवा दूसरी तरह घायल हुए लोगोकी सहायता या सेवा न करे। इसके विपरीत उससे आशा रखी जायेगी कि वह इस किस्मकी सहायता देने मे पूरी लगनसे काम करे।

आर्थिक समानता

प्र० : रचनात्मक कार्यक्रमको कार्यान्वित करते हुए क्या कोई कांग्रेसी आर्थिक समानताके लिए प्रचार कर सकता है? सविनय अवज्ञा द्वारा आर्थिक समानताकी स्थापना कैसे की जा सकती है?

उ० आप वेशक इसका प्रचार कर सकते है, वशर्ते कि आपकी भापा पूरी तरह अहिंसक हो, किन्तु कई ऐसे लोगोको भी मै जानता हूँ जो जमीदारो और पूंजीपतियोकी सम्पत्ति हिंसा द्वारा छीन लेने का प्रचार करते है। हम वह नही कर सकते। परन्तु कोरे प्रचारसे भी एक अच्छा तरीका मैंने वताया है। रचनात्मक कार्यक्रम देशको इस लक्ष्यकी ओर वहुत दूरतक ले जाता है और उसके लिए आज अत्यन्त अनुकूल समय भी है। चरखा और चरखेसे सम्वन्धित अन्य उद्योगोको अगर हम सफलताके साथ चला सके तो उससे हम लगभग सभी आर्थिक और सामाजिक असमानता मिटा सकते है। अहिंसासे प्राप्त होनेवाली शक्तिका जनतामे दिन-प्रति-दिन अधिकाधिक बोध जगता जा रहा है। इसके साथ ही अगर जनता समझदारीके साथ उन प्रवृत्तियोमे सहयोग करने से इनकार कर दे जो उसे गुलामीके शिकजेमे जकडती है तो उससे निश्चय ही आर्थिक समानता आयेगी।

सस्थाको मजवूत बनाओ

प्र० : काग्रेसको मजबूत बनाने का क्या अर्थ है?

उ० इसको मजबूत बनाने का अमोघ उपाय तो यह है कि ऐसे सदस्योकी इसमे भरती की जाये जो काग्रेसके बुनियादी लक्ष्यका, अर्थात् शान्तिमय और उचित उपायो द्वारा स्वराज्य-प्राप्तिका, अर्थ समझते हो। काग्रेस सस्थामे पद-प्राप्तिके लिए सदस्य वनाना तथा फर्जी और झूठे सदस्य भरती करना दूषित और हानिप्रद होगा।

अगर काग्रेस उस सत्ता या प्रणालीका जो आज जनताको कुचल रही है, अन्त करके सत्ताको अपने हाथोमे ले लेना चाहती है तो उसके अन्दर पदलोलुपता और

सत्ताकी राजनीतिके लिए कोई स्थान नहीं है। यदि कांग्रेसको सचमुच मजबूत बनाना हो तो हर-एक कांग्रेसीको चाहिए कि वह रचनात्मक कार्यक्रमकी समस्त सम्भावनाओं को साकार करने के प्रयत्नमें जुट जाये। सच्चे सदस्य बनाने के लिए बहुत प्रयत्नकी जरूरत नहीं होनी चाहिए। अगर यह काम ठीकसे किया जाये तो इसमें कांग्रेसका सामान्य खर्च भी निकल सकता है, बशर्ते कि सदस्य बनाने में ही सदस्योंके चन्देकी रकम खर्च न कर दी जाये।

'दूसरी संस्थाएँ'

प्र० : जब आप एक-से लक्ष्योंके लिए काम करनेवाली अन्य स्वयंसेवक संस्थाओंके साथ मिलकर काम करने को कहते हैं तो इससे आपका क्या मतलब है? क्या इनमें आप साम्प्रदायिक संस्थाओंको भी गिनते हैं?

उ० : हाँ। दुर्भाग्यवश हमारे पास इस तरहकी असाम्प्रदायिक संस्थाएँ बहुत कम हैं। 'एक-से लक्ष्यों' का मतलब स्वभावत: रचनात्मक लक्ष्य है और यहाँ 'रचनात्मक' शब्दका प्रयोग मैं उसके व्यापकतम अर्थोंमें कर रहा हूँ। उदाहरणके लिए, आप मुस्लिम लीग या हिन्दू महासभाके स्वयंसेवकोंको आग बुझाने या घायलों की मरहम-पट्टी करने में मदद दे सकते हैं। और इस तरहके कामोंमें आप उनसे मददकी माँग भी कर सकते हैं।

काशी जाते हुए, २० जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २५-१-१९४२ और १-२-१९४२

३१८. भाषण : बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें

२१ जनवरी, १९४२

पूज्य मालवीयजी, सर राधाकृष्णन्, भाइयो और बहनो,

आप सब जानते हैं कि आजकल मुझमें न तो सफर करनेकी ताकत ही रही है और न इच्छा ही लेकिन जब मैंने इस विश्वविद्यालयके रजत महोत्सवकी बात सुनी और मुझे सर राधाकृष्णन्का निमन्त्रण मिला तो मैं इन्कार न कर सका।

आप जानते हैं कि मालवीयजी महाराजके साथ मेरा कितना गाढ़ा सम्बन्ध है। अगर उनका कोई काम मुझसे हो सकता है तो मुझे उसका अभिमान रहता है, और अगर मैं उसे कर सकूँ तो अपनेको कृतार्थ समझता हूँ। इसलिए जब सर राधा-कृष्णन्का पत्र मिला तो मैंने निमन्त्रण स्वीकार कर लिया। यहाँ आना मेरे लिए तो एक तीर्थमें आने के समान है।

यह विश्वविद्यालय मालवीयजी महाराजका सबसे बड़ा और प्राणप्रिय कार्य है। उन्होंने हिन्दुस्तानकी बहुत-बहुत सेवाएँ की हैं, इससे आज कोई इन्कार नहीं

कर सकता। लेकिन मेरा अपना खयाल यह है कि उनके महान् कार्योंमें इस कार्यका महत्त्व सबसे ज्यादा रहेगा। २५ साल पहले, जब इस विश्वविद्यालयकी नींव डाली गई थी, तब भी मालवीयजी महाराजके आग्रह और खिंचावसे मैं यहाँ आ पहुँचा था।[1] उस समय तो मैं यह सोच भी न सकता था कि जहाँ बड़े-बड़े राजा, महाराजा और खुद वाइसराय आनेवाले हैं, वहाँ मुझ-जैसे फकीरकी क्या जरूरत हो सकती है। तब तो मैं 'महात्मा' भी नहीं बना था। अगर कोई मुझे 'महात्मा' के नामसे पुकारते भी थे तो मैं यही सोच लेता था कि महात्मा मुंशीरामजी के बदले भूलसे मुझे किसीने पुकार लिया होगा। उनकी कीर्ति तो मैंने दक्षिण आफ्रिकामें ही सुन ली थी। हिन्दुस्तानसे धन्यवाद और सहानुभूतिका सन्देश भेजनेवालों में एक वे भी थे, और मैं जानता था कि हिन्दुस्तानकी जनताने उन्हें उनकी देशसेवाओंके लिए महात्माकी उपाधि दी थी। उस समय भी मालवीयजी महाराजकी कृपादृष्टि मुझपर थी। कहीं भी कोई सेवक हो, वे उसे ढूँढ निकालते हैं, और किसी-न-किसी तरह अपने पास खींच ही लाते हैं। यह उनका सदाका धन्धा है।

लोग मालवीयजी महाराजकी बड़ी प्रशंसा करते हैं। आज भी आपने उनकी कुछ प्रशंसा सुनी है, वे सब तरह उसके लायक हैं। मैं जानता हूँ कि हिन्दू विश्व-विद्यालयका कितना बड़ा विस्तार है। संसारमें मालवीयजीसे बढ़कर कोई भिक्षुक नहीं। जो काम उनके सामने आ जाता है, उसके लिए — अपने लिए नहीं — उनकी भिक्षा की झोलीका मुँह हमेशा खुला रहता है — वे हमेशा माँगा ही करते हैं। और परमात्माकी भी उनपर बड़ी दया है कि जहाँ जाते हैं, उन्हें पैसे मिल ही जाते हैं। तिसपर भी उनकी भूख कभी नहीं बुझती। उनका भिक्षा-पात्र सदा खाली रहता है। उन्होंने विश्वविद्यालयके लिए एक करोड़ इकट्ठा करनेकी प्रतिज्ञा की थी। एक करोड़की जगह डेढ़ करोड़ दस लाख रुपया इकट्ठा हो गया, मगर उनका पेट नहीं भरा। अभी-अभी उन्होंने मुझसे कानमें कहा है कि आजके हमारे सभापति महाराजा साहब दरभंगाने उनको एक खासी बड़ी रकम दानमें और दी है।

मैं जानता हूँ कि मालवीयजी महाराज स्वयं किस तरह रहते हैं। यह मेरा सौभाग्य है कि उनके जीवनका कोई पहलू मुझसे छिपा नहीं। उनकी सादगी, उनकी सरलता, उनकी पवित्रता और उनकी मुहब्बतसे मैं भली-भाँति परिचित हूँ। उनके इन गुणोंमें से आप जितना कुछ ले सकें, जरूर लें। विद्यार्थियोंके लिए तो उनके जीवनकी बहुतेरी बातें सीखने लायक हैं। मगर मुझे डर है कि उन्होंने जितना सीखना चाहिए, सीखा नहीं है। यह आपका और हमारा दुर्भाग्य है। इसमें उनका कोई कसूर नहीं। धूपमें रहकर भी कोई सूरजका तेज न पा सकें तो उसमें सूरज बेचारेका क्या दोष? वह तो अपनी तरफसे सबको गर्मी पहुँचाता रहता है, पर अगर कोई उसे लेना ही न चाहे और ठण्डमें रहकर ठिठुरता फिरे तो सूरज भी उसके लिए क्या करे? मालवीयजी महाराजके इतने निकट रहकर भी अगर आप उनके जीवनसे

१. देखिए खण्ड १३, पृ० २१२-१८।

सादगी, त्याग, देशभक्ति, उदारता और विश्वव्यापी प्रेम आदि सद्‌गुणों का अपने जीवनमें अनुकरण न कर सके, तो कहिए, आपसे बढकर अभागा और कौन होगा?

अब मैं विद्यार्थियों और अध्यापकोंसे दो शब्द कहना चाहता हूँ।

मैंने तो सर राधाकृष्णन्‌से पहले ही कह दिया था कि मुझे क्यों बुलाते हैं? मैं वहाँ पहुँचकर क्या कहूँगा? जब बड़े-बड़े विद्वान् मेरे सामने आ जाते हैं, तो मैं हार जाता हूँ। जबसे हिन्दुस्तान आया हूँ, मेरा सारा समय कांग्रेसमें और गरीबों, किसानों और मजदूरों वगैरामें बीता है। मैंने उन्हींका काम किया है। उनके बीच मेरी जबान अपने आप खुल जाती है। मगर विद्वानोंके सामने कुछ कहते हुए मुझे बड़ी झिझक मालूम होती है। श्री राधाकृष्णन्‌ने मुझे लिखा कि मैं अपना लिखा हुआ भाषण उन्हें भेज दूं। पर मेरे पास इतना समय कहाँ था? मैंने उन्हें जवाब दिया कि वक्तपर जैसी प्रेरणा मुझे मिल जायेगी, उसीके अनुसार मैं कुछ कह दूंगा। मुझे प्रेरणा मिल गई है। मैं जो कुछ कहूँगा, मुमकिन है, वह आपको अच्छा न लगे। उसके लिए आप मुझे माफ कीजिएगा। यहाँ आकर जो-कुछ मैंने देखा, और देखकर मेरे मनमें जो चीज पैदा हुई, वह शायद आपको चुभेगी। मेरा खयाल था कि कमसे-कम यहाँ तो सारी कारंवाई अंग्रेजीमें नहीं, बल्कि राष्ट्रभाषामें ही होगी। मैं यहाँ बैठा यही इन्तजार कर रहा था कि कोई-न-कोई तो आखिर हिन्दी या उर्दूमें कुछ कहेगा। हिन्दी, उर्दू न सही, कमसे-कम मराठी या संस्कृतमें ही कोई कुछ कहता। लेकिन मेरी सब आशाएँ निष्फल हुईं।

अंग्रेजोंको हम गालियाँ देते हैं कि उन्होंने हिन्दुस्तानको गुलाम बना रखा है, लेकिन अंग्रेजीके तो हम खुद ही गुलाम बन गये हैं। अंग्रेजोंने हिन्दुस्तानको काफी पामाल किया है। इसके लिए मैंने उनकी कड़ीसे-कड़ी टीका भी की है। परन्तु अंग्रेजी की अपनी इस गुलामीके लिए मैं उनको जिम्मेदार नहीं समझता। खुद अंग्रेजी सीखने और अपने बच्चोंको अंग्रेजी सिखाने के लिए हम कितनी-कितनी मेहनत करते हैं? अगर कोई हमें कह देता है कि हम अंग्रेजोंकी तरह अंग्रेजी बोल लेते हैं, तो मारे खुशीके फूले नहीं समाते। इससे बढकर दयनीय गुलामी और क्या हो सकती है? इसकी वजहसे हमारे बच्चोंपर कितना जुल्म होता है? अंग्रेजीके प्रति हमारे इस मोहके कारण देशकी कितनी शक्ति और कितना श्रम बरबाद होता है? इसका पूरा हिसाब तो हमें तभी मिल सकता है, जब गणितका कोई विद्वान् इसमें दिलचस्पी ले। कोई दूसरी जगह होती, तो शायद यह सब बरदाश्त कर लिया जाता, मगर यह तो हिन्दू विश्वविद्यालय है। जो बातें इसकी तारीफमें अभी कही गई हैं, उनमें सहज ही एक आशा यह भी प्रकट की गई है कि यहाँके अध्यापक और विद्यार्थी इस देशकी प्राचीन संस्कृति और सभ्यताके जीते-जागते नमूने होंगे। मालवीयजी ने तो मुँह-माँगी तनख्वाहें देकर अच्छेसे-अच्छे अध्यापक यहाँ आप लोगोंके लिए जुटा रखे हैं। अब उनका दोष तो कोई कैसे निकाल सकता है? दोष जमानेका है। आज हवा ही कुछ ऐसी बन गई है कि हमारे लिए उसके असरसे बच निकलना मुश्किल हो गया है। लेकिन अब वह जमाना भी नहीं रहा, जब विद्यार्थी जो-कुछ मिलता था, उसीमें सन्तुष्ट रह लिया करते थे। अब तो वे बड़े-बड़े तूफान भी खड़े कर लिया

करते है। छोटी-छोटी बातोके लिए भूख-हड़ताल तक कर देते है। अगर ईश्वर उन्हे बुद्धि दे, तो वे कह सकते है, हमे अपनी मातृभाषामे पढाओ। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि यहाँ आन्ध्रके २५० विद्यार्थी है। क्यो न वे सर राधाकृष्णन्के पास जायें और उनसे कहे कि यहाँ हमारे लिए एक आन्ध्र-विभाग खोल दीजिए और तेलुगूमे हमारी सारी पढाईका प्रबन्ध करा दीजिए? और अगर वे मेरी अक्लसे काम करे, तब तो उन्हे कहना चाहिए कि हम हिन्दुस्तानी है, हमे ऐसी जबानमे पढाइए जो सारे हिन्दुस्तानमें समझी जा सके। और, ऐसी जबान तो हिन्दी ही हो सकती है।

जापान आज अमेरिका और इग्लैडसे लोहा ले रहा है। लोग इसके लिए उसकी तारीफ करते है। मै नही करता। फिर भी जापानकी कुछ बातें सचमुच हमारे लिए अनुकरणीय है। जापानके लडको और लडकियोने यूरोपवालोसे जो-कुछ पाया है, अपनी मातृभाषा जापानीके जरिये ही पाया है, अग्रेजीके जरिये नही। जापानी लिपि बडी कठिन है, फिर भी जापानियोने रोमन लिपिको कभी नही अपनाया। उनकी सारी तालीम जापानी लिपि और जापानी जबानके जरिये ही होती है। जो चुने हुए जापानी पश्चिमी देशोमे खास किस्मकी तालीमके लिए भेजे जाते है, वे भी जब आवश्यक ज्ञान पाकर लौटते है, तो अपना सारा ज्ञान अपने देशवासियोको जापानी भाषाके जरिये ही देते है। अगर वे ऐसा न करते और देशमे आकर दूसरे देशोके-जैसे स्कूल और कालेज अपने यहाँ भी बना लेते, और अपनी भाषाको तिलाजलि देकर अगर अग्रेजीमे सब-कुछ पढाने लगते तो उससे बढकर बेवकूफी और क्या होती? इस तरीकेसे जापानवाले नई भाषा तो सीखते, लेकिन नया ज्ञान न सीख पाते। हिन्दुस्तानमे तो आज हमारी महत्त्वाकाक्षा ही यह रहती है कि हमे किसी तरह कोई सरकारी नौकरी मिल जाये, या हम वकील, बैरिस्टर, जज वगैरा बन जाये। अग्रेजी सीखने मे हम बरसो बिता देते है, तो भी सर राधाकृष्णन् या मालवीयजी महाराजके समान अग्रेजी जाननेवाले हमने कितने पैदा किये है? आखिर वह एक पराई भाषा ही है न? इतनी कोशिश करने पर भी हम उसे अच्छी तरह सीख नही पाते। मेरे पास सैकडो खत आते रहते है। इनमे कई एम० ए० पास लोगोके भी होते है, परन्तु चूँकि वे अपनी जबानमे नही लिखते, इसलिए अग्रेजीमे अपने ख्याल अच्छी तरह जाहिर नही कर पाते।

चुनाँचे यहाँ बैठे-बैठे मैने जो-कुछ देखा, उसे देखकर मै तो हैरान रह गया। जो कार्रवाई अभी यहाँ हुई, जो-कुछ कहा या पढा गया, उसे जनता तो कुछ समझ ही नही सकी। फिर भी हमारी जनतामे इतनी उदारता और धीरज है कि चुप-चाप सभामे बैठी रहती है और खाक समझमे न आने पर भी यह सोचकर सन्तोष कर लेती है कि आखिर हमारे नेता ही है न। कुछ अच्छी ही बात कहते होगे। लेकिन इससे उसे लाभ क्या? वह तो जैसी आई थी, वैसी खाली लौट जाती है। अगर आपको शक हो, तो मै अभी हाथ उठवाकर लोगोसे पूछूँ कि यहाँकी कार्रवाईमे वे कितना कुछ समझे है? आप देखिएगा कि वे सब 'कुछ नही', 'कुछ नही' कह उठेंगे। यह तो हुई आम जनताकी बात। अब अगर आप यह सोचते हो कि विद्यार्थियोमे से हरएक ने हर बातको समझा है, तो वह दूसरी बडी गलती है।

आजसे पच्चीस साल पहले जब मैं यहाँ आया था, तब भी मैंने यही सब बाते कही थी। आज यहाँ आने पर जो हालत मैंने देखी, उसने उन्ही चीजोको दोहराने के लिए मुझे मजबूर कर दिया।

दूसरी बात जो मेरे देखने मे आई, उसकी तो मुझे जरा भी उम्मीद न थी। आज सुबह मैं मालवीयजी के दर्शनोको गया था। वसन्त पचमीका अवसर था, इसलिए सब विद्यार्थी भी वहाँ उनके दर्शनोको आये थे। मैंने उस वक्त भी देखा कि विद्यार्थियोको जो तालीम मिलनी चाहिए, वह उन्हे नही मिलती। जिस सभ्यता, खामोशी और तरतीबके साथ उन्हे चलते आना चाहिए, उस तरह चलना उन्होने सीखा ही नही था। यह कोई मुश्किल काम नही, कुछ ही समयमे सीखा जा सकता है। सिपाही जब चलते है, तो सिर उठाये, सीना ताने, तीरकी तरह सीधे चलते हैं, लेकिन विद्यार्थी तो उस वक्त आडे-टेढे, आगे-पीछे, जैसा जिसका दिल चाहता था, चलते थे। उनके उस 'चलने' को चलना कहना भी शायद मुनासिब न हो, मेरी समझमे तो इसका कारण भी यही है कि हमारे विद्यार्थियोपर अग्रेजी जवानका बोझ इतना पड जाता है कि उन्हे दूसरी तरफ सर उठाकर देखने की फुरसत नही मिलती। यही वजह है कि दरअसल उन्हे जो सीखना चाहिए, वे सीख नही पाते।

एक और बात मैंने देखी। आज सुवह हम श्री शिवप्रसाद गुप्तके घरसे लौट रहे थे। रास्तेमे विश्वविद्यालयका विशाल प्रवेश द्वार पडा। उसपर नजर गई तो देखा, नागरी लिपिमे 'हिन्दू विश्वविद्यालय' इतने छोटे हरूफोमे लिखा है कि ऐनक लगाने पर भी नही पढ पाते पर अग्रेजी वनारस हिन्दू यूनिवर्सिटीने तीन चौथाईसे भी ज्यादा जगह घेर रखी थी। मैं हैरान हुआ कि यह क्या मामला है? इसमे मालवीयजी महाराजका कोई कसूर नही। यह तो किसी इजीनियरका काम होगा। लेकिन सवाल तो यह है कि अग्रेजीकी वहाँ जरूरत ही क्या थी? क्या हिन्दी या फारसीमे कुछ नही लिखा जा सकता था? क्या मालवीयजी, और क्या सर राधाकृष्णन्, सभी हिन्दू-मुस्लिम एकता चाहते हैं। फारसी मुसलमानोकी अपनी खास लिपि मानी जाने लगी है। उर्दूका देशमे अपना खास स्थान है। इसलिए अगर दरवाजे पर फारसीमे, नागरीमे या हिन्दुस्तानकी दूसरी किसी लिपिमें कुछ लिखा जाता, तो मैं उसे समझ सकता था। लेकिन अग्रेजीमें उसका वहाँ लिखा जाना भी हमपर जमे हुए अग्रेजी जवानके साम्राज्यका एक सबूत है। किसी नई लिपि या जवानको सीखने से हम घबराते हैं, जब कि सच तो यह है कि हिन्दुस्तानकी किसी जुवान या लिपिको सीखना हमारे लिए बाये हाथका खेल होना चाहिए। जिसे हिन्दी या हिन्दुस्तानी आती है, उसे मराठी, गुजराती, बगाली वगैरा सीखने मे तकलीफ ही क्या हो सकती है? कन्नड, तमिल, तेलुगू और मलयालमका भी मेरा तो यही तजरवा है। इनमे भी सस्कृतके और सस्कृतसे निकले हुए काफी शब्द भरे पडे है। जब हममे अपनी मादरी जबान या मातृभाषाके लिए सच्ची मुहब्बत पैदा हो जायेगी तो हम इन तमाम भाषाओको बडी आसानीसे सीख सकेंगे। रही बात उर्दूकी, सो वह भी आसानीके साथ सीखी जा सकती है। लेकिन वदकिस्मतीसे उर्दूके आलिम यानी विद्वान् इधर उसमे अरबी और फारसीके शब्द ठूंस-ठूंसकर भरने लगे है—उसी तरह, जिस तरह हिन्दीके विद्वान्

हिन्दीमें संस्कृत शब्द भर रहे हैं। नतीजा उसका यह होता है कि जब मुझ-जैसे आदमीके सामने कोई लखनवी तर्जकी उर्दू बोलने लगता है, तो सिवा बोलनेवाले का मुँह ताकने के और कोई चारा नहीं रह जाता।

एक बात और। पश्चिमके हर-एक विश्वविद्यालयकी अपनी एक-न-एक विशेषता होती है। कैम्ब्रिज और आक्सफर्डको ही लीजिए। इन विश्वविद्यालयोंको इस बातका नाज है कि उनके हर-एक विद्यार्थीपर उनकी अपनी विशेषताकी छाप इस तरह लगी रहती है कि वे फौरन पहचाने जा सकते हैं। हमारे देशके विश्वविद्यालयोकी अपनी ऐसी कोई विशेषता होती ही नही। वे तो पश्चिमी विश्वविद्यालयोंकी एक निस्तेज और निष्प्राण नकल-भर हैं। अगर हम उनको पश्चिमी सभ्यताका सिर्फ सोख्ता या स्याही-सोख कहें, तो शायद वाजिब होगा। आपके इस विश्वविद्यालयके बारेमे अक्सर यह कहा जाता है कि यहाँ शिल्प-शिक्षा और यन्त्र-शिक्षाका यानी इंजीनियरिंग और टैक्नोलॉजीका देश-भर में सबसे ज्यादा विकास हुआ है, और इनकी शिक्षाका अच्छा प्रबन्ध है। लेकिन इसे मैं यहाँकी विशेषता मानने को तैयार नही। तो फिर इसकी विशेषता क्या हो? मैं इसकी एक मिसाल आपके सामने रखना चाहता हूँ। यहाँ जो इतने हिन्दू विद्यार्थी हैं, उनमें से कितनों ने मुसलमान विद्यार्थियोंको अपनाया है? अलीगढके कितने छात्रोंको आप अपनी ओर खींच सके हैं? दरअसल आपके दिलमें तो यह भावना पैदा होनी चाहिए कि आप तमाम मुसलमान विद्यार्थियोको यहाँ बुलायेंगे, और उन्हें अपनायेंगे।

इसमें शक नहीं कि आपके विश्वविद्यालयको काफी धन मिल गया है, और जबतक मालवीयजी महाराज हैं, आगे भी मिलता रहेगा, लेकिन मैंने जो-कुछ कहा है, वह रुपयेका खेल नहीं। अकेला रुपया सब काम नहीं कर सकता। हिन्दू विश्वविद्यालयसे मैं विशेष आशा तो इस बातकी रखूँगा कि यहाँवाले इस देशमें बसे हुए सभी लोगोंको हिन्दुस्तानी समझें, और अपने मुसलमान भाइयोंको अपनाने में किसीसे पीछे न रहें। अगर वे आपके पास न आयें, तो आप उनके पास जाकर उन्हें अपनाइए। अगर इसमें हम नाकामयाब भी हुए तो क्या हुआ? लोकमान्य तिलकके हिसाबसे हमारी सभ्यता दस हजार बरस पुरानी है। बादके कई पुरातत्त्वशास्त्रियोंने उसे इससे भी पुरानी बताया है। इस सभ्यतामें अहिंसाको परम धर्म माना गया है। चुनाँचे इसका कमसे-कम एक नतीजा तो यह होना चाहिए कि हम किसीको अपना दुश्मन न समझें। वेदोंके समयसे हमारी यह सभ्यता चली आ रही है। जिस तरह गंगाजीमें अनेक नदियाँ आकर मिली हैं, उसी तरह इस देशी संस्कृति-गंगामें भी अनेक संस्कृति-रूपी सहायक नदियाँ आकर मिली हैं। यदि इन सबका कोई सन्देश या पैगाम हमारे लिए हो सकता है तो यही कि हम सारी दुनियाको अपनायें और किसीको अपना दुश्मन न समझें। मैं ईश्वरसे प्रार्थना करता हूँ कि वह हिन्दू विश्वविद्यालयको यह सब करने की शक्ति दे। यही इसकी विशेषता हो सकती है। सिर्फ अंग्रेजी सीखने में यह काम नहीं हो पायेगा। इसके लिए तो हमें अपने प्राचीन ग्रन्थों और धर्मशास्त्रोंका श्रद्धापूर्वक यथार्थ अध्ययन करना होगा, और यह अध्ययन हम मूल ग्रन्थोंके सहारे ही कर सकते हैं।

अन्तमे एक बात मुझे और कहनी है। आप लोग रहते तो महलोमे है, क्योकि मालवीयजी महाराजने आपके लिए ये महलो-जैसे छात्रालय वगैरा बनवा दिये है, पर इसका यह मतलब नही कि आप महलोमें रहने के आदी बन जाये। आप मालवीयजी महाराजके घर जाइए और देखिए, वहाँ आपको इनमे से कोई चीज न मिलेगी — न ठाठ-बाट होगा, न साजो-सामान और न किसी तरहका कोई दिखावा। उनसे आप सादगी और गरीबीका पाठ सीखिए। आप यह कभी न भूलिए कि हिन्दुस्तान एक गरीब देश है और आप गरीब माँ-बापकी सन्तान है। उनकी मेहनतका पैसा यो ऐशोआराममें बरबाद करने का आपको क्या हक है? ईश्वर आपको चिरजीवी करे और सद्‌बुद्धि दे कि जिससे आप मालवीयजी महाराजकी त्यागशीलता, आध्यात्मिकता और सादगीसे अपने जीवनको रँग सकें और आज जो-कुछ मैने आपसे कहा है, उसपर समझदारीके साथ अमल कर सके।

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय रजत जयन्ती समारोह, पृ० ४१-४७

३१९. बातचीत : कांग्रेसी कार्यकर्त्ताओंसे[1]

बनारस
२२ जनवरी, १९४२

प्र० : आपका अन्तिम लक्ष्य क्या है? आप क्या चाहते है — कांग्रेस आपके सिद्धान्तोंको स्वीकार कर ले यह अथवा यह कि वह अपना लक्ष्य प्राप्त करे?

उ० कांग्रेसके सामने मैंने जो भी योजना और कार्यक्रम रखा है वह स्वतन्त्रताके लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए ही रखा है। सत्य और अहिंसा मेरे लिए सिद्धान्त-रूप है। आप चाहें तो इन्हें मेरा धर्म भी कह सकते है। लेकिन मेरा लक्ष्य कांग्रेसके माध्यमसे उस धर्मका प्रचार करना नही रहा है। कांग्रेसके सामने उन्हे एक कार्य-साधक उपायके रूपमें — एक राजनीतिक लक्ष्यकी प्राप्तिके लिए राजनीतिक उपायकी तरह — रखा गया है। यही मैंने दक्षिण आफ्रिकामे किया था। अगर सचाई इससे भिन्न होती तो आज मै राजनीतिक नेता न रहकर धर्मगुरुके आसनपर जा बैठता। जब जरूरी लगे तब राजनीतिक तरीकेमे परिवर्तन किया जा सकता है, लेकिन वैसे परिवर्तनके पीछे ईमानदारी और ठीक विचार होना चाहिए। लेकिन ऐसा नही होना चाहिए कि वास्तवमे किसी तरीकेको छोड देने के बाद भी कोई उसी तरीकेपर कायम रहने का पाखण्ड करे। यह तो स्वय अपनेको और दुनियाको धोखा देना होगा।

प्र० : अगले छः महीने या साल-भरकी कैसी तसवीर आपके मनमें है, इसकी थोड़ी झलक हम पाना चाहेगे। आपने अकसर कहा है कि यह लड़ाई ऐसी होगी कि

१. महादेव देसाईके लेख "बनारस नोट्स-२" (बनारसकी टिप्पणियाँ-२) से उद्धृत। इस लेखमें दो बैठकोंकी कार्यवाहियोंका विवरण दिया गया है। पहली बैठक थी सयुक्त प्रान्त प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी कार्यकारिणीकी और दूसरी स्वय प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी।

जिसमें फैसला होकर रहेगा, और यह कि यह आपकी आखिरी लडाई होगी, जो तबतक चलेगी जबतक कि लक्ष्य प्राप्त नहीं हो जायेगा। आपकी कल्पनाके अनुसार भावी घटनाक्रमका रूप मोटे तौरपर क्या हो सकता है?

उ० यह प्रश्न बडा अच्छा है और कठिन भी। यह बात नही कि मेरे दिमागमे बात स्पष्ट नही है, लेकिन यह प्रश्न हमे अटकल-अनुमानके धरातलपर ले जाता है। मै चीजो और घटनाओकी प्रतिक्रिया अपने ऊपर होने देता हूँ, यद्यपि मैं यह स्वीकार करता हूँ कि मैं हर चीज वैसे नही समझ पाता जैसे जवाहरलाल अपने अन्तर्राष्ट्रीय मामलोंके अध्ययनकी सहायतासे समझ लेते है। जवाहरलालको पूरा विश्वास है कि ब्रिटिश साम्राज्य समाप्त हो चुका है। हम सबकी कामना है कि वह समाप्त हो जाये, लेकिन मैं नही समझता कि वह समाप्त हो चुका है। हमे मालूम है कि ब्रिटेनवाले बडे प्रबल योद्धा है, हम जानते है कि ब्रिटेनके हर घरके लिए साम्राज्यका — विशेषकर भारतका — क्या मतलब और महत्त्व है, और इसलिए वे लोग कभी भी "छोटे-इग्लैण्ड-वासी" बनने को तैयार नही होगे। श्री चर्चिलने कहा है कि हम इग्लैंण्डवासी "मिश्रीकी डलियाँ" नही है और उद्धतताका उत्तर उद्धततासे दे सकते है। इसलिए साम्राज्यके समाप्त होने मे तो अभी बहुत समय लगेगा। लेकिन इसमे कोई सन्देह नही कि साम्राज्यका अन्त निकट आ रहा है और जवाहरलालकी इस बातमे बहुत सचाई है कि भले ही हम युद्धको रोकने के लिए कुछ नही कर पाये, लेकिन निश्चय ही हम ऐसी शान्तिको रोकने के लिए बहुत-कुछ करेगे जिसमे हमारी कोई आवाज न हो। यही बात हर कांग्रेसीको याद रखनी है। इसलिए हमे जाग्रत और सक्रिय रहना है। यदि हम हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहे तो हमारे सिर ऐसी शान्ति थोप दी जा सकती है जो हमारे लिए अवाछनीय हो।

मै अपनी इस बातपर अब भी कायम हूँ कि यह मेरी आखिरी लडाई है, लेकिन हमे अपना कार्यक्रम ताजे घटनाक्रमके कारण बदल देना पडा है, क्योकि युद्ध हमारे दरवाजेपर आ पहुँचा है। कार्यक्रमके स्थगनका मेरे काग्रेसके अधिकृत नेतृत्वसे अलग होने से कोई सम्बन्ध नही था। अगर मेरा नेतृत्व कायम रहता तो भी मैं आज जवाहरलालसे फिर जेल जाने को कैसे कहता? बेशक, हमने जो काम अब अपने लिए तय किया है उसे करने मे अगर रुकावट डाली गई तो वे फिर जेल जायेगे। लेकिन घटनाएँ इतनी तेजीसे घटी है कि पहले हमे इसका कोई अनुमान ही नही था कि क्या-कुछ होनेवाला है। तब फिर मै साल-भर या छ महीने भी आगेकी बात कैसे कह सकता हूँ? मुझे इसमे कोई सन्देह नही है कि हम स्वतन्त्रताकी ओर तेजीसे बढ रहे है। हमारे सामने जो कार्यक्रम है उसके बारेमे भी कोई सन्देह नही है। किसी भी काग्रेसीको चार आनेका चन्दा-भर देकर सन्तुष्ट नही हो जाना है। उसे चौबीसो घटे सक्रिय रहना है। केवल वस्त्र-उत्पादनका ठोस कार्यक्रम ही हमारी सारी शक्तिको खपा देने के लिए पर्याप्त है। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमे ४००० विद्यार्थी है। क्या वे सब प्रति-दिन घटा-भर सूत कातेगे? कताईकी बात मै इसलिए कर रहा हूँ कि यह चीज मुझे सबसे अधिक प्रिय है। लेकिन वैसे तो करने को सैकडो

काम है। क्या ग्रामवासियोंके पास खाने की पर्याप्त सामग्री है? क्या उनके पास अपनेको कड़ाकेकी इस सर्दीसे बचाने के लिए पर्याप्त वस्त्र हैं? ये सवाल मेरे मनमें बार-बार आते हैं। भूखोंको खिलाने और नंगोंके तन ढँकने तथा जरूरतपर आम तौरपर जनसाधारणकी सेवा करने की हमारी क्षमतापर ही शान्तिको, वह जब भी स्थापित हो, वांछित दिशामें प्रभावित करने की हमारी सामर्थ्य निर्भर है। जो बात मैंने कही है वह सभी दलोंपर लागू होती है। जो भी इस कामको सबसे अच्छी तरह करेगा उसका अस्तित्व कायम रहेगा और उसकी आवाजमें असर होगा।

प्र० : क्या आप मानते हैं कि बड़ी शक्तियाँ मनचाहे ढंगकी सन्धि नहीं कर सकती हैं?

उ० हाँ, मैं ऐसा ही मानता हूँ। गुप्त सन्धियोंके दिन लद चुके हैं, ऐसा मैं समझता हूँ। यदि हम अपना आचरण ठीक रखें तो कमसे-कम जहाँतक खुद हमारे हितोंका सम्बन्ध है हमारी आवाज निर्णायक हो सकती है। लेकिन ये बातें जवाहरलाल ज्यादा अच्छी तरह समझा सकते हैं। मैं इतिहासका — यहाँतक कि संसारकी समकालीन घटनाओंका भी — अध्येता नहीं हूँ।

प्र० : एक समय तो आपने बारडोली प्रस्तावपर मत-विभाजन करवा देने का निश्चय किया था, फिर बादमें आपने अ० भा० कां० कमेटीके सदस्योंको उसका समर्थन करने की सलाह क्यों दी? अ० भा० कां० कमेटीके अधिवेशनके बाद राजाजी ने जो भाषण दिये वे बम्बई प्रस्तावके विरुद्ध हैं, और समझदारीका तकाजा भी यही है कि मरणासन्न साम्राज्यके साथ सहयोग नहीं किया जाना चाहिए।

उ० यदि मैं एक कानूनी शब्दका प्रयोग करूँ तो मेरी समझसे तो आपके लिए यह प्रश्न पूछना 'वर्जित' है। लेकिन जब आपने पूछ ही लिया है और इसमें छिपाने की भी कोई बात नहीं है तब मैं इसका उत्तर देने में कोई हर्ज नहीं देखता। अगर आपने ध्यानसे सुना हो तो समझ जाइएगा कि इसका उत्तर तो मैंने वास्तवमें अ० भा० का० कमेटीके समक्ष दिये अपने भाषणमें[1] ही दे दिया था। खैर, तो आपको बता दूँ कि हालाँकि मैं वयसे वृद्ध हो गया हूँ, किन्तु मेरी मानसिक शक्ति क्षीण होती जा रही हो, ऐसी बात नहीं है। बल्कि वह तो सतत विकासमान है और मैंने जो मत-विभाजन न कराने का निर्णय लिया वह इस बातका द्योतक है कि मेरी अहिंसाकी परिकल्पना आज भी विकासशील या वर्धमान है।[2]

महात्मा गांधीने कहा कि बारडोली निर्णयके बाद जब मैंने इस प्रश्नपर अपना रवैया स्पष्ट किया उसके बाद मुझे लगा कि कार्य-समिति तो कांग्रेसियोंके एक बहुत बड़े बहुमतका प्रतिनिधित्व करती है और चूँकि उसके अधिकांश सदस्य अहिंसाके सम्बन्धमें मेरा पूरा साथ देने को तैयार नहीं हैं, इसलिए अभी मामलेका

१. देखिए पृ० २४३-५३।
२. आगेका अनुच्छेद नेशनल हेरल्डसे लिया गया है।

आखिरी फैसला करवाना अनुचित होगा, क्योंकि मुझे पूरा विश्वास था कि अगर मैं इस प्रश्नके मतदान द्वारा निबटाये जानेका आग्रह रखूँ तो अ० भा० कां० कमेटीके बहुत-से सदस्य, शायद अपने हृदयकी आवाजके विपरीत, मेरे पक्षमें मत देंगे। ऐसा फैसला तो स्पष्टतः वास्तविक स्थितिको प्रतिबिम्बित करनेवाला नहीं होता। उससे बहुत नुकसान होता। इसलिए मैंने यह फैसला किया कि मैं लोगोंसे कार्य-समितिके प्रस्तावका समर्थन करनेके लिए ही कहूँ। गलत धारणा लेकर चलने पर सही परिणाम पर कभी नहीं पहुँचा जा सकता।[1]

सो मत-विभाजन करवाना मुझे एक प्रकारकी हिंसा-जैसा लगा। यदि अ० भा० का० कमेटीका प्रत्येक सदस्य पक्का राजनीतिक अहिंसावादी होता तो बात अलग होती। लेकिन मुझे मालूम था कि स्थिति ऐसी नही है। बारडोली प्रस्ताव काग्रेसके मानसको बिलकुल ठीक-ठीक प्रतिबिम्बित करनेवाला था। ऐसे मामलोमे अल्पमत और बहुमतका कोई महत्त्व नही होता। और फिर पूर्ण अहिंसावादियोको अपनी राहपर स्वेच्छानुसार चाहे जितनी दूरतक चलने से रोकनेवाली कोई चीज नही थी।

सहयोगका प्रसग आने की कोई सम्भावना हो तो भी वह बहुत दूरस्थ ही है। जबतक वह स्थिति नही आती तबतक तो सबको अहिंसाकी दृष्टिसे ही काम करना है। सहयोगका प्रसग आनेपर पूर्णतावादी लोग चाहे तो कागेससे अलग हो सकते है। सच तो यह है कि वैसी स्थिति आने पर हम फिर आपसमे मिल-बैठकर इस प्रश्नका निर्णय सदस्योके मत लेकर कर सकते है।

प्र० : उपद्रव आदिके समय आततायियोंसे अपनी रक्षा करनेके लिए हथियारोंका प्रयोग उचित होगा या अनुचित?

उ० . इसका उत्तर मै पहले भी दे चुका हूँ और काग्रेस भी दे चुकी है। और हमारे प्रयोजनके लिए आततायी शब्दका प्रयोग ठीक नही है और फिर यह मत पूछिए कि क्या उचित है और क्या अनुचित। मुझसे पूछिएगा तो मै तो कहूँगा कि अनुचित ही है। अगर आप अहिसावादी है तो हथियारोका सहारा मत लीजिए। यदि आप बहादुरोकी अहिंसासे काम नही ले सकते तो फिर जैसे भी सूझे वैसे अपनी रक्षा आप कर सकते है। कानूनने हरएकको डाकूसे आत्म-रक्षाका अधिकार दिया है और काग्रेस उस कानूनी अधिकारको छीन नही रही है। लेकिन दगो या साम्प्रदायिक उपद्रवोके समय अपनेको काग्रेसी बतानेवालोको अहिसक रीतिसे काम लेना है। काग्रेसके प्रस्तावमे ऐसा ही निहित है। लेकिन अगर ऐसे उपद्रवके अवसरपर भी साहस आपका साथ छोड दे और आप बल-प्रयोगपर उतर आये तो भी काग्रेस आपकी निन्दा नही करेगी, जिसका सीधा-सादा कारण यह है कि उसका इरादा कभी भी कायरताको बढावा देने का नही रहा है।

प्र० : खबर है, आपने खादी भण्डारोंको सरकारके हाथों कम्बल बेचने की अनुमति दे दी है। क्या यह युद्ध-प्रयत्नमें सहयोग करना नहीं है?

१. यह वाक्य हिन्दूसे लिया गया है।

उ० · वेशक, मैंने अनुमति दी। मेरे लिए यह पूछना उचित नही था कि कम्बल सिपाहियोंके उपयोगके लिए है अथवा अन्य लोगोंके लिए। यह चीज आग्नेय अस्त्र या तलवार अथवा विष वेचने से भिन्न है। ऐसे मामलोमे विक्रेताको यह पूछना पडता है कि उस अस्त्रका उपयोग किस प्रयोजनके लिए करना है और औषध-विक्रेता को डाक्टरका नुस्खा माँगना पडता है। इसके विपरीत, चावल वेचनेवाला न यह पूछेगा कि चावल कौन खायेगा और न यह पूछना उसका कर्त्तव्य ही है।[1]

यह स्वीकार करते हुए कि दोनों मामलोंमें भेदकी रेखा बहुत क्षीण है, महात्मा गांधीने कहा कि मेरे दृष्टिकोणसे तो किसी वस्तुकी आपूर्ति करनेवालों के लिए मुख्य विचारणीय वस्तु यह है कि उस वस्तुका उपयोग किस प्रकार किया जाना है। वेशक, इस मामलेमें मेरा विचार आवश्यक तौरपर वही नहीं है जो कांग्रेसका है और कांग्रेसियोंको इस बातका पूरा अधिकार है कि सैनिक जिस हत्या-व्यापारमें लगा रहता है उसका समर्थन किये विना वे इस चीजपर आपत्ति करे। यह भी तो माना जा सकता है कि जो कम्बल सरकारके हाथों बेचे जाते हैं वे सैनिकोंको कड़ाकेकी सर्दीसे बचानेके काम आयेंगे — खासकर उस हालतमें जब कि वे लड़ाईमें विकलांग अथवा बुरी तरह घायल हो गये हो। कम्बलोंकी आपूर्तिके पीछे मानव-दयाका दृष्टिकोण मौजूद है और इसे युद्ध-प्रयत्नमें सहयोग बताकर इसपर आपत्ति नहीं की जा सकती।

लेकिन आप इस विषयमे मुझसे आगे भी जा सकते हैं। अगर आप समझते हो कि मैंने गलती की है तो आपको मेरी निन्दा करने का अधिकार है। अगर आप यह मानते हो कि किसी अहिंसक व्यक्तिको सिपाहियोंके हाथो चावल या कम्बल नही वेचने चाहिए तो आपको अहिंसाकी ऐसी व्याख्या करने का पूरा हक है। खुद मैं तो रक्त-रंजित हाथ लेकर आनेवाले सिपाहीको भी भोजन और पानी देने मे कोई सकोच नही करूँगा। मेरी मानव-दयाकी भावना मुझे इससे भिन्न आचरण नही करने देगी।

इसके वाद नकली खादीकी चर्चा छिड़ी तो गांधीजी ने कहा:

वहुत-कुछ तो सतत जागरूक और समझदारी-भरे लोकमतपर निर्भर है। यदि आम लोग इस तरहकी खादीका प्रसार रोकने का निश्चय कर ले तो वे यह काम आसानीसे कर सकते हैं। लेकिन हम अवतक वह गुण अपने अन्दर विकसित नही कर पाये है जिसे लॉर्ड विलिंग्डन 'नही' कहने का गुण कहते थे। खादीमें रुचि रखनेवाले सब लोग अ० भा० च० सघके साझीदार है और इस कामको हाथमें लेना उनका कर्त्तव्य है। भूखोको खिलाना और नगोंके तन ढँकना हमारा तात्कालिक कार्यक्रम है, और इस कार्यक्रमको पूरा करने मे आप सवको प्रभावकारी योग देना है। अगर आप सब ऐसा करे तो नकली खादीका सवाल ही नही उठे। किसी भी कांग्रेसीको नकली खादीका व्यापार नही करना है।[2]

१ आगेका अनुच्छेद नेशनल हेरल्डसे लिया गया है।
२. अगला अनुच्छेद नेशनल हेरल्डसे लिया गया है।

कांग्रेसियोंके अपना ध्यान खादी-कार्यपर केन्द्रित करनेके महत्त्वपर जोर देते हुए महात्मा गांधीने कहा कि कांग्रेसी कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमसे प्रतिबद्ध हैं और खादीकी प्रवृत्ति उस कार्यक्रमका सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है, इसलिए निकट भविष्यमें भारतीयोंकी कपड़ेकी आवश्यकता पूरी करने की जिम्मेदारी कांग्रेसियोंके सिर ही आ रही है, और इस जिम्मेदारीको निभानेकी उनकी क्षमताकी कसौटी जल्दी ही होनेवाली है। भारतीय मिल-मालिकोंसे पूछताछ करने पर मुझे पता चला है कि कपड़ेका भण्डार बहुत सीमित है और वह बड़ी तेजीसे छीजता जा रहा है। जो भण्डार है भी तो उसका उपयोग सट्टेबाज लोग अपने लाभके लिए कर रहे हैं। वह दिन बहुत दूर नहीं है जब केवल आम लोग ही नहीं, बल्कि सरकार भी अधिकाधिक खादीके लिए मेरे दरवाजेपर दस्तक देगी। वह समय बड़ी तेजीसे आ रहा है। मुझे उम्मीद है, हमें यह देखने को नहीं मिलेगा कि कांग्रेसी इस स्थितिका सामना करने के लिए तैयार नहीं हैं।

आखिरी सवाल हमलों और त्रास तथा इनसे पैदा होनेवाली गड़बड़ीके समय कांग्रेसियोंके कर्त्तव्यके बारेमें था।

आपात् स्थिति तो मौजूद ही है। डकैतियोका बोलबाला है और अगर काग्रेस समय रहते अपनी क्षमताका परिचय नही देती तो स्थिति हमारे नियत्रण से बाहर चली जायेगी। शान्ति-सेनाकी जैसी आवश्यकता आज है वैसी पहले कभी नही थी।[1] चाहे आप हिंसक पद्धति अपनाये या अहिंसक, मरने का खतरा तो है ही। फिर क्यो न आप अपनेको अहिंसक रीतिसे मरने के लिए तैयार करे? इससे आपको गृह-युद्ध होने पर उसका भी प्रतिरोध प्रभावकारी ढगसे करने की सामर्थ्य प्राप्त होगी। जहाँतक हवाई हमलोसे घायल लोगोका सम्बन्ध है, उससे सम्बन्धित अधिकाश काम आपके ही सिर आयेगा। आपको हवाई हमला प्रतिरक्षा सगठनमे शामिल नही होना है, जिसका सीधा-सा कारण यह है कि उसमे शामिल होकर आप उस यत्रके पुर्जे बन जायेंगे जिसपर आपका कोई नियत्रण नही है और अन्तमे आप युद्ध-प्रयत्नमे सक्रिय योग देनेवाले भी बन जायेंगे।[2] लेकिन यह निश्चित है कि सरकार सब जगह सहायता नही दे पायेगी। क्या वह रगूनमे ऐसा कर पाई? हमे इस बातके बडे करुणाजनक विवरण मिले है कि रगूनकी सडकोपर घायल और मृत लोग किस प्रकार लावारिस पडे हुए थे।

१. **नेशनल हेरल्डमें** यहाँ इतना और जोड़ा गया है: "इस सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि खतरा भविष्यमें नहीं आनेवाला है, वह तो आज ही मौजूद है। यह बताते हुए कि उनके शान्ति-सेनाके गठनके सुझावका औचित्य और उपयोगिता पूर्ववत् कायम है, गाधीजी ने कहा कि काग्रेसियोंको इसमें सन्देह था कि यह सुझाव मैं पूरी गम्भीरतासे दे रहा हूँ और उन्होंने इसके फलितार्थों और इसकी सम्भावनाओंपर पूरी तरह विचार किये बिना इसे अव्यवहार्य बताकर अस्वीकार कर दिया।"

२. यहाँ **नेशनल हेरल्डमें** इतना और जुड़ा हुआ है: "जिसके सम्बन्धमें काग्रेसकी स्थिति पहले ही स्पष्ट की जा चुकी है।"

इसलिए जहाँ-कहीं भी सरकारी कर्मचारी इस काममें विफल होंगे वहाँ हमारे लिए काफी काम होगा। हमें इसके लिए ऐसे स्वयंसेवक तैयार करने हैं जो खतरा उठाने और पहल करके काम करने को तत्पर हों। हमें घायलों और मृतकोंको यथास्थान पहुँचाना पड़ सकता है, खाली घरोंकी देखभालकी जिम्मेदारी लेनी पड़ सकती है और ऐसे ही अन्य बहुत-से दायित्वोंका निर्वाह करना पड़ सकता है। इस काम में अधिकारीगण जहाँ भी आपका सहयोग स्वीकार करें वहाँ आप उनसे हार्दिक सहयोग करें।[1]

महात्मा गांधीने कहा कि . . . स्वयंसेवक दल तैयार करने और संकटकी स्थितिमें लोगोंको राहत पहुँचाने से रोकनेवाली कोई चीज तो नहीं है। जरूरत पड़ने पर आप सरकारी संगठनके सहयोगसे भी यह काम कर सकते हैं और जहाँ सम्भव हो वहाँ ऐसे सगठनके प्रतिकूल रुखके बावजूद राहत-कार्य कर सकते हैं। इसमें आपको परिणामोंकी परवाह नहीं करनी चाहिए। उदाहरणके लिए मान लीजिए, किसी हवाई हमलेके बाद कुछ लोग किसी ढहते या जलते हुए घरमें घिरे पाये जाते हैं। उस समय उन लोगोंको घरसे बाहर निकालना और इसके लिए घरको जिधरसे तोड़ना जरूरी हो उधरसे तोड़कर रास्ता बनाना कांग्रेसियोंका कर्त्तव्य है, अन्यथा पूरे घरके ढहकर गिर जाने से बहुत-से लोग मारे जा सकते हैं। इस कामको उन्हें आनन-फानन करना चाहिए, सरकारी सगठनकी सहायता या मंजूरी अथवा सहयोग करने के अनुरोधके आने की प्रतीक्षा करते हुए बैठे नहीं रहना चाहिए।

इस चर्चामें महात्मा गांधीकी विनोदी वृत्ति पूरे जोरपर थी और उनकी विनोदप्रियताके शिकार बने कांग्रेसके महामन्त्री जे० बी० कृपलानी। महात्मा गांधीने कहा :

कृपलानी उदास रहते थे, तो पहले मैं यह सोचता था कि ऐसा इसलिए है कि वे कुँवारे हैं। लेकिन अब जब कि उन्होंने विवाह कर लिया है और उन्हें बहुत अच्छी जीवन-संगिनी मिल गई है तब भी उनपर उदासीके दौरे पड़ते ही रहते हैं।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-२-१९४२, और नेशनल हेरल्ड, २४-१-१९४२

३२०. हिन्दुस्तानी

(क) अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी और कार्य-समितिकी कार्यवाहियाँ आम तौरपर हिन्दुस्तानीमें हुआ करेंगी। अगर कोई हिन्दुस्तानीमें न बोल सके या जब अध्यक्ष अनुमति दें तब अंग्रेजी या किसी प्रान्तीय भाषाका इस्तेमाल किया जा सकता है।

१. शेष अंश नेशनल हेरल्डसे लिया गया है।

(ख) प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी कार्यवाहियाँ आम तौरपर सम्बन्धित प्रान्तकी भाषामें हुआ करेगी। हिन्दुस्तानीका उपयोग भी किया जा सकता है।

—कांग्रेस संविधानका अनुच्छेद २५

काग्रेसने इस प्रस्तावपर किसी खास हदतक अमल नही किया है। यह बड़े दु:खकी बात है। इसमे कसूर काग्रेसजनोका ही है। वे हिन्दुस्तानी सीखने की तकलीफ गवारा नही करते। मालूम होता है कि अग्रेज विद्वानोकी टक्करकी अग्रेजी सीखने के असम्भव प्रयत्नमे भाषाएँ सीखने की उनकी सारी शक्ति चुक जाती है। इसका नतीजा बहुत ही दर्दनाक हुआ है। हमारी प्रान्तीय भाषाएँ निस्तेज और कगाल बन गई हैं और राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानी स्थान-च्युत हो गई है। इसका एक नतीजा यह भी हुआ है कि आज देशके लाखो-करोडो लोगोके साथ अग्रेजी शिक्षाप्राप्त लोगोका कोई सम्पर्क नही रह गया है, जब कि पढे-लिखे होने के कारण यही मुट्ठी-भर लोग कुदरती तौरपर आम जनताके नेता हैं। सरकारी स्कूलोको छोडकर देशमे शिक्षाका और कोई खास बन्दोबस्त नही है। अग्रेजीकी जगह हिन्दुस्तानीको प्रतिष्ठित करने का महा कठिन काम काग्रेसको ही करना है। इस प्रस्तावके पास किये जाने के साथ ही उसे इसपर अमल करने के लिए एक खास विभाग खोल लेना चाहिए था, और सच तो यह है कि वह चाहे तो आज भी ऐसा विभाग खोल सकती है। लेकिन अगर वह नही खोलती, तो उन काग्रेसजनो और दूसरे लोगोको, जिन्हें राष्ट्रभाषाके निर्माणमे दिलचस्पी है, आगे बढकर इस कामको उठा लेना चाहिए।

लेकिन यह हिन्दुस्तानी है क्या चीज? उर्दू और हिन्दीसे अलग इस नामकी कोई स्वतन्त्र भाषा नही है। कभी-कभी उर्दूको भी हिन्दुस्तानी कहा गया है। तो क्या काग्रेसने अपने विधानकी उक्त धारामे उर्दूको ही हिन्दुस्तानी माना है? क्या उसमे अधिक प्रचलित हिन्दीका कोई स्थान नही? यह तो अर्थका अनर्थ करना होगा। स्पष्ट ही इसका मतलब हिन्दी और उर्दूका वैज्ञानिक और सुन्दर मिश्रण था और इसका एक यही मतलब हो भी सकता था। ऐसी कोई भाषा पहलेसे लिखित रूपमे मौजूद नही है। लेकिन उत्तर भारतमे आज भी करोडो अनपढ हिन्दुओ और मुसलमानोकी भाषा यही है। चूँकि यह लिखी नही जाती, इसलिए अपूर्ण है, और जो लिखी जाती है उसकी दो अलग-अलग धाराएँ बन गई है, जो दिन-ब-दिन एक-दूसरीसे दूर हटती जा रही हैं। इसलिए हिन्दुस्तानीका मतलब हिन्दी और उर्दू है। अतएव हिन्दी भी अपनेको हिन्दुस्तानी कह सकती है, बशर्ते कि वह उर्दूका बहिष्कार न करे, बल्कि अपनी विशेषता और मिठासको कायम रखते हुए उर्दूको अपनेमे वैज्ञानिक रीतिसे अधिकसे-अधिक खपाने की कोशिश करे। उर्दूको भी ऐसा ही करना चाहिए। आज हिन्दुस्तानीका अपना ऐसा कोई सगठन नही है जो एक-दूसरीसे दूर भागती हुई इन दो धाराओको नजदीक लाने और मिलाने की कोशिशमे लगा हो।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन और अजुमन-ए-तरक्की-ए-उर्दू यह पुण्य कार्य कर सकते है। सम्मेलनके साथ मेरा तो सम्बन्ध सन् १९१८[1] मे ही है, जब मुझे उस साल उसके अधिवेशन का सभापतित्व करने के लिए निमन्त्रित किया गया था। उस समय मैंने राष्ट्रभाषा-सम्बन्धी अपने विचार श्रोताओके सामने रखे थे। सन् १९३५ मे जब मै दुबारा उसका सभापति चुना गया[2] तो मेरे समझाने पर सम्मेलनने हिन्दीकी मेरी इस परिभाषाको स्वीकार कर लिया कि हिन्दीसे मतलब उस जबानसे है जिसे उत्तरी भारतके हिन्दू और मुसलमान आम तौरपर बोलते है और जो फारसी या देवनागरी लिपिमें लिखी जाती है। इसका स्वाभाविक नतीजा यह होना चाहिए था कि सम्मेलनके सदस्य इस नई परिभाषाके अनुसार हिन्दीका अपना ज्ञान बढाते और इस तरहका साहित्य तैयार करते जिसे हिन्दू और मुसलमान दोनो पढ सकते। इसके लिए सम्मेलनके सदस्योको सहज ही फारसी लिपि सीखनी पडती। मगर मालूम होता है, उन्होने अपनेको इस गौरवपूर्ण अधिकारसे वचित रखना पसन्द किया है। खैर, अब भी कुछ बिगडा नही है — देर आयद, दुरुस्त आयद। काश! वे अब भी जागें। उन्हे अजुमनकी अनुकूल प्रतिक्रियाकी राह नही देखनी चाहिए। अगर अजुमन भी अपना दायित्व निभाये तो बडी बात होगी। अगर चाहे तो दोनो सस्थाएँ आपसमें मिलकर और एकदिल होकर काम कर सकती है। लेकिन मैंने तो दोनोको अपने-अपने ढगसे अलग-अलग काम करने की बात भी सुझाई है। मै मानता हूँ कि इस तरह जो भी सस्था मेरे बताये ढगपर काम करेगी, वह न सिर्फ उस भाषाको समृद्ध बनायेगी जिसके हितको लेकर वह चल रही है, बल्कि अन्तमे एक ऐसी सयुक्त भाषाका भी निर्माण करेगी जो सारे देशके काम आयेगी।

यह बड़े दुर्भाग्यकी बात है कि आज हिन्दी-उर्दूके प्रश्नने साम्प्रदायिक रूप धारण कर लिया है। झगडेकी यह जड कट सकती है, बशर्ते कि दोनो पक्षोमें से कोई भी पक्ष दूसरे पक्षकी भाषाकी महत्ताको स्वीकार करने और उसमें जितना कुछ लेने लायक है, उसे उदारतापूर्वक लेने को तैयार हो जाये। याद रहे कि जो भाषा अपनी विशेषताकी रक्षा करते हुए दूसरी भाषाओसे खुलकर मदद लेती है, वह अपनी इस उदार नीतिके कारण अग्रेजीकी ही तरह समृद्ध बनेगी।

वर्धा जाते हुए, २३ जनवरी, १९४२

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १-२-१९४२

१. साधन-सूत्रमें '१९१७' है, लेकिन इंदौर-अधिवेशनकी अध्यक्षता गांधीजी ने मार्च १९१८ में की थी। देखिए खण्ड १४, पृ० २७७-८१।

२. यह अधिवेशन भी इंदौरमें ही हुआ था। देखिए खण्ड ६०, पृ० ४८६-९२।

३२१. भाषण : चोखामेला छात्रावासमे[1]

नागपुर
२४ जनवरी, १९४२

गांधीजी ने बोलना आरम्भ किया तो कुछ शोर-गुल होने लगा। तभी एक नौजवान[2] उठ खड़ा हुआ और बोला: "यह कोई साधारण शोर-गुल नहीं है। आप यहाँ आये है, इसका हम विरोध कर रहे है।" गांधीजी ने कहा कि तो आप यहाँ मंचपर आ जाइए और जो-कुछ कहना हो, कहिए। नौजवानको सिर्फ इतना ही कहना था: "हम आपको यहाँ नहीं चाहते। जिन लोगोंने आपको निमन्त्रित किया उन्हें निमन्त्रित करने का कोई अधिकार नहीं था।" इसपर गांधीजी ने उससे पूछा:

लेकिन आपको मेरा यहाँ आना क्यो नही पसन्द है?

इसलिए कि आपने हरिजनोंके लिए कुछ नहीं किया है?

बस इतना ही? कुछ और भी कहना है?

"नहीं, बस इतना ही", यह कहकर कुछ ही देरमें वह वहाँसे चला गया।

विरोध करनेवाले भाईने मुझे बताया है कि जिन लोगोने मुझे आमन्त्रित किया है उन्हे आमन्त्रित करनेका कोई अधिकार नही है। सचाई यह है कि चोखामेला[3] छात्रावासके विद्यार्थी मुझे निमन्त्रित करने वर्धा पहुँचे थे। मैने उनसे अनुरोध किया था कि मुझे बख्श दे, लेकिन बीचमे श्री चतुर्भुज जसानी पड गये। उन्होने कहा कि जिस कामसे आप बनारस जा रहे है वह अगर आपको बहुत प्यारा है तो यह काम आपको शायद उससे भी अधिक प्यारा लगेगा, क्योकि प्रसग एक ऐसी सस्थाकी रजत जयन्तीका है जिसने हरिजन लडकोकी बडी अच्छी सेवा की है। और चूँकि अस्पृश्यता-निवारण मेरे जीवनका उद्देश्य है और इस उद्देश्यसे मैने एक वर्ष पूरे भारत का दौरा किया है[4] इसलिए मैने अपनी सहमति दे दी।

लेकिन अगर यह मान लिया जाये कि उन लोगोको मुझे निमन्त्रित करने का कोई अधिकार नही था तो भी इसमे मेरा क्या दोष था? इन विरोधोसे मुझे कोई नाराजगी नही होती। सवर्ण हिन्दुओके हाथो हरिजन सदियोसे कष्ट भोगते आये

१. महादेव देसाईके "एन अनएक्सपेक्टेड एक्सपीरियंस" (एक अप्रत्याशित अनुभव) शीर्षक लेखसे उद्धृत। छात्रावासकी रजत-जयन्तीके अवसरपर गाधीजी हिन्दुस्तानीमें बोले थे। गाधीजी के सभामें पहुँचने पर कई महार युवकोने उनके विरोधमें नारे लगाये थे।

२. एस० के० मथुरकर

३. महार जातिके एक हरिजन साधु

४. नवम्बर १९३३ से अगस्त १९३४ तक

हैं। इतना कष्ट उन्हें और किसीने नहीं दिया। मैं सवर्णोंमें से ही हूँ और इसलिए उनके इस पापका भागी हूँ। और मैं अपने पापको राई-रत्ती भी कम आँकने का अभ्यस्त नहीं रहा हूँ। मैं उसके लिए प्रायश्चित्त तभी कर सकता हूँ जब अपने तिल-जैसे पापको भी पहाड़-जैसा मानूं। कारण सीधा-सादा है। मनुष्य अपने दोषोंको कभी भी सही परिप्रेक्ष्यमें नहीं देख सकता, और अगर वह सचमुच उन्हें सही परिप्रेक्ष्यमें देखे तो मैं समझता हूँ कि वह कदापि उन दोषोंका बोझ अपने शरीरपर ढोते रहना पसन्द न करे। इसलिए उपाय यही है कि हम अपने दोषोंको बढाकर देखें। और अस्पृश्यताका पाप तो ऐसा कुत्सित है कि इसे जितना बढाकर देखा जाये, कम ही होगा। जिन्हें अस्पृश्यताका कष्ट भोगना पडता है वे इसे मिटानेके प्रयत्नमें लगे लोगोंपर स्वभावत नाराज हो सकते हैं। वे मुझसे कह सकते हैं· 'अस्पृश्यता को मिटानेवाले आप कौन होते हैं? इसे हम खुद अपने बलपर मिटायेंगे।' इस बलका परिचय देनेके दो मार्ग हैं एक तो है परम मार्ग, आत्म-शुद्धिका ईश्वर-प्रदत्त मार्ग। इसका अनुसरण करनेवाला अपने कष्टोंका सारा दोष अपने सिर ले लेता है। दूसरा है प्रतिशोधका मार्ग — आँखके बदले आँख, दाँतके बदले दाँत, मूसाका यह प्रतिशोधका नियम। दूसरा मार्ग भी हमारे लिए एक प्रकारसे स्वाभाविक ही है, क्योंकि हम पशुसे ही मनुष्य बने हैं और हो सकता है, पशुओंके कुछ दोष हममें और भी उग्र रूपमें विद्यमान हों। यह हिटलरी मार्ग है। किसी एक या अनेक यहूदियों ने शायद जर्मनोंके साथ अन्याय किया हो, इसलिए हिटलर मानते हैं कि समस्त यहूदी जातिको निर्मूल कर देना उनका कर्त्तव्य है। जो हरिजन सवर्ण हिन्दुओं या हिन्दू-धर्मका मूलोच्छेद कर देना चाहते हों उनसे मैं कहूँगा कि हिन्दू इसी व्यवहारके पात्र हैं। लेकिन सवर्ण हिन्दुओंका भी तो स्वयं अपने प्रति और अपने धर्मके प्रति कोई कर्त्तव्य है। उन्हें हरिजनोंसे लाठियाँ और पत्थर खाने पडते हैं तो वे खायें। लेकिन वे उनकी सेवाका काम चालू रखें।

अब कोई पूछ सकता है अगर वे हमारी सेवा ग्रहण ही न करें तो हम क्या करें?[१]

हमपर पत्थर बरस रहे हैं तो बरसने दीजिए। हमें शान्त रहना है और इस सभाको सम्पन्न करना है। मैंने कहा था कि मैं यहाँ दस मिनट रुकूँगा, लेकिन अब मुझे जल्दी नहीं है। प्रदर्शनकारियोंको बता दीजिए कि अगर वे अलगसे कोई सभा करना चाहते हों तो मैं उसके लिए रुकनेको तैयार हूँ। मैं उस सभामें बोलूँगा और उन्हें जो-कुछ आरोप लगाने हों उनके उत्तर दूँगा। और आखिर मेरा दोष क्या है? क्या यह कि मैं उनके लिए मर-खप रहा हूँ? क्या यह कि मैं उनकी जेबों तक थोड़े-से पैसे पहुँचाने की कोशिश कर रहा हूँ? या यह कि मैं सनातनियोंसे बराबर कह रहा हूँ कि आपको अपना यह पाप धो देना है? और इन निरीह श्रोताओंपर क्यों पत्थर बरसाये जायें?

१. गांधीजीके इतना बोलते ही पत्थरोंकी बौछार शुरू हो गई। श्रोताओंमें से कुछ लोग जख्मी भी हो गये, जिससे कार्यवाही कुछ देर तक रुकी रही।

वे तो मुझे चोट पहुँचाना चाहते थे, लेकिन वे कर क्या पाये हैं? उन्होंने निरीह श्रोताओंको चोट पहुँचाई है और चोट खानेवालों में दो बच्चे भी हैं। अगर वे खुद मुझे या मुझे निमन्त्रित करनेवालों को सजा देना चाहते थे तो उन्हें सीधे हमारे पास आना चाहिए था। मैं उन्हें बता दूँ कि यह हुल्लड़बाजी तो बहादुरी, मानवता और विनयके बिलकुल खिलाफ है। वे गलत ढंगसे काम कर रहे हैं। इस तरह वे अपने ही उद्देश्यको हानि पहुँचा रहे हैं।

अब दो शब्द यहाँ एकत्र लोगोंसे। यह छात्रावास है और यहाँ रहने-खानेवाले सभी लोग छात्र हैं। आशा है, आपका यहाँ रहना फलप्रद सिद्ध होगा और आपको सच्ची शिक्षा मिल सकेगी। आजके प्रदर्शनको आप अपने लिए एक सबक समझिए। इसपर न आपको क्रोध करना चाहिए और न इससे डरना चाहिए, क्योंकि क्रोध और भय दोनों पाप हैं। मेरी यही कामना है कि यह प्रदर्शन आपको अपने कर्त्तव्य के प्रति जागरूक करे और आपके मानसमें यह परम सत्य अमिट अक्षरोंमें अंकित हो जाये कि सत्यसे ही असत्यका निराकरण हो सकता है, प्रेमसे ही क्रोधका मार्जन हो सकता है, प्रसन्नतासे कष्ट सहने से ही हिंसाका उपचार हो सकता है। यह दिव्य नियम केवल सन्तोंके लिए नहीं, सबके लिए है। इसका पालन करनेवाले भले ही बहुत कम हैं, लेकिन जितने हैं, वे सब इस धरतीके सच्चे लाल हैं, वही समाजको जोड़कर रखते हैं — वे नहीं, जो प्रकाश और सत्यके शत्रु बने हुए हैं।

आपसे मेरा अनुरोध है कि आप प्रदर्शनकारियोंको कोई दण्ड न दें, इतना ही नहीं, बल्कि अपने मनमें उन्हें दण्ड देने का विचारतक न लायें। वे बुरे लोग नहीं हैं। सचाई यह है कि ईश्वर हमें हमारी बुराईका बोध कराने के लिए उनका उपयोग माध्यमोंके रूपमें करता है। इसलिए मेरी यही इच्छा है कि आजका प्रदर्शन आपको शुद्ध बनाये और जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, मैं जानता हूँ कि मुझे तो वह शुद्ध बनायेगा। आत्म-शुद्धिकी कलाका ही नाम विद्या है। अब आपसे मेरा यह अनुरोध है कि उत्तेजना समाप्त हो जानेतक आप यहीं रुके रहें, क्योंकि अगर आप अभी बाहर जायेंगे तो हो सकता है कि उनका क्रोध फिर भड़क उठे। तो उनका क्रोध शान्त होने तक हम सब यहीं रुकें और उसके बाद शान्तिपूर्वक अपने-अपने घर चले जायें। तबतक हम रामधुन गायें या कोई भजन गा सकता हो तो हमें सुनाये। बादमें जब हमें निश्चय हो जायेगा कि वातावरण शान्त हो चुका है तब हम यहाँसे चलेंगे।[1]

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-२-१९४२

१. इसके बाद कृष्णानन्द सोख्ताके साथ मिलकर लोगों ने रामधुन गाई। तत्पश्चात् सभा शान्तिपूर्वक विसर्जित हो गई।

३२२. गुजरातियोंसे[1]

आपने स्वराज्य-यज्ञमें अच्छा हाथ बँटाया है, लेकिन वह अपर्याप्त माना जायेगा। आप चाहें तो धन, शारीरिक श्रम और नित्य विकासोन्मुखी बुद्धिके रूपमें बहुत-कुछ दे सकते हैं।

यह कितने आश्चर्यकी बात है कि गुजरातमें खादीका उत्पादन तो होता है दो लाख रुपयेका और खपत है बारह लाख रुपयेकी खादीकी? भले ही गुजरातमें अन्य प्रान्तोंकी तरह कंगाली न हो, किन्तु इसका यह मतलब थोड़े ही है कि यदि गुजराती चाहें तो अपने उपयोगके लायक आवश्यक खादी खुद पैदा नहीं कर सकते? यदि गुजरातकी जनसंख्या एक करोड़ मान ली जाये तो उसे कमसे-कम तीन करोड़ रुपयेके मिलके कपड़ेकी जरूरत होगी। हमें कमसे-कम इतनी खादी पैदा करनी ही होगी, अर्थात् गजके हिसाबसे १५ करोड़ गज खादी।

वह समय नजदीक आता जा रहा है जब हमें मिलका कपड़ा नहीं मिल सकेगा। आज भी कपड़ेकी तंगी तो है ही। यदि मिलोंपर बम बरसाये जायें या उनमें गोला-बारूद बनने लगे तो क्या होगा? या तो हम सब छोटे-बड़े, गरीब-अमीर, स्त्री-पुरुष कातने लगें तभी शरीरको ढक पायेंगे, अन्यथा नंगे फिरें। इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है। युद्धरत देशोंमें भोजन और वस्त्रकी मात्रा निश्चित कर दी गई है और उससे अधिक किसीको नहीं मिल सकता। जैसे-जैसे लड़ाईकी अवधि बढ़ती जाती है वैसे-वैसे आवश्यक चीजोंकी बरबादी होती जाती है। उनके बदले गोला-बारूदकी मात्रा बढ़ती जाती है, जिसका उत्पादन ही बरबादीके लिए किया जाता है। इस प्रकार लड़ाई दुहरा विनाश करती है।

इच्छा या अनिच्छासे हम इस बवण्डरमें फँसे हुए हैं। लेकिन हम अभी उतनी तंगी महसूस नहीं कर रहे हैं जितनी लड़नेवाले देश कर रहे हैं। किन्तु यदि हम वैसा मौका आने तक हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहे तो हमारी हालत प्यास लगने पर कुआँ खोदनेवालेकी-सी होगी। इसलिए बाढ़ आने के पहले ही हमें बाँध बना लेना चाहिए।

अतएव गुजराती-मात्रसे, जिन तक मेरा यह सन्देश पहुँच सकता है, मैं अनुरोध करता हूँ कि वे जितना दे सकें उतना पैसा और स्वयं जितना सूत कात सकें उतना सूत महागुजरात खादी मण्डल द्वारा निर्धारित स्थानोंपर भेज दें। सूत संग्रह करने के लिए बहुत-से केन्द्र खोले जाने चाहिए, ताकि डाक-खर्च बच सके। आवश्यक खादी पैदा करने की कुंजी घर-घर सूत कातना है। यदि अच्छा सूत

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद **हरिजन**के १-२-१९४२ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।

काता जायेगा तो उसे बुननेवाले भी मिल जायेंगे, हालाँकि मै यह चेतावनी तो दे ही चुका हूँ कि हमे बुननेवाले स्वयसेवकोकी भी आवश्यकता है।

हर काग्रेसीको तत्काल इस काममे लग जाना चाहिए।

सेवाग्राम, २५ जनवरी, १९४२

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १-२-१९४२

३२३. एक दुःखद प्रसंग[1]

सेवाग्रामसे चलते समय सरदार वल्लभभाईने मुझे श्री जेसगभाईके[2] यहाँ डाका पडने का किस्सा सुनाया था। बन्दूकोसे लैस डाकुओने मार-पीट की और लूट-पाटकर भाग गये। यह सुनकर मुझे तो ऐसा लगा मानो मेरा ही घर लुटा हो। मै सोचने लगा कि ऐसे अवसरपर मै क्या करूँगा। सहज ही मनमे यह विचार भी उठा कि ऐसे मौकेपर काग्रेसियोको क्या करना चाहिए। इसके बाद तो विचार-प्रवाह रोके नही रुका और इसलिए उस विचार-प्रवाहने मुझे जकड लिया। गुजरातमें तो काग्रेस ने लगातार एक ही दिशामे काम किया है। गुजरातको सरदार-जैसा सरदार मिला है। इसके बावजूद ऐसी डकैती कैसे सम्भव हो सकी? ऐसी स्थितिमे काग्रेसका असर कहाँतक पडा माना जायेगा? काग्रेसियोके ख़यालमे सब लोग यह मानने लगे हैं कि यदि अग्रेजी शासन आज समाप्त हो जाये तो काग्रेसी शासन चला सकते हैं। किन्तु ऐसी कोई बात नही है। मै गत बीस वर्षोंसे इस दिशामे प्रयत्न करता आ रहा हूँ किन्तु वह प्रयत्न सफल नही हुआ। काग्रेसने स्वय जिस हथियारको स्वीकार किया था उसपर उसने पूरी तरह विश्वास नही किया, इसीलिए काग्रेस अहिंसाका सफल उपयोग केवल निर्बलके हथियारके रूपमे ही कर सकी है। किन्तु शासन तो बलवान ही चला सकता है, इसलिए अहिंसक शासन-व्यवस्था तो वही चला सकता है जिसने अहिंसाको सर्वोपरि बलके रूपमे पहचाना हो। यदि हममे यह बल होता तो हिन्दू-मुस्लिम झगडे न होते, और लुटेरोकी लूट-मार बन्द हो गई होती। कोई कहेगा कि ऐसा बल प्राप्त करने के लिए तो ईसा या बुद्ध होना चाहिए। किन्तु यह ठीक नही है, क्योकि ईसा और बुद्धने राजनीतिमे अहिंसाका प्रयोग नही किया था या यह कहा जा सकता है कि उनके जमानेमें आजकी-सी राजनीति थी ही नही। इसलिए काग्रेसका प्रयोग एक नवीन प्रयोग है। किन्तु काग्रेसवालो ने श्रद्धापूर्वक, ज्ञान-पूर्वक और प्रामाणिकतापूर्वक यह प्रयोग नही किया। यदि उनमे ये तीनो गुण होते तो काग्रेस आज जहाँ पहुँच सकी है उसकी अपेक्षा वह बहुत अधिक ऊँचाईपर पहुँच गई होती।

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद **हरिजन**के १-२-१९४२ के अंकमें प्रकाशित हुआ था।
२. खेड़ा जिलेमें

किन्तु मैं भूतकालको रोना नहीं चाहता। भूतकालका उल्लेख मैं वर्तमानको सुधारने की हदतक ही करना चाहता हूँ। यदि हम अब भी चेत जाये तो बाजी हमारे हाथ रहेगी अन्यथा हम बाजी हार जायेंगे। सत्ता तो बलवानको ही वरेगी, फिर वह बल चाहे शरीरका हो या हृदयका अथवा, यदि हम चौंक न उठे तो कहिए, आत्माका। हृदयबल ही शुद्ध आत्मबल है। अब यदि हम शारीरिक बलसे सत्ता प्राप्त करना चाहें तो पिछले बीस सालसे जो शिक्षा हमने जनताको दी है उस सबको धो-पोंछकर उससे बिलकुल उलटी शिक्षा देने में काफी समय निकल जायेगा। इस सकटपूर्ण घडीमें हम इतना समय नहीं निकाल सकते। आज तो जिसके पास जिस तरह का बल होगा वह उसीका प्रयोग करते हुए सत्ता प्राप्त करने का प्रयत्न करेगा। इसलिए मेरी यह दृढ धारणा है कि यदि कांग्रेस को सत्ता मिलेगी तो वह उसे हृदयबलके द्वारा ही प्राप्त होगी।

इस दिशामे भी नया काम करने लायक समय या साधन हमारे पास नही है। जिसने आजतक अहिंसाका प्रयोग दुर्बलके शस्त्रके रूपमे किया है वह उसका प्रयोग एकाएक सबलके शस्त्रके रूपमें कैसे कर सकेगा? किन्तु इसके बावजूद मुझे लगता है कि तत्काल तो हमारे लिए इसीका प्रयोग करना सम्भव है। यह प्रयोग करने में किसी तरहका खतरा नही है। उसमे असफलता भी सफलताका रूप ले लेती है। क्योंकि इस दिशामे जनता जो कदम उठाना चाहती है, वह भले ही पूरे तौरपर न उठा सके, किन्तु वह गड्ढेमे तो कदापि नही गिरेगी, वह नपुंसक नही मानी जायेगी और न वह नपुंसक बनेगी। इसके विपरीत शारीरिक बलका प्रयोग करने पर वह नपुंसक भी सिद्ध हो सकती है और जो अनेक लोग इस अनजाने मार्गपर चलने का प्रयत्न करेंगे वे मारे भी जा सकते हैं।

इसलिए कांग्रेसियोंको चाहिए कि वे आजसे ही लुटेरे माने जानेवाले उन लोगो को ढूंढ निकाले, उन्हे समझने और समझाने का प्रयत्न करे। ऐसे कार्यकर्त्ता माँगने से नही मिल सकते, किन्तु कांग्रेसियोंको यह जान तो लेना चाहिए कि यह काम जितनी जोखिमका है उतना ही महत्त्वपूर्ण भी है। इसके लिए हजारो लोगोंकी जरूरत नही है, किन्तु कुछकी जरूरत तो है ही।

हमारे सामने दूसरा काम ऐसे लोगोंको तैयार करने का है जो ऐसे उपद्रवके समय लुटेरोका सामना कर सके और उन्हें समझाने और रोकने की कोशिश करते हुए घायल होने एव मरने को भी तैयार हो। यह काम करनेवाले भी अधिक नही हो सकते, किन्तु इस तरहके शान्ति-दल अच्छी सख्यामे तैयार होने चाहिए। अन्यथा अव्यवस्थाका समय आने पर न केवल कांग्रेसकी लाज बचाना मुश्किल हो जायेगा बल्कि आजतक का किया-कराया धूलमे मिल जायेगा।

तीसरा काम, धनिक वर्गके लिए अपने कर्त्तव्यके बारेमे सोचने का है। यदि उन्होंने अपनी सम्पत्तिकी सुरक्षाके लिए पहरेदार आदि रखे तो लूटपाटके समय वे उनके रक्षकके बजाय भक्षक भी बन सकते हैं। अतः धनिक वर्गको या तो शस्त्र-विद्या सीख लेनी चाहिए अथवा अहिंसाकी विद्या। अहिंसाकी विद्या सीखनेवाले के लिए सर्वोत्तम

मन्त्र यह है 'तेन त्यक्तेन भुजीथा.'[१] अर्थात् अपनी सम्पत्तिका त्याग करके उसका उपभोग करना। इसका अर्थ-विस्तार करके मै कहूँगा "तू करोडो खुशीसे कमा, किन्तु तेरा धन तेरा नही बल्कि सम्पूर्ण जगत्का है — यह समझकर अपने वास्तविक उपयोगके लायक आवश्यक धन लेकर अवशिष्टका उपयोग समाजके लिए कर।" सामान्य स्थितिमे तो इसपर अमल नही किया गया, किन्तु यदि इस संकट-कालमे भी धनिक वर्गने इसे नही अपनाया तो वे अपने धन के और भोगके गुलाम बनकर ही रहेंगे और इसलिए आखिरकार उन्हे शारीरिक बलवालोकी गुलामी करनी पडेगी।

किन्तु इस लडाईके अन्तमे मुझे धनके राज्यका अन्त नजर आ रहा है और गरीबोका राज्य आ जायेगा, फिर चाहे वह राज्य शारीरिक बलसे आये या आत्मबल से। शारीरिक बलसे प्राप्त हुई सत्ता शरीरकी भाँति क्षणभगुर होगी और आत्मबलसे प्राप्त सत्ता आत्माकी तरह अमर रहेगी।

सेवाग्राम, २५ जनवरी, १९४२

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १-२-१९४२

३२४. पत्र : मीराबहनको

२५ जनवरी, १९४२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम्हारा करुण पत्र काशीमे मिला था। समझमे नही आया कि मेरे जाते समय हमारी मुलाकात न हो पाई, तो इसपर तुम्हे इतना दु खी क्यो होना चाहिए।[२] तुम सुबह तो मुझसे मिल ही चुकी थी न? लेकिन नही मिली होती तो भी अब तुम्हे स्नेहके ऐसे बाहरी प्रदर्शनसे ऊपर उठना चाहिए, क्योकि स्नेह तो स्थायी वस्तु है, जिसका ऐसे प्रदर्शनोसे कोई सम्बन्ध नही है। तुम्हे तो अपने कार्यमे लीन रहना चाहिए।

तुम स्वस्थ हो, यह जानकर प्रसन्नता हुई।

बाबला[३] ठीक है।

नागपुरके झगडेके बारेमे जो-कुछ पढने को मिले उसपर ध्यान मत देना।[४]

मै स्वस्थ-प्रसन्न हूँ।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४९३)से; सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८८८ से भी

१. ईशोपनिषद्, १

२. मीराबहन अपने इस दुःखका कारण बताते हुए लिखती है: "इतने वर्षोंसे ऐसा कभी नहीं हुआ कि बापूके यात्रापर निकलते समय मैं उनका चरणस्पर्श न करूँ। लेकिन इस बार तो मुझे कुछ पता भी नहीं था और वे निकल पड़े।"

३. महादेव देसाईके पुत्र नारायण देसाई

४. देखिए पृ० २८०-८२।

३२५. पत्र : नारणदास गांधीको

सेवाग्राम, वर्धा
२५ जनवरी, १९४२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र काशीमें मिला था। मण्डल जिस तरह कहे उस तरह पैसे चुका देना। तुमने मण्डलमें[1] रहने का निश्चय किया इससे मुझे बहुत प्रसन्नता हुई है।

मैं आभाको अपने साथ ले आया हूँ। क्या उसकी बडी बहन वीणाको तुम्हारे पास भेज दूं? वह कमजोर रहती है। तुम्हारी देखरेखमें शायद वह अच्छा काम कर सकती है। जमनाको तो यह बात अवश्य पसन्द आयेगी।

फिलहाल तो वीणा कलकत्तामें है। उसे ठीक-ठिकाने जमा देने की परेशानीमें मैंने तुमसे यह प्रश्न पूछा है। मुझे खुश करने के खयालसे हाँ मत कहना। मैं तुम पर तनिक भी बोझ नहीं डालना चाहता। मैं तो एक सेविका तैयार करना चाहता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५९८ से भी, सौजन्य. नारणदास गांधी

३२६. पत्र : नृसिंहप्रसाद का० भट्टको

सेवाग्राम
२५ जनवरी, १९४२

भाई नानाभाई,

तुम्हारा पत्र आज ही मिला है। नारणदासको तुम रख सके, यह अच्छा हुआ। तुम्हारा धीरज उसके भयको दूर कर देगा। उसके जैसे नेक और दक्ष कार्यकर्त्ता हमारे पास गिने-चुने ही हैं, इसीसे मैं उसे अपने पास रखे हुए हूँ।

पैसा तो वच्छराज एण्ड क० में ही रखना उचित है। लेकिन जैसा सबको ठीक लगे वैसा करना। यदि जेराजाणीका[2] आग्रह अभी भी कायम हो तो उन्हें रखना। वे भी पुराने सहयोगी हैं। तुम्हारे लिए उपयोगी सिद्ध होंगे। तुम्हें इसमें ठीकसे ध्यान देना होगा। तुम इस कार्यक्रममें अपना ज्यादा समय नहीं देना और अपनी शारीरिक शक्तिका

१. काठियावाड़ खादी-मण्डल
२. विट्ठलदास जेराजाणी

अपव्यय तो नही ही करना। लेकिन यदि तुम अपने इस उत्तरदायित्वके प्रति सजग हो जाओ तो आँबलामे वैठे-वैठे ही तुम सव-कुछ दुरुस्त रखोगे और मारी अव्यवस्थाको दूर कर सकोगे। तुम्ही सूत्रधार हो।

अपनी तबीयतका ध्यान रखना।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

साथका पत्र नारणदासको देना। उसे खादी कार्यक्रममे पैसे की तगी मत होने देना।

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

३२७. पत्र : जमनालाल बजाजको

२५ जनवरी, १९४२

चि० जमनालाल,

मै सब पढ गया। ओफिस[1] यहा आने के पहले ऐसी कोई रकम नहि दीखती जो आज हि देनी चाहिये। मेननका[2] दरमाया हर हालतमे देना चाहिये। ऐसे हि वझेका।[3] और आर्यभूषणका। विल वझेका तो वघ होगा न? मेरी राय है कि मेननको लिख दिया जाय कि सामान भेज देवे। वर्घा हि भेजेगा। वहा से गड्डे मे यहा आवेगा।

वार्षिक बजेटके वारेमे विचार करने की बात है और रु० १५०० के वारेमे भी। ये तो वादमे करेगे।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

बलवतरायको[4] लिखुगा।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०३१) से

१. देशी राज्य प्रजा परिषद्का
२. के० वी० मेनन
३. एस० जी० वझे
४. बलवन्तराय मेहता; देखिए अगला शीर्षक।

३२८. पत्र : बलवन्तराय मेहताको

२५ जनवरी, १९४२

भाई बलवन्तराय,

तुम्हारा पत्र आज ही पढ सका।

तुम्हें निश्चय ही मुक्ति देनी चाहिए। प्रो० दाँतावालाके साथ बात करना। उनकी जरूरतोंके बारेमें बताना। जबतक कोई व्यवस्था नही हो जाती तबतक यदि तुम्हें आना-जाना पडे तो जरा आते-जाते रहना। हिम्मतलाल आये तो और क्या चाहिए?

उसे तुरन्त कार्यालयमे भेज देना। तुम्हारी अनुपस्थितिमे सामान्य काम-काज तो डा० मेनन करेंगे ही। रा० कु० उसकी देखरेख करेगी। फिलहाल तो जमनालालजी ने सेवाग्राममे कार्यालय रखने का निश्चय किया है। दूसरे कर्मचारी तो नये रख लिये गये है न? एक चक्कर तो तुम्हें लगाना पडेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

३२९. पत्र : अब्दुल गफ्फार खाँको

२६ जनवरी, १९४२

प्रिय खान साहब,

पुरीने मुझे बताया कि आप चाहते है कि मै आपके कार्यके लिए चन्देकी अपील करूँ। यदि वह आपकी बात ठीक समझा है तो मुझे अपील करने मे प्रसन्नता होगी। उसने मुझे जो सूचना दी है कृपया उसकी पुष्टि करें और बतायें कि आपको कितना पैसा चाहिए?

मौलानाके कहने पर मैंने आपको जो पत्र[1] लिखा था, उम्मीद है वह आपको मिल गया होगा।

स्नेह।

आपका
बापू

१. देखिए पृ० २५७

[पुनश्च :]

दाँत ठीक काम दे रहे है न?

अग्रेजीकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

३३०. पत्र : मदनमोहन मालवीयको

२६ जनवरी, १९४२

भाई साहेब,

आपसे मिलने पर मुझे जो आनद हूआ मै कैसे बताऊ? मेरी उमीद है कि आपने कहा है वह शरू कर दिया होगा। तार भेजवा दे।

आपका,
मोहनदास गांधी

श्री ५ मदनमोहन मालवीयजी
पो० ओ० बनारस हिन्दू यूनिवर्सीटी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २२०२) से

३३१. "कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम"

जब मै तेरह-सूत्री — अब तो कहना होगा चौदह-सूत्री — रचनात्मक कार्यक्रमपर पुस्तिका[1] लिख रहा था, उन्ही दिनो राजेन्द्र बाबू भी अपने ढगसे स विषय पर एक पुस्तिका[2] लिख रहे थे। उनकी पुस्तिका अब नवजीवन प्रेस, अहमदाबादसे प्रकाशित हो गई है। कीमत है ४ आने (१ आना डाक-खर्च अतिरिक्त)। इस पुस्तिकाको मेरी पुस्तिकाकी पूरक कहा जा सकता है। राजेन्द्र बाबूके इस प्रबन्धमे पाठकोको बहुत दिलचस्प और ज्ञानवर्धक सामग्री पढने को मिलेगी। बहुत-सी तफसीले, जो मैने अपनी पुस्तिकामे छोड दी है, इसमे दी गई है। प्रत्येक कार्यकर्त्ताके लिए ये दोनो पुस्तिकाएँ रखना आवश्यक है।

सेवाग्राम, २७ जनवरी, १९४२

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १-२-१९४२

१. कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम : इट्स मीनिंग ऐंड प्लेस (रचनात्मक कार्यक्रमका मर्म और महत्त्व), देखिए पृ० १६१-८३।

२. कंस्ट्रक्टिव प्रोग्राम — सम सजेशन्स

३३२. प्रश्नोत्तर

एकात्मक पद्धति

प्र० : ऐसा जान पडता है कि आप अनेक समस्याओंका वह समाधान सुझाते हैं जिसे आपने एकात्मक (यूनिटरी)[1] पद्धति कहा है। क्या आप इसे तनिक अधिक स्पष्ट करने की कृपा करेंगे?

उ० यह समाधान जितना अचूक है उतना ही सरल भी है। इकरारनामेमे दो पक्ष होते हैं। इसके अलावा दोनो पक्षोको एक-दूसरेका कुछ खयाल करना पडता है और कुछ लेन-देन भी होता है। काग्रेस और मुस्लिम लीगके बीच लखनऊमे ऐसा ही समझौता हुआ था। यही बात एकात्मक पद्धतिसे भी की जा सकती थी। हाँ, तब भय या अविश्वाससे प्रेरित कोई अनिच्छापूर्ण लेन-देन नही होता। काग्रेस अपनी अवधारणाके अनुसार सम्पूर्ण न्याय कर पाती, अर्थात् वह लीगसे किसी बातकी अपेक्षा किये बिना उसे उस हदतक अधिकसे-अधिक दे सकती थी जिस हदतक उसका देना राष्ट्र-हितमे असगत न होता। सुव्यवस्थित परिवारमे सम्बन्धोका निर्वाह एकात्मक पद्धतिपर होता है। उदाहरणके लिए कोई पिता अपने बच्चोको जो-कुछ देता है वह किसी इकरारनामेके अधीन नही देता। वह जो देता है, प्रेमसे प्रेरित होकर, एक प्रकारकी न्याय-भावनाके वशीभूत होकर देता है और बदलेमे किसी चीजकी आशा नही करता। कोई अपेक्षा न हो, ऐसी बात नही होती। लेकिन सब-कुछ स्वाभाविक रीतिसे होता है, मजबूरन कुछ नही। कोई भी काम भय या अविश्वासके कारण नही किया जाता। जो बात सुव्यवस्थित परिवारपर लागू होती है वही सुव्यवस्थित समाजपर भी लागू होती है, क्योकि समाज भी तो परिवारका ही विस्तृत रूप है। मैंने हिन्दुओं और मुसलमानोको जो दो लिपियाँ अपनाने की सलाह दी है वह एकात्मक पद्धतिपर ही आधारित है। सभी समुदायोके प्रति मेरा समान प्रेम इसकी स्वीकृतिकी प्रेरणा देता है। यदि इस पद्धतिको ठीकसे लागू किया जाये तो यह कभी निराश नही करती। यह आलोचना और विरोधके लिए गुंजाइश ही नही छोडती। शुद्ध अन्तरात्मा और शुद्ध कर्म इसमें सहज समाहित हैं। इन स्तम्भोमें मैं हमारे सभी साम्प्रदायिक सम्बन्धोपर इस पद्धतिके प्रयोगकी विधि बताने का इरादा रखता हूँ। ये विचार मेरे निजी विचार होंगे, जैसे कि बारडोली प्रस्तावके बादसे मेरे सभी विचार हैं। ये विचार मैं काग्रेसजनोंके समक्ष इस अपेक्षाके साथ रखूंगा कि वे इन्हें उसी हदतक अपनायें जिस हदतक उन्हें ये ठीक लगे।

१. लेकिन देखिए "प्रश्नोत्तर" शीर्षकके अन्तर्गत उपशीर्षक "भाषाके साथ अत्याचार" पृ० ३१४।

राजाजी

प्र० : आखिर राजाजी को क्या हो गया है? मालूम होता है, आप दोनों एक दूसरेसे दूर जा रहे हैं?

उ० . हाँ, मालूम तो होता है, लेकिन दरअसल बात वैसी नही है। आखिरमे हम दोनो एक-दूसरेके अधिक निकट आनेवाले है और एक-दूसरेको पहलेसे ज्यादा समझनेवाले हैं। आज जो अलगाव दीख रहा है, वह उसकी भूमिका-भर है। मेरे प्रति उनकी निष्ठामे कोई सन्देह नही। अगर मै उनको अपने विचारोका प्रचार करने और प्रचार द्वारा जनताको अपने मतका बनाने के लिए विशेष रूपसे प्रोत्साहित न करता, तो वे खुशी-खुशी चुप रह जाते। हम एक ही देवीके उपासक हैं। लेकिन उसके सम्बन्धमे हमारी व्याख्याएँ भिन्न-भिन्न है। अगर वे गलती पर है, तो गलती मालूम होते ही उसे सुधार लेगे। और वे जानते है कि मुझे अपनी गलती मालूम हुई तो मै भी वैसा ही करूँगा। इसलिए उनके साथ मै अपनेको बिलकुल सुरक्षित समझता हूँ और प्रश्नकर्त्ताओसे भी कहता हूँ कि वे निःशक हो जाये।

बिलकुल झूठ

प्र० : खबर है कि काशीवाले अपने भाषणमें आपने हिन्दुस्तानियोंके लिए अंग्रेजी पढ़ना और अंग्रेजीमें बातचीत करना गुनाह करार दिया है। इस सम्बन्धमें लोग काफी आलोचना करते हुए कहते है कि जो खुद अपने मतलबके लिए इस घृणित अंग्रेजीका इतना उपयोग कर लेता है, उसे ऐसा फतवा देनेका क्या हक है?

उ० ' बात बिलकुल गलत है। लेकिन जब एक बार कोई झूठी बात चल पडती है, तो उसे रोकना बहुत मुश्किल हो जाता है। मेरे बारेमे ऐसी कई झूठी बाते फैलती रही है। उनके कारण क्षणिक सनसनी भी फैली, लेकिन फिर अपनी मौत वे खुद मर गई और मुझे उनके लिए कुछ करना नही पडा। मै जानता हूँ कि इसकी भी यही गति होगी। जिस झूठका कोई सिर-पैर ही नही, उससे कभी किसीका नुकसान नही होता। मै अपनी प्रतिष्ठा बचाने के लिए यह सब नही लिख रहा। हाँ, अपनी बात जरूर समझाना चाहता हूँ। मुझपर उपदेश-कुशलताका जो आरोप लगाया गया है, वही इस झूठका सच्चा जवाब है, क्योकि मै आज नये सिरेसे अंग्रेजीका उपयोग नही कर रहा। असलमे तो इस आरोपपर किसीको कोई ध्यान ही नही देना चाहिए था। लोग समझ ले कि मै अंग्रेजी भाषाका और अंग्रेजोका प्रेमी हूँ। लेकिन मेरा यह प्रेम बुद्धिमानी और समझदारी-भरा है। इसलिए मै दोनोको उनके अनुरूप ही महत्त्व देता हूँ। मसलन, मै अंग्रेजीको मातृभाषा या हमारी अपनी राष्ट्रभाषा हिन्दुस्तानीका स्थान कभी भी नही लेने देता। और न अंग्रेजोकी मुहब्बतके कारण मै अपने उन देशवासियोका निरादर होने देता हूँ, जिनके हितोको मैं किसी भी हालतमे हानि नही पहुँचने दे सकता। अन्तर्राष्ट्रीय काम-काजके लिए मै अंग्रेजीके महत्त्वको मानता हूँ। जिन चुने हुए हिन्दुस्तानियोको अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रमे अपने देशके हितोका प्रतिनिधित्व करना है, उनके

लिए दूसरी भाषाके तौरपर अंग्रेजीको अनिवार्य समझता हूँ। मेरी रायमे अंग्रेजी वह खुली खिड़की है, जिसकी राह हम पश्चिमवालोके विचारो और वैज्ञानिक कार्योसे परिचित रह सकते है। यह काम भी मै कुछ चुनिंदा लोगोको ही सौपना चाहूँगा। मै उनके द्वारा पश्चिमसे प्राप्त ज्ञानको भारतीय भाषाओके माध्यमसे देशको सुलभ कराना चाहता हूँ। लेकिन मै अपने देशके बच्चोके लिए यह जरूरी नही समझता कि वे अपनी बुद्धिके विकासके लिए एक विदेशी भाषाका बोझ अपने सिर ढोये और इस तरह अपनी विकसित होती हुई शक्तिको वास्तवमे क्षीण हो जाने दें। आज जिस अस्वाभाविक परिस्थितिमे रहकर हमे अपनी शिक्षा ग्रहण करनी पड़ती है, उस परिस्थितिका निर्माण करनेवालो को मै जरूर गुनहगार मानता हूँ। दुनियामे और कही ऐसा नही होता। इसके कारण देशको जो नुकसान हुआ है, उसकी तो हम कल्पना तक नही कर सकते, क्योकि यह नुकसान अभी हमारे लिए बहुत ताजा है। मै उसकी भयकरताका अदाज कर सकता हूँ, क्योकि मै प्रतिदिन देशके करोड़ो मूक, दलित और पीडित लोगोके सम्पर्कमे आता रहता हूँ।

एक और झूठ

प्र०: अखबारोंमें छपा है कि पूर्वमें जापानियोंने जिस अश्रुतपूर्व सम्पूर्णताके साथ पश्चिमी तरीकोंको अपनानेमें तरक्की की है उसकी आपने सराहना की है। क्या पश्चिमके सम्बन्धमें अबतक लिखी हुई आपकी बातोंका इससे खण्डन नहीं होता? या जो नियम हिन्दुस्तानके लिए है, वे जापानके लिए नहीं है।

उ० यह भी वैसा ही झूठ है, जैसा अंग्रेजी भाषाके बारेमे फैलाया गया है। महादेव देसाईने मेरे काशीवाले भाषणका[1] जो ब्योरा दिया है, उससे पाठकोको मालूम हो जायेगा कि जापानियोके बारेमे दरअसल मैने क्या कहा था। मेरे भाषण का मुख्य आशय यह था कि अंग्रेजीको शिक्षाका माध्यम बनाना या राष्ट्रभाषाकी तरह काममे लाना वाछनीय नही है। इसी सिलसिलेमे मैने यह कहा था कि मेरी रायमें जापानियो द्वारा पश्चिमी तरीकोका अपनाया जाना कितना ही नुकसानदेह क्यो न हो, लेकिन जिस तेजीके साथ उन्होने तरक्की की है, वह इसलिए हो सकी है कि उन्होने अपने मुल्कमें पश्चिमी ढगकी शिक्षाको कुछ चुने हुए लोगोतक ही सीमित रखा और उनके द्वारा जापानियोमें पश्चिमके नये ज्ञानका प्रचार जापानी भाषाके जरिये ही करवाया। यह तो हर कोई आसानीसे समझ सकता है कि अगर जापान-वाले किसी विदेशी भाषाके जरिये यह सारा काम करते, तो वे नये तरीकोके अनुरूप अपनेको ढाल न पाते।

सेवाग्राम, २७ जनवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १-२-१९४२

1. देखिए "भाषण: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें", पृ० २६५-७१।

३३३. पत्र : लीलावती आसरको

२८ जनवरी, १९४२

चि० लिली,

तेरा पत्र मिलते ही जवाब लिख रहा हूँ। तेरी मेहनतका विवरण मुझे अच्छा नही लगा। मैंने तुझसे सैकडो बार कहा है कि तुझे अधीर नही होना चाहिए। पढा हुआ बेकार नही जाता। तुझे विषयोको समझ लेना चाहिए। ढगसे मेहनत करके जो सीखा जा सके, वही सीखना चाहिए। अपने प्रिंसिपल तथा अपने अध्यापकोके साथ सलाह कर। वे क्या कहते हैं, मुझे लिख। तू पढाई छोड दे, यह मुझे बिलकुल बर्दाश्त नही होगा। मेरा यह आग्रह नही है कि इसी वर्ष तू परीक्षामे बैठे। आसानी से बैठा जा सकता हो, तो जरूर बैठ। लेकिन रातको जागकर और चायके देग-के-देग पी करके दिमागको जड बनाने को तो मै मूर्खता और सार्वजनिक धनकी चोरी मानूंगा। तुझ-जैसी से पैसेका ऐसा दुरुपयोग बिलकुल नही होना चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९५९७)मे। सी० डब्ल्यू० ६५६९ से भी; सौजन्य : लीलावती आसर

३३४. भाषण : खादी विद्यालयके विद्यार्थियोंके समक्ष[1]

सेवाग्राम
२९ जनवरी, १९४२

आप लोग अभी जिस तरह यहाँ आकर बैठे, उसके बारेमें मुझे कुछ कहना है।[2] हमारे सामने जो काम है, वह इतना बड़ा और इतना शुद्ध है कि उसका प्रभाव हमारे उठने-बैठने, बोलने-बतलाने व चलने-फिरने के तरीकोपर और हमारे विचारोपर भी पडना चाहिए। जब हम किसीका भाषण सुनने को इकट्ठा हो, तो हमे तरतीबसे, अलग-अलग, बैठना चाहिए, और बैठते समय सीधे, तनकर, आसनबद्ध और एकाग्र होकर बैठने का ध्यान रखना चाहिए। जिस तरह आप एक-दूसरेसे सटकर,

१. शामकी प्रार्थनाके बाद गाधीजी ने विभिन्न प्रान्तोंसे आये विद्यार्थियोंके सम्मुख भाषण दिया। इन विद्यार्थियोंने विद्यालयमें एक महीनेका प्रशिक्षण प्राप्त किया था।

२. सभामें विद्यार्थियोंके बैठने के समय कुछ गड़बड़ी पैदा हुई थी।

घिचपिच बैठे है, उसमे सलीका-शोभा नही, सभ्यता नही। हरएक सभ्यताकी अपनी उठने-बैठने की एक खास पद्धति होती है। पश्चिमी देशोमे लोग कुर्सीपर खास तरीके से ही बैठते है। उन्हे जो फौजी तालीम दी जाती है, उसका असर उनके उठने-बैठने के ढगपर भी पडता है। हमारी भी उठने-बैठने की एक खास सभ्यता या रीति है। मगर हम उसे भूल गये है। पश्चिमवालो से हमने नया कुछ सीखा नही। इसलिए आज हमारी हालत त्रिशकु-सी है—हम न इधरके रहे, न उधरके। हमारा अपना भी आसनोका एक खास कायदा है। इसके जरिये हम अपनी शारीरिक और आध्यात्मिक, दोनो तरहकी उन्नति कर सकते है। वह एक ऐसी चीज है, जिसे अपने जीवनका अग बनाकर हम दुनियाके सामने पेश कर सकते है। लेकिन आज तो हममें जडता आ गई है। यह तो हुई हिन्दुओकी पुरानी रीतिकी बात। अरबवालो की भी अपनी ऐसी ही रीति है। वे भी खूबसूरतीमे और खास ढगसे उठते-बैठते हैं। उनकी नमाज भी उनके अपने कायदेके साथ ही होती है। थोडेमें, मेरे कहने का मतलब सिर्फ यह है कि हम जो-कुछ करे, पद्धतिपूर्वक करे—कायदेसे करे। जैसी आशा आपसे रखी जाती है वैसे ही आप बन जायें, तो आप सरकारी स्कूलो या कालेजोंके विद्यार्थियोमे आगे बढ सकते है। मेरी रायमें इस विद्यालयका स्थान किसी भी स्कूल या कालेजसे कम नहीं, बल्कि दरअसल देखा जाये तो बहुत ऊँचा है। आप किस तरह सोते है, कैसे बैठते है, क्या-क्या और कैसी बाते करते है, इससे भी आपकी परीक्षा होती रहती है। पैदा होने से लेकर मरने तक आदमीका हर काम उसकी अपनी सभ्यतासे रँगा रहना चाहिए। मै आपकी हर चीजमें आपकी अपनी सभ्यताको देखा चाहता हूँ। आपके लिए सिर्फ कातना-धुनना सीख लेना ही काफी नही; वह तो एक साधन-भर है।

आदमीके गुजारेके लिए दो चीजें सबसे ज्यादा जरूरी है : एक, खाने-पीने का सामान, दूसरी, कपडा। खुराक और कपडेके इस सवालको हल करने के तीन तरीके है। एक है, उन्हे दानके रूपमें पाना। लेकिन वह मुनासिब नही। उससे गरीबोकी गरीबी मिटती नही, उल्टे वे भिखारी बनते है। दूसरा है, नौकरी—नौकरी करके कमाना और उससे अपनी गुजर-बसर करना। इसमे भी हम परावलम्बी बनते हैं। तीसरा है, इन्हे पैदा करने की तजवीज करना। यह दो तरहसे हो सकता है : चरखेसे या कल-कारखानोसे। कारखानोमें बडे पैमानेपर अपनी जरूरतकी चीजें पैदा करने से सामूहिक रूपमें तो हम स्वावलम्बी बन सकते है, लेकिन व्यक्तिगत रूपमें नही। अगर कलसे हिन्दुस्तानमें हवाई हमले होने लगें और बम बरसने लगें, तो वे बरसेंगे कहाँ? कल-कारखानो पर ही न? उन घरोपर तो नही, जहाँ तकली और चरखे चलते है? अगर ऐसा ही हुआ, और हमारे पास मिलोको छोड कपडा बनाने का और कोई साधन न रहा, तो हमें अपनी जरूरतकी चीजोके लिए लाचार होकर दूसरोकी मोहताजी करनी होगी। और अगर मिलोमें गोला-बारूद बनने लगा, तो हमारे पास सिवा चरखेके और कोई साधन न रह जायेगा।

भविष्यमें ये सारी बातें हो सकती है। अगर हम इसे समझते है, तो हमे आज ही से इसके लिए उचित तैयारी करनी चाहिए। आज हमें एक अरब रुपयोकी खादी

चाहिए। इसमे से ज्यो-त्यो करके हम शायद एक करोडकी पैदा कर लेगे। मेरे नजदीक उसकी वहुत कीमत नही। परन्तु जो विद्या आज आप यहाँ सीखते हैं, वह तो इसलिए सीखते है कि आप यहाँसे जाकर लोगोको सिखायें कि किस तरहसे वे अपने पैरोंपर खडे होकर अपनी जरूरतोका बन्दोबस्त खुद कर सकते है।

आज अगर कोई एम० ए० पास करके भी आये, तो मै तो उससे यही पूछूँगा कि आखिर उसका ध्येय क्या है, वह करना क्या चाहता है। नौकरी ही न ? नौकरी करे, और पेट भरे। मगर आपके पास तो यह ध्येय नही है। अगर आप भी अपनी रोटीका साधन जुटाने के लिए ही यहाँ आकर तालीम लेते है, तो मुझ-जैसेको उसमे कोई दिलचस्पी नही हो सकती। आपके सामने स्कूल-कालेजोकी तरह कई-कई वरसोका नही, एक ही वरसका कार्यक्रम है। लेकिन उसका ध्येय है, वह रास्ता निकालना, जिससे सारा हिन्दुस्तान और हिन्दुस्तानका एक-एक आदमी अपने पैरोपर खडा हो सके। मिलोमे कपडा तैयार करने से पैसा गरीवोकी जेवमे नही जाता, वल्कि उनकी जेवसे निकलकर घनवानकी जेवमें जा पहुँचता है। इसके विपरीत, अगर मै खादी खरीदता हूँ, तो गरीवोको कुछ पैसा पहुँचाता हूँ और उनके स्वाव-लम्वी वनने में सहायक होता हूँ। इस तरह अगर हम उन्हे एक वावतमें भी स्वाव-लम्वी वना सके, तो वाकीकी और सव वावतोमें वे खुद स्वावलम्वी वनना सीख जायेंगे। खादी तो वढईके समकोणकी तरह है। जव वढई उसकी मददसे एक कोण ठीक कर लेता है तो दूसरे सव कोण अपने-आप ठीक हो जाते है। उसी तरह अगर हम खादीकी जडको भली-भाँति जमा सके, तो दूसरी वहुतेरी चीजें अपने-आप जम जायेंगी। अबतक खादीका जो काम हमने किया है, उसीके फलस्वरूप आज अनेक ग्रामोद्योगोका पुनर्जन्म हुआ है, और ग्रामोद्योग-सघकी सारी प्रवृत्तियाँ चल रही है। अगर आप इस दृष्टिसे खादीकी तालीमका विचार करेगे, तो आपको पता चलेगा कि वह कितनी तेजस्वी चीज है, उस दशामे आपका काम और उसका परिणाम भी उतना ही तेजस्वी होगा।

याद रखिए कि आप यहाँ गरीवोकी जेवमें पैसा पहुँचाने की विद्या सीखते हैं, अपने परिवारकी जेवमे नही। अगर आप और हम इस चीजको हजम न कर पाये, तो वादमें हम सवको पछताना होगा। इससे वेहतर तो यह है कि आप अभीसे चेत जायें और इस कामको छोडकर दूसरा कोई घन्धा या नौकरी कर ले।

इस सिलसिलेमें आज मैंने हिन्दुस्तानकी आजादी और राजनीतिकी कोई वात जान-बूझकर आपसे नही कही, क्योंकि यह सव इसमे शामिल है। अगर हम हिन्दु-स्तानके गरीवोंको जीवनकी आवश्यक सामग्रीके वारेमे स्वावलम्वी वना सके, तो स्वराज्य हमें हथेलीपर के आँवलेकी तरह सुलभ हो जायेगा। मेरी दृष्टिमें वही असली स्वराज्य होगा — और नही। श्री राजेन्द्र वाबूने अभी रचनात्मक कार्यक्रमपर जो एक निवन्ध लिखा है, उसे आप पढेंगे, तो उससे भी आपको मालूम होगा कि आजादी की लडाईमें खादीका कितना ऊँचा स्थान है।

आप लोगोमे से जो आज यहाँसे विदा हो रहे है, उन्हे समझ लेना चाहिए कि इन चार हफ्तोमें उन्होने यहाँ जो-कुछ सीखा या किया है, सो तो सिर्फ चोच

डुबोई है। उन्हें अपने इस ज्ञानको बहुत बढाना होगा। अगर आपने यहाँ रहकर शास्त्रीय दृष्टिको नही अपनाया है, शास्त्रीय पद्धतिसे विचार करना नही सीखा है, तो आप जो-कुछ यहाँसे लेकर जा रहे है, उसमे वृद्धि नही कर सकेंगे, और जो आशा आपसे रखी गई है, उसे पूरा न कर पायेंगे। यहाँ आपको ज्ञानके भण्डारकी एक चाबी सौंपी गई है। अगर आपने उस चाबीका इस्तेमाल करना सीख लिया है, तो मै मानता हूँ कि ज्ञानके उस भण्डारसे आप रोज-रोज नई-नई चीजें निकाल सकेंगे और अपनेको मालामाल बना सकेंगे।

जो शिक्षक अपने विद्यार्थियोमे घुल-मिल जाता है, उनमें तन्मय हो जाता है, वह जितना उन्हें सिखाता है, उससे ज्यादा उनसे सीखता है। जो अपने विद्यार्थियोसे कुछ सीखता नही, मेरी दृष्टिमें वह निकम्मा है। मै किसीसे बात करता हूँ, तो उससे भी सीखता हूँ। जितना उसे देता हूँ, उससे ज्यादा ले लेता हूँ। इस प्रकार एक सच्चा शिक्षक अपने शिष्यका भी शिष्य बनकर रहता है। यदि आप इस दृष्टिसे अपने शिष्योको सिखाने का काम करेंगे, तो आप उनसे बहुत-कुछ पायेंगे।

मेरी रायमें स्वर्गीय मगनलाल गांधी इस तरहके एक आदर्श खादी-सेवक थे। उनसे जितनी आशाएँ मैंने रखी थीं, उससे कही ज्यादा उन्होने करके दिखाया। कडीसे-कडी कठिनाइयोका सामना करके भी वह अपने कामकी चीज, जहाँ-कही भी वह मिल जाती थी, सीख लिया करते थे। कठिनाइयोसे वह न कभी घबराते थे, न थकते थे। अन्तिम समय तक वह अपने खादी-सम्बन्धी ज्ञानको बढाने ही मे लगे रहे। मै चाहता हूँ कि आप मगनलाल गांधीके इस आदर्शका अपने जीवनमे अनुकरण करें। यह हरगिज न भूलिए कि अपने-अपने प्रान्तमे लौटकर अगर आपने यहाँके ज्ञानको बढाया नही, तो जो-कुछ आपके पास है, उसे भी आप जल्द ही खो देंगे। अगर आप अपने इस ज्ञानको बढाना चाहते है, तो याद रखिए कि वह सिखाते-सिखाते ही बढेगा। यदि आप इस तरहके प्रगतिशील और तेजस्वी कार्यकर्त्ता बने रहे, तो मै मानता हूँ कि थोडे ही समयमे आप १३ से १३० हो जायेंगे।

यों, आज यहाँसे विदा होनेवाले शिक्षकोंके सिर मै एक बडा बोझ रख रहा हूँ। आप इसे अपने साथ ले जाइए। मै आशा रखूँगा कि जहाँ-कही आप जायेंगे और काम करेंगे, वहाँसे मुझे आपके बारेमे यह सुनने को मिलेगा कि आप सच्चे है, सज्जन है और देशके अनन्य सेवक है।

किसीको कुछ पूछना हो तो पूछ ले।

प्र० : आलस्य और अभिमानसे बचनेके लिए खादी-सेवकको क्या करना चाहिए?

गांधीजी : उसे रोज, नियमसे, लगातार, ध्यानावस्थित होकर, आठ घण्टे चरखा चलाना चाहिए। अगर वह कातते समय मनमें दरिद्रनारायणकी सेवाका ही ध्यान रखेगा, तो अभिमान उसके पास फटक भी न सकेगा और आलस्य तो रहेगा ही कहाँ?

प्र० : अगर किसी खादी-सेवकके मातहत उसका कहा न मानें, तो वह क्या करे? उन्हें सजा दे? उनपर गुस्सा करे?

गांधीजी · बिना गुस्सा हुए धीरजके साथ समझाने की कोशिश करनी चाहिए। मेरा अपना अनुभव है कि जब कभी मैं गुस्सा होता हूँ तो कुछ भी समझा नही पाता। गुस्सेका बुद्धिसे बैर है। इसलिए हमें गुस्सा न करना चाहिए। इसी तरह हम सजा भी नही कर सकते। करनी हो तो अपने उपवासके रूपमे करनी चाहिए। लेकिन यदि खादी-कार्यके हितके लिए आवश्यक मालूम हो, तो उसे पृथक किया जा सकता है।

हरिजन-सेवक, १५-२-१९४२

३३५. पत्र : मंजुला म० मेहताको

३० जनवरी, १९४२

चि० मजुला,

तेरे पत्र मिले। मैंने उनपर फौरन अमल किया। मैंने चम्पाको डाँटा। वह थोडी-बहुत अपनी भूल समझी है और शर्मिन्दा हुई है। लेकिन उसपर कोई असर होगा, ऐसा नही है। मेरे डाँटने के बाद उसने साथका यह पत्र[1] दिया। मै इसे पढ़ गया। इसमे कुछ नही है।

तू कब आ रही है? तेरी इच्छा हो तो चम्पाको वहाँसे हटा दूँ। वह कोठरी तू अपने ही लिए समझ। तेरा घर तैयार होने में तो देर लगेगी। इसलिए इसीको अपना घर मान। चम्पाको तो तेरी जगहपर ही उसमें रखा है।

रतिलाल किसीकी घोडी लेकर वाकानेर भाग गया है। मगन उसके पास नही जाता, यह ठीक नही है। खोजने से रखवाला तो वहाँ मिल सकता है।

आशा है तुम सब लोग सानन्द होगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२५) से। सौजन्य · मजुला म० मेहता

१. उपलब्ध नहीं है।

३३६. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम
३० जनवरी, १९४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। लगता है, वहाँ तेरा काम अच्छी तरह चल रहा है।

तूने मेरे वातूनी होने के वारेमें याद दिलाकर अच्छा ही किया। मैं तुझे मूर्ख तो कहता ही रहूँगा, किन्तु तेरी आलोचनाको मैं ध्यानमें रखूँगा। तू [मेरे वारेमें] दूसरो की टिप्पणियाँ उद्धृत करती है, इससे मुझे चेतावनी मिलती रहेगी।[1] सच तो यह है कि एक वात सही जान पडती है। मेरे पिछले अनुभवोको कोई उचित तर्क नही माना जा सकता। उनसे मुझे भले ही वल मिलता हो, किन्तु तर्कके रूपमें उनका स्थान गौण है। यदि पिछले अनुभव दोपपूर्ण हो तो उन्हे फिरसे दुहराने से दोष कम नही होता वल्कि वढ जाता है।

तेरी दूसरी शिकायतको तो मैं पूरी तरह स्वीकार करता हूँ। अब मैं लम्बे और रोचक पत्र लिखने की स्थितिमें नही हूँ। ऐसा तो तभी हो सकता है जब मैं जेल चला जाऊँ। इसी प्रकार मैं दिलचस्प वातचीत करनेवाला भी नही रहा। समय का वहुत अधिक अभाव हो गया है।

लक्ष्मीवाई आज जा रही है। वह मुझे वहुत अच्छी लगी। उसकी तवीयत विलकुल ठीक हो गई है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४२२) से। सी० डब्ल्यू० ६८६१ से भी, सौजन्य · प्रेमावहन कटक

३३७. मेरी निष्ठा

मुझसे पूछा गया है कि मेरी सहानुभूति किस तरफ है? केवल मनुष्यताकी दृष्टिसे, वेशक, वह सर्वथा इग्लैंडके पक्षमें है। मैं नही चाहता था कि ब्रिटिश लोग हारे। लेकिन मैं यह भी नही चाहता हूँ कि जर्मन लोग हारे। सारी-की-सारी जनताएँ — चाहे वे किसी भी राष्ट्रकी क्यो न हो — अगर दलित और अपमानित रहेगी

१. प्रेमावहनने गाधीजीको सूचित किया था कि कुछ नेता और रचनात्मक कार्यकर्त्ता उनकी आलोचना करते हुए कहते हैं कि वे आजकल वहुत वोलते हैं और दक्षिण आफ्रिकाके अपने अनुभवों का प्राय उल्लेख करते रहते है।

और उनमे कटुताके भाव होगे, तो शेष दुनियामे हम लोगोके लिए बहुत थोडा तथ्य और आनन्द रहेगा। अगर किसी एक राष्ट्रके अन्त करणमे कड़ुवापन हो, तो क्या उसमे भावी युद्धके बीज अन्तर्हित नही होते? जो हो, अगर वह युद्ध किसी पक्षकी हार-जीत तक जारी रहा, तो उस दावानलमे सस्कृति ही भस्म हो जायेगी। भगवान करे, वह समय रहते बन्द हो जाये। लेकिन जबतक मनुष्योके हृदयमे द्वेष रहेगा, तबतक क्या उसका बन्द होना सम्भव है? और अगर मुझे एक व्यक्तिसे द्वेष होगा, तो क्या उसकी जडे, गुप्त रूपसे फैलकर वह उस देशके सभी लोगोसे द्वेषके रूपमे परिणत नही होगा? हाँ, जर्मनीके तानाशाहका धिक्कार करने के लिए यथेष्ट कारण है। लेकिन यदि मै यह चाहता हूँ कि सेनाएँ अपने हथियार फेककर खूनखराबीसे बाज आये — क्योकि अहिंसाका यही अर्थ और सन्देश है — तो मुझे अपनी निष्ठाका पालन करना चाहिए, मेरे दिलमे किसी भी जीवित मनुष्यसे द्वेष नही होना चाहिए। मुझे उसकी कृतियोपर शोक है, मै अडोल्फ हिटलरसे द्वेष नही कर सकता।

सर्वोदय, जनवरी, १९४२

३३८. धनुष-तकुआ

मेरा खयाल है कि रचनात्मक कार्यमे धनुष-तकुवेका बडा हिस्सा होनेवाला है। आज मै चरखेके मुकाबलेमे धनुष-तकुवेके गुण-दोषोकी खोजमे नही पडूँगा। मेरा विश्वास बन गया है कि हम हजारोकी सख्यामे चरखा तैयार नही कर सकते। उसे तैयार करने मे काफी धन चाहिए, जो कि हमारे पास नही है। हर जगह उसे तैयार भी नही कर सकते। एक जगहसे दूसरी जगह उसे ले जाने में मुसीबत भी है।

तकली भी काम देनेवाली हर जगह तैयार नही हो सकती। तकलीपर तेज गति भी पैदा नही कर सकते।

रहा धनुष-तकुवा, सो वह थोडे परिश्रमसे और बहुत कम दाममे तैयार हो सकता है। उससे काफी सूत भी निकल सकता है।

इसलिए सब खादी-सेवकोसे मेरी विनती है कि वे धनुष-तकुवेका अभ्यास करे; उसे बनाना सीख ले और उसका प्रचार करे।

नये चरखे बनाना आज मौकूफ रखा जाये। मौजूदा चरखे भले ही जोरोसे चले। अपने स्थानोपर जो तैयार कर सकते है या करना चाहे तो भले तैयार करे। लेकिन धनुष-तकुवेका वायुमण्डल बनाने के लिए सब नये कातनेवालो को तो धनुष-तकुवा ही दिया जाये।

इस बारेमे 'हरिजन' मे जो लेख[1] मैने लिखा है उसे सब खादी-सेवक गौरसे पढ़े।

खादी-जगत्, जनवरी, १९४२

१. देखिए "सच्चा युद्ध-प्रयत्न", पृ० २५८-६१।

३३९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

१ फरवरी, १९४२

चि० कृष्णचंद्र,

तुमारा प्रश्न ठीक है। मामन्यतया ऐसी चीजें नहि पास की जा सकती है लेकिन लक्ष्मीदासको इतना देना यथार्थ है। उसे दर माह मागे तो देना चाहिये।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४११) से

३४०. भाषण : अखिल भारतीय गोसेवा संघ सम्मेलनमें[1]

वर्धा

१ फरवरी, १९४२

...बम्बईकी सड़कोंपर गायकी जैसी पूजा की जाती है ... उसपर गांधीजी ने तीखी व्यंग्योक्तियोंके साथ प्रकाश डाला। [उन्होंने कहा :]

हम गायकी पूंछ पकडकर उसके पवित्र स्पर्शसे अपनी आँखोको पुनीत बनाते हैं। उसके मूत्रको भी हम पवित्र और औषधि-रूप मानते हैं और उसे पीते हैं। बेचारी गायको हमारी इस पूजाका कोई इल्म नहीं होता। उसके लिए वह वृथा है। उलटे कभी-कभी वह इससे भडक जाती है। जब भडकती है, तो पूजा का जवाब लातसे देती है, नहीं भडकती, तो पूजाको बरदाश्त कर लेती है। . . .

यह सब बिलकुल सच है, और जो लोग गो-रक्षा करने का दावा करते हैं, वे गायकी और उसकी सन्ततिकी रक्षा करने की सच्ची रीतिके सम्बन्धमे घोर अज्ञान प्रदर्शित करते हैं। गोपूजाका दावा करनेवाले लोग भी बैलोंके साथ क्रूरताका बरताव करते हैं। चौंडे महाराज बरसोंसे इस क्षेत्रमें बडी मेहनत कर रहे हैं। मैं उनके सामने जो तथ्य और तर्क पेश करता हूँ उन्हें स्वीकार करते हुए वे कहते हैं 'किन्तु लोगोंकी भावनाका क्या किया जाये? वे तो किसी भी तरह गायको कसाईके हाथोंसे बचाना चाहते हैं।' लेकिन उनका यह तरीका गलत है। वे इस तरह अपने

१. महादेव देसाईके लेख "गोसेवा संघ–१ और २" से उद्धृत। विनोबा भावेकी अध्यक्षतामें आयोजित संघके प्रथम सम्मेलनका उद्घाटन गांधीजी ने ही किया था।

हेतुको स्वय विफल बनाते है और असलमें कुछ कर नही पाते। यह सब मै आलोचक की हैसियतसे नही कह रहा, लेकिन हमारे पिंजरापोलोके अधिकतर सचालक इस प्रश्नके मूलभूत तत्त्वोके सही बोधके अभावमे जिस घोर अज्ञानका प्रदर्शन करते है, उससे मुझे बड़ी निराशा होती है।

गो-हत्याकी इच्छा रखनेवाले किसी मुसलमानके हाथसे गायको बचाने के गलत तरीकेका जिक्र करते हुए गांधीजी ने कहा, लोग भले ही सुनते-सुनते ऊब जायें, पर मै लगातार यही कहूँगा कि गायकी रक्षा करने के लिए मुसलमानसे झगड़ने और उसे मारने का रास्ता गो-रक्षाका नहीं, बल्कि गो-हत्याको और भी बढ़ावा देने का रास्ता है।

दूध-घीका सारा व्यापार हिन्दुओके हाथोमे है। लेकिन क्या हम शुद्ध दूध-घी सुलभ कराने का कोई प्रबन्ध कर सके हैं? दूध मिलावटवाला मिलता है, और मिलावटके लिए जो पानी डाला जाता है, वह भी साफ नही होता। फूकेकी क्रूरतापूर्ण और भयावनी क्रिया किसीसे छिपी नही है। बाजारमें बिकनेवाला घी इतना खराब होता है कि उसे घीकी जगह जहर कहा जा सकता है। न्यूजीलैण्ड, आस्ट्रेलिया या डेनमार्कसे जो मक्खन आता है, वह भरोसेमन्द शुद्ध गायका मक्खन होता है, लेकिन हमारे देशमे मिलनेवाले मक्खन या घीके बारेमें बिलकुल विश्वास नही रखा जा सकता। वर्धा-जैसे नगरमे, जहाँ इस प्रश्नकी चिन्ता करनेवाले हम-जैसे कुछ लोग रहते है, आज एक भी ऐसी दुकान नही है जहाँ गायका एक सेर भी शुद्ध और विश्वसनीय घी मिल सके।[1]

अतएव मेरा कहना है कि अगर मै उचित उपायो द्वारा गायकी रक्षा कर सका तो मै दूसरे पशुओकी भी रक्षा कर सकूँगा। लेकिन यह तो तभी सम्भव हो सकता है जब हम इसके सच्चे विज्ञान और अर्थशास्त्रको जान ले। उसी हालतमे हम पेरीनबहनकी दिलचस्पी भी इसमे जगा सकेंगे।[2] आज भैसके दूध व घी के प्रति हमारे पक्षपातको देखकर मै तो सन्न रह जाता हूँ। हमारा अर्थशास्त्र सकुचित दृष्टिवाला है। हम अपने तात्कालिक लाभको देखते हैं, लेकिन यह नही सोचते कि आखिर गाय ही हमारे लिए अधिक मूल्यवान है। गायके मक्खन (और घी)मे कुदरती तौर पर जो पीला रग होता है, वह यह साबित करता है कि उसमे भैसके मक्खन (और

१. विवरणके अगले अनुच्छेदके पूर्व महादेव देसाईने इस प्रकार टिप्पणी दी है: "पशुमात्र—वस्तुतः जीवमात्र—पवित्र है और उसकी रक्षा करनी चाहिए। किन्तु जो प्राणी हमारी राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्थामें सबसे अधिक महत्त्व रखता है, उसकी सच्ची रक्षा न करने से दूसरे प्राणियोंकी रक्षा भी न हो सकेगी। गायकी उपेक्षा करके हमने गाय और भैस दोनोंको मौतके दरवाजे ला खड़ा किया है।"

२. पेरीनबहन कैप्टेनको इस सम्मेलनमें आमन्त्रित किया गया था, लेकिन उन्होने यह कहते हुए आने से इनकार कर दिया था कि "पूजाका यह ढोंग मुझे पसन्द नही है। जब आप गो-पूजाको एक बुद्धिसंगत आधार प्रदान करेंगे और ठोस कार्यों से यह दिखा देंगे कि हिन्दू सचमुच गो-भक्त है तब मैं अवश्य ऐसे सम्मेलनोंमें शरीक हो सकती हूँ। और गायकी ही रक्षा क्यों, घोड़े और कुत्तेकी भी रक्षा क्यों नही? ये दोनो भी तो इतने ही सरल और भोले जानवर है।"

घी)के मुकाबले 'केरोटीन' की मात्रा अधिक है। उसमें एक खास तरहकी खुशबू होती है। जो विदेशी यात्री सेवाग्राम आते हैं, वे वहाँ मिलनेवाले गायके शुद्ध दूधको देखकर मुदित हो जाते हैं। यूरोपमें भैंसके दूध या मक्खनका उपयोग लगभग कही नही होता है। अकेले हिन्दुस्तानके लोग ही भैंसके दूध और घीको ज्यादा पसन्द करते हैं। इसके कारण गायका करीब-करीब नाश हो चुका है, और इसीलिए मैं कहता हूँ कि अगर हम अकेली गायकी सेवापर जोर नही देंगे, तो गाय बच नही सकेगी। यह दु:ख की बात है कि आज देशकी तमाम गायो और भैंसोको इकट्ठा करने पर भी हमे उनसे अपनी चालीस करोड जनताके लिए पर्याप्त दूध नही मिल सकता। एक दुधारू पशुके नाते और गाडियो तथा हलोमें जुतकर खेतीका काम करनेवाले एकमात्र उपयोगी पशु (बैल) की माताके नाते हमें गायका मूल्य समझना चाहिए। और, लोगोके पूर्वग्रहोका पोषण हम कबतक करते रहेंगे? गाय तो मरने के बाद भी कीमती साबित होती है — बशर्ते कि हम उसके चमडे, हड्डी, मास, आँत आदिका उपयोग करे। लेकिन चौडे महाराज सोचते है कि क्या हम लोगोको यह समझा सकेंगे कि मरी हुई गायका चमडा पवित्र होता है। क्यो नही समझा सकेंगे? मैं मरी हुई गायके चमडेके जूते पहनकर अपने घरमें जाते नही हिचकिचाऊँगा — बशर्ते कि जूते साफ हो। ऐसे साफ जूते पहनकर भोजन करने मे भी मुझे सकोच या झिझक मालूम नही होगी। लोगोको यह समझाने के लिए कि गायकी परवरिशमे नुकसान नही, नफा है, मुझे यह सब करना होगा। आज कई स्थानोमे लोग मरी हुई गायको या तो गाड देते है या कौड़ियोके भाव बेच डालते है। मुर्दार मास खानेवाले हरिजनोका हम तिरस्कार तो करते है लेकिन यह भूल जाते है कि इसमे कसूर हमारा अपना है। अगर हम गायके चमडेका ठीक-ठीक उपयोग करते होते, खादके रूपमें उसके मासका मूल्य जानते होते, उसकी हड्डियो और आँतोके सदुपयोगका हमे ज्ञान होता—जो हम नालवाडीमें करके दिखा रहे है — तो आज हरिजन मुर्दा ढोरोका मास न खाते होते।

मैं जबसे दक्षिण आफ्रिका छोड हिन्दुस्तान वापस आया हूँ, तभीसे मैं बार-बार पिंजरापोलोंके सुधारके बारेमे कहता रहा हूँ। जबतक हम पिंजरापोलोके सच्चे कार्य को समझकर उनकी परिभाषा निश्चित नही करते, तबतक उनमें पैसेका वैसा ही अप-व्यय होता रहेगा, जैसा आज हो रहा है। पिंजरापोलोका असली काम तो दूध न देनेवाली अपग और बूढी गायोकी रक्षा करना है। कस्बो और शहरोमें लोग इस तरहकी गायोकी स्वय रक्षा नही कर सकते। दूधका प्रबन्ध करना पिंजरापोलोका काम नही,—हालाँकि यदि उनसे बन सके तो वे अलग से दुग्धालय चला सकते है— उनका काम तो बूढे और अपग पशुओकी रक्षा करना और चर्मालयके लिए कच्चे मालका इन्तजाम करना है। हरएक पिंजरापोलके साथ पर्याप्त साधन-सामग्रीवाला एक चर्मालय होना चाहिए। पिंजरापोलोको अच्छेसे-अच्छे सांड रखने चाहिए और लोगोको उपयोगके लिए देने चाहिए। जिन बछड़ोको बैल बनाना हो, उन्हे खस्सी करने के लिए पिंजरापोलोमें भूतदयासे युक्त वैज्ञानिक पद्धतिके साधनोका सम्पूर्ण

प्रबन्ध रहना चाहिए, और पिंजरापोलोंमें किसानो व दुग्धालयोके सचालकोकी शिक्षाके केन्द्र होने चाहिए। हमारे कृषि-विशारदो और दुग्धालय-विशारदो के लिए कामका यह एक बहुत बडा क्षेत्र खाली पड़ा है। उन्हें इस खास कामकी अतिरिक्त शिक्षा मिलनी चाहिए, और बादमे हरएक पिंजरापोलमें उनकी नियुक्ति की जानी चाहिए। इसके बाद ऐसे सब पिंजरापोलोको अखिल भारतीय गोसेवा सघका प्रमाण-पत्र प्राप्त करना चाहिए, और स्वय सघको एक ऐसी केन्द्रीय सस्थाका रूप धारण करना चाहिए, जो इन मामलोमें लोगोको कुशल सलाह दे सके, और सारे देशकी हकीकतो और आँकडोको एकत्र करके उनपर व्यवस्थित ढगसे विचार आदि कर सके। सघने तय किया है कि जो लोग उसके सदस्य बनना चाहे, उन्हें नीचे लिखे प्रतिज्ञापत्र पर हस्ताक्षर करने होगे:

> **मुझे संघके उद्देश्य और कार्य मान्य हैं।**
>
> **मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं सिर्फ गायका दूध और उससे बने पदार्थोंका ही उपयोग करूँगा। चिकित्सा-सम्बन्धी प्रयोजनों या अन्य अनिवार्य परिस्थितियोंमें अथवा दूध और दूधके उत्पादोंकी नगण्य मात्रावाले पदार्थोंके बारेमें इस नियमका बन्धन नहीं रहेगा। मैं कत्ल किये गये गाय-बैल और बछड़ोंके चमड़ेका इस्तेमाल नहीं करूँगा।**
>
> **मैं हर साल संघको १ रुपया या अपना काता हुआ २,००० गज सूत दूँगा।**

जिनके यहाँ आप जायेंगे, उन्हें आपके व्रतसे कठिनाइयाँ या असुविधाएँ तो होगी, मगर आप उनको बहुत बडा रूप मत दीजिए। जहाँ-कही आप जाये, गायका घी अपने साथ रख सकते हैं — जैसे कि काका साहब रखते है — अथवा उसके बिना भी काम चला सकते हैं। इससे अच्छा प्रचार होगा और सम्भव है कि आपके मेज-बानोके विचार भी बदल जाये। लेकिन धर्मका पालन सदा सरल नही होता। उससे विमुख होने मे न मर्दानगी है, न दया-धर्म।[1]

एक प्रश्नका उत्तर देते हुए गांधीजी ने कहा कि गोसेवा कांग्रेसके रचनात्मक कार्यक्रमका एक हिस्सा है।

महात्मा गांधीने सभामें उपस्थित लोगोंसे अपील की कि वे पिंजरापोलोंको सुसंगठित और सुव्यवस्थित बनायें। उन्होंने कहा कि गो-रक्षा और परिरक्षणके इस कार्यमें मुसलमान लोग भी अपना सहयोग दे सकते हैं, क्योंकि इससे दुधारू गायोंकी संख्या बढ़ेगी, लोगोंको पौष्टिक आहार प्राप्त होगा और खेतीके लिए बराबर अच्छे बैल मिलते रहेंगे।

अगर आप जमनालालजी को अपना सह योग, खासकर पिंजरापोलोके मामलेमे, नही देंगे, तो वे कितनी ही कोशिश क्यो न करे, उन्हे सफलता नही मिल सकेगी। आज गाय विनाशके कगारपर खडी है, और मै विश्वासपूर्वक यह नही कह सकता कि

१. अगले दो अनुच्छेद हिन्दूसे लिये गये हैं।

हमारी कोशिशें आखिरकार कामयाब ही होंगी। लेकिन अगर गाय न रही, तो हम भी न रह पायेंगे—हम, यानी हमारी संस्कृति—हमारी मूलतः अहिंसक और ग्रामीण संस्कृति। इसलिए आज हमें चुनाव कर लेना है। अगर हम चाहें, तो हिंसक बन सकते हैं और जो ढोर आर्थिक दृष्टिसे लाभ पहुँचानेवाले न हों, उन सबको मौतके घाट उतार सकते हैं। फिर तो हमें यूरोपकी तरह ढोरोंका पालन दूध और मांस के लिए ही करना होगा। लेकिन हमारी संस्कृतिका कलश तो किसी दूसरी ही नींव पर रखा गया है। हमारा जीवन हमारे पशुओंके साथ ओतप्रोत हो गया है। हमारे गाँवोंमें रहनेवाले अधिकांश लोग अपने मवेशियोंके साथ अकसर एक ही छप्परके नीचे रहते हैं। दोनों साथ रहते हैं, और साथ ही भूखके कष्ट सहते हैं। अकसर मालिक बेचारे ढोरोंको भूखों मारता है, उनकी बेबसीसे अनुचित लाभ उठाता है, उनपर जुल्म ढाता है, और उनसे निर्ममतासे काम लेता है। लेकिन अगर हम अपना रंग-ढंग सुधारें, तो अपने साथ हम अपने ढोरोंका भी उद्धार कर सकते हैं। अन्यथा हम दोनों साथ डूबेंगे, और अच्छा भी यही है कि हम एक साथ तरें या एक साथ मरें।

आज हमारे सामने सबसे बड़ा सवाल अपनी गरीबी और फाकाकशीको मिटाने का है। लेकिन मैंने तो आपके सामने ढोरोंकी भूख और उनकी गरीबीकी ही बात की है। हमारे ऋषियोंने हमें इसका सबसे अच्छा उपाय सुझाया है। वे कह गये हैं, 'गायकी रक्षा करोगे, तो तुम सबकी रक्षा कर सकोगे।' ऋषियोंकी दी हुई मनीषाको हमें बढ़ाना है, व्यर्थ ही उसे नष्ट नहीं कर डालना है। हमने जिन विशेषज्ञोंको[1] यहाँ निमन्त्रित किया है, उनकी सलाहका हम पूरा-पूरा उपयोग करनेवाले हैं। साधारण व्यक्ति की हैसियतसे हम जो-कुछ कहते हैं, सो अन्तिम नहीं माना जा सकता, अतः हम अपने इन विशेषज्ञोंसे कहेंगे कि वे अपने ज्ञान और अनुभव द्वारा हमारी बातको कसौटीपर चढ़ाकर देखें। हम हमेशा उनकी सलाह माँगेंगे और उनकी आलोचनाका स्वागत करेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-२-१९४२ और १५-२-१९४२, तथा हिन्दू, २-२-१९४२

३४१. तीन जरूरी बातें

अगर यह मान लिया जाये कि जनसाधारणमें कताईके प्रति ललक पैदा हो गई है तो तेजीसे उसका प्रसार तभी सम्भव है जब निम्नलिखित तीन बातें अपनाई जायें:

१ अपने ही खेतमें कपास उगाई जाये और अगर ऐसा न किया जाये तो सबसे नजदीकके स्थानसे प्राप्त बिना ओटी हुई कपासका ही प्रयोग किया जाये।

१ बंगलौर दुग्धशालाके कोठावाला, इलाहाबाद कृषि संस्थानके सैम हिगिनबॉटम, कृषि अनुसन्धान संस्थानके विश्वनाथन् और माण्टगुमरी दुग्धशालाके दातारसिंहने सम्मेलनमें भाग लिया था।

२. कपासको लकडीके चिकने तख्तेपर लोहेकी छड़ या लकड़ीकी चिकनी छडीसे ओटा जाये और फिर खुद ही लकडीकी छुरीनुमा पट्टी बनाकर, उस पट्टीकी सहायतासे, उँगलियोसे कपासको पीजा जाये। इस प्रक्रियाको तुनाई कहते है।

३. पूनियोको धनुष-तकलीपर काता जाये।

हाथसे ओटने की चरखी आज चाहने-भरसे तैयार नही की जा सकती। बिना ओटी हुई जितनी भी कपास मिल जाये उसे दूसरी शर्तमे बताई गई विधिसे पहले तैयार कर लिया जाये।

जहाँ बिना ओटी कपास न मिले वहाँ फैक्टरियोसे प्राप्त ओटी हुई कपासका इस्तेमाल करना है। इसकी भी तुनाई की जा सकती है, यद्यपि गाँठकी कपासको तुनाई-पद्धतिसे पीजने में बहुत ज्यादा समय लगता है। जहाँ धुनकी उपलब्ध हो वहाँ तो स्वभावत उसका इस्तेमाल किया ही जाये। लेकिन जो बात ओटाईपर लागू होती है वही पिजाईपर भी लागू होती है। धनुष और ताँत बात-की-बातमे तैयार कर लेना सम्भव नही है। तुनाई-पद्धतिकी खोज श्री विनोबाने की है और वे कलाकारके कौशल और उत्साहसे उसे साध रहे है।

जब कताईका प्रचार जनसाधारणके बीच हो जायेगा तब किसी एक केन्द्र या अनेक केन्द्रोसे पूनियाँ मुहैया कर पाना असम्भव होगा। अधिकसे-अधिक यही सम्भव है कि हर परिवार या परिवार-समूहमे अमुक सख्यामे कातनेवालो के हिसाबसे एक-दो पीजनेवाले तैयार हो जाये। लेकिन आदर्श, सबसे अच्छा और अन्तत सबसे जल्दीका तरीका भी यही है कि हर कतैया अपनी जरूरतकी पूनियाँ आप तैयार करे। इससे कताई अधिक दिलचस्प हो जाती है और कताईसे सम्बन्धित अनेक क्रियाएँ खुद करने से एकरसता भी दूर होती है।

यद्यपि अभी सकटकी स्थिति पास आई नही जान पडती और मिले ठीक काम कर रही हैं, फिर भी मेरी सलाह है कि खादी-कार्यकर्त्ता मेरे उपर्युक्त सुझाव अभी से अपना ले तो अच्छा रहे। फिर जब सकट आयेगा तो हम उसका सामना करने के लिए ठीकसे तैयार होगे।

सेवाग्राम, २ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-२-१९४२

३४२. हिन्दी + उर्दू = हिन्दुस्तानी

नीचे लिखा हुआ पत्र[1] एक भाईने पिछली २९ जनवरीको लिखकर मेरे नाम रजिस्ट्रीसे भेजा था, जो मुझे सेवाग्राममे ३१ जनवरीको मिला

पत्र-लेखकने पत्रके नीचे अपने हस्ताक्षर तो दिये है, लेकिन साथ ही उसपर निजी भी लिखा है, इसलिए यहाँ मै उनका नाम नही दे रहा हूँ। नामका कोई खास महत्त्व भी नही। मै जानता हूँ कि जो विचार इन भाईके है, वही और भी बहुतेरे मुसलमानोके है। मेरे हजार इनकार करने पर भी यह बुराई दूर नही हो पाई है।

लेकिन जहाँतक मेरा सम्बन्ध है, इन भाईको इसी विषयपर मेरे उस लेखसे[2] तसल्ली होनी चाहिए जो २३ जनवरीको लिखा गया था और १ फरवरीके 'हरिजन' मे छपा है।

मै पत्र-लेखककी इस बातसे पूरी तरह सहमत हूँ कि जो लोग राष्ट्रभाषाके हिमायती है, उन्हे उसके हिन्दी और उर्दू दोनो रूप सीखने चाहिए। इन्ही लोगोकी कोशिशसे हमें वह भाषा मिलेगी जो सबकी भाषा कहलायेगी। भाषाका जो रूप अधिक लोकप्रिय होगा और जिसे लोग, फिर वे हिन्दू हो या मुसलमान, ज्यादा समझ सकेंगे, बेशक वही राष्ट्रभाषा बनेगी। लेकिन अगर लोग मेरी तजवीज को आम तौर पर अपना ले, तो फिर भाषाका सवाल न तो राजनीतिक सवाल रहेगा और न वह किसी झगडेकी जड ही बन सकेगा।

मै पत्र-लेखककी इस बातको मानने को तैयार नही हूँ कि उर्दू "ज्यादा विकसित, ज्यादा खूबसूरत, ज्यादा लुभावनी, ज्यादा सुगठित और ज्यादा अर्थ-सूचक" भाषा है। पत्र-लेखकने उर्दूकी जो विशेषताएँ बताई है वे सब किसी भाषामे स्वत ही विद्यमान नही होती। भाषा तो जैसी उसको बोलने और लिखनेवाले उसे बनाते है वैसी बन जाती है। अंग्रेजीकी जो खूबियाँ है वे अंग्रेजोकी कोशिशसे ही उसमे आई है। दूसरे शब्दोमें, भाषा मनुष्यकी सृष्टि है और वह अपने स्रष्टाके रगमें रँगी रहती है। हर भाषामें अपना अनन्त विस्तार करने की शक्ति रहती है। आधुनिक बँगला वही तो है जो उसे बंकिम और रवीन्द्रनाथने बनाया। इसलिए अगर यह सच है कि उर्दू आज हिन्दीसे हर बातमें बढी-चढी है, तो उसकी यही वजह हो सकती है कि उसके निर्माता हिन्दीके निर्माताओसे ज्यादा लायक है। मगर इसपर मै अपनी कोई राय नही दे सकता, क्योकि भाषा-शास्त्रीकी दृष्टिसे मैने दोनोंमें से किसी का भी

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। उसमें गाधीजी पर हिन्दुस्तानीके नामपर हिन्दीकी हिमायत करने का आरोप लगाया गया था।

२. "हिन्दुस्तानी" शीर्षक लेखसे, देखिए पृ० २७७-७९।

अध्ययन नही किया है। अपने सार्वजनिक कामके लिए जितना जरूरी है, उतना ही मै इन्हे जानता हूँ।

लेकिन क्या उर्दू हिन्दीसे उसी तरह भिन्न है जिस तरह — उदाहरणके लिए — बँगला मराठीसे? क्या उर्दू सीधे हिन्दीसे निकली उसी भाषाका नाम नही, जो फारसी लिपिमे लिखी जाती है और सस्कृतसे नये शब्द लेने के बजाय फारसी या अरबीसे नये शब्द लेने की वृत्ति रखती है? अगर हिन्दुओ और मुसलमानोके बीच किसी तरहकी अनबन न होती तो लोग इस चीजका खुशीसे स्वागत करते। और जब आपसकी यह अदावत मिट जायेगी — जैसा कि एक दिन जरूर होगा — तो भावी पीढियाँ हमारे इन झगड़ोपर हँसेंगी और अपनी उस सर्वसामान्य भाषा हिन्दुस्तानीपर गर्व करेगी जो असंख्य लेखको और लोगो द्वारा उनकी अपनी आवश्यकता, रुचि और योग्यताके अनुसार कई भाषाओसे खुले दिलसे लिये गये शब्दोके मेलसे बनी हुई होगी।

यहाँ मै अपने पत्र-लेखककी एक भूलको दुरुस्त कर देना चाहता हूँ। उनका कुछ ऐसा खयाल मालूम होता है कि आखिरकार हिन्दुस्तानी तमाम प्रान्तीय भाषाओ की जगह ले बैठेगी। यह न तो कभी मेरा सपना रहा, और न ही उन लोगोका जो देशके लिए एक राष्ट्रभाषाकी बात सोचते रहे है। हम सब सपना तो यह देख रहे है कि मुल्कमे हिन्दुस्तानी उस अग्रेजीकी जगह ले ले जो आज पढे-लिखे लोगोके आपसी व्यवहारका माध्यम बन गई है और जिसका नतीजा यह हुआ है कि पढे-लिखो और आम लोगोके बीच आज एक खाई-सी खुद गई है। इस दुर्भाग्यका प्रतिकार तभी हो सकता है जब अन्तर्प्रान्तीय व्यवहारके लिए हम उस भाषाको अपनायें जो देशकी लोकभाषा हो, यानी जिसे देशके ज्यादासे-ज्यादा लोग बोलते हो। इसलिए दरअसल झगडा उर्दू-हिन्दीका नही, बल्कि हिन्दी और उर्दू दोनोका अग्रेजीसे है। दोनो भगिनी-भाषाओके रास्तेमे जो भारी अडचने है और दोनोमे अभी जो अस्थायी झगडा चल रहा है उसके बावजूद अग्रेजीके खिलाफ इनकी लड़ाईका नतीजा एक ही हो सकता है, इन दोनोकी फतह।

पत्र-लेखकको हिन्दी साहित्य सम्मेलनसे मेरे सम्बन्धपर भी एतराज है। मुझे उसके साथ अपने इस सम्बन्धपर गर्व है। अबतक का उसका इतिहास उज्ज्वल रहा है। हिन्दी शब्दसे हिन्दू-मुसलमान दोनोका बोध समान रूपसे होता है। दोनोने हिन्दीमें लिखकर उसके भण्डारको समृद्ध बनाया है। स्पष्ट ही पत्र-लेखकको यह पता नही कि सम्मेलनके साथ मेरे सम्बन्धका क्या असर हुआ है। सम्मेलनने मेरी प्रेरणासे ही न सिर्फ अपनी बुद्धिमानीका बल्कि इजाजत हो तो कहूँ कि अपनी देश-भक्ति और उदारताका परिचय देते हुए, हिन्दीकी उस परिभाषाको अपनाया जिसमें उर्दू भी शामिल है। वे पूछते है कि क्या मै कभी किसी उर्दू अंजुमनमें शामिल हुआ हूँ। मुझसे किसीने कभी इसके लिए गभीरतापूर्वक कहा ही नही। अगर कोई कहता, तो मै उसके सामने भी वैसी शर्त रखता जैसी मैंने सम्मेलनका सभापति बनने के लिए कहनेवाले के सामने रखी। मै अपने उर्दू-भाषी मित्रोसे, जो मुझे आमन्त्रित करने आते, कहता कि वे मुझको जनतासे यह कहने की इजाजत दें

कि वह उर्दूकी ऐसी व्याख्या करे जिसमे देवनागरी लिपिमें लिखी हिन्दीका भी शुमार हो। लेकिन मुझे कोई ऐसा मौका ही न मिला।

मगर अब, जैसा कि मैं अपने उपर्युक्त १ फरवरीवाले लेखमे इंगित कर चुका हूँ, मैं चाहता हूँ कि किसी ऐसी संस्थाका संगठन हो जो अपने सदस्योंसे हिन्दी और उर्दूका तथा इन दोनो लिपियोंका अध्ययन करने की सिफारिश करे और इस उम्मीदके साथ इस चीजका प्रचार करे कि आखिरकार किसी दिन ये दोनो कुदरती तौरपर मिलकर एक सर्वसामान्य अन्तर्प्रान्तीय भाषाका रूप ग्रहण कर लेंगी, जिसका नाम होगा, हिन्दुस्तानी। उस समय इनका समीकरण हिन्दी + उर्दू = हिन्दुस्तानी न होकर हिन्दुस्तानी = हिन्दी = उर्दू होगा।

सेवाग्राम, २ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-२-१९४२

३४३. आश्रमकी प्रार्थना

आश्रमकी प्रार्थनाका काफी प्रचार हुआ है। उसका विकास अपने-आप होता रहा है। 'आश्रम-भजनावली'[1] के अनेक संस्करण निकल चुके हैं। उसकी माँग बढ रही है। प्रार्थनाकी उत्पत्ति कृत्रिम रूपमे नही हुई। उसमें जिन श्लोको और भजनोको स्थान प्राप्त हुआ है, उनका सबका अपना एक इतिहास है।

भजनोंमें सभी धर्मोंको अनायास ही स्थान मिला है। मुस्लिम सूफियो और फकीरोंके भजन उनमें हैं, गुरु नानकके और ईसाइयोंके भजन भी हैं।

आश्रममें चीनवाले रह चुके हैं, ब्रह्मदेशके साधु और लंकाके गृहस्थ भी रह चुके हैं। मुसलमान, पारसी, यहूदी, अंग्रेज वगैरा भी रहे हैं। इसी तरह सन् १९३५ में कुछ जापानी साधु मेरे पास मगनवाडी (वर्धा)में आकर रहने लगे थे। उनमें से एक अभी तक मेरे पास ही थे। जापानके साथ लडाईकी घोषणा होने पर वे गिरफ्तार कर लिये गये। रोज सुबह-शाम वे अपनी प्रार्थना, ढोलकी आवाजके साथ, चलते-फिरते किया करते थे। सेवाग्रामके वे एक आदर्श व्यक्ति थे। आश्रमके दैनिक कार्योंमें उत्साहपूर्वक हाथ बँटाते थे। मुझे याद नही पडता कि कभी किसीके साथ उनका झगडा हुआ हो। बेमतलब किसीसे बातें करते मैंने उन्हे नही देखा। उन्होंने अपने भरसक हिन्दीका अभ्यास किया। व्रत-पालनमें वे सदा जाग्रत रहे। आश्रमकी शामकी प्रार्थना उनके नित्य जपके मन्त्रसे शुरू हुआ करती थी। मन्त्र था

नंम्यो हो रेंगे क्यो

अर्थात्, सद्धर्मके प्रवर्तक भगवान् बुद्धको नमस्कार हो।

जब पुलिस उन्हे गिरफ्तार करने आई, तो जिस व्यवस्था, शीघ्रता और तटस्थतासे तैयारी करके वे मुझसे मिलने आये, उसे मैं भूल ही नही सकता। विदाईके

१. देखिए पृष्ठ ४४।

समय अपने ढोलके साथ वे मेरे सामने आ खडे हुए, अपने प्रिय मन्त्रका उच्चार किया और विदा चाही। मैने सहज भावसे उन्हें कह दिया 'आप जा रहे है, लेकिन आपका मन्त्र आश्रमकी प्रार्थनाका एक अविभाज्य अग रहेगा।' तबसे उनकी गैरहाजिरी मे आश्रमकी प्रार्थना इसी मन्त्रसे शुरू होती है। मेरे लिए, यह मन्त्र साधु केशोकी पवित्रता और एकनिष्ठाका स्मारक है। अत इसमे खास शक्ति है।

जिन दिनो साधु केशो यहाँ थे, बीबी रेहाना तैयबजी कुछ दिनोके लिए रहने आईं। वह चुस्त मुसलमान है। मुझे पता न था कि वह कुरान शरीफकी अच्छी जानकार है। जिस वक्त गुजरात-रत्न अब्बास तैयबजी साहबका अन्तकाल हुआ, उनके कमरेसे रोने की आवाज न उठी, बल्कि बीबी रेहानाके कुरान शरीफके पाठकी गूँजसे कमरा भर गया। तैयबजी साहब मरे ही कब थे? वे तो अपने कामोके रूपमे हमेशा ही जिन्दा है।

जब रेहाना बहन आ गई, तो मैने मजाकमे कहा 'तुम आश्रमवालोको मुस्लिम बनाओ, मै तुम्हे हिन्दू बनाऊँगा।' सगीत तो उनका उत्कृष्ट है ही — उनके पास सब प्रकारके भजनोका भण्डार भी है। वह हमे नित नये भजन सुनाती थी। कुरानकी मीठी-मीठी ऊँची अर्थोवाली आयते भी सुनाया करती थी। मैने कहा 'कुछ आयते यहाँ जो सीखना चाहे उन्हे सिखाती जाओ।' उन्होने सिखाना शुरू कर दिया। फिर क्या पूछना था? सबके साथ समरस हो गईं। भक्तोने जो आयते सीखी, उनमें सबसे मशहूर 'अल फातेहा' है। यो, यह आयत भी प्रार्थनामे दाखिल हुई। रेहाना बहन अपने कामपर चली गई, मगर अपनी याद छोड गईं। इस आयतका मतलब है

> 'मै पापात्मा शैतानसे बचने के लिए परमात्माकी शरणमे जाता हूँ।'
>
> 'ईश्वर एक है, वह सनातन है, निरालम्ब है, अज है, अद्वितीय है। वह सबको पैदा करता है, उसे कोई पैदा नही करता।'
>
> 'प्रभो, तेरे ही नामसे मै सब शुरू करता हूँ। तू दयाका सागर है, तू मेहरबान है, तू सारे विश्वका सिरजनहार है। मालिक है। हम तेरी ही आराधना करते है, तेरी मदद माँगते है। तू ही अन्तमे न्याय करेगा। तू हमे सीधा रास्ता दिखा — उन लोगोका रास्ता, जो तेरी कृपादृष्टिके पात्र बने है, उनका नही, जो तेरी अप्रसन्नताके पात्र बने है और मार्ग भूले है।'

एक मित्र, जो खुद चुस्त हिन्दू है, और मेरे हिन्दू होने के दावेसे इनकार भी नही करते, मीठा उलाहना देते हुए कहते है "अब तो आपने आश्रममे कलमा भी शुरू करा दिया। अब बाकी क्या रहा?" यह लेख उन्हीकी इस शकाके उत्तरमे लिखा गया है। साधु केशोके जापानी मन्त्र और कुरानकी आयतसे मेरा और आश्रम के हिन्दुओका हिन्दुत्व ऊपर उठा है। आश्रमके हिन्दुत्वमे सब धर्मोके प्रति समानताका भाव रहा है। जब खान साहब मेरे पास आते है, तो रोज प्रार्थनामे भावपूर्वक शरीक होते है। रामायणका स्वर उन्हे मीठा लगता है। गीताका अर्थ वे ध्यानसे सुनते है। उनका मुस्लिमपन इससे कम नही हुआ। क्या मै कुरानको उतनी इज्जतसे न पढूँ, न सुनूँ? विनोबा और प्यारेलालने जेलमे स्वय बडी मेहनत और मुहब्बतके साथ कुरान सीखा। अरबीका अध्ययन किया। उन्होने कुछ गँवाया नही, काफी कमाया

है। हिन्दू-मुस्लिम एकता ऐसी ही कोशिशोसे होगी। और किसी तरह कभी नही। रामके नाम हजारो नही, अरवो है, अगणित है। अल्लाह कहो, खुदा कहो, रहीम कहो, रहमान कहो, रज्जाक कहो, रोटी देनेवाला कहो, सब उसीके नाम है।

सेवाग्राम, २ फरवरी, १९४२

हरिजन-सेवक, ८-२-१९४२

३४४. पत्र : अमृतकौरको

सेवाग्राम, वर्धा
२ फरवरी, १९४२

चि० अमृत,

आदर्श निजी सचिव अपने मालिकको भटकने से बचाती है और उसे बराबर ठीक रास्तेपर रखती है। वह हमेशा उसके आसपास ही मँडराती रहती है और उसके इर्द-गिर्द चलनेवाली सारी गति-विधिपर नजर रखती है। वह उसके कागजात उठाकर रखती है और फटे हुए कागजोको भी नही छोडती है, क्योकि हो सकता है, उसके मालिकने भूलसे महत्त्वपूर्ण कागज ही फाड डाले हो। वह उसे जो भी कागजात देती है, सबको—यदि वे कही मिल जायें तो—वापस लेकर सहेजकर रखती है। इसलिए वह कार्यस्थानको अपने मालिकके बाद ही छोडती है और देखती है कि वह क्या-कुछ छोडकर वहाँसे उठा है। जो चीजे उसे मिल जाती है वे अगर किसी और की नही हुई, तो वह उन्हे सँभालकर रखती है।

कल जो मैंने तुम्हारा भूल-सुधार किया, वह बिलकुल सही आचरण था, लेकिन मेरा निराशा या झुँझलाहट प्रकट करना बिलकुल गलत था। जो गलत था उसे भूल जाओ और जो सही था उसे सँजोकर रखो। मैंने जो-कुछ कहा है, संकेतके रूपमें कहा है। इस पत्रकी भावनाको समझने की कोशिश करो। फिर तुम सहज ही आदर्श निजी सचिव बन जाओगी।

यह मेरा जन्मदिनका उपहार है। इस अवसरपर मैं तुम्हे अपने अन्तर्तम की सारी शुभकामनाएँ भेजता हूँ।

स्नेह।

बापू

राजकुमारी अमृतकौर
सेवाग्राम

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ३६८६) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ६४९५ से भी

३४५. पत्र : जमनालाल बजाजको[1]

दुबारा नहीं पढ़ा

मौनवार, २ फरवरी, १९४२

चि० जमनालाल,

तुमारा प्रश्न विचारणीय है। गो० से० संघ हिंदू धर्मकी सस्था है कि सार्वजनिक? सार्वजनिक है तो गो-सेवाको सब धर्मी कबूल करते है, करेंगे? अगर धर्म सस्था नहि है तो सब धर्मोको खीचने का प्रयत्न करे।

तुमारी नामावलीमें अन्य प्रातके कोई देखे नहि जाते। दक्षिणमें गो-सेवाका नाम नहि, नहि बगालमें या पजाबमें। वहासे किसीको नहि लेना है?

चौंडे महाराजके सबधमें आजकल नहि आया हू। लेकिन मेरा अनुभव कुछ अच्छा नहि है। उनके साथ एक-दो आदमी हैं, वे अच्छे है। मेरी वृत्ति तो यह है कि वे जितनी सहाय दे सके हम ले। उनके पास अपनी सस्था है। इसमें हस्तक्षेप नहि होना चाहिये। एक-दूसरोसे हम सीखे। भ्रातृभाव रखे।

हा कोई भी औरत तो होनी चाहिये। मणीबहनको अवश्य लो। राजकुमारीके लिये बडी मुश्केली है। अपने घरमे वह गाय बारेमें नियम पालन नहि कर सकेगी। सहायक या मित्र वर्ग निकाले उसमे रा० कु० जैसे आ सकेंगे। पुराने सघके पैसे के बारेमें देख लूगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०३२) से

३४६. पत्र : कृष्णचन्द्रको

मौनवार, २ फरवरी, १९४२

चि० कृ० च०,

जो चाकु मुझे दिया जाता है देखने लायक है। मेलसे भरा है। जेलमें ऐसे चाकु चमकीले रहते हैं। यह भी ऐसा बन सकता है। और हमारा सब सामान ऐसा हि होना चाहिये।

बापु

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१२) से

१. यह पत्र जमनालाल बजाज द्वारा लिखे इसी तारीखके पत्रके उत्तरमें था। तथापि उन्होंने अपनी डायरीमें लिखा है कि वे गाधीजीके उत्तरको समझ नही पाये।

३४७. प्रश्नोत्तर

हिन्दू-मुस्लिम समस्या

प्र० : हिन्दू-मुस्लिम समस्याका आपने जो समाधान सुझाया है[1] उसमें क्या आप सभी हिन्दुओंके विधान-मण्डलोंसे अलग रहने की अपेक्षा रखते हैं या कुछ थोड़े-से हिन्दुओंके? अगर कुछ थोड़े-से हिन्दुओंको ही अलग रहना है तो क्या बहुत ही प्रतिक्रियावादी हिन्दू विधान-मण्डलोंमें प्रवेश करके स्थितिको और भी बिगाड़ नहीं देंगे? और अगर आप यह आशा रखते हैं कि कांग्रेसी विधान-मण्डलोंके बाहर रहकर मुसलमानोंपर वांछित प्रभाव डाल सकते हैं तो फिर उसके अन्दर रहकर आप लोग वही काम शायद अधिक कारगर ढंगसे क्यों नहीं कर सकते?

उ० मैं सभी हिन्दुओसे बाहर रहने की अपेक्षा नही करता। मैं जानता हूँ कि हिन्दुओके लिए सुरक्षित सभी स्थानोपर, उस हालतमें, गैर-कांग्रेसी ही आयेंगे। यदि कांग्रेसी हिन्दू विधान-मण्डलोमें प्रवेश करेंगे तो उससे किसीका लाभ तो नही हो सकेगा, अलबत्ता खुद वे साम्प्रदायिकताकी चक्कीके दो पाटोके बीच पिस जायेंगे। इस समस्याके प्रति मेरा दृष्टिकोण एक-हिन्दूका दृष्टिकोण नही है। इसके प्रति मेरा दृष्टिकोण ऐसे कांग्रेसीका दृष्टिकोण है जो सभी सम्प्रदायोका प्रतिनिधित्व करने की कोशिश करता है। भारतीय विधान-मण्डलोकी रचनामें जो कृत्रिम पद्धति दाखिल कर दी गई है यदि वह न होती तो सभी सदस्य अलग-अलग सम्प्रदायोके नही, बल्कि सम्प्रदायेतर सिद्धान्तोके अनुसार गठित दलोके प्रतिनिधि होते। सभी सम्प्रदायोके प्रतिनिधिकी हैसियतसे मैं न केवल हिन्दुओंसे, बल्कि कांग्रेसी विचारधाराके मुसलमानो तथा अन्य लोगोसे भी विधान-मण्डलो तथा दूसरी निर्वाचित संस्थाओसे अलग रहने की अपेक्षा करूँगा। विधान-मण्डलोसे दूर रहनेवाले लोग सभी समुदायोके बीच ठीक न्याय करेंगे और विधान-मण्डलोको बाहरसे प्रभावित करने का प्रयत्न करेंगे। चाहे उनकी संख्या बहुत हो या कम, वे सयाने लोगोकी भूमिका निभायेंगे। अगर सभी लोग मेरी सुनें तो साम्प्रदायिक समस्या हमारे बीचसे लुप्त हो जायेगी। विधान-मण्डलोमें प्रवेश करके कांग्रेसी हिन्दू खामखाह टाँग अडानेवाले लोग बन जाते हैं और वे कभी इस पक्षको तो कभी उस पक्षको नाराज करने के भयसे कमजोरीका व्यवहार करते हैं। मैं जानता हूँ कि आज विधान-मण्डल युद्ध-संचालक यन्त्रके हिस्से हैं और उन्हें यही होना भी है। उनके सामने और कोई रास्ता भी नही है। यदि वे युद्ध-प्रयत्नोमे बाधा डालेंगे तो उन्हे काम ही नही करने दिया जायेगा। जिन शासकोका एकमात्र काम युद्ध चलाना हो गया है वे और कुछ कर भी कैसे सकते हैं?

१. देखिए "साम्प्रदायिक एकता", पृ० २६२-६३।

हिन्दू बहुमतवाले प्रान्तोंमें क्यों नहीं ?

प्र० : जहाँ हिन्दुओंका बहुमत है, वहाँ भी प्रान्तीय विधान-मण्डलोंसे कांग्रेसियों को अलग हो जाने की राय क्यों न दी जाये ?

उ० इसलिए कि मैं नही चाहता कि गैर-मुस्लिम अल्पसख्यक पक्ष इस तरह व्यवहार करे मानो वे बहुसख्यक हो और वही इन प्रान्तोका शासन चलायें। यह एक अवास्तविक स्थिति होगी और अगर काग्रेसी सदस्य अलग हो जायेंगे तो वे वैसी स्थिति उत्पन्न करने के भागी माने जायेंगे। इसलिए इन प्रान्तोमे विधान-मण्डलोसे अलग रहने से साम्प्रदायिक समस्या सुलझनेवाली नही है और उससे अनचाही और अवाछनीय स्थिति उत्पन्न हो जायेगी।

भाषाके साथ अत्याचार ?

प्र० : आपका "यूनीलेटरल" (एकपक्षीय) शब्दके स्थानपर "यूनिटरी"[1] (एकात्मक) शब्दका प्रयोग करना भाषाके साथ अत्याचार करना है। कारण, आपका मतलब तो स्पष्टतः "यूनीलेटरल" (एकपक्षीय) से ही है।

उ० मै तो कहूँगा कि मै कोई गलती नही कर रहा हूँ। 'यूनीलेटरल'का एक निश्चित कानूनी अर्थ है, जिससे उस चीजका बोध नही होता जो मै कहना चाह रहा हूँ। मेरा तात्पर्य 'वनसाइडेडनेस' (एक तरफा)से नही है। मेरा मतलब तो "नो-साइडेडनेस" (पक्षहीनता) से है। इसमे "इम्पार्शिअलिटी" (निष्पक्षता) भी अन्तर्निहित है। लेकिन यह तरीका, निष्पक्षता का नही है। वास्तवमे यह उससे कुछ अधिक है। मै एक पक्षका, समझ लीजिए काग्रेसका, प्रतिनिधित्व करता हूँ। समस्याके समाधानके लिए मै एक तरीकेका इस्तेमाल करता हूँ, जिसके द्वारा मै उन लोगोको प्रभावित करने की कोशिश करता हूँ जो मुझसे नाखुश हैं। यहाँ मै केवल निष्पक्ष ही नही हूँ, क्योकि हो सकता है, मैं उन्हे प्रसन्न कर भी पाऊँ और नही भी कर पाऊँ। मेरी निष्पक्षताकी अनुभूति तो उस पक्षको करनी है जिसे मुझसे शिकायत है। मेरे आचरणका उस पक्षसे कोई सम्बन्ध नही है जिसे मुझसे शिकायत है। उस पक्षको सन्तुष्ट करने के लिए मुझसे जहाँतक आगे बढते बनता है, बढ़ता हूँ और इस बातका भरोसा रखता हूँ कि मेरा सर्वथा शुद्ध आचरण उस पक्षको अवश्य प्रभावित करेगा। हो सकता है, मुझे जल्दी सफलता न मिले। लेकिन अगर मेरे तरीके के पीछे सच्ची न्याय-भावना है तो वह अवश्य सफल होगा। कोई और अच्छा शब्द न मिल पाने के कारण मैंने इसे "यूनिटरी" (एकात्मक) पद्धति कहा है। शब्दकोषका अर्थ मेरी उस कसौटीपर ठीक उतरता है जिसे मैं यहाँ अपूर्ण रूपसे ही अभिव्यक्ति दे पाया हूँ।

सेवाग्राम, ३ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-२-१९४२

१. देखिए "एकात्मक पद्धति", पृ० २९१।

३४८. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

३ फरवरी, १९४२

चि० मुन्नालाल,

शैलेन्द्रको बहुत-सी शिकायतें हैं। वह कहता है, उसे भाजीका रस नियमपूर्वक नहीं मिलता। भाजी बनाने में मदद करनेवाला कोई नहीं होता। उससे बात करके आवश्यक प्रबन्ध कर देना।

बापू

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४७९) से। सी० डब्ल्यू० ७१६४ से भी, सौजन्य मुन्नालाल गंगादास शाह

३४९. चर्चा : अखिल भारतीय गो-सेवा संघ सम्मेलनमें[1]

३ फरवरी, १९४२[2]

क्या आपके कहने का मतलब यह है कि जिस प्रकार खादीसे भारतीय मिलोंके कपड़ेकी रक्षा होती है उसी प्रकार गो-रक्षासे भैंसकी भी रक्षा होगी? [उत्तरमें] गांधीजी ने कहा:

हाँ, लेकिन मेरा मतलब इससे कुछ अधिक भी है। मैंने अकसर कहा है कि अगर सभी मिलें बर्बाद हो जायें तो भी मैं उसपर एक बूंद आँसू न बहाऊँ। लेकिन भैंसके बारेमें मैं ऐसी बात कभी नहीं कह सकता।

अपनी बात अधिक विस्तारसे समझाते हुए उन्होंने कहा:

नहीं, मेरा मतलब यह है कि आज यदि हम गायकी रक्षा नहीं करते तो हम गाय और भैंस दोनों से किसीकी रक्षा नहीं कर पायेंगे। और दोनोंको बचाने के लिए एक साथ प्रयत्न करना सम्भव नहीं है। संयुक्त प्रयत्नका परिणाम यह होगा कि भैंस गायको ग्रस लेगी। गाय अधिक उपेक्षित जानवर है और इसीलिए हमें गाय

१. "गो-सेवा संघ-२" शीर्षक लेखसे उद्धृत। अपने इस लेखमें भूमिका-स्वरूप महादेव देसाई बताते हैं: "... भैंसके प्रति क्या रुख अपनाया जाये, इस सम्बन्धमें किसीका विचार स्पष्ट नहीं जान पड़ता था, और न किसीकी समझमें यही बात आ रही थी कि अगर हम गायको बचायेंगे तो उससे भैंसकी भी रक्षा कैसे हो सकेगी।"

२. बापू-स्मरणसे

पर अपना ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। लेकिन जबतक हम लोगोके — विशेषकर गोशालाएँ और पिंजरापोल चलानेवाले लोगोके — दृष्टिकोणको नही बदलेगे तबतक भले ही जमनालालजी कुछ करोड रुपये इकट्ठा कर ले, हम अपना लक्ष्य नही प्राप्त कर पायेंगे।

'बहिष्कार' का कोई प्रश्न नही उठता, और भैंसोको मारने का तो बिलकुल नही। पाश्चात्य अर्थशास्त्री इस तरहकी समस्याका सहज समाधान हत्यामें ढूँढने लगते है। यही कारण है कि घटिया नस्लकी गायो और साँडोका वध किया जाता है। लेकिन यह समाधान मेरे लिए किसी कामका नही है। मेरा यह दृढ विश्वास है कि यदि हम गो-रक्षाके सच्चे शास्त्रपर अधिकार प्राप्त कर ले तो भैंस तथा अन्य जानवरोकी रक्षाका शास्त्र भी सहज ही हमारे हाथ लग जायेगा।

[प्र०] लेकिन मान लीजिए आप सेवाग्राममें सभी भैंसोंका बहिष्कार करते हैं तो उनका और उनके मालिकोंका क्या होगा?

अगर आप गो-रक्षाके अपने उद्देश्यमे उस हदतक सफल हो जाते है तो मै वचन देता हूँ कि फिर मै भैंसकी रक्षाका काम अपने हाथमे अवश्य लूँगा। अगर मिल-मालिक अपनी मर्जीसे मिले बन्द कर दे तो मै खुशीसे नाचने लगूँगा, लेकिन अगर भैंसोके मालिक उनका वध कर दे तो मुझपर ऐसी कोई प्रतिक्रिया नही हो सकती। पाश्चात्य अर्थ-शास्त्र नैतिकताविहीन है, हमारा अर्थशास्त्र नैतिकतायुक्त है या अगर नही है तो उसे होना चाहिए। मै जो केवल गो-रक्षा पर ही जोर देता हूँ, उसका कारण यह है कि गायकी अनुचित उपेक्षा की जाती रही है, यद्यपि मेरी रायमे गाय आर्थिक दृष्टिसे अत्यन्त उपयोगी है। मुझे यह बात समझाने के लिए वेदोका हवाला देने की जरूरत नही है। बल्कि यह एक ऐसी बात है जिसके सम्बन्धमे मै वैदिक विचारोको भी तर्ककी कसौटीपर जाँचना चाहूँगा। तर्क यह कहता है कि यदि मै गायकी रक्षा करता हूँ तो उससे गाय और भैंस दोनोकी रक्षा करता हूँ। अगर कोई मुझे यह बात समझा दे कि गाय ऐसी अवस्थामे पहुँच चुकी है कि उसका उद्धार असम्भव है तो मै "भैंस-रक्षा सघ" का सगठन करने को तैयार हूँ। लेकिन वास्तविकता इससे उलटी है। भैंसको विशेष रक्षाकी जरूरत नही है, गायको है। जिस तरह गाय मेरी माता है उसी तरह भैंस और बकरी भी है। लेकिन मुझे मालूम है कि बेचारी बकरीकी रक्षा तो हो नही सकती, गायको रक्षाकी सख्त जरूरत है, और जब गायकी रक्षा हो जायेगी तो भैंसकी रक्षा तो उसके एक सहज-स्वाभाविक परिणामकी तरह सम्पन्न हो ही जायेगी।[1]

गांधीजी ने कहा कि मुझे लगता है, गायों और चरागाहोंकी सहकारी मिल्कियत नस्ल-सुधारमें भी और दूध देनेकी क्षमताको बढ़ानेमें भी काफी सहायक हो सकती है और इससे चरागाहकी समस्याके हलमें भी बड़ी मदद मिल सकेगी।

१. बहुत-से अन्य प्रश्नोंकी भी चर्चा हुई। इनमें से सबसे महत्त्वपूर्ण चरागाहकी समस्या थी।

उन्होंने सुझाया कि अगले वर्ष गो-सेवा संघको वर्धा और उसके पडोस के क्षेत्रोंमें गायका दूध सुलभ कराने, सामग्री एकत्र करने के लिए विशेषज्ञोको पिंजरा-पोलोंमें भेजने, उन्हे सुझाव देने और यथासम्भव संघकी अवधारणाके पिंजरापोलोंके स्तरको प्राप्त करनेमें उनको सहायता पहुँचाने, दूध तथा घीकी जाँचके लिए वर्धामें एक प्रयोगशाला स्थापित करने आदि कार्यों पर अपना प्रयत्न केन्द्रित करना चाहिए। संघको कमसे-कम एक हजार सदस्य बनाने की भी कोशिश करनी चाहिए।

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १५-२-१९४२

३५०. पत्र-लेखकोंसे

मुझे पत्र लिखनेवाले सज्जन कृपया यह समझ ले कि मेरे नाम आनेवाले सभी पत्रोको मै खुद खोलता या पढता नही हूँ। और चूँकि अब तो मैने तीनो साप्ताहिकोका बोझ भी उठा लिया है, इसलिए मेरे सामने कमसे-कम पत्र पेश किये जाते है और अक्सर मै उन्हे भी पढने का समय नही निकाल पाता हूँ। पत्र-लेखक मेरे तीन साप्ताहिकोको ही मेरी ओरसे उन्हें लिखे जानेवाले सार्वजनिक पत्र समझ ले। अतएव आम तौरपर उन्हे निजी जवाबकी आशा नही करनी चाहिए। बहुतेरे लोग सेवाग्राम आश्रममें दाखिल होने के लिए अर्जियाँ भेजते है। इस सम्बन्धमे मुझे यह कहना है कि आश्रममें और लोगोको दाखिल करने की गुंजाइश ही नही है। कई पत्र-लेखकोका आग्रह रहता है कि उन्हे जवाब मेरी लिखावटमें मिले। मुझे यह पसन्द तो बहुत है, लेकिन उनकी यह इच्छा पूरी करना मुमकिन नही रहा। इसलिए पत्र-लेखकोसे प्रार्थना है कि वे मुझे व कामका बेहद बोझ उठानेवाले मेरे साथियोको और अधिक बोझ उठाने से बचा ले।

सेवाग्राम, ४ फरवरी, १९४२

[अग्रेजीसे]
हरिजन, ८-२-१९४२

३५१. बुनियादी मुद्रा

हाथ-कते सूतके मुद्राके रूपमे इस्तेमाल किये जाने के बारेमे मैंने जो टिप्पणी[1] लिखी थी वह भारतानन्दजी की सजग बुद्धिको जँच गई और उसके आधारपर उन्होने अब निम्नानुसार टिप्पणी[2] लिखी है। जानकार कार्यकर्त्ता इसका अध्ययन करके देखे कि लेखकने जो योजना प्रस्तुत की है उसमे वे कोई सुधार कर सकते है अथवा नही।

सेवाग्राम, ४ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-३-१९४२

३५२. टिप्पणी : आश्रमके लिए

७ फरवरी, १९४२

मेरा खयाल है कि कमसे-कम एक समयके लिए कच्ची भाजियॉ ही खाने से बडा फायदा होता है। भाजियोमे पालक या लूनीकी पत्तियाँ, शलगम, गाजर, गोभी, मूली, टमाटर ले सकते है। इसमे क्षार मिलते है, दात मजबूत होते है, हाजमेपर अच्छा असर होता है। और पकी खाते है उससे चौथे हिस्सेमे काम निपटता है। बराबर चबाने की आदत होती है, स्वाद पकी भाजीसे अधिक रहता है। मैंने तो दो महीने तक यह प्रयोग किया है। जिनको खास हरज नही है वे प्रयोग करके देखे।

सब अपने-अपने काममे अधिक जाग्रत रहे। जैसा व्यवस्थित काम होना चाहिये वैसा नही हुआ है। स्वच्छताके बारेमे काफी सुधारणाको स्थान है।

बापु

बापूकी छायामें, पृ० ३८७

१. देखिए "हाथ-कता सूत विनिमय-साधनके रूपमें", पृ० २३९।
२. यहाँ नहीं दी गई है।

३५३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम
७ फरवरी, १९४२

भाई वल्लभभाई,

मैं तुम्हें लिखनेकी सोच ही रहा था कि इतनेमें आज तुम्हारा पत्र ही आ गया। किसी तरह कच्ची भाजी प्राप्त कर सको तो अच्छा हो। इसके प्रयोगसे मुझे तो बहुत लाभ हुआ है। इसलिए मैंने घनश्यामदासको वही देकर चार औंस मक्खन पर रखा है। इससे उनके उत्साह और तेजमें वृद्धि हुई है। इसलिए तुम्हें यह नही छोड़ना चाहिए। भाजीके पत्ते नमकके पानीमें भिगोकर रखने से वे ताजे-जैसे बने रहेंगे। अगर ये चार-पाँच भी लिये जाये तो काफी होंगे। किन्तु प्याज, गाजर, गाँठ गोभी और मूली तो दो-चार दिन रखनेके बाद भी ली जा सकती है। सब मिलाकर दो औंससे अधिक तो तुम्हें लेनी नहीं चाहिए। और सब तो ठीक है।

पृथ्वीसिंहको मैं लिख रहा हूँ।

को[1] यहाँ भले भेज देना। मैं उसे यहाँ और अधिक तैयार करके जाने दूँगा। उसके बाद वह भले ही तुम्हारी सहायताका उपयोग करे। वह आदमी तो भला है ही। अभी वह जरा नादान है, किन्तु यहाँ सीख जायेगा। उसके बाद यदि तुम्हें आवश्यकता हो तो बुलवा लेना।

ऐसा निश्चय कर लेना कि तुम्हारी आँतोंकी समस्या केवल खुराकके उचित चुनावसे ही हल होगी। पाखानेमें बैठकर जरा भी जोर नही लगाना चाहिए।

महादेवको वहाँ बुलानेके तुम्हारे आग्रहको मैं समझता हूँ। परन्तु वहाँ बैठकर उनसे 'हरिजन' का काम ठीक तरह नहीं हो सकता। वे जो लिखते है उसे मुझे दिखाने और मुझे उसे देखनेका लोभ तो होता ही है। ऐसा करनेसे कितनी ही बार थोड़े ही सही किन्तु आवश्यक परिवर्तन करने पड़ते हैं। मैंने नरहरिको वहाँ आ जाने को कहा है।

घनश्यामदास उसी कोठरीमें रहते हैं जिसमें तुम रहते थे। यदि वे वर्धामें रहे तो मैं उनका उपचार नहीं कर सकता, मुझे पूरी बात समझमें ही नही आयेगी।

बा का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। हजीराका काम पूरा करके तुम्हें यहाँ आ जाना है। काम होने पर ही यहाँसे बाहर जा सकोगे। गुजरातमें कताई-सम्बन्धी मेरे

१. साधन-सूत्रमें नाम छोड़ दिया गया है।

सुझाव तुमने पढे ही होगे।[1] उनपर पूरी तरह अमल करवाना। चरखा सघके लिए रुपया इकट्ठा करना।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
हजीरा
वाया सूरत

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २६६-६७

३५४. पत्र : प्रभावतीको

७ फरवरी, १९४२

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। शहदके बारेमे मै मथुरा बाबूको लिख रहा हूँ। फिलहाल यहाँ है ही नही।

सब्जीमे नमक डालकर खाने मे कोई हर्ज नही है। किन्तु न खाना ही अच्छा है, या थोड़ा ही खाया जाये। कच्ची सब्जीके साथ नमककी जरूरत नही होती।

पके हुए टमाटरोको राँधना ही नही चाहिए।

यदि शहद हो तो तुझे खजूरका गुड खाने की जरूरत नही है।

सुशीलाबहनका पता है — मार्फत डॉ० गोपीचन्द,[2] लाजपतराय भवन, लाहौर।

बा का स्वास्थ्य अच्छा नही कहा जा सकता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५७०)से

३५५. पत्र : कृष्णचन्द्रको

७ फरवरी, १९४२

चि० कृ० च०,

तुम्हारे दोनो खत पढे। बात बिलकुल सही है कि मेहमानोके बारेमे नोटीस मिलनी चाहिये। लेकिन अकस्मात तो बनते रहेंगे। इसके लिये तैयारी होनी चाहिये — बरतनकी और जगहकी। दोनो नहिं है तो खबर भेजना के जगह खाली होने से बुलावेंगे। खाने मे घाटा है तो जो होगा उससे निपटावेगे। अगर कुछ है तो मेहमानोको

१. देखिए "गुजरातियोंसे", पृ० २८३-८४।
२. डॉ० गोपीचन्द भार्गव

देकर हम भूखो रहेंगे। यह तो तात्कालिक फैसला। बेखबरीसे वक्तसर खबर न मिले तो गफलत करनेवालो को चेतावनी देवे। इससे ज्यादा क्या हो सकता है?

थालीओंके बारेमें इतना कि सब बरतन इकट्ठे करके जो नये आये है सो ले लेने चाहिये। इतने नये बरतन आये तो भी घाटा होता है उसका क्या सबब हो सकता है?

चमच सब इकट्ठे करके जिनको आवश्यक है उनको हि देने चाहिये।

इन दोनों चीज करने में मुसीबत है तो मेरी मदद लो।

बाकी बादमें।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१३)से

३५६. पत्र : पुष्पा सुन्दरम्को

७ फरवरी, १९४२

चि० पुष्पा,

पिताजीको[1] तो और २५ वर्ष काशी विश्वविद्यालयको देना है। पचीस वर्षसे पेट थोड़े ही भरनेवाला है? तू अंग्रेजीमें क्यों लिखती है?

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३१८९)से

३५७. बातचीत : डॉ० जॉनसे[2]

[८ फरवरी, १९४२ के पूर्व][3]

गांधीजी ने विनोदपूर्वक कहा :

नहीं, जबतक डॉ० कार्वर[4] स्वयं आकर सन्देश नहीं देते तबतक मैं इन्हें स्वीकार नहीं कर सकता।

डॉ० जॉनने कहा कि डॉ० कार्वर इतने वृद्ध हो चुके हैं कि उनके लिए भारत आना कठिन है। लेकिन जब-कभी कोई भारतीय उनसे मिलने जाता है, वे . . .

१. वी० ए० सुन्दरम्

२ और ३. महादेव देसाई द्वारा ८ फरवरी, १९४२ को लिखे "ब्रिटिश ऐंड अमेरिकन नाजिज्म" (ब्रिटिश और अमेरिकी नाजीवाद) शीर्षक लेखसे उद्धृत

४. टस्केजीमें बॉटनीके प्राध्यापक डॉ० जॉर्ज वाशिंगटन कार्वरने डॉ० जॉनकी मार्फत गांधीजी को कुछ सन्देश और पुस्तिकाएँ भेजी थीं।

आपको अवश्य याद करते हैं। . . . इसके बाद गांधीजी ने डॉ० जॉनसे डॉ० कार्वरके बारेमें जो पहला प्रश्न पूछा वह यह था:

लेकिन इस प्रतिभाशाली व्यक्तिको भी रंग-भेदका शिकार बनना पड रहा है—है न?

हाँ, उतना ही जितना किसी भी नीग्रोको।

फिर भी ये लोग लोकतन्त्र और समानताकी बात करते हैं! यह सब सरासर झूठ है।

लेकिन डॉ० कार्वरने इसपर कभी कोई कटुता या नाराजगी नहीं दिखाई है।

मुझे मालूम है, और हम अहिंसामे विश्वास रखनेवालो को उनसे यही चीज सीखनी है। लेकिन इन लोगोके बारेमे तो कहा जाता है कि ये लोकतन्त्रके लिए लड रहे है। इनके इस दावेके बारेमे क्या कहेगे?

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-२-१९४२

३५८. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

प्रात. ५-४५, ८ फरवरी, १९४२

प्रिय कु०,

मैने तो इस काममे अपनेको पूरा गर्क कर देने का फैसला कर लिया है। मै अ० भा० ग्रामोद्योग सघ का अध्यक्ष बन गया हूँ।

अगर सम्भव हो तो मै चाहूँगा, जयरामदास[1] कार्यकारिणीमे शामिल हो जायें।

तुम 'हरिजन' का एक कॉलम [स्तम्भ] हर हफ्ते ले सकते हो।

जो जमीन लेना चाहते हो, उसका क्या उपयोग करोगे, तुम्हें इसकी एक योजना मुझे भेजनी चाहिए। जितनी जल्दी हो उतना ही अच्छा है।

तुम तीनोको अपनी हिन्दी, जितनी जल्दी हो सके, दुरुस्त कर लेनी चाहिए।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१६२)से

१. जयरामदास दौलतराम

३५९. टिप्पणियाँ

सैनिकोका दुर्व्यवहार

लोगोने देशी और गोरे सैनिकोके दुर्व्यवहारकी कई दर्द-भरी शिकायते मेरे पास लिख भेजी हैं। मनल्न दोहद, रतलाम और दूसरे कई स्टेशनोमे इन लोगोके उपद्रवो का ब्योरेवार वर्णन करते हुए पत्र आये हैं। कहा गया है कि सैनिकोने प्लेटफार्मो पर खोमचेवालो और फेरीवालो को सताया, उनकी खाद्य सामग्री लूटी, और उनमे से जिन्होंने विरोध किया, उन्हे पीटा। स्टेशन मास्टर इन लोगोकी रक्षा करने मे बिलकुल असमर्थ रहे। मैं नही जानता कि ये शिकायते किस हदतक विश्वसनीय हैं। लेकिन जो साक्ष्य मुझे मिले हैं, वे इतने ब्योरेवार और सन्तुलित हैं कि उनपर विश्वास करने को जी चाहता है। जो भी हो, मैं अधिकारियोंका ध्यान इन शिकायतोंकी ओर खींचना चाहता हूँ। इस तरहका तमाम दुर्व्यवहार तुरन्त रोका जाना चाहिए, और भविष्यमें इसकी पुनरावृत्ति न हो, इसके लिए कड़ा प्रबन्ध होना चाहिए। लोगोमे फैली घबराहट और कड़वाहट को मिटाने का यही उपाय है। जो सताये गये हैं, उन्हे मेरी सलाह है कि वे सच्चे सबूतोंके साथ अपनी शिकायते उपयुक्त अधिकारियोके पास पहुँचायें।

हैदराबाद रियासत

इन दिनों हैदराबाद राज्य कांग्रेसपर प्रतिबन्ध लगा हुआ है। राज्य कांग्रेसके स्वामी रामानन्द तीर्थने बड़े संयत स्वरमें तैयार किया गया निम्नलिखित वक्तव्य[1] जारी किया है

२ मार्च, १९४० से ही हैदराबाद राज्य कांग्रेसपर प्रतिबन्ध लगा हुआ है। सितम्बर, १९४० में उसके कुछ कार्यकर्त्ताओंने व्यक्तिगत सत्याग्रह किया। . . . निजाम की सरकारने १६ दिसम्बर, १९४१ को उन्हे बिना शर्त रिहा कर दिया। रिहा होते ही मैंने इस आशयका वक्तव्य जारी किया . . . कि जबतक प्रतिबन्ध हटाने की हमारी माँग सरकार मंजूर नहीं करती तबतक सत्याग्रह जारी रखना हमारा कर्त्तव्य है। रिहाईके बाद हमने महात्माजी से सलाह की और . . . उन्होंने सलाह दी कि इस समय हम दोबारा सत्याग्रह न करें। उन्होने हमसे अपनी सारी शक्ति रचनात्मक कार्यक्रमपर लगाने को कहा। . . . इसलिए हम आम तौरपर सभी लोगो और खास तौरपर कार्यकर्त्ताओंसे अनुरोध करते हैं कि वे अपनी शक्ति इस कार्यक्रमको पूरा करने में लगायें। . . . लेकिन सत्याग्रहके इस समय स्थगित कर दिये जाने का मतलब यह

१. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

नहीं है कि हमने अपने लक्ष्यमें कोई परिवर्तन कर दिया है। हमारा लक्ष्य निजाम साहब और आसफजाही राजवंशके अधीन उत्तरदायी शासन प्राप्त करना है।

कितना अच्छा हो, अगर निजाम साहबकी सरकार राज्य कांग्रेसपर लगा प्रतिबन्ध उठा ले! सरकारकी इच्छा लोगोको ऐसा आन्दोलन चलाने से रोकने की तो नही होनी चाहिए जिसका उद्देश्य निजाम साहबके अधीन उत्तरदायी शासनकी प्राप्ति हो। यदि राज्य कांग्रेसपर लगाया गया प्रतिबन्ध उठाया नही जाता तो हालमें सत्याग्रहियोकी जो रिहाई की गई है उसमे कोई शोभा नही रह जाती।

सेवाग्राम, ८ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-२-१९४२

३६०. अशुद्ध ही नहीं

श्री शकरराव देव लिखते हैं :

पिछले 'हरिजन' के "एक दुःखद प्रसंग"[१] शीर्षक लेखमें आप धनवानोंसे कहते हैं कि "तू करोड़ों खुशीसे कमा, किन्तु तेरा धन तेरा नहीं, बल्कि सम्पूर्ण जगत् का है — यह समझकर अपने वास्तविक उपयोगके लायक आवश्यक धन लेकर अवशिष्टका उपयोग समाजके लिए कर।" जब मैंने उसे पढ़ा, तो पहला सवाल मनमें यह उठा कि ऐसा क्यों हो? पहले करोड़ों कमाना और फिर समाजके लिए उन्हे खर्च करना? आजकी इस समाज-रचनामें करोड़ों कमाने के साधन अशुद्ध ही हो सकते हैं, और जो अशुद्ध साधनोंसे करोड़ों कमाता है, उससे 'तेन त्यक्तेन भुंजीथाः' मन्त्रके अनुसरण की आशा नहीं रखी जा सकती, क्योंकि अशुद्ध साधनों द्वारा करोड़ों कमाने की क्रियामें कमानेवाले का चरित्र दूषित या भ्रष्ट हुए बिना नहीं रह सकता। फिर, आप तो हमेशासे शुद्ध साधनोंपर जोर देते रहे हैं। मुझे डर है कि इस मामलेमें लोग कहीं गलतीसे यह न समझ लें कि आप साधनोंकी अपेक्षा साध्यपर ज्यादा जोर दे रहे हैं।

अतएव मेरा निवेदन है कि आप कमाईके साधनोंकी शुद्धतापर भी अधिक नहीं, तो उतना जोर अवश्य दीजिए जितना कमाये हुए धनको लोक-हितके कामोंमें खर्च करने पर देते हैं। मेरे विचारमें, यदि साधनोंकी शुद्धता का दृढ़तासे पालन किया जाये, तो कोई कभी करोड़ों कमा ही न सकेगा और

१. देखिए पृ० २८४-८६।

उस दशामें समाजके लिए उसे खर्च करने की कठिनाई बहुत गौण रूप धारण कर लेगी।

मैं इससे सहमत नहीं। अगर यह मान लिया जाये कि मनुष्यका धन-सम्पत्ति रखना उचित है तो बेशक ऐसी कल्पना की जा सकती है कि वह सर्वथा शुद्ध साधनोंसे करोड़ोंकी सम्पत्ति खड़ी कर सकता है। अपनी दलीलके लिए मैंने यह माना है कि निजी सम्पत्ति अपने-आपमें अशुद्ध नहीं समझी गई है। अगर मेरे पास किसी एक खानका पट्टा है और मुझे उसमें से अचानक कोई अनमोल हीरा मिल जाता है, तो मैं एकाएक करोड़पती बन सकता हूँ और कोई मुझपर अशुद्ध साधनोंका उपयोग करने का दोष नहीं लगा सकता। ठीक यही बात उस समय हुई थी, जब कोहेनूरसे कहीं अधिक मूल्यवान क्यूलीनन नामक हीरा मिला था। ऐसे और कई उदाहरण आसानीसे गिनाये जा सकते हैं। निःसन्देह करोड़ों कमानेकी बात मैंने ऐसे ही लोगोंके लिए कही थी। मैं निःसंकोच इस कथनका समर्थन करता हूँ कि आम तौरपर धनवान लोग और उसी तरह दूसरे अधिकांश लोग भी कमाते समय कमाईके साधनोंकी शुद्धताका कोई खास ध्यान नहीं रखते। अहिंसक पद्धतिका प्रयोग करते समय हमारे मनमें यह विश्वास रहना चाहिए कि हरएक मनुष्य, फिर वह कितना ही पतित क्यों न हो गया हो, सुधर सकता है, बशर्ते कि उसके साथ सूझ-बूझके साथ मनुष्यताका व्यवहार किया जाये। हमें मनुष्यके सद्गुणोंको जगाना चाहिए और उसके सुपरिणामकी आशा रखनी चाहिए। अगर समाजका प्रत्येक व्यक्ति अपनी समस्त प्रतिभाका उपयोग अपनी निजकी सम्पत्तिकी वृद्धिके लिए न करके सबके हितके लिए करे तो क्या उससे समाज का कल्याण न होगा? हम समाजके अन्दर वह निष्प्राण समानता नहीं पैदा करना चाहते जिसके कारण समाजका हर व्यक्ति अपनी योग्यताका अधिकसे-अधिक उपयोग करने में असमर्थ हो जाये या असमर्थ बना दिया जाये। ऐसा समाज एक-न-एक दिन अवश्य नष्ट हो जायेगा। इसलिए धनवानोंको दी हुई मेरी यह सलाह कि वे करोड़ों कमायें (बेशक, ईमानदारीके साथ) और कमाकर उसका उपयोग लोक-सेवाके कामोंमें करें, मुझे बिलकुल निर्दोष मालूम होती है। 'तेन त्यक्तेन भुजीथाः' मन्त्र तो असाधारण ज्ञानका परिणाम है। यह तो अखिल विश्वके लिए कल्याणकारी एक नई जीवन-व्यवस्थाके विकासका अचूक उपाय है; जबकि आजकल की इस व्यवस्थामें तो हर आदमी अपने लिए जीता है और अपने पड़ोसीके सुख-दुःखका कोई खयाल नहीं रखता।

सेवाग्राम, ८ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-२-१९४२

३६१. वैयक्तिक या सामुदायिक?

श्री जमनालालजी ने गोसेवाका महान् बोझ अपने सिर उठाया है। इस बारेमें गोसेवा सघकी सभाके[1] सामने एक महत्त्वका प्रश्न यह था कि गोपालन वैयक्तिक हो या सामुदायिक। मैंने राय दी कि सामुदायिक हुए बगैर गाय बच ही नही सकती, और इसलिए भैस भी नही बच सकती। हरएक किसान अपने घरमे गाय-बैल रखकर उनका पालन भली भाँति और शास्त्रीय पद्धतिसे नही कर सकता। गोवशके ह्रासके दूसरे अनेक कारणोमे व्यक्तिगत गोपालन भी एक कारण हुआ है। यह बोझ वैयक्तिक किसानकी शक्तिके बिलकुल बाहर है।

मै तो यहाँतक कहता हूँ कि आज ससार हरएक काममे सामुदायिक रूपसे शक्तिका सगठन करने की ओर जा रहा है। इस सगठनका नाम सहयोग है। बहुत-सी बाते आजकल सहयोगसे हो रही है। हमारे मुल्कमे भी सहयोग आया तो है, लेकिन वह ऐसे विकृत रूपमे आया है कि उसका सही लाभ हिन्दुस्तानके गरीबोको बिलकुल नही मिला।

हमारी आबादी बढती जा रही है और उसके साथ व्यक्तिगत रूपसे किसान की जमीन कम होती जा रही है। नतीजा यह हुआ है कि प्रत्येक किसानके पास जितनी चाहिए, उतनी जमीन नही है। जो है, वह उसकी अडचनोको बढानेवाली है।

ऐसा किसान अपने घरमे या खेतपर निजके गाय-बैल नही रख सकता। रखता है, तो अपने हाथो अपनी बरबादीको न्योता देता है। आज हिन्दुस्तानकी यही हालत है। धर्म, दया या नीतिकी परवाह न करनेवाला अर्थशास्त्र तो पुकार-पुकार कर कहता है कि आज हिन्दुस्तानमे लाखो पशु मनुष्यको खा रहे है। क्योकि वे उसे कुछ लाभ नही पहुँचाते, फिर भी उन्हें खिलाना तो पडता ही है। इसलिए उन्हें मार डालना चाहिए। लेकिन धर्म कहो, नीति कहो या दया कहो, हम इन निकम्मे पशुओको मारने से रोकते हैं।

इस हालतमे क्या किया जाये? यही कि जितना प्रयत्न पशुओको जिन्दा रखने और उन्हे बोझ न बनने देने का हो सकता है, किया जाये। इस प्रयत्नमे सहयोगका अपना बडा महत्त्व है।

सहयोगसे यानी सामुदायिक पद्धतिसे पशुपालन करने से—

१. जगह बचेगी। किसानको अपने घरमें पशु नही रखने पडेंगे। आज तो जिस घरमे किसान रहता है, उसीमें उसके सारे मवेशी भी रहते है। इससे हवा बिगडती है और घरमे गन्दगी रहती है। मनुष्य पशुके साथ एक ही घरमे रहने के लिए पैदा नही हुआ। ऐसा करने मे न दया है, न ज्ञान है।

१. यह सभा १ फरवरी, १९४२ को हुई थी।

२ पशुओंकी वृद्धि होने पर एक घरमें रहना असम्भव हो जाता है। इसलिए किसान बछड़ेको बेच डालता है, और भैंसे या पाडेको मार डालता है, या मरने के लिए छोड़ देता है। यह अधमता है।

३ जब पशु बीमार होता है, तब व्यक्तिगत रूपसे किसान उसका शास्त्रीय इलाज नहीं करवा सकता। सहयोगसे चिकित्सा सुलभ होती है।

४ प्रत्येक किसान सांड नहीं रख सकता। लेकिन सहयोगके आधारपर बहुत-से पशुओंके लिए एक अच्छा सांड रखना सहज है।

५ व्यक्तिगत किसान गोचर-भूमि तो ठीक, पशुओंके लिए व्यायामकी यानी हिरने-फिरने की भूमि भी नहीं छोड़ सकता। किन्तु सहयोग द्वारा ये दोनों सुविधाएँ आसानीसे मिल जाती हैं।

६ व्यक्तिगत किसानको घास इत्यादिपर बहुत खर्च करना होगा। सहयोग द्वारा कम खर्चमें काम चल जायेगा।

७ व्यक्तिगत किसान अपना दूध आसानीसे नहीं बेच सकता। सहयोग द्वारा उसे दाम भी अच्छे मिलेंगे और वह दूधमें पानी वगैरा मिलाने से भी बच सकेगा।

८ व्यक्तिगत किसानसे पशुओंकी परीक्षा असम्भव है। किन्तु गांव-भरके पशुओं की परीक्षा आसान है, और उनकी नस्ल-सुधारका उपाय भी आसान है।

सामुदायिक या सहकारी पद्धतिके पक्षमें इतने कारण पर्याप्त होने चाहिए। सबसे बड़ी और प्रत्यक्ष दलील यह है कि वैयक्तिक पद्धतिके कारण ही हमारी और हमारे पशुओंकी दशा आज इतनी दयनीय हो उठी है। उसे बदलकर ही हम बच सकते हैं, और पशुओंको बचा सकते हैं।

मेरा तो दृढ़ विश्वास है कि जब हम अपनी जमीन भी सामुदायिक पद्धतिसे जोतेंगे, तभी उससे पूरा फायदा उठा सकेंगे। बनिस्बत इसके कि गांवकी खेती अलग-अलग सौ टुकड़ोंमें बंट जाये, क्या यह बेहतर नहीं होगा कि सौ कुटुम्ब सारे गाँव की खेती सहयोगसे करें और उसकी आमदनी आपसमें बांट लिया करें? और जो खेतीके लिए ठीक है वही पशुके लिए भी समझा जाये।

यह दूसरी बात है कि आज लोगोंको सहयोगी पद्धतिपर लाने में कठिनाई है। कठिनाई तो सभी सच्चे और अच्छे कामोंमें होती है। गोसेवाके सभी अंग कठिन हैं। कठिनाइयां दूर करने से ही सेवाका मार्ग सुगम बन सकता है। यहां तो बताना यह था कि सामुदायिक पद्धति क्या चीज है, और वह वैयक्तिकसे इतनी अच्छी क्यों है। यही नहीं, बल्कि वैयक्तिक गलत है, सामुदायिक सही है। व्यक्ति अपने स्वातन्त्र्यकी रक्षा भी सहयोगको स्वीकार करके ही कर सकता है। अतएव जहां सामुदायिक पद्धति अहिंसात्मक है, वैयक्तिक हिंसात्मक है।

सेवाग्राम, ८ फरवरी, १९४२

हरिजन-सेवक, १५-२-१९४२

३६२. सुझाव : आश्रमके लिए

८ फरवरी, १९४२

मेरी सलाह है कि आवश्यकतासे अधिक (बरतन) किसीके पास न रहें और जिनके पास नये बरतन हैं वे पुराने लें, जिससे मेहमानोंके लिए अच्छे रह सकें।

बापू

बापूकी छायामें, पृ० ३८७

३६३. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

सेवाग्राम, वर्धा
८ फरवरी, १९४२

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

अब चूँकि मैंने सविनय अवज्ञा स्थगित कर दी है, इसलिए मानवताकी खातिर आपको यह पत्र लिखने की धृष्टता कर रहा हूँ।

संसदीय कानून कहता है कि लोकोपकारी संस्थाएँ भले ही लाभ कमाती हों, किन्तु वे आयकरसे मुक्त हैं। मैं अखिल भारतीय चरखा संघका संस्थापक और अध्यक्ष हूँ। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि वह विशुद्ध रूपसे लोकोपकारी संस्था है। उसके अस्तित्वका उद्देश्य हाथ-कताई और हाथ-बुनाई द्वारा देशके निर्धनतम लोगोंकी सेवा करना है। लेकिन मात्र कुछ कानूनी खींचतान, पेश किये गये साक्ष्योंके प्रति अविश्वास, और मेरा खयाल है, अपनी प्रवृत्ति चलाने के लिए इसने कांग्रेससे जो सनद प्राप्त की उसके आधारपर कांग्रेससे माने जा रहे इसके सम्बन्धके कारण अधिकारियोंने इसपर आयकर लगाने का निश्चय किया है। इस बातसे हम इनकार नहीं करते कि इसे लाभ होते रहे हैं, लेकिन लाभकी राशियोंका उपयोग कभी भी व्यक्तिगत या निजी प्रयोजनोंके लिए नहीं किया गया है। संघकी कार्यपालिकाके सभी सदस्य अवैतनिक हैं। संघने बम्बई उच्च न्यायालयमें मामला पेश किया है, लेकिन एक कानूनी दोषके कारण वह अस्वीकार कर दिया गया है। अब वह प्रिवी कौंसिलसे अपील कर रहा है। मुझे नहीं मालूम कि परिणाम क्या होगा। इस बीच संघ कर के रूपमें कुछ राशि दे चुका है और ऐसी सम्भावना है कि उसे शायद पाँच लाख तक अदा करना पड़े। मुकदमेका फैसला होने तक अधिकारी कर की वसूली बन्द रखने को तैयार नहीं हैं। लेकिन मेरा निवेदन है कि आप इसमें हस्तक्षेप करके

गरीबोंके ये पाँच लाख रुपये बचा दें।[1] आपको बता दूँ कि अपने पिछले २० साल के कार्य-कालमें संघने देशके गरीबोंको मजदूरीके तौरपर लगभग चार करोड़ रुपये दिये हैं।

आपकी सुविधाका खयाल करके मैं और तथ्य या कागजात आपको नहीं भेज रहा हूँ। हाँ, आप चाहें तो ये तुरन्त सुलभ करा दिये जायेंगे।

आज आपका एक-एक क्षण युद्धको सफल परिणति तक पहुँचानेके प्रयत्नके निमित्त सुरक्षित है। ऐसे समयमें मैं आपको यह कष्ट दे रहा हूँ, इसके लिए क्षमा करेंगे। यद्यपि मैं आपके उस प्रयत्नको सहानुभूतिकी दृष्टिसे नहीं देख सकता और आप मुझसे जिस तरहकी मदद चाहेंगे उस तरहकी मदद तो मैं बिलकुल नहीं दे सकता, फिर भी आप मेरी यह बात सच मानिए कि आज भी मैं आपके देशभाइयोंका उतना ही बड़ा मित्र हूँ जितना कि कभी भी रहा हूँ। इसलिए मैं समझ सकता हूँ कि यह आपके और लेडी लिनलिथगोके लिए कितना कठिन समय होगा।

लेडी एन[2] और साऊथबीको[3] पत्र लिखें तो मेरा स्नेहवदन अवश्य कह दें। मेरी बधाईके उत्तरमें उन्होंने जो पत्र लिखे उनके जवाब मैंने जान-बूझकर नहीं दिये। आशा है, शिशु सहित दोनों स्वस्थ-सानन्द होंगे।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
ट्रान्सफर ऑफ पावर, जिल्द १, पृ० १३५-३६

३६४. आदिवासी

आदिवासियोंको रचनात्मक कार्यक्रममें चौदहवाँ स्थान दिया गया है।[4] लेकिन महत्त्वकी दृष्टिसे उसमें उनका स्थान किसीसे कम नहीं है। हमारा देश इतना विशाल है और यहाँ इतनी तरहकी जातियाँ बसती हैं कि हममें से अच्छेसे-अच्छे लोग भी अपने तमाम प्रयत्नोंके बावजूद उन सारे लोगों और इनकी परिस्थितियोंके बारेमें जानने योग्य सभी बातें जान नहीं सकते। राष्ट्र-सेवकके नाते किसीके लिए जिन चीजोंको जानना जरूरी है उन चीजोंकी परत-दर-परत जब उसके सामने खुलने लगती है तो उसे महसूस होता है कि हमारे इस दावेको सही सिद्ध करना कितना कठिन है

१. २० फरवरीको उत्तरमें वाइसरायने लिखा कि इस सम्बन्धमें जो कानून है उसे देखते हुए सरकार न्यायालयके निर्णयपर अमल करनेके लिए बाध्य है, किन्तु उन्होंने आदेश दे दिये हैं कि प्रिवी कौंसिलका निर्णय होने तक आयकर की वसूली मुल्तवी रखी जाये। ट्रान्सफर ऑफ पावर, जिल्द १, पृ० २१२।

२ और ३. लॉर्ड लिनलिथगोकी ज्येष्ठ पुत्री लेडी एन होप और उसके पति पैट्रिक एच० जे० साऊथबी

४. देखिए रचनात्मक कार्यक्रमका मर्म और महत्त्व, पृ० १७७-७८। संशोधित संस्करणमें यह कार्यक्रमके सोलहवें मुद्देके रूपमें प्रस्तुत किया गया था।

कि हम एक राष्ट्र है, जिसके प्रत्येक घटकको इस बातका जीवन्त एहसास है कि वह सम्पूर्णका ही एक अंग है।

भारत-भरमें सवा दो करोड़ आदिवासी हैं, अर्थात् वे कुल आबादीके सवा छह प्रतिशत और हरिजन आबादीके लगभग आधे हैं।

श्री बालासाहब खेर थाना जिलेमें इस अत्यावश्यक सेवामें अपने स्वाभाविक उत्साहके साथ जुट गये है। वे आदिवासी सेवा-मण्डलके अध्यक्ष हैं। मण्डलकी ओर से जारी की गई एक पुस्तिकामें[1] वे कहते हैं:

बाला साहबने अभी छोटे पैमानेपर ही काम शुरू किया है। उन्होंने आदिवासी लड़कोंके लिए एक छात्रावास खोला है। उनका काम आडम्बरहीन और ठोस है। यदि उन्हे ठीक ढंगके कार्यकर्त्ता मिल गये तो जो चीज आज बहुत छोटे पैमानेपर शुरू हुई है वही ऐसे अखिल भारतीय संगठनका रूप ले सकती है जिसकी परिधि में पूरी आदिवासी आबादी आ जाये। सच ही "फसल बहुत जोरदार है, लेकिन काटनेवाले थोड़े है।" कौन नही मानेगा कि इस तरहकी सभी सेवाएँ केवल मानवीयताके ही कार्य नही है, बल्कि वे ऐसे ठोस राष्ट्रीय कार्य हैं जो हमें सच्चे स्वराज्य के निकट ले जाते है?

सेवाग्राम, ९ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-२-१९४२

३६५. प्रश्नोत्तर

वही सनातन समस्या

प्र० : आप यह क्यों नहीं समझते कि जबतक धन-दौलत है, हर हालतमें उसकी हिफाजत होनी चाहिए? इसलिए प्रत्येक स्थितिमें हिंसासे बचे रहने का आपका आग्रह बिलकुल अव्यावहारिक और असंगत है। मेरे विचारमें अहिंसा कुछ चुने हुए लोगोंके ही कामकी चीज हो सकती है।

उ० : इस प्रश्नका उत्तर इन पृष्ठोंमें और 'यंग इंडिया' में भी कई बार किसी-न-किसी रूपमें दिया जा चुका है। लेकिन यह एक सनातन प्रश्न है। इसलिए मेरा काम है कि जितनी बार यह पूछा जाये, मैं इसका जवाब दूँ—खासकर तब जब कि यह ऐसे सच्चे सत्यान्वेषी द्वारा पूछा जाये जैसे सत्यान्वेषीने इस बार पूछा है। मेरा दावा यह है कि आज भी, जब हमारे समाजकी रचनाका आधार सोच-समझकर अपनाई हुई अहिंसा नही है, सारे संसारमें आदमी एक-दूसरेकी भलमनसाहतपर ही जी रहा है और अपनी दौलतको बचाये हुए है। अगर ऐसा न होता, तो दुनियामें बहुत ही थोड़े और बहुत ही खूँखार आदमी ही बचे होते। लेकिन हकीकत यह नहीं

१. पुस्तिका यहाँ नहीं दी जा रही है। इसमें आदिवासियोंकी दयनीय अवस्था तथा जमींदारों और जंगलोंके ठेकेदारों द्वारा उनके शोषणका वर्णन था।

है। परिवारमें लोग परस्पर स्नेहके बन्धनसे बँधे होते हैं और परिवारोंकी तरह ही सभ्य माने जानेवाले मानव-समाजमें, जिसे राष्ट्र कहा जाता है, विभिन्न समुदाय प्रेमके इस बन्धनसे ही परस्पर जुड़े होते हैं। अलबत्ता वे जीवनमें अहिंसाके नियमको सर्वोपरि नहीं मानते। इसका मतलब यह हुआ कि अभी उन्होंने उसकी असीम सम्भावनाओंका अवगाहन नहीं किया है। मैं यह कहूँगा कि अबतक सिर्फ अपनी जड़ताके कारण ही हम यह मानते रहे हैं कि अहिंसाका सम्पूर्ण पालन अपरिग्रह आदि संयम-सूचक व्रतोंको धारण करनेवाले कुछ इने-गिने लोग ही कर सकते हैं। हाँ, यह सही है कि अहिंसाके सच्चे उपासक ही इस क्षेत्रमें नित्य नई शोध कर सकते हैं और मानव-जातिपर शासन करनेवाले उस सनातन और महान् नियमकी नई-नई शक्तियोंसे समय-समयपर संसारका परिचय करा सकते हैं, लेकिन अगर यह सचमुच ही ऐसा नियम है तो इसे सबपर समान रूपसे लागू होनेवाला होना चाहिए। जो अनेक असफलताएँ हमारे देखने में आती हैं, वे इस नियमकी नहीं, इसका पालन करनेवालों की हैं, क्योंकि उनमें से कइयोंको तो यह भी पता नहीं रहता कि वे चाहे-अनचाहे इस नियमके अधीन हो रहे हैं। जब माँ अपने बच्चेके लिए खुद प्राण दे देती है, तो वह अनजाने इस नियमका पालन करती है। मैं पिछले पचास वर्षोंसे लोगोंको यह समझाता रहा हूँ कि वे इस नियमको समझ-बूझकर अपनायें और असफल होने पर भी इसके पालनमें दत्त-चित्त रहें। पचास वर्षोंके इस प्रयोगका परिणाम आश्चर्यजनक हुआ है और अहिंसामें मेरी श्रद्धा उत्तरोत्तर बढ़ती गई है। मैं दावेके साथ कहता हूँ कि अहिंसाका लगातार आचरण करते रहने से एक समय ऐसा आयेगा जब सम्पत्ति के न्यायपूर्ण स्वामित्वको सब लोग खुशी-खुशी सम्मान देने लगेंगे। कहने की जरूरत नहीं कि सबका सम्मान पानेवाला परिग्रह सर्वथा निर्दोष तो होना ही चाहिए। उस परिग्रहमें उन असमानताओंका उद्धत प्रदर्शन नहीं होगा जिनसे आज हम चारों ओरसे घिरे हुए हैं। अहिंसाके व्रतधारीको अन्याय और अनीतिसे कमाये जानेवाले धनसे आतंकित नहीं होना चाहिए, क्योंकि उसके पास हिंसाका सफल प्रतिकार करने के लिए सत्याग्रह और असहयोगका अहिंसक शस्त्र मौजूद है। जहाँ-कहीं भी इस शस्त्रका सचाईके साथ पर्याप्त उपयोग किया गया है वहाँ हिंसक शस्त्रोंकी कोई आवश्यकता ही नहीं रह गई है। अहिंसाके सम्पूर्ण शास्त्रको जनताके सम्मुख रखने का दावा तो मैंने कभी नहीं किया। उसको इस रूपमें पेश करना मनुष्यके लिए असम्भव है। जहाँतक मैं जानता हूँ, इस रूपमें तो किसी भी भौतिक विज्ञानको, यहाँतक कि गणित-जैसे निश्चित शास्त्रको भी, पेश नहीं किया जा सकता। मैं तो एक सत्यान्वेषी-मात्र हूँ और मेरे साथ प्रश्नकर्त्ता भाईकी ही तरह और भी बहुत-से भाई इस शोधमें लगे हुए हैं। मैं उन सबको इस अत्यन्त कठिन, किन्तु मोहक शोधमें अपने साथ चलने को आमन्त्रित करता हूँ।

सेवाग्राम, ९ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-२-१९४२

३६६. अ० भा० ग्रामोद्योग संघके प्रथम चरणका समापन[1]

मेरे बारेमे कोई भी यही सोचेगा कि वैसे ही मेरे हाथमे क्या कम काम था कि अब मैंने अ० भा० ग्रामोद्योग सघके अध्यक्ष-पदका अतिरिक्त भार अपने सिर ले लिया है। इस सघकी स्थापनाके[2] समयसे ही मैं इसका मार्गदर्शक रहा हूँ, लेकिन बोर्डके आग्रहको मैं टाल न सका। अब पाठक इसमे हाथ बँटाकर मेरा भार हलका कर सकते हैं, जिसका तरीका है (क) इसका सदस्य बनना, (ख) इसके लिए चन्दा देना, और (ग) इसके लिए ठोस काम करना।

सेवाग्राम, ९ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-२-१९४२

३६७. सबसे वयोवृद्ध कांग्रेसीकी ओरसे

प्रिय महात्माजी,

हिंसामें विश्वास रखनेवालों से आप अपनेको यथासम्भव अधिकसे-अधिक अलग रख पाये हैं, इसपर मैं आपको बधाई देता हूँ। ईश्वरने ऐसा करने का एक अवसर आपको पूनामें दिया था, लेकिन बम्बईमें आपने उस ईश्वर-प्रदत्त अवसरको बिलकुल विस्मृत ही कर दिया। बारडोलीमें उसने फिर आपको वह अवसर दिया। मुझे इस बातकी बड़ी खुशी है कि बम्बईवाली भूलको आपने वर्धामें नहीं दोहराया। . . .

. . . हिंसाकी सृष्टि ईश्वरने की और उसे एक सीमित जीवन प्रदान किया। अब वह अपनी असीम बुद्धिसे देख रहा है कि हिंसाका प्रयोग करके देख लिया गया और वह विश्व-शान्तिकी रक्षा करने में अक्षम सिद्ध हुई है। . . . यह विश्वयुद्ध सबसे लम्बा युद्ध भले न हो, लेकिन अन्तिम तो होगा ही, और हिंसा तथा शस्त्रीकरणकी इस भस्म-राशिमें से पूर्ण शान्ति तथा सौहार्द

१. जे० सी० कुमारप्पाने अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघके नवगठनके सम्बन्धमें उक्त शीर्षकसे एक लेख लिखा था, जो गांधीजी की टिप्पणीके साथ प्रकाशित हुआ था। लेख यहाँ नहीं दिया जा रहा है, सिर्फ टिप्पणी ही दी जा रही है।

२. १९३४ में, देखिए खण्ड ५९।

से युक्त एक नये विश्वका उदय होगा, जो मानव-जातिके लिए परम कल्याण-कारी होगा। . . .

ईश्वरमें श्रद्धा रखनेवाले भारतको दुर्बल जातियोंके शोषणके लिए मनुष्य-प्रदत्त हिंसा और शस्त्रीकरण-नियन्त्रित स्वतन्त्रता नहीं चाहिए। उसे मनुष्यकी सेवाके लिए ईश्वर-प्रदत्त स्वतन्त्रता ही चाहिए।

ईश्वर-प्रदत्त स्वतन्त्रता केवल सत्याग्रहके द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है और सत्याग्रहमें सामने आनेवाले कष्टोंको सफलतापूर्वक सिर्फ वही सह सकते हैं जो पूर्ण रूपसे ईश्वरार्पित हो गये हों। सत्याग्रहियोंकी संख्या धीरे-धीरे बढ रही है। हिंसाके हिमायती जो कहना चाहें, कहने दीजिए, जो करना चाहें, करने दीजिए। अहिंसामें विश्वास रखनेवालों की संख्या धीरे-धीरे निरन्तर बढ़ती जायेगी और एक दिन दुनियाको सच्ची शान्ति देखने को अवश्य मिलेगी।

हरदयाल नाग

चाँदपुर, २४-१-१९४२

जाज्वल्यमान आस्थाकी अभिव्यक्तिके रूपमें इस पत्रका[1] अपना अलग और वास्तविक महत्त्व है, लेकिन यहाँ उसका प्रकाशन हम उस सबसे वयोवृद्ध कांग्रेसीकी लेखनीसे निःसृत उद्गारके रूपमें कर रहे हैं जो अहिंसासे उसी प्रकार चिपटा हुआ है जिस प्रकार शिशु अपनी माताकी छातीसे चिपटा रहता है।

सेवाग्राम, ९ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-२-१९४२

३६८. पत्र : मगनलाल और मंजुला मेहताको

९ फरवरी, १९४२

चि० मगन और मंजुला,

तुम दोनोंके पत्र मिले। परीक्षाका इतना भी क्या मोह? मंजुला आग्रह करती है, यह नई बात है। आदमी अपने माँ-बापके लिए, बच्चोंके लिए और इसी प्रकार भाइयोंके लिए अपना सर्वस्व होम देता है। रतिलालके लिए पढाईमें हर्ज हो, तो तुझे अखरेगा क्या? पढाई करना जरूरी हो, तब भी एक साल गँवा देनेमें क्या अड़चन है? मुझे लगता रहता है कि रतिलालके प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करनेमें तू चूक रहा है। जिस कर्त्तव्यका पालन तू खुद नहीं करता है उसका बोझ दूसरोंपर लादने की आशा क्यों करता है? मेरे पास कोई आदमी होता तो मैंने कबका रतिलालको अपनी

१. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये गये हैं।

निगरानीमे ले लिया होता। मैं तो अब अपने सगे बेटेका भी नही रहा, नही तो खुद राजकोट दौड जाता। उसके पास न जाने के लिए एक भी कारण तेरे पास नही है।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च .]

चम्पाको तुम्हारी कोठरीसे दूसरीमे रखने का प्रयत्न मैं अवश्य करूँगा।

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२६) से। सौजन्य: मजुला म० मेहता

३६९. पुर्जा : कृष्णचन्द्रको

९ फरवरी, १९४२

बलवतसिंहको कहो वह काटा मनुष्योके हि लिये है, मेंघा [महँगा] है, अस्पतालका है। भाजीका काटा है उसे दुरस्त रखना चाहिये।

पुर्जेकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१४) से

३७०. पत्र : बी० एस० पथिकको

सेवाग्राम
९ फरवरी, १९४२

भाई पथिकजी,

आपका पत्र तो मुझे मिल गया था। रामनारायणजी को जो लिखा है सो भी मैंने पढ लिया। मुझे तो जितने सच्चे साथी मिले, चाहिए। आपने जो प्रश्न पूछे है उनका उत्तर मैं क्या दू? मैं तो जो था वही हूँ। मेरे ख्यालोमें कोई परिवर्तन नही हुआ है। लेकिन अगर मेरे लेखोसे अथवा कामोसे कुछ प्रकाश मिला है और आपकी बुद्धि स्वीकार करती है तो अवश्य आइये और ज्यादा अनुभव मेरी पद्धतिका लिजिये। मेरे पास वार्तालापके लिए समय बहुत कम रहता है। मैं चाहता हू यह कि आप यहाका वायुमडल देखें और लोगका परिचय करे।

बापुके आशीर्वाद

श्रीयुत बी० एस० पथिक

पत्रकी नकलसे . प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

३७१. "मान लीजिए, जर्मनी जीत जाता है"

मान लीजिए, भारत युद्धमें शामिल नहीं होता और जर्मनी जीत जाता है तो क्या हिटलर भारतको यों ही छोड़ देगा? गांधीजी, निश्चित मानिए कि वह कभी नहीं छोड़ेगा। भारतके मामलेमें आज जितनी ब्रिटेनकी चलती है उससे ज्यादा उसकी चलेगी। फर्क सिर्फ इतना ही है कि आप अंग्रेजोंसे तो लड़ सकते हैं, लेकिन जब एक बार जर्मन अपने पैर भारतमें जमा लेंगे तब आप उनसे लड़ नहीं पायेंगे। सविनय अवज्ञासे अंग्रेज लोग बहुत घबराते हैं, लेकिन नाजियोंकी तो वह खुराक है।

दक्षिण आफ्रिकासे एक अंग्रेजने बड़ी ईमानदारी और आग्रहके साथ एक लम्बा पत्र लिखा है। उपर्युक्त अंश उससे लिया गया है। पहली भूल तो यह मानना है कि भारत युद्धमें शामिल नहीं है, जब कि सच तो यह है कि कांग्रेसके प्रबल विरोध के बावजूद देशको हर तरहसे युद्धमें घसीट लिया गया है। वह इस हदतक युद्धमें शरीक है कि ग्रेट ब्रिटेनके सेनानायकोंने इस देशके लोगोंमें से जितने भी सैनिक भरती और प्रशिक्षित किये हैं, उन सबका वह प्रभावकारी उपयोग कर रहा है और इस देशका वह जितना भी पैसा युद्धमें बहा सकता है, बहा रहा है। जो भारतीय राजनीतिक दृष्टिसे जागरूक हैं, उन्हें शासकोंके क्लर्कोंका काम करने के अलावा और किसी बातका प्रशिक्षण नहीं दिया गया है। इतना तो निश्चित ही है कि जबतक कुछ आवश्यक शर्तें पूरी नहीं हो जाती तबतक वे अपनेको इस सबसे अलग-थलग ही रखेंगे। मेरी समझमें नहीं आता कि जिस स्वतन्त्रताके लिए मित्र-राष्ट्र लड रहे बताये जाते हैं उसी स्वतन्त्रताकी मांग करने के लिए उन लोगोंको कैसे दोषी ठहराया जा सकता है। अगर भारतीयोंकी मांगको स्वीकार कर लिया जाता है तब भी वे इतना ही कर सकते हैं कि इस युद्धमें मित्र-शक्तियोंको अपना नैतिक समर्थन दें। और स्पष्ट है कि शासक ऐसे समर्थनकी परवाह नहीं करते। उनके विचारसे, इससे उनका पलड़ा भारी नहीं पड़ सकता। जब हर पक्ष अपनी भौतिक और शारीरिक शक्तियोंकी दुहाई दे रहा हो तब नैतिक मूल्योंका मोल ही क्या हो सकता है? नाजियोंको परास्त करने की अपनी समस्त इच्छाके बावजूद कांग्रेस ग्रेट ब्रिटेनपर अपनी सहायता थोप तो नहीं सकती, क्योंकि ग्रेट ब्रिटेन स्पष्टत वह सहायता चाहता नहीं या कमसे-कम वह उसकी ओरसे उदासीन है। इसलिए अगर युद्धमें ग्रेट ब्रिटेनकी पराजय होती है तो उसका कारण यह नहीं होगा कि कांग्रेसने उसे सहयोग नहीं दिया, बल्कि उसके कारण ऐसे होंगे जिनपर कांग्रेसका कोई बस नहीं हो सकता।

यदि नाजी भारतमें आ जाते हैं तो उनका मुकाबला भी कांग्रेस उसी प्रकार करेगी जिस प्रकार उसने ग्रेट ब्रिटेनका मुकाबला किया है। सत्याग्रहकी शक्तिको जिस

तरह पत्र-लेखकने कम करके आँका है उस तरह मै नही आँकता। लेकिन यह तो कोरी अटकलवाजी है। साम्राज्यवाद १५० वर्षोसे अधिक समयसे भारतको अपने शिकजेमें कसे हुए है। यदि कोई और भी वदतर शासन इसे स्थानच्युत करता है तो कांग्रेस को यह नकारात्मक सन्तोष तो हो ही सकता है कि भारतमे कोई और 'वाद' अपने पैर जमा भी ले तो वह कुछ वर्षोसे अधिक समयतक यहाँ टिका नही रह सकता। कांग्रेसके मानसको जिस रूपमे मैंने समझा है उसके अनुसार तो स्थिति यही है। खुद मै यह मानता हूँ कि इस महायुद्धका अन्त वही होगा जो प्रसिद्ध महाभारतका हुआ। एक त्रावणकोर-निवासीने 'महाभारत' का वर्णन वडे सटीक शब्दोमें किया है। उन्होने इसे मानवका सनातन इतिहास कहा है। उस महाकाव्यमें जो वर्णन मिलता है वह आज हमारी आँखोके सामने घटित हो रहा है। युद्धरत राष्ट्र अपना विनाश इतने प्रचण्ड और भयकर रूपसे कर रहे हैं कि अन्तमे वे सब हर तरहसे चुक जायेंगे। जीतनेवालो का हश्र वही होगा जो पाण्डवोका हुआ था। महारथी अर्जुनको एक छोटे-मोटे डाकूने दिन-दहाडे लूट लिया था। इस विनाशमे से निश्चय ही एक ऐसी व्यवस्था जन्म लेगी जिसके लिए करोडो शोषित मेहनतकश लोग तरसते रहे है। शान्तिप्रेमियोकी प्रार्थना व्यर्थ नही जा सकती। सत्याग्रह स्वय ही व्यथित आत्माकी ऐसी मूक प्रार्थना है जो कभी अनसुनी नही जाती।

सेवाग्राम, १० फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, १५-२-१९४२

३७२. सेठ जमनालाल बजाज[1]

सेठ जमनालाल बजाजको हमसे छीनकर मृत्युने हमे एक महाप्राण व्यक्तिसे वञ्चित कर दिया है।[2] जब-कभी मैंने लोक-कल्याणार्थ धनवानोंके अपनी सम्पत्तिके न्यासी बन जाने की बात लिखी, मेरे मनमे सदा मुख्यत. इस वणिक शिरोमणिका ही ध्यान रहा। यदि उनका न्यासी-धर्म आदर्श स्थितिको प्राप्त न हो सका तो उसमें उनका कोई दोष नही था। मै उन्हे जान-बूझकर रोकता रहा। मै नही चाहता था कि उत्साहातिरेकमें वे कोई ऐसा कदम उठाये जिसपर बादमें शान्त मनसे विचार करने पर उन्हें पश्चात्ताप हो। उनकी सादगी तो उनकी अपनी ही चीज थी। उन्होने अपने लिए जितने घर बनवाये, सभी धर्मशालाएँ बन गये। सत्याग्रहीके रूपमें उनका योगदान परम कोटिका था। राजनीतिक चर्चामे उनका कोई सानी नही था। उनकी निर्णयबुद्धि बहुत सही थी। त्यागके कार्यके रूपमे उनका अन्तिम कार्य सर्वो-

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. ११ फरवरी, १९४२ की अपराह्नमें मस्तिष्कके रक्तस्रावसे जमनालाल बजाजका देहान्त हो गया था। महादेव देसाईने इसका जो विवरण लिखा है उसके लिए देखिए परिशिष्ट ४।

परि था। वे कोई ऐसा रचनात्मक कार्य हाथमे लेना चाहते थे जिसमें वे अपने जीवनके शेष कालका विनियोग और अपनी समस्त योग्यताओंका उपयोग कर पाते। यह कार्य था भारतके उस पशुधनकी रक्षाका कार्य जिसका मूर्तिमन्त रूप गाय है। इस कार्यमे वे जिस एकनिष्ठता और उत्साहसे जुट गये उससे अधिक एकनिष्ठता और उत्साह मैंने कभी नही देखा था। उनकी उदारता जाति, धर्म या रगका कोई भेद नही मानती थी। वे एक ऐसी बात करना चाहते थे जो प्रवृत्ति-परायण मनुष्यके लिए क्वचित् ही सम्भव है। वे विचारका ऐसा सयम साधना चाहते थे जिससे उनके मनमें एक भी अवाछनीय विचार तस्कर रूपसे प्रवेश न कर पाये। उनके अवसानसे पृथ्वी एक रत्नसे वचित हो गई है। देशने अपना एक परम पराक्रमी सेवक खो दिया है। जिस कार्यको उन्होने अपना जीवन अर्पित कर दिया था उसे उनकी विधवा जानकीदेवीने अपना लेने का निश्चय किया है। उन्होंने अपनी सारी निजी सम्पत्तिका, जो लगभग ढाई लाख रुपयेकी है, त्याग कर दिया है। जो दायित्व उन्होंने अपने सिर लिया है, प्रभु उन्हे उसका निर्वाह करने की शक्ति दे।

सेवाग्राम, ११ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीमे]
हरिजन, १५-२-१९४२

३७३. पत्र : च्यांग काई-शेकको

११ फरवरी, १९४२

परम प्रिय मित्र,

आप जानते ही है कि मैं एक गाँवमें रहता हूँ और बाहरी दुनियासे मेरा सम्पर्क कटा हुआ है। आप मेरे देशमें पधारे है, यह बात मुझे पण्डित नेहरूसे ज्ञात हुई। इसके साथ ही उनसे यह मूल्यवान सन्देश प्राप्त हुआ कि आप वर्धा आकर मेरी कुटियाको भी पवित्र करनेवाले है। इसलिए आपके स्वागत-स्वरूप मैंने कोई सन्देश नही भेजा। लेकिन अभी यह जानकर बड़ा दुःख होता है कि आप वर्धा नही आ पायेंगे[1] और मैं खुद आकर आपसे मिलूँ, यह तो आप सोच भी नही सकते। आप खुद ही कल्पना कीजिए कि मेरे लिए कितने दुःखकी बात है कि आप और आपकी नेक सहधर्मिणी मेरे देशमें हो और मैं आप दोनोंके दर्शन न कर सकूँ। हम दोनो एक-दूसरेको

१. ब्रिटिश सरकार और विशेष रूपसे वाइसराय किसी भी तरह इस बातके लिए तैयार नहीं थे कि च्यांग गांधीजीसे मिलने वर्धा जायें। ११ फरवरीको लिनलिथगोने एमरीको लिखा: "मैंने आदेश दे दिये हैं कि जनरलिसिमोको वर्धा जानेके लिए रेलगाड़ी, वायुयान या मोटर किसी भी तरहका वाहन उपलब्ध न होने दिया जाये। वे नाराज भले हो जायें, मैं उन्हें मजबूर करूँगा कि वे इस सम्बन्धमें मेरी इच्छाका आदर करें।" ट्रान्सफर ऑफ पॉवर, जिल्द १, पृ० १४९।

पत्रोके जरिये जानते है, लेकिन उससे बहुत अधिक जवाहरलाल नेहरूके जरिये। आपके देशसे मेरे कई प्रकारके सम्बन्ध हैं। मै जानता हूँ कि आपका देश मेरे देशसे बडा है। और मै यह भी नही कह सकता कि आपकी संस्कृति भी हमारी सस्कृतिसे अधिक प्राचीन नही है। मुझे मालूम है कि स्वतन्त्रता खोने का और सदियो तक उससे वचित रहने का मतलब क्या होता है। अपनी स्वातन्त्र्य-रक्षाके आपके सघर्षमें मेरी सम्पूर्ण सहानुभूति आपके साथ है। ईश्वर आपके प्रयत्नोको सफल बनाये। और जिन परिस्थितियोके कारण हम दोनोकी मुलाकात असम्भव हो गई है, उनपर हमारा कोई वस नही है, इस बातकी प्रतीति तो हमें परस्पर और भी निकट लाती है।[1]

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

परमश्रेष्ठ जनरलिसिमो च्याग काई-शेक

अंग्रेजीकी नकलसे: गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४२। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३७४. पत्र: मगनलाल प्रा० मेहताको

११ फरवरी, १९४२

चि० मगनलाल,

तेरा पत्र मिला। तू चाहे रतिलालको अपनी निगरानीमे मत ले, लेकिन तुझे वहाँ जाना तो अवश्य चाहिए, उससे मिलना चाहिए, और यथासम्भव उसका कोई प्रबन्ध करना चाहिए।

तूने किसका नाम लिखा है, मै समझ नही सका। लेकिन जो भी आदमी मिले, उसे साथ ले ले और मरते भाईको बचा।

मजुलाकी जब इच्छा हो, तब आ जाये। [घरके] एक भागमें चम्पा रहती है। उसे वहाँसे हटाने की जरूरत है क्या? लेकिन जब मजु आयेगी, तब देख लूंगा। पहलेसे नही निकालता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०२९) से। सौजन्य: मंजुला म० मेहता

१. वैसे गाधीजी और च्याग काई-शेककी भेंट १८ फरवरी, १९४२ को हो गई थी।

३७५. भाषण : प्रार्थना-सभामें

११ फरवरी, १९४२

सवाल यह था कि अग्नि-दाह कहाँ किया जाये — सेवाग्रामके पास टीलेपर, सार्वजनिक श्मशान-भूमिमें या गोपुरीमें। आखिर यह तय हुआ कि जिस गोपुरीको उन्होंने अपना घर बनाया था, जहाँ अपने जीवनके अन्तिम कार्यके लिए अपना सर्वार्पण करके उन्होंने फकीरीको अपनाने का निश्चय किया था, अग्नि-दाह भी वही किया जाये। मैं इस मामलेमें तटस्थ था, लेकिन यह निर्णय मुझे अच्छा लगा।

उनके शवके साथ हजारो गोपुरीतक आये। अग्नि-दाहके बाद विनोबाने अपने मधुर कण्ठसे सारे-का-सारा 'ईशोपनिषद्' सुनाया। फिर मैंने उनसे 'गीताई का'[1] बारहवाँ अध्याय सुनाने को कहा, ताकि वहाँ उपस्थित सभी लोग उसे समझ सकें। बारहवाँ अध्याय मैंने इसलिए सुझाया था कि वह छोटा है, किन्तु उन्हे तो अठारहो अध्याय जबानी याद है, इसलिए उन्होंने नवाँ सुनाया। मगर उतनेसे मुझे तृप्ति नही हुई। मैंने कहा — कोई अभंग सुनाओ। इसपर उन्होंने तुकारामका एक अभंग भी सुनाया। अन्तमे मैंने कहा, अब 'वैष्णव जन तो तेने कहीए' भी सुना दो। उन्होंने वह भी सुनाया। श्री परचुरे शास्त्री वहाँ पहले ही पहुँच चुके थे। उन्होंने वेद-मत्र पढे और मेरे कहने पर लोगोको उन मत्रोका अर्थ भी सुनाया। मत्र बडे अर्थगभीर और सामयिक थे। थोडेमे उनका सार यह था

> जो ज्योति जमनालालजी मे सीमित थी, वह अब सीमा-रहित विश्वज्योतिमे समा गई है, यानी हम सबमे आ मिली है। शरीर तो मिट्टीका था, मिट्टीमें मिल गया। परन्तु उसमे जो शाश्वत था, मगर एक सीमामे बँधा हुआ था, वह अब हम सबका हो गया है। जबतक जीवित थे, जमनालालजी कुछ ही लोगोके थे, किन्तु अब वे सारे विश्वके बन गये हैं। उनके शरीरका अन्त हुआ है, किन्तु उनके व्रत, उनकी प्रतिज्ञाएँ, उनकी गोसेवा, उनकी खादी-सेवा, सत्य और अहिंसाकी लगन, ये सब तो अब हममे आकर मिल गई हैं — हमारी विरासत बन गई हैं। उन्होंने इन सब व्रतोको सिद्ध करने के लिए जो-जो कुछ भी किया, सो सब तो अब हमारा है ही, लेकिन जितना-कुछ वे अधूरा छोड गये है, उसे पूरा करने का जिम्मा भी हमारा है। अपनी मृत्युके द्वारा वे आज हमें यही सिखा गये हैं।

इससे ज्यादा सच्चा सन्देश और क्या हो सकता है? यह मैं कैसे कहूँ कि मुझे उनके जाने का दु ख नही हुआ? दु ख होना तो स्वाभाविक था, क्योकि मेरे

१. गीताका विनोबा-कृत मराठी पद्यानुवाद। नवें और बारहवें अध्यायोमें भक्तिका विवेचन किया गया है।

लिए तो वही मेरी कामधेनु थे। आफत-मुसीबत हो, तो बुलाओ जमनालालजी को। कुछ काम करना हो, कोई जरूरत आ पड़ी हो, तो बुलाओ जमनालालजी को। और जमनालाल भी ऐसे कि बुलावा गया नहीं और वे आये नहीं। ऐसे जमनालालका दुःख कैसे न हो? लेकिन जब उनके किये कामोंको याद करता हूँ, और हमारे लिए जो सन्देश वे छोड़ गये हैं, उसका विचार करता हूँ तो अपना दुःख भूल जाता हूँ।

आज हमें विचार तो यह करना है कि हम उनकी जमीनपर बैठे हैं। सेवाग्रामके लिए उनके मनमें कितना अनुराग था, सो मैं जानता हूँ। यहाँ एक-एक कौड़ी उन्हीं की खर्च होती है। उन्हें इस बातकी चिन्ता रहती थी कि यहाँ खर्च होनेवाली एक-एक पाईका ठीक-ठीक हिसाब रहता है या नहीं; क्योंकि वे खुद अपनी कौड़ी-कौड़ीका हिसाब रखते थे। वे हमेशा इस बातका आग्रह रखते थे कि सेवाग्रामका कोई आदमी बाहर जाये, तो उसका बरताव और उसका रहन-सहन सेवाग्रामको शोभित करनेवाला होना चाहिए।

उनका अपना जीवन भी कैसा अनोखा था? एक दिन आकर कहने लगे: "मानता हूँ कि आपका मुझपर बड़ा प्रेम है, लेकिन मुझे तो देवदासकी तरह आपका पुत्र बनना है।" पहाड़ी डील-डौलवाले जमनालालको मैं अपना पुत्र कैसे बनाता? परन्तु आखिर उनके प्रेम और आग्रहके कारण मुझे झुकना ही पड़ा। मैंने कहा, "अच्छी बात है। लोग बेटेको गोद लेते हैं, लेकिन यहाँ बेटेने बापको गोद लिया।" बोले, "बस, अब तो मुझे अपना अन्तर्बाह्य सब उसके लिए आपके चरणोंमें चढ़ा देना है। मेरे मनमें मलिन विचार तो आते ही रहते हैं, लेकिन अब उन सबको आपके सामने उगल दिया करूँगा, ताकि मेरी शुद्धि हो और मुझे शान्ति मिले।" अपने इस संकल्पका उन्होंने मरते दमतक पालन किया। वे तो रायबहादुर थे। लेकिन मेरे साथ उनका सम्बन्ध रायबहादुरीसे पहले ही कायम हो चुका था। मैंने उन्हें रायबहादुरी लेने दी, क्योंकि उन दिनों मैं सोचता था कि उसका भी कुछ सदुपयोग हो सकेगा। जब उसे छोड़ने की बात आई, तो उन्हें उसका त्याग करने में एक पलकी भी देर न लगी। उनकी निर्भयता असाधारण ही थी। जबसे 'पुत्र' बने, वे अपनी समस्त प्रवृत्तियोंकी चर्चा मुझसे करने लगे थे। अन्तमें जब उन्होंने गोसेवाके लिए फकीर बनने का निश्चय किया, तो वह भी मेरे साथ पूरी तरह सलाह-मशविरा करके ही किया। वे जिस कामको हाथमें लेते थे, उसमें जी-जानसे जुट जाते थे। यही उनका स्वभाव था। जब रुपया कमाने लगे तो ढेरों रुपया कमाया; लेकिन जहाँतक मुझे मालूम है, मैं गर्वके साथ कह सकता हूँ कि अनीतिसे उन्होंने एक पाई भी कभी नहीं कमाई, और जो-कुछ कमाया सो उन्होंने जनता-जनार्दनके हितमें खर्च किया।

जानकीदेवीके दुःखकी तो हम सब कल्पना कर सकते हैं। वे तो पागल ही हो गई थीं। कहती थीं, "बस, मुझे तो इनके साथ सती होना है। इनके बिना मैं जी ही नहीं सकती।" मैंने कहा: "यह न समझो कि इस तरह सती होने से

लोग तुम्हारी पूजा करेंगे, बल्कि उलटे निन्दा होगी। हाँ, अगर कर सको, तो योगाग्नि पैदा करो, और उसमें भस्म होकर सती हो जाओ। न मैं तुम्हे रोकूँगा और न दूसरा कोई तुम्हे रोक सकेगा। लेकिन वह तो सम्भव नही। इसलिए मैं तुमसे कहता हूँ कि उनके पीछे जोगिन बनकर ही तुम्हे सच्ची सती बनना होगा।" घनश्यामदासजी पास ही थे। उन्होने कहा ."हमारे यहाँ तो ऐसे मौकोपर कोई शुभ सकल्प करने का रिवाज है। जानकीदेवीसे ऐसा कोई सकल्प कराइए।" जानकीदेवीने खुद ही कहा "मेरा सकल्प तो यही है कि वे मेरे लिए जो-कुछ छोड गये है, वह सब मैं उनके कामके लिए अर्पण करती हूँ।" उन्होने मुझे अपना हिसाब भी बताया दो-ढाई लाखकी रकम थी। वह सब उन्होने गोसेवाके लिए अर्पण कर दी। इसके बाद जब वे चिताग्नि के प्रकाशमे खडी थी, मैंने एक और बात भी उनसे कही। मैंने कहा "सिर्फ इससे काम न चलेगा। अपना सारा धन कृष्णार्पण करके तुम भिखारी बन गई हो। अब लडके तुम्हे खिलायेंगे, तो तुम खाओगी, और नही खिलायेंगे, तो मेरे पास आ जाओगी और मेरे भिक्षान्नमे शरीक हो जाओगी। लेकिन इसके साथ ही अब तुम्हे इस चिता की साक्षीमें अपने-आपको भी इसी कामके लिए समर्पित कर देना है। अब तुम्हे अपने लिए नही, बल्कि जमनालालजी के उस गोसेवा-कार्यके लिए ही जीना है। अब न तो लडकोका घर तुम्हारे लिए है, न लडकियोका। तुम्हें या तो गोपुरीमे रहना है, या मेरे पास सेवाग्राममें। तीसरी जगह तुम्हारे लिए नही। और चूँकि तुम अपना सर्वस्व इस कार्यके लिए दे रही हो, इसलिए अब शोक करने का भी तुम्हें कोई अधिकार नही रह जाता।" जानकीदेवीने इसे भी स्वीकार किया और स्वय जमनालालजी की गोपुरीमें गड जाने का निश्चय कर लिया। इस तरह वे सच्चे अर्थमे सती बनी। यह सब शुद्ध वैराग्यसे हुआ है, या श्मशान-वैराग्य ही है, सो तो समय ही बतायेगा। वे खुद पूछती थी "क्या ईश्वर मुझे यह सब करने की शक्ति देगा?" विनोबा भी वही थे। उन्होने कहा . "जहाँ शुभेच्छा होती है, वहाँ ईश्वर उसको पूर्ण करने की शक्ति भी देता ही है।" इसपर मुझे महारानी विक्टोरिया की याद हो आई। राजगद्दीपर बैठते समय उनकी उम्र सिर्फ १९ बरसकी थी। जब उनका प्रधान-मन्त्री रानीके रूपमे उनको सलाम करने आया, तो वे अपने सिंहासनसे नीचे उतर आईं और बूढे प्रधानके आगे सिर झुकाकर खडी हो गईं। जब उनके राज्याभिषेककी घोषणा की गई, तो उन्होने ईश्वरसे प्रार्थना की और प्रतिज्ञा ली "आई विल बी गुड", अर्थात् मैं भली बनूँगी। बस, यह उनका शुद्ध सकल्प था, जो उनके मन्त्रियोकी सहायतासे चमक उठा। हिन्दुस्तानकी वे साम्राज्ञी थी। यह मैं नही कहता कि उनके राज्यमे हमे कोई तकलीफ ही नही हुई। फिर भी इतिहास इस बातका साक्षी है कि वे अपने उस शुभ सकल्पके अनुसार अपनी प्रजाकी सेवा करना चाहती थी। जो काम उन्होने किया, वही जानकीदेवी भी कर सकती हैं। वे गोसेवा का सारा काम अपने हाथमें लेकर उसे पूरी तरह सफल बना सकती हैं।

मैं फिर कहता हूँ कि हमें हमेशा यह याद रखना होगा कि हम जमनालालजी की भूमिपर बैठे है। हमें उनके नामको सुशोभित करना है। ऐसा कोई काम हमारे

हाथो न हो जिससे उनकी कीर्तिको धक्का लगे। उनकी शुद्ध कमाईको हमें खूब सोच-विचारकर खर्च करना चाहिए, और एक-एक पाईका हिसाब रखकर हमेशा अपव्यय से बचना चाहिए। उनका सयम हमारे लिए मार्ग-दर्शक हो।

हरिजन-सेवक, २२-२-१९४२

३७६. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
११ फरवरी, १९[४२][१]

चि० जवाहरलाल,

काशीके भाषणके[२] बाद तो मै तुमको भी राष्ट्रभाषामे क्यो न लिखु? सरुपको तो रा० भा० में लिखता हू। रणजीतको गुजरातीमें। तुमको क्यो इग्रेजीमें?

ये रहे दो खत।[३] अगर पसद पडे तो दे देना। मै सेनापतिको तार भी भेजुगा।[४] यह खत तो रातको स्मशानभूमीसे आकर लिख रहा हू ताकि कल सवेरे चला जाय।

जमनालालजी का तो क्या लिखु?

चद्रसिह[५] यहा जम गये है। खुश रहते है। खादी काम अपनी इच्छासे सीख रहे है। उनकी पत्नी विकासगृहमें शात नहि रह सकती है। चद्रसिहको खत लिखती है। मृदुको[६] लिखा है कि दिल चाहे तव भेज देवे।

स्टेटस पीपलकी आफिस तो आ रही है। जमनालालजी के जाने से कुछ फरक होना है क्या? अमृतकी मददसे यहा चल तो सकता है। लेकिन तुमारे सोच लेना है। अव तो देर हो गई। ज्यादा नही लिखुगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे गाधी-नेहरू पेपर्स। सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. साधन-सूत्रमें "१९४१" है, जो भूलसे लिखा जान पड़ता है, पत्रमें जमनालाल बजाजकी मृत्युका जो उल्लेख है उससे यह बात स्पष्ट भी हो जाती है।

२. देखिए "भाषण: बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयमें", पृ० २६५-७१।

३. इनमें से एक पत्र उपलब्ध नहीं है; दूसरेके लिए देखिए "पत्र: च्यांग काई-शेकको", पृ० ३३७-३८।

४. देखिए पृ० ३४४।

५. चन्द्रसिंह गढ़वाली, जिन्होंने १९३० में खुदाई खिदमतगारोंपर गोली चलाने से इनकार कर दिया था, जिसके फलस्वरूप उन्हें लम्बी सजा भुगतनी पड़ी थी।

६. मृदुला साराभाई

३७७. बातचीत : बजाज-परिवारसे[1]

१२ फरवरी, १९४२

जमनालालजी के सबसे बडे पुत्र चि० कमलनयनसे गांधीजी ने कहा :

हिन्दू धर्ममें सबसे बडा पुत्र दूसरे पुत्रोंकी तरह अपने पिताकी सम्पत्तिका वारिस तो होता ही है, मगर साथ ही वह कुलधर्मका और अपने पिताकी नीति और सिद्धान्तो का सरक्षक भी बनता है। इसलिए मैं तुमसे कहता हूँ कि तुम व्यापारमें लगे हो, तो लगे रहो, धन कमाना हो कमाओ, लेकिन तुम्हारी सारी कमाई जमनालालजी की तरह धर्मकी कमाई होनी चाहिए। साथ ही यह भी याद रखो कि जमनालालजी की तरह तुम्हें भी लोकहितके लिए अपनी सम्पत्तिका सरक्षक बनकर रहना है। तुम अपनी कमाईका रुपया अपने लिए नही, लोकसेवाके लिए खर्च करोगे, तभी तुम्हारा ट्रस्टीपन सार्थक हो सकेगा।

इसके बाद छोटे भाई चि० रामकृष्णको समझाते हुए कहा :

तुमसे तो मैं यह आशा करता हूँ कि तुम अपना सारा जीवन सेवाके लिए और जमनालालजी द्वारा छोडे हुए अधूरे कामोंको पूरा करने के लिए समर्पित कर दोगे। लेकिन मैं उसके लिए मजबूर नही करना चाहता। तुम्हारी हिम्मत हो, तो सकल्प करो। यह याद रखो कि जो शुभ सकल्प हम करते है, उन्हे निवाहने की शक्ति भी ईश्वर हमें दे ही देता है। और मान लो कि हम सफल नही हो पाये, तो भी कोई नुकसान नहीं। 'गीता' की भाषामें 'योगभ्रष्ट' की गति भी शुभ ही होती है।

फिर उन्होंने जमनालालजी के भतीजे श्री राधाकृष्णजी से कहा :

जानकीदेवीके व्रतको तो तुम जानते ही हो। मैं मानता हूँ कि अगर उन्हें एक योग्य सचिव मिल जाये, जैसा महारानी विक्टोरियाको मेलबोर्न मिल गया था, तो वे अवश्य ही गोसेवा सघकी सभानेत्रीके पदको सुशोभित कर सकेंगी। वे गोमाता की पुत्री है, अतएव ये अपनी मा की अच्छीसे-अच्छी सेवा कर सकेंगी। आज की इस गिरी हुई तन्दुरुस्तीमें मैं उनपर ज्यादा बोझ नही डालना चाहता। किन्तु मैं जानता हूँ कि "त्यागमूर्ति" के सकल्पका बल उसकी देहको वज्रवत् बना दिया करता है। तुम याद रखो कि और सब काम बट जाने पर जो बाकी रह जायेगा, उस सबकी जिम्मेदारी तुम्हारे कन्धोपर रहेगी।

अन्तमें जमनालालजी की पुत्रियोंसे[2] बात करते हुए उन्होंने कहा :

१. यह अश "सतीका संकल्प" शीर्षकसे प्रकाशित रिपोर्टसे लिया गया है।
२. कमला नेवटिया, मदालसा और उमादेवी अग्रवाल

अभी जो बातें मैंने चि० कमलनयन और रामकृष्ण वगैरासे कही हैं, वे सब तो तुमने सुनी ही हैं। याद रखो कि तुम्हें भी वही सब करना है। तुमसे भी मैं तुम्हारी शक्तिके अनुसार त्यागकी आशा रखूँगा। यह कभी न भूलो कि जमनालालजी की जितनी कमाई थी, सो सभी असलमें कृष्णार्पण थी। अगर उसका कुछ हिस्सा तुम्हें मिला है, तो वह भी ट्रस्टीशिपकी शर्तके साथ ही मिला समझो। वह तुम्हारे भोग-विलासके लिए नहीं, बल्कि इसलिए है कि जमनालालजी की तरह तुम भी उसकी ट्रस्टी बनकर रहो।

हरिजन-सेवक, २२-२-१९४२

३७८. तार : च्यांग काई-शेकको

वर्धागंज
१२ फरवरी, १९४२

जवाहरलाल नेहरू[1]
४१ राजपुर रोड, दिल्ली

यह जानकर मुझे अत्यधिक दुःख हुआ कि आप तथा आपकी धर्मपत्नी सेवाग्राम नहीं आ सकते, जहाँ मेरी पत्नी और इस छोटी-सी बस्तीके निवासी आपकी अगवानी करने की आशा लगाये बैठे थे। ऐसा न हो पाने पर मैं आपके भारतकी धरतीपर रहते आपसे मिलने कहीं भी आ सकता था। लेकिन पंडित नेहरूसे मुझे मालूम हुआ कि यह भी नहीं हो सकेगा। अब तो भावनामें ही आपके साथ होने से मुझे सन्तुष्ट रहना है। मेरी समस्त शुभकामनाएँ आप दोनों तथा आपके देशके साथ हैं।

गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : गांधी-नेहरू पेपर्स, १९४२। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

३७९. पत्र : अमृतलाल चटर्जीको

१३ फरवरी, १९४२

प्रिय अमृतलाल,

तुम्हारा पत्र मिला।

तुम जब चाहो, वीणाको भेज सकते हो। राजकोटमें उसे अच्छी तरह रखा जायेगा।

१. यह तार जवाहरलाल नेहरूने अगले दिन च्यांग काई-शेकको, जिनको यह वस्तुतः सम्बोधित था और जो तब दिल्लीमें ही थे, प्रेषित कर दिया था।

बैंलेन कमसे-कम २५ रुपये प्रति माह तुम्हें भेजेगा।

जहाँतक खुद तुम्हारी बात है, मैं पक्का नहीं कह सकता कि तुम यहाँ खुश रह पाओगे। तुम्हारी पत्नीके बारेमें तो और भी नहीं। फिर, आश्रममें भीड भी काफी है। तुम्हें कहाँ रखा जाये, यह भी एक सवाल है। अगर तुम आओ तो तुम कितने लोग होगे? मैं तुम्हें जहाँ रखूँ, क्या वहाँ रह सकोगे और जो काम तुम्हें दूँ वह कर सकोगे? तुम समझ सकते हो कि मैं भरसक तुम्हारी मदद करनेको उत्सुक हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३३६) से। सौजन्य : अमृतलाल चटर्जी

३८०. पत्र : अमृतकौरको

१४ फरवरी, १९४२

चि० अमृत,

तुम्हारा पत्र और तार भी मिला। मैं बिलकुल स्वस्थ हूँ। रक्तचाप नियन्त्रणमें है, इसलिए चिन्ताकी कोई बात नहीं।

मैं अब भी जमनालालजीके काम-काजकी व्यवस्थामें व्यस्त हूँ। इन सबके बारेमें मेरी चिन्ता दिन-दिन बढ़ती ही जा रही है। उनके अलावा और किसी चीजके बारेमें मैं सोच ही नहीं सकता। मित्रोंके साथ मुलाकात १९ को समाप्त होगी।[1] निमन्त्रण-पत्र मेरे ही नामसे जा रहा है।[2]

स्नेह।

बापू

श्री राजकुमारी अमृतकौर
मार्फत — कर्नल दीनानाथ प्रधानजी
इंदौर

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११७) से, सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७४२६ से भी

१. लेकिन यह मुलाकात २० और २१ तारीखको हुई थी, देखिए पृ० ३७९-८३ और ३८५-८७।
२. देखिए पृ० ३४६-४७।

३८१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

१४ फरवरी, १९४२

चि० अमला,

लगता है, मैंने तुझे लिखा नही। अगर नही लिखा, तो लापरवाहीकी वजहसे नही, बल्कि इसलिए कि कामकी भीडमे भूल गया।

तुझे जब आना हो आ जाना।[1]

जब आना चाहे आ जाना।

स्नेह।

बापू

मूल गुजरातीसे स्पीगल पेपर्स। सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

३८२. एक पत्र[2]

सेवाग्राम
१४ फरवरी, १९४२

प्रिय भाई-बहन,

आप जानते है कि जमनालाल और मेरे बीचमे कितना घनिष्ट सबध था। कोई काम मैंने नही किया जिसमे उनका पूरा सहयोग तन, मन और धनसे न रहा हो। जिसको राजकाज कहते है वह न मेरा शौक था, न उनका। वे उसमें पडे क्योकि मै उसमें था। लेकिन मेरा सच्चा राजकाज तो था रचनात्मक कार्य। और उनका भी राजकाज यही था। मेरी आशा थी कि मेरे बाद जो मेरे खास काम माने जाये उन्हे ये सपूर्णतया चलावेगे। उन्होने मुझे ऐसा आश्वासन भी दे रखा था। लेकिन मनुष्यकी इच्छाकी पूर्ति तो ईश्वर ही करता है। हमारी इच्छा सफल न हुई। मेरी श्रद्धा मुझे सिखाती है कि इस निष्फलतामें ही सफलता मिलेगी। जो भी हो, अब मुझे सोचना है कि जमनालालजी के बदलेमे उनके कार्य कौन करेगे, और कैसे? इस प्रश्नकी चर्चा, और हो सके तो उसे हल करने के लिए आपको कष्ट दिया

१. इसके बादका अश अंग्रेजी में है।

२. यह पत्र जमनालाल बजाजके लगभग १९० मित्रोंको सम्बोधित था। कुछ प्रतियाँ उर्दू लिपिमें भी भेजी गई थीं।

जाता है। किसीको आने का आग्रह तो इसमे हो नही सकता है। जिन कामोमे जमनालालजी ने खास दिलचस्पी ली है उसकी फेहरिस्त वक्तके क्रमसे इनके साथ है। इन कामोमें आप हिस्सा लेना चाहते है और आप आ सकते है तो अवश्य आइये। नही आ सकते है तो भी विवेकके खातिर आना चाहिए ऐसी कोई बात नही है।

आपकी दिलचस्पी होते हुए भी आप किसी कारणवश नही आ सकते है तो आप लिखें कि किन काममें किस तरह आप सक्रिय हिस्सा लेगे। चर्चा और मत्रणा ता० २०-२-१९४२ शुक्रवारको दिनके २ बजे होगी। यदि आ सकें तो कृपया तारसे खबर देंगे तो सुविधा होगी। जिनको निमन्त्रण भेजा है उनकी फेहरिस्त भी इसके साथ है। जिनके नामका स्मरण हम लोगोको आया उनके नाम दिये है। कोई रह गये हो तो भूलसे ही रहे है ऐसा समझकर वे निमन्त्रण मगवा सकते है।

आपका,

मो० क० गांधी

जमनालालजी के कार्य वक्तके क्रमसे

१ गोसेवा
२ नई तालीम
३. ग्रामोद्योग
४. महिला सेवा
५ हरिजन सेवा
६ गांधी सेवा
७ खादी
८ देशी राज्य
९ राष्ट्रभाषा हिन्दी प्रचार और उर्दूका सयुक्त प्रचार
१०. सत्याग्रह आश्रम तथा ग्राम-सेवा
११ मारवाडी शिक्षा मडल, सन १९१० —नवभारत विद्यालय तथा कॉलेज

पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २९१-९२

३८३. पत्र : शामलालको

१४ फरवरी, १९४२

भाई शामलाल,

यह खत तुमारे लिये, बापाके[1] लिये और वियोगीजीके[2] लिये समजो। बालकोबा साधु पुरुष है। भोजुभाई सब सेवा तो करेगे हि। लेकिन जो चाहिये सो सुभिता कर देना। उनको खर्चके लिये जो चाहिये सो देना [और] मेरे खातेमें लिखना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ११९०) से

१. अमृतलाल वि० ठक्कर
२. वियोगी हरि

३८४. प्रमाणपत्र : गणेशरामको

१४ फरवरी, १९४२

भाई गणेशराम नाइ सेवाग्राम सेवाके लिये आये थे, कई मास रहे। हरिजनोकी हजामत उन्होने बडे प्रेमसे और मुफत की और प्रतिज्ञा कर ली है कि जहां होंगे वहा हरिजनोकी सेवा करेंगे। ईश्वर भाई गणेशरामकी सेवा-भावनामें दिन-प्रति-दिन वृद्धि करे।

मो० क० गांधी

प्रमाणपत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ३०९२) से

३८५. लीम्बडीसे हिजरतकी वार्षिकी[1]

लीम्बडीसे हिजरत करनेवालो की हिजरतको चौथा वर्ष लग रहा है।[2] इसके लिए वे बधाईके पात्र है। उनमें से कुछ लोग अपनी कमजोरीके कारण टूट गये है। ऐसा तो सभी आन्दोलनोमे होता ही है। जो पैदा होते है वे सभी जीवित ही नहीं रहते। बहुत-से तो जन्म लेते ही मर जाते हैं, कुछ बचपनमें चल बसते है, कुछ काफी उम्रतक जीवित रहते हैं और कुछ ही ऐसे होते है जो पूरी आयु भोगते हैं। यही बात मानवके प्रयत्नके बारेमे लागू होती है। जो लोग किनारे लग जाते है वे बीचमें डूबे हुए लोगोकी कमी पूरी करते है और भविष्यके लिए दीप-स्तम्भ बन जाते हैं। इन हिजरत करनेवालो मे से जो लोग किनारेपर पहुँचेंगे वे इस लड़ाईको शोभान्वित करेंगे और आखिरकार जनतामे चेतना उत्पन्न करेंगे। इसलिए मुझे आशा है कि जो लोग टिक सके हैं, वे अन्ततक अडिग रहकर पार उतरेंगे और इस बीच जो मुसीबतें आयेंगी उन्हें सहन करेंगे।

सेवाग्राम, १५ फरवरी, १९४२

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, २२-२-१९४२

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए खण्ड ६८, पृ० ४८३-८४ तथा खण्ड ७०, पृ० १६१-६२।

३८६. पत्र : प्रभावतीको

१५ फरवरी, १९४२

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। तू बहनोंको और जानकीबहनको लिखना। यहाँ २० तारीखको बैठक तो होगी ही। मैंने ही बुलाई है।[1] राजेन्द्र बाबूको बुलाया है। तुझे बुलाने की हिम्मत ही नहीं पड़ती। मुझे जयप्रकाशका पत्र मिला था। पत्र अच्छा है। [जेल-अधिकारियोंने] इसमें तीन पंक्तियाँ काट दी हैं।[2] जमनालालजी की मृत्युका पूरा विवरण [समाचार-पत्रोंमें] आ गया है, इसलिए मैं यहाँ नहीं लिख रहा हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५६७) से

३८७. पत्र : देवदास गांधीको

१५ फरवरी, १९४२

चि० देवदास,

तेरा पत्र मिला। मायकी लिखित सामग्री भी मिली। मैं सब पढ गया। तेरा जवाब मुझे अच्छा लगा। औरोंने भी तेरी अच्छी मदद की। तू और अधिक दृढ हो सकता था। यह समय नरम पड़ने का नहीं है। तेरे ऊपर बहुत बडी जिम्मेदारी आ पड़ी है, देशके प्रति भी कम नहीं है। उसे [सरकारको] अगर तू ही खरी-खरी नहीं सुनायेगा, तो कौन सुनायेगा? पत्रकारका कर्त्तव्य जैसे जनताका मार्गदर्शन करना है वैसे ही सरकारका मार्गदर्शन करना भी है। अगर सरकार ऐसा न करने दे, तो यह उसकी जिम्मेदारी हुई। लेकिन पत्रकार यदि लोगोंको गलत रास्ते ले जाये तो यह तो उसीकी जिम्मेदारी हुई न? सामान्यत हमारी ऐसी ही दयनीय स्थिति है, क्योंकि पेट प्रत्येकके आडे आता है। लेकिन तेरे बारेमें ऐसा नहीं है। यह सब तेरी आलोचना करने के लिए नहीं बल्कि तुझे सावधान करने को लिखा है।

१. देखिए पृ० ३४६-४७।

२. हजारीबाग जेलके, जहाँ जयप्रकाश नारायण कैद थे, अधिकारियोंने पत्रकी अन्तिम तीन पंक्तियाँ काट दी थीं। देखिए "पत्र : जयप्रकाश नारायणको", पृ० ३६४।

मणिलाल दक्षिण आफ्रिकामे जूझ रहा है और यह हम लोगोंके लिए वडे गौरवकी वात है। उसका विस्तृत पत्र तुझे मिलना चाहिए। मैंने उससे लिखने को कहा है। वा की तवीयत आज ठीक है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१५०) से

३८८. पत्र : अमृतकौरको

१५ फरवरी, १९४२

चि० अमृत,

तुमारा खत मिला। मैंने कल लिखा सो मिला होगा। सव कुशल है, वा ठीक है। मै वहुत वोज नही उठाता हूं।

वापूके आशीर्वाद

श्री राजकुमारी अमृतकौर
मार्फत प्रधान सचीव
इदौर

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ४२६०) से, सौजन्य . अमृतकौर। जी० एन० ७८९२ से भी

३८९. रेगिस्तानमें नखलिस्तान[1]

वुनियादी शिक्षाको सरकारी अफसरोकी ओरसे सिर्फ विरोधी आलोचना ही मिलती रही है और उस आलोचनाका आधार भी गलत चिन्तन है। किन्तु विहारके गवर्नरके सलाहकार श्री ई० आर० जे० आर० कजिन्स द्वारा उसकी प्रशसामें कहे गये निम्नलिखित अनुच्छेद, जो उन्होने हिन्दुस्तानी तालीमी सघके मत्री श्री आर्यनायकम्को लिख भेजे है, विरोधी आलोचनाओंके इस रेगिस्तानमें नखलिस्तानकी तरह ताजगी देनेवाले लगते है।[2]

> . . . मै २७ में से १८ स्कूलोंके शिक्षकों और विद्यार्थियोंसे मिल पाया। . . . विद्यार्थियोंकी सफाई-पसन्द आदतों, उनकी प्रतिभा और अपने काममें उन्हें स्पष्ट ही जैसा रस मिलता है उसे देखकर मै बहुत प्रभावित हुआ। मुझे

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. यहाँ उस पत्रके अश ही दिये जा रहे हैं।

विश्वास है कि हम सही रास्तेपर चल रहे हैं और बुनियादी शिक्षाका सम्पूर्ण पाठ्यक्रम पूरा कर लेनेवाला १४ वर्षका कोई बच्चा सामान्य स्कूलोंमें शिक्षा पानेवाले उसी उम्रके बच्चोंकी तुलनामें कभी भी पीछे नहीं रहेगा।

इसकी जो एक उल्लेखनीय और उत्साहवर्धक विशेषता है और जिसे मैं सबसे अधिक महत्त्व देता हूँ वह यह है कि ये स्कूल ग्रामवासियोंकी सद्-भावना प्राप्त करने और अपने प्रति उनकी रुचि जगाने में बहुत सफल रहे हैं, और जबतक यह सद्भावना और रुचि कायम है तबतक इस पद्धतिके विफल होने की कोई आशका ही नहीं हो सकती। . . . मुझे पूरा विश्वास है कि . . . शिक्षाका जो सामान्य अर्थ लगाया जाता है उस अर्थमें शिक्षा प्राप्त करने के साथ-साथ ग्रामीण बालक इन स्कूलोंमें मानसिक जागरूकता, शारीरिक श्रम करने में विशेष कुशलता, स्वास्थ्य और सफाईके ऐसे गुण अर्जित कर सकेंगे जिनके बलपर भावी गाँव आजकी अपेक्षा अधिक स्वास्थ्यप्रद, आकर्षक और प्रबुद्ध बन सकेंगे।

सेवाग्राम, १६ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-२-१९४२

३९०. हरिजनोंके लिए आदर्श विद्यालय

हरिजन सेवक संघके अध्यक्ष सेठ घनश्यामदास बिडला लिखते हैं

हरिजन विद्यार्थियोंकी शिक्षाके लिए हम छात्रावासवाली कुछ ऐसी शालाएँ स्थापित करने का विचार करते हैं जिनमें दूसरी जातियोंके विद्यार्थी भी रह सकें। अबतक जब-जब हमने हरिजन छात्रावासों और विद्यालयोंकी चर्चा की है, तब-तब ऐसी सस्ती पाठशालाओं और सस्ते छात्रावासोंका ही विचार किया है जिनमें बहुत ही कम तनख्वाह पानेवाले, मामूली पढ़े-लिखे शिक्षक और छात्रा-भिरक्षक हों और जहाँ छात्रोंको भी पर्याप्त पोषक आहार न मिलता हो। जबतक हम हरिजनों और दूसरे गरीब छात्रोंको इस तरहकी सस्ती संस्थाओं में पढ़ायेंगे, तबतक उन विद्यार्थियोंके दिलसे वह हीन भावना दूर नहीं होगी जिससे वे अक्सर ग्रस्त रहते हैं। और जो शिक्षक पूरी तरह सुशिक्षित नहीं हैं और जिन्हें वेतन भी पर्याप्त नहीं मिलता, उनसे विद्यार्थी सीखेंगे भी क्या? इन विद्यार्थियोंको दूसरे विद्यार्थियोंके साथ मिलने-जुलने का मौका कभी नहीं मिलता। गरीबों और अमीरों अथवा हरिजनों और सवर्णोंके बीच किसी प्रकारका सम्पर्क न रहने से दोनों ही पक्ष नुकसानमें रहते हैं। इसलिए मेरा

सुझाव यह है कि हम सुन्दर वातावरणके बीच छात्रावासवाले कुछ विद्यालय खोलें। इन विद्यालयोंका स्तर ऐसा होना चाहिए कि इनकी तुलना किसी भी सुसंचालित गैर-सरकारी शिक्षण-संस्थासे की जा सकती हो। शुरूमें बतौर प्रयोगके ऐसे कुछ ही विद्यालय खोले जाने चाहिए।

इन विद्यालयोंमें मैट्रिकतक की पढ़ाईकी व्यवस्था होनी चाहिए और इन्हें विश्वविद्यालयोंसे सम्बद्ध होना चाहिए। कहने की जरूरत नहीं कि अधिकतर विद्यालयों में छात्रावास भी होने चाहिए। हरएक विद्यार्थीकी व्यक्तिगत देख-भालका प्रबन्ध इन विद्यालयोंकी विशेषता होनी चाहिए। सारी शिक्षा मातृभाषा द्वारा ही दी जानी चाहिए, और दूसरी भाषाके रूपमें अंग्रेजीकी शिक्षा दी जानी चाहिए। इस दौरान विद्यार्थियोंको कुछ ऐसे उपयोगी हस्त-कौशलोंकी शिक्षा भी दी जानी चाहिए जिनका अपना तालीमी महत्त्व हो।

इस शिक्षाको सम्पूर्ण और स्वावलम्बी बनाने की दृष्टिसे हमारे यहाँ मैट्रिकके लिए तैयार होने में जितना समय लगता है, इसमें हम उससे दो साल ज्यादा रखें और इन दो सालोंमें विद्यार्थियोंको मैट्रिककी पढ़ाईके अलावा दूसरी आवश्यक शिक्षा दें।

हमारा सुझाव यह है कि इन विद्यालयोंमें नीचे लिखी तीन दस्तकारियोंके सिखाने का प्रबन्ध हो और विद्यार्थी उनमें से किसी एकको अपने लिए चुन लें :

(१) पिंजाई, कताई, बुनाई, धुनाई और रँगाई; या (२) बढ़ईगिरी और लुहारी; अथवा (३) कागज बनाना, जिल्द बाँधना और छपाईके लिए साधारण रीतिसे टाइप लगाने का काम आदि करना।

हमारा इरादा पर्याप्त वेतन देकर अच्छी योग्यतावाले ऊँचे दर्जेके शिक्षक रखने का है। ऐसा करने के पीछे हमारा उद्देश्य यह है कि विद्यार्थियोंको कॉलेज की शिक्षाकी कमी न महसूस हो, हालाँकि जो कॉलेजमें जाना चाहेंगे उनके लिए कोई रुकावट नहीं होगी। हम आशा रखते हैं कि पढ़ाई पूरी करने के बाद विद्यार्थीको ईमानदारीके साथ आजीविका अर्जित करने में कोई कठिनाई नहीं होगी। जिन विद्यार्थियोंको रोजगार-धन्धेकी जरूरत हो, उनको काम पर लगाने का प्रबन्ध करना बोर्ड अपना कर्त्तव्य समझे।

विश्वविद्यालय द्वारा निश्चित पाठ्यक्रम और हस्त-कौशलकी शिक्षाके अतिरिक्त विद्यार्थियोंका सामान्य ज्ञान और आरोग्य-विषयक ज्ञान बढ़ाने की ओर विशेष ध्यान दिया जायेगा। संगीत, खेल-कूद, कसरत, घुड़सवारी और तैराकी आदि भी सिखाये जायेंगे। धार्मिक अथवा नैतिक शिक्षाकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिए। हिन्दू धर्मके सिद्धान्तों और भारतीय संस्कृतिकी विशेषताओंके अच्छे परिचयके साथ-साथ छात्रोंमें सब धर्मोंके प्रति समभाव रखने की ठीक-ठीक प्रवृत्ति भी पैदा की जानी चाहिए।

इन छात्रालयोंमें आधे विद्यार्थी हरिजन होने चाहिए, जिनके लिए रहने, खाने और पढ़ने का प्रबन्ध निःशुल्क रहेगा। बाकी आधे सवर्ण छात्रोंको अपना खर्च देना होगा।

मेरी कल्पनाके एक अच्छे हाई स्कूलकी यह बहुत ही स्थूल और संक्षिप्त रूपरेखा है।

लेकिन इस रूपरेखाके सम्बन्धमें हमारे बीच मतभेद है। कुछ कहते हैं: हम अपने यहाँ मैट्रिककी पढाई क्यों रखें? कुछ अन्य लोगोंका कहना है: हम इस खर्चीली शिक्षाके चक्करमें न फँसें, क्योंकि इससे एक गलत आदर्श उपस्थित होगा। उनका कहना है कि हम भले ही ऊँची योग्यतावाले शिक्षक रखें, लेकिन तभी जब वे त्यागपूर्वक केवल अपनी आजीविकाके लिए आवश्यक वेतन लेकर काम करना स्वीकार करें। अर्थात् उनकी रायमें जो शिक्षक त्यागपूर्वक सादा जीवन बिताने को तैयार न हो, उन्हें इन विद्यालयोंमें स्थान नहीं मिलना चाहिए। कुछ तो यहाँतक कहते हैं कि अगर हमें उच्च कोटिके त्यागी और तपस्वी शिक्षक न मिले, तो हमें इन विद्यालयोंको खोलने का विचार ही छोड़ देना चाहिए।

मुझे तो यह सब अव्यावहारिक प्रतीत होता है। इस बारेमें मुझे अपनी ओरसे कोई दलील देने की जरूरत नहीं है। मुझे जो कहना है वह तो स्पष्ट ही है।

क्या आप इस प्रश्नपर अपने विचार व्यक्त कीजिएगा?

सेठ घनश्यामदासकी इस योजनाका मैं पूरे हृदयसे स्वागत करता हूँ। इसके विरोधमें जो दलीलें पेश की गई हैं वे सिद्धान्तपर नहीं बल्कि सावधानी बरतने की वृत्तिपर आधारित हैं। अगर इस योजनाके लिए हरिजन सेवक संघकी स्वल्प निधिका उपयोग किया जानेवाला हो, तब तो मुझे भी विरोध करनेवालोंमें ही शरीक होना चाहिए। लेकिन मैं यह मान लेता हूँ कि इन आदर्श विद्यालयोंके लिए विशेष रूपसे कोई ऐसी निधि एकत्र की जायेगी जिससे इनका सचालन समुचित रीतिसे हो सके। दक्षिण आफ्रिकामें, जहाँ हरएक हिन्दुस्तानीको करीब-करीब अस्पृश्य समझा जाता है, बीस सालतक रहने के बाद मैं जानता हूँ कि जब मनुष्यके साथ अस्वाभाविक व्यवहार किया जाता है, तो वह कितना तुनक-मिजाज बन जाता है। खुद मुझे अपने मनका सन्तुलन सँभालने में काफी समय लगा, और अपनी तुनक-मिजाजीको तो मैं दूर ही न कर सका। आम यूरोपीय समाजके बीच मैं अपने-आपको एक अजीब-सा प्राणी माना करता था। हमारे देशमें हरिजनोंकी दशा उससे भी ज्यादा खराब है, क्योंकि उनमें बहुत ज्यादा अज्ञान और बहुत ज्यादा गरीबी है। इसलिए अगर हम चाहते हैं कि उनमें यह जो दुहरी हीनताकी भावना है वह दूर हो जाये तो हमें काफी तादादमें हरिजन बालकोंको ऐसे वातावरणमें रखना होगा जो अच्छी हैसियतके सवर्ण बालकोंको सुलभ वातावरणसे किसी तरह

घटिया न हो। जो योजना पेश की गई है उसका यह उद्देश्य कदापि नही है कि इन विद्यालयोसे ऐसे मुहर्रिर या कारकून पैदा हो जो अपनेको अपनी योग्यतासे ज्यादा ऊँचा समझे और कही नौकरी न मिलने के कारण स्वभावत: असन्तुष्ट रहें। इस योजनाके अनुसार तैयार होनेवाले विद्यार्थी ज्ञानकी दृष्टिसे दूसरे मैट्रिक पास विद्यार्थियोसे किसी तरह कम नही होगे, बल्कि कुछ हदतक उनसे बढ़कर ही होगे, क्योकि उनके शारीरिक गठनका ज्यादा ध्यान रखा गया होगा और उनके हाथमें किसी खास तरहका हुनर आ चुका होगा। ऐसे विद्यार्थियोंका भविष्य सुरक्षित होगा। उनमे आत्मविश्वास रहेगा। वे अपनी जाति और रिश्तेदारोसे दूर नही जा पड़ेंगे, बल्कि उनसे तो यह आशा रखी जायेगी कि वे अपने साथी हरिजनोकी सेवा करे और जो शिक्षा उन्हे मिली है उसका लाभ उन्हें दें।

इसपर यह आपत्ति की जा सकती है कि मेरे इस कथनमें असंगति है, क्योकि मै तो वर्त्तमान शिक्षा-प्रणालीके खिलाफ लिखता और कहता रहता हूँ। परन्तु यह आपत्ति सतही ही होगी। पहली बात तो यह है कि इस योजनाके अनुसार शिक्षाका माध्यम मातृभाषा रखा गया है और इसमे विद्यार्थियोंके लिए स्वतन्त्र और प्रामाणिक रीतिसे अपनी आजीविका प्राप्त करने योग्य उद्योग-धन्धोंकी शिक्षाकी व्यवस्था भी की गई है। इस तरह वर्त्तमान पद्धतिके बड़ेसे-बड़े दोषोका निवारण इसमें कर दिया गया है। दूसरे, जो आपत्ति उन लड़कोपर लागू हो सकती है जो बेहतर शिक्षा प्राप्त करने की स्थितिमे है वह उन लड़कोंके सम्बन्धमें नही उठाई जा सकती जिनके सामने कोई पसन्द-चुनाव ही नही है और जो यह सोच-सोचकर दुःखी रहते है कि मात्र उनके हरिजन होने से ही उन्हे वह शिक्षा नही मिल सकती जो दूसरे हजारो लड़कोको इसलिए सुलभ है कि वे हरिजन नही है। हरिजन विद्यार्थियोके साथ यह दलील करके मैं उनका अपमान नही करूँगा कि चूँकि हजारो गैर-हरिजन छात्र जो कर रहे है वह गलत है, इसलिए उन्हे तो सेठ घनश्यामदासके पत्रमें उल्लिखित झोपड़ोसे ही सन्तोष कर लेना चाहिए।

मै इस योजनाका हार्दिक स्वागत करता हूँ और चाहता हूँ कि यह सफल हो। जितनी जल्दी इसका श्रीगणेश होगा, उतना ही हरिजनोको और देशको लाभ होगा। ये विद्यालय अस्पृश्यता-रूपी दैत्यके नाशके समर्थ-सक्षम साधन सिद्ध होगे।

सेवाग्राम, १६ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २२-२-१९४२

३९१. कड़ी परीक्षा

बाईस वर्ष पहलेकी बात है। तीस सालका एक नवयुवक मेरे पास आया और बोला

"मैं आपसे कुछ माँगना चाहता हूँ।"

मैंने आश्चर्यके साथ कहा "माँगो। चीज मेरे बसकी होगी, तो मैं दूँगा।"

नवयुवकने कहा "आप मुझे अपने देवदासकी तरह मानिए।"

मैंने कहा "मान लिया। लेकिन इसमें तुमने माँगा क्या? दरअसल तो तुमने दिया और मैंने कमाया।"

वह नवयुवक जमनालाल थे।

वह किस तरह मेरे पुत्र बनकर रहे, सो तो हिन्दुस्तानवालों ने कुछ-कुछ अपनी आँखों देखा है। जहाँतक मैं जानता हूँ, मैं कह सकता हूँ कि ऐसा पुत्र आजतक शायद किसीको नहीं मिला।

यों तो मेरे अनेक पुत्र और पुत्रियाँ हैं, क्योंकि वे सब पुत्रवत् कुछ-न-कुछ काम करते हैं। लेकिन जमनालाल तो अपनी इच्छासे पुत्र बने थे और उन्होंने अपना सर्वस्व दे दिया था। मेरी ऐसी एक भी प्रवृत्ति नहीं थी जिसमें उन्होंने दिलसे पूरी-पूरी सहायता न की हो। और वह सभी कीमती साबित हुई। क्योंकि उनके पास बुद्धिकी तीव्रता और व्यवहारकी चतुरता दोनोंका सुन्दर सुमेल था। धन तो कुबेरके भण्डार-सा था। मेरे सब काम अच्छी तरह चलते हैं या नहीं, मेरा समय कोई नष्ट तो नहीं करता, मेरा स्वास्थ्य अच्छा रहता है या नहीं, मुझे आर्थिक सहायता बराबर मिलती है या नहीं, इसकी फिक्र उनको बराबर रहा करती थी। कार्यकर्त्ताओंको लाना भी उन्हींका काम था। अब ऐसा दूसरा पुत्र मैं कहाँसे लाऊँ? जिस रोज मरे, उसी रोज जानकीदेवीके साथ वे मेरे पास आनेवाले थे। कई बातोंका निर्णय करना था। लेकिन भगवान्‌को कुछ और ही मंजूर रहा। ऐसे पुत्रके उठ जाने से बाप पंगु बनता ही है। यही हाल आज मेरे हैं। जो हाल मगनलालके जाने से हुए थे,[1] वे ही ईश्वरने इस बार फिर मेरे किये हैं। इसमें भी उसकी कोई छिपी कृपा ही है। वह मेरी और भी परीक्षा करना चाहता है। करे। उत्तीर्ण होने की शक्ति भी वही देगा।

सेवाग्राम, १६ फरवरी, १९४२

हरिजन-सेवक, २२-२-१९४२

१. अप्रैल १९२८ में; देखिए खण्ड ३६, "मेरा सबसे अच्छा सहयोगी चला गया", पृ० २७८-८१।

३९२. पुर्जा : कृष्णचन्द्रको

मौनवार, १६ फरवरी, १९४२

चि० कृ० च०,

कंचनबहनको बीमार समझो। और जो फल खाना चाहे सो देना। जैसे दो मुसबी या सत्रा दूधके साथ। इतना ही शामको। दोपहरको पपीता है तो। टमाटर है तो।

बापु

[पुनश्च :]

मैंने खबर दी। लिखने का तो जो तुमारे मनमें अभी भी है सो जब लिखना है तब। तुमने अपने खतमें कल लिखा था सो लिखो। नियमावलीका तो मैं ही करूंगा। देखेंगे क्या नतीजा आता है।[1]

मोसम्बीके साथ नीबूका रस लेने से वह सन्तरे-जैसी ही लगती है। पहले उसका गूदा निकालकर फिर उसमें नीबू मिलाना चाहिए।

पुर्जेकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१५) से

३९३. पुर्जा : कृष्णचन्द्रको

मौनवार, १६ फरवरी, १९४२

मैं तो समझता हूँ उसमें तुमारा दोष नहीं है। किसीका नहीं। वस्तुस्थितिका ही है। सो धीरे-धीरे जायगा। मैं कुछ ध्यान दे सकु तो शीघ्र जा सकता है। दरम्यान सहन करना ही एक मार्ग है।[2]

बापु

पुर्जेकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१६) से

१. इसके बादका अंश गुजरातीमें लिखा हुआ है।

२. यह इस प्रश्नके उत्तरमें लिखा गया था: "समाज-सेवाके कार्यक्रमोंके प्रति लोगोंमें उदासीनताका क्या कारण है?"

३९४. पत्र : सुलताना रजियाको

१६ फरवरी, १९४२

प्यारी बहन,

आपका पत्र बापूजीको मिला। वह कहते हैं कि उनकी ओर खत व किताबत मौलाना अब्दुल हकके साथ नहीं हुई है।

आजकल हम सब खूब दिल लगाकर उर्दू सीख रहे हैं।

आपकी,
अमृतकौर

उर्दूकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८६२) से

३९५. शान्तचित्त रहिए!

हालके दिनोंमें कई मोर्चोंपर अंग्रेजोंकी पराजयसे घबराहट नहीं फैलनी चाहिए।[1] अंग्रेजोंने अबतक जितनी लड़ाइयाँ लड़ी हैं या जिन लड़ाइयोंमें वे शरीक रहे हैं उन सबमें उनकी इस तरहकी हारें हुई हैं। इनमें से कुछ तो भयंकर कही जा सकती हैं। लेकिन अंग्रेजोंके पास उनसे बच निकलने और इन्हींको अपनी सफलताकी सीढ़ी बना लेनेकी एक अजीब निपुणता है। इसीलिए उनके बारेमें यह कहा जाता है कि वे हार-हारकर जीतते हैं। असफलताओंसे वे न तो निराश होते हैं, और न साहस छोड़ते हैं। वे एक खिलाड़ीकी तरह बड़ी शान्तिके साथ उनका मुकाबला करते हैं। फुटबालके खेलकी तरह लड़ाई भी उनका एक राष्ट्रीय खेल है। इस खेलमें हारा हुआ दल जीते हुए दलको ऐसे खुले दिलसे बधाई देता है, मानो दोनोंकी मिली-जुली जीत हुई हो, और फिर शराबकी प्यालियोंके दौरमें वे अपनी हारके दुःखको भूल जाते हैं। इतने सालतक अंग्रेजोंके साथ रहकर भी हम उनसे कुछ न सीख पाये हों, तो कमसे-कम संकटोंके बीच शान्त रहनेकी कला तो हमें उनसे सीख ही लेनी चाहिए।

मगर क्या सचमुच घबराहटकी कोई वजह है भी? अहिंसामें विश्वास रखनेवालोंके लिए तो ऐसी कोई बात है ही नहीं। कारण, भय और आत्मविश्वासका

१. १५ फरवरीको सिंगापुरका पतन हो गया था और रंगूनको खतरा पैदा हो गया था। वाइसरायने भी स्वीकार किया था (ट्रान्सफर ऑफ पॉवर, पृ० २५३) कि लोगोंमें यह भय फैल गया कि शीघ्र ही जापान जल, थल और आकाशसे भारतपर आक्रमण कर सकता है।

अभाव उनके लिए अनजानी बाते है। इसी तरह शस्त्र-सज्जित सिपाहियोके लिए भी वे स्वभाव-विरुद्ध चीजे है। लेकिन अहिंसाके ये गुण अभी शायद पोथीमें ही पडे हुए हैं। व्यवहारमे हमे उनका कही थोडा भी दर्शन नही होता। मगर यह लडाई इस बातका एक जबरदस्त सबूत है कि यद्यपि दोनो दल हिंसामे आकण्ठ डूबे हुए हैं, तो भी उनमे डर और आत्मविश्वासकी कमीका कही कोई पता नही। दोनो तरफके योद्धा, जानको हथेलीपर लिये, जिस बहादुरीसे लड रहे है उसे देखकर मै तो मन-ही-मन आश्चर्य और सराहनासे भर जाता हूँ। यह लडाई हमे बताती है कि मनुष्यमें कितनी जबरदस्त हिम्मत और सहनशक्ति भरी पडी है। इसलिए दोनो तरहसे विचार करने पर हमे सकटके समय भयभीत होने, आत्मविश्वास खो बैठने और घबरा उठने पर शर्म आनी चाहिए। इसलिए हरएक कार्यकर्ताका यह पवित्र कर्तव्य है कि वह भीरुतापूर्ण घबराहटको बिलकुल पास न फटकने दे और भरसक कोशिश करे कि लोगोमे भी वैसी घबराहट न फैले। "कायर तो अपनी मौतसे पहले कई बार मर चुकते है", इस कथनको हम अपने विषयमें सच न होने दें।

आज सच्चा खतरा तो सिर्फ शहरोको है। हो सकता है कि सिंगापुरके पतन और बर्माकी सम्भावित पराजयके कारण यह खतरा बहुत नजदीक आ गया हो। एक सबसे बडी एहतियात तो यह है कि जिन लोगोकी शहरोमें जरूरत नही है और जो खतरेसे भागना चाहते हैं वे चुपचाप बिना खलबली मचाये, गाँवोमे चले जायें। एकसाथ घबराकर भागने की आपा-धापी नही मचानी चाहिए। जिनका अपने व्यवसायकी वजहसे या दूसरे कारणोसे शहरोमे रहना जरूरी है उन्हे चाहिए कि वे सरकारी अधिकारियो द्वारा समय-समयपर जारी की जानेवाली हिदायतोपर अमल करे। और जो लोग किसी भी कारणसे ऐसा नही करना चाहते हैं उन्हे समय रहते शहर छोड देने चाहिए। अगर पहलेसे इतनी सावधानी बरत ली जाये, तो हम आगे आनेवाली कठिनाइयोका बिना किसी घबराहटके सामना कर सकेगे। आज इससे ज्यादा मै नही कह सकता, क्योकि हम सब आपसमें एकदिल नही हैं, और शासको तथा शासितोके बीच एकताका कोई जीवन्त बन्धन नही है। यह सब दुखद तो है, लेकिन सच है। और यह जानकर दुख और भी बढ़ जाता है कि सभी पक्ष इतनी ज्यादा बेबसी महसूस कर रहे है।

कलकत्ता जाते हुए रेलगाडीमे, १७ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-२-१९४२

३९६. अन्धोंको आँख[1]

मोगाके डाक्टर मथुरादासजी के नेत्रयज्ञ मैंने कभी देखे नहीं थे। उनकी कलाके बारेमें काफी सुना था। पिछले महीनेके अन्तमें स्वर्गीय जमनालालजी के निमन्त्रणसे डाक्टर मथुरादास अपने साथियोंको लेकर वर्धा आये थे। दो दिनमें उन्होंने करीब तीन सौ अन्धोंको आँखें दीं।

इस यज्ञका आरम्भ सेवाग्रामके मगनवाड़ी आश्रममें हुआ है। आश्रमके साथ जमनालालजी का सम्बन्ध होने के कारण इस बार उन्होंने वर्धामें यह यज्ञ करवाया। डाक्टर मथुरादासकी कला और परिश्रमको देखकर मेरा सिर झुक गया। वे एक मिनटमें एक आँखका मोतियाबिन्द निकालते हैं। शायद ही कभी असफल होते होंगे। यह सारा काम वे मुफ्त करते हैं और हजारोंको आँख देते हैं।

डाक्टरजी का कहना है कि नाक पकने की बीमारीकी तरह मोतियाबिन्दकी बीमारी भी हिन्दुस्तानमें ही ज्यादा देखने में आती है। इसलिए इस तरहके आपरेशन करनेवालों में, सारी दुनियाके अन्दर, डाक्टरजी का स्थान बहुत ऊँचा है। अब तो डाक्टरजी का अनुसरण दूसरे भी कर रहे हैं। और होना भी यही चाहिए। डाक्टर और वैद्य तो परोपकारके पुतले होने चाहिए। जिस तरह व्यापारी अपने व्यापारके लिए मुस्तैद रहता है, उसी तरह जमनालालजी भी हमेशा पारमार्थिक कामोंको अपनाने में मुस्तैद रहा करते थे। इसीलिए उन्होंने अपने कामोंमें नेत्रयज्ञकी योजनाको भी स्थान दे रखा था। परमार्थ या लोकसेवा ही आजकल उनका पेशा बन गया था। उनकी इच्छा थी कि मध्य प्रान्तमें ऐसे नेत्रयज्ञ बारम्बार हुआ करें।

आशा है, उनकी इस इच्छाकी पूर्ति बराबर होती रहेगी। डाक्टर मथुरादास तो ऐसे यज्ञोंके लिए हमेशा तैयार ही रहते हैं।

कलकत्ता जाते हुए रेलगाड़ीमें, १७ फरवरी, १९४२

हरिजन-सेवक, २२-२-१९४२

१. यह “टिप्पणियाँ” शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३९७. वक्तव्य : समाचार-पत्रोंको[1]

गोंदिया
१७ फरवरी, १९४२

जमनालालजी के असामयिक देहान्तसे उत्पन्न अनेक समस्याओंको निबटाने में मैं इतना अधिक व्यस्त रहा हूँ कि बहुत-सी महत्त्वपूर्ण बातोंकी ओर भी ध्यान नहीं दे पाया। अभी-अभी मुझे हरेकृष्ण मेहताब, जो पक्के अहिंसावादी हैं, और उनके कुछ अन्य सहयोगियोंकी गिरफ्तारीकी जानकारी मिली है। श्री मेहताब जमानतपर जेलसे बाहर आना चाहते थे, लेकिन उनकी जमानतकी अर्जी नामजूर कर दी गई। आशा है, यह मामला उच्च न्यायालयमें पेश किया जायेगा। ऐसे मामलोंमें जमानत नामंजूर कर दी जाये, यह बिलकुल अनर्गल बात है।

मुझे यह भी मालूम हुआ है कि उड़ीसा मन्त्रिमण्डलने इन लोगोंको इसलिए गिरफ्तार करवाया है कि उड़ीसा विधान-मण्डलकी आगामी बैठकमें जो अविश्वास प्रस्ताव पेश किया जानेवाला है वह पेश न हो सके। अगर यह सच है तो यह कार्रवाई नीचतापूर्ण और प्रतिशोधकी भावनासे प्रेरित कही जायेगी। हम आशा तो यही करेंगे कि उड़ीसा विधान-सभाके सदस्य, चाहे उनकी दलगत निष्ठा कुछ भी हो, अविश्वास प्रस्तावका समर्थन करने का साहस और सज्जनता दिखायेंगे।

[अंग्रेजीसे]
हिन्दू, १८-२-१९४२

३९८. पत्र : मुंशी अहमदको[2]

१७ फरवरी, १९४२

जहाँ हममें सहमति नहीं हो सकती वहाँ हमें यह मान लेना चाहिए कि एक-दूसरेके साथ माथापच्ची करना बेकार है।

मुझे सम्मेलनोंमें भाग लेने और संघोंमें शामिल होनेको आमन्त्रित किया गया है। इसे मैं कोई गम्भीर बात नहीं मानता।[3]

१. यह हरिजनमें "नोट्स" (टिप्पणियाँ) शीर्षकके अन्तर्गत "मीन ऐंड विंडिक्टिव" (नीचतापूर्ण और प्रतिशोधकी भावनासे प्रेरित) उपशीर्षकसे प्रकाशित हुआ था। हरिजनकी सूचनाके अनुसार यह लेख गांधीजी ने "कलकत्ता जाते हुए रेलगाड़ीमें, १७-२-१९४२" को लिखा था।

२. मेरठ-निवासी

३. देखिए "हिन्दी + उर्दू = हिन्दुस्तानी", पृ० ३०७-९।

अगर यह मान लें कि जो उर्दू नहीं जानते उनके उर्दू सीखने पर आपको कोई आपत्ति नहीं हो सकती तो मेरी राय भले ही किसी विद्वान्‌की राय न हो, लेकिन वह जिस लायक भी है, दी तो जा ही सकती है। और मेरे प्रयत्नका कुल मतलब यही है कि जो उर्दू नहीं जानते वे उर्दू सीखें और जो उर्दू जानते हैं वे हिन्दी सीखें।

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

३९९. पत्र : मिलड्रेडको

१७ फरवरी, १९४२

प्रिय मिलड्रेड,[1]

हम सबकी ओरसे तुम्हें और स्वजनोंको स्नेह भेजने के लिए बस यह पोस्टकार्ड-भर लिख रहा हूँ। तुम्हारे चन्देका स्वागत है। बड़ी राशिका हिस्सा बन जाने पर एक पैसेका भी अपना मूल्य हो जाता है। हाँ, हम लोग भीषण अग्नि-परीक्षासे गुजर रहे हैं।

तुम दोनोंको स्नेह[।]

बापू

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

४००. पत्र : ऐल्फ्रेड बार्करको

१७ फरवरी, १९४२

प्रिय प्रो० बार्कर,[2]

आपके कृपापत्रके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। ईश्वर हमें शान्ति दे।

आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

१. कनाडा-निवासी एक महिला, जिनसे गांधीजी की मुलाकात लन्दनके किंग्सले हॉल में हुई थी।
२. मेलबोर्न विश्वविद्यालयके, एक बार वे आश्रम आये थे।

४०१. पत्र : सैम हिगिनबॉटमको

१७ फरवरी, १९४२

आपके सहानुभूति-भरे पत्रके लिए धन्यवाद। मैं जानता हूँ कि संघ[1] आपके पूर्ण सहयोगपर भरोसा कर सकता है। सेठ जमनालालके कार्यको आगे जारी रखने के लिए क्या उपाय और तरीके अपनाये जायें, इसपर विचार करने के लिए इस महीनेकी २० तारीखको वर्धामें मैंने एक बैठक बुलाई है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

४०२. पत्र : सारंगधर दासको

१७ फरवरी, १९४२

प्रिय सारंगधर,

आशा है, अखबारोंमें मेहताबके बारेमें मेरा वक्तव्य तुमने देखा होगा। मुकदमे के सम्बन्धमें जो प्रगति हुई हो, मुझे सूचित करना। यह बड़ी भयानक बात है। उनकी अनुपस्थितिमें उनकी प्रवृत्तियोंकी देख-रेख कौन करेगा?

[अंग्रेजीसे]
महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य : नारायण देसाई

४०३. पत्र : डॉ० बैरेटोको

रेलगाड़ीमें
१७ फरवरी, १९४२

प्रिय बैरेटो,

आपने बिलका[2] भुगतान मुझपर छोड़ दिया था, इसलिए मैंने उसमें से ५० रुपये कम कर दिये हैं। उम्मीद है, आपको सेवाग्रामसे १५० रुपयेका चेक मिल गया होगा।

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १३३)से

१. गोसेवा संघ

२. अमतुस्सलामके दाँतोंकी चिकित्साके लिए

४०४. पत्र : ना० र० मलकानीको

१७ फरवरी, १९४२

प्रिय मलकानी,

तुम्हारा ४ तारीखका पत्र कल रात ही पढ सका। कलकत्ताकी गाडीमें बैठा यह पत्र लिख रहा हूँ।

विलम्बकी वजह तो तुम जानते ही हो।

मैं तुम्हे हिन्दी या उर्दूमे लिखना चाहता हूँ। लेकिन मैं तुम्हे महीने-दो महीने के लिए छूट देता हूँ। तुम दोनो लिपियोको अवश्य सीखो और लिखो भी।

तुम अच्छी प्रगति कर रहे हो।

कोई अध्यक्ष तुम्हे मिल जायेगा। शेरको भेजने की कोशिश करूँगा। अगर उसे न भेज पाया तो किसी और को भेजूंगा।

साथका पत्र स्वामी भगवानदासके लिए है।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९४८) से

४०५. पत्र : भगवानदासको

१७ फरवरी, १९४२

स्वामी भगवानदासजी,

भाई मलकानी लिखते है कि आप उनको सेवा-कार्यमे बराबर मदद दे रहे है इसलिए आपको धन्यवाद।

आपका,
मो० क० गांधी

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९४५)से

४०६. पत्र : सुशीला नैयरको

१७ फरवरी, १९४२

मैं च्याग काई-शेकसे मिलने कलकत्ता जा रहा हूँ। मैंने प्यारेलालको साथ नही लिया है। बा काफी बीमार है, इसलिए हम तीनमे से किसी एक को उसके पास रहना ही चाहिए। यही प्यारेलालको भी लगा। बा की शिकायत तो वही पुरानी है, लेकिन अब वह हिम्मत हार रही है। अगर तेरे आने तक वह टिकी रहे तो देखना क्या

किया जा सकता है। मै तो अभी बस हाथ-पाँव मार रहा हूँ। बा के लिए सिर्फ डाक्टर कुछ नही कर सकता। ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो उसपर प्रभाव डाल सके। अब देखें, प्यारेलाल क्या चमत्कार करता है। आज वह मेरे साथ शीरीनको बुलाने गया था। शीरीन वर्धाके अस्पतालमे दाखिल हो गई है। मै अभी उससे मिला नही हूँ। राजकुमारी कल इन्दौरसे सेवाग्राम पहुँचेगी। लीलावती आ गई है। उसे फार्म[1] नही मिला। अब देखें क्या होता है। उसने वापस पढ़ने जाने से इनकार कर दिया।

हम लोग कल ही वापस लौट आयेंगे। २० को जमनालालजी के मित्रोंको आमन्त्रित किया है। लगभग १९० निमन्त्रण भेजे गये हैं।

[गुजरातीसे]

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य: नारायण देसाई

४०७. पत्र : जयप्रकाश नारायणको

१७ फरवरी, १९४२

तुमारा खत मिला था। आखरकी तीन लाइन काटी गई है। प्रभाको मैंने सब उत्तर दिये हैं। फिर भी तुमारे सवालोका उत्तर यहां लिखता हूं।

प्राणायाम पश्चिम पद्धतिसे करने में कोई खतरा नही है — सीधे बैठकर या खडे रहकर खुल्ली हवामें आस्ते-आस्ते श्वास नाकसे चढ़ाये और उतारे। रोज भुखो पेट सुबह शाम करने से फायदा होगा।

तुमारा चक्कर कटिस्तानसे जाना ही चाहिये। बहुतोका गया है।

खाने में करची, सालड, मूली, गाजर, प्याज लेना। लसून भी लेना। दहीके साथ या पक्की भाजीके साथ लेना। एक तोलासे ज्यादा नही। मैं तो पाराफीनके बदले छोटी मात्रामें एरंडीका तेल पसंद करता हूं।

बापुना आशीर्वाद

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य: नारायण देसाई

1. परीक्षामें बैठने का

४०८. पत्र : गोविन्दलाल, शिवलाल और मोतीलालको

१७ फरवरी, १९४२

गोविन्दलाल, शिवलाल, मोतीलाल,

आपका पत्र मिला। आप मानते हैं इतना अब मुझे स्पष्ट नहीं है। आप तो जानते हैं कि को० की अबकी नीति के लिये मैं जिम्मेवार नहीं हूं। न मेरा उसपर कोई असर है।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य . नारायण देसाई

४०९. पत्र : मायादेवी भंडारीको[1]

१७ फरवरी, १९४२

चि० मोहिनी[2] और उसके पतिको[3] मेरे आशीर्वाद। दोनो दीर्घायु हो।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरीसे। सौजन्य . नारायण देसाई

४१०. पत्र : आर० अच्युतनको

१८ फरवरी, १९४२

प्रिय अच्युतन,

तुम्हारा पत्र मिला। तुम सब कात रहे हो और इस तरह समय का सदुपयोग कर रहे हो, यह जानकर प्रसन्नता हुई। मैं तुम्हारी जरूरतें पूरी करने के लिए डॉ० पट्टाभिसे[4] कह रहा हूँ।

तुम्हारा,
बापू
(मो० क० गांधी)

श्री आर० अच्युतन
विद्यार्थी नजरबन्द
सेन्ट्रल जेल
राजमंड्री, आन्ध्र

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०८५२) से

१. कर्नल भंडारीकी पत्नी
२. मायादेवीकी पुत्री
३. कैप्टेन भगत
४. पट्टाभि सीतारामय्या

४११. बातचीत: च्यांग काई-शेक और उनकी पत्नीसे[1]

कलकत्ता
१८ फरवरी, १९४२[2]

"आपसे राजभवन आने के लिए कहने की बात तो मैं सोच भी नहीं सकता," जनरलिसिमोने कहा। "आपके भोजन और विश्राम कर चुकने के बाद हम फिर आयेंगे।" उत्तरमें गांधीजी ने कहा:

लेकिन मैं यहाँ आपको पूरा समय दे सकूँ, इस विचारसे मैंने भोजन रेलगाड़ीमें ही कर लिया था, और मैं तो कहूँगा कि यदि असुविधा न हो तो आप यहीं ठहरें, हमारे साथ भारतीय भोजन करें और तब हम मेरे रवाना होने के समयतक बातचीत करते रह सकते हैं। इस तरह हम [आपके] बैरकपुर जाने और फिर वहाँसे आने का समय बचा सकेंगे।

इसपर जनरलिसिमो और उनकी पत्नी वहीं रुक गये . . . और गांधीजी के स्टेशनके लिए रवाना होने तक उनके साथ बातचीत करते रहे। . . .

गांधीजी ने कुछ समय तो जनरलिसिमो और उनकी पत्नीको सत्याग्रह और असहयोगका उद्‌भव और विकास समझाने और उन्हें अपने "लड़ाईके हथियार" का प्रयोग बताने में ही ले लिया। इस हथियारके बारेमें उन्होंने कहा, "यह न तो कोई आवाज करता है, न किसीको मारता है, बल्कि अगर कुछ करता है तो यही कि जीवन-दान देता है।" श्रीमती च्यांग काई-शेकने धनुष-तकलीका प्रयोग देखकर कहा: "आपको यह तो मुझे सिखाना पड़ेगा।"

सेवाग्राम आइए, तब सिखाऊँगा। जनरलिसिमो अपने राजदूतकी तरह आपको यहाँ छोड़ जायें और मैं आपको अपनी बेटी बना लूँगा।

लगभग आधे घंटेतक तो जनरलिसिमोके साथ आया सरकारी दुभाषिया उनकी बातोंका अनुवाद करके समझाता रहा। उसके बाद गांधीजी ने कहा:

हमारी कोई औपचारिक वार्त्ता तो हो नहीं रही है, फिर मैडम ही दुभाषिये का काम क्यों न करें?

इसपर वे बोल पड़ीं: "वाह, महात्माजी! यह तो आपने खूब कहा। अब समझमें आया कि आपके पास आनेवाला हर आदमी आपके बसमें क्यों हो जाता है।

१. महादेव देसाईके लेख "ए हिस्टॉरिक मीटिंग" (एक ऐतिहासिक मुलाकात) से उद्धृत। च्यांग काई-शेक और उनकी पत्नी गांधीजी के बिड़ला पार्क पहुँचने के एक घंटेके भीतर-भीतर उनसे मिलने आ पहुँचे।

२. अमृतबाजार पत्रिकासे

मेरे पति तो मुझसे बहुत ज्यादा काम लेते हैं। जब भी इन्हे कोई बहुत गम्भीर बात समझानी होती है, इन्हे कोई सूक्ष्म विचार व्यक्त करना होता है तो ये दुभाषियेका काम मुझसे ही लेते हैं। लेकिन इधर एक सालसे मैं कुछ विश्राम ले रही हूँ और मेरा यह काम सरकारी दुभाषिया ही करता है।" इसपर गांधीजी ने हँसते हुए कहा:

इसका मतलब तो यह हुआ कि आप गैर-वफादार पत्नी है।

"सो कैसे? इन्होंने किसी दुभाषियेसे तो शादी नहीं की। शादी तो स्त्रीसे ही की है न।"—यह था श्रीमती च्यांग काई-शेकका उत्तर।[1]

जनरलिसिमोका विश्वास था कि असहयोग भारतके लिए तो अच्छा है, लेकिन उन्हे यह निश्चय नहीं था कि वह अन्य देशोमें भी उतना ही कारगर होगा। हाँ, अन्य देश भी यदि परिस्थिति और परिवेशकी दृष्टिसे भारतके समान हो तो बात दूसरी है। चीनमें जापानने जो-कुछ किया है और कर रहा है, उसके प्रति उनके मनमें स्वभावतः गहरा क्षोभ था और उन्हे ऐसी आशका थी कि अगर उसने भारतपर भी अपना कब्जा जमा लिया तो भारतको भी वही सब भोगना पड़ेगा। गाधीजी हमारे सम्पूर्ण अहिंसा-कार्यक्रमकी चर्चा कर पाते, यह तो सम्भव नहीं था, लेकिन उन्होंने जनरलिसिमोके मनमें इस विषयमें कोई सन्देह नहीं रहने दिया कि अवसर आने पर जापान या जर्मनीको भारतमें प्रचण्ड असहयोग या सत्याग्रहका सामना करना पड़ेगा। जनरलिसिमोने कहा: "मैं यह मानता हूँ कि आपका सत्याग्रह कोई निष्क्रिय वस्तु नहीं है, बल्कि यह अत्यन्त सक्रिय है। लेकिन इन शत्रुओंपर शायद इसका कोई असर न हो, और यह भी हो सकता है कि ये अहिंसाका प्रचार भी असम्भव बना दें।"

मैं तो केवल इतना ही कह सकता हूँ कि ज्यो-ज्यो प्रसग आते जाते है, ईश्वर मुझे बताता जाता है कि मैं उनका सामना किस तरह करूँ। इसलिए यद्यपि मैं यह नही कह सकता कि हमारे देशपर आक्रमण होने पर मैं ठीक-ठीक क्या करूँगा, लेकिन इतना जानता हूँ कि ईश्वर मुझे ठीक राह सुझायेगा। मगर मैं जानता हूँ कि इस बातचीतमे इस सम्बन्धमें आपका समाधान नही हो सकता। मैं तो आपको सेवाग्राम आने को निमन्त्रित करना चाहूँगा। वहाँ हम कई दिनोतक इस विषयपर निश्चिन्तताके साथ चर्चा कर सकते है। अलबत्ता मैं जानता हूँ कि यह ऐसा निवेदन है जो स्वीकार नही किया जा सकता, क्योंकि आप उतने दिन यहाँ रुक नही सकते।

१. पहली बातचीतके अन्तमें श्रीमती च्याग काई-शेकने कहा: "मैं तो इतने पुरुषोंसे मिल चुकी हूँ कि किसीके बसमें हो ही नहीं सकती। लेकिन महात्माजी ने तो मुझपर जादू फेर दिया है।"

अगले अनुच्छेदसे पूर्व महादेव देसाई लिखते हैं: "शेष बातचीत कैसी हुई होगी, इसे मैं पाठकोंके अनुमानपर छोड़ता हूँ।"

इसपर मैडम च्यांग काई-शेकने कहा: "लेकिन कौन जाने, हम जब यहाँ वापस आने की सोच सकते हैं उससे पहले ही न आ जायें। और फिर कलकत्ता चुनकिंगसे है ही कितनी दूर — बारह घंटेका ही तो सफर है।"

अपने इन विशिष्ट अतिथियोंको भाव-भीनी विदाई देते हुए गांधीजी ने कहा:

तब तो आप हर महीने हमारे यहाँ आ सकते हैं।

बिड़ला पार्कसे विदा लेते हुए मैडम च्यांग काई-शेक कहने लगीं: "लेकिन मेरा चरखा? मेरा चरखा कहाँ है?"[1] गांधीजी ने उत्तर दिया:

मिल जायेगा आपको आपका चरखा। स्टेशनसे मैं भेज दूँगा।[2]

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-३-१९४२

४१२. एक वाजिब शिकायत

एक बंगाली सज्जन लिखते हैं:[3]

> बड़े दुःखके साथ आपको यह सूचित कर रहा हूँ कि डॉ० सुरेश बनर्जीको नारिया पुलिस थानेकी हदमें नजरबन्द कर लिया गया है।... पास-पड़ोसमें कहीं कोई योग्य डॉ० नहीं है। जहाजका निकटतम स्टेशन इस गाँवसे २० मील दूर पड़ता है। वहाँ नदी पार करने के लिए सिर्फ देशी नाव ही मिलती है।... इस हुक्ममें द्वेषकी भी बू आती है।... बजबजमें पटसनकी मिलोंके मजदूरोंने हड़ताल कर दी थी। मजदूर महँगाई भत्तेकी माँग कर रहे थे।... अगर सरकारकी रायमें डॉ० बनर्जीका मजदूरोंकी बस्तीमें रहना अवांछनीय था, तो वह उन्हें मजदूर-बस्तीसे बाहर जाने का हुक्म दे सकती थी।
>
> एक दूसरा किस्सा भी आपके जानने लायक है। मिदनापुर जिलेकी कोंटाई तहसीलमें काकरा (डाकघर गोपीनाथपुर) नामक एक गाँव है। इस गाँवके श्री पीतवास दासको गाँवमें ही नजरबन्द कर दिया गया है। वे नौ महीनोंसे सत्याग्रह कर रहे थे और गाँव-गाँव घूमकर युद्ध-विरोधी नारे लगाते थे, मगर उन्हें गिरफ्तार नहीं किया गया। बारडोली प्रस्तावके बाद उन्होंने

१. मैडम च्यांग काई-शेकको जो धनुष-तकली देने की बात कही गई थी वह गलतीसे गांधीजी के सामानके साथ स्टेशन पहुँचा दी गई थी।

२. जब अखबारवालों ने गांधीजी से बातचीतके बारेमें जानना चाहा तो उन्होंने कहा: "जवाहरलालसे मालूम कीजिए। मैं कुछ नहीं बताऊँगा।"

३. यहाँ पत्रके केवल कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

३० दिसम्बरको सत्याग्रह वन्द कर दिया। उसके बाद २३ जनवरीको उनके पास नजरबन्दीका हुक्म पहुँचाया गया, जिसके अनुसार उन्हे अपने गाँवकी हद न छोड़ने और कई कांग्रेसजनोंके साथ पत्र-व्यवहार या बातचीत न करने की हिदायत दी गई है। . . . जिस व्यक्ति को युद्ध-विरोधी नारे लगाने पर भी महीनो तक नहीं पकड़ा गया, उसीको सत्याग्रह वन्द करने के बाद तुरन्त भारत रक्षा-कानूनके मातहत किसलिए नजरवन्द कर लिया गया, यह बात मेरी समझ में नहीं आती। मैं पीतवास बाबूको बहुत अच्छी तरह जानता हूँ। वे सम्पूर्ण अहिंसावादी हैं। जिस बंगाल सरकारके बारेमें माना जाता है कि उसे अपने अस्तित्वके लिए विधानमण्डलके कांग्रेसी सदस्योंके मतपर निर्भर रहना है, उसकी इस कार्रवाईको मैं तो समझ नहीं सका हूँ।

डॉ० सुरेश बनर्जीके खिलाफ जारी किया गया हुक्म निश्चय ही क्रूरतापूर्ण है। 'द्वेषपूर्ण' शब्दका उपयोग यहाँ कुछ कड़ा कहा जा सकता है। मैं इसे क्रूरतापूर्ण कहना इसलिए पसन्द करता हूँ कि सुरेश बाबू कोई अनजाने आदमी नही हैं। वे स्वय बगालके विधानमण्डलके सदस्य हैं। हर कोई जानता है कि वे बराबर बीमार रहते हैं। वे तो हड्डीके क्षयसे करीब-करीब मर ही चुके थे। लेकिन, सिर्फ जीने के खयाल से नही, बल्कि देश-सेवाके लिए जीने के अपने अटल सकल्पके कारण वे उस घातक बीमारीसे उठ खड़े हुए। वे एक अर्से तक प्लास्टर ऑफ पेरिसका जाकेट पहने पड़े रहे, डाक्टरोंकी हिदायतोंका सख्तीसे पालन किया, और किसी तरह काम चलाने लायक तन्दुरुस्ती लेकर उठे। बगाल सरकार यह सब जानती है। सरकारको पता है कि उन्हें बराबर डाक्टरी सलाह की जरूरत रहा करती है। उसे मालूम है कि उन्हे सावधानी-भरी शुश्रूषा और चिकित्साकी सुविधाओंकी जरूरत रहती है। इसलिए डॉ० बनर्जीको नजरबन्द रखना क्रूरतापूर्ण है। मैं नही जानता कि डॉक्टरको इस तरह नजरबन्द रखना बगाल सरकारके लिए कहाँतक न्यायोचित है। सरकारका पक्ष क्या है, सो भी मुझे मालूम नहीं। लेकिन उनकी नजरबन्दीकी कोई वजह नही हो सकती, और सो भी ऐसी जगहमें जो उनका अपना गाँव है फिर भी जहाँ वे अपनी तन्दुरुस्ती ठीक नही रख सकते हैं और जहाँ उन्हें आसानीसे न तो डाक्टरकी मदद मिल सकती है और न दूसरी सुविधाएँ ही सुलभ हो सकती हैं। मैं आशा रखता हूँ कि बगाल सरकार इस स्पष्ट शिकायतको दूर करेगी।

पत्र-लेखकने जिस दूसरे मामलेकी चर्चा की है वह अलग ढगका है। पीतवास बाबूकी नजरबन्दीके लिए दरअसल कोई कारण समझमें नही आता। बगाल सरकार लोकमतके प्रति जिम्मेदार है। यह तो हो नही सकता कि सरकारके बिना जाने ही गवर्नरने हुक्म जारी कर दिया हो। सरकार भारत रक्षा-कानूनका अमल मनमाने ढगसे नही कर सकती। उसे अपनी हर कार्रवाईको जनताके सामने उचित साबित करना चाहिए। अगर विधानसभाको अपने अस्तित्वका औचित्य सिद्ध करना है, तो उसे अपने प्रति उत्तरदायी कार्यकारिणी के कामोमे और उनके कारणोसे परिचित रहना चाहिए। पत्र-लेखकने बगाल विधानमण्डलके कांग्रेसी सदस्योको जो उलाहना दिया है वह कुछ मानी रखता है। सुरेश बाबू और पीतवास बाबूके खिलाफ

जैसी कार्रवाई की गई है वैसी कार्रवाइयोंका औचित्य उनके सामने सिद्ध किया जाये, ऐसी माँग सरकारसे करना उनका खास फर्ज है।

वर्धा जाते हुए रेलगाड़ीमें, १९ फरवरी, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १-३-१९४२

४१३. बलात्कारके समय क्या करें?[1]

सारे संसारके लिए यह कसौटीका समय है। आज जो युद्ध चल रहा है उससे कोई बच नहीं सकता। 'रामायण' और 'महाभारत' कवि-कल्पनाओंसे भरे हुए हैं। किन्तु इनके रचयिता कोरे कवि नहीं थे, अथवा वे सच्चे कवि अर्थात् ऋषि थे। वे शब्दोंके चित्रकार नहीं बल्कि मानव-स्वभावके चित्रकार थे। इसलिए उन्होंने जो लिखा है वह सब उस कालमें घटा था या नहीं, यह जानने की हमें कोई आवश्यकता नहीं रह जाती, क्योंकि वह सब आज तो हो ही रहा है। आज रावणोंका युद्ध चल रहा है। वे अतुलित बलका परिचय दे रहे हैं। हवामें उड़कर अपने अस्त्र फेंक रहे हैं। अपना और अपने तथाकथित शत्रुओंका खून पानीकी तरह बहा रहे हैं। यह बात तो उनकी कल्पनामें भी नहीं आती कि बहादुरीका कोई काम वे नहीं कर सकते।

मनुष्य इस तरह नहीं लड़ते। देवता तो इस तरह लड़ ही नहीं सकते. पशु ही लड़ सकते हैं। इसलिए हम देखते हैं कि पशु-मानवने लज्जा त्याग दी है। शरीरसे हृष्टपुष्ट ऐसे उन्मत्त फौजी या सिपाही दुकानें लूटते हैं और स्त्रियोंकी लाज लूटने में भी लजाते नहीं। ऐसे मौकेपर प्रशासन दीन बन जाता है। उसके द्वारा खड़ी की गई फौज अपनी पाशविक आवश्यकताओंको पूरा करेगी ही और प्रशासन इस तरफसे अपनी आँख मूँद लेगा। जहाँ सभी फौजी या सिपाही हों वहाँ उनकी यह लत सारे राष्ट्रकी लत मानी जाती है। इसलिए फौजियोंकी यह स्वच्छन्दता लज्जाकी बात नहीं मानी जाती। वह लगभग सभ्यताका रूप ले लेती है।

किन्तु हिन्दुस्तान इस लतको सहन कर सके अथवा इसे सभ्यता मानने की स्थितितक पहुँच सके, इसमें कई युग लग जायेंगे। इसलिए एक बहनने निम्न प्रश्न मुझसे पूछे हैं:

> १. यदि कोई राक्षस-रूपी मनुष्य राह चलती किसी बहनपर हमला करे और उससे बलात्कार करने में सफल हो जाये तो उस बहनका शील भंग हुआ माना जायेगा या नहीं?
>
> २. क्या उक्त बहन तिरस्कारकी पात्र है? क्या उसका बहिष्कार किया जा सकता है?
>
> ३. ऐसी स्थितिमें पड़ी हुई बहन और जनताको क्या करना चाहिए?

१. यद्यपि यह अनुवाद मूल गुजरातीसे, जिसकी लेखन-तिथि २३-२-१९४२ दी गई है, प्रस्तुत किया जा रहा है, तथापि १-३-१९४२ के ही हरिजनमें प्रकाशित अंग्रेजी अनुवादकी लेखन-तिथि १९-२-१९४२ को देखते हुए इस लेखको इसी तिथिक्रममें रखा गया है।

मैं मानता हूँ कि वस्तुपरक दृष्टिसे देखें तो इसे शील-भग तो कहना ही चाहिए, किन्तु जिसपर बलात्कार हुआ हो वह स्त्री किसी भी प्रकारसे तिरस्कार या बहिष्कार की पात्र नहीं है। वह तो दयाकी पात्र है। ऐसी स्त्री तो घायल हुई है, इसलिए हम जिस तरह घायलों की सेवा करते हैं उसी तरह हमें उसकी सेवा करनी चाहिए।

वास्तविक शील-भग तो उस स्त्रीका होता है जो उसके लिए सहमत हो जाती है। लेकिन जो उसका विरोध करने के बावजूद घायल हो जाती है उसके सम्बन्धमें शील-भगकी अपेक्षा यह कहना अधिक उचित है कि उसपर बलात्कार हुआ। "शील-भग", शब्द बदनामीका सूचक है और इसलिए वह बलात्कारका पर्याय नहीं माना जा सकता है। जिसका शील "बलात्कारपूर्वक" भग किया गया है, यदि उसे किसी भी प्रकार निन्दनीय न माना जाये तो ऐसी घटनाओंको छिपाने का जो रिवाज हो गया है वह मिट जायेगा। इस रिवाजके खत्म होते ही ऐसी घटनाओं के विरुद्ध लोग खुलकर चर्चा कर सकेंगे।

यदि समाचार-पत्रोंमें ऐसी घटनाओंके विरुद्ध ठीक-ठीक आवाज उठाई जाये तो फौजी जो छेड़छाड़ करते हैं वह बहुत हदतक रुक सकती है। फौजियोंके अधिकारी उन्हें बहुत हदतक रोक सकेंगे।

शहरोंमें रहनेवाली हर स्त्रीके सामने आज यह खतरा तो है ही, और इस कारण पुरुषोंको इस सम्बन्धमें चिन्तित रहना पड़ता है। इसलिए मेरी सलाह यह है कि डरकर नहीं, बल्कि सावधानीके विचारसे स्त्रियोंको गाँवोंमें जाकर बस जाना चाहिए और वहाँ गाँवोंकी अनेक प्रकारसे सेवा करनी चाहिए। गाँवोंमें खतरेकी कमसे-कम सम्भावना है। इतना-भर याद रखना होगा कि गाँवोंमें धनी बहनोंको सादगी और गरीबीसे रहना होगा। यदि वे वहाँ गहने और कीमती पोशाक पहनकर अपने धनका प्रदर्शन करेंगी तो वे एक मुसीबतसे बचकर दूसरीमें जा फँसेंगी। और हो सकता है कि उन्हें गाँवोंमें एक के बदले दो-दो मुसीबतोंका सामना करना पड़े। कर्त्तव्यवश शहरोंमें रहने को विवश स्त्रियोंपर यह सलाह लागू नहीं होती।[1]

किन्तु जानने की मुख्य चीज तो यह है कि बहनें किस तरह निर्भय बन सकती हैं। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि जो भी स्त्री निडर है, जिसका यह दृढ़ विश्वास है कि उसकी पवित्रता ही उसके सतीत्वकी सर्वोत्तम ढाल है, उसका शील सर्वथा सुरक्षित है। ऐसी स्त्रीके तेजसे ही नर-पशु चौंधियाकर लज्जित हो जायेगा। ऐसी स्त्रियोंके उदाहरण आज भी मिलते हैं जिन्होंने इस जमानेमें भी इस प्रकार आत्म-रक्षा की है। मेरी जानी हुई दो स्त्रियोंकी तसवीर तो ये पंक्तियाँ लिखते हुए भी मेरी आँखोंके सामने उभर आती है। इस लेखको पढ़नेवाली बहनोंको मेरी सलाह है कि वे भयसे मुक्त हो जायें और निर्भय बनी रहें। स्त्रियोंमें पाई जानेवाली घबराहट वे छोड़ दें। ऐसी स्त्रियोंको परीक्षामें उत्तीर्ण होने के लिए कटु अनुभवोंकी इच्छा रखने की तनिक भी जरूरत नहीं है। ऐसे अनुभव हजारों या लाखोंको नहीं हुआ

१. यह वाक्य अंग्रेजीसे लिया गया है।

करते। यह कोई नियम नही है कि प्रत्येक फौजी पशु बन जाता है। निर्लज्जता की इस हदतक जानेवाले फौजी भी कम ही होते हैं। भयग्रस्त स्त्रीको डराने के लिए किसी एक घटनाकी जानकारी ही पर्याप्त होती है। सौमे से वीस ही साँप जहरीले होते हैं और वीसमें भी डँसनेवाले तो इने-गिने ही होते हैं। जबतक दाब न पड़े तबतक साँप हमला नही करता। किन्तु इस बातका ज्ञान डरपोकके किसी काम नहीं आता। साँपको देखते ही वह थर-थर काँपने लगता है। इसलिए जरूरत इस बातकी है कि हर स्त्री निर्भय बनने की शिक्षा प्राप्त करे। यह शिक्षा माता-पिता और पतियो को ही देनी है। यह शिक्षा प्राप्त करने का सरलतम उपाय तो ईश्वरके प्रति आस्था उत्पन्न करना है। अदृश्य होते हुए भी वह प्रत्येककी रक्षा करनेवाला विश्वस्त साथी है। जिसके मनमे इस तरहकी भावना उत्पन्न हो चुकी है वह सब प्रकारके भयोसे मुक्त है।

निडरता या आस्थाकी यह शिक्षा एक दिनमे प्राप्त नही की जा सकती। अत-एव यह समझ लेने की भी जरूरत है कि इस बीच क्या उपाय किया जा सकता है। जिस स्त्रीपर इस तरहका हमला हो वह हमलेके समय हिंसा-अहिंसाका विचार न करे। उस समय आत्मरक्षा ही उसका परम धर्म है। उस समय उसे जो साधन सूझे उसका उपयोग करके वह अपनी पवित्रता और अपने शरीरकी रक्षा करे। ईश्वरने उसे जो नाखून दिये है, दाँत दिये हैं और जो बल दिया है वह उनका उपयोग करेगी और उनका उपयोग करते-करते वह अपनी जान दे देगी। मृत्युके भयसे मुक्त प्रत्येक स्त्री या पुरुष स्वय मृत्युको गले लगाकर अपनी और स्वजन-मात्रकी रक्षा कर सकेंगे। सच बात तो यह है कि मरना हमें रुचता नही, इसलिए आखिर हम घुटने टेक देते है। मरने के बदले कोई सलामी दागना चाहेगा, कोई पैसा देना चाहेगा, कोई मुँहमें तिनका दबायेगा और कोई कीडेकी तरह पेटके बल रेंगना चाहेगा, इसी प्रकार कोई स्त्री लाचारीमे जूझना छोडकर पुरुषकी पशुताके वश हो जायेगी। ये शब्द मैंने तिरस्कारकी भावनासे नही लिखे। मैंने केवल वस्तुस्थितिका चित्रण किया है। सलामीसे लेकर शील-भगतक की क्रियाएँ एक ही वस्तुकी द्योतक हैं। जीवित रहने का लोभ मनुष्यसे क्या-क्या नही कराता? अतएव जो जीवनका लोभ छोड़कर जीता है वही जीवित रहता है। 'तेन त्यक्तेन भुजीथा.' के अर्थको समझकर प्रत्येक पाठक मन-ही-मन उसका पारायण करे। मगर यह वेद-वाक्य गलेसे नीचे उतरना चाहिए। अगर गलेमे अटका रहा तो डाटकी तरह दम घोटता रहेगा और यदि हृदयतक पहुँच गया तो तार देगा। जीने का लोभ छोडकर जीवनका उपभोग करना हमारा सहज धर्म होना चाहिए।

यह तो स्त्रीका धर्म हुआ। किन्तु दर्शक पुरुषको क्या करना चाहिए? सच पूछा जाये तो इस प्रश्नका उत्तर ऊपर दिया जा चुका है। वह दर्शक मिटकर रक्षक बन जायेगा। वह खड़ा-खडा देखेगा नहीं। वह पुलिसको ढूंढ़ने नही जायेगा। वह रेलके डब्बेमें लगी खतरेकी जजीर खींचकर अपनेको कृतार्थ नही मानेगा। यदि वह अहिंसासे परिचित होगा तो उसका प्रयोग करते हुए मर मिटेगा और मुसीबतमें

फँसी हुई बहनको उबार लेगा, अहिंसामें नहीं तो हिंसाके द्वारा उस बहनको बचा लेगा। अहिंसा या हिंसाकी अन्तिम परिणति तो मृत्यु ही है। वयके कारण मुझ जैसा अशक्त और दन्तविहीन हो गया बूढ़ा भी यदि ऐसे समय यह कहकर अलग हो जाये कि 'इसमें मैं कमजोर आदमी क्या कर सकता हूँ, मैं तो अहिंसाका पुजारी हूँ', तो उसका माहात्म्य उसी क्षण नष्ट हो जायेगा और वह निन्दनीय बन जायेगा। क्योंकि यदि वह ऐसे समय मर मिटने को तैयार हो जाये और दोनोंके बीच जा खड़ा हो तो उस बहनकी तो रक्षा हो ही जायेगी। वह उसके शील-भंगका मूक दर्शक नहीं होगा।

यह तो हुआ प्रेक्षकके विषयमें। किन्तु यदि देशके वातावरणमें ऐसी मान्यता दाखिल हो जाये कि हिन्दुस्तानका कोई भी पुरुष किसी स्त्रीका शील-भंग किये जाने की बात कदापि सहन नहीं करेगा, तो पशु-सैनिक भी किसी हिन्दुस्तानी स्त्रीको हाथ लगाना भूल जायेंगे।

किन्तु हमें यह लज्जापूर्वक स्वीकार करना पड़ता है कि यहाँके वातावरणमें यह तेजस्विता नहीं है। यदि हमारी लज्जाको धोनेवाला वर्ग उठ खड़ा हो तो बड़ा काम होगा।

जिनका सरकारपर प्रभाव है यदि वे अपने उस प्रभावका उपयोग करें तो कुछ-न-कुछ तो सरकारसे भी कराया ही जा सकता है। किन्तु ऐसे समय यह याद रखने की आवश्यकता है कि 'परायी आस सदा निराश'। ऐसे समय अपने बल और परमात्म-बलके अतिरिक्त किसीके पास और कुछ नहीं होता। जो लोग अपने बलका उपयोग दूसरोंको वशमें करने के लिए करते हैं, उन्हें ईश्वरीय बल नहीं मिलता। इस प्रकार उनके उस बलका क्षय होता है। जो अपने बलको परमात्म-बलमें विलीन कर देता है वह अजेय बन जाता है।

सेवाग्राम, २३ फरवरी, १९४२

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, १-३-१९४२

४१४. प्रश्नोत्तर

हिन्दुस्तानी

प्र० : कृपाकर कहिए, मैं क्या करूँ? मैं वर्धावाले प्रस्तावको माननेवालोंमें हूँ।

उ० यानी अगर कांग्रेसकी माँग मंजूर कर ली जाये, तो आप युद्ध-प्रयत्नमें पूरी तरह हाथ बँटायेंगे। सो कुछ भी क्यों न हो, मगर रचनात्मक कार्यक्रमके[1] बारेमें वर्धामें जो प्रस्ताव पास हुआ है, वह आपको चौदह प्रकारके रचनात्मक कार्य-

१. बारडोलीमें कार्यसमितिने जो निर्देश जारी किये जाने की सिफारिश की थी और जिन्हें वर्धा में हुई अ० भा० कां० कमेटी की बैठकमें पास कर दिया गया था उसके लिए देखिए परिशिष्ट ३।

क्रममे पूरी तरह हाथ बँटाने के लिए निमन्त्रित करता है। इसलिए, और वैसे स्वतन्त्र रूपसे भी, आपको हिन्दुस्तानी सीख लेनी चाहिए, ताकि आप देशकी आम जनताके सीधे सम्पर्कमे आ सके। और जैसा कि मै कह चुका हूँ, जबतक हिन्दी और उर्दू मिलकर एकरूप नही हो जाती है, तबतक हिन्दुस्तानीका मतलब उर्दू-हिन्दी रहेगा। इस हिन्दुस्तानीको मुहब्बत और मेहनतके साथ सीख लेने में आपको संकोच या आनाकानी नही करनी चाहिए। आपका दृढ निश्चय सब मुश्किलोको आसान बना देगा। आप थोडी-बहुत हिन्दी तो जानते ही है। आपको उसमे अच्छी तरक्की कर लेनी चाहिए। फारसी लिपि सीखना बहुत आसान है। उसके ३७ अक्षरोके लिए बहुत थोडी मूल सञ्ज्ञाएँ है। हाँ, अक्षरोको जोडकर लिखने में कुछ कठिनाई जरूर होती है। लेकिन अगर रोज एक घण्टा खर्च करे तो आप ज्यादासे-ज्यादा एक हफ्तेमे पूरी वर्णमाला और बारह खडी सीख लेगे। फिर तो अभ्यासके लिए रोजका आध घटा देना काफी होगा। इस तरह छ महीनोमे आप उर्दूका काम-चलाऊ ज्ञान प्राप्त कर सकेगे। दो भिन्न लिपियोकी और एक ही भाषाकी दो धाराओकी परस्पर तुलना करना बहुत दिलचस्प हो सकता है। लेकिन यह तभी हो सकता है, जब आपको देशसे और देशकी जनतासे प्रेम हो। अग्रेजी-जैसी कठिन भाषापर अधिकार करने की कोशिशमें हमारे मन थक न गये हो, तो प्रान्तीय भाषाओको सीखने मे हमे ज्यादा मेहनत न उठानी पडे बल्कि उन्हें सीखना हमारे मनोरंजनका एक विषय बन जाये।

लेकिन आज तो हिन्दुस्तानीको उसके दोनो रूपोमें सीखना रचनात्मक कार्य-क्रमकी पहली सीढी है। अगर आप देशके गरीबसे-गरीब लोगोके साथ अपना सम्बन्ध बढाना चाहते है, उनमे एकरस होना चाहते है, तो आपको नियमित रूपसे कातना भी चाहिए; और इसके सिवा रचनात्मक कार्यक्रमके अन्य अगोमे भी दिलचस्पी लेनी चाहिए। सच्चे अर्थमें पूर्ण स्वराज्यकी स्थापना तभी हो सकेगी, जब हम इस कार्यक्रम पर पूरी तरह अमल करके दिखायेंगे।

प्रामाणिकताकी कसौटी

प्र० : बहुमतवाले मुस्लिम प्रान्तोंमें बसे हुए कांग्रेसजनोंको आपने जो सलाह दी है, वह बिलकुल सच है।[1] लेकिन देखना यह है कि कांग्रेसी किस मुस्तैदीके साथ आपकी इस सलाहपर अमल करते हैं। इसीमें आपकी प्रामाणिकताकी कसौटी है।

उ० : मै दृढतापूर्वक इस कसौटीसे इनकार करता हूँ। मैने काग्रेसी लोकमतको तैयार करने के इरादेसे इस विषयपर लिखना शुरू किया है। अगर मै कार्य-कारिणी समितिके सदस्योको अपनी बात समझा सका होता, तो अपने उपायके बारेमे मुझे किसीको कोई सलाह देने की जरूरत न रह जाती। बहुत पहले ही उस पर अमल हो चुका होता। लेकिन मुझे इसमे कामयाबी नही मिली। मैने जो उपाय सुझाया है, उसमे कई महत्त्वकी बातें गर्भित है। जबतक उन्हे स्वीकार न किया जाये, उपायका कोई अर्थ नही रह जाता। एक गर्भित बात यह है कि कांग्रेस-जनोको अपने कार्यकी यथार्थतामें विश्वास होना चाहिए।

१. देखिए पृ० २६२-६३।

मैं मानता हूँ कि यह कोई साधारण उपाय नहीं है। आम तौरपर लोगोंका रुख यह रहता है कि अधिकार हथियाने का जो भी मौका सामने आ जाये, उसे हाथसे जाने न दिया जाये। जब मैं कहता हूँ कि ये मौके मौके नहीं, फन्दे हैं, तो लोग मेरी इस बातको मुश्किलसे समझ पाते हैं। मेरे खयालमें तो ये मौके फन्दे साबित हो चुके हैं। लेकिन अभी आम तौरपर सभी कांग्रेसजनोंको यह बात उतनी साफ-साफ समझमें नहीं आई है। जो चीज आज धुंधली नजर आती है, उसे मैं इन पृष्ठोंमें स्पष्ट करने की आशा रखता हूँ। जिन्हें मेरी प्रामाणिकतामें शक है, वे न मेरी मदद करते हैं, न अपनी। वे मदद करें या न करें, जबतक मुझे अपना उपाय सच्चा मालूम होता है, मेरा फर्ज हो जाता है कि मैं उसे अपनाने की सलाह देता रहूँ।

वर्धा जाते हुए रेलगाड़ीमें, १९ फरवरी, १९४२

हरिजन-सेवक, १५-३-१९४२

४१५. भेंट : समाचार-पत्रोंको

नागपुर
१९ फरवरी, १९४२

आज शाम जब गांधीजी वर्धा जाते हुए नागपुरसे गुजरे तो वहाँ हमारे प्रतिनिधिने[1] उनसे पूछा : "मार्शल च्यांग काई-शेकसे आपकी मुलाकातके परिणामस्वरूप क्या कांग्रेस और सरकार एक-दूसरेके निकट आयेंगी ?" गांधीजी ने स्पष्ट उत्तर दिया :

नहीं।

हमारे प्रतिनिधिने जिज्ञासा व्यक्त की : "गांधीजी, जनरलिसिमोके साथ आपकी मुलाकात चार घंटे चली। क्या आप दोनोंने इस दौरान राजनीतिकी भी चर्चा की ?" गांधीजी ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया :

हमारी बातचीतके लिए चार घंटे काफी नहीं थे। हमने अनेक विषयोंकी चर्चा की — राजनीतिकी भी, लेकिन इस शब्दके व्यापकतर अर्थमें। हम और भी बहुत-से विषयोंकी चर्चा करना चाहते थे, लेकिन समय ही नहीं मिला। . . .[2]

जब एसोशिएटेड प्रेसके प्रतिनिधिने उनका ध्यान इस टिप्पणीकी ओर आकर्षित किया कि जनरलिसिमोके साथ हुई उनकी बातचीतके परिणामस्वरूप शायद जापानके विरुद्ध भारत और चीनका संयुक्त मोर्चा बन गया हो तो गांधीजी ने मुस्कराते हुए कहा :

'न्यूयॉर्क टाइम्स' जनरलिसिमोसे ही पूछे कि मुलाकातका नतीजा क्या हुआ है।

महात्मा गांधीने मुलाकातके बारेमें पूछे गये प्रश्नोंका कोई सीधा उत्तर नहीं दिया।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, २०-२-१९४२, और हिन्दू, २०-२-१९४२

१. बॉम्बे क्रॉनिकलका प्रतिनिधि
२. इससे आगेका अंश हिन्दूसे लिया गया है।

४१६. बातचीत : मित्रोंसे–१[1]

वर्धा
२० फरवरी, १९४२

आजका-सा अवसर मेरे जीवनमें इससे पहले कभी नहीं आया था, और जहाँ तक मैं सोच पाता हूँ, आगे भी कभी नहीं आयेगा। आप देखते हैं कि जो कार्रवाई आज हम यहाँ करने जा रहे हैं, उसके लिए कोई सभापति नहीं चुना गया है। मैं तो सभापति हूँ ही नहीं। क्यों नहीं हूँ, सो आप खुद ही थोड़े समयमें समझ जाइएगा। कहा जा सकता है कि मेरे साथ जमनालालजी का सम्बन्ध करीब-करीब तभीसे शुरू हुआ, जबसे मैंने हिन्दुस्तानके सार्वजनिक जीवनमें प्रवेश किया। उन्होंने मेरे सभी कामोंको पूरी तरह अपना लिया था। यहाँतक कि मुझे कुछ करना ही नहीं पड़ता था। ज्यों ही मैं किसी नये कामको शुरू करता, वे उसका बोझ खुद उठा लेते थे। इस तरह मुझे निश्चिन्त कर देना, मानो उनका जीवन-कार्य ही बन गया था। यों हमारा काम मजेमें चल रहा था। लेकिन अब तो वे खुद ही चले गये हैं और उनके सब कामोंको चलाने का भार मेरे कन्धोंपर आ पड़ा है। इसलिए मैंने सोचा कि मैं उनके उन सब मित्रोंको, जो उनके अनेकानेक सेवा-कार्योंमें सहायक होते रहते थे, यहाँ बुलाऊँ और उनसे निवेदन करूँ कि वे इस असह्य बोझको उठाने में अपनी ताकत-भर मेरी मदद करके उसे हल्का करें। आज मैं आपके सामने एक भिक्षुककी हैसियतसे यहाँ खड़ा हूँ, फिर इस सभाका सभापति कैसे बन सकता हूँ?

अपना भिक्षा-पात्र लेकर मैं आपके सामने खड़ा तो हूँ, लेकिन मैं धन-दौलतकी भीख नहीं चाहता। वैसी भीख भी मैंने अपने जीवनमें खूब माँगी है। गरीबकी कौड़ी और अमीरके करोड़ोंकी मुझे जरूरत रही है। लेकिन आज जो काम मुझे करना है, उसमें रुपये-पैसेकी कम ही जरूरत है। अगर मैं चाहता तो आजके दिन जमनालालजी के सब धनिक मित्रोंको यहाँ इकट्ठा करके उनपर दबाव डाल सकता था, उनकी खुशामद कर सकता था, और उनकी भावनाओंको द्रवित करके थैलियोंके मुँह खुलवा सकता था। यह धन्धा भी मैंने अपने जीवनमें जी-भरकर किया है और वह मुझे अच्छी तरह आता भी है। लेकिन अगर यही सब आज मैं यहाँ करने बैठता तो उस व्यक्तिके नामको बड़ा बट्टा लगता जो मुझे अपना सर्वस्व देकर चल बसा है — जो मेरे पास आया तो मेरी परीक्षा लेने, मगर पुत्र बनकर

१. गांधीजी ने जमनालाल बजाजकी पुण्य-स्मृतिको चिरस्थायी बनाने के लिए "क्या उपाय और साधन" अपनाये जाने चाहिए, इसपर विचार करने के लिए उनके करीब १९० मित्रों और कार्यकर्ताओंको आमन्त्रित किया था। यह बैठक नवभारत विद्यालयमें दोपहर बाद हुई थी।

बैठ गया और मेरा सारा बोझ उठाता रहा। मुझे जो भिक्षा आज आपसे माँगनी है, वह तो यह है कि जमनालालजी के उठ जाने से जो बोझ बढ गया है उसको उठाने में कौन-कौन मेरी मदद करेंगे। अकेले एक आदमीकी मददसे काम नही चलेगा, मदद तो सबको मिलकर देनी होगी और काम बाँट लेना होगा।

इस सम्बन्धमें आगे कुछ कहने से पहले मैं आपको यह बता दूँ कि अभीतक मैंने क्या किया है। ११ फरवरीको जब मैं जमनालालजी के द्वारपर पहुँचा, तो उनका देहान्त हो चुका था। मेरे पास वर्धासे सदेशा तो सिर्फ यही आया था कि खूनका दौरा कम करने की दवा भेजें। मैं दवा भेजकर अपने दिलकी तसल्ली कर सकता था। लेकिन उस दिन मैंने महसूस किया कि नहीं, मुझे खुद ही जाना चाहिए। जब वहाँ पहुँचा, तो मामला कुछ और ही पाया। मैं उस अवसरपर भी निर्दय बन गया। जानकीदेवी तो पतिके शवके साथ सती होने की ही बात करती थी। मैंने कहा . 'सचमुच सती होना है, तो जीती-जागती सती बन जाओ' और धनका जितना त्याग कर सको, कर दो।' यह तो उनके लिए एक मामूली बात थी। आखिर धनसे वह कितना सुख और आराम भोग सकती थी? लेकिन दूसरी चीज उतनी आसान नहीं थी। सम्भव है, वह अब भी उतनी आसान न हो। मैंने कहा, वह अपने पति का स्थान ले लें। उन्हें सकोच हुआ, फिर भी मैंने उनसे प्रतिज्ञा करा ही ली। इतना कठोर मैं बन गया।[१]

इस तरह जानकीदेवीने तो त्यागकी दीक्षा ले ली, लेकिन फिर मैंने सोचा कि उनके लडको, लडकियों और दामाद वगैरा को भी ऐसा ही त्याग करना चाहिए। मैं उनके साथ भी कठोर हो गया। मैंने उनसे कहा · 'बेशक, आप जमनालालजी की तरह व्यापार कीजिए, लेकिन उसमें उनकी विशेषताको निबाहते रहिए, यानी व्यापार भी सेवा-भावसे अथवा धर्म-भावसे कीजिए। जितना कमायें, नीतिपूर्वक कमाइए और उसे खर्च भी पुण्य-कार्यके लिए ही कीजिए — अपने ऐश-आरामके लिए नही। यानी आप अपने कमाये धनके भी सरक्षक बनकर रहिए।'[२]

जमनालालजी करीब छ लाख रुपया अपने लडकोंके पास छोड गये थे, ताकि वे उसका उपयोग सेवार्थ करे, यानी उससे मेरे-जैसे भिखारियोंकी झोलियाँ भरे। लडके कह सकते थे कि एक बार हमें भी जी-भरकर ऐश-आराम कर लेने दीजिए, फिर हम त्याग भी करते रहेंगे। लेकिन नहीं, एक-दो दिनके गम्भीर विचारके बाद

१. ८-३-१९४२ के *हरिजन*में प्रकाशित रिपोर्टके अनुसार जब गाधीजी ने जानकीदेवीके मनमें जीती-जागती सतीकी भूमिका निभाने की उनकी सामर्थ्यके प्रति शंकाका भाव देखा तो उन्होंने कहा कि अगर उनमें इच्छा हो तो विनोबा उन्हें बतायेंगे कि वैसा करने की सामर्थ्य और शक्ति उन्हें ईश्वर देगा।

२. अग्रेजी रिपोर्टमें यह भी बताया गया है कि जानकीदेवी द्वारा त्यक्त सम्पत्ति लगभग ढाई लाख रुपयेकी थी और उन्होंने अपना जीवन गोसेवा संघके कार्यको समर्पित कर दिया।

३. देखिए "बातचीत : बजाज-परिवारसे", पृ० ३४३-४४ भी।

उन्होने यह सारी रकम सेवा-कार्यके लिए दे दी। इसके सिवा, जमनालालजी के जीवन-कालमे काग्रेसजनोके और दूसरे कार्यकर्त्ताओ वगैरा के आतिथ्यपर हर साल करीव २० हजार रुपया खर्च होता था। उन्होने इसको भी पहले ही की तरह जारी रखने का निश्चय किया, और सारे खर्चकी जिम्मेदारी वच्छराज जमनालाल कम्पनीकी तरफसे अपने कन्धोपर उठा ली। सेठजी ने वजाजवाड़ीका एक हिस्सा जानकीदेवीके लिए और वच्चोके लिए रखा था। लेकिन उनके परिवारवालो ने यह तय किया कि उनमें से कोई उन वँगलोमें नही रहेंगे। उनका उपयोग सिर्फ अतिथि-सत्कारके अथवा सार्वजनिक कामके लिए ही होगा। वे खुद तो अभी गोपुरीमे ही रहना पसन्द करते है।

इस तरह शुभ सकल्पोके साथ यह काम शुरू हुआ है। जमनालालजी की आँख वन्द होते ही मैने उनके वोझका वँटवारा शुरू कर दिया। आप देखेंगे कि जमनालालजी के कामोकी जो फेहरिस्त[1] आपको भेजी गई है, उसमें उनके आखिरी कामको पहला स्थान मिला है। यह काम स्वराज्य-प्राप्तिके कामसे भी कठिन है। स्वराज्य मिलने से यह अपने-आप नही हो जायेगा। यह सिर्फ पैसेसे होनेवाला काम नही। मै इस वातका साक्षी हूँ कि आजीवन अलौकिक निष्ठासे काम करनेवाले उस व्यक्ति ने किस अपूर्व निष्ठासे इस कामको शुरू किया था। उन्हे इस तरह काम करते देखकर एक दिन सहज ही मेरे मुँहसे यह निकल गया था कि जिस वेगसे वे इस कामको कर रहे है, उसको उनका शरीर सह सकेगा या नही? कही वीच ही में वह धोखा तो न दे जायेगा? आज मेरा वह कथन भविष्यवाणी सावित हुआ है — मानो उस समय भगवान ही मेरे मुँहसे वोल रहे थे। साराश यह कि यह काम पैसेसे नहीं, एकनिष्ठासे ही होनेवाला है। जानकीदेवीने ढाई लाखकी जो रकम दान की है, उसमें से ढाई हजार रुपये खादीके कामम लगाने का वह पहले ही सकल्प कर चुकी थी। इसके सिवाय, वर्धामे एक प्रसूतिगृह वनाने की उनकी इच्छा थी। कुछ रुपया उसमें लगेगा। वाकी करीव सवा दो लाख गोमाताके कामके लिए रह जाता है। २०-२५ हजार रुपया असल गोसेवा सघका था, वह भी आज हमारे पास है। जानकीदेवीके दानकी रकमके साथ मिलकर यह रकम हमारी आजकी आवश्यकताके लिए काफी है। लेकिन कार्यकर्त्ता काफी नही है। गोसेवाका काम आजतक जिस तरह चला, उससे न जमनालालजी को सन्तोष था, न मुझे। इस कामको सन्तोषजनक रूपसे चलाने के लिए मुझे आपकी तन-मनसे मदद मिलनी चाहिए। जवतक यह न हो जायेगा मुझे चैन न पडेगा। असलमे वारिस तो उन्हे मेरा वनना चाहिए था, पर वह तो चले गये और जीत गये। अव परीक्षा मेरी है। मै एक नये रूपमें उनका वारिस वन गया हूँ, यानी उनके सारे-के-सारे कामोको मैने अपने जिम्मे ले लिया है। लेकिन यह तो एक ऐसी चीज है, जिसके वारिस आप सव वन सकते है। जव आप सव मिलकर इन कामोको उठा लेंगे, तो ये पहलेसे भी ज्यादा व्यवस्थित और सन्तोषकारक रीतिसे चलेंगे, और तभी मै इस परीक्षामें उत्तीर्ण हो पाऊँगा।

१. देखिए "एक पत्र", पृ० ३४६-४७।

जमनालालजी तो बड़भागी थे। उनकी तरह हम भी अपनेको बडभागी साबित कर सकते हैं, बशर्ते कि जो चीज उनके रहते हमें साफ नहीं दिखी थी वह उनके बाद हमें साफ दिखने लगे, जो जागृति उनके जीवित रहते नहीं आई, वह अब सबमें आ जाये। यह सब कठिन है, मगर एक तरहसे आसान भी है। अगर आप यह कठिन काम कर सकते है, तो करे, परन्तु मैं नहीं चाहता कि आप गरमा-गरमी कुछ करें। इससे तो आप जमनालालजी के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धा का सबूत नहीं दे पायेंगे। लेकिन बिना किसी सकोचके, सोच-समझकर, उनके काममें थोडी भी मदद पहुँचायेंगे, तो आप यहाँसे एक बडा काम करके जायेंगे।

उनका सबसे बडा काम गोसेवाका था। वैसे तो यह काम पहले भी चलता था, लेकिन धीमी चालसे। इससे उन्हे सन्तोष न था। उन्होंने इसे तीव्र गतिसे चलाना चाहा, और इतनी तीव्रतासे चलाया कि खुद ही चल बसे। अगर हमें गायको जिन्दा रखना है, तो हमें भी इसी तरह उसकी सेवामे अपने प्राण होमने होगे — इसी तीव्रतासे काम करना होगा। अगर हम गायको बचा पाये, तो हम भी बच जायेंगे। इसका एक रास्ता तो वह है जो पश्चिमवालोने अख्तियार कर रखा है — यानी उसको बेचें और उसकी मिट्टीसे अपना पेट भरकर मोटे-ताजे बनें। परन्तु उनका यह न्याय न मुझे मजूर है, न आपको, और न जमनालालजी को। इसलिए इसकी जो मर्यादा उन्होंने अपने लिए बना ली थी उसके अन्दर रहकर ही हमें काम करना होगा। आज हम तरह-तरहके भ्रमो और वहमोंके जालमें फँसे हुए हैं। अगर हम इस जालसे अपनेको छुडा सके, और जिस निगाहसे चाहिए उस निगाहसे इस कामको कर सकें, तो जो गाय आज हमारे बीच हिन्दू-मुसलमानो और धर्म-अर्थके झगडोका कारण बन गई है वह इस कलकसे बच जायेगी। जमनालालजी हमें इसका रास्ता दिखा गये है। शायद आपको मालूम हुआ होगा कि उन्होंने गोसेवाकी दो योजनाएँ तैयार की थीं: एक सारे देशके लिए, दूसरी वर्धाके लिए। पहले मैं सारे हिन्दुस्तानवाली योजनाकी बात करूँगा। थोडेमें, वह यह है कि हम हिन्दुस्तानके सब पिंजरापोलोको अपने अनुकूल बना ले। इसके बारेमें जो तजवीज हमने सोच रखी है, उसके अनुसार हम काम कर पाये, तो बडा काम हो सकता है। धर्म-भावना तो इसमें है ही। इसपर करोड़ो खर्च किये जा सकते हैं। यह एक ऐसा काम है जिसमें आप सब मदद कर सकते हैं।

दूसरी योजना श्री रामेश्वरदासजी बिडलाने नस्ल-सुधारके लिए अच्छे साँड पैदा करनेकी बनाई है। नस्लका सुधार सिर्फ साँडोंके मार्फत ही हो सकता है। यह पेचीदा काम है। अगर सब इसमें मदद न करे तो सिर्फ रुपया इकट्ठा करने से कुछ न हो सकेगा। अकेला तो मै उसे खर्च भी न कर पाऊँगा। साँड़ कोई ऐसी चीज नहीं जो बात-की-बातमें आसानीसे पैदा हो जाये। इसके लिए तो जैसा मैंने कहा है, मुझे आपके तन-मनकी मदद चाहिए। इसके वास्ते ज्ञानकी बडी जरूरत है, यह ज्ञान जहाँ मिल सकता है, वहाँ आपको पहुँच जाना होगा, और उसे नम्रतापूर्वक, प्रणिपात व सेवा द्वारा प्राप्त कर लेना होगा·

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।[1]

अब दूसरी चीज लीजिए। मिसालके तौरपर, खादीके काममे उनकी दिलचस्पी मुझसे कम न थी। खादीके लिए जितना समय मैने दिया, उतना ही उन्होने भी दिया। उन्होने इस कामके पीछे मुझसे कम बुद्धि खर्च नही की थी। इसके लिए कार्यकर्ता भी वे ही ढूँढ-ढूँढकर मेरे पास लाया करते थे। थोडेमे यह कह लीजिए कि अगर मैने खादीका मन्त्र दिया, तो जमनालालजी ने उसको मूर्त रूप दिया। खादीका काम शुरू होने के बाद मै तो जेलमे जा बैठा मगर वे जानते थे कि मेरे नजदीक खादी मे ही स्वराज्य है। अगर उन्होने तुरन्त ही उसमे रत होकर उसे सगठित रूप न दिया होता, तो मेरी गैरहाजिरीमे सारा काम तीन-तेरह हो जाता।

यही बात ग्रामोद्योगकी थी। उन्होने इसके लिए मगनवाडी तो दी ही थी, साथ ही उसके सामनेकी कुछ जमीन भी वे मगनवाडीके लिए खरीदने का सकल्प कर चुके थे। अब चि० कमलनयनने वह जमीन भी मगनवाडीको दे दी है। ग्रामोद्योगका काम इतना व्यापक है कि उसमे अखूट रुपया खर्च किया जा सकता है। लेकिन इस वक्त आपके सामने रुपयेकी बात नही करना चाहता। आप दो तरहसे इस काममे मदद कर सकते है। यहाँ जो खादीधारी है, उनमे से कोई चौथाई, कोई आधी और कोई तीन चौथाई खादीका इस्तेमाल करता है। खुद उनके रिश्तेदार और मित्र भी सब खादीधारी नही है। इसका मतलब यह है कि खादीके लिए जितना प्रयत्न या प्रचार घरोमे होना चाहिए उतना किया नही गया है। रुदनके इस अवसरपर मै आपको रुलाना नही चाहता। कई अवसर ऐसे होते है जब रुदन ही प्रेमका लक्षण बन जाता है। लेकिन आपके रुदनको मै किसी दूसरी चीजसे बदलना चाहता हूँ। शोक और रुदनके इस अवसरका उपयोग हम किस तरह करेगे? क्या हम खुद अपने लिए और अपनोके लिए सम्पूर्ण खादीधारी होने का निश्चय करके यहाँसे उठेगे? अभी मै कलकत्तेमे सेनाध्यक्ष श्री च्याग काई-शेकसे मिला था।[2] उनके साथ बातचीत करते समय मैने सारा वक्त धनुष-तकुएपर सूत काता और विदाईके समय सूतके साथ अपना धनुष-तकुआ भी उन्हे भेटमे दे दिया, ताकि उनके द्वारा उसका सन्देशा चीनतक पहुँच जाये। इस तरह प्रेमने मुझे सुझा दिया कि मै इस अवसरका भी उपयोग प्रचारार्थ कर लूँ। जब एक अतिथिको इस तरह प्रभावित किया जा सकता है, तो क्या अपने मित्रो और रिश्तेदारोसे वही काम नही कराया जा सकता है?

एक बात और। जमनालालजी कई बार कहा करते थे कि लोग और सब जगह तो खादी पहनकर चले जाते है, लेकिन बैकमे नही जाते। अगर वे बैकमें अपनी मारवाडी पगडी पहनकर न जाये, तो उनके खयालमे, उससे उनकी प्रतिष्ठा की हानि होती है। मगर खुद जमनालालजी ने कभी इसकी कोई परवाह नही की, फिर उसका नतीजा कुछ भी क्यो न हो। अत मै यह चाहता हूँ कि हममे इतनी

१. भगवद्गीता, ४३/४

२. १८ फरवरीको

स्वतन्त्रता और इतना आत्मगौरव पैदा हो जाना चाहिए कि हम अपनी खादीकी पोशाकमें हर जगह बिना झिझकके जा सकें।

आज हमारे सिरपर एक बडा सकट मँडरा रहा है। सिंगापुर गया, रगून जाता नजर आता है, खुद कलकत्ता खतरेमे है। ऐसी हालतमें अगर कलसे कोई दूसरी ताकत हिन्दुस्तानमें आ पहुँचे, तो क्या पहलेकी तरह हम फिर अपने व्यापार के लालचमे उसकी खुशामद करने लग जायेगे और अपनी स्वतन्त्रता उसके हाथो बेच देंगे? अथवा यह कहेंगे कि हम इनकी गुलामीसे निकलकर आपकी सरदारी को स्वीकार करना नहीं चाहते? जमनालालजी की आत्मा आज हमसे यह सवाल पूछती है। इस सम्बन्धमें उनका अपना क्या जवाब होता, सो तो मैं उतनी ही अच्छी तरहसे जानता हूँ जितना अपनेको जानता हूँ।

एक विचारणीय बात। जो हमारा शत्रु बनकर आता है, हमसे द्वेष करता है, क्या हम उससे भी प्रेम करेंगे? उसके प्रति भी दयाका भाव रखेंगे? आज हममें से कइयोंके दिलमें अंग्रेजोंके लिए हिंसा और द्वेपका भाव भरा है, क्योकि हम अहिंसाको पूरी तरह समझ नहीं पाये है। यह ठीक है कि दया उसीपर की जा सकती है, जिसे क्षमा करने की हममें ताकत हो। चूहा बेचारा बिल्लीको क्या क्षमा करेगा? लेकिन अगर हम चूहेमें बहादुरीकी कल्पना कर सके, तो वह बिल्लीका भक्ष्य न रह जायेगा, और बिल्ली तो उसका भक्ष्य बनेगी ही क्यो? आज हममें अंग्रेजोंके लिए जो द्वेप है सो तो इसलिए है कि हम अपने दिलमें अंग्रेजोंसे डरते हैं। यदि हम इस डरको निकाल सकें और निर्बलकी अहिंसाको छोडकर सबलकी अहिंसा द्वारा अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकें, तो फिर हमे ससारमें किसीका भी डर न रह जायेगा —हम अजेय बन जायेंगे। मैं आपसे यह चाहूँगा कि आप आक्रमणकारीसे दुश्मनी न करे, उसका बुरा न चाहे, लेकिन साथ ही उसकी अधीनता भी स्वीकार न करे। क्या आप इसके लिए तैयार हैं? आगे क्या होगा, सो तो भगवान् ही जानता है। अंग्रेजोंकी कौम एक बहादुर कौम है। इससे पहले वे कई बार खतरोंसे गुजर चुके हैं। मगर उन्होंने हिम्मत कभी नहीं छोडी, और तकदीरने उनका साथ दिया। हमें उनसे सकटके समयमें आखिरी दमतक हिम्मत न हारने और बहादुरीके साथ आफत-मुसीबतका सामना करने का गुर सीख लेना चाहिए।

अबतक इस देशकी आजादीको खोने मे व्यापारी-समाजकी खास जिम्मेदारी रही है। जमनालालजी को यह चीज बराबर खटका करती थी। इसीलिए आज आपके सामने मुझे ये सारी बातें रखनी पडी हैं। बीस साल पहले भी मैंने यही बात कही थी। मगर तब तो आजकी इस हालतका किसीको सपना भी नही था। उस वक्त तो लोगोको अंग्रेजोकी हुकूमत 'यावच्चन्द्र दिवाकरौ' अटल-सी मालूम होती थी। परन्तु आज, जबकि जापान हिन्दुस्तानके दरवाजेपर आ पहुँचा है, हमें अपना दिल टटोल-कर यह जान लेना चाहिए कि वह क्या कहता है।

जमनालालजी के दूसरे कामोंके बारेमें मैं आपका इस वक्त ज्यादा समय लेना नही चाहता। वे सब आपकी आँखोंके सामने ही है। महिला आश्रमको ही लीजिए। यह उनकी अपनी एक विशेष कृति है। उन्ही की कल्पनाके अनुसार यह अबतक

काम करता रहा है। जमनालालजी के सामने सवाल यह था कि जो लोग देशके काममे जुटकर भिखारी बन जाते है, उनके बाल-बच्चोकी शिक्षाका क्या प्रबन्ध हो? उन्होने कहा कि कमसे-कम उनकी लड़कियोको तो यहाँ सरकारी मदरसोके मुकाबले अच्छी ही तालीम मिल सकेगी। बस, इसी खयालसे महिला आश्रमकी स्थापना हुई। आज इस आश्रमके लिए एक त्यागी और सुशिक्षित महिलाकी आवश्यकता है। आप इस आवश्यकताकी पूर्तिमे सहायक हो सकते है।

बुनियादी तालीम और हरिजन सेवक सघके काम का भी यही हाल है। आप इनमे शरीक हो सकते है। हिन्दू-मुस्लिम एकताके लिए उनके दिलमे खास लगन थी। उनके अन्दर साम्प्रदायिक द्वेषकी बू तक न थी। आप उनके जीवनसे इस गुणको ग्रहण कर सकते है?[1]

फिर, राष्ट्रभाषाका भी सवाल है। जैसा कि आप सबको मालूम है, राष्ट्रभाषा-प्रचारमे उनकी गहरी रुचि थी। हिन्दी साहित्य सम्मेलनसे मुझे जोडने मे सबसे बड़ा हाथ उन्ही का था। यह केवल उन्ही के प्रयत्नोका परिणाम था कि दक्षिणमे हिन्दी-प्रचारका काम सम्भव हुआ। फिर, उन्ही की सहायतासे मै वह प्रस्ताव करवा सका जिसके अनुसार हिन्दीकी ऐसी व्यापक परिभाषा की गई जिसमे उर्दूका भी समावेश हो। आप सबसे मेरा अनुरोध है कि जमनालालजी के प्रति अपने सम्मानके प्रतीक-स्वरूप आप आजसे ही उर्दू वर्णमाला सीखने की कोशिश शुरू कर दे। प्रारम्भिक वर्णोको सीखना आपको बहुत आसान लगेगा।

मुझे जो-कुछ कहना था, मै कह चुका। अगर आपमेसे किसीने कोई सकल्प किया हो, तो मुझे बता दें। मै फिर यह कह दूं कि कोई मुँह देखे की बात न करे, लोक-लाज या शिष्टाचारके विचारसे कुछ न कहे। मै आपको हर तरह निर्भय बना देना चाहता हूँ। आज ही घनश्यामदासजी ने मुझसे पूछा था कि मै सभामें उनसे कुछ कहलाना तो नही चाहता हूँ। मैने कहा, नही। हाँ, किसीको सहज भावसे कुछ कहने की प्रेरणा हो जाये, दिलमे कोई बात समाये न समाये या विचार अपने-आप वाणीका रूप ले ले, तो उसे मै जरूर सुनना चाहूँगा। उसमे से दूसरोको भी मार्ग मिल जायेगा। आज मै किसी तरहका दिखावा नही चाहता। जमनालालजी का स्मृति-स्तम्भ खडा करके हम उनकी यादको चिरस्थायी नही बना सकते। स्तम्भ पर खुदे हुए शिलालेखको लोग तो पढकर थोडे ही समयमे भूल जायेंगे, परन्तु जिस आदमीने दुनियाके लिए इतना-कुछ किया है, उसके कामको चिरस्थायी रखने का सकल्प कोई कर ले, तो वह उसका सच्चा स्मारक ही रहेगा। किन्तु इसके लिए मै जबरदस्ती नही करना चाहता, और न मै आपसे ही वैसी कोई आशा रखता हूँ। जिसे जो-कुछ भी करना हो, आत्मोन्नतिके लिए करे। अगर दिखावे के लिए कुछ भी होगा, तो उससे मुझे और जमनालालजी की आत्माको उलटा कष्ट ही होगा।

इसपर कई सूचनाएँ गांधीजी के सामने रखी गई। परन्तु वे उन्हे पसन्द न आईं। अपनी मनोदशाको और अधिक स्पष्ट करते हुए उन्होंने पुनः जोरदार शब्दोंमें कहा:

१. अगला अनुच्छेद ८-३-१९४२ के हरिजनसे लिया गया है।

मैंने आज जान-बूझकर अनियमित ढगसे सारा काम चलाया है। क्योंकि मैं इस काममें थोड़ी भी कृत्रिमता नहीं चाहता। मैं इसे अपने जीवनका एक अत्यन्त गम्भीर अवसर मानता हूँ। जो शुद्ध धर्म-भावना अन्तिम समयमें जमनालालजी की थी उसे मैं कायम रखना चाहता हूँ। इसलिए जिसे जो-कुछ करना हो, उसी भावनासे करे। एकान्तमें बैठे, अन्तर्मुख बने और ईश्वरको साक्षी रखकर जो सकल्प करना हो, करे।

ता० २० फरवरीको सभा समाप्त होने से पहले उन्होंने [गांधीजी ने] एक सूचना और की थी। वह कौन-सा संकल्प है जिसे हर कोई उसी दिन अपने जीवनमें उतार सकता है? उन्होंने दो बातें बताई थीं, जिसमें एक राष्ट्रभाषा सीख लेने की बात थी। राष्ट्रभाषामें हिन्दी और उर्दू दोनोंका समावेश होता है। स्व० जमनालालजी ने अपने आखिरी जेल-जीवनमें यही काम खास तौरपर किया था। हिन्दीके साथ उर्दू की लिपि भी उन्होंने सीख ली थी। गांधीजी ने सभामें उपस्थित सज्जनोंको बताया कि उर्दू लिपि आसानीसे सीखी जा सकती है। इसलिए उसको फौरन ही सीखना शुरू कर देना चाहिए।

दूसरी बात गोसेवा संघके प्रतिज्ञा-पत्रके अनुसार प्रतिज्ञा लेने की थी।[1] किसी समय यह काम मुश्किल माना जाता था; लेकिन गांधीजी ने समझाया कि जमनालालजी ने अपने उदाहरण द्वारा इसके लिए भी सबको रास्ता दिखा दिया है। गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्तका पहले-पहल पता लगानेवाले को उसके लिए कितनी तपस्या करनी पड़ी होगी? परन्तु आज एक बच्चा भी उसे आसानीसे समझ लेता है। अगर न्यूटन के बादकी पीढ़ियोंको भी उस सिद्धान्तके समझने में न्यूटनके समान ही कठिनाईका अनुभव हो, तो कहना होगा कि उनके लिए उसकी सारी तपस्या ही निकम्मी रही।

हरिजन-सेवक, ८-३-१९४२ और १५-३-१९४२

४१७. पत्र : कुलसुम सयानीको

२१ फरवरी, १९४२

प्रिय कुलसुम,[2]

मैंने पत्र भूलसे अंग्रेजीमें शुरू किया। जानकीबहन तक तुम्हारे विचार पहुँचा दूँगा।

तूने पढ़ाने का काम शुरू किया है उसके लिए बधाई।

बापूकी दुआ

मूल गुजरातीसे : बेगम कुलसुम सयानी पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए "भाषण : अखिल भारतीय गोसेवा संघ सम्मेलनमें", पृ० ३०१-३०५।
२. सम्बोधन अंग्रेजीमें है।

१८. पत्र : भाईलालभाई पटेलको

२१ फरवरी, १९४२

भाई भाईलालभाई,

तुमने भाई नरहरिकी जो मदद की उसका विवरण उसने मुझे भेजा है। ऐसे कामोका बदला तो ईश्वर ही देता है। तुम्हारे बारेमे सरदारने भी मुझे बताया था।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
डॉक्टर भाईलालभाई पटेल ७५वीं वर्षगाँठ अभिनन्दन ग्रन्थ, पृ० २१

४१९. पत्र : अन्नपूर्णाको

सेवाग्राम, वर्धा
२१ फरवरी, १९४२

चि० अन्नपूर्णा,

आखर तो शादीमे फसी। मैं तो जानता था। शादी न करनेवालो का जीवन और ढग दूसरा ही होता है। लेकिन उसमे कोइ सकोचकी बात नही है। जो सब करते है वह तू करती है। दोनो सुखी रहो और चौगुनी सेवा करो।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २७९०) से

४२०. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२१ फरवरी, १९४२

चि० कृ० चं०,

मेरी नीदमे जरा भी खलेल तुमारे खतसे हुआ नही था। किसने कहा? मेरी नीद तो जमनालालके देहातसे टूटी थी। बरतनका सुना तो मैंने लड़किओको अपने धर्मका भान करने को दौडाई थी।

बरतन सब लाये उसी वखत देख लेना चाहिये जिससे सीख ले कि कैसे साफ होने चाहीये। ऐसा तो है कि सबके पास अगोछा नही रख सकते है, इसलिये अच्छा यह होगा कि बरतन आवे ऐसे अगोछेसे एक आदमी पूछे।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१७) से

४२१. बातचीत: मित्रोंसे – २

वर्धा
२१ फरवरी, १९४२

मुझे सकोच तो होता है, फिर भी मै आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ। कल मैंने आपसे कहा था कि अगर आपने जमनालालजी की दृष्टि और भावनाको समझ लिया है, तो आप आज ही उर्दू भाषा और उर्दू लिपि सीखना शुरू कर दीजिए। मै जानना चाहता हूँ कि आपमे से कितनोने कल उर्दू लिपि सीखना शुरू किया।[1]

इसके लिए आपको प्रणिपात करना चाहिए था। अगर आप मेरे पास आते, तो मै अपने साथियोमें से किसीके पास आपको सीखने भेज देता। फिर, बाबू राजेन्द्र प्रसाद तो आपके बीच ही थे — आप उनके पास जा सकते थे। युधिष्ठिरने पूछा था "धर्म कैसे जाना जा सकता है?" जवाब मिला था, "अभ्याससे और प्रयत्न से।" अगर जमनालालजी की मृत्युसे हम फायदा उठाना चाहते है, तो हमे बहुत ज्यादा सावधान बनना होगा, बहुत ज्यादा सयम और त्याग सीखना होगा। आज दुनियामे घोर युद्ध चल रहा है। जो लोग उसमें शामिल है, उनकी तपस्याका जब मै खयाल करता हूँ, तो दग ही रह जाता हूँ। उन्हे तो चौबीसो घण्टे सजग ही रहना पडता है। अतएव आपको जानना चाहिए कि अहिंसाके सिपाहीको तो उनसे भी ज्यादा सजग रहने की जरूरत है।

एक बार जुलू बलवेके दिनो दक्षिण आफ्रिकामे रातके वक्त हुक्म निकला कि कोई दियासलाईका इस्तेमाल न करे। अगर कही आग जलती हो, तो वह भी बुझा दी जाये। उन दिनो हम छोलदारियोमें रहते थे। डर था कि कही थोडी भी रोशनी रही, तो उससे दुश्मनको हमारी फौजका पता लग जायेगा। अगर उस वक्त कोई उस हुक्मके पालनमें थोडी भी ढिलाई करता तो फौरन कैद कर लिया जाता या गोलीसे उडा दिया जाता। फिर उसी रात दूसरा हुक्म मिला कि फौरन कूच करना है और सो भी अँधेरेमें। कोई अपने साथ बत्ती नही रख सकता था। सिर्फ आवाजके सहारे चलना था। सबको उसी वक्त इसकी तालीम लेनी ही पडी।

१. उपस्थित लोगोंमें से एकने बताया कि सीखने के लिए पुस्तकें ही सुलभ नहीं थीं।

मैं अकसर सोचता हूँ कि अगर हममे से हर एकको एक सालके फौजी अनुशासनका तजरबा रहता, तो आज हमारी हालत कुछ और होती। जमनालालजी किसी फौजी विद्यालयमे तालीम लेने नही गये थे। मगर उन्होंने खुद अपनी कोशिश से अपने अन्दर फौजी अनुशासनके गुण पैदा कर लिये थे। वैसी ही तालीम हममें से हरएकको खुद ले लेनी होगी।

हमारे साथ कोई जबरदस्ती नही करता — सिर्फ सूचना ही हमें मिलती है, सो भी हम चाहे तो; उसे मानना, न मानना हमारे हाथकी बात है। २१ साल से मैं आपको कहता आया हूँ कि अहिंसा-धर्मके पालनकी जो सलाह मिलती है, सत्याग्रहीके लिए तो वह हुक्मका ही काम देती है। सरकारी कानूनकी तरह बाहरी हुक्मको तो सत्याग्रही तोड़ भी सकता है, लेकिन जो चीज भीतरसे आती है, जिस नियमको वह स्वेच्छासे स्वीकार करता है, उसके अनुसार मिलनेवाली सूचनाकी अवज्ञा वह कैसे कर सकता है? कलका दिन तो हमारे लिए 'सुवर्ण दिन' होना चाहिए था; क्योंकि कल हम अपने अन्दर धर्मकी भावनाको जगाने में लगे थे। जो सवाल आज उठाया गया, वह कल उठाया जाता, तो मै कोई रास्ता सुझाता। यहाँ काले तख्तेपर ही एकाध पाठ लिखवा देता। लेकिन जो हुआ सो तो हमारे मानसिक आलस्यका सूचक है। यह चीज हमें छोड़नी है। क्या आप सोचते हैं कि जुलू बलवेके दिनो, उस रात, हमें यह हुक्म मिलता कि सवेरा होने से पहले सबको कुछ जरूरी जुलू शब्द सीख लेने चाहिए, तो उसके अमलमें थोड़ी भी ढिलाई बरदाश्त की जाती? अकसर फौजको दुश्मनके मुल्कमें जाने से पहले वहाँवालो की भाषा कुछ सीख ही लेनी पड़ती है। यहाँ तो मैंने आपसे दोस्तकी भाषा सीखने को कहा था। यह न सोचिए कि आपको उलाहना देने की गरजसे मै यह सब कह रहा हूँ। मैं तो आपके सामने आपके धर्मकी ही बात कर रहा हूँ। गुजरातीमें एक कहावत है: 'जब जागे तभी सवेरा।' आप कलकी बात भूल जाइए, और आजसे पूरी तरह कोशिश शुरू कर दीजिए। उर्दू सीखने के लिए जिस मुस्तैदीकी जरूरत है, वैसी ही मुस्तैदी दूसरी चीजोके बारेमें भी हममें आ जाये, तो जितने लोग इस कमरेमे बैठे है, उनमें से बड़ी शक्ति पैदा हो सकती है। मगर आज तो हममें एक तरहकी शिथिलता या जड़ता आ गई है। वह हमे कुछ करने ही नहीं देती। जडता भी बड़े कामकी चीज है। बिना उसके प्रकृति एक क्षण भी टिक नही सकती, लेकिन जब उसकी मात्रा एक हदसे ज्यादा बढ़ जाती है, तो वह दोषरूप बन बैठती है। आज कई लोग कहते है. 'हम तो तमोगुणमें पड़े है। पहले रजोगुणको पार कर ले, फिर सत्त्वमें प्रवेश करेंगे।' क्या यह जरूरी है? आज हम अपने घरोके सामने ढेरो कूड़ा-करकट पड़ा रहने देते है और यो डाक्टरोका और बीमारियोका पोषण करते रहते है। क्या इसके मूलमें भी वही जड़ता काम नही कर रही जिसका जिक्र मैं ऊपर कर चुका हूँ?

इसलिए कल मैंने अपने से यह तय कर लिया था कि अगर इस मौकेपर पैसा इकट्ठा करने के बजाय मै आपको सावधान कर पाऊँ, तो वही मेरा सच्चा व्यापार होगा। मैं फिर आपसे कहता हूँ कि आप अपने दिलको खूब टटोलकर

देखिए। और जहाँ-कहीं जड़ता नजर आये, उसे उखाड़ फेंकिए। और, भविष्यके लिए यहाँसे यही संकल्प करके उठिए कि जो अच्छी सलाह आपको मिलेगी या अन्तरसे जो प्रेरणा उठेगी, उसके अनुसार आप तुरन्त काममे जुट जाया करेंगे। जमनालालजी के स्मारककी सच्ची स्थापनाका इससे अच्छा या महत्त्वपूर्ण आरम्भ और क्या हो सकता है?[1]

स्वामी आनन्दने बताया कि जमनालालजी साल-भरमें गोसेवा सघके लिए कम-से-कम १००० सदस्य बना लेने की आशा रखते थे। आप सभी इस कार्यमें मदद कर सकते हैं।[2]

हरिजन-सेवक, १५-३-१९४२

४२२. खादी-विद्यार्थी

आजके खादी-विद्यार्थीके बारेमें कुछ लिखने के लिए मुझसे कहा गया है। मैंने कुछ-कुछ लिखा तो है ही, लेकिन उसे जितना स्पष्ट किया जाये, उतना कम है। खादी-विद्याका अर्थ केवल कताई-बुनाई आदि क्रियाओका ज्ञान ही नही है। सिर्फ यही अर्थ होता तो उसे खादीकी कारीगरी कहा जाता। खादी-विद्यामें खादी तैयार करने के मर्मको जानना सबसे महत्त्वकी बात है। खादी भापसे चलनेवाले यन्त्रोंके बजाय हाथके यन्त्रोमे ही क्यो बनाई जाये? जो काम भाप आदिकी शक्तिकी मददसे एक आदमी कम समयमें कर सकता है, वह अनेक आदमियोके हाथो द्वारा क्यो कराया जाये? हाथोमे ही करना है, तो तकली ही से क्यों नही? तकलीमें भी बाँसकी तकली क्यों नहीं? और जब एक पत्थरकी मददसे काता जा सकता है, तो बाँसकी तकली भी क्यो? ऐसे सवाल सहज ही पूछे जा सकते हैं। इन सवालोको हल करना खादी-विद्याका आवश्यक अग है। मैं यहाँ इन सवालोकी चर्चामें नही उतरना चाहता। सिर्फ यही बतलाना चाहता हूँ कि 'खादी-विद्या' मामूली चीज नही है।

आज हमारे पास इस विद्याको सिखाने के आवश्यक साधन नही हैं। इसलिए शिक्षकोको सिखाते-सिखाते खुद सीखना भी है, और सीखकर अपने ज्ञानको समृद्ध भी बनाना है। इसी तरह विद्यार्थियोको भी अपने प्रयत्नसे अपना ज्ञान बढाना है। पुराने जमानेमें, यानी शास्त्रोका निर्माण होने से पहले, विद्यार्थी स्वय प्रयत्नपूर्वक अपने

१. इसके बादका अंश ८-३-१९४२ के हरिजनसे लिया गया है।

२. अनेक लोगोंने जमनालालजी के कार्यको आगे बढ़ाने में मदद देने का संकल्प किया। गोसेवा संघके अध्यक्ष-पदके लिए जानकीदेवीका नाम प्रस्तावित करते हुए गांधीजी ने कहा: "जब मैंने जानकीदेवीसे कहा कि वे इस पदको स्वीकार कर लें तो मैंने सोचा कि सम्भवतः यह एक स्त्रीका ही काम है और जिस काममें अबतक पुरुष असफल रहे हैं उसमें कदाचित् स्त्रियाँ सफल हों।" इसके बाद सर्वसम्मतिसे जानकीदेवी चुन ली गईं।

शिक्षकोसे ज्ञान प्राप्त कर लिया करते थे। वे अपने समयके सर्वश्रेष्ठ विद्यार्थी सिद्ध हुए हैं। आज हमारी भी कुछ ऐसी ही स्थिति है।

सेवाग्राम, २२ फरवरी, १९४२

खादी-जगत्, फरवरी, १९४२

४२३. मराठीमें 'हरिजन'[1]

१ मार्च, १९४२ से 'हरिजन' का मराठी सस्करण वजाजवाड़ी, वर्धासे प्रकाशित होगा। पत्रका वार्षिक चन्दा रु० ५) होगा। सत्याग्रह आश्रमके एक पुराने सदस्य श्री गोपालराव काले पत्रके सम्पादक और 'सर्वोदय' के श्री दादा धर्माधिकारी उनके सहकारी होगे। मैंने सलाह दी है कि अगर पत्र स्वावलम्वी न वने तो उसका प्रकाशन बन्द कर दिया जाये। श्री गोपालराव और उनके साथियोने मेरी यह सलाह मान ली है। आशा है, मराठी-भाषी जनता इस पत्रको अपनायेगी।

सेवाग्राम, २३ फरवरी, १९४२

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १-३-१९४२

४२४. पत्र : राममनोहर लोहियाको[2]

२३ फरवरी, १९४२

प्रिय राममनोहर,

तुम्हारा पत्र[3] मिला। "खुला" शब्द किस हदतक लागू किया जा सकता है? कोई कैसे मान सकता है कि दुश्मनोके कब्जेमे पडा शहर खुला शहर है? जापान के मुताबिक हिन्दुस्तान एक शत्रु देश है। यदि जापान टोकियोको खुला नगर घोषित कर दे तो क्या अग्रेज उसे वख्श देगे? आजकल शत्रुओका भरोसा करना वहुत कठिन है। अगर तुम सहमत न हो तो आकर मुझे कायल करो। अगर तुम नहीं आये तो मैं क्या समझूँगा?

[अग्रेजीसे]

क्विट इंडिया मूवमेंट, पृ० ३७२

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. मूल पत्र हिन्दीमें था, किन्तु वह उपलब्ध नहीं है। इसलिए उपलब्ध अग्रेजी रूपान्तरसे पुनर्नूदित करके दिया गया है।

३. राममनोहर लोहिया कलकत्ता, वम्वई आदि बड़े नगरोंके "खुले नगर" घोषित किये जाने के लिए आन्दोलन छेड़ना चाहते थे, जिसके लिए उन्होंने गाधीजी का समर्थन माँगा था।

४२५. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम
२३ फरवरी, १९४२

भाई वल्लभभाई,

महादेव गहरी चपेट खा गया है। कल सात दिनके लिए घनश्यामदासके साथ नासिकके लिए रवाना हुआ, किन्तु स्टेशन जाते हुए चक्कर आने लगे। इसलिए उसने न जाने का शुभ निश्चय किया और सिविल सर्जनके पास चला गया। वहाँ थोडा-सा उपचार कराकर घर चला आया। अभी तो ठीक है। रक्तचाप विलकुल सामान्य हो गया है। परन्तु मरते-मरते बचा है। इससे लगता है कि उसे पूरी तरह आराम करने की जरूरत है। चिन्ता मत करना। नरहरिका जो हाल हुआ था वही इसका हुआ है। ठीक तो हो ही जायेगा।

तुम्हारा क्या हाल है?

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

यदि पृथ्वीसिंह तुम्हारे पास आयें तो उन्हें समय देना।

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २९८

४२६. पत्र : नारणदास गांधीको

२३ फरवरी, १९४२

चि० नारणदास,

तुम्हारे सभी पत्र मिले। मैंने वीणावहनको कल नरहरिके साथ रवाना कर दिया। वह उसे तुम्हारे पास पहुँचा देगा। मुझे आशा तो है कि वह अच्छी निकलेगी। यदि वह अच्छी तरह काम करेगी तो उसका कुछ वेतन बाँध दिया जायेगा। प्यारेलाल की माँको पैसे तो भेजे ही जाने चाहिए। या क्या उनके लिए यह आवश्यक है कि वे पैसा माँगें? मैं इस बारेमें कुछ नहीं जानता। तुमने खादीका पैसा दे दिया, यह समझा। अब खादी-कार्य तुम्हारे हाथमें है, यह माना जाये या उसे तुम्हारे हाथसे निकल गया समझा जाये? आशा है, जमना ठीक होगी।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८५९९ से भी, सौजन्य : नारणदास गांधी

४२७. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

२३ फरवरी, १९४२

भाई जीवणजी,

महादेव झटका खा गया है। मौत टल गई। रक्तचाप तो कम हो गया है, लेकिन कल जो चक्कर आये उनसे मालूम होता है कि उसे खासा आराम लेना चाहिए। यों चिन्ताका कोई कारण नहीं है। मुझे जरा ज्यादा बोझ उठाना पड़ेगा; लेकिन क्योंकि तुम्हारा काम अत्यन्त सुव्यवस्थित है, इसलिए मुझे भय नहीं है।

मुझे आँकड़े भेजते रहना। यदि कुछ पूछने की जरूरत हो तो पूछना।

इस हफ्तेका ब्रिटिश हिस्ट्री[1] (ब्रिटेनका इतिहास) वाला लेख अगले हफ्तेके लिए रोक सकते हो।

उर्दूके बारेमें तुम्हारे जवाबकी राह देखूँगा। यदि यह काम किया जा सके, तो बहुत अच्छा हो।[2]

अंग्रेजीका गुजरातीमें अनुवाद करनेका बोझ तो अब विशेषत: चन्द्रशंकरपर[3] पड़ेगा। उसे अपनी तबीयतका ध्यान रखना चाहिए।

काशिनाथका[4] बोझ तो बढ़ेगा नहीं। देखना, सब खूब अच्छे ढंगसे निबट जाये। मैं तो कुछ भी फिरसे नहीं देख सकता। वैसे देखनेकी इच्छा तो रहती ही है, लेकिन समय कहाँ है? जितनी शक्ति सचित कर पाता हूँ, करता हूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४७ तथा ९९५३) से। सी० डब्ल्यू० ६९२२ से भी; सौजन्य : जीवणजी डा० देसाई

१. महादेव देसाईका लेख "ए पीप इन टु ब्रिटिश हिस्ट्री" (ब्रिटेनके इतिहासकी एक झाँकी), जो ८-३-१९४२ के हरिजनमें प्रकाशित हुआ था।

२. इसके बादका अंश जी० एन० ९९५३ से लिया गया है।

३. चन्द्रशंकर प्राणशंकर शुक्ल

४. काशिनाथ त्रिवेदी

४२८. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

२३ फरवरी, १९४२

चि० जवाहरलाल,

अब तो तुमको कुछ फुरसत होगी। स्टेटस पीपलके दफ्तरका क्या करना है? अखबारका?[1] क्या करना है? पट्टाभी लिखते हैं वे मसलीपट्टमसे अखबार निकाल सकते हैं। उनका खत इसके साथ है। डा० मेनन यहां है। मन्त्रीपद बलवतराय नहीं ले सकते हैं। न जयनारायण व्यास ले सकते हैं। रंगीलदास है। बापा पसंद नहीं करते हैं। अगर यहां ही दफ्तर रखना है तो चल तो सकता है। पैसेकी बात सोचना होगा।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

मेरे अक्षर पढने में मुश्केली नहीं होती होगी।

मूल पत्रसे : गांधी-नेहरू पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४२९. पत्र : हमीदुल्ला अफसरको

२३ फरवरी, १९४२

भाई साहब,

आपका खत मिला है। मेरा लेख दुबारा पढे। आप देखेंगे कि आपके सब सवालोंके जवाब मैंने दिये हैं।

आपका,
मो० क० गांधी

उर्दूकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. स्टेट्स पीपुल

४३०. प्रश्नोत्तर

धनवान व गरीब

प्र०: धर्ममय उपायोंसे लाखों रुपये कैसे कमाये जा सकते हैं?[1] वणिक शिरोमणि स्व० श्री जमनालालजी कहा करते थे कि धन कमाने में पाप तो होता ही है। धनिक कितना ही सज्जन क्यों न हो, वह अपने कमाये धनको अपनी असली जरूरत से कुछ अधिक तो खर्च कर ही डालता है। यह भी पाप है। इसलिए ट्रस्टी बनने की बात छोड़कर धनवान न बनने पर ही जोर क्यों न दिया जाये?

उ० प्रश्न अच्छा है। इससे पहले भी यह पूछा जा चुका है।[2] जमनालालजी ने जो यह कहा कि धन कमाने मे पाप तो है ही, सो ठीक वैसी ही बात है जैसी 'गीता' में कही गई है कि आरम्भ-मात्र दोषपूर्ण हैं। मेरा यह विश्वास है कि जान-बूझकर पाप न करते हुए भी धन कमाया जा सकता है। उदाहरणके लिए, अगर मुझे अपनी एक एकड जमीनमें सोनेकी कोई खान मिल जाये, तो मैं धनवान बन जाऊँगा। मगर धनवान न बनने पर तो मेरा जोर है ही। मैंने जो धन कमाना छोड दिया, उसका मतलब ही यह है कि मैं दूसरोसे भी छुड़ाना चाहता हूँ। लेकिन जो धनकी आशा छोड़ना नही चाहते, उनसे मैं क्या कहूँ? उन्हें तो मैं यही कह सकता हूँ कि वे अपने धनका उपयोग सेवाके लिए करे। यह भी ठीक है कि धनवान अपने भरसक कोशिश करने पर भी अकसर अपने गरीब साथियोंके मुकाबले कुछ ज्यादा ही खर्च कर डालेगा। लेकिन यह कोई नियम नही। आम तौरपर स्व० जमनालालजी मध्यम श्रेणीके अनेक लोगोकी और अपने साथियोकी तुलनामें कम ही खर्च करते थे। मैंने ऐसे सैकडो धनवानोको देखा है जो अपने लिए बडे कजूस होते हैं। वे जैसे-तैसे अपना गुजारा करते है। यह भी नही कि इसमे वे किसी तरहका गौरव अनुभव करते हो। अपने ऊपर कम खर्च करने का उनका एक स्वभाव ही बन जाता है।

धनवानोंके लडकोके बारेमे भी मुझे यही कहना है। मेरा आदर्श तो यह है कि धनवान लोग अपनी सन्तानके लिए धनके रूपमें कुछ न छोडे। हाँ, उनको अच्छी शिक्षा दें, रोजगार-धन्धेके लिए तैयार करे और स्वावलम्बी बना दें। मगर दु:ख तो यह है कि वे ऐसा नही करते। उनके लडके-वाले पढते तो हैं, गरीबीकी महिमा भी गाते हैं, लेकिन अपने लिए वे अधिकसे-अधिक धन चाहते है। ऐसी हालतमें मैं अपनी व्यावहारिक बुद्धिका उपयोग करके उन्हे वही सलाह देता हूँ जो उनके बस

१. देखिए "एक दुःखद प्रसंग", पृ० २८४-८६; तथा "बातचीत: बजाज-परिवारसे", पृ० ३४३-४४ भी।

२. देखिए "अशुद्ध ही नहीं" पृ० ३२४-२५।

की होती है। हम लोगोंको, जो गरीबीको पसन्द करते हैं, उसे धर्म मानते हैं और आर्थिक समानताके हामी हैं, धनवानोंका द्वेष न करना चाहिए।[1] यदि वे अपने धनका सदुपयोग करते हैं तो उनसे हमें सन्तोष होना चाहिए। साथ ही, हमें यह श्रद्धा रखनी चाहिए कि अगर हम अपनी गरीबीमें सुखी और आनन्दित रहेंगे, तो धनवान लोग भी हमारी नकल करेंगे। सच तो यह है कि गरीबीमें धर्मका दर्शन करनेवाले और मिलने पर भी धनका त्याग करनेवाले तो इने-गिने ही पाये जाते हैं। इसलिए हमें अपने जीवन द्वारा यह सिद्ध करके दिखाना होगा कि असलमें धर्मके रूपमें स्वीकार की गई गरीबी ही सच्ची सम्पत्ति है।

संचालकका धर्म

प्र० : एक संचालक अपनी संस्थाके साधारण सेवकोंसे अधिकसे-अधिक त्यागकी अपेक्षा रखता है, मगर खुद, अपने कमाये धनसे ही क्यों न हो, अपने साथियोंके मुकाबले कहीं ज्यादा आरामसे रहता है, तो क्या आपकी रायमें उसका यह व्यवहार ठीक है?

उ० जो संचालक अपने साथियोंसे अपने त्यागसे भी अधिक त्यागकी आशा रखता है, उसके सब प्रयत्न निष्फल होते हैं, इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं। यह कथन सिर्फ उन परोपकारी संस्थाओंके लिए है जिनके संचालक स्वयं त्यागी होते हैं।

वैयक्तिक गोपालनमें हिंसा क्यों?

प्र० : आपने लिखा है कि वैयक्तिक गोपालनमें हिंसा है और सामुदायिकमें अहिंसा — इसे जरा और स्पष्ट करके समझाइए।

उ० यह तो एक स्वयंसिद्ध-सी बात है कि वैयक्तिक गोपालन में हिंसा है, क्योंकि व्यक्तिगत गोपालनकी प्रथाके कारण ही आज गाय बोझ-रूप बन गई है। मैं यह कह चुका हूँ कि वैयक्तिक गोपालनमें गाय की अच्छी देख-भाल हो ही नहीं सकती।[1] हर आदमी न तो अपना सांड रख सकता है, और न किफायतसे दूध-घी बेच सकता है। अगर एक-एक आदमी अपनी चिट्ठी अपने ही खर्च और प्रबन्धसे भेजना चाहे, तो करोड़ोंके लिए यह एक नामुमकिन बात ही रहेगी। यही हाल गोपालनका है। सार्वजनिक डाकघरके जरिये क्या अमीर और क्या गरीब सभी समान रूपसे अपनी चिट्ठियाँ भेज सकते हैं। इसी तरह अगर गोपालनको सफल होना है, तो वह सहयोगके सहारे ही सफल हो सकेगा। हर आदमी अपने-आपमें गायका मालिक बनकर अकेला गोसेवा या गोपूजा नहीं कर सकता। यह कार्य तो सब मिलकर ही कर सकते हैं। मालिक तो मेरा एक ही हो सकता है, मगर सेवा तो मेरी हजारों कर सकते हैं। अगर एक ही आदमी मेरी सेवाका अधिकार लेकर बैठ जाये, तो सोचिए, मेरी क्या दशा होगी? ठीक वही दशा आज गायकी हो रही है।

१. देखिए "वैयक्तिक या सामुदायिक", पृ० ३२६-२७।

तनसे कैसे?

प्र० : आप कहते है, हमें जमनालालजी की विविध प्रवृत्तियोंकी सेवा तन-मन और घनसे करनी चाहिए। धनकी बात मैं समझता हूँ। मनसे भी कुछ समझमें आता है, लेकिन तनसे कैसे?

उ० : सवाल कुछ अजीब-सा है, लेकिन जितना अजीब दिखाई पड़ता है, दर-असल उतना अजीब है नही। 'अ' का मन कहता है. चलो गोसेवा या खादीके काममे तनसे मदद करो। 'अ'के पास घन तो है नही। उसे अपने गुजारेके लिए कुछ काम-धन्धा भी करना है, ऐसी दशामे वह तनसे सेवा कैसे करे? जब उसे अपने काम-धन्धेसे फुरसत मिले, वह लोगोके घर जाकर उन्हे सदस्य बना सकता है। गोसेवा और खादी-सम्बन्धी साहित्य बेच सकता है। प्रचारार्थ निकलनेवाली पत्रिकाओको सेवा-भावसे घर-घर पहुँचा सकता है। गायका शुद्ध घी या अहिंसक चप्पल या खादी बेच सकता है। अगर सर्वस्व देकर सेवा करना चाहता है, तो सिर्फ निर्वाह-मात्रका खर्च लेकर इन सघोकी सेवामें अपना सारा समय दे सकता है।

सेवाग्राम, २४ फरवरी, १९४२

हरिजन-सेवक, १-३-१९४२

४३१. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम
२५ फरवरी, १९४२

भाई वल्लभभाई,

महादेवके नाम लिखे तुम्हारे पत्रका उत्तर मुझे देना चाहिए। उसे अब कोई डर नही है, किन्तु उसने काम तो बिलकुल बन्द कर दिया है और कुछ समयतक बन्द रहेगा।

च्याग काई-शेकके बारेमे तो तुम 'हरिजन' में पढोगे ही। वे खाली हाथ आये और खाली हाथ गये। उन्होने हँसी-मजाक किया और कराया। किन्तु मैं यह नही कह सकता कि मैंने उनसे कुछ सीखा। सीखने को तो था ही क्या? उनका एक ही कहना था· "चाहे जो हो, अंग्रेजोकी मदद करो। औरोकी अपेक्षा वे अच्छे हैं और अब तो और भी अच्छे हो जायेंगे।"

यहाँ तो मित्रोका सम्मेलन था। यदि तुम आ सके होते तो बहुत ही अच्छा होता। सब प्रेमपूर्वक मिले। जमनालालजी के कार्य-कलापके बारेमें विस्तारसे चर्चा हुई। कामकी कुछ रूपरेखा तैयार की गई। घनश्यामदासने प्रमुख रूपसे भाग लिया। जानकीबहन [गोसेवा सघकी] अध्यक्ष बनी।

तुम्हारी खुराकमे रोटी तो मै अपनी देख-रेखमें देना चाहूँगा। तुम पपीता ले सकते हो और खजूरकी मात्रा बढा सकते हो, केलोके बारेमें मुझे डर है। किन्तु

खूब पके हुए अच्छी तरह मसलकर लेकर देखो। कैलोरी बढ़ाने में तो कोई हर्ज नहीं हो सकता। क्या इतनेसे सन्तोष हो जायेगा?

इन्दुलालका[1] पत्र मुझे जरा भी अच्छा नहीं लगा। क्या उन्हें इस तरह नहीं लिखा जा सकता 'आप इतने अस्थिर रहे हैं कि यह नहीं कहा जा सकता कि आपपर कब विश्वास किया जाये। इसलिए अच्छा यही है कि आप कांग्रेससे या मुझसे अलग रहकर ही काम करें। यदि आपके कामसे कांग्रेसको बल मिला तो संघर्ष होगा ही नहीं। मेरे स्पष्ट लिखने से आपको दुःख नहीं होना चाहिए।'

राजा कल चले गये और राजेन्द्र बाबू आज जा रहे हैं। वे कलकत्तामें मौलाना से मिलते हुए पटना जायेंगे। हमने हिन्दुस्तानी [तालीमी] संघके बारेमें बातें कीं। उर्दू सीख लेना।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ सरदार वल्लभभाईने, पृ० २६८-७०

४३२. पत्र : हरिभाऊ उपाध्यायको

२५ फरवरी, १९४२

भाई हरिभाऊजी,

आपका लम्बा पत्र कल शाम पू० बापूजी को मिला।

महादेव भाईकी तबीयत खराब हो गई है इसलिए वे कोटा नहीं जा सकेंगे। उन्हें तो पूरा-पूरा आराम काफी समयके लिए चाहिए और श्री जानकीबहिन भी अब नहीं आ सकेंगी। उन्हें हाल तो कहीं बाहर जाना ही नहीं। अब कोटेके लिए क्या किया जाये? पू० बापू कहते हैं कि अगर आप डा० काटजूको[2] निमंत्रण दें तो शायद वे स्वीकार कर लेंगे। और तो इस समय कोई उनके मनमें नहीं। दादा धर्माधिकारीने मराठी 'हरिजन'का बोझ उठा लिया है इस कारण वे कहीं बाहर भी नहीं जाना चाहते।

ॐकारनाथजी अपनी माताजी से नहीं मिल सके यह सुनकर पू० बापूको दुःख हुआ। . . .[3]

आपकी,
अमृतकौर

मूल पत्रसे : हरिभाऊ उपाध्याय पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. इन्दुलाल याज्ञिक
२. कैलाशनाथ काटजू
३. इसके बादका अंश गांधीजी के सन्देशसे सम्बद्ध न होने के कारण यहाँ नहीं दिया गया।

४३३. पत्र : पुरुषोत्तमदास टंडनको

२५ फरवरी, १९४२

भाई टंडनजी,

आपका पत्र मिला। जमनालालजी के देहान्त बाद मैंने मित्र-मंडलको बुलाये थे, उसमे राजेंद्र बाबु, राजाजी, काकासाहेब, भाई सत्यनारायण और भाई श्रीमन् थे। उनसे मैंने हिन्दुस्तानी प्रचार सभा बनाने के बारेमे चर्चा की। राजाजी ने सलाह दी और दूसरोंने स्वीकार किया कि आपको मै विस्तारसे लिखू। मजकूर सभा दोनो रूपको एक साथ चलायेगी, पुस्तक बनाकर बेचेगी, परीक्षाए लेगी इत्यादि। ऐसी सभाके सदस्य क्या राष्ट्रभाषा समिति, जो वर्धामें काम कर रही है, उसका भी काम कर सकते है? वे सिर्फ हिन्दीको राष्ट्रभाषा कैसे कह सकते है? अगर राष्ट्रभाषा = हिन्दी + उर्दू है तो हिंदी या उर्दू राष्ट्रभाषाका एक अंग कहा जाय। लेकिन राष्ट्र-भाषा न कहा जाय। आपके अबोहरके प्रस्तावकी ध्वनि यह नही है कि हिन्दी ही राष्ट्रभाषा मानी जाय, उर्दू नही? यदि यह अर्थ सही है तो क्या बेहतर यह नही होगा कि हिंदुस्तानी प्रचारवाले हिंदी साहित्य सम्मेलनसे अलग हो जाय? कैसे भी हो हम सबका अभिप्राय है कि इस प्रश्नकी चर्चा स्थायी समिति तटस्थ भावसे करे और निर्णय करे।

आपका,

मो० क० गांधी

पत्रकी नकलसे राजेन्द्र प्रसाद पेपर्स। फाइल न० १-एच/४२। सौजन्य राष्ट्रीय अभिलेखागार

४३४. सन्देश : 'मराठी हरिजन' को

सेवाग्राम

२६ फरवरी, १९४२

'मराठी हरिजन' निकलने से मुझे बडा आनद होता है। आशा है कि महा-राष्ट्री समाज उसकी कदर करेगा।

मो० क० गांधी

मराठी हरिजन, १-३-१९४२

४३५. पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको

२६ फरवरी, १९४२

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

आपके कृपा-पत्रके[1] लिए और आपके ध्यानमें लाई गई अखिल भारतीय चरखा सघकी समस्याके[2] वारेमें आपने जितना-कुछ किया उसके लिए आपको कोटिश धन्य-वाद। आपके फैसलेसे मेरी वर्त्तमान कठिनाई सहज ही दूर हो गई है।

जो निराशाका वातावरण छाया हुआ है, वह आपके पत्रके पुनश्चवाले अशसे दूर हो जाता है। कितना अच्छा हो कि आम जनताको भी यह वताया जा सके कि आपकी प्रसन्नचित्त रहने की वृत्ति कभी आपका साथ नही छोडती। ईश्वर सदा आपका साथ दे।

भवदीय,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
द ट्रान्सफर ऑफ पॉवर, जिल्द १, पृ० २५४

४३६. पत्र : मोतीलाल रायको

२६ फरवरी, १९४२

प्रिय मोती वावू,

वारीसालसे एक शिकायत मिली है कि प्रवर्तक सघ[3] एक अप्रमाणित खादी मण्डार खोल रहा है और अखिल भारतीय चरखा सघने जो प्रमाण-पत्र जारी करने की पद्धति चला रखी है उसके खिलाफ प्रचार किया जा रहा है, यह क्या है?

मुझे यह भी मालूम हुआ है कि रुक्के अभीतक भेजे नही गये है। निश्चय ही यह सब तुम्हारी शिक्षाकी भावनाके विरुद्ध है।

आशा है तुम स्वस्थ होगे।

स्नेह।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ११०५६) से

१. देखिए परिशिष्ट ५।
२. देखिए "पत्र : लॉर्ड लिनलिथगोको", पृ० ३२८-२९।
३. कलकत्ताका प्रवर्तक संघ

४३७. पत्र : सारंगधर दासको

२६ फरवरी, १९४२

प्रिय श्री सारंगधर दास,

बापूजी के कहने पर मैं आपको लिख रही हूँ। आपका २३ तारीखका पत्र मिल गया है। उनकी इच्छा है कि आप अपने अवकाशके समयमें हिन्दी और उर्दू भाषाएँ हिन्दी और उर्दू लिपियोंमें सीखें और उनका कामचलाऊ ज्ञान प्राप्त करें। आपने जो अन्य समाचार दिये हैं, उन्हें उन्होंने ध्यानमें रख लिया है। आपने श्री गोपबन्धुके बारेमें जो लिखा है, उसे भी ध्यानमें रखा जायेगा। बापू उनसे जो-कुछ जरूरी होगा, करने को कहेंगे।

हृदयसे आपकी,
अमृतकौर

अंग्रेजीकी नकल (सी० डब्ल्यू० १०४४५) से। सौजन्य . उड़ीसा सरकार

४३८. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

२६ फरवरी, १९४२

चि० मुन्नालाल,

क्या करूँ? तुम्हारे पत्रका उत्तर इससे पहले दे ही नही पाया। मै तुम्हे कैसे शान्ति दूं? जिसे तुम बन्धन और बोझ मानते हो, उसे मै स्वाधीनता और हलका होना मानता हूँ, तब फिर मेल कैसे बैठे? रास्ता यही रहा कि तुम पत्र लिखकर अपना हिया हलका करो और तब हँसो। और यहाँ मै वह पत्र ध्यान-पूर्वक पढ़ूं। अत्यन्त परिश्रम करके अपनी तबीयत मत बिगाड़ लेना। अपनी शांतिके लिए यदि बाहर जाना जरूरी समझो तो जरूर जाओ। अपनी तबीयतके खयालसे भी जा सकते हो। अपनी तबीयत हर्गिज न बिगडने देना।

कंचनका क्या किया जाये? क्या तुम्हारी इच्छा है कि वह देहरा जाये?

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४७८) से। सी० डब्ल्यू० ७१६५ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गगादास शाह

४३९. पत्र : मंगलदास पकवासाको

२६ फरवरी, १९४२

भाई मंगलदास,

तुम्हारा १६ का पत्र अभी-अभी मेरे हाथमें आया। महादेव तो खटियासे लगा है। कामका बोझ किसे आहत किये बिना छोड़ता है? तुम्हारा प्रौढ़-शिक्षणका प्रयास सफल हो और बम्बईमें कोई निरक्षर न रहे।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

तुम्हारा सब काम-काज अंग्रेजीमें क्यों चलता है?

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० ४६८६)से। सौजन्य : मंगलदास पकवासा

४४०. पत्र : विजया म० पंचोलीको

२६ फरवरी, १९४२

चि० विजया,

यह पत्र मुझे चार दिन पहले लिखना था, लेकिन समय ही नहीं मिला। तेरे कर्तृत्वकी बात अगर वल्लभराम वैद्यने न लिखी होती, तो मुझे मालूम ही न होती। इसमें संकोच कैसा? छिपाने की क्या बात है? जब तेरा विवाह हुआ था, मैंने तो तभी मान लिया था कि नतीजा यही होगा और वही हुआ। जो हुआ वह शुभ ही है। तुम दोनोंकी सच्ची परीक्षा अब होगी। गृहस्थ-धर्मका पालन करते हुए तुम लोग पूर्ण सेवा कर सकते हो या नहीं, यह देखना है। पूर्ण अर्थात् दूनी नहीं, चौगुनी। जब संख्या बढ़ती है, तब शक्ति संख्याके अनुसार नहीं बल्कि संख्याके अनुपात में दूनी अवश्य बढ़ती है, जैसे दोकी चौगुनी, तीनकी छः गुनी। तो यह एक बात हुई।

[दूसरी बात यह है कि] अब तुझे शान्तचित्त होकर पेटमें पड़े बच्चेको पोसना है। बच्चेकी शिक्षा गर्भाधानसे शुरू हो जाती है। तू जो सोचेगी, जो काम करेगी, जो खायेगी उस सबका असर तेरे गर्भपर पड़ेगा, यह समझ ले। डॉ० त्रिभुवनदासकी अत्यन्त पुरानी लेकिन आज भी नई 'माने शीखामण' [माँ को सीख] नामक पुस्तक

प्राप्त करके पढ जाना। नानाभाई ला देंगे। मनुभाईको ऐसी अन्य पुस्तकोकी भी जानकारी होगी। उन्हे भी देख लेना। सारी तैयारी अभीसे कर रखना। अपना शरीर हृष्ट-पुष्ट बना लेना। खानेमे कजूसी मत करना। दूध, घी, फल, कच्चा साग अपनी पाचन-शक्तिके अनुसार खाना। कच्चा साग माफिक न आये तो मत खाना।

बा मजेमे है।

जमनालालजी के न रहने से मेरा बोझ बहुत बढ गया है। लेकिन भगवान् अभी तो शक्ति दे रहे है। अन्यथा मै काम बन्द कर दूँ।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१४५) से। सी० डब्ल्यू० ४६३७ से भी, सौजन्य: विजया म० पचोली

४४१. पत्र: लॉर्ड लिनलिथगोको

२७ फरवरी, १९४२

प्रिय लॉर्ड लिनलिथगो,

मेरी मूर्खता कि मै आपको कल यह लिखना भूल ही गया कि अ० भा० चरखा सघ अपनी प्रवृत्तियाँ कानूनकी मर्यादाके अन्दर और कानूनके अधीन ही चलानेको प्रयत्नशील रहा है। लेकिन मै कानूनी नुक्तेकी इन छोटी-छोटी बातोका जिक्र करके आपको उबाना नही चाहता। आप तो जानते ही है कि किस तरह कानून अक्सर कानूनदाँ लोगोको ही चक्करमे डाल देता है। यह मामला भी वैसा ही है। लेकिन अभी उसके बारेमे अधिक नही।

भवदीय,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]

द ट्रान्सफर ऑफ पॉवर, जिल्द १, पृ० २५५

४४२. पत्र : अ० वि० ठक्करको

२७ फरवरी, १९४२

बापा,

ओखा मेलेमें चार पाखानोंके लिए ३०० रुपयेकी निर्धारित रकममें से खर्च करना। तुम जल्दी क्यों नहीं भेजते?[1]

धर्मप्रकाश-सम्बन्धी लेख पढ़ गया। वियोगी हरिको भेज दिया, यह तो ठीक ही किया। पैसा तो जब उनका हिसाब आये और मैं पास कर दूं तभी दिया जाना चाहिए।

मैंने बालकृष्णको वहाँ भेजा है। ऐसा करके मैंने बिना सोचे-समझे तुमपर भार तो नहीं डाला न? मेरी दृष्टिमें ऐसे लोगोंको रखने में हमें लाभ ही होगा। लेकिन यदि तुम्हारा विचार इससे भिन्न हो तो मैं दुबारा ऐसा नहीं करूँगा। मुझे जो अच्छा लगता है वह सबको अच्छा लगना चाहिए, ऐसा मैं नहीं मानता।

बापू

मूल गुजरातीसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य प्यारेलाल

४४३. पत्र : व्रजकृष्ण चाँदीवालाको

२७ फरवरी, १९४२

चि० व्रजकिशन,

तुमारा खत मिला। तुम्हारे जन्मदिनके आशीर्वाद। मैं क्या करूं? एक नहीं अनेक खत तुमको भेजे हैं। सबको लिखुं और तुमको नहीं, ऐसा कैसे बन सकता है? काफी खत तो महादेवने ही लिखे थे। तुमको क्यों नहीं मिले? वहाके रजस्टरमें तारीख भी है। इसका उत्तर शीघ्र भेजो।

तुमको अनुभव बहूत अच्छा मिल रहा है। तुम्हारी तबीयत अच्छी है इसलिए कुछ चिंता नहीं है।

वहा सब ठीक है। जमनालालजी के देहातमें काफी बोज बढ गया है।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४८६) से

१. साधनसूत्रमें आगेके दोनों अनुच्छेद डैश द्वारा अलग-अलग कर दिये गये हैं।

४४४. अधिक फल खाने का सुझाव

आहार-शास्त्री डॉ० मेकेलने २५ जनवरीके 'हरिजन' मे प्रकाशित मेरे "सच्चा युद्ध-प्रयत्न"[1] शीर्षक लेखपर 'ओरिएटल वाचमैन' मे टिप्पणी की है, जो नीचे दी जा रही है[2]

डॉ० मेकेलने जहाँ मेरी वातोका अनुमोदन किया है वहाँ तो मै उनका आभारी हूँ ही, लेकिन फलोंके वारेमे उन्होने मेरी प्रकट उत्साहहीनतामें जो सुधार किया है वह मुझे और भी ज्यादा पसन्द आया है। मेरे जानते शायद किसीने उतने फल और मेवे नही खाये होगे जितने मैंने खाये हैं। छह सालतक तो मै केवल फलोपर ही रहा हूँ और वैसे भी मेरे सामान्य आहारमे फल वरावर प्रचुर मात्रामे शामिल रहे हैं। लेकिन वह लेख लिखते समय मेरे मनमें भारतकी विशेष परिस्थितियोका ध्यान था। यह देश जितना वडा है और इसमे जितनी अलग-अलग किस्म की आवोहवा मिलती है उसको देखते हुए यहाँके लोगोको अपने आहारमें प्रचुर मात्रा में दूध, फल और सब्जियाँ सुलभ होनी चाहिए थी। लेकिन वास्तविकता यह है कि इस दृष्टिसे यह दुनियाका सवसे दरिद्र देश है। इसलिए जो वात मुझे व्यावहारिक लगी उसीका सुझाव मैंने दिया। लेकिन मै इस सुझावका हृदयसे अनुमोदन करता हूँ कि स्वास्थ्य-रक्षाके लिए यह जरूरी है कि ताजे फल और ताजी सब्जियाँ हमारे आहारका मुख्य अग हो। भारतकी विशेष परिस्थितियोका अध्ययन करके ऐसे फलो और सब्जियोके नाम वताना जो स्थानीय उपयोगके लिए गाँवोमे आसानीसे और कम खर्चमे पैदा की जाती है या की जा सकती है, यह तो चिकित्सा-शास्त्रियोका काम है। ऐसे फलोका एक उदाहरण जगली वेर है, जो प्रचुर मात्रामे यहाँ उगते और फलते है। उन्हे वेचने के लिए वाजारोमें भले ही न ले जाया जा सके, लेकिन तोड़-वीनकर प्राप्त तो किया ही जा सकता है। यह शोधका एक विस्तृत क्षेत्र है। इसमें हो सकता है कि शोधकर्ताको न तो पैसा मिले और न प्रसिद्धि। लेकिन उन्हे करोडो मूक मानवोकी कृतज्ञता अवश्य मिलेगी।

सेवाग्राम, २८ फरवरी, १९४२

[अग्रेजीसे]
हरिजन, १५-३-१९४२

१. देखिए पृ० २५८-६१।
२. यहाँ नही दी जा रही है।

४४५. पत्र : नारणदास गांधीको

सेवाग्राम
२८ फरवरी, १९४२

चि० नारणदास

जमनाको बुखार क्यों आता है? क्या तुम्हें कनैयोकी जरूरत है? मैंने उसे पृथ्वीसिंहकी अपेक्षा अधिक बलिष्ठ शरीरवाला बनने की कला सीखने के लिए भेजा है। वह दो सप्ताहके लिए गया है। किन्तु यदि तुम्हें [जमनाकी] सेवाके लिए उसकी जरूरत हो तो उसे बुला लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२/८८९) से। सी० डब्ल्यू० ८६०० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४४६. पत्र : जमना गांधीको

[२८ फरवरी, १९४२][1]

चि० जमना,

बुखार क्यों आता है? हर तरहकी चिन्ता छोड़ना। जब भी यहाँ आना हो आ जाना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८६०० से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

१. नारणदास गांधीको लिखे इसी तारीखके पत्रके नीचे ये पंक्तियाँ लिखी हुई हैं।

४४७. पत्र : देवदास गांधीको

२८ फरवरी, १९४२

चि० देवदास,

तेरा पत्र मिला। क्या तुझे लगा कि मैंने वह सब तेरा दोष दिखाने के लिए लिखा है?[1] मेरी इच्छा तो ऐसी नही थी। मैंने तुझे सावधान जरूर किया था। लेकिन तू अपनी शक्ति तथा मान्यताके अनुसार ही कार्य कर सकता है, यह मुझे सर्वथा मान्य है।

तुम्हारे मडलके अस्तित्वके कारण समाचार-पत्र कुछ कर सके है, यह मै मानता हूँ, लेकिन कर सके बहुत थोडा। समाचार-पत्रोको सच्ची स्वतन्त्रता नही है। लेकिन जितनी है, वह छोड देने लायक नही है, यह भी मै मानता हूँ।

तूने मणिलालको तार देकर अच्छा किया। मैंने तार नही किया। करने का इरादा भी नही था।

बा की तबीयत आजकल तो बहुत अच्छी रहती है। महादेव अच्छा है, लेकिन उसे काफी आराम तो लेना ही पड़ेगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च :]

बालकृष्णके[2] समाचार लेता रहना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० २१४९) से

४४८. पत्र : मणिलाल और सुशीला गांधीको

२८ फरवरी, १९४२

चि० मणिलाल और सुशीला,

नानाभाईके[3] बारेमें तुम लोगोको तार भेजा गया था, यह तो मुझे आज ही मालूम हुआ। किशोरलाल भाई यहाँ आ गये है। दोनो थोड़े दुबले जरूर हो गये

१. देखिए "पत्र: देवदास गाधीको", पृ० ३४९-५०।

२. लगता है कि गाधीजी "ब्रजकृष्ण" के स्थानपर भूलसे "बालकृष्ण" लिख गये।

३. सुशीला गाधीके पिता नानाभाई इ० मशरूवालाका देहावसान हो गया था।

है। लेकिन दोनो ज्ञानवान् है, इसलिए अपना दुख पी गये है। अन्य लोगोने भी अपने कुटुम्बको शोभान्वित करनेवाला व्यवहार ही किया है। विजयावहनने[1] वहुत हिम्मतसे काम लिया। वह यहाँ आयेगी। मेरी रायमे अव उसे यही रहना चाहिए। इस पत्रको इस प्रकार लिखकर मै तुम्हें आश्वासन देने के वदले तुम्हें तुम्हारा धर्म सुझा रहा हूँ। जमनालालजी के सम्बन्धमे भी मैने तो स्वय यही किया और दूसरोको भी सुझाया कि रोने के वदले हम मरनेवाले प्रियजनके गुणोका स्मरण करके उन्हें अपनेमें उतारे, जिससे यह कहा जा सके कि वे अभी भी हममें जी रहे है। क्या मैने यह नही कहा कि तात्त्विक दृष्टिसे प्रत्येक आत्मा अमर है? तुम तो जैसा मै कह रहा हूँ वैसा करोगे ही, यह मै माने लेता हूँ।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ४९२७) से

४४९. पत्र : कान्ति गांधीको

सेवाग्राम
२८ फरवरी, १९४२

चि० कान्ति,

हम सब सरस्वतीके[2] आने की वाट जोह रहे थे कि हमें उसकी वीमारीका पत्र मिला। वहाँ जाने के वदले यदि वह यहाँ आती तो भी उसका इलाज तो होता। लेकिन जो तुझे ठीक लगे वही तो होना चाहिए न? यहाँ सव कुशल है। महादेव जरूर थोडा कमजोर हो गया है।

वापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे छगनलाल गाधी पेपर्स। सौजन्य : गाधी स्मारक सग्रहालय, अहमदावाद

1. नानाभाई इ० मशरूवालाकी पत्नी
2. कान्ति गाधीकी पत्नी

४५०. बातचीत : महिला आश्रमकी सदस्याओंसे[१]

सेवाग्राम

[१ मार्च, १९४२ के पूर्व][२]

खास तौरसे महिला आश्रमकी सदस्याएँ उनकी बड़ी ऋणी और आभारी है। अब वे उस ऋणको किस तरह चुकायेंगी? निरर्थक आँसुओंसे वह चुकनेवाला नहीं है। सेवा ही उनको अर्पित की गई सबसे अच्छी स्मरणांजलि है।

आत्मा अमर है। मरता तोकेवल शरीर है। लेकिन ऐसे विरले ही होते है जो जमनालालजी की तरह मरकर भी लोगोके हृदय-मन्दिरमे प्रतिष्ठित और जीवित रहते है। महिला आश्रमकी छात्राओ और यहाँके कर्मचारी-वर्गको वर्धाको एक आदर्श शहर बनाने के लिए सम्पूर्ण मन-प्राणसे प्रयत्न करना चाहिए। इसकी सफाई करे, यहाँसे अशिक्षाको दूर करे, खादीके सन्देशका प्रचार करे, अस्पृश्यताको दूर करे और स्त्रियोकी सेवा करे। फिर आप सब गोसेवा सघकी सदस्या बन सकती है और दूसरोको भी सदस्या बना सकती हैं। प्रतिज्ञा कोई कठोर नही है और अगर आप गायसे प्रेम करती हैं तो खुशी-खुशी उसपर अपने हस्ताक्षर करेगी। और फिर उर्दूका भी सवाल है, जो काफी महत्त्वपूर्ण है। आपमे से हर एकको उर्दू लिपि सीखना शुरू कर देना चाहिए। जो हिन्दी और उर्दू दोनो जानते है वही दोनोके मिश्रणसे मेरे सपनोकी भाषा हिन्दुस्तानीकी रचना कर पायेगे, जिसे एक दिन निश्चय ही राष्ट्रभाषा बनना है।

जमनालालजी ने महिला मण्डलकी स्थापना महिला कार्यकर्त्रियाँ तैयार करने के लिए की थी। आपमे से हरएक कमसे-कम इतना तो कर ही सकती है कि उनकी सेवा-वृत्तिको आत्मसात् कर ले और जब जीवनके वृहत्तर क्षेत्रमे प्रवेश करे तो इस वृत्तिको अपने साथ अपने एक हथियारकी तरह ले जाये। आपमें से अधिकांश विवाह-सूत्रमे बँधेगी। यह स्वाभाविक चीज है। मै अकसर जमनालालजी से मजाक करते हुए कहा करता था कि आप तो विवाहोके पंजीयक है। कारण यह था कि वे बराबर विवाह-सम्बन्ध तय करते रहते थे। हमारे यहाँकी कुछ लडकियाँ अविवाहित रहकर अपनेसे कम भाग्यशाली बहनोकी सेवा करे, इसके लिए जितना उत्सुक मैं हूँ, उससे कुछ कम वे नही थे। लेकिन ऐसी महिलाएँ कम ही होती है। जो भी हो, मै आपसे सेवाकी अपेक्षा रखूँगा। शादी करने के बाद तो आप एकसे दो हो जायेगी और तब आपको चौगुनी सेवा करनी पडेगी। यदि विवाहित जीवन ठीकसे और

१ और २. अमृतकौरके १ मार्च, १९४० के "जमनालालजी ऐंड वीमन" (जमनालालजी और नारी-जगत) शीर्षक लेखसे उद्धृत। महिला आश्रमकी सदस्याएँ सान्ध्यकालीन प्रार्थनामें शामिल हुईं और उन्होंने जमनालाल बजाजकी स्मृतिमें यज्ञार्थ काता गया अपना-अपना सूत भेंट किया।

सच्चे अर्थोंमें जिया जाये और उसे वासना-तृप्तिका साधन न माना जाये तो कई अर्थोंमें वह कौमार्यसे भी अधिक कठिन होता है।

जमनालालजी अद्भुत पुरुष थे। उन्होंने सेवाके लिए ही शरीर धारण किया था — सबकी सेवाके लिए। उन्होंने जो भी किया, पूरे मनसे किया। उनकी श्रमशीलता आश्चर्यजनक थी। उधर तो वे उस गायकी सेवा भी करने लगे थे जो उन्हें दूध देती थी। ऐसी थी उनकी कर्त्तव्यके सम्यक् निर्वाहकी वृत्ति। कर्त्तव्य-क्षेत्रमें आरूढ रहते हुए ही उन्होंने मृत्यु पाई। वे ऐसी ही मृत्युकी कामना भी करते। हर आदमी उनके हर गुणका अनुकरण नहीं कर सकता, लेकिन जिस व्यक्तिने आपके लिए इतना अधिक किया, यदि आप उससे प्रेम करती थीं और उसे प्रशंसामय दृष्टिसे देखती थीं तो उसके जीवनसे आपको कम-से-कम एक सबक तो लेना ही चाहिए। आप कठिन श्रम करें और अपनेको नारीत्वके उन उच्चादर्शोंकी प्राप्तिके निमित्त अर्पित कर दें जो उन्होंने आपके सामने रखे थे।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-३-१९४२

४५१. लज्जाजनक[1]

पंजाबके समाचारपत्रोंमें ऐसी खबर छपी है कि रातके ११ बजे जब सर्वेन्ट्स ऑफ पीपुल सोसाइटीके पण्डित सुन्दरलाल और लाला जगन्नाथ लाजपतराय भवन जा रहे थे तभी चार हिन्दू नौजवानोंने जान-बूझकर, बिना किसी कारणके उनपर हमला कर दिया। कहते हैं, यह हमला इसलिए किया गया कि पण्डित सुन्दरलालने लाहौरमें हिन्दू-मुस्लिम सवालपर भाषण दिये थे, जिनमें उन्होंने प्रयत्नपूर्वक ऐसी भाषाका प्रयोग नहीं होने दिया था जिससे किसीका दिल दुखे। अगर किसी उत्तेजनाके वशीभूत होकर कोई किसीपर हमला करे तो उसे समझा जा सकता है, यद्यपि क्षम्य वह भी नहीं हो सकता। लेकिन जिस तरह पण्डित सुन्दरलालपर हमला किया गया उसमें ऐसी कोई परिस्थिति नहीं थी जिसके कारण इस अपराधकी गुरुतामें कोई कमी आती हो। बताया जाता है कि ये नौजवान हिन्दू महासभाके सदस्य हैं। मुझे आशा है कि सभाके जिम्मेदार पदाधिकारी इन नौजवानोंके कार्यकी निन्दा करेंगे। ऐसे मामलोंमें लोकमत इतना प्रबल होना चाहिए जिससे इस प्रकारकी गुण्डा-गर्दी न होने पाये। जहाँतक पण्डित सुन्दरलालका सम्बन्ध है, उनके साथ जो बर्बरता-पूर्ण व्यवहार किया गया है उससे उस उद्देश्यको और भी सफलता मिलेगी जिस उद्देश्यको लेकर वे चल रहे हैं — विशेषकर इसलिए भी कि उन्होंने बड़े ही गरिमामय ढंगसे उस घटनाकी उपेक्षा कर दी है और क्षमाशीलताका रुख अपनाया है।

सेवाग्राम, १ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-३-१९४२

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

४५२. पत्र : विट्ठलदास जेराजाणीको

१ मार्च, १९४२

भाई जेराजाणी,

तुम्हारा पत्र और सलग्न नकले मिली। तुम्हारे सुझावोमें सुधार करने-जैसा मुझे कुछ सूझता नही। ऐसा समय भी आ सकता है जब शहरोमें हमें अपना सब कार्यक्रम बन्द करना पडे। अच्छा यह है कि अपने लिए जरूरी कपड़े आज ही खरीद ले। भण्डारोको पेशगी पैसा देने मे मुझे कोई हर्ज नही मालूम होता। लेकिन जाजूजी इस बारेमें क्या कहते है, यह देखना है।

बापूके आशीर्वाद

श्री जेराजाणी
अखिल भारतीय चरखा भडार
३९६, कालबादेवी रोड
बम्बई २

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९८०४) से

४५३. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

१ मार्च, १९४२

चि० मुन्नालाल,

तुम अपने मनके बादशाह हो। मै तुमसे क्या कहूँ? प्रभु जैसा रास्ता दिखाये वैसा करो। हमारा मार्ग-दर्शन करनेवाली दो शक्तियाँ है . आसुरी और दैवी। देखना, कही आसुरी शक्ति तुम्हारा मार्ग-दर्शन न करे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४८०)से। सी० डब्ल्यू० ७१६६ से भी, सौजन्य . मुन्नालाल गगादास शाह

४५४. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम
१ मार्च, १९४२

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा भोजन-सम्बन्धी पत्र जैसे ही मेरे हाथमें आया वैसे ही मैंने उत्तर दे दिया।[1] गुड, ग्लूकोज, मुनक्के और खजूरमे कैलोरी पूरी की जाये। यह आसानीसे पूरी हो जायेगी।

महादेवके बारेमें तनिक भी चिन्ता मत करना। वह आराम कर रहा है और उसे करना चाहिए। वह अच्छी तरह खाता है। बा भी ठीक है। मगनलाल[2] और उनके परिवारके लोग आज आ गये। वह चन्द्रसिंह गढवालीकी पत्नी भी आ गई है। इस तरह फिर अच्छा जमघट हो गया है। किन्तु यह जान लेना कि जब तुम आओगे तब तुम्हें यहाँ निश्चय ही जगह मिल जायेगी। नहाने का टब भी है। क्या कार्य-समितिकी बैठक यहीं होगी?

डाह्याभाईकी लडकी कैसी है?

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो – २ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २७०

४५५. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१ मार्च, १९४२

भाई घनश्यामदास,

महादेवकी चिंता न करे। वह अच्छे हैं। आराम तो देना ही है। मानसिक आरामकी बडी आवश्यकता है। आज तो बहार भेजने की इच्छा नहीं है।

तुम्हारा प्रयोग ठीक चलता होगा। वजन और शक्तिका क्या?

जमनालालजी के बारेमें लिखा था उसका क्या?

बापूके आशीर्वाद

मूल (सी० डब्ल्यू० ८०५३) से। सौजन्य : घनश्यामदास बिडला

१. देखिए "पत्र : वल्लभभाई पटेलको", पृ० ३९४-९५।
२. मगनलाल मेहता

४५६. पत्र: जवाहरलाल नेहरूको

१ मार्च, १९४२

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत कल मिला। मैं उत्तर नहीं देना चाहता था। न अब देना चाहता हूं। आज जो गरमी पड़ रही है उसका ख्याल देता हूं। बहुत सख्त है। मैंने भीगा कपडा सर पे लपेटा है। ऐसी गरमीमें इंदुको इस ओर नहीं आना चाहिये। मेरी तो सलाह है कि दोनों खाल जायं या काश्मीर। जब बारिश शुरू होवे तब सेवाग्राम इ० जगह जायं। लेकिन इंदुकी हिम्मत अगर यहांकी गरमीकी बरदास्त करनेकी है तो मैं तो दोनोंको[1] देखकर खुश ही हूंगा।

एक और बात। सुरुगेदबहनने तुमको लिखा था। वह लिखती है उसके जवाबमें तुमने लिखा है: "मैं तो महात्माके निमंत्रणकी राह देख रहा हूं।" मेरा निमंत्रण क्यों? मेरा निमत्रण तो हमेशा है ही। खास तो कुछ नहीं था कि मैं वहाँ तक आने की तकलीफ दूं। ओपन सिटीकी बात मैं नहीं समजता हूं। इसलिये मैंने कहा अगर मैं कुछ कहूं तो भी पहले तो जवाहरलालकी राय जानना होगा। ऐसी बातोंमें जवाहरलालपर निर्भर रहता हूं।

अब तो जल्दी मिलेंगे ही।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे: गांधी-नेहरू पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४५७. टिप्पणियाँ

इन्दिरा नेहरूकी सगाई

फीरोज गांधीके साथ इन्दिरा नेहरूकी सगाईके सवालको लेकर इधर मेरे पास ढेरों पत्र आये हैं। कई पत्र क्रोध और गालियोंसे भरे हैं और कुछमें दलीलें देने की कोशिश की गई है। एक भी पत्र ऐसा नहीं है जिसमें श्री फीरोज गांधीकी निजी योग्यताके बारेमें कोई शिकायत हो। पत्र-लेखकोंकी दृष्टिमें उनका एकमात्र अपराध

१. इन्दिरा नेहरूकी फीरोज गांधीके साथ २६ फरवरीको सगाई हुई थी।

यही है कि वे पारसी हैं। मैं हमेशासे इस बातका घोर विरोधी रहा हूँ और अब भी हूँ कि स्त्री-पुरुष सिर्फ विवाहके लिए अपना धर्म बदलें। धर्म कोई चादर या दुपट्टा नहीं कि जब चाहा ओढ़ लिया, जब चाहा उतार दिया। इस मामलेमें धर्म बदलने की कोई बात ही नहीं है। फीरोज गांधीका नेहरू-परिवारके साथ बरसों पुराना घनापा है। कमला नेहरूकी बीमारीमें श्री फीरोज गांधीने उनकी तीमारदारी की थी। वे उनके लिए पुत्रवत् थे। यूरोपमें इन्दिराकी बीमारीके वक्त भी उनकी बड़ी मदद रही थी। यहींसे दोनोंमें स्वाभाविक मित्रता पैदा हुई। यह मित्रता संयमवाली रही। उसमें से आपसी चाह पैदा हुई है। मगर दोनोंमें से किसीने यह नहीं चाहा कि वे जवाहरलाल नेहरूकी सम्मति और आशीर्वादके बिना विवाह कर लें। जब जवाहरलालको विश्वास हो गया कि इस आकर्षणकी तहमें स्थिरता है, तभी उन्होंने अपनी स्वीकृति दी। लोग जानते हैं कि नेहरू-परिवारके साथ मेरा कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है। मैंने दोनो पक्षोंसे बातचीत भी की। अगर इस सगाईपर सहमति व्यक्त न की जाती तो यह क्रूरता होती। जैसे-जैसे समय बीतता जायेगा, इस तरहके विवाह बढ़ेंगे, और उनसे समाजको फायदा ही होगा। फिलहाल तो हममें आपसी सहिष्णुताका माद्दा भी पैदा नहीं हुआ है। लेकिन जब सहिष्णुता बढ़कर सर्वधर्म-समभावमें बदल जायेगी तो ऐसे विवाहोंका स्वागत किया जायेगा। आनेवाले समाजकी रचनामें जो धर्म संकुचित रहेगा और बुद्धिकी कसौटीपर खरा नहीं उतरेगा, वह टिक न सकेगा, क्योंकि उस समाजमें मूल्य बदल जायेंगे। मनुष्यकी कीमत उसके चरित्रके कारण होगी, धन, पदवी या कुलके कारण नहीं। मेरी कल्पनाका हिन्दू धर्म कोई संकुचित सम्प्रदाय नहीं है। वह तो कालके समान ही पुरानी महान् और सतत विकासकी एक प्रक्रिया है। उसमें जरथुस्त्र, मूसा, ईसा, मुहम्मद नानक और ऐसे ही दूसरे कई धर्म-संस्थापकोंका समावेश हो जाता है। उसकी व्याख्या इस प्रकार है

विद्वद्भि. सेवित सद्भिर्नित्यमद्वेषरागिभिः।
हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मस्तं निबोधत॥

अर्थात् — जिस धर्मको राग-द्वेषहीन ज्ञानी सन्तोंने अपनाया है, और जिसे हमारा हृदय और बुद्धि भी स्वीकार करती है, वही सद्धर्म है।

जो धर्म ऐसा न रहा, उसका नाश हो जायेगा। मैं अपने पत्र-लेखकोंको अलग-अलग जवाब नहीं दे सका हूँ। इसके लिए वे मुझे क्षमा करें। मैं उनसे निवेदन करता हूँ कि वे गुस्सा छोड़ें और इस भावी विवाहको अपना आशीर्वाद दें। मुझे मिले हुए पत्रोंमें अज्ञान, असहिष्णुता और पूर्वग्रहके भाव टपकते हैं — उनमें एक प्रकारकी ऐसी अस्पृश्यता है जो इस कारण अधिक भयकर है कि उसे आसानीसे अस्पृश्यताकी परिभाषामें बाँधा भी नहीं जा सकता।

सेवाग्राम, [२][1] मार्च, १९४२

१. साधन-सूत्रमें "१-३-१९४२" दिया गया है, लेकिन ४ मार्च, १९४२ को जवाहरलाल नेहरूको लिखे अपने पत्र (देखिए पृ० ४१७-१८) में गांधीजी ने बताया है कि यह टिप्पणी सोमवारको लिखी गई। सोमवार २ मार्चको था।

उर्दूकी शिक्षा

नेकीकी शुरुआत घरसे होती है। [इसकी समानार्थी] अंग्रेजीकी कहावत मुझे उस समय स्मरण हो आई जब मैं जमनालालजी के मित्रोको यह समझा रहा था[1] कि कांग्रेसने जिस राष्ट्रभाषाकी सिफारिश की है उसमे यदि उनका विश्वास है तो उनके लिए उर्दू सीखना जरूरी है। निदान मैंने सेवाग्राममे उर्दूके ज्ञानके प्रचारका नेक काम शुरू कर दिया। लोगोने बडी जल्दी और बहुत अनुकूल प्रतिक्रिया दिखाई। पिछले बुधवार अर्थात् २५ फरवरीको उर्दूकी कक्षा आरम्भ हुई। बूढे-जवान, स्त्री-पुरुष, प्राय सब उस कक्षामे शामिल हो गये। शिक्षकने शिक्षार्थियोमे बहुत ठीक रुचि पैदा कर दी। प्रारम्भिक वर्णमाला तो वे आधे-आधे घटेकी दो बैठकोमे ही सीख गये। इसके छपते-छपते उन्हे वर्णोको जोडने के निशान भी सीख चुके होने चाहिए। वर्णमाला उन्होंने लगभग तीन घटेमे ही सीख ली होगी। मैं एक ऐसे सज्जनको जानता हूँ जिन्होने चार घटेकी एक ही बैठकमे उसे सीख लिया। उर्दू पढ़ना कठिन है, यह तो है ही। उस कठिनाईपर अभ्याससे ही पार पाया जा सकता है। जहाँ चाह वहाँ राह। और देश-प्रेमको निश्चय ही लोगोमे ऐसी चाह जगानी चाहिए।

सेवाग्राम, २ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ८-३-१९४२

४५८. प्रश्नोत्तर

प्रजामण्डल और कांग्रेस

प्र० : देशी राज्योंमें प्रजामण्डल समितियोंके मुकाबले कांग्रेसकी स्थिति स्पष्ट करने की कृपा करें। वहाँ राजनीतिक नीतियोंके लिए जिम्मेदार कौन हो?

उ० प्रजामण्डल तो स्वतन्त्र सस्थाएँ है। इनका कांग्रेससे कोई विधिवत् सम्बन्ध नही है। कांग्रेसकी नीतियोसे प्रेरणा लेना या न लेना उनकी इच्छापर निर्भर है। चूँकि वस्तुस्थिति ऐसी है, इसलिए मैं उनसे अनुरोध करूँगा कि वे अनावश्यक रूपसे कांग्रेससे अपने सम्बन्धका प्रदर्शन करके राज्यके अधिकारियोको नाराज न करे।

स्त्रियाँ

प्र० : आपने नगरोंमें रहनेवाली स्त्रियोंको यह सलाह दी है कि बलात्कारके खतरेसे बचने के लिए वे गाँवोंमें चली जायें;[2] लेकिन क्या आप यह नहीं समझते कि कमसे-कम हममें से कुछको नगरोंमें रहकर इस खतरेका सामना करना चाहिए?

१. देखिए "बातचीत: मित्रोंसे", पृ० ३७६-८३ और पृ० ३८५-८७।
२. देखिए "बलात्कारके समय क्या करें?", पृ० ३७०-७३।

अगर स्त्रियोंको बराबर खतरेसे दूर रखा जायेगा तो वे बहादुर और आत्मनिर्भर कैसे बन सकेंगी? क्या बहादुरीके साथ मृत्युका सामना करने से स्त्रियोंके हितको लाभ न पहुँचेगा? आज फिर हमारी लड़कियोंको माता-पिता द्वारा पर्देमें डाल दिये जाने का खतरा उपस्थित हो गया है।

उ० जिनको नगरोंमें जरूरत हो वे तो, बेशक, हर कीमतपर नगरोंमें रहकर हर मुसीबतका सामना करें। लेकिन साहसके झूठे प्रदर्शनकी भावनासे कुछ नहीं किया जाना चाहिए। जब वे गाँवोंमें चली जायेंगी तो वहाँ उन्हें पर्देमें नहीं रहना पड़ेगा। ईश्वर द्वारा परित्यक्त इस पृथ्वी-रूपी कन्दुकमें, जिसे दो टीमें अपनी पूरी शक्तिसे लात मार-मारकर इधरसे उधर उछाल रही हैं, कहीं भी खतरेसे मुक्त रहने का कोई सवाल ही नहीं उठता और हर जगह काम ही काम है। पर्देके दिन तो सदाके लिए लद चुके हैं।

सेवाग्राम, २ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-३-१९४२

४५९. कायदे-आजमसे अपील

मुस्लिम लीगके पक्षको प्रस्तुत करनेवाले जो अंग्रेजी साप्ताहिक मेरे पास आते हैं उन्हें मैं नियमित रूपसे पढ़ता हूँ और पढ़कर मेरा मन दुःखसे भर जाता है। उन्हें मैं इसलिए पढ़ता हूँ कि मुस्लिम लीगसे प्रभावित मुसलमानोंके विचारोंको जान सकूँ। कोई भी ऐसा सप्ताह नहीं गुजरता जब इन साप्ताहिकोंमें कांग्रेस, कांग्रेसियों और हिन्दुओंपर कीचड़ न उछाला जाता हो और सत्यको तोड़-मरोड़कर पेश न किया जाता हो। ऐसे ही एक साप्ताहिकमें हिन्दू धर्मकी अत्यन्त विषाक्त आलोचना की गई है, जिसे पढ़कर मुझे यह टिप्पणी लिखने को विवश होना पड़ा है। उस विषाक्त लेखका एक अंश नीचे दे रहा हूँ

> हिन्दू धर्म भारतका सबसे बड़ा अभिशाप है और इसका आधार असहिष्णुता तथा असमानता है। अपनेको हिन्दू कहनेका मतलब यह स्वीकार करना है कि व्यक्ति प्रतिक्रियावादी और संकुचित वृत्तिका है। ऐसा कोई भी शिष्ट, सभ्य, ईमानदार और सच्चा आदमी अपनेको हिन्दू कहना या प्राचीन बर्बर लोगोंके इस धर्ममें शामिल होना पसन्द नहीं करेगा जो यह जानता है कि हिन्दू धर्म क्या है और यह किन मूल्योंको लेकर चल रहा है। कारण, इस तथाकथित धर्मका आधार बर्बरता ही है। जिन ९७ प्रतिशत लोगोंको इस अनमोल धर्मके देवी-देवताओंने ऐसे अशुद्ध और अस्वच्छ मनुष्य घोषित कर दिया है जो शेष तीन प्रतिशतकी तीमारदारी करने के अलावा और किसी लायक हैं ही नहीं, उनकी अवस्थाका वर्णन किन्हीं अन्य शब्दोंमें नहीं किया

जा सकता। . . . हम तो विद्यार्थियोंको यह सलाह देंगे कि वे अपनी-अपनी मस्तिष्क-रूपी प्रयोगशालाओंमें ऐसे घातक बम तैयार करें जो भारतके हित और कल्याणके लिए सबसे बड़े विघ्न हिन्दू धर्मको नष्ट-भ्रष्ट करके उसका अस्तित्व ही मिटा दें।

आशा है, उत्तरम यह दलील नही दी जायेगी कि यह लेख किसी अन्य समाचार-पत्रसे लिया गया है। अन्य समाचार-पत्रसे लिया जरूर गया है, लेकिन हिन्दू धर्मको घृणास्पद साबित करने के प्रयोजनसे। यद्यपि इस पत्रके संस्थापक स्वय कायदेआजम है और यह लीगके अवैतनिक मन्त्री नवाबजादा लियाकत अली खाँ के निर्देशनमें प्रकाशित होता है, फिर भी मै मानता यही हूँ कि उन दोनोमे से किसीने यह लेख नही देखा होगा।

पाकिस्तानमे हिन्दुओकी स्थिति क्या होगी? क्या बर्बर कहकर उन्हे कुचल दिया जायेगा? इन समाचार-पत्रोमे सिक्केके दूसरे पहलूपर गौर करने की कोई कोशिश नही की जाती है। इन पत्रोने जो रवैया अपनाया है उससे दोनो समुदायोंके बीच कटुता और झगडा बढेगा। अगर लक्ष्य-प्राप्तिके लिए बातचीत और समझाने-बुझाने का रास्ता नही, बल्कि झगडे और बल-प्रयोगका मार्ग अपनाना है तब तो मुझे कुछ कहना ही नही है। लेकिन कायदे-आजमके भाषणोसे पता चलता है कि हिन्दुओसे उनका कोई झगडा नही है और वे उनके साथ शान्तिसे रहना चाहते है। इसलिए मेरा अनुरोध है कि मुस्लिम लीगकी नीति और कार्यक्रमका प्रतिनिधित्व करनेवाले पत्रोंमें मनुष्य और चीजोका अधिक न्यायपूर्ण मूल्यांकन किया जाये।

सेवाग्राम, २ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ८-३-१९४२

४६०. पत्र : एफ० मेरी बारको

सेवाग्राम, वर्धा
२ मार्च, १९४२

चि० मेरी,

तुम्हारी चिट्ठी मिली। मैं उसकी राह ही देख रहा था। तुम तरक्कीपर हो, यह जानकर प्रसन्नता हुई। अपनी प्रगतिके समाचार देती रहना। निःसन्देह, जमनालालजी की मृत्यु एक बडा आघात है। लेकिन ईश्वरकी इच्छाको हमें सिर झुकाकर स्वीकार लेना चाहिए।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

बापू – कन्वर्सेशन्स एन्ड कॉरेस्पॉण्डेन्स विद महात्मा गांधी, पृ० २०६

४६१. पत्र : चक्रवर्ती राजगोपालाचारीको

२ मार्च, १९४२

प्रिय सी० आर०,

तुमने जो-कुछ कहा है, उसमें कठोर कुछ नही है। भय तो हमारे चेहरोसे साफ झलकता है। गलत काम करने का भय, काल्पनिक शत्रुके जालमें फँस जाने का भय, यह सब एक प्रकारका भय ही है और खतरनाक भय है। फिर भी, जबतक तुम अपने साथियोको धैर्यपूर्वक अपने विचारोका कायल नही कर लेते तबतक तो तुम्हे परिस्थितिसे समझौता करके ही चलना होगा। हमारे पास जो भी सबसे अच्छी सामग्री है वह यही लोग है। और इसी सामग्रीमे हमे राष्ट्रीय ताना-बाना बुनना है। कायदे-आजमके बारेमें तुम्हारा क्या कहना है?

मैं २० तारीखका इन्तजार बेसब्रीसे कर रहा हूँ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० २०८४) से

४६२. पत्र : अन्नपूर्णाको

२ मार्च, १९४२

चि० अन्नपूर्णा,

तू पागल है। विवाह करके तू बिलकुल गीरी नही है। तेरे स्वभावको तू कैसे जीत सकती है? लेकिन तू अवश्य गिरेगी अगर तू भोग-विलासमें पड जायगी और तेरा कर्त्तव्य भूलेगी। विवाह उचे जाने का साधन बन सकता है अगर हम उसे सयमका साधन बनायें तो। विवाहसे गिरी है ऐसा मानने से बडी भूल करेगी। क्योंकि पीछे उचे चढने का प्रयत्न शिथिल हो जायगा। इसलिये ऐसा मान ले कि विवाह करके तू और चढेगी।

बापुके आशीर्वाद

अन्नपूर्णादेवी
गाधी आश्रम
पो० आ० बारी, कटक
उड़ीसा[1]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९२९९) से। सी० डब्ल्यू० १०२७० से भी

१. पता अंग्रेजीमें लिखा है।

४६३. गृहस्थ-धर्म[1]

एक वहनने, जो अखण्ड कुमारिका रहना चाहती थी और जो एक अच्छी सेविका है, योग्य साथी मिलने पर शादी कर ली है। लेकिन अव उसे इसका रंज होता है और वह अपनेको गिरी हुई मानती है।[2] मैंने उसकी इस भूलको सुधार कर यह गलत खयाल तो दूर कर दिया है; लेकिन मै जानता हूँ कि ऐसी और भी वहुत-सी वहने हैं जिनके लिए उक्त वहनको लिखे गये मेरे पत्रका सार यहाँ देना लाभदायी होगा।

अगर कोई वहन अखण्ड कुमारिका रह सकती है तो अच्छा ही है; लेकिन ऐसा तो लाखोमे कुछ ही कर सकती है। शादी करना स्वाभाविक है। उसमे शर्मकी कोई वात नही हो सकती। शादीको गिरी हुई चीज मानने का मनपर वुरा असर पडता है, और गिरने के वाद उठना प्रयत्नकी वात हो जाती है। अकसर प्रयत्न निष्फल भी जाता है। इससे वेहतर तो यह है कि शादीको धर्म समझा जाये, और उसमे सयमका पालन किया जाये। गृहस्थाश्रम भी चार आश्रमोमें एक है। वाकी तीनो उसीपर टिके हुए हैं। लेकिन आजकल विवाह भोग-विलासका ही साधन वन गया है। इसलिए उसके परिणाम भी विपरीत हुए हैं। और, वानप्रस्थ व सन्यास तो नाम-मात्रको रह गये हैं। व्रह्मचर्याश्रम भी नही-सा हो गया है।

उक्त वहनका और उनके समान दूसरी सव वहनोका धर्म तो यह है कि वे अपने गृहस्थ-जीवनको धर्म समझकर वितायें और उसे व्रह्मचर्य-जीवनसे भी अधिक सुशोभित करके दिखाये। ऐसा करने से उनकी सेवाशक्ति वहुत वढ़ेगी। सेवावृत्ति-वाली वहन अपने लिए सेवा-भावी साथी ही पसन्द करेगी और दोनोकी सगठित शक्तिसे देशको लाभ ही होगा। आम तौरपर वहनोका मातृ-जीवन भी धर्म ही है। माताका धर्म एक कठिन धर्म है। पति-पत्नीको सयमसे रहकर सन्तान पैदा करनी है। माताको यह जान लेना चाहिए कि गर्भधारणके समयसे उसका क्या-क्या कर्त्तव्य हो जाता है। जो स्त्री देशको तेजस्वी, आरोग्यवान और सुशिक्षित सन्तान भेंट करती है, वह भी सेवा ही करती है। जव वच्चे वड़े होगे, तो वे भी सेवाके लिए ही तैयार होगे। इसलिए जिसके दिलमे सेवाकी अखण्ड जोत जलती है, वह तो हर हालतमें सेवा ही करेगी और जिस चीज़से सेवाधर्मका पालन नही हो पाता, उसमें कभी न फँसेगी।

सेवाग्राम, ३ मार्च, १९४२

हरिजन-सेवक, ८-३-१९४२

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए पिछला शीर्षक।

४६४. ठक्कर बापा और रामेश्वरी नेहरूका दौरा

बुढ़ापा ठक्कर बापासे दूर भागता रहा है। वे घडी-भरको भी चैन नही लेते। और यदि ले तो बीमार पड़ जायेंगे। सेवा ही उनकी खुराक बन गई है, और सेवा भी उन्होंने ऐसी खोजी है कि जिसकी वजहसे उन्हें प्राय सफर करना ही पड़ता है। वे पहले या दूसरे दर्जेमे सफर नही करते। हाँ, यदि चाहे तो कर सकते है, किन्तु वे ज्यादातर तीसरे दर्जेमें ही सफर करना पसन्द करते हैं। उसकी छूत रामेश्वरीदेवीको भी लग गई है। इसलिए बहुत-सी जगहोंपर वे साथ-साथ जाते हैं। कभी-कभी ही दोनों अलग-अलग स्थानोंपर जाते हैं। ठक्कर बापाकी भाषा भी ध्यान देने लायक है। उनके समान उनकी भाषा भी दौड़ती जाती है। कहने को बहुत-कुछ होता है, इसलिए ऐसे छोटे-छोटे मधुर वाक्योंमें, जिन्हें बच्चा भी समझ सके, वे अपनी बात कह देते हैं और उनका लेख पढने के बाद पाठकके मनमें और अधिककी इच्छा बनी रहती है। इस प्रकार जहाँ-तहाँ बैठा हुआ लेखक भाषाको आडम्बरपूर्ण कैसे बना सकता है? शब्दोंका चुनाव वह क्यों करे? उसके विचार-प्रवाहके पीछे-पीछे शब्द दौड़े चले आते है और वह उन्हें ज्यों-का-त्यों ले लेता है।

पाठकोंको इन सबकी झांकी निम्न पत्रसे मिल जायेगी।[1]

सेवाग्राम, ४ मार्च, १९४२

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, ८-३-१९४२

४६५. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
४ मार्च, १९४२

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत कल मिला। आशा है कि इस खतके अक्षर पढने मे मुश्केली नही होगी।

इंदुकी शादीके बारेमें मेरी तो पक्की राय है कि बाहरसे किसीको न बुलाया जाय। इलाहाबादमें जो है उनमें से साक्षीके रूपमें भले कुछ लोगोंको बुलाये जाय।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया जा रहा है। इसमें अ० वि० ठक्करने राजपूतानाके अपने दौरेका विवरण दिया था।

लग्नपत्रिका दिल चाहे इतनी भेजो। सबसे आशीर्वाद मगाओ। लेकिन पत्रिकामे साफ लिखना कि खासकर किसीको आने की तकलीफ नही दी गई है। अगर एकको भी बुलावे तो किसीको छोड नही सकेगे। इदु इतनी सादगी तक जाना चाहती है या नही, सोचना होगा। तुम भी इतनी सादगी तक जाना पसद न करो तो मेरी राय फेक देना। इदुके बारेमे तुम्हारा निवेदन मैंने देखा। अच्छा लगा। मेरे पर रोज खत आते है। कई तो विभत्स है। सब फाड़ डाले। इन सबके उत्तरमे मैंने एक नोध 'हरिजन' के लिये भेजी है।[1] उसकी नकल इसके साथ रखता हू। नोध लिखी गई सोमवारको। कलसे मुसलमानोके खत शुरू हुए है। उसमे हमलाका मुद्दा स्वरूप-वाला है। ऐसा तो चलता ही रहेगा।

देशी राज्यके बारेमे मै हो सके वह करुगा। पैसेकी मुश्केली बराबर पडेगी। जमनालालजी ने सब बोज उठा लिया था। किस तरह, वह निश्चित नही हुआ था। अब मै सोच रहा हूँ कैसे पैसे पैदा किया जाय। अखबारके बारेमे पट्टाभीसे मश्विरा कर रहा हू।[2] बलवतराय नही आ सकेगे उससे बहुत फरक नही पडेगा। यहासे मदद मिलती रहेगी। यहा आओगे तब दूसरी बात करेगे। मेनन आज मुबई जाते है— वहाका काम पूरा करने के लिये। च्याग काइ-शेकका बयान देखा था। अच्छा था। तुम्हारी इजाजत तो आई लेकिन मैंने सोचा अब उस खत प्रगट करने की आवश्यकता नही रही। बात पुरानी हो गई।

भागीरथी आ गई है। चद्रसिहको रखना कठिन तो है। बहुत तामसी है, बहन कमजोर है। थोडी-सी बातमे लड बैठते है। किसीको पीटे तो मुझे आश्चर्य नही होगा। महेनती तो है। देखता हू। तुम्हारे चिंता नहि करना। मेरे खत पढने मे कठिनाई आवे तो मै और भी साफ अक्षर लिखने की कोशीश करूगा। लेकिन हमारा धर्म है कि हम एक-दूसरोसे राष्ट्रभाषामे लिखते हो जाय। कुछ अर्सेमे इस तरह लिखने मे हम ज्यादा आसानी महसूस करेगे। गरीबो[को] बहूत लाभ होगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे . गाधी-नेहरू पेपर्स। सौजन्य . नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

४६६. पत्र : पट्टाभि सीतारामैयाको

सेवाग्राम
५ मार्च, १९४२

प्रिय पट्टाभि,

अब मुझे जवाहरलालका पत्र मिल गया है। उन्होने सब-कुछ मुझपर छोड दिया है। जमनालालजी की मृत्युसे धनकी समस्या सबसे विकट हो गई है। मेरा

१. देखिए "इन्दिरा नेहरूकी सगाई", पृ० ४१०-११।
२. देखिए अगला शीर्षक।

सुझाव है कि तुम सम्पादकके रूपमें कुछ इस प्रकारका नोटिस जारी करो। "'स्टेट्स पीपल'को साप्ताहिक और प्रति सप्ताह देशी राज्योंकी जनताके लिए निर्देशिकाके रूपमें प्रकाशित किये जानेकी व्यवस्था की जा रही है। इसलिए कुछ समयके लिए इसका प्रकाशन बन्द कर दिया गया है। इस बीच मैं चाहूँगा कि विभिन्न रियासतोंके कार्यकर्त्ता मुझे बतायें कि वे कितनी प्रतियाँ उठायेंगे। उनका भुगतान उन्हें पेशगी करना होगा। इसके पीछे हमारा उद्देश्य पत्रको आरम्भसे ही आत्म-निर्भर बनानेका है। इसका प्रकाशन एक आवश्यकताकी पूर्तिके लिए किया जा रहा है। पत्रकी आवश्यकता है, इसकी खरी कसौटी यह है कि उसके पर्याप्त ग्राहक हों। एक वर्षके लिए पत्रके प्रकाशनपर अनुमानतः ५,००० रुपयेसे अधिक खर्च न होगा। सम्पादक अवैतनिक रहेगा। इसलिए १,००० ग्राहकोंके लिए प्रति ग्राहक ५ रुपये वार्षिक चन्दा होगा। यह भार कोई बहुत ज्यादा नहीं है। जितनी जल्दी मुझे नाम भेजे जायेंगे, हमारे उद्देश्यके लिए उतना ही अच्छा होगा। बहरहाल मुझे जो नाम भेजे जायें उनके साथ चन्देकी राशि भी होनी चाहिए। ग्राहकोंकी सूची बन्द होनेकी अन्तिम तारीखके बाद एक महीनेके भीतर यदि पत्रका प्रकाशन आरम्भ नहीं होता तो चन्दे लौटा दिये जायेंगे।"

यदि तुम मेरे सुझावसे सहमत हो तो यह नोटिस जारी करना। ये आँकड़े प्रकाशित करनेसे पहले आय-व्ययका तखमीना कर लेना। मेरा खयाल है, तुम्हें कागजके सम्बन्धमें कोई दिक्कत पेश नहीं आयेगी। मैं चाहूँगा कि तुम जवाहरलालसे सम्पर्क बनाये रखो।

तुमने आय-व्ययका जो तखमीना भेजा था उसे मैंने या तो नष्ट कर दिया है या तुम्हारे पत्रसहित कहीं इधर-उधर रख दिया है। तखमीनेकी एक नकल मुझे भेजना। यदि आनेका मन हो तो आ जाओ।

स्नेह।

बापू

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

४६७. प्रश्नोत्तर[1]

[५ मार्च, १९४२][2]

(१) मनुष्य-समाजका निर्माण धार्मिक चौहद्दीके भीतर किया जाना चाहिए अथवा लोकतन्त्र-रूपी समतलकारी लोढ़े द्वारा उसे गढ़ा जाना चाहिए? इसमें व्यक्तिका क्या योगदान होना चाहिए? सत्य और अहिंसाकी शिक्षा व्यक्तिके द्वारा समाजको या समाजके माध्यमसे व्यक्तिको मिलती है?

१. गुलाम रसूल कुरैशीने ये प्रश्न समय-समयपर लिखित रूपमें गांधीजी को दिये थे।
२. अन्तिम उत्तर इस तारीखको लिखा गया था।

धर्मके बन्धनसे ही। व्यक्ति अपने धर्मका पालन करते हुए योगदान दे सकता है। हर प्रकारकी शिक्षा व्यक्तिके माध्यमसे ही समाजतक पहुँचती है।

(२) आत्मोन्नतिसे ही समाजको उन्नत बनाया जा सकता है। आप आत्मोन्नतिकी साधना द्वारा जन-कल्याण कर रहे हैं, जबकि हम सब लोग जन-कल्याणके काममें ही अपने कर्त्तव्यकी इतिश्री समझ बैठे जान पड़ते हैं। क्या इसी कारण दोनों प्रकारकी सिद्धि प्राप्त करने में विघ्न आते रहते हैं?

अन्तत विघ्न अवश्य समाप्त हो जायेंगे।

(३) क्या सत्य और अहिंसाके आन्दोलनमें युद्ध-सम्बन्धी पर्यायोंका उपयोग उचित है? वस्तुतः, क्या यह सच नहीं है कि सशस्त्र युद्धकी पद्धतिके आधारपर इस प्रकारके साधकोंका पथ-प्रदर्शन नहीं किया जा सकता?

उसी भाषाका प्रयोग करने मे कोई दोष नही है, यद्यपि नई भाषा अपनाना निश्चय ही बेहतर होगा।

(४) मै यह मानता हूँ कि [जीवनके] किसी मार्ग-विशेषको स्वीकार कर लेने के बाद तत्सम्बन्धी कर्मकाण्ड भी करना चाहिए। किन्तु यदि वह रसहीन सिद्ध हो तो यह मान लेना चाहिए कि या तो उसके प्रति मनुष्यकी आस्था कम है या फिर उसके बारेमें उसका ज्ञान कम है।

यह स्वाभाविक है कि अच्छा होने के बावजूद वह [पहले] रसहीन जान पडे। किन्तु अच्छाईका प्रभाव पड़ने पर उससे रसकी सृष्टि अवश्य होगी।

(५) पाकिस्तानकी योजनाका कारण मुसलमानोंमें व्याप्त भय और हिन्दू भाइयोंमें उदारताका अभाव है। मुस्लिम लीगकी माँगोंमें से एक माँग केन्द्रीय मन्त्रि-मण्डलमें हिन्दू-मुसलमानोंके लिए समान प्रतिनिधित्व की है। यह माँग गलत हो सकती है, किन्तु यदि हमें आजादी लेनी है और हम यह विश्वास करते हों कि अन्ततोगत्वा साम्प्रदायिक कलह न रहेगा तो क्या वह स्वीकार करने योग्य नहीं है? उस समय आजकी परिस्थितिमें परिवर्तन हो जाने से क्या दोनोंके मन नहीं मिलेंगे?

यदि पाकिस्तान[की माँग] गलत हो तो उसे स्वीकार करना असत्य है। मेरे विचारसे पाकिस्तान[की माँग] गलत है। ऐक्य तो हृदयका होना चाहिए। गलत कामोसे हृदयका ऐक्य नही सध सकता।

(६) यदि उच्च स्तरपर यह बात न बन सकती हो तो बिलकुल निचले स्तरपर मुसलमानोंसे सम्पर्क स्थापित करना चाहिए। आप-जैसे व्यक्तिको बड़े-बड़े हिन्दू नेताओंको समझाने में इतना समय लगाना पड़ा तो क्या सामान्य लोगोंकी मनोवृत्तिको सहजमें बदला जा सकेगा? उसके लिए न तो सच्ची आकांक्षा है और न आवश्यक प्रयास ही किया गया है। कुछ स्थानोंपर तो यह रुख है कि यदि मुसलमानोंको जरूरत हो तो वे आगे आयें।

यह सच है कि शुरुआत निचले स्तरसे होनी चाहिए। यह रुख बहुत दोषपूर्ण है कि यदि मुसलमानोंको जरूरत हो तो वे आगे आये। इसे खत्म होना चाहिए।

(७) सन् १९३५ के कानूनके अनुसार स्कूल बोर्डोमें सदस्योंका चुनाव साम्प्रदायिक आधारपर होता है। उनमें से कुछ ही स्थान सामान्य स्थानोंके रूपमें सुरक्षित रखे जाते हैं। संयुक्त मताधिकारको लोकप्रिय बनाने के लिए जनताके अन्य वर्गोंके लोगोंका चुनाव करके एक उदाहरण सामने रखना अच्छा होगा।

इस मामलेमें मोरारजीभाई[1] बेहतर पथ-प्रदर्शक सिद्ध हो सकेंगे।

(८) इस्लामका सिद्धान्त है कि खुदाके अतिरिक्त अन्य किसीकी पूजा करना उचित नहीं। क्या आप इस विषयमें कुछ कहेंगे?

यह सच है। इसका मैं यह अर्थ करता हूँ कि खुदाके समान अन्य कोई पूजनीय नहीं हो सकता। निःसन्देह हमारे माता-पिता पूज्य तो हैं, किन्तु वे खुदाका स्थान नहीं ले सकते।

(९) देशके कार्यकर्त्ताओंमें से काफी लोग आपकी संगतिका लाभ उठाना चाहते हैं। आजकल आप दौरेपर तो निकलते नहीं, इसलिए इसका लाभ उनतक नहीं पहुँच सकता। अतः उन लोगोंको अब आपके पास आना होगा। यदि धीरे-धीरे नियमित रूपसे इस तरहका कार्यक्रम बनाया जाये तो बहुत-से भाइयोंकी विचारधारा पर अच्छा असर पड़ने की सम्भावना है। मुझे यह कार्यक्रम आवश्यक जान पड़ता है।

यह बिलकुल ठीक है और यदि ऐसे कार्यक्रमका आयोजन किया जाये तो बहुत सुविधा होगी।

(१०) मेरे मनमें मुसलमानोंसे सम्बन्धित विचार निरन्तर उठते रहते हैं। क्या यह उचित है? मैं सबको समभावसे देखने की कोशिश करता हूँ। और स्वयं मुसलमान होने के कारण मुसलमानोंमें जो कमजोरी है वह तुरत पकड़ में आ जाने से मैं उस तरफ अपने अन्य भाइयोंका ध्यान आकर्षित करता हूँ। तो क्या इसे साम्प्रदायिकता माना जायेगा?

इसमें मुझे साम्प्रदायिकता दिखाई नहीं देती। समभावका तात्पर्य यह नहीं है कि हमें अपने धर्मका विचार नहीं करना चाहिए अथवा अपनी कौमकी सेवा नहीं करनी चाहिए। बल्कि निश्चय ही समभावका यह अर्थ है कि हम जैसी सेव स्वधर्मीकी करे, अवसर मिलने पर वैसी ही सेवा परधर्मीकी भी करे।

(११) इस अंचलमें राष्ट्रीय मुसलमानोंको अपनी कौमके लोगोंसे आर्थिक सहायता मिलना मुश्किल है। राष्ट्रीय पक्षोंमें मुस्लिम पक्ष निर्बल है। यदि हिन्दू भाइयोंसे सहायता लेना अनुचित माना जाये तो इस पक्षको मजबूत बनाने का आधार कमजोर रहेगा। क्या यह उचित है कि यदि किसी राष्ट्रकी जनता एक ही हो तो

1. मोरारजी र० देसाई

उनके बीच धार्मिक विभेदकी सृष्टि कर उन कौमोंको अलग कर दिया जाये ताकि इस प्रकार सहायता देना बन्द किया जा सके?

यह प्रश्न इस प्रकार नही रखा जाना चाहिए। अन्य धर्मवालो की मदद लेने में हम अपनी कमजोरी प्रकट करते है। इसके अतिरिक्त हमारे अपने धर्मावलम्बी हमें शककी नजरसे देखेंगे और इससे जहर बढेगा। इस मामलेमे विवेकपूर्ण दृष्टिकी आवश्यकता है। ऐसे राष्ट्रीय मुसलमान बहुत कम नजर आते है जो सबल हो। उनमें आत्मविश्वासकी कमी है। वे राष्ट्रीय क्यो है, यह भी तो वे पूरी तरह नही समझा सकेंगे। यह पूरा प्रश्न विचार करने योग्य है।

(१२) धनी मुसलमानोंका बड़ा भाग लीगसे सम्बद्ध है, क्योंकि इस प्रकार उन्हें उसमें अपना हित नजर आता है। गरीब मुसलमानोंको राष्ट्रीय कार्योंमें धनकी कमीसे परेशानी होती है। और यदि वे लोग पैसेकी माँग करते हैं तो यह मान लिया जाता है कि वे पैसा मारते है, और उन्हें अपने बीचसे ही इस तरहकी व्यवस्था कर लेने का सुझाव दिया जाता है। तो इस अड़चनको किस प्रकार दूर किया जा सकता है?

काम करके। ससारके सभी सुधारकोंने अपने कपडे बेचकर खाया है और अपने कामको आगे बढाया है। यदि गरीब मुसलमानोको अपना देश प्रिय हो और वे इसके दो टुकडे न करना चाहते हो तो वे किसी भी सकटको सह लेंगे।

(१३) इस भयंकर दावानलका शिकार बनने के बावजूद मुझे लगता है कि अहमदाबादमें भावनात्मक एकता स्थापित करने के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया जा सकता है। इस कामके लिए मैं भाई-बहनोंको एकत्रित कर सका हूँ। काम हाथमें लेने की संक्षिप्त रूपरेखा भी मेरे पास है और वर्तमान परिस्थितियोंमें उसके सफल होने की सम्भावना भी है। किन्तु इस सारे कार्यका केन्द्रीकरण करने के लिए धनकी आवश्यकता है। इसके लिए मुझे क्या करना चाहिए, इसका सुझाव आप दीजिए।

मैं समझता हूँ कि यह काम तो अब पूरा हो चुका है न? क्योंकि सरदारके सामने जैसा बजट रखा गया था उसे उन्होंने उसी रूपमे पास कर दिया।

(१४) हिन्दू-मुसलमानोंकी भावनाओंको ठेस पहुँचानेवाली घटनाओंको रोकने के लिए हमें देश, प्रान्तों और शहरोंमें ऐसे लोगोंकी, जिन्हे दोनों वर्गोंका विश्वास प्राप्त हो, स्थायी या अस्थायी कमेटियाँ नियुक्त करनी चाहिए और उनके निर्णयानुसार व्यवहार करना चाहिए। जहाँ ऐसा न हो सके वहाँ कांग्रेसकी अपने निष्पक्ष कार्यकर्त्ताओंकी एक कमेटी होनी चाहिए, जो इस बातपर नजर रखे कि अल्पसंख्यक वर्गके प्रति कोई अन्याय न हो।

यह तो बिलकुल ठीक है।

(१५) क्या [मसजिदोंके सामने] बाजा बजाने और गाय [की कुर्बानी] से सम्बन्धित प्रश्नोंके बारेमें कुछ निश्चित कानून बना देना ठीक नहीं होगा? इसके गुण-दोषोंपर प्रकाश डालिए।

कानून बनाने से इस काममें सफलता नहीं मिलेगी। सबसे पहले तो लोगोंको इसकी शिक्षा दी जानी चाहिए। हिन्दुओं द्वारा गोकुशीको बरदाश्त करने पर ही निस्तार होगा। मुसलमानोंको मारकर उन्हें गोकुशी करने से नहीं रोका जा सकता। इसी प्रकार मुसलमानोंको हिन्दुओंका बाजा बजाना बरदाश्त करना चाहिए। यह प्रत्येकका धर्म है। इसमें कानून क्या करेगा? बीचका रास्ता यह है कि दोनों एक दूसरेके प्रति कुछ उदारतासे काम लें। किन्तु ये निरर्थक प्रयास कहे जायेंगे।

(१६) यदि उग्र रूपमें हिंसा फूट निकले, उदाहरणके लिए साम्प्रदायिक दंगोंके दौरान, तो उसके खप्परमें हमें उतनी भेंट चढानी चाहिए जितनी वह माँगे अथवा यदि उसे शान्त करना सम्भव हो तो वैसे उपाय कर उससे मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहिए? मुझे पहली बात रुचती है। किन्तु काकासाहबके वक्तव्यसे मैं दूसरी बातको जिस रूपमें समझ सका हूँ, वह मेरे गले नहीं उतरती।

दूसरी बात में क्या समझमें नहीं आया? यथासम्भव जो उपाय किये जा सकें वे तो हमें करने ही चाहिए।

(१७) हिन्दू-मुसलमानोंके अन्तर्जातीय विवाहोंके सम्बन्धमें आपके विचार?

ऐसे विवाह विशुद्ध प्रेमके आधारपर हों और एक-दूसरेके धर्मकी रक्षा होती हो तभी ठीक होगा।

(१८) जिस प्रकार खादीके लिए चरखा संघ, हरिजनोद्धारके लिए हरिजन सेवक संघकी स्थापना हुई, क्या उसी प्रकार ऐक्यकी भावनाको जाग्रत रखने, उसे पुष्ट करने तथा सतत जागरूकता बनाये रखने एवं इस दिशामें निरन्तर आवश्यक कदम उठाते रहने के उद्देश्यसे एक छोटी-सी स्थायी समिति नहीं बनाई जा सकती?

पहलेसे ही जो समिति है उसके अतिरिक्त और कैसी समितिसे तुम्हारा तात्पर्य है?

(१९) यह माना जा सकता है कि ईश्वर सत्य है। किन्तु सत्य ईश्वर है, यह मानने में भीतरसे धक्का-सा लगता है। क्या ऐसा मेरे संस्कारके कारण है? इस कल्पनामें सत्य वस्तु-विशेषका ठोस रूप ले लेता है, जबकि ईश्वर कल्पनासे परे है।

ईश्वर सत्य है तो फिर सत्य ईश्वर क्यों नहीं हो सकता?

(२०) हिन्दू-मुस्लिम एकताके प्रबल समर्थक देशमें हैं। ऐसे लोग भी मिलते हैं जिनमें यह भावना [प्रबलताकी दृष्टिसे] कम-ज्यादा हो सकती है। इन सबका उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है? क्या इसके लिए कुछ मर्यादाएँ निश्चित करना आवश्यक है? क्या इन्हें संगठित करना ठीक होगा?

ऐसी चीजें स्वतः ही संगठित होती हैं, इन्हें कृत्रिम रीतिसे संगठित नहीं किया जा सकता।

(२१) आपने अहिंसाको मर्यादित कर दिया है। क्या इस आधारपर अन्य लोग भी अपनी सामर्थ्य और संकल्पके अनुसार उसे घटा सकते हैं? जेकको[1] आपने अहिंसक माना है। तो इस प्रकार जो दुष्ट लोगोंके हमलेका अकेले सामना करता है वह अहिंसक ही है न?

व्यक्ति [अहिंसाकी अपनी धारणाके अनुसार] उसमें घटा-बढ़ी अवश्य कर सकता है। तुम्हें इस बातपर विचार करना चाहिए कि जेकको अहिंसक क्यों माना गया। सौ आदमियोंके हमलेके विरुद्ध जूझनेवाला कोई निःशस्त्र व्यक्ति यदि अपने दाँतोंका प्रयोग करता है तो क्या उसे अहिंसक नहीं माना जा सकता? क्या यह कहा जा सकता है कि बिल्लीके प्रति चूहा हिंसक है? इस बातको पूरी तरह समझ लेना चाहिए।

(२२) इस्लामके सम्बन्धमें आपके विचार?

इस्लाम सच्चा धर्म है। अन्य सभी धर्मोंकी भाँति इसमें भी विकृति आ गई है।

(२३) पैगम्बर साहबके सम्बन्धमें आपके विचार?

पैगम्बरको मैं पैगम्बर ही समझता हूँ।

(२४) यदि मुसलमानोंकी पतवार आपको सौंप दी जाये तो उन्हें सुधारने के सम्बन्धमें आपके विचार?

यदि उनकी पतवार मुझे सौंप दी जाये तो मैं उनकी धर्मान्धताको निकाल फेंकूँगा। हिन्दुओंके प्रति उनकी नफरतको दूर कर दूँगा।

(२५) पृष्ठ २४[2] की टिप्पणीके सन्दर्भमें श्री जुगतरामभाई कहते हैं कि आश्रम की विचारधाराको माननेवाले व्यक्तियोंको मुस्लिम मोहल्लोंमें जाकर बसना चाहिए और प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए।

यह ठीक है।

(२६) जब राष्ट्रीय नेता साम्प्रदायिक संस्थाओंकी स्थापना, संचालन या समर्थनका कार्य उत्साहपूर्वक करते नजर आते हैं तो अन्य समुदायोंके व्यक्तियोंके मनपर उसका अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। क्या इस सम्बन्धमें आप कुछ कहेंगे? इस सम्बन्धमें कुछ बताइए।

राष्ट्रीय नेता ऐसी संस्थाओंमें कभी हाथ न डालें जो राष्ट्र-विरोधी हैं।

(२७) अमीनाके[3] भगन्दर और उसकी अस्वस्थताके सम्बन्धमें मैं बम्बईमें डॉ० देशमुखसे मिला था। उन्होंने बम्बईमें दिखाने की सलाह दी थी। वे मुझसे बहुत अच्छी तरह मिले। वे भगन्दरमें इंजेक्शन देते हैं, जिसका असर बहुत वर्षोंतक रहता है। तो

१. सम्भवतः यहाँ चेकोस्लोवाकियावासियोंका उल्लेख है।

२. तात्पर्य १८वें प्रश्नसे है।

३. गुलाम रसूल कुरैशीकी पत्नी

क्या हम लोग डाक्टर साहबकी चिकित्साका लाभ उठा सकते हैं? बातचीतके दौरान उन्होंने अपनी सेवा अर्पित करने की बात कही थी। उपचारके दौरान वहाँ रहना पड़ेगा। क्या आप वहाँ टिकने के लिए कोई जगह बता सकते हैं?

उनकी सेवामें लाभ उठाना चाहिए। कान्ति पारेखके यहाँ ठहरा जा सकता है।

(२८) शान्ति-सेनाकी सम्भावनाएँ क्या हैं? क्या आप उसके विस्तारके उपाय सुझायेंगे?

शान्ति-सेनाके सम्बन्धमें अपने विचार तो मैं 'हरिजन' में व्यक्त कर चुका हूँ।[1]

(२९) क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि समयके साथ-साथ धर्म-भावना हल्की पड़ती जा रही है? इस तरह तो हिन्दुस्तानमें अल्पसंख्यक जातियोंका धर्म विलुप्त हो जायेगा, क्या ऐसा माना जा सकता है? आंशिक रूपसे इसी विचारके कारण तो कहीं लोग आजका आन्दोलन नहीं चला रहे?

धर्म-भावना अन्तत: तो शुद्ध और तीव्र होगी। और यदि ऐसा नहीं होता तो मानव-मूल्य विलुप्त हो जायेंगे।

(३०) गुजरातके मुसलमानोंमें स्त्री-शिक्षा नहीं के बराबर है। समाजकी दृष्टि भी इस ओर नहीं है। इस कारण जनतामें निरन्तर अज्ञान बढ़ता जा रहा है। क्या इस दिशामें विचार किया जा सकता है?

अपने प्रभावमें आनेवाली बालिकाओं द्वारा शिक्षा-प्रचारका कार्य आरम्भ किया जा सकता है। यदि सुल्ताना[2] आदर्श बालिका बने तो वह अपरिमित कार्य करेगी। ऐसी आशाएँ बाँधकर ही मैं उसे यहाँ लाया था।

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०८९८) से। सौजन्य गुलाम रसूल कुरैशी

४६८. पत्र: घनश्यामदास बिड़लाको

५ मार्च, १९४२

भाई घनश्यामदास,

आज वैद्यराजको मुक्ति दी। मैंने तो बा के आश्वासनके कारण इतने दिनतक रोक लिये। अब तो बा भी राजी हो गई है इसलिये उनको मुक्त करता हूं। आशा है कि यहाके काममें कुछ रुकावट पैदा नहीं हुई होगी। इतने दिन रोकने के बाद ऐसा लिखना निरर्थक लगता है लेकिन ऐसा है नहीं। क्योंकि भविष्यमें आदमी सावधान

१. देखिए खण्ड ६७, पृ० १४२-४४।

२. गुलाम रसूल कुरैशीकी पुत्री

होता है। मुझे करना यह चाहिये था कि प्रथमसे जान लेना चाहिये था कि सच-मुच वहाके दवाखानेमे कुछ रुकावट पैदा होगी या नही — थोड़ा तो मैंने तुमसे पूछा था लेकिन यो ही। अव तो जो हुआ सो हुआ। नाराएणदास सज्जन है।

वहारकी गरमीका कुछ आक्रमण लगा कि मीतर की? कैसे भी हो, मखन भले कम कर दिया। गरमीके दिनो मे मखनकी मात्रा कम करना ही होगा। वहार की या भीतरकी गरमीके लिये पत्ती भाजीया, गाजर, प्याज, नोलकुल, सेलेरीकी मात्रा वढाई जाय। इसमे भी लैटीसकी पत्ती और सेलरी सर्वोत्तम है।

वापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ८०५४) से। सौजन्य . घनश्यामदास विड़ला

४६९. पत्र : प्रभावतीको

६ मार्च, १९४२

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला था। यहाँ सव कुशल है। वा ठीक ही है। इसके साथ जयप्रकाशका पत्र भेज रहा हूँ। मैंने उसे जो उत्तर[1] दिया है उसकी नकल भी भेज रहा हूँ, ताकि मेरा पत्र यदि रास्तेमे खो गया हो तो तेरी मार्फत मिल जाये। और यदि तुझे कुछ पूछना हो तो तू तुरन्त लिख भी सकती है।

महादेवभाई भी ठीक है। जानकीवहन यहाँ रहने को आ गई। उसके साथ कमला और उसके वच्चे भी है।

जमनालालजी से सम्वन्धित वैठकमे तुझे वुलाना मुझे उचित नही लगा था, इससे नही वुलाया। "हिम्मत"[2] का कोई दूसरा अर्थ नही था। धर्म मनुष्य को भीरु वनाता है न? मन तो हमेशा तुझे वुलाने की ओर ही ढलता है।

वापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

खुर्शेदवहन और लोहिया[3] वातचीत करने आये है। शायद १७ तारीखको कार्यकारिणीकी वैठक यहाँ होगी।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५७२) से

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. देखिए "पत्र : प्रभावतीको", पृ० ३४९।
३. राममनोहर लोहिया

४७०. पत्र : ब्रजकृष्ण चाँदीवालाको

सेवाग्राम, वर्धा
६ मार्च, १९४२

चि० ब्रजकृष्ण,

तुम्हारा सूत कल मिला। तुम्हारी धोती तो सब मिली थी और मैंने शीघ्र पहनना शुरू भी कर दिया। बारडोलीमें तुम्हारा खत मिला था।

सत्यवतीकी तबीयत अच्छी रहती है वह शुभ बात है।

महादेवकी तबीयत अच्छी है।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

सब साथीओंको मेरे आशीर्वाद।

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० २४८७)से

४७१. पत्र : मार्गरेट स्पीगलको

७ मार्च, १९४२

चि० अमला,

तुम्हारी सहूलियतके खयालसे अंग्रेजीमें लिख रहा हूँ। खुर्शेदबहनने बताया है, तुम १० तारीखको माँ और कुत्तेके साथ आ रही हो। तुम्हारा स्वागत है, लेकिन तुम्हारे कुत्तेके लिए मासकी आवश्यकता हो तो वह सेवाग्राममें नहीं मिलेगा। गाँवके बाजारमें भी मास उपलब्ध होगा या नहीं, मैं नहीं कह सकता।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च]

चि० अमला,

क्या तुम एक डिब्बा स्प्रैट्स बिस्किट प्राप्त कर सकती हो? उसमें मासका सत्त्व मिला होता है। फिर वर्धामें एक-दो दिन बाद कोई और इन्तजाम कर सकती हो। प्रसन्न रहो।

स्नेह।

बापू

[अंग्रेजीसे]

स्पीगल पेपर्स। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

४७२. पत्र : एम० के० सैयद अहमदको

[७ मार्च, १९४२][1]

प्रिय सैयद साहब,

आपका बिना तारीखका पत्र मिला। आपके विवाहपर अपने आशीर्वाद भेजता हूँ। प्रभुसे यही कामना है कि इस विवाहसे आपको सुखकी प्राप्ति हो और राष्ट्रकी अधिक सेवा की।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

जनाब एम० के० सैयद अहमद
सदस्य, जिला बोर्ड
दीवो स्ट्रीट
कायलपोर्तनम्, द० भारत

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८०३६) से

४७३. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

सेवाग्राम
७ मार्च, १९४२

भाई वल्लभभाई,

तुम्हारा पत्र मिला। यदि गर्मियोंमें सेवाग्राममें रहनेकी हिम्मत न पड़ती हो तो जहाँ तुम होगे मैं वहीं आने का प्रयत्न करूँगा। मुझे विश्वास है कि तुम्हारा स्वास्थ्य सोलहो आने ठीक हो सकता है। इस बीच तुम इच्छानुसार कहीं भी आ-जा सकते हो, किन्तु आराम, स्नान और भोजनके समयके पाबन्द रहना। यदि वाइसराय इन सब बातोंका पालन करते हैं तो हमें भी क्यों नहीं करना चाहिए?

मौलानाका पत्र मिला है कि एक-दो दिनमें रवाना होंगे और यहाँ पहुँच जायेंगे। बूआ [श्रीमती नायडू] कल जानकीबहनसे मिलने आ रही हैं।

बापूके आशीर्वाद

सरदार वल्लभभाई पटेल
विट्ठल कन्या विद्यालय, नडियाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २७१

१. डाककी मुहरसे

४७४. पत्र : कृष्णचन्द्रको

७ मार्च, १९४२

चि० कृ० च०,

तुम्हारा कलका खत फजरमें ही पढ सका। आजका अब।

हां, मैं पूरी मदद दूंगा। तुम्हारे व्यवस्था काममें पडना पडेगा। सिवाय इसके व्यवस्था हो नहीं सकती है। मजदुरी तो मिलेगी ही। जो काम छुट जाय उसे तो तुम कर ही लोगे। व्यवस्थाके बारेमें मुझे पूछना पडे तो पूछो। लोगोकी भूल बताने में कोई हानि नहीं हो सकती। हां, यह ठीक है कि तुम प्रयत्न करो समजानेका। लेकिन मेरे कहने से जल्दी काम हो सके तो करवा लेना।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१८) से

४७५. श्रद्धांजलि: जमनालाल बजाजको[1]

७ मार्च, १९४२

ज्यों-ज्यों मैं विचार करता हूं तो मैं देखता हूं कि देशहितकी कोई प्रवृत्ति नहीं थी जिसमें जमनालालजी का हाथ नहीं था तो सस्ता साहित्य मण्डलमें तो होना ही था। वे जिंदा साहित्य थे।

पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद, पृ० २६२

४७६. कसौटीपर

एक अर्थमें मैं अब भी शान्तिवादी हूँ — अर्थात् मैं मानता हूँ कि ईसाइयों को पशुबलका सामना आत्मबलसे कर सकना चाहिए। उन्नीस सौ वर्ष बाद भी केवल कुछ इने-गिने लोग और बहुत छोटे पैमानेपर ऐसा करने में समर्थ हो पाये हैं, यह सोचकर मन त्राससे भर जाता है। लेकिन जो शक्ति हममें

१. यह जमनालाल स्मृति अंकके लिए भेजा गया था।

नहीं है और अतीतमें हमने न तो जिसका कोई प्रशिक्षण लिया है और न जिसके आवश्यक अनुशासनका पालन किया उस शक्तिके बारेमें हम यह मान-कर चलें कि वह हममें है और फिर तदनुसार आचरण करें, यह तो मुझे मनकी तरंग-जैसा ही लगता है। जिन लोगोंने आवश्यक अनुशासनका पालन न किया हो, उनमें यह शक्ति अन्तिम क्षणमें, जरूरतके समय, आ जाये, ऐसा नहीं हो सकता। सचाई यही है कि यह हममें नहीं आई है। इसलिए जिन सिद्धान्तोंको मैं अपने-आपमें भी सही मानता हूँ और मानव-जातिके भविष्यके लिए भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझता हूँ उनके लिए कुछ किये बिना हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहने की अपेक्षा मैं यह अधिक पसन्द करूँगा कि उनकी रक्षाके लिए मुझसे जितना बन पड़े उतना करूँ। निष्क्रिय बैठे रहना तो सबसे बुरी बात है।

इसलिए जब मेरे शान्तिवादी बन्धु मुझसे पूछते हैं कि क्या आप कभी ईसाके बम गिराने या बन्दूक चलाने की कल्पना कर सकते हैं तो मुझे यह उत्तर देने का अधिकार है: 'नहीं, मैं इस बातकी कल्पना तो नहीं कर सकता, लेकिन इसकी कल्पना भी नहीं कर सकता कि वे हाथ-पर-हाथ धरे तमाशबीन की तरह सब-कुछ देखते रहेंगे।'

यहाँ मैं अपने एक अत्यन्त प्रिय कुटुम्बीके शब्दोंको दोहराने का लोभ संवरण नहीं कर सकता। उन्हें भी युद्धसे उतनी ही घृणा थी जितनी कि किसी बड़ेसे-बड़े शान्तिवादीको हो सकती है। पिछले विश्व-युद्ध (जिसमें अन्ततः उन्हें अपने प्राणोंको बलि देनी पड़ी)के आरम्भमें उन्होंने मुझसे कहा था: "अगर तुम आत्मबलसे युद्धको रोक सकते हो तो रोको। अगर नहीं रोक सकते तो फिर जो-कुछ मैं कर सकता हूँ, मुझे करने दो। और अगर तुम्हारा यह सोचना सही है कि युद्ध इतनी बुरी चीज है कि उसमें शरीक होनेवाला भी नरकका भागी होता है तो मैं नरकका भागी होना पसन्द करूँगा, लेकिन यह बरदाश्त नहीं करूँगा कि यह सब होता रहे और मैं इसे रोकने के लिए अपने प्राणोंकी बाजी लगाकर अपनी ओरसे पूरी कोशिश न कर गुजरूँ।"

भगवान् ईसाने कहा था: "जो अपना जीवन देगा वही जीवनकी रक्षा करेगा।" क्या मेरे उक्त कुटुम्बीकी बातोंमें प्रभु ईसाके इस कथनसे बहुत-कुछ साम्य नहीं है?

गिल्डहाउस, लन्दनकी डॉ० मॉड रॉयडनने दिसम्बर १९४१के 'द सर्वे ग्राफिक' में एक अत्यन्त मर्मस्पर्शी और करुणाजनक लेख लिखा है। ऊपरका उद्धरण उसी लेखका उपसंहारात्मक अंश है। डॉ० रॉयडन पाश्चात्य जगत्के प्रमुख शान्तिवादियोंमें से हैं। बहुत-से अन्य लोगोंकी तरह उन्हें भी अपने विचार बदलने को मजबूर होना पड़ा है, और अब वे अत्यन्त संकोचके साथ फिर भी पूर्णतः ब्रिटिश द्वीप-समूहके रक्षकोंके साथ खड़ी हैं।

इस लेखका सुविचारित उत्तर देने की जरूरत है। मेरा पश्चिमके शान्तिवादियो से बराबर सम्पर्क बना रहा है। मेरी रायमें तो, जो अश मैंने यहाँ उद्धृत किया है, उसमें डॉ० रॉयडनने अपने पहलेके विचारों और विश्वासोको त्याग दिया है। यदि कुछ इने-गिने लोगोने ईसाई धर्मकी शिक्षा (अर्थात् अहिंसा) को अपने जीवनमे, छोटे पैमानेपर ही सही, उतारा है तो इस आधारपर कोई भी यह सोचेगा कि अगर इसका सतत आचरण किया जाये तो इस प्रकारका जीवन बहुत-से लोगोंके लिए और बडे पैमानेपर भी शक्य है। यह तो निस्सन्देह गलत और मूर्खतापूर्ण बात होगी कि "जो शक्ति हममें नही है उसके बारेमें हम ऐसा मानकर चलें कि वह हममें है।" लेकिन विदुषी लेखिका आगे यह भी कहती है "जिन लोगोने [इसके लिए] आवश्यक अनुशासनका पालन न किया हो, उनमें यह शक्ति अन्तिम क्षणमे, जरूरत के समय, आ जाये, ऐसा नही हो सकता।"

मैं यह सुझाव देना चाहूँगा कि जब दोषका पता चल गया है तब उसे दूर करने का प्रयत्न भी अविलम्ब आरम्भ कर दिया जाना चाहिए। यह अपने-आपमें ऐसी चीज होगी जिसका मतलब केवल कुछ करना ही नही, बल्कि जो सही और अपेक्षित है उसे करना भी होगा। इससे उलटा आचरण करके अपने धर्म और अपनी श्रद्धाको नकारना सबसे बुरी बात है।

और मैं इस कथनके औचित्यके सम्बन्धमें आश्वस्त नही हूँ कि "निष्क्रिय बैठे रहना तो सबसे बुरी बात है।" उदाहरणके लिए, जिस उपचारकी अपेक्षा यह हो कि जहरको अपने-आप निकल जाने देना चाहिए, उसमें कुछ न करना न केवल अनुकूल है, बल्कि कर्तव्य-रूप है।

हताश होने का कोई कारण नही है। और ऐसी नाजुक घडीमें अपने धर्मका त्याग करना तो और अधिक अनावश्यक है। ब्रिटेनके शान्तिवादियोको अलग खडे रहकर अपने सम्पूर्ण जीवनको नये सिरेसे क्यो नही गढना चाहिए? हो सकता है कि वे पूर्ण शान्ति स्थापित न कर पायें, लेकिन उनके प्रयत्नका यह परिणाम तो होगा कि उसके लिए ठोस नीव पड जायेगी और उनकी श्रद्धाकी भी सच्ची कसौटी हो जायेगी। जैसी उथल-पुथलमें हम आज गुजर रहे है वैसी उथल-पुथलसे सामना होने पर जब अपनी आस्थापर अडिग रहनेवाले कुछ थोडे-से ही लोग हो तो उनका यह धर्म हो जाता है कि वे अपनी श्रद्धाके अनुसार आचरण करके दिखायें, भले ही घटना-क्रमपर उसका कोई स्पष्ट प्रभाव न पडे। उन्हे यह मानना चाहिए कि काल-क्रममे उनके आचरणके ठोस परिणाम सामने आयेंगे। उनकी दृढता देखकर शकालु लोग भी निश्चय ही उनकी ओर आकृष्ट होगे। मैं यह भी कहना चाहूँगा कि डॉ० मॉड रॉयडन-जैसे लोग किसी पथ या विचारधाराके अनुयायी-मात्र नही होते, वे तो नेता होते है — दूसरोको रास्ता दिखानेवाले। इसलिए उन्हे अपने जीवनको पूर्णत 'गिरि-प्रवचन' की शिक्षाके अनुरूप ढालना है। फिर वे तुरन्त यह देख सकेगे कि ऐसा बहुत-कुछ है जिसे त्यागना है और जिसे नया रूप देना है। उन्हे जिस सबसे बडी चीजका त्याग करना है वह है साम्राज्यवादका फल। लन्दनवासियोका आजका जटिल जीवन और उनका उच्च जीवन-स्तर यदि सम्भव है तो एशिया,

आफ्रिका तथा विश्वके अन्य भागोसे लाये गये विपुल धनके बलपर ही। मैंने सभी ब्रिटेनवासियोके नाम जो पत्र[1] लिखा था, उसकी बडी तीव्र आलोचना हुई है। इस आलोचनाके बावजूद मैं उस पत्रके एक-एक शब्दपर आज भी कायम हूँ, और मुझे पूरा विश्वास है कि उसमे मैंने हिंसाके विरुद्ध — चाहे वह जितनी सगठित और भीषण हो — जो उपाय सुझाया है उसे भावी पीढियाँ अवश्य अपनायेगी। और आज जब शत्रु भारतके द्वारतक पहुँच गये है तब मैं अपने देशभाइयोको भी वही रास्ता अपनाने की सलाह दे रहा हूँ जिसे अपनाने की सलाह मैंने ब्रिटेनवालो को दी है। मेरी सलाहको मेरे देशवासी स्वीकार करे या न करे, मैं तो अविचलित रहूँगा। वे उसे स्वीकार न करे तो यह कोई अहिंसाकी विफलताका सूचक न होगा। मैं फिर भी यही कहूँगा कि कमी अहिंसामे नही, मुझमे थी। लेकिन यदि सत्याग्रहीकी श्रद्धा पर्वतके समान अविचल है तो वह दूसरोको अपने प्रयोगमे शामिल होने के लिए आमन्त्रित करने मे सकोच नही करता, वह यह सोचकर बैठा नही रहता कि पहले वह पूर्णता प्राप्त कर ले, फिर दूसरोसे उसमे शामिल होने को कहे। जो सलाह डॉ० रॉयडनके कुटुम्बीने उन्हे दी और जिसे उन्होने अपने लेखमे अनुमोदनके साथ उद्धृत किया है वह बिलकुल गलत है। यदि युद्ध घृणास्पद है तो कोई उसमे शामिल होकर उसे रोक कैसे सकता है, भले ही वह आत्मरक्षाके लिए ही उसमे क्यो न शामिल हो और अपने प्राणोकी बलि भी क्यो न चढा दे? कारण, आत्मरक्षाके लिए उसे वे सारे बुरे काम करने पडेगे जो उसके शत्रु करेगे और अगर उसे सफलता प्राप्त करनी है तो उसे वह सब अपने शत्रुसे कही अधिक शक्ति और उग्रतासे करना पडेगा। इस तरहसे जीवन देने का मतलब न केवल जीवनकी रक्षा करना नही है, बल्कि उसे व्यर्थ गँवाना है।

डॉ० रॉयडनके गिरजाघरमे, जहाँ प्रार्थनाकी शक्तिमे लोगोकी जीवन्त श्रद्धा है, प्रार्थना-प्रवचन मे मैं शरीक हुआ हूँ। निविड अन्धकारसे घिर जाने पर उन्होने अपने हृदयसे प्रस्फुटित प्रार्थनासे शक्ति और सान्त्वना तथा सच्चे कर्मकी प्रेरणा क्यो नही प्राप्त की? अब भी अवसर बीत नही गया है। उन्हे और उनके शान्तिवादी बन्धुओको, जिनमे से बहुतोको जानने का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो चुका है, साहससे काम लेना चाहिए और पीटरकी तरह अपने क्षणिक श्रद्धा-त्यागपर पश्चात्ताप करके नये ओज और उत्साहके साथ अहिंसामे अपनी पुरानी श्रद्धाको पुन. जाग्रत करना चाहिए। उनके ऐसा करने से युद्ध-प्रयत्नमे कोई विशेष कमी नही आयेगी। उससे कुछ होगा तो यही कि युद्ध-विरोधी प्रयत्नको प्रबल उत्तेजन मिलेगा, और अगर मनुष्यको दोपाया पशु नही बन जाना है, बल्कि मनुष्यकी तरह जीना है तो वह प्रयत्न निश्चय ही सफल होगा — सो भी विलम्बसे नही, वरन् शीघ्रतासे।

सेवाग्राम, ८ मार्च, १९४२

[अग्रेजीसे]

हरिजन, १५-३-१९४२

1. देखिए खण्ड ७२, पृ० २६१-६४।

४७७. पत्र : नारणदास गांधीको

[९ मार्च, १९४२ के पूर्व][1]

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। जमना अच्छी हो गई, यह खुशखबरी है।

नानाभाईके बारेमें तुमने जो लिखा है उसे मैं मानता हूँ। किन्तु मैं उस सम्बन्धमें कुछ कर नहीं सकूँगा। वे जो करते हैं सो उन्हें करने दो। यदि कोई मौका आया और कुछ करना सम्भव हुआ तो करूँगा। तुम्हारे पास काम करने की अपनी खास कला है, जो दूसरोंके पास नही है।

मैंने जिस तरह वीणाको भेजा था उसी तरह कचनको भी भेजना चाहता हूँ। वह भी सेवाभाववाली है। वह मुन्नालालकी पत्नी है। मुन्नालाल ब्रह्मचर्यका पालन करना चाहता है। इसलिए एक ही स्थानपर दोनोंके साथ-साथ रहने से साधनामें विघ्न पड़ेगा। कचनबहन वहाँ जाने को तैयार है। यदि उसे भी खपा सको तो लिखना। यदि वहाँ स्थान न हो अथवा किसी अन्य कारणसे तुम उसे वहाँ न रख सको तो लिखना।

प्यारेलालकी माताजी के बारेमें मैं बादमें लिखूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८६०१ से भी; सौजन्य : नारणदास गांधी

४७८. टिप्पणियाँ

अस्पृश्यता और इन्दौर

इसी महीनेकी १ तारीखको इन्दौरके महाराजा साहबने हरिजन-दिवसके सयोजकोको एक सन्देश भेजा, जो २ मार्चके 'होलकर गवर्नमेंट गजट' में प्रकाशित हुआ है। उस सन्देशपर एक दृष्टि डाल लेना उपयोगी रहेगा। यह सन्देश उसी प्रकारका है जैसी कि त्रावणकोरकी वह घोषणा[2] थी, जिसमें अस्पृश्यताकी समाप्तिका ऐलान

१. सी० डब्ल्यू० साधन-सूत्रके अनुसार यह पत्र ९ मार्च, १९४२ को मिला था।

२. नवम्बर १९३६ में, देखिए खण्ड ६४, पृ० ५४-५७।

किया गया था। महाराजा साहब इस समस्याको किस दृष्टिसे देखते हैं, यह बात सन्देशकी प्रारम्भिक पंक्तियोंसे लक्षित होती है। वे पंक्तियाँ निम्न प्रकार हैं:[1]

> . . . कमसे-कम मैं तो इस बातकी कल्पना नहीं कर सकता था कि होलकर राज्यमें यह बुराई कायम रहे और मैंने १९३८ में एक घोषणा जारी करके तथाकथित अस्पृश्योंको वही दर्जा प्रदान किया जो हममें से किसीको भी प्राप्त है। . . . इस क्षेत्रमें अभी और भी बहुत-कुछ करना शेष है और मैं लोकहितके कार्य करनेवाले सभी लोगोंसे इस अत्यावश्यक काममें जुट जाने का अनुरोध कर सकता हूँ। मैं पूरा जोर देकर यह बताना चाहता हूँ कि जब तक हम आपसमें सामाजिक एकता नहीं कायम कर लेते तबतक इस देशमें लोकतान्त्रिक पद्धतिपर कोई राजनीतिक ढाँचा खड़ा नहीं किया जा सकता। इस उद्देश्यकी प्राप्तिके लिए हमें सबसे पहले तो अपने शब्दकोशसे "अस्पृश्यता" शब्दको ही निकाल देना चाहिए।

औंधकी ग्राम-पंचायतें

राजा साहब लिखते हैं[2]

> तीन वर्ष पहले जब वर्धामें हमारी मुलाकात हुई थी तबसे पंचायतोंके द्वारा ग्राम्य व्यवस्थाकी पद्धति औंध राज्यमें दाखिल की जा चुकी है और मुझे यह कहते हुए बड़ा हर्ष हो रहा है कि अबतक जो परिणाम सामने आये हैं वे अत्यन्त आशाजनक और उत्साहवर्धक हैं। अब हर गाँवमें एक पाठशाला है। अधिकांश स्कूल स्थानीय तौरपर एकत्र किये गये चन्दे और तालुका समितियोंकी आंशिक सहायतासे बनाये गये हैं। ग्रामवासियोंने खुद सड़कें बनाई हैं, पानीकी व्यवस्था की है और लगभग सभी गाँवोंके हर बाशिन्दे को अपने अधिकारों और कर्त्तव्योंका कुछ-कुछ बोध हो चला है और उसमें अपने गाँवके प्रति प्रेम जगा है। . . .

साँड़

हाल ही वर्धामें स्वर्गीय जमनालालजी के मित्रोंकी एक बैठक हुई थी।[3] बैठकमें तय की गई योजनाओंमें से एक १,००० अच्छे साँड तैयार करने के बारेमें थी। यह योजना सेठ रामेश्वरदास बिड़लाके दिमागकी उपज थी। योजना तैयार हो जाने के बादसे उन्होंने उस दिशामें कार्य करने में क्षण-भरकी भी देर नहीं की है। वे पहले ही सहायताके लिए अपील जारी कर चुके हैं। इस योजनापर ५ लाख रुपये

१. जिसके यहाँ कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।
२. यहाँ उसका केवल एक अंश ही दिया गया है।
३. २० और २१ फरवरीको

खर्च होने का अनुमान है। यह रकम आसानीसे मिल जानी चाहिए। व्यवस्थापक समितिमें निम्नलिखित लोग शामिल है.

१. श्री रामेश्वरदास विडला — अध्यक्ष
२. सरदार वल्लभभाई पटेल
३ श्रीमती सुव्रतादेवी रुइया
४ श्री लक्ष्मीनारायणजी गाडोदिया
५ श्री भगीरथजी कनोडिया
६ श्री हीरालालजी शास्त्री
७ श्री केशवदेवजी नेवटिया — मन्त्री

गोपालन नम्बियार

गोपालन नम्बियार देशभक्त युवक है। कहते है, मलाबारकी एक सभामें, क्षणिक आवेशमे आकर उन्होने भीडको एक पुलिस सब-इन्सपेक्टरको पीटने को उकसा दिया। मारपीटका अन्त उस सब-इन्सपेक्टरकी दुर्भाग्यपूर्ण मृत्युके रूपमे हुआ। मद्रास उच्च न्यायालयने उन्हे फाँसीकी सजा दी है। मै माने लेता हूँ कि इस सजाके पक्षमें पूरे सबूत रहे होगे, लेकिन यह स्पष्टत ऐसा मामला है जिसमें सरकारके लिए फाँसीकी सजाके बजाय उससे किसी छोटी सजाका आदेश जारी करना उचित होगा। यह निजी कारणोसे जान-बूझकर की गई हत्याका मामला नही है। आज हम जिस वातावरणमें जी रहे है उसमें चारो ओर हत्या और संहारका ताण्डव मचा हुआ है और कोई भी अदालत इन हत्याओके दोषी लोगोको दण्ड नही दे सकती। यह बडी उपहासास्पद बात है कि एक नौजवानको ऐसे कामके लिए फाँसीपर लटका दिया जाये जो अपने-आपमें चाहे जितना दोषपूर्ण हो किन्तु जिसके पीछे वैर-विद्वेषकी कोई भावना नही थी। इसलिए मुझे यह देखकर खुशी हो रही है कि जनमतको दिशा देनेवाले नेता और अखबार मृत्यु-दण्डको रुकवाने के लिए प्रयत्न कर रहे है। आशा है, सरकार जनताकी आवाजपर कान देगी।

सेवाग्राम, ९ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-३-१९४२

४७१. हिन्दुस्तानी

डॉक्टर ताराचन्द, जिन्होंने राष्ट्रभाषाके प्रश्नका अच्छा अभ्यास किया है, श्री काकासाहबको उनके एक प्रश्नके उत्तरमें, अपने २ फरवरीवाले खतमें लिखते हैं:

हिन्दुस्तानी और व्रज दोनों बोल-चालकी जबानें थीं। पहले, जब ये केवल बोल-चालके काम आती थीं, इनकी क्या हालत थी, कहना कठिन है। तवारीखसे इतना मालूम होता है कि बारहवीं सदीमें मसाद सल्मानने एक 'दीवान' हिन्दीमें लिखा था। पर उस 'दीवान' का एक भी शेर अब नहीं मिलता। तेरहवीं सदीसे हिन्दी या हिन्दुस्तानीका पता लगने लगता है। चौदहवीं और पन्द्रहवीं सदीमें हिन्दुस्तानीका अच्छा साहित्य दक्षिणमें तैयार हो गया था। इस साहित्यकी भाषा वही खड़ी बोली है जो आधुनिक हिन्दीका आधार है। व्रजभाषाका कोई लेख सोलहवीं सदीसे पहले या अभीतक देखने में नहीं आया। 'पृथ्वीराज रासो' में कुछ पद व्रजमें हैं, लेकिन इसके रचना-कालके बारेमें, और खासकर इनके व्रजके हिस्सोंके बारेमें, कुछ भी निश्चित नहीं है। ज्यादातर लोग इन्हें सोलहवीं सदीका ही मानते हैं।

व्रजसे पहले राजस्थानीका, डिंगलका रिवाज था। रासो अधिक मात्रामें डिंगलमें ही लिखा हुआ है। व्रजका सबसे पहला कवि सूरदास है, जो सोलहवीं सदीका है।

हिन्दुस्तानीका सबसे पहला साहित्य मुसलमानोंका लिखा ही मिलता है। मुसलमान साधु-सन्तोंने इसमें धर्मकी व्याख्या की है और सूफीमतके सिद्धान्त बयान किये हैं। फिर कवियोंने कविताएँ लिखीं। मुसलमानोंका लिखा होनेकी वजहसे इस साहित्यमें हिन्दी और फारसी के शब्दोंका मेल है। इसकी ध्वनियोंमें फारसी-अरबीकी ध्वनियाँ, मसलन, क़, ग़, ज़, मिल गई हैं। ये ध्वनियाँ व्रजमें नहीं हैं, लेकिन आधुनिक हिन्दीमें हैं।

मुसलमानोंने जिस बोल-चालकी जबानको अपने काममें लिया वह मेरठ व दिल्लीके आस-पासकी बोली है। वह आज भी दिल्लीसे रुहेलखण्डके बीचके इलाकेमें बोली जाती है। इस बोलीको खड़ी बोली (हिन्दुस्तानी) कहते हैं।

हिन्दुस्तानी, आधुनिक हिन्दी और उर्दू इसी बोलीके तीन रूप हैं। आधुनिक हिन्दी हिन्दुस्तानीका साहित्यिक रूप है, जिसमें संस्कृतके तद्भव और तत्सम आजादीके साथ और बहुतायतके साथ इस्तेमाल होते हैं। उर्दूमें फारसी और अरबीके तत्सम बहुत मिले हुए हैं। हिन्दुस्तानीसे मेरा मतलब उस साहि-

त्यकी भाषासे है जिसका आधार खड़ी बोली है, पर जो न तो केवल संस्कृत के तत्समोंको अपनाती है, न केवल अरबी-फारसीके, बल्कि दोनोंको। किसीके लिखने की शैली ऐसी है कि जो संस्कृतकी तरफ झुकती है, किसीकी फारसीकी तरफ। लेकिन हिन्दुस्तानी लिखनेवाले, जहाँतक बन पडता है, संस्कृत और अरबी-फारसी दोनोंके लफ्जोंकी भरमारसे परहेज करते हैं।

मेरा कहना यह है कि हमें न हिन्दीको, जिसमें अरबी-फारसीसे परहेज और संस्कृतसे अधिक मेल है, और न उर्दूको, जिसमें संस्कृतसे परहेज और फारसी-अरबीसे मेल है, देशकी आम भाषा मानना चाहिए। या तो हिन्दुओंकी हिन्दी और मुसलमानोंकी उर्दू मानकर दोनोंको एक-सा दर्जा दे देना चाहिए, या कोशिश यह करनी चाहिए कि हिन्दुस्तानी, जो दोनोंके बीचकी भाषा है, आम भाषा, कुल हिन्दकी भाषा मान ली जाये। जबतक हम यह कहते रहेंगे कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है, तबतक झगड़ेमें कमी नहीं हो सकती। या तो उर्दूको भी राष्ट्रभाषा मान लीजिए या ऐसी भाषाको स्वीकार कीजिए जो दोनोंके मूल खजानोंसे लफ्ज उधार ले सके।

मुझे तो विश्वास है कि मेरा निवेदन सचपर निर्भर है। पर मैं जानता हूँ कि भावके झक्कड़के सामने सचकी लौ झिलमिलाने लगती है और उसका प्रकाश मध्यम पड़ जाता है। मैं यह चाहता हूँ कि आप इस झक्कड़की आँधी से देशको बचाने में मदद करें। जबानका सवाल समाजका और समाजका सवाल स्वराजका सवाल है। जबानके सवालके हलपर थोड़ा-बहुत स्वराजका दारोम-दार जरूर है। इसीसे मैं इसमें दिलचस्पी लेता हूँ और चाहता हूँ कि आपकी सहायताका सौभाग्य हासिल करूँ।

सेवाग्राम, ९ मार्च, १९४२

हरिजन-सेवक, १५-३-१९४२

४८०. पानीकी कमी[1]

काठियावाड हरिजन सेवक सघके मन्त्री श्री छगनलाल जोशीने एक वक्तव्य जारी किया है। उससे ज्ञात होता है कि इस बार काठियावाडमें बहुत-से स्थानोपर पानीकी कमी हो जायेगी। भुखमरी तो फैली ही हुई है। इस सिलसिलेमें खादीके कामको बढाना है। अन्य रचनात्मक काम भी करने हैं। इन सब कामोके लिए धनकी कमी की अपेक्षा स्वयसेवकोकी अधिक कमी है। वक्तव्यमे दोनोकी माँग की गई है। जो कार्यकर्त्ता तैयार हो उन्हे अपना प्रार्थना-पत्र पूरे विवरण-सहित काठियावाड

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

हरिजन सेवक सघ, राजकोटको भेज देना चाहिए। सभी जगह मुख्यत कार्यकर्त्ताओकी कमी है। पानीकी कमीसे तो तभी उबरा जा सकता है जब काठियावाडके राजागण मिल-जुलकर प्रयास करे। निजी सस्थाओ द्वारा जी-जानसे प्रयत्न करने के बावजूद सामान्य परिणाम ही निकल सकेगा। यदि ऐसे मामलोमे राजागण आपसमे और जनताके साथ पूर्ण सहयोग करे तभी काठियावाड बच सकता है।

सेवाग्राम, ९ मार्च, १९४२

[गुजरातीसे]
हरिजनबन्धु, १५-३-१९४२

४८१. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

९ मार्च, १९४२

भाई जीवणजी,

तुम्हारे पास अग्रेजीकी जो सामग्री पडी है, उसमे से लम्बे लेख छोडकर बाकी सबका समावेश हो जाये, इसलिए इस हफ्ते अग्रेजीकी सामग्री कम ही भेजूंगा। फिर भी इसके बाद कुछ तो जरूर भेजूंगा।

बापूके आशीर्वाद

[पुनश्च]

उर्दूके लिए तैयार रहना।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४८) से। सी० डब्ल्यू० ६९२३ से भी, सौजन्य . जीवणजी डा० देसाई

४८२. पत्र : शशि र० मेहताको

९ मार्च, १९४२

चि० शशि,[1]

तेरे पत्रका उत्तर तुरन्त दे ही नही सका। तू परीक्षा पास करके तुरन्त आ जाना। प्रभाशकरभाई[2] से कहना कि उनका पत्र मिला है। मगनभाईसे उन्हे लिखने

१. रतिलाल प्रा० मेहताकी पुत्री
२. शशि मेहताके नाना

को कह दिया है और वह लिखा करता है, इसलिए मेरे लिए कुछ करने को नही रह जाता।

बापूके आशीर्वाद

मूल गुजराती (सी० डब्ल्यू० १०५१) से। सौजन्य चम्पाबहन मेहता

४८३. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

सेवाग्राम, वर्धा
९ मार्च, १९४२

चि० जवाहरलाल,

तुम्हारा खत मिला। अगले खतका उत्तर मैंने तुरन्त दे दिया था। मिल गया होगा।

मुकरजी हमारा अच्छा नेक कामदार है। उसके पास जमीन है। उसको मैंने पूछा था। उसने कहा मैं दान हरगीज नही चाहता हू। मुझे तो कुछ शक नहिं है कि वह पूरा रुपैया वापस करेगा। सूद देनेकी भी उसकी तैयारी थी। हमने दूसरे कामदारोको काफी मदद दी है। मेरा तो निश्चित मत हे कि हम भाई मुकरजीको रु० ३,००० छे मासके लिये दे।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे गाधी-नेहरू पेपर्स। सौजन्य नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

४८४. शहरोंसे हिजरतकी जरूरत

जिनके लिए शहरोमें रहना जरूरी नही है और जो वहाँ रहने लायक नही है अथवा जो रहना नही चाहते है, उन्हें शहर छोडकर जानेकी जो सलाह मैंने दी है,[1] एक पत्र-लेखक चाहते हैं कि मैं उसके बारेमें अपनी राय जरा विस्तारसे लिखूँ। किसीके भी लिए यह जरूरी नही है कि वह अपनी मर्जीके खिलाफ शहरमें रहे। और, यह तो साफ है कि जब शहरोंपर हवाई हमले होगे तो लडाईमें शामिल न रहने-वाले लोग हर तरहसे बोझ ही बनेंगे। बलवान शत्रुसे सफलतापूर्वक अपनी रक्षा करने के लिए यह जरूरी है कि पूरी एकाग्रताके साथ उसको रोकने का प्रबन्ध किया जाये और जो लोग रक्षाके काममें लगे हैं उनका ध्यान किसी भी हालतमें न बँटाया जाये। यह तो इस प्रश्नका सैनिक दृष्टिसे विचार हुआ।

१. देखिए "शान्तचित्त रहिए", पृ० ३५७-५८।

लेकिन हमारे बीच कुछ ऐसे लोग भी है, जो मानवता या राजनीतिकी दृष्टिसे युद्धका विरोध करने मे विश्वास रखते है। अगर उनका हेतु सरकारको सिर्फ परेशानीमे डालने के खयालसे उसे परेशानीमे डालना न हो, तो उन्हे शहरोमें नही रहना चाहिए। मैं उम्मीद करता हूँ कि ऐसा कोई आदमी है नही। इसलिए उन्हें शहर खाली करके बाहर चले जाना चाहिए। इनके सिवा कुछ ऐसे लोग भी है जिन्हे नही मालूम कि बमबारीकी हालतमे वे क्या करेगे। इन सबको शहरोसे बाहर चले जाना चाहिए। जैसा कि पाठक देखेगे, मेरी इस रायका मेरे युद्ध-विरोधी विचारोके साथ कोई सम्बन्ध नही है। क्योकि इस मामलेमे फौजी जरूरते और युद्ध-विरोधियो का कर्त्तव्य दोनो किसी हदतक एक-सी कार्रवाईकी अपेक्षा रखते है।

अगर मैं किसी एक शहरको या सब शहरोको, जिनमे कलतक लडाईमे फँसे हुए शहर भी शामिल है, अपने विचारोका कायल कर सकूँ, तो मैं आक्रमणकारी शत्रुओका स्वागत करके उन्हे भी अपने विचारोका कायल करने की कोशिश करूँ या बिना किसी तरह उनका प्रतिकार किये उन्हें चुनौती दूँ कि वे उनसे जो बने सो कर गुजरे। लेकिन यह सब तो मेरी तकदीरमे है नही। अगर शहरवालो का हृदय-परिवर्तन हो जाये, तो शासको-सहित सारे हिन्दुस्तानका भी हृदय-परिवर्तन हो जाये, और हिन्दुस्तानके साथ-साथ सारी दुनियामे शान्ति कायम हो जाये। मगर फिलहाल तो यह सब दिवास्वप्न ही रहेगा। फिर भी, मैं यह जरूर कहूँगा कि आज मेरी जो स्थिति है, उसमे किसीके यह कहने से कोई फर्क नही पडेगा कि जापानी या नाजी ठीक वैसे नही है जैसे अंग्रेज है। मैं मनुष्य-मनुष्यके बीच ऐसा कोई मौलिक भेद नही मानता। लेकिन जो हकीकत आज हमारे सामने एक बडे मसलेके रूपमें पेश है, उसकी चर्चा छोडकर मैं अपने पाठकोके साथ कल्पना-विहार नही करना चाहता।

मान लीजिए कि जिन्हें जाना चाहिए, वे सब या उनमे से कुछ लोग शहर खाली करके गाँवोमे चले गये है या जाने की तैयारीमे है, तो वे वहाँ जाकर करे क्या? वे देहातमें देहातियोकी-सी वृत्ति लेकर भरसक देहाती जीवन बिताने के लिए जाये। वहाँ जाकर उन्हे न तो शहरोका-सा वातावरण तैयार करना चाहिए और न काम-चलाऊ महल खडे करने चाहिए। देहातमे उन्हे सेवाकी भावनासे जाना चाहिए, वहाँ की आर्थिक और दूसरी परिस्थितियोका अध्ययन करना चाहिए, और दान देकर नही, बल्कि स्थायी ढगके काम-धन्धेका प्रबन्ध करके उनकी हालतको सुधारना चाहिए। मतलब यह कि उन्हें गाँवोमे पहुँचकर रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल शुरू कर देना चाहिए। इस तरह वे खुद गाँववालो के साथ एक होकर एक प्रकारकी सहकारी समिति खडी कर देगे, जिसका आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक और आरोग्य-सम्बन्धी नव-निर्माणका एक सुव्यवस्थित कार्यक्रम होगा।

देहातमे जाकर वसनेवालो के सामने सबसे बडी समस्या तो चोर-डाकुओका मुका-बला करने की होगी। इसमे उनकी सारी कुशलताकी परीक्षा हो जायेगी। इसका अहिंसक तरीका तो है ही। लेकिन अगर वह उनकी समझमे न आया हो, तो उन्हे चाहिए कि वे गाँववालोके सहयोगसे चोरो और डाकुओका सशस्त्र विरोध करने को सगठित हो जाये। इस प्राथमिक ढगके कामके लिए भी हम काफी अरसे

तक सरकारका मुँह ताक चुके हैं, यहाँतक कि जरायम-पेशा कही जानेवाली कौमोंको सुधारने का बोझ भी हमने सरकारपर ही डाल रखा है। मगर सरकार कुछ कर भी सकती हो तो भी आजकी इस नाजुक घड़ीमें वह ज्यादा-कुछ न कर पायेगी। इसलिए मजबूरीमें इसकी जिम्मेदारी भी उन लोगोंपर आ जाती है जो शहर छोड़कर गाँवोंमें बसेंगे — चाहे वे इसे हिंसा द्वारा करें, अहिंसा द्वारा करें या दोनों तरीकोंसे करें।

सेवाग्राम, १० मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १५-३-१९४२

४८५. पत्र : बहरामजी खम्भाताको

१० मार्च, १९४२

भाई बहरामजी,

ऐसी खबर मिली है कि तुम फिर बीमार पड़ गये हो। अनेक बीमारियों में उठ खड़े हुए हो तो फिर इसमें भी क्यों नहीं उठोगे? फिर भी, हम सब ईश्वरके अधीन हैं। उसे जो करना होगा करेगा, इसलिए अपने अन्तरका आनन्द बिलकुल मत गँवाना।

बापूकी दुआएँ

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७५६२) से। सी० डब्ल्यू० ५०३७ से भी; सौजन्य : तहमीना ब० खम्भाता

४८६. पत्र : कान्ति गांधीको

सेवाग्राम
१० मार्च, १९४२

चि० कान्ति,

तेरा पत्र मिला। मैं सरस्वतीको निश्चय ही रोकनेका प्रयत्न करूँगा। उसे जो-कुछ सिखाया जा सकता है, वह सिखाऊँगा। डिस्पेंसरीमें तो उसकी जरूरत है ही। शान्तिको[1] तो बहुत सारे साथी मिल जायेंगे।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे : छगनलाल गांधी पेपर्स। सौजन्य : गांधी स्मारक संग्रहालय, अहमदाबाद

१. कान्ति गांधीका पुत्र

४८७. पत्र : पद्मपत सिंहानियाको

१० मार्च, १९४२

भाई पद्मपतजी,

आपका पत्र तथा हुडी मुझे मिल गई है। जमनालालजी के साथ आपकी क्या बात हुई थी उसका मुझे पता नही था इसलिये मैंने भाई श्रीमननारायणसे जान लेना ठीक समझा। उनका पत्र इसके साथ रखता हू। प्रश्न उठता है क्योंकि राष्ट्र-भाषा प्रचार समितिका सम्बन्ध हिंदी साहित्य सम्मेलनसे है। अब ऐसी नौबत पैदा हो गई है कि यहाकी समितिको अलग होना पडे। मैंने, जमनालालजी और दूसरे सभ्योने तय कर लिया था कि राष्ट्रभाषामे उर्दू जबानको भी पूर्ण स्थान देना है। और दोनो मिलके जो भाषा बनती है वह काग्रेसके प्रस्तावके मुताबिक हिन्दुस्तानी है। इस परिवर्तनके लिये शायद हिन्दी साहित्य सम्मेलन तैयार नही होगा। उस हालतमें आप क्या चाहेगे? हिन्दुस्तानी यानी हिन्दी+उर्दू-प्रचारको आप पसद करेगे कि नही? जैसी आपकी इच्छा होगी ऐसा किया जायगा। अगले १५,००० में से भी कुछ रुपये तो जमनालालजी के दफ्तरमे है। आपके पत्र आने तक मै चेक बैंकमे नही भेजता हू।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी नकल से प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

४८८. पत्र : कान्ति गांधीको

[१० मार्च, १९४२ के पश्चात्][1]

चि० कान्ति,

तुझे पत्र लिख ही नही सकता। समयकी तगी होने की बातको तू समझता है न? सरस्वतीको रोकने का प्रयत्न कर रहा हूँ? एक बार तो उसने स्वीकार किया कि वह अस्पतालमे काम करेगी। अब वह कहती है कि वह बहुत अस्थिर है, मुझे उसका विश्वास नही करना चाहिए। वह पहलेकी तरह ही भोली है। शान्ति बहुत घुल-मिल गया है। तेरी तरह ही शैतानी करता रहता है। शक्ल भी तेरे जैसी है। मानो कोई पुराना दोस्त हो, इस तरह उसने मेरी गद्दीपर कब्जा कर लिया है। उसे गुड तेरे जितना ही अच्छा लगता है। वैसे ठीक रहता है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी नकलसे . छगनलाल गाधी पेपर्स। सौजन्य गाधी स्मारक सग्रहालय, अहमदाबाद

१. साधन-सूत्रमें "२६ फरवरी, १९४२" तारीख दी हुई है, जो स्पष्ट ही भूल है। पत्रके पाठसे यह स्पष्ट हो जाता है कि यह पत्र २८ फरवरी और १० मार्चको कान्ति गाधीको लिखे पत्रोंके बाद लिखा गया था; देखिए पृ० ४०५ और ४४१।

४८९. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

११ मार्च, १९४२

भाईश्री जीवणजी

'रचनात्मक कार्यक्रम'[1] की अंग्रेजी प्रतियाँ तुम्हें यहाँ रखनी चाहिए। या तो किसीको एजेन्सी दे दो, या यहाँ भेज दो तो मैं उन्हें बेचने का प्रयत्न करूँगा। 'हरिजन' में भी इस सम्बन्धमें टिप्पणी दी जा सकती है।

'भजनावली'के बारेमें बारीकीसे विचार करने की जरूरत है। यह कैसे हो? इसलिए अभी तो काम चलाओ। कभी जेल जाने का मौका आयेगा तो शायद मैं यह और ऐसे अन्य काम कर सकूँगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९४९) से। सी० डब्ल्यू० ६९२४ से भी; सौजन्य: जीवणजी डा० देसाई

४९०. पत्र : हीरालाल शास्त्रीको

सेवाग्राम, वर्धा
११ मार्च, १९४२

भाई हीरालाल शास्त्री,

जयपुरके कार्यकर्ताके बारेमें मुझको ठीक याद दिया। मैं भूल गया था। रचनात्मक क्षेत्रमें कार्य करनेवाले सबके लिये और जयपुरके कार्य करनेवालोंके लिये खास कर जमनालालजी का जीवन आदर्श बनना चाहिये। जमनालालजीके गुणोंका वर्णन करना या उनका पुतला बनाना उनकी निंदा करना होगा। यह सब करें। लेकिन उनके साथ जमनालालजीके जीवनका अनुसरण नहीं होगा। अनुसरण नहीं होगा तो वह स्तुति इ० व्यर्थ माना जाय।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे: हीरालाल शास्त्री पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

१. देखिए पृ० १६१-१८३।

४९१. बातचीत : खादी विद्यालयके विद्यार्थियोंसे[1]

सेवाग्राम
११ मार्च, १९४२

हर रोज दोनो समय प्रार्थनाके बाद हम एकादश व्रत मन्त्रका गायन करते है। व्रत-मात्रके सेवनसे ही, फिर चाहे वह छोटा हो या बडा, हमारा जीवन बनता है। इतना ही नही परन्तु चैतन्य विश्व, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र आदि को भी व्रतधारी कहा गया है, क्योकि वे नित्य अपनी गतिके मुताबिक चलते है। आखिर जडता भी सापेक्ष ही है न। जहाँ नियमका पालन इतनी दृढतासे होता है, उसे हम सर्वथा जड़-मात्र कैसे मान सकते है? खगोल-शास्त्री हमे बताते है कि नभ-मण्डलमे ग्रह या नक्षत्रोमें से अगर एक भी ग्रह या नक्षत्र अपनी गतिके अनुसार चलना बन्द कर दे या एक जर्रा-भर भी उसमे फर्क आ जाये, तो सारा ग्रह-मण्डल अस्त-व्यस्त हो जाये। उनका नाश ही हो जाये। इस तरह अगर सारी प्रकृतिमे नियमका पालन अनिवार्य है, तो नियमका बनानेवाला और पालन करानेवाला भी कोई होना चाहिए, वह ईश्वर है। उसीको साक्षी बनाकर विश्व अपनी गतिपर चलता है। परन्तु हम क्षुद्र प्राणी एक छोटा-सा व्रत भी लेते है, तो उसका पालन नही कर सकते।

आज यहाँ व्रत लेनेवाले सब खादी विद्यालयके विद्यार्थी है। आप सब लोग यहाँ एक खास उद्देश्यको लेकर एक खास कार्यक्रम को पूरा करने आये है। आपको याद रखना चाहिए कि चरखा सघका भविष्यमे आधार आपपर ही है। हमने अनुभवसे पाया है कि अगर इसे आगे बढना है तो एक विद्यालय भी चाहिए, जहाँ खादीशास्त्र सिखाया जाये। साधारण पाठशालाओमे जो पढा या सीखा जाता है, वह तो परीक्षाके बाद सब वही-का-वही धरा रह जाता है। परन्तु इस विद्यालयमे तो आप जो सीखें, उसे आपको अपने जीवनका अविभाज्य अग बनाना होगा। जहाँ तक मुझे मालूम है, ऐसी और कोई सस्था हिन्दुस्तानमे नही। इसलिए आपको बडा भारी बोझ उठाकर चलना है। यहाँसे तालीम पाने के बाद आपमे से कोई धनाढ्य बनना चाहे तो बन सकता है, परन्तु जो आदर्श लेकर आप यहाँ आये है, वह तो यह है कि आपको अपना सारे-का-सारा जीवन कृष्णार्पण करना है। आपको धनाढ्यसे भी बहुत ऊँचे दर्जेपर पहुँचना है। आपको करोडोका व्यापार करना है, परन्तु अपनी खातिर नही, गरीबकी हाजत पूरी करने के लिए। आज तो गरीबकी हाजत को पूरा करने जितनी खादी भी हमारे पास नही। मगर आगे जाकर तो अरबोकी

१. विद्यार्थी जमनालाल बजाजका मासिक मनाने के लिए एकत्र हुए थे। आधा घटा कताई करने के बाद उन्होंने अपने लिखित संकल्प पढ़े।

उत्पत्ति व बिक्री और उसके सारे हिसाव-किताव रखने की व्यवस्था आपको करनी होगी और वह भी शास्त्रीय पद्धतिसे। आज तो खादी-उत्पत्तिका शास्त्र हमारे पास नही है। देहातोंके अर्थशास्त्रके नियम क्या हैं — वह भी हम नही जानते। यह काम हमें करना है। इस तरह एक ऐसी चीज, जिसका प्रभाव सारे जगतपर पडता है, आपने कंधेपर ली है। इसके लिए दृढ व्रतधारी कार्यकर्त्ता चाहिए। हृदयके साथ बुद्धिका समन्वय हम कर सकें, तो उसमें से कितना महत्त्वपूर्ण परिणाम निकलेगा — इसकी कल्पना भी आज हम नहीं कर सकते। आपको सतत प्रगतिशील बनना चाहिए। आत्मनिरीक्षण और संशोधन करने की आदत डालनी चाहिए। आसपास आश्रममें जो-कुछ होता है, उसे भी देखते रहना चाहिए, परन्तु त्रुटियोको नही, गुणोपर ही आपका लक्ष्य हो। आप सच्चे अर्थोंमें गुणग्राही बनेंगे तो अंजाम अच्छा ही होगा।

खादी-जगत्, मार्च, १९४२

४९२. पत्र : नारणदास गांधीको

१३ मार्च, १९४२

चि० नारणदास,

तुम्हारे दो पत्र मिले। तुम्हारा काम साफ-सुथरा और स्थिर चित्तसे किया हुआ होता है। तुम्हारा कथन संक्षिप्त और प्रासंगिक होता है।

नीम हकीमके इलाजसे जिस तरह जमना अच्छी हो गई उसी तरह शायद वा भी अच्छी हो जाये। अपने-जैसा एक नीम हकीम यहाँ मुझे मिल गया है, जो वा का इलाज कर रहा है। आचार्य नरेन्द्रदेवको भी उसके हाथमे सौंप दिया है। कुछ थोडी-सी आशा बँधती है कि वे रोग-मुक्त हो जायेंगे। वा ने काफी कष्ट उठाया। चिमनलालकी जाँच भी वही व्यक्ति करता है।

वीणासे जमनाकी समुचित देखभाल करवाना। मैं आभाको वहाँ भेजने की व्यवस्था कर रहा हूँ। लडकियोको तुम्हारी देख-रेखमे रखते हुए मुझे अच्छा लगता है। मैं यह मानकर चल रहा हूँ कि जब तुमपर बहुत अधिक भार पडने लगेगा तब तुम नि संकोच इनकार कर दोगे।

प्यारेलालके घर जो पैसा भेजा जाता है, क्या वह सत्याग्रह आश्रम फण्डसे भेजा जाता है? क्या उसका कुछ पैसा तुम्हारे पास है?

कनैयो परसों यहाँ पहुच जायेगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८६०२ से भी, सौजन्य· नारणदास गाधी

४९३. पत्र : अन्नपूर्णा चि० मेहताको

१३ मार्च, १९४२

चि० अन्नपूर्णा,

तू बीमार क्यों पड जाती है? जो हो, आवश्यक रद्दोबदल करके जल्दी अच्छी हो जाना। कुछ पढती है या नही?

बा अच्छी है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (एस० एन० ९४३५) से

४९४. पत्र : मीराबहनको

१५ मार्च, १९४२

चि० मीरा,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे खुशी है कि तुमने असत्यको जान लिया। खतरा अभी दूर नही हुआ है। परन्तु ईश्वर तुम्हारा सच्चा मार्ग-दर्शक और हितैषी है। उसपर पूरा भरोसा रखो। तुम्हारा शरीर तुम्हारी मन स्थितिका सही सूचक है।

आश्रममे बहुत भीड हो गई है, लेकिन चल रहा है।

स्नेह।

बापू

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ६४९४) से, सौजन्य: मीराबहन। जी० एन० ९८८९ से भी

४९५. पत्र : जे० सी० कुमारप्पाको

सेवाग्राम
१५ मार्च, १९४२

प्रिय कु०,

झवेरभाईने बताया है कि भारत-भरमें चुने हुए स्थानोंपर कोल्हू लगाने की उनकी योजना और तत्सम्बन्धी बजटपर तुमने अपनी स्वीकृति दे दी है। मुझे स्वीकृति विधिवत् भेज दो, ताकि मैं योजनापर विचार कर सकूँ।

तुम्हारा,
बापू

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०१६३) से

४९६. पत्र : प्रभावतीको

१५ मार्च, १९४२

चि० प्रभा,

तेरा पत्र मिला। जयप्रकाश दहींके बदले दूध तो अवश्य ले। यह अच्छा भी रहेगा। वह जितना चाहे उतना दूध पी सकता है। यदि फिलहाल मक्खन न ले तो अच्छा होगा। कच्ची खाने लायक हरी सब्जियाँ जेलके बगीचेमें उगाई जा सकती हैं। खानसाहबने बारह महीनेतक अपनी ही उगाई हुई सब्जियाँ खाई थीं। हरी सब्जियों के बिना अच्छा स्वास्थ्य बनाये रखना मुश्किल है।

इस बातका दुःख नहीं मनाना चाहिए कि तू पिताजी के पास नहीं रह सकती। तूने सेवा-धर्मका वरण किया है। चिन्ता मत कर। और कोई चारा मुझे नजर नहीं आता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३५७३) से

४९७. पत्र : घनश्यामदास बिड़लाको

१५ मार्च, १९४२

भाई घनश्यामदास,

तुम्हारा खत मिला। वैद्यने महेनत तो बहुत की। लेकिन बा को चाहिये सो आराम नही हुआ। अब एक नैसर्गिक उपचारक आया है। उसमे काफी दोष है। लेकिन कुछ जानता है। आज चौथा दिन है। बा को अच्छा लग रहा है। बा को तीन दिन तक आकडेके दूधसें के करवाई उससे बलगम निकला और कुछ शान्ति हुई। . [1] करने की नीतिके बारेमे मैं लिखूगा।

नासिक सेनेटोरीयममे किसीको मैं भेज सकता हू क्या? अर्थात् सेनेटोरीयममे जगह रहती है? भरा रहता है तो खास जगह मैं नही चाहता हूँ। ऐसी कोई खास तजवीजकी आवश्यकता नही है।

भाईजी को यहा आने की खास तकलीफ देना नही चाहता हू—स्वेच्छासे आवे तो मुझे अच्छा लगेगा।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्र (सी० डब्ल्यू० ८०५५) से। सौजन्य घनश्यामदास बिडला

४९८. सम्पत्ति-ध्वंसकी नीति

रूसकी सम्पत्ति-ध्वसकी नीतिसे मानवता स्तम्भित है, किन्तु स्तम्भित मानवता शत्रुकी योजनाको विफल करने के निमित्त बडीसे-बडी आहुति देने को उद्यत बलिदान की भावना और वीरताकी प्रशस्ति करने के अतिरिक्त और कुछ नही कर पाई है। यह सब देखकर इन प्रशसकोकी तरह आश्चर्य मुझे भी हुआ है, किन्तु उनकी प्रशसा के स्वरमें मैं अपना स्वर नही मिला पाया हूँ।

हम जिस वस्तुकी प्रशसा करते है उसका अनुकरण करने का भी मन होता है। अब तो यहाँ भी ऐसी ही परिस्थिति उपस्थित हो रही है। तब क्या शत्रुके बढावको रोकने के लिए भारतकी धरतीके उजाड बना दिये जाने और हर वस्तुके नष्ट कर दिये जाने की सम्भावनाके विषयमे सोचकर हम अपने चित्तको शान्त रख पा रहे है, या हममें वीरता और बलिदानकी भावना दमक उठी है?

१. यहाँ एक शब्द अस्पष्ट है।

युद्ध-विरोधीके नाते मेरा तो एक ही उत्तर हो सकता है। मुझे तो आक्रमण या आत्मरक्षा किसी भी उद्देश्यसे जीवन और धन-सम्पत्तिके ध्वसमें किसी प्रकारकी वीरता या बलिदानकी भावना दिखाई नही देती। अगर मुझे अपनी फसल और अपना घर-द्वार छोडना ही पडे तो मेरा शत्रु उनका उपयोग न कर पाये, इस खयालसे उन्हें नष्ट करने की अपेक्षा मैं यह अधिक पसन्द करूँगा कि मैं उन्हें ज्यो-का-त्यो छोड दूँ, भले ही मेरा शत्रु उनका उपयोग क्यो न करे। यदि मैं भयके वशीभूत होकर नही, बल्कि इसलिए कि मैं किसी को अपना शत्रु मानने को तैयार नही हूँ — अर्थात् मानव-प्रेमसे प्रेरित होकर — अपनी फसलो और अपने घर-द्वारको ज्यो-का-त्यो छोड़ देता हूँ तो उसके पीछे विवेक होगा, बलिदान-वृत्ति होगी और वीरता होगी।

किन्तु, भारतके सम्बन्धमें तो एक व्यावहारिक समस्या भी है। रूसके विपरीत भारतीयोमें उस अर्थमें विकसित ढगकी राष्ट्र-भावना नही है जिस अर्थमें वह रूसियोमें है। भारत लड नही रहा है। हाँ, उसके विजेता अवश्य लड रहे हैं। मान लीजिए, ये विजेता पराजित हो जाते हैं और उनकी जगह जापानी इस देशमें आ जाते है तो यहाँकी मूक जनता कुछ समयतक, या शायद दीर्घ कालतक भी, उसमे होनेवाले परिवर्तनको लक्ष्य भी नही कर पायेगी। बौद्धिक वर्गमें युद्धके प्रश्नपर मतभेद है। इसके पीछे क्या हेतु है, यह बात तो यहाँ अप्रासगिक है। भारतके सिपाहियोको किसी भी अर्थमें राष्ट्रीय सेना नही कहा जा सकता। वे सिपाही इसलिए है कि यही उनका पेशा है। यदि उन्हें लडनेके लिए ठीक मजदूरी मिले तो वे जापानी या किसी और झण्डेके नीचे भी उतनी ही खुशीसे लडेंगे जितनी खुशीसे अग्रेजोंके झण्डेके नीचे लड रहे हैं। इन परिस्थितियोंमें यहाँ तो सम्पत्ति-ध्वसकी नीतिका किसी प्रकार भी औचित्य नहीं ठहराया जा सकता।

इसलिए यह बडे सन्तोषका विषय है कि भारतीय लोकमत सम्पत्ति-ध्वसकी नीतिके विरुद्ध आवाज उठा रहा है। सैनिक आवश्यकताओका मुझे कोई ज्ञान नही है, लेकिन जिन सिद्धान्तोको देशने राष्ट्र-हित या मानव-हितकी दृष्टिसे अपना लिया हो उनके सामने उन्हें वरीयता नही दी जा सकती। इस प्रकार सेनाको नागरिक सत्ताका विकल्प नही वरन् उसके इगितपर काम करनेवाली भुजा होना चाहिए। इसलिए यदि भारत सरकार स्पष्ट शब्दोमें यह घोषणा कर दे कि कभी आवश्यकता हुई भी तो वह भारतमें, उसकी विशेष स्थितिका ध्यान रखते हुए, सम्पत्ति-ध्वसकी नीतिसे काम नही लेगी तो उससे जनताको काफी राहत मिलेगी और उसकी चिन्ता मिट जायेगी।

सेवाग्राम, १६ मार्च, १९४२

[अग्रेजीसे]
हरिजन, २२-३-१९४२

४९९. बिहारमें हरिजन बस्ती[1]

अभी हालमें आरामें एक हरिजन बस्तीका उद्घाटन करते हुए राजा बहादुर कामाख्यानारायण सिंह अस्पृश्यताके विरुद्ध जिस स्वरमें बोले उससे इन्दौरके महाराजा साहब द्वारा हरिजनोंको दिया गया सन्देश[2] स्मरण हो आता है। [राजा बहादुरने कहा]

> करोड़ों लोगोंको अस्पृश्य मानकर चलना हम तथाकथित सवर्ण हिन्दुओंका एक बहुत बड़ा अपराध है। वे भी प्रभुकी ही सृष्टि हैं। उनका शरीर भी वैसा ही बना है जैसा हमारा है। वे भी उन्हीं मानवीय आकांक्षाओंसे परिचालित होते हैं, वे भी अपमान और दुःखका अनुभव उसी तरह करते हैं जैसे हम करते हैं। लेकिन आज उनमें विरोधकी आवाज उठाने की शक्ति नहीं है। लेकिन उनका आर्त्त स्वर ईश्वरतक अवश्य पहुँचता है और यदि हम इस स्थितिको नहीं बदलते तो निश्चय ही हम अभिशापसे ग्रसित होंगे। हमें अपने पापोंका प्रायश्चित्त करना चाहिए। हमने ईंट और गारेसे उनके रहने के लिए कुछ व्यवस्था कर दी है, लेकिन यह तो समुद्रमें बूँदके समान है। हमारा प्रायश्चित्त तभी पूरा होगा जब हम उन्हें अपने हृदयोंमें स्थान देंगे और उनको उसी तरह गले-लगायेंगे जिस तरह महान् भरतने अधम केवट गुहको गले लगाकर स्वयंको ऊपर उठाया था।

यदि राजा बहादुरकी तरह सभी सवर्ण हिन्दू अपने हृदयसे अस्पृश्यताको मिटा दें तो हमारे समाजसे यह कलंक भी शीघ्र ही मिट जाये।

सेवाग्राम, १६ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-३-१९४२

५००. प्रश्नोत्तर

भुखमरी

प्र० : ग्राम-संरक्षक दलोंके संगठनकी अपेक्षा इस वक्त अनाजकी तंगी और महँगी का सवाल देहातोंमें ज्यादा महत्त्व रखता है। भूखकी अग्नि भाषणोंसे कैसे शान्त होगी? देशमें न इतने पूँजीपति हैं, और न उनकी त्याग-भावना ही इतनी तीव्र है कि वे इस मामलेको सुधार सकें। कृपया मार्ग बतलाइए।

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

२. देखिए "अस्पृश्यता और इन्दौर", पृ० ४३३-३४।

उ० : मेरी दृष्टिमें तो संरक्षक दलोंका भी यह काम है। कैसे भी हो, मैंने भुखमरीका उपाय बताया तो है।[1] आजसे उसका उपयोग होना चाहिए।

१ शास्त्रीय दृष्टिसे खाना। इससे अनाज बचता है।

२ जो खाद्य फसल इस ऋतुमें बोई जा सकती है, बोना।

३. जो जंगली भाजी इत्यादि खाद्य वस्तु बगैर प्रयत्नके उगती है, उसका संशोधन करना और उपयोग करना।

४. बेकारी मिटाना। कोई मनुष्य बेकार न बैठे। मजदूरी न मिले, तो अपने लिए पैदा करे, जैसे कातना।

मुझे डर है कि यदि लड़ाई शीघ्र बन्द न हुई और जापानका प्रवेश हिन्दमें हुआ, तो खाद्य पदार्थ एक जगहसे दूसरी जगह ले जाना मुश्किल हो जायेगा, असम्भव भी हो सकता है। इसलिए जिस जगह आवश्यकतासे अधिक अनाज वगैरा है, उसे आवश्यक जगह पहुँचाना चाहिए।

मैं जानता हूँ कि इन सब चीजोंका करना भी मुश्किल है, लेकिन उसके सिवाय कोई दूसरा इलाज मैं नहीं पाता।

कारकून क्या करें?

प्र० : शहरोंसे देहातोंमें जानेवाले धनी लोगोंके कर्त्तव्य आपने कुछ बताये।[2] लेकिन हजारों शहर छोड़नेवाले लोग ऐसे हैं जिनका सारा जीवन कारकूनी करनेमें बीता है। उनके पास अपना धन तो है ही नहीं; और उनमें से कइयोंके तो किसी जगह अपने बाप-दादोंका कोई घर या गाँव भी नहीं है। उनके लिए कुछ सलाह दीजिएगा?

उ० : सम्भव है, कारकून लोग अपने मालिकोंके साथ जायें। जो नहीं जायेंगे, उनको देहातमें जाकर कुछ-न-कुछ करना होगा। एक काम तो कातनेका है। आजसे ही तैयारी की जाये तो मौका आने पर हम तैयार रह सकेंगे।

सेवाग्राम, १६ मार्च, १९४२
हरिजन-सेवक, २२-३-१९४२

५०१. कायदेआजमका जवाब[3]

कायदेआजमने मेरी अपीलका[4] जो जवाब दिया है, उसे मैं पढ गया हूँ। पढकर मुझे गहरा दुःख हुआ है। मैंने उनसे अच्छे जवाबकी उम्मीद की थी। यदि उस क्षोभजनक लेखको पूरा-का-पूरा उद्धृत किया जाये, तो उसका असर और भी बुरा होगा। क्योंकि वह सारा-का-सारा लेख विद्वेषपूर्ण है। कायदेआजम जानते हैं कि जब आलो-

१. देखिए "सच्चा युद्ध-प्रयत्न", पृ० २५८-६१।
२. देखिए "शहरोंसे हिजरतकी जरूरत", पृ० ४३९-४१।
३. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
४. देखिए "कायदेआजमसे अपील", पृ० ४१३-१४।

चनाका अवसर आता है तो मैं किसी भी पक्ष या व्यक्तिकी आलोचना करने में झिझकता नही। गैर-मुस्लिम पत्रोमे छपनेवाले आपत्तिजनक लेखोको मैं कई वार आलोचना कर चुका हूँ।

उक्त आपत्तिजनक लेखके लेखकको मै नही जानता। अगर लेखक हिन्दू है, तव तो कायदेआजमकी यह सफाई और भी बुरी ठहरती है। जिस चीजका कोई वचाव नही हो सकता, उसके वचावमें कायदेआजमने अप्रासगिक दलीलसे काम लिया है, इसका मुझे खेद है। लोगोकी आन्तरिक भावनाओको गहरी चोट पहुँचाने के इरादेसे लिखे गये लेखका यह अप्रत्याशित वचाव किसी अच्छे सगुनकी सूचना नही देता।

सेवाग्राम, १७ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २२-३-१९४२

५०२. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

सेवाग्राम
१७ मार्च, १९४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। और धोतियाँ[1] भी मिली। मै कल उसे पहनकर जाऊँगा। और अधिक नही लिखता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४२३) से। सी० डब्ल्यू० ६८६२ से भी, सौजन्य : प्रेमाबहन कंटक

५०३. भूल-सुधार[2]

२२ फरवरी, १९४२ के 'हरिजन' मे डॉ० प्रफुल्लचन्द्र घोषके अ० भा० ग्रामोद्योग सघकी प्रवन्ध समितिके सदस्य मनोनीत किये जाने की घोषणा की गई थी।[3] यह एक भूल थी, क्योकि कांग्रेस कार्य-समितिका सदस्य होने के कारण श्री घोष अ० भा० ग्रामोद्योग सघकी प्रवन्ध समितिके सदस्य नही वन सकते।

सेवाग्राम, १८ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-३-१९४२

१. प्रेमाबहन द्वारा काते गये सूतसे वनी धोतियाँ, जो उन्होंने शंकरराव देवकी मार्फत गांधीजी को भेजी थी। प्रेमाबहन चाहती थीं कि शंकरराव देव गाधीजी को ये धोतियाँ पहने देखें।

२. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।

३. "अ० भा० ग्रामोद्योग संघके प्रथम चरणकी समाप्ति" शीर्षक लेखमें।

५०४. प्रस्तावना : 'मीडियम ऑफ इन्स्ट्रक्शन' की

१८ मार्च, १९४२

प्रिंसिपल श्रीमन्नारायण अग्रवालकी यह कृति बहुत ही सामयिक है और इससे मातृभाषाके माध्यमसे उच्चतम शिक्षा देने की सम्भावना और वाछनीयताके बारेमें मौजूद भय और अविश्वास बहुत हदतक दूर हो सकना चाहिए। मेरे लिए तो यह अपने-आपमें गहरे दुःखका विषय है कि ऐसे प्रकट सत्यको समझाने के लिए भी दलील देने की जरूरत हो। यद्यपि प्रिन्सिपल अग्रवालने अपनी इच्छानुसार अंग्रेजी भाषाका अधिकसे-अधिक ज्ञान अर्जित किया है, लेकिन उन्होंने कभी भी अंग्रेजीके प्रति अपने आदर-भावको मातृभाषाके प्रति अपने प्रेमका स्थान नहीं लेने दिया। इसलिए उन्होंने जो सत्कार्य अपने हाथमें लिया है उसके लिए वे सब तरहसे योग्य हैं। मुझे आशा है कि जबतक विभिन्न प्रान्तोंमें मातृभाषाएँ अपने-अपने अपेक्षित स्थानपर प्रतिष्ठित नहीं हो जाती तबतक वे चैनसे नहीं बैठेंगे।

जिन लोगोंके हाथोंमें युवा-शिक्षणकी बागडोर है वे यदि तय कर ले तो मुझे इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं है कि उन्हें इस सचाईका सहज ही बोध हो जायेगा कि जिस प्रकार माँका दूध शिशुके शारीरिक विकासके लिए प्राकृतिक और स्वाभाविक पोषण है उसी प्रकार मातृभाषा भी मनुष्यके मानसिक विकासके लिए अत्यन्त स्वाभाविक साधन है। और कुछ हो भी कैसे सकता है? बच्चा अपना प्रथम पाठ माँसे ही तो सीखता है। इसलिए देशके बच्चोंपर उनके मानसिक विकासके लिए किसी परायी भाषाको थोप देना मैं मातृभूमिके प्रति एक अपराध मानता हूँ।

[अंग्रेजीसे]
मीडियम ऑफ इन्स्ट्रक्शन

५०५. पत्र : एन० आर० मलकानीको

१९ मार्च, १९४२

चि० मलकानी,

तुम्हारे हिंदी खत मुझे बहुत अच्छे लगे हैं। चेक रु० २०० का वापस करता हूँ। उसमें दस्तखत दिये हैं।

बापूके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ९४३) से

५०६. आन्ध्रजन

वजयनगरके महाराजकुमार विजय आनन्दने मुझे निम्न पत्र लिखा है:

> हम आन्ध्रजनोंके मनमें यह खयाल घर कर गया है कि आप हमें पसन्द नहीं करते और आप अलग आन्ध्र प्रान्तके गठन और स्थापनाके विरुद्ध है। आन्ध्र देशमें कांग्रेसका इतना भारी प्रभाव होते हुए भी उसे कभी आपका आशीर्वाद नहीं मिला। अगर तीन करोड़ उत्सुक हृदय पृथक् अस्तित्वकी माँग कर रहे हों तो क्या आप उन्हें महान् तिलक महाराजके शब्दोंमें — "अपने स्वरमें गाने का अधिकार" नहीं देंगे? आन्ध्रजन आपको नापसन्द है, यह बात मेरे देशके लोगोंके मनमें इस तरह बैठ गई है कि आप जो हालमें बनारस आये, उसका उद्देश्य भी वे यही मानते है कि आप मुझे पृथक् आन्ध्र प्रान्तका आन्दोलन बन्द करने का आदेश देने के लिए ही आये थे। आन्ध्रजन यह जानना चाहेंगे कि क्या आपने आन्ध्रोंके बारेमें तमिलनाडुको कभी कोई सलाह दी, वे यह भी जानना चाहते हैं कि पिछले कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलके दिनोंमें आन्ध्रका प्रश्न आपके सामने पेश किया गया था या नहीं? और अगर किया गया था तो आपने उन्हें क्या सलाह दी? क्या आप आन्ध्रके प्रश्नको कर्नाटक और केरलकी श्रेणीका मानते हैं, जिनके राजस्व शायद इतने नहीं है कि उन क्षेत्रोंको अलग-अलग प्रान्त बनाया जा सके? कृपया बतायें कि आन्ध्र देशके स्वावलम्बी होने के बारेमें आपकी क्या राय है? क्या यह सच नहीं है कि आन्ध्रोंकी कांग्रेस आन्दोलनके प्रति सच्ची वफादारी होने के कारण ही उन्हें वह चीज नहीं मिली जो उड़ीसाको मिल गई? लोग ऐसा महसूस करते है कि अगर साइमन कमीशनके भारत आने पर आन्ध्रोंने भिन्न कार्य-पद्धति अपनाई होती तो उनके दिलकी मुराद पूरी हो जाती।

मैं केवल इतना ही कह सकता हूँ कि महाराजकुमार बुरे लोगोके हाथोमे खेल रहे है। आम लोगोसे व्यवहार करने की कलामे नौसिखुआ होने के कारण, स्पष्ट ही, उन्होंने जानकारी देनेवालो की बातोकी सचाई जाँचने की परवाह नही की है। मैं उन आन्ध्रोके बारेमे जानना चाहूँगा जिन्होंने उन्हे वह जानकारी दी है जो उन्होंने मुझतक पहुँचाई है। मैं खुद आन्ध्र देशसे अपरिचित नही हूँ। मैं चाहूँगा कि महाराज कुमार देशभक्त कोण्डा वेंकटप्पय्या, श्री प्रकाशम्, डॉ० पट्टाभि सीतारामय्या, श्री कालेश्वर राव और श्री सीताराम शास्त्रीसे पूछकर देखें। वे शायद इस बातकी साक्षी देंगे कि कांग्रेसके काम-काजके लिए भाषाके आधारपर प्रान्तोका

पुर्नविभाजन करने की नीति कांग्रेससे स्वीकार कराने में मेरा खास हाथ था। मैंने ऐसा पुर्नविभाजन सरकार द्वारा स्वीकार कराने के लिए हमेशा आन्दोलन किया है। जब-कभी मेरी सलाह माँगी गई है, मैंने तमिलनाडुको बेशक यही सलाह दी है कि वह आन्ध्रकी माँगका विरोध न करे। मै जानता हूँ कि श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचारीके नेतृत्वमें काम करनेवाले कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलने आन्ध्र को अलग प्रान्तके रूपमें स्वीकार कराने की भरसक कोशिश की, और अगर आन्ध्र देशको अभीतक अलग प्रान्त स्वीकार नही किया गया तो इसमें मन्त्रिमण्डलका कोई दोष नही है। लेकिन यह सच है कि कर्नाटक, केरल और आन्ध्रमें या कांग्रेस द्वारा अलग प्रान्तके रूपमें स्वीकार किये गये दूसरे किसी प्रान्तमे मैं कोई भेद नही करता। मैं किसी प्रान्तके बारेमें इतनी जानकारी नही रखता जिसके आधारपर यह कह सकूँ कि कौन-सा प्रान्त अलग स्वीकार कर लिये जाने पर स्वावलम्बी हो सकेगा। मेरी बनारस-यात्राका प्रयोजन इतना स्पष्ट है कि उसके बारेमें कोई सफाई देना जरूरी नही है। महाराजकुमार एक खिलाडी है, उनके बारेमें जो निराधार बातें कही गई हैं, उनसे उन्हे परेशान नही होना चाहिए। वह नेता अयोग्य माना जायेगा जो एक महात्माके कहने से भी अपने उद्देश्यसे मुँह मोड ले। मुझे आशा है कि इस उत्तरसे, सम्भव है, उन लोगोको सन्तोष न हो जिन्होंने महाराजकुमारको भुलावेमें डालकर उपर्युक्त प्रश्न मेरे सामने पेश करने के लिए तैयार कर लिया, लेकिन स्वय महाराजकुमारको इससे सन्तोष हो जायेगा।

सेवाग्राम, २० मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-३-१९४२

५०७. पत्र : नटवरलाल मोतीलाल पटेलको

सेवाग्राम,
२० मार्च, १९४२

भाई नटवरलाल,

आपका पत्र मिला। सब-कुछ सोचने के बाद मैं इस निर्णयपर पहुँचा हूँ कि चरखा सघ दूसरे भण्डारके लिए अनुमति नही दे सकता। इस समय जो भण्डार है वह चरखा सघके जैसा ही है और वह अनेक प्रयत्नोका परिणाम है। दूसरे भण्डारके लिए अनुमति देने से मुझे दोनोको ही नुकसान होने का भय है। यदि आपको खादी प्रिय ही है तो आप वर्त्तमान भण्डारको जितना आगे ले जाया जा सकता हो उतना आगे ले जायें।

मो० क० गांधीके वन्देमातरम्

नटवरलाल मोतीलाल पटेल
जोगीदास विट्ठलकी पोल, वडौदा

गुजरातीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य . प्यारेलाल

५०८. पत्र : डेसमण्ड यंगको

२१ मार्च, १९४२

प्रिय श्री यग,

महादेव देसाईके नाम आपका पत्र पढकर और यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि आप सही-सलामत वापस आ गये है। मोर्चेपर तो आपको बड़ा कठिन जीवन व्यतीत करना पडा होगा, लेकिन आशा है, आपपर उसका कोई बुरा असर नही हुआ होगा।

अब आपके पत्रके विषयको लेता हूँ। उसके सम्बन्धमे मै आपको यही आश्वासन दे सकता हूँ कि तथ्योकी पूरी जानकारी प्राप्त किये बिना कुछ लिखने की मेरी आदत नही है। और जब मुझे ऐसे लोगोके साक्ष्य मिल जाते है जिन्हे मै जानता हूँ तब मै सत्यकी खातिर और जनताकी रक्षाके निमित्त लिखता हूँ, लेकिन तब भी बहुत सावधानी बरतते हुए ही लिखता हूँ। अगर आप ऐसा सोचते हो कि शिकायत न किये जाने का मतलब दोषका न होना है तो आप गलती कर रहे है। सैनिकोका व्यवहार एक सार्वजनिक अपवादका विषय बन चुका है — चाहे वे सैनिक श्वेत हो या अश्वेत। प्रतिष्ठित और जानी-मानी स्त्रियाँ भी खतरेसे मुक्त नही है। आपको शायद मालूम न हो कि एक भारतीय सरकारी अधिकारीकी पत्नीको अभी हालमे रेलगाडीमे सिपाहियो (जो भारतीय थे) के बलात्कारका शिकार बनना पड़ा। अधिकारीने इसकी शिकायत भी की थी, लेकिन अपने वरिष्ठ अधिकारियोके कहने पर उसे वापस ले लिया। और दिन-दहाडे लूट-पाट मचाने के उदाहरण तो इतने आम है कि इस चीजकी सचाईको कोई भी शोभापूर्वक चुनौती नही दे सकता। उच्च अधिकारियोने ऐसी कुछ वारदातोकी सचाई स्वीकार भी की है, लेकिन बहुत ही डरते-बचते हुए। ऐसी वारदातोकी शिकायते मुझे लगभग प्रति-दिन मिलती रहती है। आप कुछ दिनोतक अनुपस्थित रहे, इसीसे आपको मालूम नही है कि इस मामलेमे स्थिति कितनी बिगड चुकी है। इसमे कोई आश्चर्य की बात भी नही है। जवान और जोशीले सिपाही जब अपने कामपर तैनात नही रहते है तो वे अपनी उद्दाम शारीरिक शक्तिको ऐसे स्वैराचारके रूपमे प्रकट करते है जिसे उस समाजमें सहन नही किया जा सकता जो इसका अभ्यस्त न हो।

अभी कुछ दिन पहले वर्धामे सडकोपर आवारा घूमनेवाले कुछ सिपाही एक स्त्रीके साथ छेड-छाड कर रहे थे। एक हट्टे-कट्टे कसरती आदमीने उनकी हरकत देखी तो वह उन सिपाहियोसे जूझ पडा और आखिर वे सब हारकर वहाँसे भाग खडे हुए। एक धनी व्यापारी वर्धा स्टेशनपर ट्रेनका इन्तजार कर रहा था, इसी बीच सैनिकोकी एक ट्रेन आ पहुँची। उसने दो सिपाहियोको प्लेटफार्मपर एक

बूढ़ी औरतसे बिना दाम दिये दूध लेते देखा। जब उसने उस औरतको रोते देखा तो वह बीच-बचाव करने के लिए आगे बढ़ गया। इसपर सिपाहियोंने उसे चाँटे मारे और उसे सजा देने के लिए गर्दनसे पकड़कर अपने डब्बेमें ले गये। सौभाग्यसे वहाँ खड़े लोग उस व्यापारीको जानते थे। उन्होंने बीच-बचाव करके उसे उबारा और इस तरह वह बहुत गहरी मार खाने से बच गया। ऐसे कितने ही उदाहरण मैं दे सकता हूँ। मैंने यही ठीक समझा है कि इन्हें प्रकाशित न करूँ और मैंने लोगोंको यह सलाह भी नहीं दी है कि वे बात अधिकारियों तक ले जायें।

यह तो ऐसा काम है जिसमें मेरी और आपकी समान रुचि होनी चाहिए। लेकिन पुलिससे शिकायत न किये जाने का मतलब दोषका न होना है, इस युग-जर्जर दलील की आड़में अगर आप तथ्योंकी ओरसे आँखें बन्द कर लेंगे तो इससे उस कामका नुकसान होगा। सौभाग्यकी बात है कि जिम्मेदार हलकोंमें इस बुराईके प्रति धीरे-धीरे किन्तु स्पष्ट जागरूकता आई है। मेरी कामना है कि आप तथ्योंका अध्ययन करने के लिए समय निकाल सकें और इस बढ़ते हुए खतरेको दूर करने में जहाँतक बने वहाँतक सहायता कर सकें।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०३६९) से। सौजन्य इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन

५०९. पत्र : विट्ठल लक्ष्मण फड़केको

२१ मार्च, १९४२

मामा,

रामप्रसाद कहता है कि तुम्हें खुजली बहुत सताती है। दाल खाते हो तो छोड़ देनी चाहिए। नीबू जितने खा सकते हो खाने चाहिए, प्याज कच्ची खानी चाहिए, नोनिया [कुल्फा] और पालक-जैसी भाजियाँ कच्ची एक तोला चबानी चाहिए, दाँत न हों तो पीसकर खाना चाहिए। तीसरे पहर ठण्डे पानीमें बैठना चाहिए। सारे शरीरमें गीली चादर लपेटनी चाहिए। सन्तरे, मुसम्मी आदि फल मिले तो खाने चाहिए। श्वेतसारवाले पदार्थ कम खाने चाहिए। दूध-दही खाना चाहिए। सोडेका सेवन नियमपूर्वक करना चाहिए। इतना करोगे तो खुजली भाग जायेगी।

बापूके आशीर्वाद

श्री मामासाहब फड़के
हरिजन आश्रम
दोहद, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ३८४५) से

५१०. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

२१ मार्च, १९४२

चि० मुन्नालाल,

मेरी तो यह निश्चित मान्यता है कि कचनको यहाँ बिलकुल नही आना चाहिए। जहाँ गई है वहाँ रहे और फिर वालोड चली जाये। मै ऐसे मामलोमें सच-झूठकी छानबीन निरर्थक मानता हूँ। इसलिए एक्सप्रेस तार रहने दो, [केवल] पत्र लिखो।

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४७७) से। सी० डब्ल्यू० ६१६७ से भी, सौजन्य मुन्नालाल गगादास शाह

५११. एक पत्र

सेवाग्राम
२२ मार्च, १९४२

प्रिय मित्र,[1]

आपका पत्र मिला। आपके पत्रमे शुरूसे आखिरतक एक तार्किक भ्रान्ति है। श्रद्धारहित धर्म-परिवर्तनको मै बुरा समझता हूँ। वह कोई सच्चा धर्म-परिवर्तन नही बल्कि सुविधाके विचारसे किया गया धर्म-परिवर्तन है। ऐसा धर्म-परिवर्तन व्यक्तिके पहले धर्मके शिथिल होने अथवा बुरा होने का प्रमाण नही है। वह तो व्यक्तिकी स्वार्थ-परता अथवा उससे भी बुरी मनोवृत्तिका परिणाम है। और जब मै किसी मित्रके स्वार्थसे प्रेरित होकर अपने धर्मका परित्याग करने की बातपर दु:खी होता हूँ तब मै कोई असहिष्णुताका व्यवहार नही करता।

आपका,
मो० क० गांधी

अंग्रेजीकी नकलसे : प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य : प्यारेलाल

१. गांधीजी ने यह पत्र किसी अंग्रेजको लिखा था।

५१२. पत्र : वल्लभभाई पटेलको

२२ मार्च, १९४२

भाई वल्लभभाई,

इनके मायका पत्र तुम्हारी जानकारीके लिए है। मैंने इसका उत्तर नहीं दिया।

तुमने अपने दाँत ठीक करा लिये होंगे। मैं [आसन सिखानेवाले] योगीके बारेमें जानने को भी उत्सुक हूँ।

आचार्यकी[1] तबीयत बहुत तेजीसे सुधर रही है। आज घूमने भी निकले थे। उनका पेट भी सुधर रहा है।

हवामें गरमी बढ़ती जा रही है।

महादेव और वनुको[2] तो ठीक हो ही जाना चाहिए।

नये समाचार तो तुम्हीं बताओ।

बापूके आशीर्वाद

[गुजरातीसे]
बापुना पत्रो–२ : सरदार वल्लभभाईने, पृ० २७१-७२

५१३. पत्र : प्रेमाबहन कंटकको

२२ मार्च, १९४२

चि० प्रेमा,

तेरा पत्र मिला। मैं देवका उपहार[3] रोज पहनता हूँ। बहुत हलकी धोती[4] है। यह बहुत अच्छी है।

तू सुचेताको[5] लिखना[6] 'मुझको कहा गया है यह काम मैं हाथमें लूं। आप लिखें मुझे क्या-क्या काम करने पड़ेंगे। मेरे हाथ भरपूर रहते हैं। यो तो मैं महिला-सेवा कर ही रही हूँ। विशेष क्या करना चाहिए जो हम नहीं करते हैं।'

१. आचार्य नरेन्द्रदेव

२. नरहरि द्वा० परीखकी पुत्री वनमाला।

३. प्रेमाबहनने शंकरराव देव द्वारा काते गये सूतसे बुने हुए दो उत्तरीय गांधीजी को भेंट किये थे।

४. देखिए "पत्र : प्रेमाबहन कंटकको", पृ० ४५२।

५. जे० बी० कृपलानीकी पत्नी और अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटीकी महिला-शाखाकी अध्यक्षाने प्रेमाबहनको महाराष्ट्र शाखाके प्रधानका पद स्वीकार करने का सुझाव दिया था।

६. इस अनुच्छेदका शेष अंश हिन्दीमें है।

इस तरहका पत्र लिख देना और उसका जवाब मुझे भेज देना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० १०४२) से। सी० डब्ल्यू० ६८६३ से भी; सौजन्य : प्रेमाबहन कटक

५१४. कुष्ठरोगियोंके लिए गायका दूध

डॉ० सन्तरा कुष्ठ रोगके विशेषज्ञ हैं। अतएव वे जो कहते हैं,[1] उसे महत्त्व दिया जाना चाहिए। गायके सम्बन्धमें मेरे विचार तो जैसे हैं वैसे हैं ही, लेकिन चिकित्साके पेशेवालो का देशके प्रति यह कर्त्तव्य है कि वे दूधकी अलग-अलग किस्मोंके तुलनात्मक महत्त्वका पता लगायें।

सेवाग्राम, २३ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-३-१९४२

५१५. सच हो तो अमानुषिक है

मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटीके समाज-सेवा विभागके अवैतनिक मन्त्री लिखते हैं :[2]

> कलकत्ताकी मारवाड़ी रिलीफ सोसाइटीकी ओरसे बर्मा और मलायासे भागकर आये हुए लोगोंको, जात-पाँत, धर्म या वर्णके भेदका कोई खयाल न रखते हुए, मदद पहुँचाने का जो काम चल रहा है, उसका बहुत ही संक्षिप्त ब्योरा मुझे आपके सामने पेश करना है, और एक अतिशय गम्भीर प्रश्नके बारेमें आपकी अमूल्य सलाह माँगनी है। . . .
>
> इस सम्बन्धमें मुझे आपको एक बहुत ही दुःखद घटनाकी खबर देनी है। इस घटनाके बारेमें मेरा कर्त्तव्य क्या है, यह बताने की कृपा करें, तो मैं आभारी होऊँगा।
>
> १४ मार्चकी रातको चटगाँव मेलके आने के कुछ ही समय बाद, जब मैं कुछ स्वयंसेवकोंके साथ मेलसे आये हुए लोगोंकी आवश्यकताओंका प्रबन्ध कर रहा था, एक गोरे सैनिकने शरणार्थियोंमें से एक गरीब शरणार्थीके छोटे बालकको पकड़कर रेलगाड़ीके नीचे फेंक दिया। यद्यपि मैं आपकी अहिंसाके

१. डॉ० सन्तराके विचार यहाँ नहीं दिये जा रहे हैं।

२. यहाँ इसके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।

पुण्य-पथका एक नम्र अनुयायी हूँ, तो भी उस समय मैं अपनेको और अपने साथी स्वयंसेवकोंको उस गोरे सैनिकको उसके पाशविक कृत्यके लिए मारने-पीटने और सजा देने से बहुत ही मुश्किलसे रोक सका। मैंने तुरन्त ही इसकी सूचना स्टेशनके सैनिक अधिकारियोंको दी, लेकिन उन्होंने रत्ती-भर भी सहानुभूति नहीं दिखाई। बादमें मैं इसी प्रश्नको लेकर श्री के० सी० सेन, आई० सी० एस० से मिला। यद्यपि उन्होंने इस मामलेकी बाजाब्ता जाँच करनेका वादा किया, तो भी अभीतक इस सम्बन्धमें कुछ नहीं किया गया है। स्टेशनके प्लेटफार्मपर अब भी रातमें बहुतेरे गोरे सैनिक बराबर चक्कर काटा करते हैं, और डर रहता है कि कहीं रिलीफ सोसाइटीके स्वयसेवकों और आम लोगोंके साथ इन गोरे सैनिकोंकी भिडन्त न हो जाये। इस समस्याके निवारणके लिए तुरन्त ही कुछ किया जाना चाहिए। मैंने बंगाल काग्रेस नागरिक संरक्षण समिति के सामने भी यह मामला पेश किया है।

यदि आप नीचे लिखे मुद्दोंपर मुझे अपनी सलाह देंगे तो आपकी बड़ी कृपा होगी :

१. क्या मैं इस प्रश्नको लेकर समाचार-पत्रोंमें आन्दोलन खड़ा करूँ?

२. मान लीजिए कि कोई सैनिक किसी असहाय शरणार्थी स्त्रीके साथ कोई बेहूदा बरताव करता हो, तो क्या हम उसे चुपचाप सह ले, या उसके साथ जोर-जबरदस्तीका व्यवहार करें?

यदि आप इस सम्बन्धमें अपनी राय 'हरिजन' में व्यक्त करें तो उससे हमें बहुत मदद मिलेगी। ऊपर दी हुई घटनाकी सचाईके बारेमें मैं सब प्रकार की जिम्मेदारी लेने को तैयार हूँ।

सैनिकोंके दुर्व्यवहारके बारेमें मेरे पास प्रामाणिक ब्योरोसे भरे बहुतेरे पत्र आये हैं, लेकिन मैंने उन्हे दबाये रखा है। परन्तु जब-जब मैंने महसूस किया कि उनको दबा रखना यदि नामर्दगी नही, तो अनौचित्य अवश्य माना जायेगा, तब-तब उन्हें जरूर प्रकाशित किया है। मेरी रायमे इस पत्रका न सिर्फ आम जनताकी सुरक्षा की दृष्टिसे, बल्कि सैनिको और सरकारके हितकी दृष्टिसे भी अधिकसे-अधिक प्रचार होना चाहिए। मारवाडी रिलीफ सोसाइटी पिछले पच्चीस सालसे काम करनेवाली एक पारमार्थिक सस्था है, जिसकी प्रतिष्ठा देश-भरमें है। उसके पास धन है और अच्छे अनुभवी कार्यकर्त्ता भी है। इस सस्थाकी प्रतिष्ठा ही इस दृष्टिसे काफी होनी चाहिए थी कि इसके कार्यकर्त्ताओंकी उपस्थितिमे सैनिक कोई दुर्व्यवहार न करे। इस पत्रके अनुसार उक्त सैनिकने जैसा व्यवहार किया है, उससे तो मालूम होता है कि या तो उसका सिर फिर गया था या वह शराबके नशेमे चूर था। मेरा विश्वास है कि जबतक इस सवालका पूरा-पक्का फैसला न हो जायेगा, सोसाइटी इसे छोडेगी नही, और, मुझे यह भी विश्वास है कि सरकारी अधिकारी इस मामलेको दबाने

की कोशिश नही करेगे, बल्कि जैसा मेरे पत्र-लेखकने लिखा है, बात ठीक वैसी ही साबित हो, तो उसका ठीक-ठीक प्रतिकार भी करेगे।

इतना तो खुद इस मामलेके बारेमे हुआ। पत्र-लेखक चाहते है कि यदि भविष्य मे फिर ऐसी ही घटनाएँ हो, तो उन्हे क्या करना चाहिए, इस सम्बन्धमे मैं उन्हे अपनी सलाह दूँ। ऐसे मौकोपर हिंसा और अहिंसाका व्यवहार एक-सा ही हो सकता है। स्वयसेवकोको चाहिए था कि यदि वे पकड पाते, तो उस गोरे सैनिकको पकड लेते और उसे उस बालकको हाथ लगाने से रोकते, या उससे बालकको छीन लेते; फिर भले ही इस तरह रोकने या छीननेमे उस सैनिकको कोई चोट ही क्यो न आती। बालकको छुडा लेने के बाद या उसको छुडाने की कोशिशमें असफल होने के बादके व्यवहारका आधार छुडानेवालो के हिंसक या अहिंसक हेतुपर निर्भर करेगा। अहिंसक आचरणका तकाजा अपराधीके प्रति उदारता और सज्जनताका व्यवहार करना होगा। लेकिन उन्हे अपनी उदारता और सज्जनताका प्रयोग विवेकपूर्वक और बुद्धिपूर्वक करना होगा। सब परिस्थितियोके लिए आचरणका कोई सर्वसामान्य नियम पहलेसे बनाकर रखना कठिन है। मैं तो सिर्फ यही कह सकता हूँ कि वास्तविक उदारताका व्यवहार तभी हो सकता है, जब अपराधी स्वय दिलसे अपने अपराधको स्वीकार करता हो। मैंने दक्षिण आफ्रिकामे ऐसे अनेक दृश्य देखे है जिनमे रेलवे स्टेशनोपर गोरो द्वारा अपमानित आफ्रिकी अपना अपमान करनेवाले उन उद्दण्ड गोरोसे कहते थे "भैया, ईश्वर तुम्हे तुम्हारी इस असभ्यताके लिए माफ करेगा।" यह सुनकर वे गोरे यदि जलेपर नमक न छिडकते हो, तो उनकी बातपर खिलखिलाकर हँस तो अवश्य पडते थे। ऐसे अवसरोपर खुद मैं तो चुप रहा हूँ और अपमानको पी गया हूँ। मै अच्छी तरह जानता हूँ कि आफ्रिकी लोगोकी वह तथाकथित उदारता निरी यान्त्रिक चीज होती थी, और उसके लिए गोरोके मन मे तिरस्कार पैदा होना उचित ही था। मेरे व्यवहारमे भीरुता थी। मै अपने लिए और अधिक अपमान न्योतना नही चाहता था। और उसके लिए कोई कानूनी कार्रवाई तो मै करना ही नही चाहता था। उन दिनो मै अपने अहिंसक आचरणको गढने का यत्न कर रहा था। अगर मुझमे सच्ची हिम्मत होती, तो मै अपना अपमान करने-वालोका सविनय विरोध करता, और बुरेसे-बुरे परिणामके लिए तैयार रहता।

थोड़ा विषयान्तर करके मैंने यह बताने की कोशिश की है कि व्यक्तिगत रूपसे अपमानित होने या चोट खाने के मौकोपर तथाकथित अहिंसक व्यवहार किस प्रकार का हो सकता है। लेकिन जिस बालकको चोट पहुँचाई गई, उसके सम्बन्धमे क्या करना होगा? या पत्र-लेखकने जिस दुर्व्यवहार या चोटकी कल्पना की है उसके बारेमे क्या रुख अपनाना चाहिए? मेरा खयाल है कि अहिंसक आचरण किसी दूसरे प्रकारका नही हो सकता, न होना चाहिए। अपने को पहुँचनेवाली और अपने आश्रितो को पहुँचनेवाली चोटके बीच जो भेद प्राय किया जाता है, वह यदि गलत नही तो अनुचित अवश्य है। यह आशा किसीसे नही रखी जाती कि वह अपने लिए जो करेगा, उससे अधिक अपने आश्रितोके लिए करे। नि सन्देह वह अपने आश्रितकी इज्जत बचाने के लिए अपनी बलि दे देगा, लेकिन साथ ही उससे यह भी आशा

रखी जायेगी कि वह अपने लिए भी वैसा ही करे। अगर वह इसके खिलाफ कुछ करेगा तो नामर्द माना जायेगा। और वह अपनी इज्जत-आबरूकी रक्षा नहीं कर सकेगा, तो अपने आश्रितोंकी इज्जतको भी नहीं बचा सकेगा। लेकिन मैं स्वीकार करता हूँ कि सच्चा अहिंसक आचरण केवल बौद्धिक दलीलोंसे उत्पन्न नहीं होता। आचरणसे पहले बुद्धिका उपयोग करना आवश्यक है। लेकिन आचरणकी शुद्धता तो बार-बारके अभ्यास और शायद बार-बारकी असफलताके बाद ही प्राप्त हो सकेगी।

हिंसक व्यवहार किस प्रकारका होना चाहिए, उसका विवेचन करने की तो यहाँ सचमुच कोई जरूरत ही नहीं है।

सेवाग्राम, २३ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, २९-३-१९४२

५१६. प्रश्नोत्तर

बच्चोंका धर्म

प्र० : मैं पूरी तरहसे यह मानता हूँ कि समाजकी प्रगतिके साथ अन्तर्जातीय विवाहोंकी संख्या भी बढ़ेगी और उनका स्वागत होना चाहिए। आपका यह आग्रह बिलकुल ठीक ही है कि ऐसे स्त्री-पुरुषोंको अपने व्यक्तिगत धर्मका त्याग नहीं करना चाहिए।[1] लेकिन उनकी सन्तानके बारेमें आपका क्या खयाल है? उनकी परवरिश किस धर्मके अनुसार की जाये — माताके या पिताके?

उ०. ऐसे विवाहोंमें यह मान लिया जाता है कि पति-पत्नी एक-दूसरेके धर्मको आदरकी दृष्टिसे देखें। यदि वे लोग धार्मिक वृत्तिके होंगे तो उनके बच्चे अनजाने ही उनके धर्माचरणमें से जो सुन्दर लगेगा, उसे अपनाते जायेंगे और माता-पिताकी ओरसे किसी प्रकारकी रुकावटके बिना वे अपनी रुचिके धर्मको अंगीकार कर लेंगे। यदि पति-पत्नीमें ही अपने धर्मके प्रति उदासीनता होगी, तो बच्चे भी अधिकतर उदासीन ही रहेंगे, और जिसमें सहूलियत देखेंगे, उसीको अपना धर्म बना लेंगे। इस प्रकारके विवाहोंका परिणाम मैंने ऐसा ही होते देखा है। दिक्कत तो तभी होती है जब पति-पत्नीके बीच बच्चोंकी परवरिशको लेकर तीव्र मतभेद होता है।

श्रद्धारहित धर्म-परिवर्तन

प्र० : आप श्रद्धारहित धर्म-परिवर्तनका विरोध करते हैं। लेकिन इसके साथ ही, आप सब धर्मोंके प्रति समभाव रखने का दावा भी करते हैं। तो फिर किसी

१. देखिए "इन्दिरा नेहरूकी सगाई", पृ० ४१०-११।

भी तरहके धर्म-परिवर्तनमें हानि ही क्या है? क्या आपकी ये दोनों बातें परस्पर विरोधी नहीं हैं?

उ० . आपके लम्बे तथा दीखने मे जोरदार दलीलोवाले और चतुराईसे लिखे पत्रसे मैंने यह सवाल निकाला है। श्रद्धारहित धर्म-परिवर्तन निरा परिवर्तन है। यह धर्म-परिवर्तन नही है, क्योकि धर्म-परिवर्तनसे तो मनुष्यका समूचा जीवन ही बदल जाता है। आप यह भूल जाते है कि सर्व-धर्म समभावका मतलब है — किसीके मनमे जितना आदर आपके या पड़ोसीके धर्मके प्रति है, उतना ही अपने धर्मके प्रति भी है। अपने धर्मके लिए मेरे मनमे जो आदर है, उसके कारण मैं अपने बच्चोके श्रद्धारहित धर्म-परिवर्तनके सम्बन्धमें उदासीन नही रह सकता। और, जिन सासारिक प्रलोभनोका आध्यात्मिक उन्नतिके साथ कोई सम्बन्ध नही है, उनमे फँसाकर यदि आप मेरे बच्चोको गुमराह करते है, तो मेरे दिलमे आपके लिए कोई आदर-भाव नही हो सकता।

सेवाग्राम, २३ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-३-१९४२

५१७. टिप्पणियाँ

राष्ट्रीय सप्ताह

राष्ट्रीय सप्ताह प्रतिवर्ष ऋतुओकी-सी नियमितताके साथ आता है। बीससे भी ज्यादा साल हुए, वह हर साल आता रहा है, फिर भी हम अपनी स्वतन्त्रता, साम्प्रदायिक एकता और खादीके व्यापक प्रचारसे जितनी दूर पहले कभी थे, उतनी ही दूर आज भी हैं। राष्ट्रीय सप्ताहका प्रथम समारोह हमने इन तीन निश्चित चीजोसे शुरू किया था। ये तीनो चीजे परस्पर पर्यायवाची थी। यदि हममे एकता होती, तो हम स्वतन्त्रता प्राप्त कर सकते, इसी तरह अगर हम सब खादीके उपासक बन गये होते, तो भी उसे प्राप्त कर पाते। यद्यपि बादमे हमने अपने रचनात्मक कार्यक्रममे बहुतेरी नई बातें जोड़ ली है, लेकिन मूल कार्यक्रम जितना सच उस समय था जब उसकी पहले-पहल परिकल्पना की गई थी और उसे आरम्भ किया गया था उतना ही सच आज भी है।

हम आगामी राष्ट्रीय सप्ताहमें किस प्रकारका व्यवहार करेगे? हमें स्वतन्त्रता का विचार उसके अगोको छोडकर नही करना चाहिए। उस दशामे हमारे सामने साम्प्रदायिक एकताके साथ रचनात्मक कार्यक्रमके दूसरे तेरह अग रह जाते है, जिनके बीचमे खादी अपने व्यापकतम अर्थके साथ प्रतिष्ठित है।

ऊपरके स्तरपर साम्प्रदायिक एकता जब होनी होगी, तब होगी। हम तो देशकी आम जनताके लिए स्वतन्त्रता चाहते है, और इसलिए साम्प्रदायिक एकता भी

हम देशके करोडो लोगोंके वास्ते और उनके बीच चाहते है। यह एकता यदि हमारे हृदयोमें है, तो हमें इसका परिचय अपने रोजमर्राके छोटे-छोटे कामोमें एक-दूसरेके साथ व्यवहार करते समय देना चाहिए।

दूसरे अगोका उल्लेख मैं यहाँ नही करूँगा। उनपर अमल करने का प्रयत्न तो सब सस्थाएँ करेगी ही। खादीके लिए दो शब्द कहना आवश्यक है। अबतक हम इस सप्ताहमें खादी बेचा करते थे। इस साल कई कारणोसे हमारे पास बेचने लायक खादी ही नही है। लेकिन हम सब खादी तैयार कर सकते है, उसके लिए पैसा भी इकट्ठा कर सकते है। अगर हमारे पास काफी पूंजी हो, तो हम ज्यादा खादी तैयार कर सकते है। लेकिन हम तुनाई अथवा बुनाई भी कर सकते है—अपने लिए नही, बल्कि देशके लिए। इस तरह जो-कुछ हम तैयार करे, उसे हम चरखा सघके अपने निकटके किसी भडारमें जमा कर सकते है।

और छठी व तेरहवी अप्रैलके २४ घटोवाले उपवासको हमें नही भूलना चाहिए।[1] जब हमने ये उपवास शुरू किये थे, हजारोकी इनमें आस्था थी। उपवास करके हमने कोई भूल नही की। जिन्हे उपवास और प्रार्थनामें आस्था हो, वे इन्हे न भूले।

हमारा कलंक

एक हरिजन-सेवक लिखते है :

> १. हमारे देशमें ऐसे बहुतेरे होटल, बाल काटने के सैलून आदि हैं जिनमें हरिजनोंका प्रवेश निषिद्ध है। क्या हमारे राष्ट्रीय स्वयंसेवकोंसे—खादीके, हिन्दीके और कांग्रेसके प्रचारकोंसे—यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वे ऐसे होटलों और सैलूनों आदि का बहिष्कार करें और हरिजनोंके रास्तेमें खड़ी की गई इन बाधाओंको दूर करने में अपने प्रभावका उपयोग करें?
>
> २. अ० भा० चरखा संघमें कपड़ोंकी धुलाईके लिए धोबी रखे जाते हैं। इनमें से कुछ-एक अपने धन्धेमें छुआछूतसे काम लेते हैं, और ब्राह्मणों व नायरोंको छोड़ दूसरोंके कपड़े धोने से इनकार करते हैं। जिस तरह अ० भा० चरखा संघ शराब पीनेवाले धोबियोंको कामपर नहीं रखता, उसी तरह जो अपने धन्धेमें छुआछूतका व्यवहार करते हैं, उन्हें भी वह क्यों न कामसे हटा दे?

सवाल सही है। दोनोका जवाब एक ही तरीकेसे दिया जा सकता है। क्या काग्रेसजन और क्या दूसरे, जो दिलसे यह मानते है कि अगर हिन्दू धर्मको ऐसे धर्मके रूपमें कायम रहना है जिसके लिए जीना और जरूरत पडने पर मरना भी उचित है, तो उसमें से अस्पृश्यता-रूपी कलकको मिटाना ही होगा, उन्हे उन सभी सस्थाओका बहिष्कार करना ही चाहिए जिनमें हरिजनोका प्रवेश वर्जित है। पत्र-लेखकने जो प्रश्न उठाये है उनके सन्दर्भमें कभी-कभी गम्भीर कठिनाइयाँ भी उपस्थित हो सकती है। लेकिन गम्भीर कठिनाइयोका गम्भीरतापूर्वक सामना करके उन्हे हल किये बिना कभी कोई महान् कार्य सम्पन्न नही किया जा सकता।

१. देखिए खण्ड १५, पृ० १५०-५१।

कभी-कभी इसमे से कुछ अटपटे सवाल पैदा हो जाते है। अ० भा० चरखा संघ कपडे धोनेवालो की तरह दूसरे कारीगरोसे भी काम लेता है। ये लोग अस्पृश्यताको इतने आग्रहके साथ मानते है कि उनको यह समझाने के सारे प्रयत्न विफल हो जाते है कि अस्पृश्यताका यह अभिशाप वास्तवमें कैसा घोर अन्धविश्वास है। मै बिना सोचे-समझे चरखा सघके कर्मचारियोको यह सलाह तो नही दे सकता कि वे ऐसे कारीगरोका बहिष्कार करे, फिर भी मै यह जरूर कहूँगा कि इस मामलेमे पहलेकी अपेक्षा कुछ ज्यादा सतर्कतासे काम लिया जाना चाहिए। जिन्होने इस अन्धविश्वासका त्याग कर दिया है, उन्हे बेशक तरजीह दी जानी चाहिए। हम अस्पृश्यताके विषसे पीडित लोगोके पास कैसा रवैया लेकर जाते है, बहुत-कुछ तो इस बातपर निर्भर करेगा।

सेवाग्राम, २३ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २९-३-१९४२

५१८. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

२३ मार्च, १९४२

भाई जीवणजी,

यहाँसे अंग्रेजीकी सामग्री तो आज ही पूरी भेजी जा रही है। आशा है, इतनी काफी होगी।

मुझे मालूम नही कि हिन्दी और गुजरातीकी कितनी सामग्री भेजी जा रही है। आज भेजी गई सामग्री यदि अधूरी हो तो वहाँ पूरी कर लेना।

काशिनाथ क्यो दुखी है? प्यारेलालने ऐसा क्या लिखा था? वह तो कहता है कि उसने एक शब्द भी ऐसा नही लिखा जिससे उन्हें दु:ख हो।

और अधिक जानकारी देना।

बापूके आशीर्वाद[1]

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९५१) से। सी० डब्ल्यू० ६९२६ से भी; सौजन्य : जीवणजी डा० देसाई

१. पुनश्चमें अमृतकौरने लिखा है: "जबतक कैम्प चल रहा है, अर्थात् साढ़े तीन महीने तक, कृपया *हरिजन*की एक प्रति श्री मीराबाई, वीमन्स कॉन्फरेंस कैम्प, अन्नामा, बरास्ता वेडछी, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवेके पतेपर भेजें। बापू सहमत हैं।"

५१९. पत्र : विजया म० पंचोलीको

२३ मार्च, १९४२

चि० विजया,

मैंने तेरे पत्रका उत्तर तो दिया ही था, सन्तरोंका प्रबन्ध भी तुरन्त कर दिया था। हर हफ्ते उन्हें नाणावटी भेजा करेंगे। एक टोकरी तो तुझे मिल भी गई होगी। यहाँ सब कुशल है।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ७१४६) से। सी० डब्ल्यू० ४६३८ से भी, सौजन्य : विजया म० पंचोली

५२०. पत्र : कृष्णचन्द्रको

सेवाग्राम
२३ मार्च, १९४२

चि० कृ० च०,

मैंने महत्व समझा तब तो जल्दीके कारण मैंने किया। हां, मैं काममें फसा रहता हूं तब तो तुमारे धीरज रखनी ही पडती है। इसमें लाचारी है। बाकी तो जितनी तेजीसे मैं आश्रमके काम हल कर सकता हू इतनी तेजीसे करता हू। क्योंकि यह तो स्वराजका टुकडा है न?

बापुके आ०

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४१९) से

५२१. पत्र : हमीद कुरैशीको

२४ मार्च, १९४२

चि० हमीद,

आज मुझे पिताजी[1] का पत्र मिला है। उसमें वे लिखते हैं कि तुझे मेरा जवाब नहीं मिला। मुझे अच्छी तरहसे याद है कि मैंने तुझे जवाब दिया है। चाहे जो

१. गुलाम रसूल कुरैशी

हो, अब यह पत्र तो लिख ही रहा हूँ। तेरा ठीक चल रहा जान पडता है। किसी दिन यहाँ आना। सुलताना क्यो नही लिखती ?

बापूकी दुआ

चि० हमीद कुरैशी
हरिजन आश्रम
साबरमती, बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०७७४) से। सौजन्य हमीद कुरैशी

५२२. "बौद्धिक विषय" बनाम उद्योग[1]

श्री नरहरि परीख लिखते हैं:

> **खादी और नई तालीमके विद्यालयोंमें "बौद्धिक विषय" शब्दका प्रयोग बहुत ही गलत रूपमें किया जाता है। अक्षरज्ञान कराने अथवा पुस्तक पढ़ाने को बौद्धिक विषय कहा जाता है। इसे यों भी कहा जाता है कि इतना समय उद्योगके लिए निश्चित है और इतना बौद्धिक विषयके लिए। कुछ विद्यालयोंमें यह भी कहा जाता है कि हमें दो घंटे उद्योगमें लगाने होते हैं और तीन घंटे पढ़ाईमें। किताबोंकी पढ़ाई चलने पर ही यह माना जाता है कि पढ़ाई चल रही है। हालाँकि इस सम्बन्धमें आप लिख तो चुके हैं, लेकिन और भी लिखने की जरूरत है। उद्योगके कारण बुद्धिका विकास तो होता ही है, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता कि उद्योग बौद्धिक विषय नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि इस सम्बन्धमें भी आप विस्तारसे लिखें।**

श्री नरहरिकी शिकायत बिलकुल सही है। अक्षरज्ञान बुद्धिका नही, वह तो स्मरण-शक्तिका विषय है। जिस तरह किसी पदार्थके चित्रको पहचानना बुद्धिका विषय नही है, वही बात अक्षरके चित्रके बारेमे लागू होती है। लेकिन अक्षरज्ञानमें, अक्षरको पहचान लेने के बाद, उसका अर्थ तो निहित है ही। अनेक विषयोकी पुस्तके पढना और उन्हे समझना भी अक्षरज्ञानके अन्तर्गत आता है। यही बात उद्योगपर लागू होती है। औद्योगिक ज्ञानका अर्थ कोई धन्धा सीख लेना-भर नही, बल्कि उसमे तत्सम्बन्धी शास्त्र भी शामिल है। और इस तरह यदि शास्त्रको शामिल कर ले तो उससे न केवल बुद्धिका विकास ही होगा बल्कि अक्षरज्ञानकी अपेक्षा बहुत अधिक विकास होगा। अक्षरज्ञानमे तो बुद्धिके विकासके बदले स्मरण-शक्तिका ही विकास होता है। यह बात हम स्कूल-कॉलेजोसे निकले हुए सैकडो विद्यार्थियोके बारेमे कह सकते हैं। लेकिन उद्योग-सम्बन्धी शास्त्रीय ज्ञानका ऐसा दुष्परिणाम निकलने की सम्भावना ही नही दीखती। ऐसी स्थितिमे इतने घटे अक्षरज्ञानके लिए, और इतने घटे उद्योगके लिए

१. इसका अंग्रेजी अनुवाद ५-४-१९४२ के *हरिजन*में प्रकाशित हुआ था।

है, इस तरहका भेद करके उद्योगके महत्त्वको कम करने का रिवाज नहीं होना चाहिए, क्योंकि इस तरह भेद करना गलत है और इससे प्राय नुकसान होता है। विद्यार्थियोके मनमें यह भेद बैठ जाने पर उद्योगके प्रति अरुचि और पढने के लिए मोह पैदा हो जाता है। इससे दोनोको नुकसान पहुँचता है। पढाईके पीछे पड जाने से बुद्धिका विकास नहीं होता। उससे आँखें तथा विचार करने की शक्ति दोनो नष्ट हो जाती है। उद्योगके प्रति उदासीनताके कारण उसका ऊपरी ज्ञान ही मिल पाता है। हर वस्तु अपने स्थानपर ही शोभा देती है। उद्योगके परिपूर्ण ज्ञानके लिए पढने की आवश्यकता तो होती ही है और उस सिलसिलेमें जो पढना पडता है वह तो समझकर ही पढा जा सकता है। इस कारण उसमें नुकसान पहुँचने की गुंजाइश नहीं रहती। मैं जिन लोगोको समझा सकूँगा उनका पूर्ण विकास तो उद्योग द्वारा ही करना चाहूँगा। उसीका नाम नई तालीम या सच्ची तालीम है। यह तो अपने समयसे आयेगी ही। किन्तु इस दौरान उद्योग और अक्षरज्ञानका भेद तो मिट ही जाना चाहिए। जिस तरह गणित, साहित्य आदिकी कलाएँ होती है उसी तरह उद्योगकी कला है। सबको शिक्षाका अंग ही समझना चाहिए। यह भ्रम तो दूर हो ही जाना चाहिए कि उद्योग शिक्षा-क्षेत्रके बाहरका विषय है। जबतक यह भ्रम दूर न होगा तबतक विद्यार्थियोंके विकासमें रुकावटकी सम्भावना बनी रहेगी।

सेवाग्राम, २५ मार्च, १९४२

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ५-४-१९४२

५२३. तार: स्टैफर्ड क्रिप्सको[1]

[२५ मार्च, १९४२][2]

आपके तारके लिए धन्यवाद। मैं कार्य-समितिकी बैठकमें[3] उपस्थित था। कांग्रेसकी ओरसे केवल अध्यक्ष और प० नेहरू आपसे मिलें, यह तय किया गया। आप युद्ध-मात्रके विरुद्ध मेरे विचारोसे परिचित है। उसके बाद भी यदि आप मुझसे मिलना चाहेंगे तो मैं मिलने को सहर्ष तैयार हूँ।

[अंग्रेजीसे]

पॉलिटिकल लाइफ ऑफ पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त, जिल्द १, पृ० ३३४-३५

१. सर स्टैफर्ड क्रिप्स ब्रिटिश युद्ध मन्त्रिमण्डलके प्रस्तावोंको लेकर भारतीय-नेताओंके साथ बातचीत करने के उद्देश्यसे २३ मार्चको भारत पहुँचे। उन्होंने गांधीजी से मिलने की इच्छा प्रकट करते हुए उन्हें एक तार भेजा। प्रस्तावों और गांधीजी से हुई मुलाकातकी रिपोर्टके लिए देखिए परिशिष्ट ६ और ७।

२. गांधी : १९१५-१९४८-ए डीटेल्ड क्रोनोलॉजीसे

३. जो वर्धामें १७ और १८ मार्चको हुई थी।

५२४. पत्र : नारणदास गांधीको

२५ मार्च, १९४२

चि० नारणदास,

तुम्हारा पत्र मिला। गांधी जयन्ती कोषमें प्राप्त राशियोकी सूची प्रकाशित करने की ओर मेरा झुकाव कम ही है। उसमें से अधिकांशको तो गुमनाम ही रखना पड़ेगा। इतने तक तो मेरा मन जाता है कि मुख्य-मुख्य लोगोकी सूची भेजनी चाहिए। यह नानाभाईको दिखाना।

बा आनन्दपूर्वक है। बहनोके बारेमें मैं समझ गया। जिनको मैं भेज सकूंगा उनको भेज दूंगा।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी माइक्रोफिल्म (एम० एम० यू०/२) से। सी० डब्ल्यू० ८६०३ से भी; सौजन्य . नारणदास गाधी

५२५. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

२५ मार्च, १९४२

चि० मुन्नालाल,

यदि तुम्हारा जाना जरूरी ही हो, तो चले जाना। मैं तुम्हारे ऊपर ही छोडता हूँ। चरखा सघका काम ले सको तो ले लेना। इसका निर्णय तो खुद तुम्हें ही करना पडेगा। शान्ति तो तुम्हें हृदयकी गुफामें ही मिलेगी, न तो पातालमें मिलेगी, न स्वर्गमें और न अरण्यमें। लेकिन यह तो मेरा व्यक्तिगत मत है। रातमें यदि नींद उचट जाये, तब भी लिखना कुछ नहीं चाहिए।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४७५) से। सी० डब्ल्यू० ७१६८ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गगादास शाह

५२६. पत्र : मुन्नालाल गंगादास शाहको

२५ मार्च, १९४२

चि० मुन्नालाल,

यदि नींद उचट जाये तो रामनाम लेना चाहिए, लेकिन लिखने के मोहमें बिलकुल नहीं पड़ना चाहिए। ऐसे समयमें लिखा गया निरर्थक होता है। शान्ति प्राप्त किये बिना कर्त्तव्य समझमें नहीं आता।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ८४७६) से। सी० डब्ल्यू० ७१६९ से भी; सौजन्य : मुन्नालाल गंगादास शाह

५२७. पत्र : जीवणजी डा० देसाईको

२५ मार्च, १९४२

भाई जीवणजी,

मुझे लगता है कि हमें उर्दूका 'हरिजन' तो लिथोमें ही निकालना पड़ेगा। यह काम वहाँ हो सकता है या नहीं? तुमने कोई अड़चन बताई तो थी। मैं अपनी ओरसे सम्पादक आदिका प्रबन्ध कर रहा हूँ, इस तरह यह बात भूला नहीं हूँ। हमें उर्दूका छापाखाना भी आखिर चलाना ही है।

बापूके आशीर्वाद

श्री जीवणजी
नवजीवन कार्यालय
पी० ओ० बॉ० १०५
अहमदाबाद
बी० बी० एण्ड सी० आई० रेलवे

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ९९५०) से। सी० डब्ल्यू० ६९२५ से भी; सौजन्य : जीवणजी डा० देसाई

५२८. पत्र : वनमाला नरहरि परीखको

२५ मार्च, १९४२

चि० वनूडी,

तू घडीमे प्रसन्न और घडीमें नाराज हो जाती है। यह नही चलेगा। आसन आदि सिखानेवाला कोई हो, तो उससे फायदा अवश्य होता है। इस विद्याको शास्त्रीय रीतिसे किसीने जाना नही है, इसलिए इसका यथारीति प्रचार नही हुआ। धीरजके साथ सीख लेना।

बापूके आशीर्वाद

गुजरातीकी फोटो-नकल (जी० एन० ५७८८) से। सी० डब्ल्यू० ३०११ से भी, सौजन्य . वनमाला देसाई

५२९. पत्र : कृष्णचन्द्रको

२५ मार्च, १९४२

चि० कृ० च०,

मुन्नालालका उदाहरण तुमारे लिये नही है। जो हो सके वह करो और सतुष्ट रहो।

बापुके आशीर्वाद

[पुनश्च]

शास्त्रीजी जाने के बाद कौन जायगा?

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ४४२०) से

५३०. टिप्पणियाँ

प्रजामण्डल और कांग्रेस

एक देशी राज्यसे कोई सज्जन लिखते हैं

(८ मार्च, १९४२ के) 'हरिजन' के ६७ वें पृष्ठपर एक प्रश्न छपा है, जो देशी रियासतोंके प्रजा-मण्डलोंके लिए बड़ा दिलचस्प और महत्त्वपूर्ण है।[1] प्रश्नका परवर्ती अंश इस प्रकार है: "वहाँ (देशी राज्योंमें) राजनीतिक नीतियोंके लिए जिम्मेदार कौन हो?" मुझे लगता है कि इसका जो जवाब दिया गया है, उससे स्थिति काफी स्पष्ट नहीं होती। इस सवालके बारेमें इससे पहले 'हरिजन' में जो-कुछ लिखा जा चुका है, उससे और आपके इस जवाबसे अप्रत्यक्ष रूपसे कुछ ऐसा संकेत मिलता है कि आप देशी राज्योंमें प्रजा-मण्डलोंको ही वहाँकी राजनीतिक नीतियोंके लिए जिम्मेदार बनाना चाहते हैं। इसका मतलब यह होगा कि देशी राज्योंमें कांग्रेसकी स्थानीय शाखाएँ स्वयं स्वतन्त्र रूपसे न तो किसी राजनीतिक नीतिको आरम्भ करेंगी, और न स्थानीय प्रजा-मण्डलोंकी नीतिके विरुद्ध संघर्षकी स्थिति उत्पन्न होने देंगी।

मेरा खयाल है कि मेरे जवाबमें किसी तरहकी कोई उलझन और अस्पष्टता न थी। कांग्रेसका मुख्य कार्य और केन्द्र ब्रिटिश भारतमें है। कुछ देशी रियासतोंमें उसकी शाखाएँ हैं। उनसे यह उम्मीद नहीं की जाती कि वे स्थानीय राजनीतिमें दखलन्दाजी करें। इसलिए उनको सिर्फ रचनात्मक कार्य करनेकी सलाह दी गई है। लेकिन प्रजा-मण्डलोंको तो दोनों ही प्रकारके काम करने हैं। रचनात्मक काम उन्हें हमेशा करना है, और सही मानीमें राजनीतिक काम भी जहाँ-कहीं इजाजत हो या जहाँ ऐसे बहादुर लोग हों जो राजनीतिक संघर्ष चला सकते हों वहाँ करना है। इस प्रकार यह सवाल दरअसल सम्बन्धित देशी राज्योंके कार्यकर्त्ताओंकी योग्यताका और अवसरका सवाल है। इस वक्त, जबकि हर चीज अनिश्चित अवस्थामें पड़ी हुई है, देशी रियासतोंकी राजनीतिमें शूरता आजमाने की कोई जरूरत नहीं है।

पशु-बलि रुकी

बेलगाँवसे एक भाईने लिखा है[2]

यह सचमुच ही एक शुभ समाचार है। अपनी इस भूतदया की भावनाके लिए श्री केशवन बधाईके पात्र हैं। जिन्हें मांस खानेका शौक है, वे भले जिस जीवका

१. देखिए "प्रश्नोत्तर", पृ० ४१२-१३।

२. यह यहाँ नहीं दिया गया है। इसमें बताया गया था कि कन्नड जिला हरिजन सेवक संघके अध्यक्ष और सिरसी मन्दिरके एक न्यासी एस० एन० केशवनके प्रयत्नोंसे किस प्रकार वहाँ पशुबलिकी प्रथा समाप्त हुई।

चाहे उसका मास खायें, मगर मन्दिरोमे पशुओकी बलि देना ईश्वरका अपमान करना है। अगर दरअसल ईश्वर कुछ चाहता है, या चाह सकता है, तो यही कि लोग नम्र और पश्चात्तापपूर्ण हृदयसे त्याग करे।

दिल्ली जाते हुए, २६ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-४-१९४२

५३१. एक नौजवान कनाडा-निवासीका प्रश्न

अमेरिकासे आई डाकमें से मै वैंकुवरसे प्रेषित एक पत्र नीचे दे रहा हूँ, जो इस तरहके और भी बहुत-से पत्रोका एक अच्छा नमूना है।[1]

इस पत्रके शिष्टाचारवाले अशको छोड देने पर लेखकका सीधा सवाल यह रह जाता है. "क्या स्वतन्त्र भारतमे अग्रेजो और विदेशियोंके लिए स्थान रहेगा?" इस सवालका मेरी कल्पित या वास्तविक आध्यात्मिकताके साथ कोई सम्बन्ध नही होना चाहिए। स्वतन्त्र अमेरिका और स्वतन्त्र ब्रिटेनके लिए भी यह सवाल नही उठता। और जब भारत सचमुच स्वतन्त्र हो जायेगा, तो उसके लिए भी यह सवाल नही उठेगा। क्योकि उस समय भारतको बिना किसी की रोकटोकके अपनी मनचीती करने की स्वतन्त्रता रहेगी। किन्तु भारतके स्वतन्त्र होने पर—और देर-सवेर वह स्वतन्त्र होगा ही—वह क्या करेगा, इसका अनुमान लगाना एक रोचक और आनन्ददायक विषय है। यदि उसकी नीतियोपर मेरा प्रभाव रहा, तो देशमे विदेशियोका स्वागत किया जायेगा, बशर्ते कि उनकी उपस्थिति देशके लिए हितकारी हो। जैसा कि आजतक उन्होने किया है, उसका शोषण करके उसे कगाल बनाने की सहूलियत उन्हें कभी नही दी जायेगी।

स्वतन्त्र भारत और बातोमे कैसा होगा, सो तो देखने की बात है।[2] जिस अहिंसात्मक नीतिका उसने न्यूनाधिक सम्पूर्णता और कमोबेश सफलताके साथ अबतक पालन किया है, यदि आगे भी वह उसपर दृढ रहा, तो यूरोपके छोटे-छोटे राष्ट्रो की बेबसीके खयालसे उसको भयभीत होने की कोई जरूरत नही रहेगी। अहिंसक राज्य को बाहरी हमलोसे अपनी रक्षा करने के लिए बडे विस्तार या आकारकी आवश्यकता नही रहती। बाहरी हमलोसे बचने के लिए ऐसे राज्यको थोडा भी खर्च करना जरूरी नही होता। हाँ, यह पूछना उचित हो सकता है कि इस तरहका राज्य कभी कायम होगा भी या नही। ऐसे राज्यकी सैद्धान्तिक परिकल्पनामें बुद्धि कोई दोष नही पाती।

१. पत्र यहाँ नहीं दिया गया है।

२. पत्र-लेखकने यह भी पूछा था कि गाधीजी का नया लोकतान्त्रिक देश विश्व-राजनीतिमें क्या स्थिति अपनायेगा। यूरोपके छोटे देशोंका उदाहरण देते हुए पत्र-लेखकने कहा था कि पहले तो सोचते थे कि वे अन्तर्राष्ट्रीय झंझटोंमें नही फँसेंगे, लेकिन देखिए आज उनकी स्थिति क्या है।

जिसे अत्यधिक कठिन अपेक्षा कहा गया है, उसे पूरा करने के आमन्त्रणका मानव-स्वभाव अनुकूल उत्तर देगा या नहीं, यह तो दूसरी बात है। लेकिन लोगोंको व्यक्तिश तो कल्पनातीत ऊँचाइयोंतक उठते देखा गया है। और अगर धैर्यपूर्वक प्रयत्न किया जाये तो कोई कारण नहीं कि ऐसे लोगोंकी सख्या बराबर बढती न चली जाये। जो भी हो, केवल इस कारणसे कि मैं भारत द्वारा ऐसी किसी अनुकूल प्रतिक्रिया का स्पष्ट सकेत नहीं दिखा सकता, मैं अपनी श्रद्धा और अपना प्रयत्न छोडनेवाला नहीं हूँ। यदि मैं ऐसा कर सकता हूँ तब तो कोई भारतके शुद्ध स्वराज्यकी आशा भी छोड सकता है, जैसा कि वास्तवमें कुछ लोगोंने किया भी है। कारण, उनका कहना है कि अधिकाशत या पूर्णत नि शस्त्र भारतको सैनिक राष्ट्र बनने में सदियाँ लग जायेंगी। मैं ऐसी निराशाका शिकार होने को तैयार नहीं हूँ। लोकमान्यके ज्वलन्त शब्दोंमें कहूँ तो "स्वतन्त्रता भारतका जन्मसिद्ध अधिकार है और वह कोई भी कीमत चुकाकर उसे प्राप्त करेगा।" गरिमा लक्ष्यतक पहुँचने में नहीं, बल्कि लक्ष्य तक पहुँचने के प्रयत्नमें निहित है। अहिंसात्मक तरीकोंको पूरी तरह साधने से हम अपने लक्ष्यतक एक दिन अवश्य पहुँचेंगे, ऐसा मेरा दृढ विश्वास है। अबतक अहिंसात्मक तरीकेकी शक्तियोंकी थाह किसीने नहीं ली है। हमें अभी सिर्फ पैर रखने की जगह मिली है। धैर्यपूर्वक प्रयत्नमें लगे रहने से ऐसी निधियोंके द्वार खुलते हैं जो आनन्दके सतत स्रोत हैं। माना कि श्रम बहुत कठिन और अधिक पडेगा, लेकिन फल भी तो उतना ही मीठा होगा।

दिल्ली जाते हुए, २६ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-४-१९४२

५३२. छुट्टियोंका उपयोग

पूनाके एक सज्जन लिखते हैं

अब विद्यार्थी गर्मीकी लम्बी छुट्टियोंपर जा रहे हैं। उनमें से अधिकांश तो शहर छोडकर अपने-अपने गाँवमें जायेंगे। युद्धके कारण देशमें जो कठिनाइयाँ पैदा हो गई हैं और फलत. देशवासियोंपर जो जिम्मेदारियाँ आ पड़ी हैं, उनको ध्यानमें रखते हुए क्या यह उपयोगी नहीं होगा कि इस नाजुक अवसरपर विद्यार्थियोंको उनके कर्त्तव्य और दायित्वका स्मरण करानेवाला कोई सन्देश दिया जाये? क्या मैं आपसे यह निवेदन करूँ कि आप कृपापूर्वक विद्यार्थियोंके नाम जल्दीसे-जल्दी एक ऐसी अपील निकालें जिसमें उनके लिए छुट्टियोंके दरम्यान और छुट्टियोंके बाद भी कुछ काम करने का आह्वान हो? इस सम्बन्धमें मेरे नम्र सुझाव इस प्रकार हैं :

१. वे गाँवोंमें जाकर गाँववालोंको युद्धकी और देशकी राजनीतिक परिस्थितिकी खबरें और 'हरिजन' के खास-खास लेख पढ़कर सुनायें।

२. उन्हें वर्तमान विषम परिस्थितियों और संभावित घटनाओंके बारेमें समझायें।

३. नागरिक-संरक्षण-दलोंका संगठन करें।

४. जहाँतक अन्न और वस्त्रका प्रश्न है, गाँवोंमें स्वावलम्बनके विचार का प्रचार करें और उसका आवश्यक प्रबन्ध करें।

५. अस्पृश्यताके खिलाफ डटकर अभियान चलायें। हो सकता है कि कुछ विद्यार्थियोंके हाथों इस कार्यको लाभ पहुँचने के बदले हानि पहुँचे, क्योंकि वे साम्प्रदायिकताके रंगमें बुरी तरह रँगे हुए हैं। लेकिन ये जैसे भी हैं, हमें काम तो इन्हींसे लेकर देखना है और इसीलिए मैंने ऊपरकी सूचीमें साम्प्रदायिक एकता और कांग्रेसी विचारधाराके प्रचारकी बातको छोड़ दिया है, और सिर्फ ऐसी ही बातोंका जिक्र किया है जिनमें साम्प्रदायिक या विचारधारा-सम्बन्धी मतभेदकी कमसे-कम गुंजाइश है।

इन सज्जनके उक्त सुझावोका समर्थन करने मे मुझे कोई कठिनाई नही मालूम होती।

स्वावलम्बन एक बडा शब्द है। पण्डित जवाहरलाल नेहरूने अपने सयुक्त प्रान्तके भाषणोमे स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरता, इन दो नारोका प्रयोग किया है। इस मौकेपर वे दोनो खूब लोकप्रिय साबित होने चाहिए। अगर गाँव अपनी प्राथमिक आवश्यकताओके लिए स्वावलम्बी नही बनेगे और आपसी मतभेदो और बीमारियो आदिके कारण उत्पन्न होनेवाली आन्तरिक अशान्तिसे और चोरो व लुटेरोके बाहरी उपद्रवोसे बचने के लिए अपने पैरोपर खडे नही हो पायेगे तो उनका अस्तित्व खतरे में पड जायेगा, वे मिट जायेगे। अतएव स्वावलम्बनका मतलब यह है कि लोग कपास पैदा करने से लेकर कपडा बनाने तक की सभी क्रियाएँ सीख ले और अनाज तथा चारेकी मौसमी फसले पर्याप्त मात्रामे उगाये। अगर ऐसा नही किया जाता तो भूखो मरने की नौबत आ जायेगी। और अपने पैरो खडे होने का मतलब है कि लोग सामूहिक रूपसे सगठित हो, ताकि वे अपने आपसी झगडोको गाँवके समझदार आदमियोकी पचायतो द्वारा निबटा सकें, और मिल-जुलकर गाँवकी सफाई तथा आरोग्य और सामान्य बीमारियोके उपचारका प्रबन्ध कर सके। अब कोरे व्यक्तिगत प्रयत्नोसे काम नही चलेगा। और सबसे बडी बात तो यह है कि गाँवोको चोरो और डाकुओ से सुरक्षित रखने के लिए गाँववालो मे सयुक्त प्रयत्लो द्वारा आत्मविश्वासका माद्दा पैदा करना होगा। सामूहिक अहिंसा इसका सर्वोत्तम उपाय है। लेकिन यदि कार्यकर्त्ताओ को अहिंसा-मार्ग साफ-साफ न सूझे तो उन्हे हिंसा द्वारा सामूहिक आत्मरक्षाका प्रबन्ध करने मे हिचकिचाना नही चाहिए। यहाँ कार्यकर्त्ताओसे मेरा मतलब काग्रेसजनोसे नही है, क्योकि उन्होने तो अहिंसाको अपना अन्तिम सिद्धान्त माना है और इसी उनके सामने दूसरा कोई रास्ता नही है।

इन तरह यदि विद्यार्थी चाहेंगे, तो उन्हें छुट्टियोंमे कामकी कमी नही रहेगी। कौन जाने, ये छुट्टियाँ बेमियाद ही न साबित हो? लेकिन अगर ऐसा न हो, तो दो महीनोंके इस समयमें स्वावलम्बन और आत्म-निर्भरताकी दृष्टिसे काफी अच्छा बुनियादी काम किया जा सकता है।

मेरे ये पत्र-लेखक स्वभावमे भीरु है। साम्प्रदायिक झगडोंके डरकी कोई वजह नही है। ग्राम-सगठनका काम करनेवाले विद्यार्थी साम्प्रदायिक दृष्टिकोण रख ही नही सकते। साम्प्रदायिकता शहरोंकी उपज है और शहरोमे ही फूलने-फलने के लिए पैदा हुई है। देहातमे लोग इतने गरीब है और एक-दूसरेपर इतने आश्रित हैं कि वे साम्प्रदायिक झगडोमें पड ही नही सकते। कुछ भी हो, जहाँतक इस टिप्पणीका सम्बन्ध है, इसमे यह मान लिया गया है कि विद्यार्थी कार्यकर्त्ता इस विषसे मुक्त रहेंगे।

दिल्ली जाते हुए, २६ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-४-१९४२

५३३. अनौपचारिक टिप्पणियोंसे

भारत सरकारके मुख्य सूचना अधिकारीने समय-समयपर अनौपचारिक रूपसे कुछ टिप्पणियाँ प्रकाशित की है, जिनमे से कतिपय उपयोगी सूचनाएँ मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ।[1] इनमें से कुछ तो बडी रोचक और शिक्षाप्रद हैं।

दिल्ली जाते हुए, २६ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-४-१९४२

५३४. प्रश्नोत्तर

अहिंसामें शिथिलता?

प्र० : कांग्रेसकी कार्य-समितिने कांग्रेसी स्वयंसेवक दलोंके संगठनके बारेमें जो निर्देश निकाले हैं, उनमें यह साफ-साफ कहा गया है कि यह संगठन "शुद्ध अहिंसाके आधारपर" होना चाहिए। परन्तु कई कांग्रेस कमेटियोंने जो प्रतिज्ञा-पत्र तैयार किये

१. ये यहाँ नहीं दी गई हैं। इनमें देशी दवाओं आदिके उत्पादनके लिए खडे किये कारखानों, मछलीके जिगरके तेल, धानके पौधोंमें खाद देने और मवेशीके पंजीयनसे सम्बन्धित जानकारी दी गई थी।

हैं, उनमें यह कहा गया है कि स्वयंसेवकोंके लिए अहिंसाका पालन सिर्फ तभीतक जरूरी है जबतक वे अपने काम पर हों।

कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीने इसी आशयके प्रतिज्ञा-पत्र तैयार किये हैं। कर्नाटक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी ओरसे प्रान्तमें कांग्रेस स्वयंसेवक दलोंका संगठन करनेके लिए नियुक्त किये गये प्रान्तके प्रधान दलपतिने, स्वयंसेवकोंकी भर्तीके लिए की गई एक सार्वजनिक सभामें, यहाँतक कह दिया था कि संकटकी अवस्थामें, सख्त जरूरत मालूम होने पर, कांग्रेसी स्वयंसेवक कामपर रहते हुए भी, आत्मरक्षाके लिए हिंसाके अधिकारका प्रयोग कर सकता है। साथ ही, उन्होंने यह भी कहा था कि स्वयंसेवकका यह कार्य कार्य-समितिके निर्देशोंके विरुद्ध न होगा। इन सब बातोंसे बहुत गड़बड़ी पैदा हो रही है। अगर कार्य-समितिके निर्देशोंपर सख्तीसे अमल करनेकी जरूरत न हो, तो बजाय इसके कि लोग अपने-अपने विचारोंके अनुसार उसमें रद्दोबदल करके उसे शिथिल बनायें, बेहतर यही होगा कि अहिंसाकी शर्तको बिलकुल हटा दिया जाये। इसके बारेमें आपकी क्या राय है?

उ० : इस सवालकी तरह जिन सवालोंमें कांग्रेसकी मुहरकी जरूरत हो, उनके बारेमें मेरे जवाबको अधिकृत न माना जाये। इस प्रश्नके बारेमें मेरी अपनी राय बिलकुल स्पष्ट और निश्चयात्मक है। कांग्रेसके नामसे या कांग्रेस द्वारा संगठित किसी भी स्वयंसेवक दलमें आत्मरक्षाके लिए हिंसाको कोई स्थान नहीं है। कांग्रेसकी समूची अहिंसक रचनाको जोखिममें डाले बिना इस शर्तको ढीला नहीं किया जा सकता। आत्मरक्षाके लिए हिंसाका प्रयोग करनेके सम्बन्धमें कांग्रेसकी इजाजत होनेकी जो बात कही जाती है, उसका मतलब सिर्फ इतना ही है कि कांग्रेस कांग्रेसजनोंके निजी और खानगी जीवनपर कोई नियन्त्रण नहीं रखती, और न रख सकती है। अपने निजी जीवनमें कांग्रेसजन कांग्रेसके नियमोंसे बँधे हुए नहीं हैं। अगर इनपर कोई बन्धन है, तो वह उस नैतिकताका है जिसे उन्होंने स्वेच्छासे अपनाया हो।

अहिंसामें पूर्ण विश्वास

प्र० : कई ऐसे कांग्रेसी हैं, यद्यपि उनकी संख्या बहुत थोड़ी है, जिन्हें अहिंसा में पूर्ण श्रद्धा है और जो उसीके आधारपर संगठन करना चाहते हैं। क्या कांग्रेस कमेटियोंको ऐसे लोगोंका संगठन नहीं करना चाहिए? अथवा क्या उन्हें ऐसे लोगोंको कांग्रेसकी छत्र-छायामें अपने दल संगठित करनेकी इजाजत नहीं देनी चाहिए?

उ० : कांग्रेस कमेटियाँ अलग-अलग दलोंका संगठन नहीं कर सकतीं। कांग्रेसकी अपनी एक ही नीति हो सकती है। जहाँतक हिन्दुस्तानके भीतरी मामलोंका सम्बन्ध है, आज वह नीति विशुद्ध अहिंसाकी है। इसलिए मुझे अलगसे शान्ति समितियाँ कायम करनेका कोई कारण दिखाई नहीं देता। प्रजातन्त्रात्मक संस्थाओंमें सब आदमी एक-से विचारके नहीं होते, सबकी श्रद्धा एक-सी नहीं होती। अतएव शुद्ध अहिंसावादियोंका काम है कि वे डगमग श्रद्धावाले स्त्री-पुरुषोंके बीच रहकर खमीरका काम करें, यानी

उनकी श्रद्धाको दृढ बनायें। ऐसा वे तभी कर सकते हैं, जब वे स्वयं विनम्र हों और अपने मतपर दुराग्रह करनेवाले न हों।

परेशानी पैदा करनेवाला मतभेद

प्र० : कांग्रेसी नेताओंमें जो मतभेद आज नजर आता है, वह परेशानी पैदा करनेवाला है। सरदार एक बात कहते हैं, राजाजी दूसरी, मौलाना तीसरी और जवाहरलाल चौथी — छोटे नेताओंकी तो बात ही मत पूछिए। लोग किसका अनुसरण करें? कांग्रेसकी नीति और उसके प्रस्तावोंके सम्बन्धमें किसकी व्याख्याको अधिकृत मानें?

उ० : कानूनन और संविधानिक रूपसे यह अधिकार अकेले अध्यक्षको है। अगर कार्य-समितिके बहुमत और अध्यक्षके बीच मतभेद हो, जैसा कि एक बार शुरू-शुरूमें हुआ था, तो अध्यक्षकी रायके बजाय बहुमतकी रायको ही माना जायेगा। लेकिन नाजुक मौकोंपर कानूनी राय बहुत काम नहीं आती। जनताके अपने प्रिय नेता होते हैं, और वह अपने उन नेताओंका अन्धानुकरण भी करती है। इसलिए मेरी सलाह यह है कि अहिंसाके कठिन प्रश्नपर — स्वयं इस सिद्धान्तके बारेमें नहीं, बल्कि उसकी व्याख्याके बारेमें — हर-एकको स्वयं अपना प्रमाण बनना चाहिए। जिन चार सुप्रसिद्ध नेताओंका आपने जिक्र किया है, वे यदि एक जगह मिलकर बैठें, तो सम्भवतः किसी प्रश्नपर एक-सी ही राय देंगे, लेकिन अपने भाषणोंमें उनमें से हर-एकका जोर उसी चीजके इस या उस पहलूपर ज्यादा रहेगा।

दिल्ली जाते हुए, २६ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]

हरिजन, ५-४-१९४२

५३५. शोचनीय

पूनासे एक विद्यार्थी लिखते हैं[1]:

मैं पूनाके लॉ कॉलेजका विद्यार्थी हूँ। "सच्चा युद्ध-प्रयत्न"[2] शीर्षक आपका लेख पढ़नेके बाद मैंने मिष्टान्नका सर्वथा त्याग करनेकी बातपर विचार किया, और प्रतिज्ञा की कि जबतक लड़ाई चलेगी तबतक मैं यह विलासपूर्ण भोजन नहीं करूँगा।

मैं कॉलेजके छात्रावासमें भोजन करता हूँ। वहाँ हर रविवारको दो-तीन प्रकारका मिष्टान्न बनता है, जिसे खाने की अपेक्षा नष्ट ही अधिक किया जाता है। . . . दावतके बाद कुछ लड़के आँख बचाकर पकौड़ियाँ या ऐसी ही चीजें एक-दूसरेकी तरफ फेंकते हैं और इस तरहकी ठिठोलीमें गर्वका अनुभव करते हैं। . . . बनारस जाते हुए आपने रास्तेमें कहीं विद्यार्थियोंको

1. यहाँ केवल कुछ अंश ही उद्धृत किये जा रहे हैं।
2. देखिए पृ० २५८-६१।

सम्बोधित करते हुए कहा था कि आप लोगोंने तो मेरा बहिष्कार कर दिया है। बापू, यह सर्वथा सत्य नहीं है। . . .

मैंने अपने बहिष्कारकी बात तो विनोदमे कही थी। महापुरुष कहलाने के दु खका अनुभव तो मुझे रोज होता है। यदि इसमे कोई सुख हो तो उसका अनुभव जव होगा तब होगा। महात्मा बनने के पहलेके मधुर दिनोकी स्मृति मुझे आज भी है परन्तु महात्मा बनने के बादके कटु अनुभवोसे तो मै अनेक पन्ने जरूर भर सकता हूँ। रोज होनेवाले कटु अनुभवोमे से एक तो यह है कि मैं ऐसा एक भी शब्द मुँहसे नही निकाल सकता जो अखबारोमे न छपता हो। मेरे मुँहसे निकले हुए शब्द यदि ज्यो-के-त्यो अखबारोमे प्रकाशित हो जाये तो भी मुझे दु ख तो होगा, लेकिन वह सह्य होगा। किन्तु जब उन्हे मुलम्मा चढाकर छापा जाता है तो वे असह्य हो जाते है। इन अनुभवोने मुझे पक्का बना दिया है, इसलिए यदि मैं दु खको दु ख नही मानता तो यह मेरा स्वभाव है, न कि दु खका अभाव। बहिष्कारकी उपर्युक्त बात नमक-मिर्च मिलाकर छापे गये शब्दोका उदाहरण है। यदि उन्होने बहिष्कारका वर्णन विनोदका पुट देकर किया होता तो उससे एक अलग प्रकारका रस और अर्थ निकलता। मगर खैर, यह तो जो हुआ सो हुआ। लेकिन विद्यार्थियोका भला मैंने ऐसा क्या बिगाडा है कि वे मेरा बहिष्कार करेंगे? ज्वार-भाटा तो आता ही रहता है। मैं सदा मीठी-मीठी बातें तो कह या लिख नही सकता, कडवी बाते भी मुझे सुनानी पडती है। इस कारण कुछ विद्यार्थी घडी-भरके लिए मुझसे चिढ जाते है, किन्तु उनकी यह चिढ क्षणिक ही होती है। मैं स्वयको विद्यार्थी मानता हूँ, इसलिए विद्यार्थियोके साथ मेरा सम्बन्ध तो बना ही रहेगा।

पत्र-लेखकको मैं उनके त्यागके लिए बधाई देता हूँ। मुझे आशा है कि वे अपने त्यागपर जमे रहेगें।

विद्यार्थी-जीवनका जो चित्र उन्होने दिया है वह दु:खद है। मेरे विचारसे विद्यार्थी-जीवन सयमित होना चाहिए। सयममे एक विशेष आनन्द होता है, जिसका उन्हे विकास करना चाहिए। "निर्दोष आनन्द वे जहाँसे चाहे वहाँसे ले सकते है।" अनाज-जैसी चीज एक-दूसरेपर फेकने या अश्लील मजाक करने अथवा छिपकर पाप करने में जो आनन्द माना जाता है वह भयकर भूल है। हर हफ्ते मिष्टान्न देने का नियम बहुत-से छात्रावासोमे है। यदि विद्यार्थी और उनके सरक्षक यह समझ ले कि हमारे देशमे जो शिक्षा मिलती है वह करोडो कगालोके खर्चसे मिलती है तो कोई भी समझदार विद्यार्थी अपने जीवनको विलासपूर्ण नही बनने देगा। और खासकर इस समय, जब कि हर प्रकारके खाद्य पदार्थकी तगी बढती जा रही है, किसीका बिना जरूरत एक दाना भी खाना गुनाह माना जाना चाहिए। फिर विद्यार्थियोके बारेमें तो कहना ही क्या?

दिल्ली जाते हुए गाडीमें, २६ मार्च, १९४२

[गुजरातीसे]

हरिजनबन्धु, ५-४-१९४२

५३६. पत्र : अमृतकौरको

२६ मार्च, १९४२

चि० अमृत,

कई बातोंमें तो तुम बच्ची ही हो। तुम्हे दिल्ली ले जाने को तैयार नही हुआ, इससे तुम्हारा दुखी होना वैसा ही है जैसा कि अपने पिता द्वारा कानपुर न भेजे जाने पर मेरा दुखी होना था। कैसी नादानी है यह! मेरा निश्चित मत है कि तुम्हे दिल्ली ले जाना बुरा दिखता और बुरा होता भी। फिर, सेवाग्राममें तुम्हारी उपस्थिति अत्यन्त आवश्यक है। वहाँ रोगी है, चन्द्रसिंह है और दूसरे कई लोग है। फिर, हयातुल्ला भी है। अगर ये चीजे तुम अब महसूस नही करोगी तो फिर कब करोगी? तुम्हे समझदार बनना है। तो प्रसन्न होकर वहाँ अपने काममें लग जाओ।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च:]

मायका पत्र अ[मतुल]स[लाम]के लिए है।[1]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११८) से, सौजन्य· अमृतकौर। जी० एन० ७४२७ मे भी

५३७. पत्र : पद्मपत सिंघानियाको

दिल्ली जाते हुए
२६ मार्च, १९४२

भाई पद्मपतजी,

आपका पत्र तो मुझे शीघ्र मिल गया था। मै उत्तर आज ही दे पाता हूँ।[2] एक उत्तर बाकी है। क्या आप मैंने जो मार्ग ग्रहण किया उसमे हृदयसे सम्मत है? मार्ग यह है—जो प्रस्ताव इदोरमें किया गया उसको विस्तृत रूप देना और हिंदी

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. देखिए "पत्र: पद्मपत सिंघानियाको", पृ० ४४२।

के साथ उर्दूकी शिक्षा देना और उसकी परीक्षाका आयोजन करना। आपके उत्तर आने से मैं निर्णय कर सकूंगा।

बापुके [आशीर्वाद]

शेठ पद्मपत सिंघानिया
कानपुर

पत्रकी नकलसे प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

५३८. पत्र: गुलाबचन्द अग्रवालको

दिल्ली जाते हुए
२६ मार्च, १९४२

भाई गुलाबचंदजी,

आपके १२-१-४२ के खतके मैं आज ही पहूंचा हूं। क्या करूं? माफ करें।

आपने जो प्रश्न उठाया है उसे अखबारोंमें चर्चने से लाभ नहीं होगा। प्रथम प्रश्न यह है कि क्या यह रोग बहूत बढ़ा है? मुझे शक है। कभी फुरसद पाकर मुझे मिलोगे तो हम वार्तालाप करेंगे और शायद कुछ मार्ग भी मिल जाय।

बापुके आशीर्वाद

शेठ गुलाबचंद अग्रवाल
डालमिया कंपनी
१५ एफ, एलफिंस्टन सर्कल
बम्बई

पत्रकी नकलसे: प्यारेलाल पेपर्स। सौजन्य: प्यारेलाल

५३९. तार: हीरालाल शास्त्रीको

नई दिल्ली
२७ मार्च, १९४२

हीरालाल शास्त्री
जयपुर

यहाँ रविवार तक हूँ।

गांधी

मूल अंग्रेजीसे: हीरालाल शास्त्री पेपर्स। सौजन्य: नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५४०. पत्र : जवाहरलाल नेहरूको

[२७ मार्च, १९४२ के पश्चात्][1]

चि० जवाहरलाल,

खुरशेदबहन बहुत दुखी है। उसे लगता है उसके प्रति तुम्हारा दिल सुख गया है। उसे बुलाओ, प्यार करो। तुम्हें मालुम है तुम्हें पूजती है।[2]

आज दो बजे जागा। तुम्हारा और राजाजी का ही ख्याल रहा। मेरी राय निश्चित है कि हम इस 'आफर'[3] को स्वीकार नहीं कर सकते हैं। अगर तुम्हारी भी वही राय है तो राजाजी से बात करो और आखिरी निर्णय कर लो। अगर तुम्हारी राय राजाजी-सी है तो सोचने जैसा रहता है।

बापुके आशीर्वाद

मूल पत्रसे गांधी-नेहरू पेपर्स। सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५४१. भेंट : ईव क्यूरीको[4]

[२९ मार्च, १९४२ के पूर्व][5]

कुमारी क्यूरीने सीधे वर्त्तमान स्थितिपर सवाल पूछा। उन्होंने कहा कि समस्याके हलके लिए सर स्टैफर्ड क्रिप्स द्वारा किये जा रहे प्रयत्नोंके पीछे उन्हें पूरी ईमानदारी दिखाई देती है और उन्होंने इस बातकी बड़ी प्रशंसा की। फिर उनके प्रयत्नोंके सम्बन्धमें गांधीजी की प्रतिक्रिया जाननी चाही।

१. यह पत्र एक बिलके पिछले हिस्सेपर लिखा हुआ है, जो इसी तारीखका है। पत्रमें सर स्टैफर्ड क्रिप्स जो "ऑफर" लेकर आये थे उसकी चर्चा की गई है; उसपर से भी तारीख की पुष्टि हो जाती है। गांधीजी सर स्टैफर्ड क्रिप्ससे २७ मार्चको मिले थे। देखिए परिशिष्ट ७ भी।

२. गांधीजी ने मालिशके दौरान यह पत्र लिखना आरम्भ किया था। किन्तु साधन-सूत्रमें लगाये गये टैशसे लगता है कि अगला अनुच्छेद बादमें कभी लिखा गया होगा।

३. स्टैफर्ड क्रिप्स द्वारा प्रस्तुत ब्रिटिश वार कैबिनेटका प्रस्ताव; देखिए परिशिष्ट ४।

४. महादेव देसाईके "विद फॉरेन कॉरेस्पॉण्डेंट्स" (विदेशी संवाददाताओंके साथ) शीर्षक लेखसे उद्धृत। ईव क्यूरी न्यूयॉर्क हेरल्ड, ट्रिब्यून और लन्दनमें इनसे सम्बन्धित अन्य समाचार-पत्रोंकी प्रतिनिधि थीं।

५. भेंट कार्य-समितिकी बैठक, जो २९ मार्चसे आरंभ होनेवाली थी, से पहले हुई थी।

सर स्टैफर्ड क्रिप्स बहुत नेक आदमी हैं, लेकिन वे एक बुरे तन्त्रके अंग बन गये हैं — अर्थात् ब्रिटिश साम्राज्यवादके अंग। वे उस तन्त्रमें सुधार लाने की आशा करते हैं, लेकिन अन्तमें वे उस तन्त्रपर नहीं, बल्कि वह तन्त्र उनपर हावी हो जायेगा।

कुमारी क्यूरीने कहा : "धुरी शक्तियोंकी विजय भारतको उसी दशामें पहुँचा देगी जिस दशामें उसने पोलैण्ड और फ्रांसको पहुँचा दिया। इसीलिए विजित देशोंके औसत नागरिकका विश्वास और उसकी आशा मित्र-राष्ट्रोंकी विजयपर टिकी हुई है।"

भारत तो केवल अहिंसाके बलपर ही अपनी कीर्ति अर्जित कर सकता है। पिछले बीस वर्षोंमें हमने जो-कुछ प्राप्त किया है उससे प्रकट होता है कि यदि हमारे देशके लोग आम तौरपर अहिंसाके सिद्धान्तपर आचरण करें तो उसके बहुत बड़े परिणाम निकल सकते हैं।

लेकिन भारतीयोंके लिए अहिंसाके बलपर जर्मन और जापानी फौजी दस्तोंका प्रतिरोध करना ब्रिटिश शासनकी जड़ खोदने से कहीं अधिक भारी पड़ेगा।

बहुत सम्भव है, ऐसा ही हो। लेकिन यही तो वह घड़ी है जब हमें यह दिखाना है कि हम अपनी श्रद्धापर अटल हैं। यदि जापानी भारतको आक्रान्त कर देंगे तो भी मैं अपने लोगोंको उनका प्रतिरोध शस्त्र-बलसे करने को प्रोत्साहित नहीं करूँगा। इसी तरह मैं उन्हें यह इजाजत भी नहीं दूँगा कि वे आक्रमणकारियोंसे कोई समझौता करें। हमारा संघर्ष कठिन होगा, लेकिन हमें अपना पूरा जौहर दिखाने का मौका देगा।

तो आप इस विचारको स्वीकार करते हैं कि भारत आक्रमणकारियोंका सामना शस्त्र-बलसे करने से इनकार कर दे और इसके लिए भी तैयार न हो कि कोई अन्य शक्ति उसकी रक्षा करे।

भारतको एकाएक शस्त्र-सज्जित राष्ट्र बना देना असम्भव है। हमारे देशके लोगोंको हथियार देना और उन्हें अहिंसाकी शिक्षा देना, उनको सशक्त बनाने के ये दो अलग तरीके हैं। दोनोंमें समय लगता है। मैं बस यह मानता हूँ कि मेरा तरीका ज्यादा भरोसेके लायक, अधिक यथातथ्य और सुलझा हुआ तथा अन्ततः अधिक सफल भी है। जापानी और जर्मन सेनाओंको शस्त्र-बलसे परास्त करने के लिए हमें उनसे अधिक सशक्त और इसलिए उनसे ज्यादा बुरा और हृदयहीन बनना होगा। फिर हमने पाया क्या? कुछ नहीं। इसके विपरीत, अहिंसा-बलसे लड़नेवाले राष्ट्र अपराजेय होते हैं, क्योंकि उनकी शक्तिका आधार यह नहीं होता कि उनके पास कितनी राइफलें और मशीनगनें हैं। और यदि तरीका अच्छा हो तो फिर तात्कालिक परिणामोंकी चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है। अन्तमें सफलता मिलना निश्चित है। अहिंसक संघर्षमें दो ही बातें हो सकती हैं — या तो शत्रु हमारे साथ समझौता कर लेंगे और इस तरह बिना किसी रक्तपातके हम विजयी होंगे, या फिर वे हमें कुचल देंगे। यह दूसरा समाधान भी कमसे-कम उस समाधानसे बुरा नहीं है जो

हिंसात्मक युद्धसे प्राप्त होता ही है। जिस प्रकार मैं भारतको स्वतन्त्र देखना चाहता हूँ उसी प्रकार आप फ्रान्सको भी स्वतन्त्र करवाना चाहती हैं, इसमें मैं कोई हर्ज नही देखता। लेकिन ऐसा सोचना कि कोई भी देश शस्त्र-बलसे वास्तवमे स्वतन्त्र किया जा सकता है, बहुत अधिक अधैर्यका सूचक है।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, १९-४-१९४२

५४२. कवीसर[1]

अम्बालाके लाला दुनीचन्द लिखते हैं :[2]

> सरदार शार्दूलसिंह कवीसरको बिना मुकदमा चलाये जेलमें रखा जा रहा है। उनके मित्रो और रिश्तेदारोंके कहने से मैं यह पत्र आपको लिख रहा हूँ।
>
> कोई १५ दिन पहले जब वे गिरफ्तार किये गये थे, तभीसे उनको लाहौरके किलेमें बन्द रखा गया है और उन्हे अपने मित्रों या रिश्तेदारोंके साथ किसी भी तरहका सम्पर्क रखनेकी इजाजत नहीं दी जा रही है।... मुझे विश्वस्त रूपसे पता चला है कि सरदार कवीसर अकेले एक कमरेमें रखे गये हैं, जिसका मतलब यह है कि उन्हे तनहाईकी सजा दी गई है। उन्हें वे चन्द सहूलियतें भी नहीं दी जा रहीं जो दूसरे नजरबन्दोंको प्राप्त हैं; मसलन् न अखबार दिये जाते हैं, न पत्र-व्यवहार करने की सहूलियत है। और चूंकि गिरफ्तारीके कई दिन पहलेसे उन्हे बुखार रहा करता था, इसलिए बात और भी चिन्ताजनक हो जाती है। उनके दर्जेके दूसरे नजरबन्दों के साथ, मसलन् बाबू शरतचन्द्र बोस आदिके साथ, उचित व्यवहार किया जा रहा है।

जिन लोगोंके बारेमें जापानियोंसे मिले होने का शक किया जाता है, उनको इन दिनों नजरबन्द रखने की बात तो समझमें आ सकती है। इसलिए कई क्रोधपूर्ण पत्रोंके मिलते रहने पर भी मैं शरत बाबूकी नजरबन्दीके[3] बारेमे चुप ही रहा हूँ, हालाँकि मुझको उसका बहुत दुःख रहा है। उनके साथ अनुचित व्यवहारका कोई सवाल न था। लेकिन अगर लाला दुनीचन्दकी बात सच हो, तो सरदार शार्दूलसिंहका मामला इससे बिलकुल भिन्न है। किसी भी कैदीके साथ, फिर उसका अपराध कुछ भी क्यों न हो, अनुचित व्यवहार करने की कोई वजह हो ही नहीं सकती। सरदार कवीसर सिर्फ शकपर नजरबन्द किये गये हैं। जनता नहीं जानती कि सरकारके पास उनके

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. यहाँ पत्रके कुछ अंश ही दिये जा रहे हैं।
३. शरतचन्द्र बोस दिसम्बर १९४१ में गिरफ्तार किये गये थे।

खिलाफ क्या सबूत है। लड़ाईके दिनोंमे खुले मुकदमेकी माँग करना या किन्ही मामलो मे प्राप्त प्रमाणोको प्रकट करने के लिए भी कहना कठिन है। इसलिए ऐसे कैदियोके साथ तो और भी अच्छा व्यवहार करने की जरूरत है। मुझे आशा है कि सम्बद्ध अधिकारी सरदार कवीसरके मामलेपर गौर करेंगे और शिकायतकी कोई वजह न रहने देंगे।

नई दिल्ली, २९ मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-४-१९४२

५४३. तार : प्रभावतीदेवी बोसको[1]

नई दिल्ली
२९ मार्च, १९४२

सम्पूर्ण राष्ट्र अपने और आपके वीर पुत्रकी मृत्युपर आपके साथ शोकमग्न है। मै आपके दु:खमे पूरी तरह शरीक हूँ। ईश्वर आपको इस अप्रत्याशित क्षतिको सहन करने का साहस दे।[2]

गांधी

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३०-३-१९४२

५४४. पत्र : अमृतकौरको

नई दिल्ली
२९ मार्च, १९४२

चि० अमृत,

तुम्हारा पत्र मिल गया था। आजके पहले तुम्हे लिखने का समय ही नही निकाल पाया। ज[वाहर]ला[ल] मगलवारके पहले मुझे जाने ही नही देगा। तुमने खुद यहाँ आनेके बारेमे क्या तय किया? मै अपनी रायपर अब भी कायम हूँ, हालाँकि वह तुम्हे पसन्द नही है।

यह बात मै समझ गया हूँ कि सेवाग्रामसे बाहर रहते हुए मै अपना स्वास्थ्य ठीक नही रख सकता।

१. सुभाषचन्द्र बोसकी माता
२. समाचारके खण्डनके लिए देखिए "तार : प्रभावतीदेवी बोसको", पृ० ४८८।

एक बैठक चल रही है और मैं उसी बीच तुम्हें लिख रहा हूँ।
[महादेव] यहीं है और अच्छा है।
स्नेह।

बापू

राजकुमारी अमृतकौर
सेवाग्राम
बरास्ता — वर्धा
म० प्र०

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११९) से, सौजन्य अमृतकौर। जी० एन० ७४२८ से भी

५४५. पत्र : बालकृष्ण शि० मुंजेको

२९ मार्च, १९४२

प्रिय डॉ० मुंजे,

आपके दो पत्र मिल गये थे। समयकी कमीके कारण जल्दी जवाब न दे सका। इन सब कामोंसे मैं अलग हो चुका हूँ। मामला अब कार्य-समितिके हाथोंमें है।

हृदयसे आपका,
मो० क० गांधी

[अंग्रेजीसे]
डा० शि० मुंजे पेपर्स, फाइल न० ४०/१९४५-४८। सौजन्य नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

५४६. सम्पत्ति-ध्वंसकी नीति[1]

भारतीय व्यापार-उद्योग संघके अध्यक्ष श्री गगनविहारी एल० मेहताने समाचार-पत्रोंमें एक अत्यन्त सुतर्कपूर्ण वक्तव्य जारी किया है, जिसमें से कुछ महत्त्वपूर्ण अंश[2] मैं नीचे उद्धृत कर रहा हूँ

> यह बता दिया जाना चाहिए कि आर्थिक सम्बन्ध इतने घनिष्ठ, जटिल और नाजुक होते हैं कि महत्त्वपूर्ण उद्योगों या कारखानोंको नष्ट कर दिया

१. यह "टिप्पणियाँ" शीर्षकके अन्तर्गत प्रकाशित हुआ था।
२. यहाँ उद्धृत अंशोंका एक हिस्सा ही दिया जा रहा है।

जाये तो निश्चय ही देशके आर्थिक ढाँचे या जीवनपर उसका अत्यन्त गम्भीर प्रभाव होगा। उदाहरणके लिए, यदि पटसन, कपास या चीनीके औद्योगिक कारखानोंको नष्ट कर दिया जाये तो युद्धके बाद भी उनके पुनर्निर्माणमें वर्षों लग जायेंगे, और इस बीच न केवल कारखानोंके मालिकोंको, बल्कि इन चीजों की खेती करनेवाले किसानों, औद्योगिक मजदूरों और इन उद्योगोंसे सम्बन्धित और इनके सहायक उद्योगों तथा व्यापार-धन्धेमें लगे लोगोंको भी भीषण कष्ट भोगना पड़ेगा। बहुत अधिक खर्च उठाकर, वर्षोंके कठिन संघर्ष और न जाने कितनी कठिनाइयोंपर पार पाने के बाद खड़े किये गये उद्योगोंके ध्वंससे आर्थिक ढाँचा ऐसा अस्त-व्यस्त और छिन्न-भिन्न हो जायेगा कि उसके मुकाबले लड़ाईके कदमके तौरपर उससे प्राप्त होनेवाला कोई भी लाभ सर्वथा नगण्य होगा। . . .

सम्पत्तिके ध्वसकी यह नीति ऐसी है कि उसके पीछे जो हेतु है वह अपने-आप विफल सिद्ध होगा।[1] यह कथन कितना सही है, यह तो समय ही बतायेगा।

नई दिल्ली, ३० मार्च, १९४२

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, ५-४-१९४२

५४७. तार: प्रभावतीदेवी बोसको[2]

नई दिल्ली
३० मार्च, १९४२

भगवान्‌का लाख-लाख धन्यवाद कि जिस समाचारको बिलकुल प्रामाणिक कहा जा रहा था वह गलत साबित हुआ। आपको और राष्ट्रको हमारी बधाई।

[अंग्रेजीसे]
बॉम्बे क्रॉनिकल, ३१-३-१९४२

१. देखिए "सम्पत्ति-ध्वंसकी नीति", पृ० ४४८-४९।
२. यह तार गांधीजी और अबुल कलाम आजादने भेजा था।

५३६. पत्र : अमृतकौरको

२६ मार्च, १९४२

चि० अमृत,

कई बातोंमें तो तुम बच्ची ही हो। तुम्हें दिल्ली ले जाने को तैयार नहीं हुआ, इससे तुम्हारा दुःखी होना वैसा ही है जैसा कि अपने पिता द्वारा कानपुर न भेजे जाने पर मेरा दुःखी होना था। कैसी नादानी है यह! मेरा निश्चित मत है कि तुम्हें दिल्ली ले जाना बुरा दिखता और बुरा होता भी। फिर, सेवाग्राममें तुम्हारी उपस्थिति अत्यन्त आवश्यक है। वहाँ रोगी हैं, चन्द्रसिंह है और दूसरे कई लोग हैं। फिर, हयातुल्ला भी है। अगर ये चीजें तुम अब महसूस नहीं करोगी तो फिर कब करोगी? तुम्हें समझदार बनना है। तो प्रसन्न होकर वहाँ अपने काममें लग जाओ।

स्नेह।

बापू

[पुनश्च :]

साथका पत्र अ[मतुल]स[लाम]के लिए है।[1]

मूल अंग्रेजी (सी० डब्ल्यू० ४११८) से; सौजन्य : अमृतकौर। जी० एन० ७४२७ से भी

५३७. पत्र : पद्मपत सिंघानियाको

दिल्ली जाते हुए
२६ मार्च, १९४२

भाई पद्मपतजी,

आपका पत्र तो मुझे शीघ्र मिल गया था। मैं उत्तर आज ही दे पाता हूं।[2] एक उत्तर बाकी है। क्या आप मैंने जो मार्ग ग्रहण किया उसमें हृदयसे सम्मत है? मार्ग यह है—जो प्रस्ताव इंदोरमें किया गया उसको विस्तृत रूप देना और हिंदी

१. यह उपलब्ध नहीं है।
२. देखिए "पत्र : पद्मपत सिंघानियाको", पृ० ४४२।

५५०. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

दिल्ली
३० मार्च, १९४२

प्रिय भगिनि,

तुम्हारा खत मिला है। बयान अच्छा दिया है। मुलतानमे काम भी बहूत अच्छा हुआ। इसी तरह अवश्य मुस्लीम भाई-बहनोसे मिलना अच्छी बात है।

चादवानी वर्धा आये थे। बहूत बातें हुई। रा[ज]कु[मारी]ने सब लिखा होगा। शायद चादवानीने भी। मुझे फुरसत नही है कि मै लम्बा खत लिखु।

मेरी आशा है कि मै कल सेवाग्राम जा सकुगा।

बापुके आशीर्वाद

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ८००२) से। सी० डब्ल्यू० ३१०० से भी, सौजन्य रामेश्वरी नेहरू

५५१. पत्र : रामेश्वरी नेहरूको

दिल्ली
३१ मार्च, १९४[२][1]

प्रिय भगिनि,

तुम्हारा २१-३-४२ का खत देखा। जो प्रस्ताव भेजे है अच्छे तो है। बोर्डके सामने रखे जाये। देखे क्या होता है। दोनो कार्य आवश्यक है।

बापुके आशीर्वाद

रामेश्वरी नेहरू
२ वारिस रोड
लाहौर[2]
पजाव[3]

पत्रकी फोटो-नकल (जी० एन० ७९९३) से। सी० डब्ल्यू० ३०९१ से भी, सौजन्य रामेश्वरी नेहरू

१. साधन-सूत्रमें "१९४१" है, जबकि डाकखानेकी मुहर १-४-१९४२ की है।
२ और ३. अंग्रेजीमें लिखे हुए है।

परिशिष्ट

परिशिष्ट १

कांग्रेस कार्य-समितिका प्रस्ताव[1]

३० दिसम्बर, १९४१

कार्य-समितिको गांधीजीका निम्नलिखित पत्र प्राप्त हुआ है और उसमें उन्होंने जो मुद्दा उठाया है उसके औचित्यको वह स्वीकार करती है, और इसलिए गांधीजी ने जिस बम्बई प्रस्तावका जिक्र किया है उसके तहत उनके सिरपर आई जिम्मेदारी से उन्हें मुक्त करती है। लेकिन कार्य-समिति उन्हें इस बातका आश्वासन देती है कि स्वराज्यकी प्राप्तिके लिए उनके मार्ग-दर्शनमें अहिंसाकी जो नीति अपनाई गई थी और जो जन-जागृतिकी दिशामें तथा अन्य प्रकारसे भी इतनी कारगर सिद्ध हुई है, कांग्रेस उसका अनुसरण करती रहेगी। कार्य-समिति उन्हें आगे यह आश्वासन भी देती है कि जहाँतक सम्भव होगा वहाँतक स्वतन्त्र भारतमें भी वह अहिंसाकी इस नीतिके क्षेत्रका विस्तार करना चाहेगी। कार्य-समिति आशा करती है कि कांग्रेसजन उनके उद्देश्यको, जिसमें सविनय अवज्ञा करना भी शामिल है, आगे बढ़ाने में उनकी पूरी सहायता करेंगे।

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फाइल संख्या १३७५। सौजन्य : नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय

परिशिष्ट २

कांग्रेस कार्य-समितिका प्रस्ताव[2]

३० दिसम्बर, १९४१

कार्य-समितिकी पिछली बैठकको हुए चौदह महीने बीत गये हैं और इस अवधिके दौरान दुनिया युद्धके गर्तमें और भी डूब गई है तथा सीधे आत्मविनाशकी ओर

१. देखिए पृ० २०९ और २२१।

२. देखिए पृ० २०६, २११, २१७ और २४५।

बढ रही है। कार्य-समितिके सदस्य जेलसे रिहा होनेके बाद फिर मिले है और उन्होने मानव-इतिहासके इस निर्णायक कालके दौरान हुई राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओ पर गम्भीरतासे विचार किया है। इस नाजुक घडीमे, जब पुरानी समस्याओने नया महत्त्व ग्रहण कर लिया है और युद्ध अपने साथ नई समस्याओको लेकर भारतकी सीमाओपर आ खडा हुआ है, काग्रेस और राष्ट्रका मार्गदर्शन करनेका बोझ बहुत भारी है, और कार्य-समिति इस बोझको अच्छी तरहसे अपने कधोपर तभी उठा सकती है जब उसे भारतकी जनताका पूरा सहयोग प्राप्त हो। समितिने उन सिद्धान्तो और उद्देश्योको ध्यानमे रखनेका प्रयत्न किया है जिनका काग्रेस गत कई वर्षोके दौरान प्रतिनिधित्व करती रही है और उसने विश्वकी परिस्थितियो तथा विश्वकी स्वतन्त्रताके बृहत्तर सन्दर्भमे उनपर विचार किया है। समितिका विश्वास है कि विश्वकी आज की उथल-पुथलकी स्थितिमे भारतकी जनताको पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करना आवश्यक है, वल्कि इस स्थितिमे तो और भी आवश्यक है—सो केवल भारतकी खातिर ही नही, वरन् विश्वकी खातिर भी। समितिका यह भी विश्वास है कि सच्ची शान्ति केवल स्वतन्त्र राष्ट्रोके बीच विश्व-सहयोगके आधारपर ही स्थापित की जा सकती है और कायम रखी जा सकती है।

१४ सितम्बर, १९३९ को[1] समितिने जो वक्तव्य जारी किया था उसमे उसने युद्धके प्रति अपने दृष्टिकोणको पूर्ण अभिव्यक्ति दी थी। वक्तव्यमे नाजी और फासिस्ट आक्रमणकी भर्त्सना की गई थी और स्वतन्त्रता तथा लोकतन्त्रके उद्देश्यकी सहायता करनेकी इच्छा व्यक्त की गई थी, बशर्ते कि युद्धके उद्देश्योकी स्पष्ट घोषणा कर दी जाये और फिलहाल जहाँतक हो सके, उनपर अमल किया जाये। यदि उसके उद्देश्य स्वतन्त्रता और लोकतन्त्र है तो उनमे अनिवार्यत साम्राज्यवादका अन्त और भारतको स्वतन्त्रता प्रदान करना भी शामिल होना चाहिए। ब्रिटिश सरकारकी ओरसे की गई बादकी घोषणाओ तथा उसकी प्रतिक्रियावादी और अत्याचारी नीतिसे स्पष्ट हो जाता है कि यह सरकार साम्राज्यवादी जकडको कायम रखने तथा उसे और भी मजबूत बनानेके लिए एव भारतीय जनताका शोषण करनेके लिए कृतसकल्प है। ब्रिटिश सरकारकी नीति जान-बूझकर भारतीय राष्ट्रवादका अपमान करने, निरकुश सत्तावादको बनाये रखने और विध्वसक तथा प्रतिक्रियावादी तत्त्वोको बढावा देनेकी है। काग्रेसकी ओरसे की गई सम्मानजनक समझौतेकी हर पेशकशको ठुकरा दिया गया है, इतना ही नही, बल्कि नरम मानी जानेवाली सस्थाओ द्वारा अभिव्यक्त किये गये लोकमतकी भी अवहेलना की गई है।

इसलिए काग्रेसको भारतीय जनताके सम्मान तथा प्राथमिक अधिकारोकी रक्षा करने तथा राष्ट्रवादी आन्दोलनकी अखण्डताको बनाये रखनेके लिए गाधीजी से अनुरोध करना पडा कि क्या किया जाना चाहिए, इस बारेमे वे काग्रेसका मार्गदर्शन करे। अपने विरोधीको, खासकर युद्धकी आपदाओ और खतरोके दौरान, परेशानीसे यथासम्भव बचानेको इच्छुक महात्मा गाधीने अपने सत्याग्रह आन्दोलनको ऐसे चुनिन्दा व्यक्तियो

१. देखिए खण्ड ७०, परिशिष्ट १०।

तक सीमित कर दिया जो उनके द्वारा निर्धारित कुछ कसौटियोंपर खरे उतरे। उस सत्याग्रहको चलते आज चौदह महीनेसे ज्यादा हो गये है और इस अवधिमे लगभग पच्चीस हजार कांग्रेसी जेल जा चुके है, जब कि सीमा-प्रान्त और अन्यत्र जिन अन्य कई हजार कांग्रेसियोने सत्याग्रह किया उन्हे गिरफ्तार नही किया गया। समिति गांधीजीके नेतृत्वकी और राष्ट्रने उनके आह्वानका जो उत्तर दिया उसकी सराहना करना चाहती है और उसकी यह राय है कि इससे जनताकी शक्ति बढी है।

इस अर्सेके दौरान भारतीय स्वाधीनताके प्रति ब्रिटिश सरकारका रवैया शत्रुतापूर्ण रहा है तथा वह भारतमे पूरी तरहसे सत्तावादी सरकारके रूपमे काम करती रही है और इस तरह भारतीय जनताकी निर्धारित मान्यताओ और भावनाओंका अपमान करती रही है। न तो स्वतन्त्रता तथा लोकतन्त्रकी उसके द्वारा दी गई दुहाइयोंसे और न युद्धसे प्रतिफलित सकटो तथा आपदाओंसे उसके इस रुख और नीतिपर कोई असर पड़ा है, और उसमे जो परिवर्तन आये भी है उनसे सुधारके बजाय बिगाड ही पैदा हुआ है।

अभी हालमे हुई कुछ राजनीतिक कैदियोंकी रिहाईका कोई अर्थ और महत्त्व नही है, और जिन सयोगोंमे उन्हे रिहा किया गया है उनमे सरकारी तौरपर की गई घोषणाओंसे स्पष्ट हो जाता है कि रिहाईका नीति-विषयक किसी परिवर्तनसे कोई सम्बन्ध नही है। राजनैतिक बन्दियोंकी एक बहुत बडी सख्या, जिन्हे कोई मुकदमा चलाये बिना भारत-रक्षा अधिनियमके अन्तर्गत जेलोमें डाल दिया गया है और जिनका एकमात्र अपराध यही है कि वे विदेशी शासनका जुआ उतार फेंकने को आतुर उत्साही देशभक्त है तथा देशकी स्वाधीनता प्राप्त करने के लिए कृतसकल्प है, आज भी जेलोमे ही बन्द है। अभी हालमे हुई प्रमुख व्यक्तियोंकी गिरफ्तारियो और जेलमे उनके साथ किये जानेवाले व्यवहारसे भी इस बातका पता चलता है कि पुरानी नीतिपर पहलेकी तरह आज भी अमल किया जा रहा है।

यद्यपि भारतके प्रति ब्रिटिश सरकारकी नीतिमे कोई परिवर्तन नही हुआ है तथापि कार्य-समितिको युद्धके विश्व-सघर्षका रूप धारण कर लेने और भारतके निकट आ पहुँचने से उत्पन्न नई विश्व-परिस्थितिका पूरा विचार करना है। कांग्रेसकी सहानुभूति अनिवार्यत उन लोगोंके साथ है जो आक्रमणका शिकार हुए है और जो अपनी स्वाधीनताके लिए लड रहे है। लेकिन केवल स्वाधीन और स्वतन्त्र भारत ही राष्ट्रीय आधारपर देशकी रक्षाका भार अपने कन्धोपर ले सकता है और युद्धकी आँधीसे उद्भूत हो रहे बृहत्तर उद्देश्योको आगे बढाने मे मदद दे सकता है। भारतकी पूरी पृष्ठभूमि ब्रिटिश सरकारके प्रति विरोध और अविश्वासकी पृष्ठभूमि है, और अधिकसे-अधिक दूरगामी वादे भी इस पृष्ठभूमिको बदल नही सकते, और न पराधीन भारत उद्धत साम्राज्यवादको, जो किसी भी तरह फासिस्ट सत्तावादसे भिन्न नही है, स्वेच्छा या खुशीसे कोई भी सहायता दे सकता है।

इसलिए समितिकी यह राय है कि अ० भा० का० कमेटीने १६ सितम्बर, १९४०[1] को बम्बईमे जो प्रस्ताव किया था वह आज भी कायम है और अब भी कांग्रेसकी नीतिको परिभाषित करता है।

[अंग्रेजीसे]

अ० भा० कां० क० फ़ाइल सख्या १३७५। सौजन्य: नेहरू स्मारक सग्रहालय तथा पुस्तकालय

परिशिष्ट ३

कांग्रेस कार्य-समितिके निर्देश[2]

अ० भा० का० कमेटीकी यह बैठक कार्य-समिति द्वारा पास किये गये निम्न-लिखित निर्देशोका अनुमोदन करती है और सभी प्रान्तीय तथा अन्य अधीनस्थ कांग्रेस कमेटियोसे अपने-अपने क्षेत्रोमे उन्हे लागू करने का अनुरोध करती है। प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियोको यह अधिकार दिया जाता है कि जहाँ जरूरी हो वहाँ वे इन निर्देशोमे और भी निर्देश जोड सकती है। कमेटी निर्वाचित कांग्रेस कमेटीके प्रत्येक सदस्यसे यह अपेक्षा रखती है कि वे इस कार्यक्रमके किसी-न-किसी पहलूको कार्यान्वित करने मे सक्रिय रूपसे भाग लेगे और अपनी कमेटीको समय-समयपर अपने कार्यकी रिपोर्ट देते रहेगे।

विश्व-परिस्थितिमे अभी हाल मे जो-कुछ घटित हुआ है उसके कारण युद्ध भारतकी सीमापर पहुँच गया है। हो सकता है कि इससे देशके कुछ भागोमे आन्तरिक अव्यवस्था फैल जाये और कुछ शहरोपर हवाई हमले हो। चाहे जो भी खतरे और कठिनाइयाँ आये, इन सबका सच्चा उपाय यह है कि हम शान्त-धीर बने रहे और किसी भी हालतमे घबराहट और उत्तेजनाके वशीभूत न हो। कांग्रेस-जनोको अपने-अपने कर्त्तव्य-स्थलो पर डटे रहकर जन-सेवा जारी रखनी चाहिए। जब भी जरूरत पडे, उन्हे सुरक्षित स्थानोको छोडकर ज्यादा जरूरतमन्द जगहोमें पहुँच जाना चाहिए और जिन्हे आवश्यकता हो उनकी सहायताके लिए तैयार रहना चाहिए।

आगे आनेवाले कठिन समयमे कांग्रेस जनताकी सेवा और उसकी सहायता तभी कर सकती है जब उसका सगठन मजबूत और अनुशासनबद्ध हो तथा व्यक्तिश कांग्रेसियो तथा कांग्रेस कमेटियोको अपने-अपने क्षेत्रके लोगोका विश्वास प्राप्त हो। इसलिए कांग्रेसियो और कांग्रेस कमेटियोको सगठनको तुरन्त मजबूत बनाने और गाँवो तथा शहरोमे लोगोसे अपना सम्पर्क पुनरुज्जीवित करने तथा कायम रखने के कार्यमे जुट जाना चाहिए। प्रत्येक गाँवमे, जहाँतक सम्भव हो, कांग्रेसका सन्देश पहुँचना चाहिए और जो कठिनाइयाँ आये उनका मुकाबला करने के लिए उसे तैयार रहना चाहिए।

१. देखिए खण्ड ७३, पृ० १-३।
२. देखिए पृ० २५० और ३७३।

काग्रेस द्वारा अपनाये और समय-समयपर गाधीजी द्वारा निरूपित रचनात्मक कार्यक्रमका इस समय विशेष महत्त्व है। इसका उद्देश्य न केवल विभिन्न समूहोमे एकता स्थापित करना, समाजके कुछ हिस्सोको पिछडा और दलित बनाये रखनेवाली निर्योग्यताओको दूर करना, लोगोमें स्वावलम्बन और सहयोगकी भावनाको बढावा देना, उत्पादन बढाना और उसका अधिक उचित वितरण करना है, बल्कि यह लोगोके साथ सम्पर्क साधने और उनकी सेवा करने का भी सर्वोत्तम अवसर और साधन प्रस्तुत करता है, और यह सम्पर्क तथा सेवा उनका विश्वास प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। इसलिए कार्य-समिति काग्रेस कमेटियो और कार्यकर्त्ताओ का आह्वान करती है कि वे इस कार्यक्रमको पूरी लगनसे आगे बढायें और इस प्रकार अव्यवस्था और अशान्ति के समयमे स्थिरता और शक्तिदायी प्रभाव डाले।

ऐसे समयमे असामाजिक तत्त्वो द्वारा देशमे गडबड पैदा किये जाने की हमेशा सम्भावना रहती है। ऐसी स्थितिको उत्पन्न न होने देने के लिए और उत्पन्न होने पर उसका मुकाबला करने के लिए ग्रामीण और शहरी दोनो इलाकोमे स्वयसेवकोका संगठन किया जाना चाहिए। इस प्रकारके सगठन विशुद्ध अहिंसाके आधारपर खडे किये जाने चाहिए, और इस बातको हमेशा याद रखना चाहिए कि काग्रेस इस सिद्धान्तको मानती है। ये स्वयसेवक अन्य उद्देश्योके लिए काम करनेवाली सस्थाओके साथ सहयोग कर सकते हैं। इस स्वयसेवक सगठनका उद्देश्य साधारण अवस्थामें और सम्भावित आन्तरिक अशान्तिके समय भी जनताकी सेवा करना है। इसलिए इसे अधिकारियोके साथ सघर्षसे बचना चाहिए।

वस्तुओके दाम पहले ही बढ गये हैं, जिसके परिणामस्वरूप लोग तकलीफ उठा रहे हैं और इस स्थितिसे निपटने के लिए अधिकारियो द्वारा अभीतक पर्याप्त कदम नही उठाये गये है। ये प्रवृत्तियाँ भविष्यमें और भी तीव्र हो सकती हैं, तथा युद्धके दबावके कारण व्यापार और परिवहनके ठप्प हो जाने के फलस्वरूप जीवनके लिए आवश्यक वस्तुओ और साथ ही रोजमर्राके इस्तेमालकी अन्य बहुत-सी चीजोकी कमी हो सकती है। युद्धके कारण अन्य देशोमें बडे पैमानेके उद्योगोको भारी नुकसान पहुँचा है और सैनिक आवश्यकताओके कारण वस्तुओका परिवहन कठिन हो गया है। चीनने अपने यहाँ ग्रामोद्योगोका व्यापक रूपसे विकास करके काफी हदतक इन कठिनाइयोपर विजय प्राप्त कर ली है। भारतको भी ऐसी ही समस्याओका सामना करना पड सकता है और ग्राम तथा कुटीर उद्योग इन समस्याओका ऐसा हल प्रस्तुत करते हैं जो अपने-आपमे वाछनीय है और समयकी माँगोके विशेष रूपसे उपयुक्त है। ऐसे उद्योग व्यापार तथा परिवहनमें आनेवाली अस्त-व्यस्तताके प्रभावोसे बच निकल सकते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि रचनात्मक कार्यक्रमके इस पहलूको व्यापक रूपसे अपनाया जाये और इसे पूरी शक्ति तथा लगनसे कार्यान्वित किया जाये, ताकि जहाँतक सम्भव हो, गाँवोको जीवनकी आवश्यक वस्तुओके सम्बन्धमे आत्मनिर्भर बनाया जा सके। कमेटी ग्रामवासियोसे विशेष रूपसे सिफारिश करना चाहेगी कि वे कमसे-कम गाँवकी जरूरतोको पूरा करने के लायक खाद्यान्न तो अवश्य उपजाये,

और अन्न-विक्रेताओंसे अपील करती है कि वे मुनाफाखोरीके लिए चीजोंके भण्डारोको रोक न रखें बल्कि उचित दामोंपर उपभोगके लिए चीजें सुलभ कर दें।

आपात् प्रसंगोंमें जब अधिकारीगण जनताकी जान व मालकी हिफाजतके लिए और सार्वजनिक व्यवस्था बनाये रखने के लिए जनताके लिए निर्देश जारी करें तो कांग्रेसजन उनके साथ संघर्षसे बचें। वे उन निर्देशोंका पालन करें, बशर्ते कि वे कांग्रेस द्वारा जारी किये गये निर्देशोंके विपरीत न हों।

[अंग्रेजीसे]
हरिजन, २५-१-१९४२

परिशिष्ट ४

चक्रवर्ती राजगोपालाचारीके नाम महादेव देसाईका पत्र[1]

सेवाग्राम
१४ फरवरी, १९४२

प्रिय राजाजी,

आपका कहना ठीक है। बापूको सान्त्वनाकी सबसे अधिक आवश्यकता है। वे बड़ी बहादुरीसे काम ले रहे हैं, सबको — जानकीबहन और बच्चोंको — सान्त्वना देने की कोशिश कर रहे हैं, और उनके महान् कार्यको दूने उत्साहसे चलाने की योजनाके बारेमें बराबर सोचते हैं, लेकिन कल परिवारके इन सदस्योंके साथ बातचीत करते समय उनके धीरजका बाँध टूट गया और वे रो पड़े। मेरा खयाल है कि उनकी मृत्युसे उन्हें उतना ही गहरा दुःख हुआ है जितना मगनलालकी मृत्युपर हुआ था। यहाँ सब-कुछ — सेवाग्राममें बापूके रहते हुए भी — उनके बिना सूना-सूना लगता है।

सब-कुछ इतना अचानक हो गया। अपनी मृत्युसे दो दिन पूर्व वे यहाँ घनश्यामदासजी से मिलने आये थे। वे स्वस्थ नहीं दिखाई पड़ रहे थे और उन्होंने चक्कर आने की शिकायत भी की थी। ११ तारीखकी शामको उन्होंने मुझसे टेलीफोनपर च्यांग काई-शेकके प्रत्याशित आगमनके बारेमें बातचीत की थी, उनके स्वागतकी व्यवस्थाकी चर्चा की थी तथा कुछ हँसी-मजाक भी किया था। उन्होंने कहा, "यदि बापू मुझे इस तरहके कामोंसे मुक्त नहीं करेंगे तो उन्होंने मुझे गोसेवाका काम क्यों सौंपा?" मैंने उत्तर दिया, "लेकिन आपके यहाँ च्यांग काई-शेक-जैसे अतिथि भी तो आने चाहिए। आप कुछ दिनोंके लिए गोपुरीका त्याग कर जानकीपुरीमें आकर रह सकते हैं।" जवाबमें उन्होंने कहा, "आप नहीं जानते, जानकीदेवी पहले ही गोपुरीमें है, इसलिए अब यह जानकीपुरी ही है। और जहाँतक अतिथियोंका

१. देखिए पृ० ३३६।

प्रश्न है, संसारका सबसे महान् व्यक्ति मेरा अतिथि है और मेरे लिए उससे बड़ा अतिथि और कोई हो ही नहीं सकता।" अगले दिन अर्थात् उनकी मृत्युके दिन सुबह भी हमने टेलीफोनपर उसी विनोदमय ढंगसे बातचीत की। ओम् और उसके पति उसी दिन सुबह बम्बईसे आये थे और कमलनयनकी पत्नीने उन्हें पुराने पैतृक घरमें भोजनपर आमंत्रित किया था। उस दिन जमनालालजी का एकादशी व्रत था, इसलिए वे जाने के लिए राजी न थे, लेकिन जानकीदेवीके आग्रह करने पर गये। वहाँ उन्हें एकादशीका भोजन दिया गया और लगता है कि सब लोगोंके अनुरोध पर वे कुछ ज्यादा खा गये। बादमें वे लड़की, दामाद और पतोहूके साथ ताश खेलने लगे, और फिर उन्हें नींद आने लगी। उन्हें एक कै हुई और उसके कुछ मिनट बाद ही सिरमें इतना भयंकर दर्द हुआ कि वे लगभग चीख पड़े। डाक्टरोंको बुलाया गया। उनका रक्तचाप २५०/१२५ था। डाक्टरोंने रक्तस्राव कराने की सोची। बापूको तुरन्त इत्तिला दी गई और उन्हें लिवा लाने के लिए सेवाग्राम एक कार भेजी गई। लेकिन वे तब पहुँचे जब सारा खेल खत्म हो चुका था। यह सब-कुछ दस-पन्द्रह मिनटके भीतर हो गया।

और अब वे हम सबको असहाय छोड़कर चले गये हैं। हमारे लिए इस आघात से उबरना बहुत कठिन है।

आपके पास कामकी बहुत ज्यादा भीड़ है। उम्मीद है कि आप सामर्थ्यसे ज्यादा काम नहीं कर रहे हैं। आप स्वस्थ तो हैं? दिनमें दोसे अधिक सभाओंमें भाषण न दें।

डॉक्टर राधाकृष्णन्‌से मेरी बातचीत हुई है। लेकिन उसके बारेमें अगले पत्रमें लिखूँगा।

हृदयसे आपका,
महादेव

[पुनश्च:]

बापू २० तारीखको जमनालालजी के मित्रोंकी एक निजी बैठक बुला रहे हैं। उनकी इच्छा है कि यदि सम्भव हो तो आप इसमें शामिल हों। आपकी उपस्थितिसे उन्हें शान्ति और सान्त्वना मिलेगी।

महादेव

अंग्रेजीकी फोटो-नकल (सी० डब्ल्यू० १०९०७) से। सौजन्य सी० आर० नरसिंहन्

परिशिष्ट ५

लॉर्ड लिनलिथगोका पत्र[1]

वाइसराय हाउस
नई दिल्ली
२० फरवरी, १९४२

प्रिय श्री गाधी,

अब मैने अखिल भारतीय चरखा सघसे मॉगे गये आयकरके बारेमे स्थितिका ठीक पता लगा लिया है।

(२) आप भरोसा रखे कि कर-निर्धारणके लिए सघके मुनाफेका हिसाब लगाने के लिए जो कार्रवाई की गई उसके पीछे मेरी सरकार या उच्चतर आयकर-अधिकारियोका कोई अवान्तर मशा नही था, बल्कि वह तो उस अधिकारी द्वारा अपने कर्त्तव्यका सीधा-सादा निर्वाह था जो अपने अधिकार-क्षेत्रमे आनेवाले किसी भी व्यवसायके मुनाफेका हिसाब लगाने के लिए कानूनन बँधा हुआ है। मुझे बताया गया है कि बम्बई उच्च न्यायालय, जिसने इस मामलेका निर्णय किया, सघके उद्देश्यका पारमार्थिक स्वरूप स्वीकार करने को तैयार था, किन्तु सघको आयकर अदा करने के दायित्वसे बरी नही मान पाया, क्योकि सघकी सम्पत्ति पारमार्थिक प्रयोजनोके लिए किसी न्यास या अन्य कानूनी दायित्वके अधीन नही है।

(३) कानूनका जो स्वरूप है उसके तहत मेरी सरकार भी कानूनकी व्यवस्थाओसे सघको बरी करने मे असमर्थ है और जबतक अदालतका निर्णय पलट नही दिया जाता तबतक वह उसे अमलमे लाने से मुँह नही मोड़ सकती, लेकिन अपनी सद्भावनाके प्रतीकके तौरपर उसने इस आशयके निर्देश जारी किये है कि जबतक प्रिवी कौसिलके सामने दायर अपीलपर फैसला नही सुना दिया जाता तबतक कर की वसूली न की जाये।

(४) इस परिस्थितिमे मै समझता हूँ, आप मेरी इस बातसे सहमत होगे कि सघके लिए समझदारीका काम यह होगा कि वह अपने सगठनको कानूनन ऐसा रूप दे दे जिससे पारमार्थिक प्रयोजनोके न्यासके तहत आनेवाली सम्पत्तिको कानूनन जो छूट मिलती है वह उसे भी प्राप्त हो सके, किन्तु इस कार्रवाईके फलस्वरूप जो छूट मिलेगी वह सिर्फ आगे के लिए ही होगी और मुझे दु खके साथ कहना पडता है कि

1. देखिए पृ० ३९७।

अगर अदालतका वर्तमान निर्णय कायम रहता है तो ऐसी छूटको पीछे के समयसे लागू करना मेरी सरकार या स्वयं मेरी सामर्थ्यसे बाहर है।

हृदयसे आपका,
लिनलिथगो

[पुनश्च :]

आपके पत्रके अन्तिम अनुच्छेद बहुत सौजन्यपूर्ण है और मैं उनसे सहमत न होते हुए भी उनके मर्मको समझता हूँ।

आपका सन्देश मैं साउथवी और अपनी पुत्रीको दे दूँगा, और मुझे मालूम है कि वे इसे मूल्यवान मानेंगे। उसके पत्र अक्सर आते रहते हैं। "रिचर्ड" बहुत ही प्यारा बच्चा है—समझ लीजिए पूरे कुटुम्बकी आँखोंका तारा है। तो हमारी तमाम भूलोंके बावजूद जीवनकी धारा अन्तमें विजयी होकर अजस्र बहती रहेगी!!

[अंग्रेजीसे]

ट्रांसफर ऑफ पॉवर, जिल्द १, पृ० २१२-१३

परिशिष्ट ६

ब्रिटिश युद्ध-मन्त्रिमण्डलके प्रस्ताव[1]

सर स्टैफर्ड क्रिप्स ब्रिटिश युद्ध-मन्त्रिमण्डलके निम्नलिखित निष्कर्ष लेकर भारत गये हैं, जिनपर भारतीय नेताओंके साथ चर्चा की जायेगी और उनपर अमल किया जायेगा या नहीं, यह बात उन चर्चाओंके परिणामपर निर्भर करेगी जो इन दिनों चल रही हैं।

भारतके भविष्यके सम्बन्धमें दिये गये वचनोंके पूरे किये जानेके सम्बन्धमें इस देशमें और भारतमें जो चिन्ताएँ व्यक्त की गई हैं उनपर विचार करनेके बाद सम्राटकी सरकारने निश्चित और स्पष्ट शब्दोंमें उन कदमोंकी व्यवस्था कर देनेका निश्चय किया है जिन्हें वह भारतमें प्रशासनके लक्ष्यको यथासम्भव शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त करनेके लिए उठानेका इरादा रखती है। लक्ष्य एक ऐसे नये भारतीय संघका निर्माण करनेका है जो एक उपनिवेश होगा, और यह उपनिवेश ताजके प्रति निष्ठाके सामान्य सूत्रसे यूनाइटेड किंगडम तथा अन्य उपनिवेशोंके साथ बँधा होगा, लेकिन वह हर दृष्टिसे उन सबकी बराबरीका होगा और अपने घरेलू या वैदेशिक मामलोंके किसी भी पहलूकी दृष्टिसे उनके अधीन नहीं होगा।

इसलिए सम्राटकी सरकार निम्नलिखित घोषणा करती है:

१. देखिए पृ० ४६९ और ४८३।

(क) युद्धकी समाप्तिके शीघ्र बाद भारतमें आगे बताये गये अनुसार एक निर्वाचित सभा स्थापित की जायेगी, जिसका काम भारतके लिए नया संविधान बनाना होगा।

(ख) संविधान निर्मातृ संस्थामें भारतीय रियासतोंके शरीक होने की व्यवस्था नीचे बताये गये अनुसार की जायेगी।

(ग) सम्राटकी सरकार इस प्रकार बनाये गये संविधानको तत्काल स्वीकार और लागू करने का वचन देती है, बशर्ते कि:

(१) ब्रिटिश भारतका जो भी प्रान्त नये संविधानको स्वीकार करने को तैयार नहीं होगा उसे अपनी वर्त्तमान संवैधानिक स्थिति कायम रखने का अधिकार होगा, और इस बातकी व्यवस्था कर दी जायेगी कि अगर वह बादमें संघमें शामिल होने का फैसला करे तो शामिल हो सकता है।

संघमें शामिल न होनेवाले ऐसे प्रान्तोंकी इच्छा होने पर सम्राटकी सरकार उनके लिए नया संविधान स्वीकार करने को तैयार रहेगी, जिसके अधीन उन्हें भारतीय संघके ही समान पूरा दर्जा प्रदान किया जायेगा और जिसकी रचना यहाँ निर्धारित की गई पद्धतिसे ही की जायेगी।

(२) सम्राटकी सरकार और संविधान निर्मातृ संस्थाकी आपसी बातचीत द्वारा तय किये गये एक संधि-पत्रपर हस्ताक्षर किये जायेंगे। इस संधिमें ब्रिटेन द्वारा भारतीयोंको सत्ताके पूर्ण हस्तान्तरणसे उत्पन्न सभी आवश्यक मामलोंका समावेश होगा। इसमें सम्राटकी सरकार द्वारा दिये गये वचनोंके अनुसार प्रजातिगत तथा धर्मगत अल्पसंख्यकोंके संरक्षणकी व्यवस्था होगी; किन्तु यह संधि ब्रिटिश राष्ट्रकुलके अन्य सदस्य राज्योंके साथ भारतीय संघ द्वारा अपने भावी सम्बन्धके निर्णयके अधिकारपर किसी तरहका प्रतिबन्ध नहीं लगायेगी।

कोई भारतीय रियासत संविधानको स्वीकार करे या न करे, उसके लिए यह आवश्यक होगा कि वह वार्ता करके नई परिस्थितिमें जिस हदतक जरूरी हो उस हदतक अपनी संधि-व्यवस्थामें संशोधन कर ले।

(घ) संविधान निर्मातृ संस्थाका गठन निम्न प्रकार होगा, बशर्ते कि विभिन्न समुदायोंके भारतीय लोकमतके नेता युद्ध समाप्त होने के पूर्व किसी अन्य पद्धतिपर आपसमें सहमत न हो जायें:

युद्धकी समाप्तिपर प्रान्तोंमें चुनाव आवश्यक होंगे। इन चुनावोंके परिणाम मालूम होते ही प्रान्तीय विधान-मण्डलोंके निम्न सदनोंके सभी सदस्य एक निर्वाचक मण्डलके रूपमें, आनुपातिक प्रतिनिधित्वकी पद्धतिके अनुसार, संविधान निर्मातृ संस्थाके चुनावमें लग जायेंगे। इस नई संस्थाके सदस्योंकी संख्या निर्वाचक मण्डलके सदस्योंकी संख्याका लगभग दशांश होगी:

भारतीय रियासतोंको अपनी कुल आबादीके उसी अनुपातमें अपने प्रतिनिधि नियुक्त करने को आमन्त्रित किया जायेगा जिस अनुपातमें सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत अपने प्रतिनिधि चुनेगा और उनके प्रतिनिधियोंको वही अधिकार होंगे जो ब्रिटिश भारतीय सदस्योंको होंगे।

(ङ) भारतके सामने आज जो नाजुक स्थिति है उसके दौरान और जबतक नया सविधान नही बन जाता तबतक सम्राटकी सरकार अनिवार्यतः अपने विश्व-युद्ध-प्रयत्नके अगके रूपमें भारतकी प्रतिरक्षाका दायित्व वहन करेगी और उसके नियन्त्रण और निर्देशनका सूत्र अपने हाथोमें रखेगी, लेकिन भारतके सैनिक, नैतिक तथा भौतिक ससाधनोके पूर्ण सयोजनका काम भारत सरकारका दायित्व होगा, जिसे वह भारतकी जनताके सहयोगसे निभायेगी। सम्राटकी सरकार यह चाहती है और भारतीय जनताके प्रमुख वर्गोके नेताओको इस बातके लिए आमन्त्रित करती है कि वे अपने देश, राष्ट्रकुल तथा मित्रराष्ट्रोंसे सम्बन्धित मामलोमे मन्त्रणा देने के कार्यमे अविलम्ब और प्रभावकारी रूपसे शरीक हो। इस प्रकार वे एक ऐसे कार्यके सम्पादनमें सक्रिय और रचनात्मक सहायता दे पायेंगे जो भारतकी भावी स्वतन्त्रताके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है।

[अंग्रेजीसे]

ट्रांसफर ऑफ पॉवर, जिल्द १, पृ० ५६५-६६, इंडियन एनुअल रजिस्टर, १९४२, पृ० २२०-२१

परिशिष्ट ७

सर स्टैफर्ड क्रिप्सके साथ मुलाकात[1]

२७ मार्च, १९४२

कुछ आरम्भिक चर्चाके बाद मैंने वह कागज श्री गाधीको पढने के लिए दिया। उन्होने मुझे यह समझाया कि काग्रेससे विधिवत् उनका सचमुच कोई लेना-देना नही है और वे जो भी विचार व्यक्त करेगे, जरूरी नही कि वे सब काग्रेसके ही हो। प्रथमत तो उन्होने अपना यह स्पष्ट विचार व्यक्त किया कि काग्रेस उस दस्तावेजको स्वीकार नही कर सकती। इस विचारके उन्होने दो मुख्य कारण बताये — एक तो भारतीय रियासतोंसे सम्बन्धित अनुच्छेद और दूसरा, प्रान्तोंके सघमें शामिल होने या न होने से सम्बन्धित अनुच्छेद। विचित्र बात है कि उन्होने भी प्रतिरक्षाके अग्रेजोके हाथोमे कायम रखे जाने की बातपर किंचित् अस्पष्ट रूपसे आपत्ति की।

जहाँतक भारतीय रियासतोसे सम्बन्धित बातका सम्बन्ध था, उन्होने कहा कि काग्रेसका विचार है कि ब्रिटिश सरकारकी देख-रेखमे और अपने शासकोकी मनमानी सत्ताको लागू करने के लिए ब्रिटिश सशस्त्र सेनाओकी गुहार करने के अधिकारसे युक्त इन निरकुश रियासतोका कायम रहना वह बरदाश्त नही कर सकती। उन्होने रियासतो की प्रजाके विरुद्ध राजाओके मनमाने आचरणके अनेक उदाहरण दिये और कहा कि इस दस्तावेजमें नये भारतीय संघमें शरीक न होनेवाली रियासतोकी हदतक ऐसे

१. सर स्टैफर्ड द्वारा तैयार की गई रिपोर्टके अनुसार, देखिए पृ० ४९९ और ४८३।

शासनके सदाके लिए कायम रखे जाने की तजवीज है। मैंने समझाया कि बात ऐसी नहीं है, बल्कि रियासती प्रशासनमें सुधारका प्रथम आधार एक स्वतन्त्र ब्रिटिश भारतकी संस्थापना है, क्योंकि वह अपने प्रभाव और आर्थिक शक्तिके बलपर उन रियासतोंमें तो अविलम्ब ही लोकतन्त्रीकरणकी प्रवृत्तिका सूत्रपात कर देगा जो उसमें शामिल हो जायेंगी तथा जो शामिल नहीं होंगी उनमें भी धीरे-धीरे ऐसी प्रवृत्ति आरम्भ कर देगा, इसके अलावा यह प्रश्न प्रशासनिक है और मुझे पूरा विश्वास है कि एक बार ब्रिटिश भारतके लिए नया आधार स्थापित हो जाने पर रियासतोंको अधिकाधिक लोकतान्त्रिक शासनकी दिशामें प्रवृत्त करना ब्रिटिश शासनका लक्ष्य बन जायेगा, जिसका प्रयोजन यह होगा कि रियासतें ब्रिटिश भारतसे ज्यादा आसानीसे नाता जोड़ सकें। मैंने उनसे पूछा कि उनका समाधान क्या है, क्या उनका सुझाव यह है कि हमें सभी रियासतोंको भारतीय संघमें तत्काल शामिल हो जाने के लिए मजबूर कर देना चाहिए। उनका उत्तर था कि वे इस तरहकी हर बातके खिलाफ हैं। वे तो चाहेंगे कि सभी रियासतें तत्काल स्वतन्त्र हो जायें और ब्रिटिश सरकारकी अधीश्वरी सत्तापर भरोसा करना छोड़ दें, क्योंकि उन्हें पूरा यकीन था कि इससे रियासतोंकी प्रजाके हाथोंमें सत्ता सौंपे जाने के आन्दोलनको उत्तेजन मिलेगा। उन्होंने कहा कि मैं राजाओंको तुरन्त मिटते नहीं देखना चाहता बल्कि यह चाहता हूँ कि वे अपनी रियासतोंको, अर्थात् जहाँतक बड़ी-बड़ी रियासतोंका सम्बन्ध है, सवैधानिक लोकतन्त्रोंमें परिवर्तित कर दें, लेकिन छोटी रियासतोंको या तो बड़ी रियासतोंमें शामिल होना पड़ेगा या भारतीय संघमें शामिल होना पड़ेगा। इस विषयपर काफी लम्बी चर्चाके बाद वे इस सम्बन्धमें इस दस्तावेज द्वारा उठाई गई कठिनाइयोंके विषयमें अपने विचारमें कुछ नरमी लाते तो प्रतीत हुए लेकिन उन्होंने उसे वापस नहीं लिया।

दूसरे मुद्देके सम्बन्धमें उन्होंने अपनी बात इस दावेसे आरम्भ की कि यह दस्तावेज मुसलमानोंको पाकिस्तानका निर्माण करने का एक आमन्त्रण है। उन्होंने जिन्ना के जबरदस्त प्रभावको स्वीकार किया और यह बात भी स्वीकार की कि पिछले दो वर्षोंके दौरान पाकिस्तान-सम्बन्धी आन्दोलन बहुत अधिक व्यापक हो गया है, हालाँकि जब मैंने इस योजनाके वास्तवमें लागू किये जाने के समय पाकिस्तानकी कल्पनाको आजके ही जितना समर्थन मिल सकने के बारेमें शका व्यक्त की तब वे मुझसे सहमत-से होते प्रतीत हुए। मैंने उनके साथ उस दस्तावेजको पढ़ते हुए बताया कि यह बुनियादी तौरपर एकीकृत भारतकी कल्पनापर आधारित है और किसी प्रान्तके शामिल न होने का सवाल तो तभी उठेगा जब सविधान निर्मातृ सभामें कांग्रेस मुसलमानोंसे कोई समझौता नहीं कर पायेगी। मैंने उन्हें बताया कि मैंने तो हमेशासे यही समझा है कि कांग्रेसका रुख यह है कि एक बार ब्रिटिश सरकारके रास्तेसे हट जाने पर कांग्रेस और मुसलमानोंके बीच समझौता हो पाना सम्भव हो जायेगा, और सविधान निर्मातृ सभामें तो ब्रिटिश सरकार रास्तेसे हट ही जायेगी। मैंने अपने इस विश्वासपर भी जोर दिया कि सविधान-निर्माणकी अवधिमें सुलह-समझौतेकी कोशिश

करके देख लेने के बाद यदि मुसलमान संघमे शामिल होने को राजी न हो तो उन्हे शामिल होने पर विवश करने के बजाय शामिल न होने का विकल्प देने से समझौतेकी अधिक सम्भावना रहेगी। इस मामलेमे भी लम्बी चर्चाके बाद वे कांग्रेसके विरोधके सम्बन्धमे कुछ कम दृढ दिखाई दिये।

इसके बाद मैंने उनसे कहा कि कांग्रेस कार्य-समितिके सदस्यके रूपमे या कांग्रेस के प्रत्यक्ष सलाहकारके रूपमे नही, बल्कि एक मित्रके नाते मुझे बताइए कि आपकी रायमे इस कामको करने का सबसे अच्छा तरीका क्या है। उन्होने कहा, मैं समझता हूँ, अगर आप भारतपर थोपने के लिए एक पकी-पकाई योजना लेकर यहाँ न आये होते तो ज्यादा अच्छा होता। लेकिन अब मैंने उन्हे याद दिलाया कि जब मैं पहली बार आपसे मिला था तब आपने ही तो कहा था कि भारतको किसी निश्चित तिथिको स्वशासन प्राप्त हो जायेगा, इस बातके बिलकुल स्पष्ट होते ही बीचकी अवधिमें घटित बातोका कोई विशेष महत्त्व नही रह जायेगा। इसपर वे इस दृष्टिकोणको स्वीकार करते-से प्रतीत हुए कि यह दस्तावेज तिथि और उस तरीकेका निर्धारण-मात्र था जिसे सम्बन्धित पक्षोके बीच किसी अन्य या बेहतर तरीकेपर सहमति न होने की स्थितिमे अपनाया जाता। मेरा खयाल है, इस दस्तावेजके प्रति उन्होने इस दृष्टिकोणको स्वीकार किया और कहा कि दोनो बडी कौमोकी सहमति प्राप्त किये बिना इस दस्तावेजको किसी भी रूपमे प्रकाशित करना मेरी समझमें बहुत नासमझी का काम होगा। मैंने उनसे कहा कि इरादा यह है कि इसे सोमवारको प्रकाशित किया जाये। उन्होने बार-बार मुझसे कहा कि मैं इस बातका ध्यान रखूं कि वह उस दिन प्रकाशित न हो। उन्होने पूछा कि प्रकाशनके बारेमें जिन्नाके क्या विचार हैं। मैंने बताया कि लोगोको अनधिकृत तौरपर इसकी जानकारी मिल जाने के खतरेको ध्यानमें रखते हुए उनका सुझाव है कि उसके प्रकाशनमे बहुत देर नही करनी चाहिए। गांधीजी ने इसका अर्थ यह बताया कि जिन्ना इस योजनाको स्वीकार कर लेगे। गाधीजी की इसके प्रकाशित न किये जाने की इच्छाके बारेमे मैंने यह राय बनाई कि इसका कारण उनका यह भय है कि इसके प्रकाशित हो जाने से लोग कांग्रेसपर, शायद उसकी अपनी इच्छाके विरुद्ध, उसे स्वीकार करने के लिए दबाव डालेंगे और वह बेहतर स्थितिके लिए सौदा करने के अवसरसे किसी हदतक वंचित हो जायेगी।

इसके उपरान्त मैंने उनसे पूछा, मान लीजिए, जिन्ना इस योजनाको स्वीकार कर लेते हैं और कांग्रेस स्वीकार नही करती तो आप मुझे आगे क्या करने की सलाह देंगे। उन्होने कहा कि उस हालतमें उचित मार्ग यह होगा कि मैं सारी जिम्मेदारी जिन्नापर डाल दूँ और उनसे कहूँ कि अब आप कांग्रेसको इसमें शामिल करने के लिए या तो उससे सीधे बातचीत कीजिए या मेरे साथ मिलकर कोशिश कीजिए। उनका विचार था कि यदि जिन्नाको यह बताया जाये कि इसमें उनके सफल हो जाने पर भारतमें उनकी स्थिति कितनी महत्त्वपूर्ण हो जायेगी तो वे शायद इस कामको स्वीकार कर ले और इसमे सफलता भी प्राप्त कर ले। इसी प्रकार यदि कांग्रेस योजनाको स्वीकार कर ले और जिन्ना अस्वीकार कर दे तो उनका

खयाल था कि जिन्नाको शामिल करने का दायित्व कांग्रेसपर होना चाहिए। मैंने उन्हें स्पष्ट रूपसे बताया कि स्वीकृति अथवा अस्वीकृतिके विषयमें अगले चन्द दिनोंमें मैं अपनी राय कायम कर लूँगा, और अगर यह योजना स्वीकृत न हुई तो कमसे-कम युद्ध की समाप्तिके पूर्वतक और कोई योजना सामने रखे जाने का कोई सवाल नहीं उठेगा और मुझ-जैसे जिन लोगोंने अतीतमें कांग्रेसके दृष्टिकोणकी हिमायत की है वे भारतीय समस्याके समाधानके सम्बन्धमें और कोई प्रभाव डालने की स्थितिमें नहीं होंगे, क्योंकि आम तौरपर लोग यह सोचेंगे कि यह प्रस्ताव ऐसा था जिसे कांग्रेसको स्वीकार कर लेना चाहिए था और आगे हिन्दुओं और मुसलमानोंके बीच जबतक सहमति नहीं हो जाती तबतक कोई और प्रस्ताव प्रस्तुत करना निरर्थक है। उन्होंने यह आशा व्यक्त की — और मेरा खयाल है पूरी ईमानदारीसे व्यक्त की — कि उन्होंने जो-कुछ कहा उसके बावजूद मैं सफल होऊँ; लेकिन मैं समझता हूँ, उनकी आशा की यह अभिव्यक्ति इस बातका संकेत होने के बजाय कि वे योजनाको कार्यान्वित होते देखना चाहते हैं, उनकी व्यक्तिगत भावनाको अधिक प्रतिबिम्बित करती थी।

उन्होंने कहा, मैं रविवारकी[1] राततक दिल्लीमें हूँ, क्योंकि कार्य-समितिकी बैठक कल है, और अगर आप चाहें और आपको लगे कि इससे कुछ मदद मिल सकती है तो मैं फिर आपसे मिलने को सहर्ष तैयार हूँ। मैंने उन्हें धन्यवाद दिया और कहा कि रविवारको किसी समय या तो मैं खुद आकर उनसे मिल लूँगा या उन्हें बुलवा लूँगा।

[अंग्रेजीसे]

ट्रांसफर ऑफ पॉवर, जिल्द १, पृ० ४९८-५००

१. २९ मार्च, १९४२

सामग्रीके साधन-सूत्र

इंडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन।

उड़ीसा सरकार।

'कन्स्ट्रक्टिव प्रोग्राम-इट्स मीनिंग एण्ड प्लेस' (अंग्रेजी) : मो० क० गांधी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४१।

'खादी-जगत्'. कृष्णदास गांधी द्वारा सम्पादित मासिक, जो पहली बार २५ जुलाई, १९४१ को प्रकाशित हुआ था।

'ट्रान्सफर ऑफ पॉवर १९४२-४७', जिल्द १ (अंग्रेजी) प्रधान सम्पादक, निकोलस मैन्सर, हर मैजेस्टीज स्टेशनरी ऑफिस, लन्दन।

'डा० सुमन्तलालभाई पटेल ७५मी वर्षगांठ अभिनन्दन ग्रंथ' (गुजराती) गुजरात समाचार पत्र, अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित, १९६५।

'नेशनल हेरल्ड' लखनऊसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

नेहरू स्मारक संग्रहालय तथा पुस्तकालय, नई दिल्ली।

'पांचवें पुत्रको बापूके आशीर्वाद' सम्पादक, काकासाहब कालेलकर, जमनालाल बजाज ट्रस्ट, वर्धा, १९५३।

'पॉलिटिकल लाइफ ऑफ गोविन्दवल्लभ पन्त', जिल्द १ (१८८७-१९४५) (अंग्रेजी) : श्यामसुन्दर और सावित्री श्याम, ५ दारुलशफा, लखनऊ, १९६०।

प्यारेलाल पेपर्स नई दिल्लीमें श्री प्यारेलालके पास सुरक्षित कागजात।

'बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय रजत जयन्ती समारोह' सम्पादक, वी० ए० सुन्दरम्, तारा प्रिंटिंग प्रेस, बनारस, १९४२।

बम्बई सरकार।

'बापुना पत्रो-२ : सरदार वल्लभभाईने' (गुजराती). सम्पादक, मणिबहेन पटेल, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९५२।

'बापुनी प्रसादी' (गुजराती) मथुरादास त्रिकमजी, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४८।

'बापुनी शीतल छायामां' (गुजराती) सम्पादक, सरोजिनी महेता, लीलावती बैंकर और बचुबहेन लोटवाला, बम्बई, १९५८।

'बापू-कन्वर्सेशन्स एण्ड कॉरेस्पॉण्डेन्स विद महात्मा गांधी' (अंग्रेजी) एफ० मेरी बार, इन्टरनेशनल बुक हाउस लिमिटेड, बम्बई, १९४९।

'बापूकी छायामें' बलवन्तसिंह, नवजीवन प्रकाशन मन्दिर, अहमदाबाद, १९४७।

'बापूकी छायामें मेरे जीवनके सोलह वर्ष'. हीरालाल शर्मा, ईश्वरशरण आश्रम मुद्रणालय, प्रयाग, १९५७।

'बॉम्बे क्रॉनिकल': बम्बईसे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

'मराठी हरिजन' गोपालराव काले द्वारा सम्पादित मराठी साप्ताहिक, जो पहली बार १ मार्च, १९४२ को प्रकाशित हुआ था।

महादेव देसाईकी हस्तलिखित डायरी · स्वराज्य आश्रम, बारडोलीमे सुरक्षित।

'मीडियम ऑफ इन्स्ट्रक्शन' (अंग्रेजी) श्रीमन्नारायण, किताबिस्तान, इलाहाबाद, १९४२।

राष्ट्रीय अभिलेखागार, नई दिल्ली।

राष्ट्रीय गांधी संग्रहालय और पुस्तकालय, नई दिल्ली . गांधी साहित्य और गांधीजी से सम्बन्धित कागज-पत्रोका केन्द्रीय संग्रहालय तथा पुस्तकालय।

विश्वभारती ग्रन्थागार, शान्तिनिकेतन।

'सर्वोदय' गांधी सेवा संघके तत्त्वावधानमे वर्धासे प्रकाशित मासिक, सम्पादक, द० बा० कालेलकर तथा दादा धर्माधिकारी।

साबरमती संग्रहालय, अहमदाबाद गांधीजी से सम्बन्धित पुस्तको और कागजातका पुस्तकालय तथा अभिलेखागार।

हरिजन' (१९३३-५६) हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमे प्रकाशित अंग्रेजी साप्ताहिक। इसका प्रथम अंक ११ फरवरी, १९३३ को पूनासे प्रकाशित हुआ था, इसके बाद २७ अक्तूबर, १९३३ से मद्राससे प्रकाशित होने लगा; १३ अप्रैल, १९३५ से पुन: पूनासे प्रकाशित होने लगा, तदनन्तर अहमदाबादसे प्रकाशित होता रहा।

'हरिजनबन्धु' (१९३३-५६) · हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमे प्रकाशित गुजराती साप्ताहिक, जो १२ मार्च, १९३३ को पहली बार पूनासे प्रकाशित हुआ था।

'हरिजन-सेवक' (१९३३-५६) हरिजन सेवक संघके तत्त्वावधानमे प्रकाशित साप्ताहिक जो २३ फरवरी, १९३३ को पहली बार नई दिल्लीसे प्रकाशित हुआ था।

'हिन्दू': मद्राससे प्रकाशित अंग्रेजी दैनिक।

तारीखवार जीवन-वृत्तान्त

(११ अक्तूबर, १९४१ – ३१ मार्च, १९४२)

११ अक्तूबर. गांधीजी सेवाग्राममें थे। हैनकॉक और एस० सत्यमूर्तिसे मिले।

१२ अक्तूबर. नागपुर, बरार तथा महाकोशल प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों द्वारा एकत्र किये गये धन और सूतकी भेंटको स्वीकार किया और उनके सम्मुख भाषण दिया।

१५ अक्तूबर आसफअली और राजेन्द्रप्रसादसे मिले।

२१ अक्तूबर जयप्रकाश नारायण द्वारा देवली कैम्पसे चोरी-छिपे कुछ कागजात मँगवाने के कथित प्रयत्नके सम्बन्धमें सरकारी विज्ञप्तिपर समाचार-पत्रोंको वक्तव्य दिया।

२२ अक्तूबर प्रार्थनाके बाद आदर्श ग्रामीण समाजपर बोले।

२३ अक्तूबर खान बहादुर अल्ला बख्शसे मुलाकात की।

२८ अक्तूबर समाचार-पत्रोंको दिये एक वक्तव्यमें सत्याग्रह आन्दोलनपर पुनर्विचार किया और सत्याग्रहियोंके मार्गदर्शनके लिए निर्देश जारी किये।

३० अक्तूबर देवली कैम्पके नजरबन्दों द्वारा भूख हड़ताल किये जाने और उसपर सरकारी विज्ञप्तिके सम्बन्धमें समाचार-पत्रोंके लिए वक्तव्य जारी किया।

११ नवम्बर भारत-लंका समझौतेपर वक्तव्य जारी किया।

१२ नवम्बर जयप्रकाश नारायणको तार भेजकर उन्हें भूख-हड़ताल समाप्त करने की सलाह दी।

समाचार-पत्रोंको दिये वक्तव्यमें सत्याग्रही कैदियोंकी रिहाईके लिए सरकार पर दबाव डालने की कार्रवाईको अनुचित बताया।

१४ नवम्बर· समाचार-पत्रोंके जरिये सरकारसे देवलीके नजरबन्दोंकी माँगोंको स्वीकार करने का अनुरोध किया।

१५ नवम्बर एस० सत्यमूर्तिको सारा पत्र-व्यवहार प्रकाशित करने अनुमति दी।

१९ नवम्बर गृह सदस्यको तार भेजकर देवलीके नजरबन्दोंसे महादेव देसाईके मिलने की अनुमति माँगी।

२० नवम्बरके पूर्व सीमा-प्रान्तके लोगोंको सन्देश भेजा।

२७ नवम्बर समाचार-पत्रोंको दिये वक्तव्यमें देवलीके नजरबन्दों द्वारा भूख हड़ताल स्थगित किये जाने पर सन्तोष व्यक्त किया और सरकारसे नजरबन्दों तथा राजनीतिक कैदियोंसे अच्छा बरताव करने की अपील की।

मजूर महाजन, अहमदाबादको उसकी २५वीं जयन्तीके अवसरपर सन्देश भेजा।

२८ नवम्बर एल० एस० एमरीके भाषणके सम्बन्धमें 'डेली हेरल्ड' को भेंट दी।

४ दिसम्बर : राजनीतिक बन्दियोंकी रिहाईके सम्बन्धमें जारी की गई सरकारी विज्ञप्ति के बारेमें समाचार-पत्रोंको भेंट दी।

७ दिसम्बर : समाचार-पत्रोंके माध्यमसे घोषित किया कि जबतक कांग्रेस बम्बई प्रस्ताव को पलट नहीं देती तबतक सविनय अवज्ञा जारी रहेगी।

९ दिसम्बर. पश्चिमोत्तर सीमा-प्रान्तमें खुदाई खिदमतगारों द्वारा लगाये गये कैम्पके बारेमें समाचार-पत्रोंको एक वक्तव्य दिया।

सेवाग्रामसे प्रस्थान किया।

१० दिसम्बर. बारडोली पहुँचे।

१३ दिसम्बर अथवा उसके पूर्व : 'कन्स्ट्रक्टिव प्रोग्राम : इट्स मीनिंग ऐंड प्लेस' को पूरा किया।

१७ दिसम्बर : अ० भा० चरखा संघकी बैठकमें भाषण दिया।

१८ और १९ दिसम्बर अ० भा० चरखा संघकी बैठकमें शरीक हुए।

समाचार-पत्रोंके माध्यमसे जनतासे अपील की कि देशके निकट पहुँचते युद्धसे परेशान न हों, वरन् बहादुरीके साथ उसका मुकाबला करें।

२० दिसम्बर : भगिनी समाज, बम्बईको उसकी रजत-जयन्तीके अवसरपर सन्देश भेजा।

अमेरिकाके युद्धमें शामिल होने के सम्बन्धमें समाचार-पत्रोंको वक्तव्य दिया।

२३ से २६ दिसम्बर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

२७ दिसम्बर. कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया। समाचार-पत्रोंके माध्यमसे बिहार सरकारसे हिन्दू महासभापर से प्रतिबन्ध उठा लेने की अपील की।

२८ दिसम्बर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

२९ दिसम्बरके पूर्व : अखिल भारतीय महिला परिषद्को सन्देश भेजा।

२९ दिसम्बर : कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शरीक हुए।

३० दिसम्बर. कांग्रेस-अध्यक्षको पत्र लिखा कि बम्बई प्रस्तावके द्वारा उनपर जो जिम्मेदारी डाली गई है उससे वे उन्हें मुक्त कर दें। कांग्रेस कार्य-समितिने गांधीजी को मुक्त करते हुए प्रस्ताव पास किया। उसने अपनी माँगको दोहराते हुए एक और प्रस्ताव पास किया तथा युद्धके सम्बन्धमें कांग्रेसकी स्थिति और रुखकी पुनर्घोषणा की।

गांधीजी ने कांग्रेस प्रस्तावके बारेमें 'हिन्दू' में वक्तव्य दिया।

१९४२

४ जनवरी. गुजरात प्रान्तीय कांग्रेस कमेटीकी बैठकमें भाषण दिया।

७ जनवरी. समाचार-पत्रोंके माध्यमसे तीन 'हरिजन' साप्ताहिकोंके पुनःप्रकाशनका इरादा जाहिर किया और खतरेका सामना करने की सबसे अच्छी तैयारीके तौर पर रचनात्मक कार्यक्रमपर अमल करने का सुझाव दिया।

८ जनवरी : गुजरात खादी विद्यालयका उद्घाटन किया।

हरिजन कार्यकर्ताओंसे चर्चा की।

सर अकबर हैदरीका देहान्त।

९ जनवरी अथवा उसके पूर्व : गांधीजी ने खादी-सेवकोंके सम्मुख भाषण दिया।
बारडोलीसे रवाना हुए।

१० जनवरी : सेवाग्राम पहुँचे।

१४ जनवरी . 'हरिजन' में सर अकबर हैदरीको श्रद्धांजलि अर्पित की।

१५ जनवरी . अ० भा० का० कमेटीकी बैठकमें बारडोली प्रस्तावपर भाषण दिया।

१६ जनवरी . कांग्रेस कार्य-समिति और अ० भा० का० कमेटीकी बैठकोंमें भाग लिया।
अ० भा० का० कमेटीका अधिवेशन समाप्त।

१७ जनवरी . गांधीजी कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।
प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों और कांग्रेस कार्य-समितिके सम्मुख भाषण दिया।

१८ जनवरी 'हरिजन', 'हरिजनबन्धु' और 'हरिजन-सेवक' का पुन -प्रकाशन।

१९ जनवरी . गांधीजी बनारसके लिए रवाना हुए।

२० जनवरी . बनारस पहुँचे।

२१ जनवरी बनारस हिन्दू विश्वविद्यालयके रजत जयन्ती दीक्षान्त-समारोहमें भाषण दिया।

२२ जनवरी संयुक्त प्रान्तके कांग्रेस कार्यकर्त्ताओंके सम्मुख बोले।

२४ जनवरी . वर्धा जाते हुए रास्तेमें नागपुर रुके। चोखामेला छात्रावासमें भाषण दिया। 'हितवाद' के कार्यालय और सर्वेन्ट्स ऑफ इंडिया सोसाइटी देखने गये। सेवाग्राम पहुँचे।

२९ जनवरी खादी विद्यालयके विद्यार्थियोंके सम्मुख भाषण दिया।

१ फरवरी अखिल भारतीय गोसेवा संघ सम्मेलनका उद्घाटन किया।

३ फरवरी अखिल भारतीय गोसेवा संघ सम्मेलनमें बोले।

८ फरवरीके पूर्व डॉ० जॉनसे बातचीत की।

८ फरवरी : लॉर्ड लिनलिथगोको पत्र लिखकर उनसे अनुरोध किया कि अखिल भारतीय चरखा संघको आयकरसे मुक्त कर दिया जाये।

९ फरवरी मार्शल और मदाम च्यांग काई-शेक नई दिल्ली पहुँचे।

११ फरवरी जमनालाल बजाजका देहावसान।
गांधीजी दाह-संस्कारमें शामिल हुए।
प्रार्थनाके बाद जमनालाल बजाजको श्रद्धांजलि अर्पित की।

१२ फरवरी . बजाज-परिवारके सदस्योंसे बातचीत की।

१४ फरवरी पत्र भेजकर जमनालाल बजाजके मित्रोंको २० तारीखकी एक बैठकमें निमन्त्रित किया।

१७ फरवरी : कलकत्ताके लिए रवाना।
गोंदियामें हरेकृष्ण मेहताबकी गिरफ्तारीपर समाचार-पत्रोंको एक वक्तव्य दिया।

१८ फरवरी कलकत्ता पहुँचे।
च्यांग काई-शेक और उनकी पत्नीसे मिले।

वर्धाके लिए रवाना।

१९ फरवरी: रास्तेमें नागपुरमें समाचार-पत्रोंको भेंट दी।

२० फरवरी: वर्धामें जमनालाल बजाजके मित्रोंके सम्मुख भाषण दिया।

२१ फरवरी: जमनालाल बजाजके मित्रोंके सम्मुख बोले।

२६ फरवरी. 'मराठी हरिजन' के लिए सन्देश लिखा।

१ मार्चके पूर्व. प्रार्थनाके बाद महिला आश्रमके सदस्योंके सम्मुख भाषण दिया।

१ मार्च 'मराठी हरिजन' आरम्भ।

११ मार्च: जमनालाल बजाजके मासिक श्राद्धके अवसरपर खादी विद्यालयके विद्यार्थियोंके समक्ष भाषण दिया।

१६ और १७ मार्च. कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें शामिल हुए।

१८ मार्च. 'द मीडियम ऑफ इन्स्ट्रक्शन' की प्रस्तावना लिखी।

२३ मार्च. स्टैफर्ड क्रिप्सका भारत-आगमन।

२५ मार्च: स्टैफर्ड क्रिप्सके नई दिल्लीमें मिलने के आमन्त्रणके उत्तरमें गांधीजी ने तार भेजकर अपनी सहमति प्रकट की।

२६ मार्च: दिल्लीके लिए रवाना।

२७ मार्च: दिल्ली पहुँचे। स्टैफर्ड क्रिप्सने मुलाकात की।

२९ मार्च के पूर्व: ईव क्यूरीको भेंट दी।

२९ मार्च: कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठकमें भाग लिया।

सुभाषचन्द्र बोसकी मृत्युकी खबर सुनकर प्रभावतीदेवी बोसको सम्वेदनाका तार भेजा।

३० मार्च: सुभाषचन्द्र बोसकी मृत्युकी खबरका खण्डन सुनकर प्रभावतीदेवी बोसको तार भेजकर अपना सन्तोष व्यक्त किया।

ब्रिटिश युद्ध-मन्त्रिमण्डलके भारत-विषयक प्रस्ताव समाचार-पत्रोंमें प्रकाशनके लिए जारी किये गये।

कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक जारी रही।

३१ मार्च. कांग्रेस कार्य-समितिकी बैठक जारी रही।

शीर्षक-सांकेतिका

विविध

सांकेतिका

आ

ध

न

प

फ

ब

य

श

स

ह